बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम्

श्री० पं० ताराचन्द्र शास्त्रि विरचितया

एव तत्पुत्र

श्री० पं० कामाख्या प्रसाद शर्मणा सम्पादितया

'भावप्रकाशिका–'

हिन्दी टीकया सहितम्

**

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई

सस्करण- सन् १९८९, सवत् २०४६

मूल्य १५० रुपये



सर्वाधिकार
प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

मुद्रक और प्रकाशक-
मे० खेमराज श्रीकृष्णदास अध्यक्ष श्रीवेंकटेश्वर
दे० मे० शर्मा, मैनेजर, द्वारा श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

श्री:

भूमिका

विफलान्यन्यशास्त्राणि विवादस्तेषु केवलम् ।
प्रत्यक्ष ज्योतिष शास्त्र चन्द्राकौं यत्र साक्षिणौ ॥

सूर्य, चन्द्र, तारा आदि ज्योतिष्पिण्डो के विज्ञान का प्रदर्शक होने से इस शास्त्र का नाम 'ज्योतिष'शास्त्र है। सूर्य एव भौमादि ग्रह तथा चन्द्र आदि उपग्रहो की गति, ग्रहण आदि का ज्ञान एव दिन, मास आदि समय का ज्ञान इसी के द्वारा होने से इसकी सार्थकता है (यद्यपि चन्द्रमा को फलित एव गणित ज्यौतिष मे 'ग्रह' ही कहा गया है 'उपग्रह' नही, तथापि आधुनिक विज्ञान द्वारा यह सिद्ध है कि-चन्द्रमा पृथ्वी का 'उपग्रह' है) तथा अमावास्या पूर्णिमा आदि यज्ञ के समय का निर्णायक होने से वैदिक धर्म का अग है। मनुष्यो के शुभाशुभ का सूचक होने से तो इस शास्त्र की विशेष सार्थकता है तथा मुहूर्तो का निर्णायक होने से भी। यह ज्यौतिष शास्त्र 'सिद्धान्त, सहिता होरा' इन तीन विभागो मे विभक्त है। गणित भाग के प्रदर्शक 'सूर्य सिद्धान्त, सिद्धान्तशिरोमणि' आदि ग्रन्थ सिद्धान्त विषय के ज्ञापक हैं, तथा ग्रह आदि के लक्षण, स्वरूप आदि प्रकीर्ण विषयो के सग्रह ग्रन्थ 'वाराही सहिता' आदि सहिता ग्रन्थ है, एव मनुष्यो के शुभाशुभ का परिचायक 'होरा' भाग है, यह 'बृहत्पाराशर होराशास्त्र' ग्रन्थ इस विषय का मूर्द्धन्य है यह विदितप्राय है। 'अहोरात्र' शब्द जो कि 'दिनरात्रि' का अर्थ वाचक है, इसी के आदि और अन्त के लोप से 'होरा' शब्द की उत्पत्ति हुई है, यथा-"होरेत्यहोरात्रविकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापर-वर्ण लोपात्।" इस शास्त्र के प्रवर्तक सूर्य आदि १८ ऋषि सुने जाते है। यथा-

सूर्य. पितामहो व्यासो वसिष्ठोऽत्रि' पराशरः ।
कश्यपो नारदो गर्गो मरीचिर्मनुरगिराः ॥
लोमश. पौलिशश्चैव च्यवनो यवनो मनुः ।
शौनकोऽष्टादशश्चैते ज्योति'शास्त्र प्रवर्तकाः ॥

इस शास्त्र की प्रवर्तन परम्परा भी प्राचीन काल से इस प्रकार सुनी जाती है—

'ज्योति शास्त्र समग्र प्रथमपुरुषत स्वर्णगर्भाद्विदित्वा
पूर्व ब्रह्मा, ततोऽय निखिलमुनिगण प्रार्थनाद्यच्चकार ।
तच्चेद सुप्रसन्न मृदुपदनिकरैर्गुह्यमध्यात्मरूपम्
शश्वद्विश्व प्रकाश ग्रहचरितविदां निर्मल ज्ञानचक्षु' ॥

और वर्तमान कलियुगमे तो सर्वमान्य फलानुबन्धि होने से पाराशरसहिता ही सर्वत प्रचलित है,

कृते तु मानवं शास्त्र त्रेतायां बादरायणिः ।
द्वापरे शखलिखितः कलौ पाराशरी स्मृता ॥

इस कथन से स्पष्ट बोधित होता है कि वर्तमान समय मे यह 'पाराशर होराशास्त्र' ही फलादेश के लिए सर्वोपकारी शास्त्र है इसका प्रकाशन प्राय सौ वर्ष से श्रीसेठ खेमराज श्रीकृष्णदासजी मालिक-'श्रीवेंकटेश्वर प्रेस द्वारा होता आया है।

इधर कुछ वर्ष से इस ग्रन्थ का १ सस्करण भाषा टीका युक्त काशी से भी प्रकाशित होता है उसके विषय मे यहा दो शब्द लिखना अप्रासगिक नही होगा। यद्यपि मेरा अभिप्राय किसी दुर्भावनामूलक नही है मेरा उन टीकाकार महानुभाव से कोई परिचय भी नही है तथापि उनकी प्रखर प्रतिभा की प्रशसा कौन नही करेगा, किन्तु बम्बई की प्रकाशित पुस्तक मे एक स्थान पर पूर्व प्रकाशित पृ० १२ मे प्राणपदसाधन शीर्षक मे कुछ भ्रामक पाठ जो कि प्रेस के भूतो की कृपा से असली पाठ छूट कर इधर उधर का छप गया था आपने उसको लेकर तिल का ताड बना डाला वहा का उद्धरण देकर यहा तक लिखने मे भी सकोच नही किया कि-इष्टशोधन नामकी कोई वस्तु ही नही है आदि २। इस पर भी सन्तोष न हुआ तो 'भूमिका' का भी कुछ भाग इसी बात से भर दिया अस्तु वे महामहिमशाली है उनको सब शोभा देता है परन्तु इस बार वे इष्टशोधन देखे जो कि, अत्यन्त गवेषणा से प्राप्त करके सयुक्त किया गया है और इसी इष्टशोधन का विशेषविस्तार ज्योतिस्तत्व आदि बृहद् ग्रन्थो मे देखे कि यह वस्तु होराशास्त्र मे है या नही। परन्तु वास्तव मे जब मनुष्य दूसरे के दूषण देखने मे तल्लीन होता है तब **'आत्मनो बिल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति'** यहा हमे तत्सम नही होना है तथापि पाठको को भ्रम न हो इस लिए काशी की प्रकाशित पुस्तक के कुछ भ्रामक स्थलो का दिग्दर्शन कराते है।

१-अन्तर्दशा (विशोत्तरी) प्रकरण मे सूर्यान्तर म बुध को त्रिकोण या ६।८ आदि स्थानो मे तथा शुक्र को भी ६।८ त्रिकोण आदि स्थान मे होना और उनका फल कहा गया है इसी प्रकार बुधान्तर मे सूर्य तथा शुक्र एव शुक्रान्तर मे बुध तथा सूर्य का उपर्युक्त स्थानो मे होना और उनका शुभाशुभफल भी उन्होने लिखा है और भूमिका मे उन्होने यह भी लिखा है कि-बहुत वर्षो तक इसको शुद्ध करने मे व्यतीत किये एव अन्य भी महान २ विद्वानो द्वारा सशोधित कराया गया है तो भी यह अत्यन्त मोटी भूल कैसे रह गई? क्योकि-सूर्यमण्डल के अति समीप बुध का परिभ्रमण मार्ग है और बुध के पश्चात् शुक्र का, अत सूर्य से बुध २८ अश और शुक्र ४८ अश से अधिक दूर हो ही नही सकते तब सूर्य, बुध और शुक्र ये परस्पर उपर्युक्त स्थानो मे हो ही नही सकते और यह भी समझ लेना चाहिए कि-बुध और शुक्र भी परस्पर ७५ अश से अधिक दूर नही हो सकते।

२-पृ० १८२ मे जो विषय है, वह बम्बई की प्रकाशित पुस्तक के गद्यभाग का साराश मात्र है।

३-पाराशर मत मे चन्द्रमा को मारकता मान्य नही है, तो भी पृ० २०२ मे मिथुन लग्न मे मारक कहा है।

४-पृ० ६५३ मे प्रश्नोत्तर मे प्रतिमास १ लग्न ही कथनानुसार सभव है।

ये केवल दिग्दर्शन मात्र है, मनुष्यसे भूल होना असभव नही कहा जा सकता, फिर किसी एक बात को लेकर इतना बतगड नही बनाना चाहिए, प्रत्युत उसका अन्वेषण करके समाधान करना चाहिए। प्रथम भूमिका मे तो आप लिखते है कि -श्री प० अमुकजी के पास से दक्षिणा देकर नकल प्राप्त की और अन्त मे कुछ और ही लिखते है कि-इधर उधर से खण्डश प्राप्त करके और उनका जोड तोड करके निर्माण किया, खैर जो भी हो प्रयत्न स्तुत्य है और सराहनीय है, श्रीमानजी कुछ स्पष्टोक्ति के लिए क्षमा करेंगे।

जन्मेष्ट काल के शोधन के श्लोक हमको, ज्योतिःशास्त्र प्रेमी श्रीकुमारसाहब तुषारनाथ मिश्र, सुपुत्र श्रीराजा कन्हाईलालजी बहादुर के प्राचीन ग्रन्थ सग्रहालय मे सुरक्षित 'वृ०पा०हो०शा०' की अति प्राचीन प्रति मे मिले, केवल मूल श्लोक थे हमने भाषा टीका तथा उदाहरण सहित इस ग्रन्थ मे यथावत् सयुक्त किये है। इसके लिए हम कुमार साहब के आभारी है। बम्बई से प्रकाशित पुस्तक से अधिक विस्तृत कोई प्रति देखने मे नही आई। काशी से प्रकाशित पुस्तक मे भी आद्यन्त श्लोक स० ४००१ है जब कि-मूलशान्ति आदि अनेक प्रकीर्णक जो कि होराशास्त्र का विषय न होकर सहिता का विषय है, उनका सग्रह किया गया है। क्योंकि–

> 'ग्रहाणाञ्चैव भावाना बलाबल–विवेकत ।
> दशादिना फल यत्र होराशास्त्र तदुच्यते ॥'

यद्यपि उन्होंने व्यर्थ का सग्रह करके ९७ अध्याय कर दी है तथापि बम्बई की प्रकाशित पुस्तक मे ५७८१ श्लोक है, जो कि-काशी की प्रकाशित से १७८१ श्लोक अधिक है, प्रति पाद्य विषय का सकोच और विस्तार तथा उत्तरखण्ड मे अनावश्यक सग्रह प्राय दोनो मे ही है, किन्तु काशी की मे अविषय का सग्रह और बम्बई की पुस्तक मे शास्त्रीय विषय का सग्रह है इस होराशास्त्र के ही कारक मारक विचार को तथा गुलिकादि विचार को लेकर जैमिनीय सूत्र की रचना हुई अस्तु यह स्वतन्त्र विवेचना का विषय है। केवल कारक मारक विचार को तथा धनयोगो को लेकर लघु और मध्य पाराशरी का निर्माण हुआ। हमको बम्बई की प्रकाशित पुस्तक मे अधिक भाग अब तक नही प्राप्त हुआ है, यदि किसी के पास हो तो देने की कृपा करेंगे।

एक विषय विवेचनीय और है, वह है जन्मकालीन सूर्य के राश्यादि के समान राश्यादि के समय वर्ष गणना की परिपाटी जिस कल्पना को लेकर 'ताजिक नीलकण्ठी' आदि ग्रन्थ बने, 'इसका विचार होराशास्त्र म नही है' यह कहने मे भी चल सकता है, यद्यपि 'वर्षचर्या' 'मासचर्या' मे दिग्दर्शन मात्र है तथापि प्रधान तथा जन्मकाल को लेकर ही विचार किया गया है। इस विषय का तात्कालिक सूक्ष्म विचार साम्प्रतिक पाश्चात्य ज्योतिर्विदो ने दृष्टि योगो (Aspects) के माध्यम से बहुत अच्छा किया है उस विषय के जिज्ञासुओ की अभिलाषापूर्ति के निमित्त अग्रेजी मे ही सक्षिप्त (उदाहरण सहित) प्रकार आगे दे रहे है -

English Method of Casting Horoscope
(with delineations to Hindu Method)

Horoscope-is the position of the planets and signs of the zodiac in relation to a particular place at a particular time It foretells, after being finally cast, the regular and irregular movements of planets and their good and bad effects on human beings and earth

In order to prepare the said map, the following should be born in mind -

Planets-		
English Names	**Hindi Names**	**Symbols**
Sun	सूर्य	☉
Moon	चन्द्रमा	☽
Mars	मगल	♂
Mercury	बुध	☿
Jupiter	बृहस्पति	♃
Venus	शुक्र	♀
Saturn	शनि	♄
Dragon's Head	राहु	☊
Dragon's Tail	केतु	☋
Uranus or Hershell	इन्द्र	♁ or ♅
Neptune	वरुण	♆
Pluto	यम	♇

The last three planates are newly invented, not given in Hora Shastra

Signs

English Names	Hindi Names	Symbols
Aries	मेष	♈
Taurus	वृष	♉
Gemini	मिथुन	♊
Cancer	कर्क	♋
Leo	सिंह	♌
Virgo	कन्या	♍
Libra	तुला	♎
Scorpio	वृश्चिक	♏
Saggitarius	धन	♐
Capricorn	मकर	♑
Aquarius	कुंभ	♒
Pisces	मीन	♓

Aspects

English Names	Hindi Names	Degrees	Symbols
Semi- Sextile	द्विर्द्वादश योग	30	⚺
Semi Square or Semi-Quadrate	अर्धकेन्द्रयोग	45	∠
Sextile	त्रिएकादश योग	60	⚹
Square or Quadrate	केन्द्र योग	90	□
Trine	त्रिकोण योग	120	△
Sesqui-Quadrate	सार्धकेन्द्रयोग	135	⚼
Injunct or Quincunx	षडाष्टक योग	150	⊼ or ⚻
Opposition	प्रतियोग या समसप्तक योग	180	☍
Conjuction	युति	0	☌
Parallel	क्रान्तिसाम्य	---	P
Mutual Disposition	पारस्परराशि सम्बन्ध	—	M.D.

Aspects are nothing but only the inter-relation of positions and sights of the planets in 12 houses This has more elaborately been dealt in 'Drishti Adhyaya' of Parasar Shastra in Hindi These aspects are only few of them

Method of casting–Western astronomers adopt the moving zodiac (Sayan system), while the Hindu astronomers go by the fixed zodiac (Nirayan system) for the calculation of the positions of the planets But the Hindu positions of the planets may be obtained from the Western positions by subtracting the Ayanamsa from the western positions Similary, the western positions may be found out by adding Ayanamsa to the Hindu positions of the plantes Here Nirayan method will be taken into consideration The ephemeris by Mr N C Lahiri, M A, which is being published in Calcutta, is preferable for the calculation This ephemeris (Indian Ephemeris) is calculated for the central meridian of India, 5 h 30 m or 82½ E Long

It will be seen in the ephemeris of any particular year that the siderial time is given just opposite to the dates The S T of the birth date is to be taken for the calculation and minus or plus in it the number of hours back or advance will bring the exact S T at birth It should not be forgotten that the S T is given at 12 h Noon

After that, from the Ascendant Chart (given in the last pages) take the S T at birth from the S T Column and see the opposite end column of Ascendant and take the longitude of the ascending sign and prepare the map of Heavens posting the ascending sign in the map From this chart too, the longitude of the tenth house is ascertained from the column provide for from the same S T After preparing Ascendant and the tenth house, the other remaining houses might easily be found out by Hindu method given in Hindi Translation Thus with the longitude of the ascendant or lagna, the longitude of the different houses are ascertained easily

In Western method, the map is prepared with the longitude of the houses and no other map (Bhava Chakra) is required Westerners ascertain from the Tables of Houses with the S T at birth, the longitude of the sign in the different six houses (Ascendant 2nd 3rd,

10th, 11th and 12th) The other six are very easy to find out by adding 180 degrees to evey realised longitude of the signs, or in other words, the opposite signs of those with the same degrees are the other six houses' longitudes

Longitude of the planets

In the ephemeris, the longitude of the planets are calculated at 5h 30m a m I S T This has to be corrected for the time before or after 5h 30m a m I S T at which the birth took place For the calculation, the daily motion of every planet is to be taken which is given in the middle pages of the ephemeris The motion of the planets should be divided by 24 to get the motion per hour, and this after being multiplied by the number of hours before or after 5h 30m a m I S T at birth The result being added or subtracted to or from the positions at 5h 30m I S T becomes the planets' positions at the time of birth By the use of Diurnal Logarithms, (given in the last pages of the ephemeris) the longitude of the planets might be calculated easily This use reduces the work of elaborate calculations The method of calcualtions is- Add the logarithm of the planets' motion to the logarithm of the time (before or after 5h 30m a m I S T) and get the logarithm of the motion for that time, and this being applied to the longitude of the planet at 5h 30m a m I S T will give the true place for the hour and minute required

Dasha Period or Timing Events

In the middle pages of the ephemeris, the Balance of Vimsottari Dasha Chart is given From this Chart, the balance of Dasha for the particular planet concerned can easily be found out at a glance with the longitude of the moon Take the degrees and minutes at birth and see opposite to that in the column of the sign concerned (the sign of the moon) and the balance of Dasha in years, months and days is ascertained Add this balance to the birth date, month and year, the result is the ending point of the balance of Dasha and the starting point of the next comming Dasha period The other periods and sub-periods can be found out by adding the different days, months and years provided for the different planets This will be clear from the example which is given at the end The Hindu method can be understood from the Hindi translation

Westerners follow the "Directional" system for the timing events They adopt the rule of "One day for one year" That is to say, they measure one day for one year and the predictions for a day is the predictions for the year In this way the following formula is to be taken into considerations -

One month is equal to two hours
One week is equal to thirty minutes
One day is equal to four minutes
Six hours is equal to one minute.

From this, weekly and even hourly predictions might be made But this is possible only if "Progressed Horoscope" is made for each year Thus the system is progressed direction Next to progressed direction the influence of transits is to be considered Direction indicate the general nature of the period and predict the nature and source of good and bad effects in life Transits define the exact time at which these predictions will come into play This method is found to be purely imaginary and fictitious and has not been giving such astonishing results as the Indian method is giving If the exact calculations on correct birth time are made no doubt, the most astonishing and wonderful results can be had from this Hindu method Thus it can be said that the Hindu method positively score over the Western method

Example

Baby born on the 13th August, 1957 Tuesday at 9h 10m a m I S T in Calcutta, the Long 88 deg 24 ms E and Lat 22 deg 34 ms N

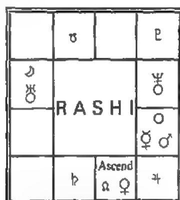
Now, the I S T is 9h 10m a m
Calcutta Time is 9h 33m
Cal Mean Time is 9h 28m
12h Noon --9h 28m a m equal to 2h 32m difference
Now, again S T for 13th August,1957 is 9h 26m 38s
-minus the number of hours back
from Noon upto birth 2h 32m 0s

S T at birth 6h 54m 38s

With this S T at birth the longitude of the Ascendant and the tenth house from the ascendant chart in the ephemeris comes as under -

	S	Deg	Ms	Sec
Ascendant	6	16	17	19
Tenth House	3	14	8	25

Taking this Ascendant the map is to be erected as follows

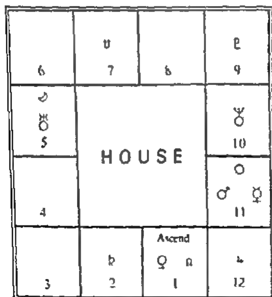


Longitude of Planates

Planets	Signs	Degrees	Minutes	Seconds
Sun	4	23	28	18
Moon	10	26	30	33
Mars	4	27	45	38
Mercury	4	21	34	45
Jupiter	5	13	27	36
Venus	6	1	58	34
Saturn	7	15	5	12
Dragon s Head	6	20	5	15
Dragon s Tail	0	20	5	15
Uranus	10	24	11	20
Neptune	3	24	45	15
Pluto	2	18	36	11

Longitude of Houses

Houses	Signs	Degrees	Minutes	Seconds
1st	6	16	17	19
2nd	7	15	34	21
3rd	8	14	51	23
4th	9	14	8	25
5th	10	14	51	23
6th	11	15	34	21
7th	0	16	17	19
8th	1	15	34	21
9th	2	14	51	23
10th	3	14	8	25
11th	4	14	51	23
12th	5	15	34	21

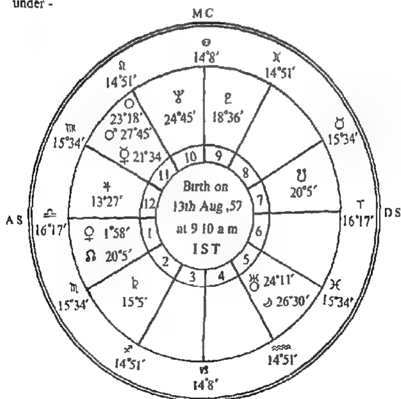


Dasha Period –

13-8-1957	Date Of birth
12-2- 8	Balance of Jupiter Period
25-10-1965	
19	Period of Saturn
25-10-1984	
17	Period of Mercury
25-10-2001	
7	Period of Dragon's Tail
25-10-2008	

Sub-periods are also calculated in this way

The same thing can be shown in Western position as under -



Some of the aspects calculated approximately:-

♅ △ ☿:☉:♂	☿ P ☉:♂	♂ P ☉:☿
♅ ☊ ♃	☿ ⚹ ☊	♂ ⚺ ♀
♅ ☍ ☊	♀ △ ♅:☽	♂ ∠ ☊
♇ ⚹ ☿:☉:♂	☉ P ♂:☿	♂ △ ♅:☽
♇ △ ☊	☉ ⚹ ☊	♃ ⚹ ♄
♆ ⚺ ☿:☉:♂	☉ △ ☽	♃ △ ♅:☽
♆ ∠ ♃		♀ ∠ ♄
♆ ⚼ ♄		♅ P ☽

The predictions according to the Hindu method (Dasha system) have been given in the Hindi Translation According to the Western method the followings are the rules which should be born in mind before making predictions:-

1 Summary of Houses dealing with matters
2 Good and bad aspects

1. Summary of the Houses dealing with matters:-

First house life, health, character,
personality, temperament
Second house wealth and property,
death also in number one
Third house valour, neighbour and
journey, mental condition
Fourth house pleasure, mother too,
inheritence and family
Fifth house childern, love matter,
contemplation and pleasure
Sixth house enemy, servants, aunts,
uncle, death, indication
Seventh house wife, partner, law,
death also in number two
Eighth house death in number three,
mysticism, partner's death

Ninth house fate and Voyages,
religion, science matter too
Tenth house honours, professions,
employment and morality
Eleventh house profits, wishes too,
friends and acquaintances
Twelvth house expenditure, death,
confinement, aunt, uncle too

2. Good and bad aspects:–

Good aspects –

(i) Sextile 60 deg ⚹
(ii) Semi-sextile 30 deg ⊻
(iii) Trine 120 deg △

Bad aspects –

(i) Opposition 180 deg ☍
(ii) Sesqui-Quadrate 135 deg ⚼
(iii) Square 90 deg. □
(iv) Semi-square 45 deg ∠
(v) Quincunx 150 deg ⚻

Parallel, conjuction and mutual disposition are neither good nor bad, as these are only positions and not aspects

Now, if the aspects are good good results concerning those houses and if bad, ill results are account for

For timing events, the transits aspects are given in the ephemeris on which the comparision to the progressed horoscope's aspects, the predictions might be given following the formula "one day for one year" which has been clarified befor.

By– Pt Kamakhya Prasad Sharma, B Com ,
Jyotirbhushan

Son of Sri Pt Tarachandra Shastri, Jyotishacharya

तथा यह भी सूचित कर देते है कि–इस ग्रन्थ मे अनेक स्थलो पर पुराने ही उदाहरण रख दिये गये है, वे इस लिए कि–वे स्थल प्राय अनुपयुक्त और अव्यवहारिक हैं, किन्तु जिनका व्यवहार चालू है वहा नवीन उदाहरण ही रखे गये है।

अन्त मे एक स्थल विवेचनीय और रह जाता है, वह है शनि की महादशा के शुक्रान्तर मे पद्यखड-"**गुरुचारवशाद् भाग्यं सौख्यं च धनसम्पदः ॥ शनिचारात्मनुष्योऽसौ योग माप्नोत्यसंशयम् ॥**" अध्याय ३८ श्लो० २७/२८ इसका अर्थ काशी की प्रकाशित पुस्तक मे यह किया है-'उस समय वृहस्पति अनुकूल हो तो भाग्योदय सम्पत्ति की वृद्धि, शनिगोचर से अनुकूल हो तो राजयोग ।' पृष्ठ ४४५ इसके अर्थ करने मे 'चार' का अर्थ 'अनुकूल' किस आधार पर किया सो तो वे ही जाने, किन्तु यदि वे थोडा विचार करते तो और अच्छा होता। यह विषय असल मे 'देवकेरलम्' तथा नाडी ग्रन्थो का है। चन्द्रकलानाडी मे सूर्यादि ग्रहचार का फल कहते हुए उपर्युक्त श्लोक आया है, यह ग्रन्थ मद्रास सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा एक बार प्रकाशित भी हुआ था, उसका विषय अति गहन एवं प्रत्यक्ष फल प्रदर्शक तथा मननीय है, शुभाशुभ फलके घटित होने का समय जानने की सरल सुस्पष्ट रीति है। पाठको के ध्यानार्थ साररूप मे यहां लिखते है। जन्म काल के भावस्पष्ट तथा ग्रह स्पष्ट करके चरकारक स्थापित करे, अर्थात् सर्वाधिक अंश वाला आत्मकारक, उससे न्यून अंश वाला 'अमात्यकारक' है उससे कम अंशवाला भ्रातृकारक आदि कारक अध्यायोक्त रीति से लिखे और मान्दी=गुलिक लग्न भी लिखे नीचे उनकी राशि त्याग कर अंशादि लिखे, अब यह चक्र तैयार है, इसमे गुरु का चार=भ्रमण तथा शनि का चार=भ्रमण देखना चाहिए। अर्थात् गुरु और शनि जिस जिस कारक के अंशादि पर से जिस जिस मास और तिथ्यादि को सचार करेगा, उस समय उपर्युक्त श्लोकोक्त फल होगा, इस विषय मे विशेष देखना हो तो नाडी ग्रन्थो मे देखना चाहिए, हमने केवल दिग्दर्शन मात्र कर दिया है। वास्तव मे उपर्युक्त श्लोक खण्ड किसी ने नोटरूप से अपनी पुस्तक मे लिखा होगा और कालान्तर मे सम्मिलित हो गया, नही तो ९× ९ = ८१ अन्तरो मे केवल मात्र शनिदशा के शुक्रान्तर मे ही ये ग्रह फल देने आये तथा अन्य दशा और अन्तरो मे कही भी दर्शन देने नही गये। अन्त मे एक बात और कह कर इस भूमिका को समाप्त करते है। इस ग्रन्थ मे 'लोमश सहिता' का एक अध्याय 'क्षेपक' रूप से पूर्वखण्ड मे उसका वास्तविक रहस्य स्पष्ट लिख कर रख दिया है, उसके रहस्य प्रकाशन मे हमारे स्नेही मित्र ज्योतिर्विद् श्री प० चिरञ्जीलालजी ने सहायता की है उसके लिये वे धन्यवाद के पात्र है।

शेष मे विद्वद्वरो से यही कहना है कि-इसके अनुवाद मे जो भूल या त्रुटि रही हो उसे सुधार ले और हमे सूचित करे ताकि अगले सस्करण मे सुधार किया जा सके।

इति

ज्योतिर्विदा कृपाभिलाषी
ताराचन्द्र शास्त्री,
ज्योतिषाचार्य
सलकिया (हावडा)

दीपावली
स० २०१८ वि०

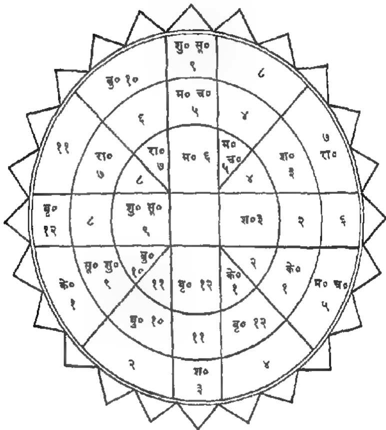
बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडसारांशस्थ-विषयानुक्रमणिका

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखंडस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता

बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखंडसारांशस्य-विषयानुक्रमणिका

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रउत्तरखंडस्थविषयानुक्रमणिका समाप्ता

अथ सुदर्शनचक्रम्



सन्दर्भ पृष्ठ संख्या ४९८

श्रीः

बृहत्–पाराशर–होरा–शास्त्रम्

पूर्वखण्डम्

पप्रच्छोपेत्य मैत्रेयः प्रणिपत्य यथाविधि ॥१॥
अथैकदा मुनिश्रेष्ठं त्रिकालज्ञं पराशरम् ॥ परमानन्दकन्दाय गुरवेऽज्ञान ध्वंसिने
मैत्रेय उवाच–नमस्तस्मै भगवते बोधरूपाय सर्वदा ॥ अथादिदेश सच्छास्त्रं सारं यज्ज्योतिषां
॥२॥ इति स्तुत्या सुसंहृष्टो मुनिस्तत्वविदाम्वरः ॥ प्रणम्य, पाञ्चजन्यञ्च वीणां याभ्यां
शुभम् ॥३॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शुक्लाम्बरधरां गिरम् ॥ वक्ष्यामि वेदनयनं यथा
धृतं द्वयम् ॥४॥ सूर्यं नत्वा ग्रहपतिं जगदुत्पत्तिकारणम् ॥
ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम् ॥५॥

वन्दे बुद्धिप्रदातारं गणानाम्पतिमीश्वरम् ॥१॥
सुमंगलानां कर्तारं हर्तारं निखिलापदां, शारदे त्वां प्रपन्नोऽस्मि भव 'भावप्रकाशिका' ॥२॥
होराशास्त्रेऽतिगम्भीरे भावार्थस्थापनायवै,

मैत्रेयजी
एक समय त्रिकालज्ञ मुनिवर पराशरजी के पास आकर यथाविधि प्रणाम करके
ने पूछा॥१॥ मैत्रेय ने कहा–अज्ञान का नाश करनेवाले आनन्दकन्द ज्ञानस्वरूप भगवान्
पराशर को प्रणाम करता हूँ॥२॥ तत्वज्ञानियो मे श्रेष्ठ भगवान् पराशरमुनि, मैत्रेय पर प्रसन्न
होकर ज्योतिष शास्त्र के साररूप इस शास्त्र का उपदेश करने लगे॥३॥ पराशरजी ने
कहा–सात्विकज्ञानरूप शुक्ल अम्बरधारी विष्णु तथा तद्रूपा श्रीसरस्वती को प्रणाम करता हू,
जिन्होने पाञ्चजन्य शङ्ख और वीणा धारण की है॥४॥ जगत् की उत्पत्ति करनेवाले सूर्य तथा
गणपति को नमस्कार करके ब्रह्मा से सुने हुए वेद के नयनरूप इस ज्योतिष शास्त्र को यथावत्
कहता हू॥५॥

आस्तिकाय प्रदातव्यं ततः श्रेयो ह्यवाप्स्यति ॥६॥
शान्ताय गुरुभक्ताय ऋजवेऽर्चितस्वामिने ॥ दत्ते प्रतिदिनं दुःखं जायते नात्र संशयः ॥७॥ एको
न देयं परशिष्याय नास्तिकाय शठाय च ॥ शुद्धसत्त्वो जगत्स्वामी निर्गुणस्त्रिगुणान्वितः ॥८॥
व्यक्तात्मको विष्णुरनादिः प्रभुरीश्वरः ॥ एकांशेन जगत्सर्वं सृजत्यवति लीलया ॥९॥
संसारकारकः श्रीमाञ्छिमित्तात्मा प्रतापवान् ॥

उपदेश योग्य शिष्य का लक्षण

जो सरल तथा शान्तस्वभाव, ईश्वर तथा धर्म मे विश्वास रखनेवाला, गुरु का भक्त तथा गुरु की सेवा-पूजा की हो ऐसे श्रेष्ठ शिष्य को इस शास्त्र का उपदेश करना चाहिये, तभी मगल होता है॥६॥ इसके विपरीत जो नास्तिक, शठमति तथा दूसरे का शिष्य हो उसको उपदेश देने से दैनन्दिन क्लेश होता है, यह निश्चित है॥७॥

श्रुति के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति

"एको व्यक्ता०" इत्यादि–

एक=अद्वितीय, अनाद्यनन्त, सर्वैश्वर्यविशिष्ट, चराचरजगत् का स्वामी, शुद्धसत्त्वगुणप्रधान माया का अधीश्वर, अव्यक्तरूप से निर्गुण ब्रह्म तथा व्यक्तरूप से त्रिगुणमयी प्रकृति का स्वामी भगवान् विष्णु॥८॥ षड्विध ऐश्वर्यरूपा लक्ष्मी के पति, वन्दनीय तेजोरूप वह विष्णु ही व्यापक होने से इस ससार का निमित्त रूप से (अथवा अभिन्न–निमित्तोपादानरूप से) उत्पत्तिस्थितिलय का कारण है। वह विष्णु ही अपने एक अश से, इस ससार को उत्पन्न करके लीलामात्र से पालन करता है॥९॥ (पुरुष सूक्त=वेद के अनुसार उत्पत्ति दिखाकर 'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्' ब्र० सूत्रानुसार उत्पत्त्यादि वर्णन की है)

त्रिपाव तस्य देवस्य ह्यमृत तत्त्वदर्शिनः ॥ विदन्ति तत्प्रमाण च सप्रधान तथैकपात् ॥१०॥ व्यक्ताव्यक्तात्मको विष्णुर्वासुदेवस्तु गीयते ॥ यदव्यक्तात्मको विष्णुः शक्तिद्वयसमन्वितः ॥११॥ व्यक्तात्मकस्त्रिभिशक्तीभिः सयुतोऽनतशक्तिमान् ॥ सत्त्वप्रधाना श्रीशक्तिर्भूशक्तिश्च रजोगुणा ॥१२॥ शक्तिस्तृतीया या प्रोक्ता नीलाख्या ध्वांतरूपिणी ॥ वासुदेवश्चतुर्थोऽभूच्छ्री शक्त्या प्रेरितो यदा ॥१३॥ सकर्षणश्च प्रद्युम्नोऽनिरुद्ध इति मूर्तिधृक् ॥ तमःशक्त्याऽन्वितो विष्णुर्देवः सकर्षणाभिधः ॥१४॥

"पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृत दिवि। इत्यादि श्रुति तथा 'विष्टभ्याऽहमिद कृत्स्नमेकाशेन स्थितो जगत् ।" आदि स्मृति तात्पर्यानुसार कहते है–त्रिगुणात्मक प्रधान माया का अधीश्वर होने से वह देव=दिव्यरूप है, उसके तीन पाद तो अमृतरूप से स्थित है, जिसको तत्वदर्शी जानते है, (मायारहित निर्विकार ब्रह्मरूप से वर्तमान हैं) और एक पाद=विष्णुरूप से त्रिगुणात्मक प्रधान का स्वामी वेद मे कहा गया है॥१०॥ इस प्रकार व्यक्त तथा अव्यक्तरूप से विष्णु अभयस्वरूप है, और वासुदेव कहे जाते है। और जो अव्यक्तस्वरूप विष्णु है, वे दो शक्ति से युक्त है॥११॥ व्यक्तरूप भगवान् सर्वव्यापक विष्णु सत्व, रजस् तथा तमस् इन तीन गुणो से युक्त है, एव इनकी शक्ति अनन्त है। इन तीन गुणो मे सत्त्वगुणप्रधाना 'श्रीशक्ति' रजोगुणप्रधाना 'भूशक्ति'॥१२॥ तथा तमोगुणप्रधाना 'नीलाशक्ति' है। श्रीशक्ति की प्रेरणा से विष्णु के चार रूप हुए॥१३॥ वासुदेव (पूर्वानुवृत्त) सकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध ये चार रूप हुए। इनमे वासुदेव तो आदि विष्णु स्वरूप ही है, इनसे तमोगुणप्रधान नीला शक्तियुक्त 'सकर्षण' का आविर्भाव हुआ॥१४॥

प्रद्युम्नो रजसा शक्त्या निरुद्धः सत्त्वया युतः॥महान्संकर्षणाज्जातः प्रद्युम्नाद्यदहंकृतिः ॥१५॥ अनिरुद्धात्स्वयं जातो ब्रह्माहंकारमूर्त्तिधृक् ॥ सर्वेषु सर्वशक्तिश्च स्वशक्त्याऽधिकया युतः ॥१६॥ अहंकारस्त्रिधा भूत्वा सर्वमेतदविस्तरात् ॥ सात्त्विको राजसश्चैव तामसश्चेदहंकृतिः ॥१७॥ देवा वैकारिकाज्जातास्तैजसादिंद्रियाणि च ॥ तामसाच्चैव भूतानि खादीनि स्वस्वशक्तिभिः ॥१८॥ श्रीशक्त्या सहितो विष्णुः सदा पाति जगत्त्रयम् ॥ भूशक्त्या सृजते विष्णुर्नीलशक्त्या युतोऽस्ति हि ॥१९॥

एवं रज=शक्तियुक्त, 'प्रद्युम्न' तथा सत्वशक्ति से युक्त 'अनिरुद्ध' का आविर्भाव हुआ। (इस प्रकार श्रुति, स्मृति, सूत्र (वेदान्त) सिद्धान्त से पाशुपत-पाञ्चरात्र आदि शाक्त सिद्धान्त का समन्वय करते हुए सांख्य सिद्धांत से समन्वय करते है) संकर्षण से महत् तत्त्व की उत्पत्ति हुई, प्रद्युम्न से अहकार की उत्पत्ति हुई॥१५॥ अहकार के मूर्तरूप मे स्वय ब्रह्मा 'अनिरुद्ध' से प्रकट हुए। वैसे तो संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध इन तीनो मे तीनो शक्तिया (सात्विकी, राजसी, तामसी) है तथापि प्रत्येक मे अपनी शक्ति प्रधानरूप से तथा अन्यशक्ति गौणरूप से स्थित है॥१६॥ पश्चात् अहकार तत्व के तीन भेद हुए 'सात्विक, राजस, तामस' बाद प्रथम संक्षिप्तसृष्टि हुई अर्थात् पूर्वोक्त तीन रूपो मे अहकार आविर्भूत हुआ॥१७॥ सात्विक अहकार से देवता, तैजस अहकार से इन्द्रिया एव तामस अहकार से आकाशादिक पञ्चभूत हुए॥१८॥ इस प्रकार उत्पन्न हुए ससार को श्रीशक्तियुक्त विष्णु पालन करते है, भूशक्तियुक्त विष्णु उत्पन्न करते है तथा नील=तम शक्तियुक्त होकर सहार करते है॥१९॥

(यहा क्रम विवक्षित नही है)

सर्वेषु चैव जीवेषु परमात्मा वीराजते ॥ सर्वं हि तदिदं ब्रह्मन् स्थितं हि परमात्मनि ॥२०॥ सर्वेषु चैव जीवेषु स्थित ह्यंशद्वयं क्वचित् ॥ जीवांशमधिकं तद्वत्परमात्मांशकः किल ॥२१॥ सूर्यादयो ग्रहाः सर्वे ब्रह्मकामरिपादयः ॥ एते चान्ये च बहवः परमात्मांशकाधिकाः ॥२२॥ शक्तयश्च तथैतेषामधिकांशाः श्रियादयः ॥ अन्यासु स्वस्वशक्तीषु ज्ञेयाः जीवांशकाधिकाः॥२३॥

मैत्रेय उवाच–

रामकृष्णादयो ये च ह्यवतारा रमापते॥तेऽपि जीवांशसंयुक्ताः किं वा ब्रूहि मुनीश्वर ॥२४॥

हे मैत्रेय ! इस प्रकार सम्पूर्ण जीवो मे परमात्मा हैं, और चराचर सारा ससार परमात्मा मे स्थित है॥२०॥ सम्पूर्ण जीवो मे दो अश (जीवाश और परमात्माश भेद से) हैं, उनमें से किसी मे जीवाश और किसी मे परमात्माश अधिक होता है॥२१॥ सूर्य आदि ग्रह तथा ब्रह्मा और कामारि=महादेव आदि देवता तथा अन्यो मे भी परमात्माश अधिक है॥२२॥ तथा श्री, लक्ष्मी, दुर्गा आदि शक्तियो मे भी परमात्माश अधिक है, अन्य सासारिक जीवो मे जीवाश अधिक है॥२३॥

मैत्रेय जी बोले–(इस ससार मे आविर्भूत होने वाले) रामचन्द्र, श्रीकृष्ण आदि जो विष्णु के अवतार शास्त्रो मे कहे गये हैं, क्या वे भी जीवाश से युक्त है ? ॥२४॥

पराशर उवाच-

रामः कृष्णश्च भो विप्र नृसिंहः सूकरस्तथा ॥ एते पूर्णावताराश्च ह्यन्ये जीवांशकान्विताः ॥२५॥ अवताराण्यनेकानि ह्यजस्य परमात्मनः ॥ जीवानां कर्मफलदो ग्रहरूपी जनार्दनः ॥२६॥ दैत्यानां बलनाशाय देवानां बलवृद्धये ॥ धर्मसंस्थापनार्थाय ग्रहा जाताः शुभाः क्रमात् ॥२७॥ रामोऽवतारः सूर्यस्य चन्द्रस्य यदुनायकः ॥ नृसिंहो भूमिपुत्रस्य बुद्धः सोमसुतस्य च ॥२८॥वामनो विबुधेज्यस्य भार्गवो भार्गवस्य च ॥ कूर्मो भास्करपुत्रस्य सैंहिकेयस्य सूकरः ॥२९॥ केतोर्मीनावतारश्च ये चान्ये तेऽपि खेटजाः ॥ परमात्मांशमधिकं येषु ते खेचराभिधाः ॥३०॥ जीवांशमधिकं येषु जीवास्ते वै प्रकीर्तिताः ॥ सूर्यादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च परमात्मांशनिःसृताः ॥३१॥ रामकृष्णादयः सर्वे ह्यवतारा भवन्ति वै ॥ तत्रैव ते विलीयन्ते पुनः कार्योत्तरे सदा ॥३२॥

पराशरजी ने कहा–इन अवतारों में राम, कृष्ण, नृसिंह तथा सूकर अवतार तो सम्पूर्ण रूप से परमात्मांशरूप हैं, अन्य अवतारों में कलारूप से जीवांश भी है।।२५।। यद्यपि (विवक्षित विषय का अवतरण) अजन्मा वासुदेव के अनेक अवतार हैं तथापि जीवों के कर्मफल के देनेवाले ग्रहरूप अवतार मुख्य हैं।।२६।। क्योंकि–धर्मद्वेषी दैत्यों के बल के नाश तथा देवताओं के बल की वृद्धि एवं धर्म का संस्थापन करने के लिये ही इन मंगलमय ग्रहों से ही अवतारों का आविर्भाव हुआ है।।२७।। सो इस क्रम से हुआ–सूर्य से रामावतार, चन्द्रमा से कृष्णावतार, मंगल से नृसिंह, बुध से बौद्धावतार।।२८।। बृहस्पति से वामन, शुक्र से परशुराम, शनि से कूर्म, राहु से वाराह।।२९।। केतु से मत्स्यावतार का आविर्भाव हुआ, इसी प्रकार अन्य अवतार भी इन्हीं सूर्यादिग्रहों से ही आविर्भूत हुए हैं। परमात्मांश के प्राबल्य से ही इन ग्रहों की खेचर संज्ञा है।।३०।। जिसमें जीवांश की अधिकता होती है वे जीव कहलाते हैं (अर्थात् अवतार नहीं), परमात्मांश और जीवांशरूप उभयशक्ति सपन्न सूर्यादि ग्रहों के परमात्मांश के आधिक्य से आविर्भूत।।३१।। राम, कृष्ण आदि अवतार अपना अपना अवतार कार्य करके ग्रहों में ही लीन हो जाते हैं और सृष्टि के प्रलयकाल में ये ग्रह भी अपने कारण रूप 'अव्यक्त' में लीन हो जाते हैं।।३२।।

जीवांशनिःसृतास्तेषां तेभ्यो जाता नरादयः ॥ तेऽपि तत्रैव लीयन्ते तेऽव्यक्ते समयन्ति हि ॥३३॥ इदं ते कथितं विप्र सर्वं यस्मिन्भवेदिति ॥ भूतान्यपि भविष्यन्ति तत्तत्सर्वज्ञतामियात् ॥३४॥ विना तज्ज्योतिषं नान्यो ज्ञातुं शक्नोति कर्हिचित् ॥ तस्मादवश्यमध्येयं ब्राह्मणैश्च विशेषतः ॥३५॥ यो नरः शास्त्रमज्ञात्वा ज्योतिषं खलु निन्दति ॥ रौरवं नरकं भुक्त्वा चान्धत्वं चान्यजन्मनि ॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायांपूर्वखण्डे शास्त्रावतारणं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

ग्रहों के जीवांशाधिक्य से मन्वादि सृष्टि हुई और उसके बाद मनुष्य, पशु, पक्षी आदि की सृष्टि हुई। प्रलयकाल में ये सब भी उन्हीं में लीन होते हैं और वे ग्रह भी अव्यक्त में लीन होते हैं।।३३।। हे मैत्रेय ! जिस अव्यक्त तत्त्व से यह सर्ग उत्पन्न होता है वह सब विज्ञान हमने

तुमसे कहा है, इस विज्ञान को जानने से भूत तथा भविष्यत् सर्ग का ज्ञान प्राप्त कर सकता है॥३४॥ कोई भी विज्ञानी बिना ज्योतिषज्ञान के इसका रहस्य नहीं जान सकता। इसलिये सबको और विशेष करके ब्राह्मणों को अवश्य ज्यौतिषशास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना चाहिये॥३५॥ जो मनुष्य ज्यौतिषशास्त्र के रहस्य को न जानकर इसकी निन्दा करता है वह मरने के बाद रौरव नरक भोग कर इस संसार में अन्धा होकर जन्म लेता है॥३६॥

इति श्रीबृहत्पाराशर होरासाराशे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया
शास्त्रावतारण नाम प्रथमोऽध्याय ॥१॥

पराशर उवाच—
तिर्यक्पंच तथोर्ध्वगाश्च लिखिता रेखाश्च राश्यात्मकं चक्रं स्यात्पुरुहूतदिग्गृहमुखा लग्नादिराशिग्रहाः॥ संलेख्योदयचंद्रकारकपदारूढात्महोराघटी वर्गांशा च दशोक्तलग्नपवशात्तत्फलं वक्ष्यति ॥१॥

भावफल विचाररीति

तिरछी पाच और सीधी पाँच रेखा करने से राशिचक्र होता है, इस राशिचक्र के पूर्वदिशा के कोष्ठक से आरम्भ करके जन्म समय के लग्न आदि १२ भावों की राशि और ग्रह लिखकर, लग्न, चन्द्रमा तथा कारक, पद, उपपद, आरूढ, और भाव, होरा, प्रकरण में कहे अनुसार लग्न तथा लग्नेश, भावेश एव दायेश के द्वारा शुभाशुभ फल कहा जायगा॥१॥

पराशर उवाच
कालात्मा च दिवानाथो मनः कुमुदबांधवः ॥ सत्त्वं कुजो विजानीयाद्बुधो वाणीप्रदायकः ॥२॥ देवेज्यो ज्ञानसुखदो भृगुर्वीर्यप्रदायकः ॥ विचार्यतामिदं सर्वं छायासुनुश्च दुःखदः ॥३॥ राजानौ भानुहिमगू नेता ज्ञेयो धरात्मजः ॥ बुधो राजकुमारश्च सचिवौ गुरुभार्गवौ ॥४॥ प्रेष्यको रविपुत्रश्च सेना स्वर्भानुपुच्छकौ ॥ एवं क्रमेण वै विप्र सूर्यादीनि विचिंतयेत् ॥५॥ रक्तश्यामो दिवाधीशो गौरगात्रो निशाकरः ॥ अत्युच्चांगो रक्तगौरो दूर्वाश्यामो बुधस्तथा ॥६॥ गौरगात्रो गुरुर्ज्ञेयः शुक्रः श्यामस्तथैव च ॥ कृष्णदेहो रवेः पुत्रो ज्ञायते द्विजसत्तम ॥७॥ वह्न्यंबुशिखिविष्णुबिडौजशचिका द्विज ॥ सूर्यादीनां खगानां च तथा ज्ञेयाः क्रमेण च ॥८॥ क्लीबौ द्वौ सौम्यसौरी च युवतीन्दुभृगु द्विज ॥ नराः शेषाश्च विज्ञेया भानुर्भौमो गुरुस्तथा ॥९॥अग्निभूमिनभस्तोयवायवः क्रमतो द्विजा।भौमादीनां ग्रहाणां च तत्त्वान्यामी प्रकीर्तिताः। ॥१०॥

ग्रह तथा राशियों के स्वरूप

पराशरजी ने कहा—सूर्य समय का रूप है, चन्द्रमा, मन तथा मंगल को बल का रूप जानना, बुध, वाणी का देनेवाला॥२॥ बृहस्पति, ज्ञान और सुख का देनेवाला, शुक्र, वीर्य का

दाता है। शनि, दु:ख देनेवाला है, यह सब लग्न से विचार करना चाहिये॥३॥ सूर्य, चन्द्रमा, राजा है। मंगल नेता है, बुध राजकुमार है, गुरु, शुक्र दोनों मन्त्री है॥४॥ शनि दूत है। राहु, केतु सेनारूप में है। हे मैत्रेय ! इस प्रकार से इन ग्रहों में राजा आदि भाव की नैसर्गिक स्थिति है॥५॥ सूर्य रक्तश्याम वर्ण है, चन्द्रमा गौरवर्ण है, मंगल अति उच्च अंगवाला रक्त वर्ण है, बुध हरितवर्ण है॥६॥ बृहस्पति गौरवर्ण है। शुक्र श्याम वर्ण है, शनि कृष्ण वर्ण है॥७॥ अब देवता कहते है–अग्नि, जल, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी क्रम से सूर्यादि ग्रहों के देवता है॥८॥ बुध और शनि नपुंसक, चन्द्रमा, शुक्र ये स्त्री तथा सूर्य, मंगल और गुरु पुरुष है॥९॥ अब तत्त्व सुनिये–अग्नि, भूमि, आकाश, जल वायु ये तत्त्व क्रम से मंगल आदि ग्रहों के जानना॥१०॥

गुरुशुक्रौ विप्रवर्णौ कुजार्कौ क्षत्रियौ द्विज । शशिसौम्यौ वैश्यवर्णौ शनिःशूद्रो द्विजोत्तम ॥११॥ चन्द्रसूर्यगुरुसौम्या भृग्वारशनयो द्विज ॥ सत्त्व रजस्तम इति स्वभावो ज्ञायते क्रमात् ॥१२॥ मधुपिंगलदृक्सूर्यश्चतुरस्रः शुचिर्द्विज ॥ पित्तप्रकृतिको धीमान्पुमानल्पकचो द्विज ॥१३॥ बहुवातकफ प्राज्ञश्चंद्रो वृत्ततनुर्द्विज ॥ शुभदृङ्मधुवाक्यश्च चचलो मदनातुरः॥१४॥ क्रूररक्ताक्षणो भौमश्चपलो–दारमूर्तिक ॥ पित्तप्रकृतिक क्रोधी कृशमध्यतमुर्द्विज ॥१५॥ वपुःश्रेष्ठो क्लिष्टवाक्च ह्यतिहास्यरुचिर्बुध ॥ पित्तवान्कफवान्विप्र मारुतप्रकृतिस्तथा॥१६॥बृहद्गात्रो गुरुश्चैव पिंगलो मूर्द्धजेक्षणः ॥ कफप्रकृतिको धीमान् सर्वशास्त्रविशारदः ॥१७॥

वर्ण=गुरु, शुक्र, विप्रवर्ण, सूर्य मंगल क्षत्री तथा चन्द्र, बुध, वैश्यवर्ण एवं शनि शूद्रवर्ण है॥११॥ चन्द्र, सूर्य, गुरु, बुध, शुक्र, मंगल तथा शनि ये क्रमशः सत्व, रजस् तथा तमस् स्वभाव वाले है॥१२॥ (अब ग्रहों की प्रकृति आदि भिन्न भिन्न कहते है।) सूर्य–मधुभाषी, पिंगल दृष्टि, चौकोर, पवित्र स्वभाव पित्तप्रकृतिवाला, बुद्धिमान्, पुरुष, अल्पकेशी है॥१३॥ चन्द्रमा=वायु तथा कफ प्रकृति वाला, बुद्धिमान् गोल आकृतिवाला, सौम्यदृष्टि, मनोहर वाणी वाला, चचल तथा कामी है॥१४॥ मंगल=क्रूरस्वभाव, रक्तवर्ण, अरुणदेह, चचल, उदार हृदयवाला, पित्तप्रकृति, क्रोधी, कृश, अंगवाला, मंझोला कदवाला है॥१५॥ बुध=सुन्दर शरीर, कम बोलनेवाला, बहुत हँसोड स्वभाव, पित्त तथा कफ प्रकृति, वायुस्वभाव वाला है॥१६॥ बृहस्पति=बृहत् शरीर पिंगल दृष्टि, और उँचे केशवाला, कफ प्रकृति, सर्वविद्याविशारद और बुद्धिमान् है॥१७॥

सुखी कांतवपुः श्रेष्ठ सुलोचनो भृगोः सुतः ॥ काव्यकर्ता कफाधिक्यानिलात्मा वक्रमूर्धजः ॥१८॥ कृशदीर्घतनु शौरिः पिंगदृष्ट्यनिलात्मकः ॥ स्थूलदंतो ऽलसःपंगु खररोमकचो द्विज ॥१९॥ धूम्राकारो नीलतनुर्वनस्थोऽपि भयकरः ॥ वातप्रकृतिको धीमान् स्वर्भानुप्रतिमः शिखी ॥२०॥ अस्थिरक्तस्तथा मज्जा त्वक्चर्म वीर्यस्नायवः ॥ तासामीशाः क्रमेणोक्ता ज्ञेयाः सूर्यादयो द्विज ॥२१॥ देवालयजलं वह्निक्रीडादीनां तथैव च ॥ कोशशय्या ह्युत्कराणामीशाः सूर्यादयः क्रमात् ॥२२॥ अयनक्षणवारर्तुमासपक्षसमा द्विज ॥ सूर्यादीनां क्रमाज्ज्ञेया निर्विशंक द्विजोत्तम ॥२३॥ कटुलवणतिक्तमिष्टमधुरेसुकषायकाः ॥ क्रमेण सर्वे विज्ञेयाः सूर्यादीनां

द्विजोत्तम ॥२४॥ बुधेज्यौ बलिनौ पूर्वे रविभौमौ च दक्षिणे ॥ वारुणः सूर्यपुत्रश्च सितचंद्रौ तथोत्तरे ॥२५॥ *निशायां बलिनश्चंद्रकुजसौरा भवति हि* ॥ सर्वदाज्ञो बलीज्ञेयो दिनशेषा द्विजोत्तम ॥२६॥ कृष्णे च बलिन- क्रूराः सौम्या वीर्ययुताः सिते ॥ सौम्यायने सौम्यखेटो बली याम्यायनेऽपरः ॥२७॥

शुक्र=सुखी, सुन्दर, श्रेष्ठ, सुलोचन, कवि, कफ वात प्रकृति तथा कुंचित केशवाला है।।१८।। शनि=कृश और लम्बा कद, पिंगलदृष्टि, वायुप्रकृति, स्थूल दांतवाला, शोभित पुरुषाकृति तथा कड़े केश और रोमवाला है।।१९।। राहु तथा केतु=धूम्र, नीलवर्ण, वनचारी, भयंकर रूप तथा वातप्रकृति वाले है।।२०।। सूर्यादि ग्रहो के स्थान—देवमन्दिर, जलागार, अग्निस्थान, खेलने का स्थान, कोशागार, शय्या, कूड़ा घर ये क्रमश जानना।।२२।। इसी प्रकार समय—अयन, मुहूर्त, वार, ऋतु, मास, पक्ष तथा वर्ष ये क्रमश सूर्य आदि ग्रहो के निश्चित है।।२३।। रस क्रमश —कटु, लवण, तिक्त, मीठा, मधुर, ईख, कषाय, ये सूर्य आदि ग्रहो के रस है।।२४।। दिशा—बुध तथा गुरु पूर्वबली, सूर्य मगल, दक्षिण बली, शनि पश्चिम बली तथा शुक्र चन्द्रमा उत्तर बली है।।२५।। समय बल—चन्द्रमा, मगल, शनि ये रात्रि मे बलवान् है, बुध सर्वकाल मे बली है, सूर्य, गुरु, शुक्र ये दिन मे बली हैं।।२६।। अयन तथा पक्ष बल—क्रूरग्रह कृष्णपक्ष मे और सौम्यग्रह शुक्लपक्ष मे बली है। इसी प्रकार उत्तरायण मे सौम्यग्रह और दक्षिणायन मे क्रूरग्रह बली है।।२७।।

स्वदिवससमहोरामासपर्वःकालवीर्यकम् ॥ शकुबुगुशुचराद्या वृद्धितो वीर्यवत्तराः ॥२८॥ स्थूलाञ् जनयति सूर्यो दुर्भगान्सूर्यपुत्रकः ॥ क्षीरोपेतांस्तथा चंद्रः कटुकाद्यान्धरासुतः ॥२९॥ गुरुज्ञौ सफलान्विप्र पुष्पवृक्षान् भृगोः सुतः ॥ नीरसान्सूर्यपुत्रश्च एवं ज्ञेयाःक्रमा द्विज ॥३०॥ राहुश्चांडालजातिश्च केतुर्जात्यंतरस्तथा ॥ शिखिस्वर्भानुमदानां वल्मीकं स्थानमुच्यते ॥३१॥ चित्रकंथा फणींद्रस्य केतोश्छिद्रयुतो द्विज ॥ सीसं राहोर्नीलमणिः केतोर्ज्ञेयो द्विजोत्तम ॥३२॥ गुरोः पीतांबरं विप्र भृगोः क्षौमं तथैव च ॥ रक्तं क्षौमं भास्करस्येदोः क्षौमं सितं द्विज ॥३३॥ बुधस्य तु कृष्णक्षौमं रक्तचित्रं कुजस्य च ॥ वस्त्रं चित्रं शनेर्विप्र पट्टवस्त्रं तथैव च ॥३४॥ भृगोर्ऋतुर्वसंतश्च कुजभान्वोश्च ग्रीष्मकः ॥ चंद्रस्य वर्षा विज्ञेया शरज्ज्ञस्यतथा विदः ॥३५॥ हेमंतोऽपि गुरोर्ज्ञेयःशनेस्तुशिशिरो द्विज ॥ अष्टौ मासाश्च स्वर्भानोः केतोर्मासत्रयं द्विज ॥३६॥ राहुरपंगुचद्राश्च विज्ञेया धातुखेचराः ॥ मूलग्रहौ सूर्यसुतौ अपरा जीवसंतकाः ॥३७॥ ग्रहेषु मंदो वृद्धोऽस्ति आयुर्वृद्धिप्रदायकः ॥ नैसर्गिके बहुसमान्ददाति द्विजसत्तम ॥३८॥

अपने दिन, वर्ष, होरा, मास, राशिमक्रमण तथा समय मे बलवान् होते हुए भी शनि, मगल, बुध गुरु शुक्र, चन्द्रमा, राहु तथा सूर्य क्रमश उत्तरोत्तर अधिक बली (नैसर्गिक) है।।२८।। बली होने का फल कहते हैं—सूर्य बली हो तो स्थूल—वनस्पति की विशेष उत्पत्ति करता है, इसी प्रकार शनि, दुर्भग (कटीली झाडी, शमी आदि) की, चन्द्रमा, दूधवाले (दूध के समान रसवाले) वृक्षो की, मगल, कडवे एव बुध तथा गुरु, फलवाले वृक्षो की तथा शुक्र, पुष्पवाले वृक्षो को एव शनि, नीरस वृक्षो की विशेष वृद्धि करता है।।३०।। ग्रहो की

जाति–राहु चाण्डाल, केतु वर्णसंकर, राहु, केतु तथा शनि का वल्मीक स्थान कहा है॥३१॥

वस्त्र तथा आभरण–राहु की चित्रविचित्र कन्था (गुदडी) केतु की सछिद्र (फटी हुई) राहु की धातु सीसा तथा केतु का नीलमणि है॥३२॥ हे मैत्रेय ! गुरु का वस्त्र, पीताम्बर, शुक्र का महीन (फाइन), सूर्य का लाल तथा महीन, चन्द्रमा का श्वेत महीन॥३३॥ इसी प्रकार बुध का काला महीन और मंगल का लाल तथा सचित्र और शनि का रेशमी तथा चित्रित वस्त्र होता है॥३४॥ ग्रहों की ऋतु–शुक्र की वसन्त ऋतु, मंगल और सूर्य की ग्रीष्म तथा चन्द्रमा की वर्षा और शरद् ऋतु है॥३५॥ बृहस्पति की हेमन्त तथा शनि की शिशिर ऋतु है। राहु अपना प्रभाव ८ मास तक और केतु ३ मास तक करता है॥३६॥ ग्रहों की धातु–राहु, मंगल, शनि, चन्द्रमा ये धातु के स्वामी है, सूर्य तथा शुक्र मूल के तथा बुध गुरु केतु ये जीव संज्ञक है॥३७॥ ग्रहों में शनि वृद्ध अर्थात् निर्बल है परन्तु नैसर्गिक दशा में यह शनि बहुत वर्ष तक आयुर्दाय प्रदाता है॥३८॥

यहाँ ग्रहों का स्वभाव आदि वर्णन समाप्त हुआ

अथ पंचांगस्थितग्रहेषु चालनमाह

स्वेष्टादग्रे भवेत्पंक्तिः पंक्तौ स्वेष्टं विशोधयेत् ॥ स्वेष्टात् पृष्ठे भवेत्पंक्तिः स्वेष्टे पंक्तिं विशोधयेत् ॥ ऋणं धनं तथा ज्ञेयं चालने विधिरेव हि ॥३९॥

अथ ग्रहाणां तात्कालिकीकरणमाह

गतगम्यदिनाहतद्युभुक्तेः खरसाप्तांशवियुग्यतो ग्रहः स्यात् ॥ तत्कालभवस्तथा घटिघ्ना खरसैर्लब्धकलोनसंयुतः स्यात् ॥४०॥

इष्टकालिक ग्रह स्पष्ट करने के लिये पंचांग स्थित ग्रहस्पष्ट में 'चालन'

अपने इष्टकाल से आगे की पंक्ति हो तो पंक्ति में इष्ट (वार, घटी, पल) घटाना चाहिये। एवं अपने इष्टकाल से पीछे की पंक्ति हो तो इष्ट में पंक्ति घटाने से जो शेष अंक रहता है वह (वार, घटी, पलात्मक) चालन होता है और क्रम से प्रथम ऋण तथा दूसरा धन चालन होता है॥३९॥

ग्रहों का तात्कालिक स्पष्ट करना

ऋण तथा धन चालन से ग्रह की दैनिक गति को गुणा करके ६० का भाग देकर लब्ध, अंश, घटी, पल अंक को पंक्ति के ग्रहस्पष्ट में चालन ऋण हो तो घटावे और धन हो तो जोडने से इष्ट दिन का ग्रहस्पष्ट होगा। इसी प्रकार चालन के घटी, पल अंक से ग्रह गति गुणित कर उपर्युक्त रीति से संस्कार करने पर तात्कालिक अर्थात् इष्टकाल का स्पष्ट ग्रह होता है॥४०॥

अथ भयातभभोगसाधनम्

इष्टमधिकं नक्षत्रन्यूनं तदा इष्टादित्यनेन ज्ञेयम् । इष्टाद्विहीनं च दिनर्क्षनाडी भयातसंज्ञा भवतीह तस्य । दिनर्क्षनाडी खरसेषु शुद्धा निजर्क्षयुक्ता सहिते भभोग ॥४१॥ इष्टं न्यूनं नक्षत्रमधिकं तदा गतर्क्षनाड्यश्चेति ज्ञेयम् ॥ गतर्क्षनाडी खरसेषुशुद्धा सूर्योदयादिष्टघटीषु युक्ता ॥ भयातसंज्ञा भवतीह तस्य निजर्क्षनाडीसहिते भभोग ॥४२॥

अथ चंद्रस्पष्टमाह

गतर्क्षं षष्टिगुणितं भभोगेन च भाजितम् ॥ अश्वादिषष्टिगुणितैर्लब्धं तत्र सुयोजयेत् ॥४३॥ तच्चापि द्विगुणं कृत्वा ह्यंकेन विभजेत्पुनः ॥ मृगाकसव्वभशादीन्सुसाधय द्विजोत्तम ॥४४॥ खखशून्याष्टवेदेन गतिर्भभोगभाजिता ॥ एवं चंद्रस्य विज्ञेया रीतिः स्पष्टतरा बुधैः ॥४५॥

भयात–भभोग साधन

यदि इष्ट अधिक और नक्षत्र कम हो तो–

इष्टमें से दिन नक्षत्र की घटीपल घटाने से 'भयात' होता है और दिन नक्षत्र की घटी पलको ६० में से घटा कर वर्तमान नक्षत्र की अर्थात् अगले दिननक्षत्रकी घटी पर जोड़ने से भभोग होता है॥४१॥

यदि इष्ट कम और नक्षत्र अधिक हो तो–

दिन नक्षत्र की घटी पल को ६० में घटा कर इष्ट में जोड़ने से भयात होता है और इष्टकालिक नक्षत्र की घटी-पल जोड़ने से भभोग होता है॥४२॥

चन्द्र स्पष्ट करना

'भयात' को ६० से गुणा करके 'भभोग' का भाग देकर जो अंक प्राप्त हो उसमें गत अश्विनी आदि नक्षत्र संख्या को ६० से गुणा कर जोड़े॥४३॥ और अब इस राशि को २ से गुणा कर ९ का भाग देने से (ऊपर के अंक में ३० का भाग देने पर) जो अंक प्राप्त होगा वह राशि, अंश, कला, विकलात्मक चन्द्रस्पष्ट होगा॥४४॥

चन्द्रमा की गति का स्पष्ट

चन्द्रगति स्पष्ट करने के लिये चन्द्रमा की मध्यम गति ४८००० में भभोग की संख्या का भाग देने से चन्द्रमा की इष्ट दिन की गति स्पष्ट होती है॥४५॥

यह होराशास्त्र मनुष्यों के शुभाशुभ फल का प्रदर्शक है। इस फलाफल निर्णय के उपकरण ग्रह स्पष्ट और भावस्पष्ट है, यह सिद्धान्त (करण) ग्रन्थों का विषय होने से इनके साधन की रीति भगवान् पराशरजी ने नहीं कही है। तथापि पञ्चांगसिद्ध ग्रहस्पष्टों से इष्ट दिन और

समय का चालन देकर ग्रह और भावस्पष्ट की रीति अन्य ग्रन्थो से लेकर आवश्यक प्रक्रिया मूल मे ही सगृहीत कर दी गई है, तथा कुछ अन्य आवश्यक अयनाश आदि भी क्षेपकरूप से लिखे गये हैं। यद्यपि भारत मे वेधसिद्ध पचागो का अभाव है, तथापि वर्तमान मे 'जन्मभूमि, मदेश, विशुद्ध सिद्धान्त पजिका, इण्डियन एफेमेरी, सरस्वती तथा काशी से निकलनेवाले अनेक पञ्चाग ऐसे उपलब्ध है, जिनमे दैनिक ग्रह स्पष्ट रहते है, उनसे केवल इष्ट मात्र का चालन देना होगा, यदि दैनिक स्पष्ट प्राप्त न हो तो साप्ताहिक पक्ति से चालन करके ग्रह स्पष्ट करना चाहिए। ग्रह स्पष्ट करने मे दैनिक प्रात कालिक या जिस इष्ट के ग्रह स्पष्ट हो उससे अथवा साप्ताहिक समीप की इष्ट से आगे या पीछे की पक्ति से उपर्युक्त नियमानुसार चालक करके तब इस चालक से ग्रह गति को गुणा करना चाहिए। इस गुणन मे प्राय चालक मे घटी, पल अथवा दिन, घटी, पल, अक, सख्या रहती है, यह गुणक सख्या है, तथा ग्रह गति भी घटी पल ये दो सख्या रहती है। अत भिन्न जातीय सख्या के गुणन मे या तो एक जाति करके गुणन होता है, जिसमे अक पात बहुत होता है, अत सरल रीति 'गोमूत्रिका' रीति है और यही प्रचलित भी है। इस रीति से 'गुणक' सख्या के अको को ऊपर कोष्टको मे क्रमश रखा जाता है और ग्रह गति के घटो, पल जो कि 'गुण्य' है वे प्रत्येक अक के नीचे रखे जाते है। जैसे—

गुणक- चालक-	दिन	घटी	पल
	घटी	घटी	घटी
गुण्य- ग्रहगति	पल	पल	पल

इस प्रकार सन्निवेशित करके ऊपर के प्रत्येक गुणकाक से नीचे की घटी पल गुणित कर पल मे ६० का भाग देकर अपने ऊपर की घटी सख्या मे युक्त करे। पश्चात् गुणक पल गुणित गुण्य की घटीराशि कोगुणक घटी के पलाक मे युक्त कर ६० का भाग देकर ऊपर युक्त करके उसको भी गुणक दिनाक की पलसख्या मे युक्त कर ६० का भाग देकर लब्ध सख्या को घटी सख्या मे जोडे, ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने से अश स्थानी सख्या होती है। इस प्रकार आये हुए अश, घटी, पल को पक्ति के ग्रहस्पष्ट मे, 'चालक' ऋण हो तो घटावे और 'धन' हो तो जोडे। वक्री ग्रह मे ऋण हो तो जोडे और धन हो तो घटावे तथा राहु केतुमे सदा विपरीत के ही समान करे तो इष्टकाल का ग्रह स्पष्ट होता है।

उदाहरण—

श्री स० २०१४ भाद्रपद कृष्णपक्ष ३ भौमवासरे दिने ९/१० (इ० स्टे० टा०) समये (कलकत्ता नगरे) कस्यचिज्जन्म। अक्षाश २२।३४ पलभा ४/५१। अयनाश २३॥ दिनमान ३२। ४०॥ यहा 'सरस्वती' पचाग मे समीप की गत पक्ति श्रावण शुक्ल १५

शनिवार इष्ट २५/३४ है। प्रथम जन्मकाल का इष्ट हुआ– (दिने ९।१०+०।२३=९।३३ वेलान्तर ÷ ०।५=९।२८ का घट्यादि इष्ट–) १०।०० इसमे पंक्ति का इष्टकाल घटाया तो २।४५।०२ दिनादि धन चालक प्राप्त हुआ। इस चालक से सूर्य गति ५८।१२ को गोमूत्रिका न्याय से गुणा किया तो २।४०।५ दिनादि फल प्राप्त हुआ। इसको पंक्तिस्थ सूर्य ४।२०।४८।१३ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ सूर्य स्पष्ट हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहो को स्पष्ट किया तो–म ४।२७।४५।३८ ग० ३९।२६, बु० ४।२१।३४।४५ ग० ९९।४८ वक्र बृ० ५।१३।२७।३६ ग० १३।१८ शु० ६।१।५८।३४ ग० ७१।२२ श० ७।१५ ०५।१२ ग० २/४२ रा० ६।२०।०५।१५ ग० ३।११ ॥ अब चन्द्रस्पष्ट के लिए भभोग ६६।१ भयात ३०।१ से उपर्युक्त रीति से प्राप्त स्पष्ट चन्द्र १०।२६।३०।३३ । ग० ७२७।५० इस प्रकार ९ ग्रह स्पष्ट हुए–

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	९
२३	२६	२७	२१	१३	१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०	ग०
५७	७२७	३९	९९	१३	७१	२	३	३
२९	५०	२६	४८	१८	२२	४२	११	११
			वक्री					

अथोच्चनीचग्रहा

भजो वृषो मृग कन्या कुलीरझषतौलिका ॥ सूर्यादीना क्रमादेतास्तुङ्गसंज्ञा प्रकीर्तिता ॥ नीचास्तत्सप्तमा ज्ञेया ग्रहा नीचा विनिश्चिता ॥४६॥ सूर्यस्य भागे दशमे तृतीये चद्रस्य जीवस्य तु पचमेऽजो ॥ सौरस्य विंशे त्वधिसप्त केतोर्विधाद्‌मृगो पचदशो बुधस्य ॥४७॥ भौमस्य विशेऽष्टपुते परोच्चैर्विंशल्लवे सूर्यसुतस्य नीचा ॥४८॥

अथ मूलत्रिकोणमाह

विंशतिरशा सिहेत्रि कोणमपरेस्वभवनमर्कस्य ॥उच्च भागत्रितय वृषमिदो स्यात्त्रिकोणमपरेशा ॥४९॥ द्वादश भागा मेषे त्रिकोणमपरे स्वभे तु भौमस्य ॥ उच्चफल कन्याया बुधस्य तिथ्यंश कै सदा चित्यम् ॥५०॥ परतस्त्रिकोणजाते पचभिरशैस्वराशिज परत ॥ दशभिर्भागैर्जीवत्रिकोणफल स्वम पर चापे ॥५१॥ शुक्रस्य तु तिथ्योऽशास्त्रिकोणमपरे तुले स्वराशिश्च ॥ कुभे त्रिकोणनिजभै रविजस्य रविर्यथा सिहे ॥५२॥

ग्रहो का 'उच्च' तथा 'नीच'

सूर्यादि ग्रहो की क्रम म मेष वृष मकर कन्या, कर्क मीन तथा तुला ये उच्चराशि है

वे भाव स्थित ग्रह परस्पर शत्रु होते है। तथा मित्र X मित्र=अतिमित्र। मित्र X सम=सम। सम X शत्रु=शत्रु और शत्रु X शत्रु=अतिशत्रु, यह 'पञ्चधामैत्री' कही जाती है।।५७।।५८।।

निसर्गमैत्रीचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
च० मं० गु०	सू० बु०	र० च० गु०	र० शु०	र० च० मं०	बु० श०	बु० शु०	मित्र
बु०	मं० गु० शु० श०	शु० श०	मं० गु० श०	श०	मं० गु०	०	सम
शु० श०	०	बु०	च०	बु० शु०	र० च०	र० च० मं०	शत्रु

तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

	सू	च	मं	बु	बृ	शु	श
मित्र	बृ शु श	श ० ०	बृ शु श	बृ श शु	श शु सू मं बु०	श सू मं बु बृ०	च सू मं बु बृ गु०
शत्रु	मं बु च	सू मं बु बृ शु ०	सू बु च ०	मं सू च ०	च ० ०	च ० ०	० ० ०
मित्र	२,३,४,१०,११,१२						
शत्रु	१,५,६,७,८,९,						

जन्मलग्नचक्रम्

८ श
६ बृ
७ शु.
रा
९
५ म
बु
सू
१०
४
के
च ११
१
३
१२
२

अथ पंचधामैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ग्रह
बृ	०	बृ	शु	सू म	बु श	बु० ० शु	अति० मि०
०	श०	श शु	बृ श		म बृ सू	बृ	मि०
च श म गु	बु ० सू	सू च	सू	बु शु च	०	सू च म	सम०
बु	म बृ शु	०	म	०	०	०	शत्रु
०	०	बु	च	०	च		अति० शत्रु

अथ शुभबलचक्रम्

उच्च०	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
१	०	०	०	०	०	०
०	४५	३०	१५	७	०	०
०	०	०	०	३०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

अथाशुभबलचक्रम्

उच्च	मूल	स्व०	मित्र	सम	नीच	शत्रु
०	०	०	०	०	१	१
०	७	४५	३०	४५	०	०
०	३०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०

अथ ग्रहाणां बलमाह

स्वोच्चे शुभं बलं पूर्णं त्रिकोणे पादवर्जितम् ॥ स्वर्क्षे दलं मित्रगेहे पादमात्रं प्रकीर्तितम् ॥५९॥
पादार्धं समभे प्रोक्तं व्यर्थं नीचास्तशत्रुगे ॥ तद्वद्दुष्टबलं ब्रूयाद्व्यत्ययेन विचक्षणः ॥६०॥

अथ धूमाद्यप्रकाशग्रहस्पष्टीकरणम्

लग्नगे चन्द्रगे वापि यशआयुर्ज्ञाननाशनम् । इति धूमादिदोषाणां फलं पद्मासनोदितम् ॥६१॥

ग्रहों का बलपरिमाण

शुभग्रह च०, बु० गु० शु० का बल उच्चराशि का होने से पूर्ण तथा मूलत्रिकोण मे तीनपाद और मित्रराशि मे एक पाद, अपनी राशि मे आधा समराशि मे पादार्धतथा नीच, अस्त और शत्रु राशि मे बलशून्य होता है। इसी प्रकार पाप ग्रह इससे विपरीत बल पाते है॥५९॥६०॥

धूमादि अप्रकाशग्रह फल तथा स्पष्टीकरण

आगे कहे गये धूमादि अप्रकाशग्रह, लग्न अथवा चन्द्रमा के साथ हो तो यश, आयु और ज्ञान का नाश करते है। यह फल पूर्वकाल मे ब्रह्मा ने कहा था॥६१॥

चत्वारो राशयो भानौ युक्तभागास्त्रयोदश ॥ धूमो नाममहादोषः सर्वकर्मविनाशकः ॥६२॥
धूमो मण्डलतः शुद्धो व्यतीपातोऽत्र दोषदः ॥ स षड्भेन व्यतीपाते परिवेषस्तु दोषकृत् ॥६३॥
परिवेषश्च्युतश्चक्रादिन्द्रचापश्च दोषदः ॥ अत्यष्टयंशयुते चापे केतुखेटः परो विषम् ॥६४॥
एकराशियुते केतौ सूर्यः स्यात्पूर्ववत्समः ॥ अप्रकाशग्रहाश्चैते दोषाः पापग्रहाः स्मृताः ॥६५॥

स्पष्टीकरण रीति

तात्कालिक स्पष्ट सूर्य मे ४।१३।२० जोडने से 'धूम' नाम का महादोष होता है, जो सब कार्य का नाश करनेवाला है॥६२॥ इस धूम को १२ राशि मे कम राशि से 'व्यतिपात' दोष (नाम) होता है। इसमें ६ राशि योग करने से 'परिवेष' नामक दोष होता है॥६३॥ परिवेष को १२ राशि मे घटाने से 'इन्द्रचाप' नाम का दोष है। इन्द्रचाप मे १६ अं० ४० क० योग करने से 'केतु' होता है॥६४॥ केतु मे १ राशि योग करने से पूर्वोक्त स्पष्ट सूर्य के समान अङ्क होता है। इस प्रकार ये ५ अप्रकाश ग्रह स्पष्ट होते हैं॥६५॥

उदाहरण-(कालनिध)
जन्मकालीन सूर्य स्पष्ट २।४।२८।१ इसमें ४।१३।२०। योग किया तो 'धूम' ६।१७।४८।१ हुआ। १२ राशि मे घटाया तो 'व्यतीपात' ५।१२।११।५९ हुआ। ६ राशि युक्त किया तो ११।१२।११।५९ यह 'परिवेष' हुआ, पुनः १२ मे घटाया, १७।४८।१ तो इन्द्रचाप हुआ, १६।४० योग किया तो ध्वज' १।४।२८।१ हुआ। इसमें १ राशि युक्त की तो पूर्वोक्त २।४।२८।१ सूर्य हुआ। चक्र

अप्रकाशिकक्षेपकाः स्युः				
धूम	व्यतीपात	परिवेष	इन्द्रधनु	ध्वज
रा १४	१२	६	१२	०
अं १३	०	०	०	१६
क २०	०	०	०	४०

अप्रकाशिकग्रहाः स्पष्टाः स्युः						
धूम	व्यतीपात	परिवेष	इन्द्रधनु	ध्वज	गुलिक	प्राणपद
६	५	११	०	१	५	३
१७	१२	१२	१७	४	६	४
४८	११	११	४८	२८	०	०
२	५१	५१	२	२	०	०

अथ जन्मकाले गुलिकसाधनमाह

रविवारादि शन्यन्त गुलिकादि निरूप्यते ॥६६॥ दिवसानष्टधा कृत्वा वारेशाद्गणयेत्क्रमात् ॥६७॥ अष्टमांशो निरीशः स्याच्छन्यंशो गुलिकः स्मृतः ॥ रात्रिरप्यष्टधा भक्ता वारेशात्पञ्चमादितः ॥६८॥ गणयेदष्टमः खण्डो निष्पतिः परिकीर्तितः ॥ शन्यंशे गुलिकः प्रोक्तो गुर्वंशे यमघटकः ॥६९॥ भौमांशे मृत्युरादिष्टो रव्यंशे कालसंज्ञकः ॥ सौम्यांशेऽर्द्धप्रहरकः स्पष्टकर्मप्रदेशकः ॥७०॥

गुलिक साधन

रविवार आदि से शनिवार तक के 'गुलिक' आदि योग कहते है। दिनमान मे ८ का भाग देकर प्राप्त अष्टमांश को प्रथम भाग और द्विगुण द्वितीय भाग इसी प्रकार ८ भाग कल्पना करे और वार के स्वामी से क्रम से सातो ग्रहो के सात काल जाने। आठवा भाग निरीश अर्थात् अधिपति रहित होता है। इन भागो म शनि का भाग 'गुलिक' कहा जाता है। इसी प्रकार रात्रि के भी ८ भाग करके वारेश से पाँचवे ग्रह से आरंभ करके सातो ग्रहो के भाग समझे। आठवा भाग निरीश है। इन सातो भागो म शनि का भाग 'गुलिक' है और गुरु का भाग 'यमघटक' है। मंगल का भाग 'मृत्यु' संज्ञक है। सूर्य का भाग 'कालवेला' और बुध का भाग 'अर्धयाम' होता है। ये योग अपने नामानुसार कर्म के निर्देशक है॥

(श्लोक सं० ६६ से ७० तक)

उदाहरण—श्री० सं० २०१४ भाद्र० कृ० ३ भौमे-दिनमान ३२।४ म ८ का भाग दिया लब्ध ४।५ यहा वारेश मंगल है अतः मंगल से गणना किया—तो प्रथम मंगल का सूर्योदय से ४।० (घटी पल तक) मृत्युयोग। बाद ८।१० तक अर्धयामा बाद १२।१५ तक यमघटक इसके बाद शुक्र का भाग त्यागकर १६।२० से २०।२५ तक गुलिक योग है। इसम गुलिकारंभ म इष्ट १६।२१ पर पूर्वोक्त रीति से लग्नस्पष्ट करने से। ७।२१।४०।२० यह गुलिक लग्न स्पष्ट हुआ।

गुलिकगुणकध्रुवांकाः स्युः							
रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	ग्रहा
७	६	५	४	३	२	१	दिवा
३	२	१	७	६	५	४	रात्रि

गुलिक लग्न साधन

गुलिकारम्भसमयात् लग्न साधयेद् बुधः । तल्लग्न च तत सर्वं जातकस्य फल भवेत् ॥७१॥

दिन के ८ भागो मे से 'गुलिक' भाग आरम के इष्ट पर लग्न स्पष्ट करे। उसका नाम 'गुलिकलग्न' है। उससे आगे कहे अनुसार जातक का शुभाशुभ फल जाने॥७१॥

अथ प्राणपदसाधनमाह

घटी चतुर्गुणा कार्या तिथ्या १५ प्तैश्च पलैर्युता । दिनकरेणापहृत शेष प्राणपद स्मृतम् ॥७२॥ शेषात्पलाताद्द्विगुणीविधाय राश्यशसूर्यर्क्षनियोजिताय ॥ तत्रापि तद्राशिचरात् क्रमेण लग्नाशप्राणाशपदैक्यता स्यात् ॥७३ पुनः—स्वेष्टकाल पलीकृत्य तिथ्याप्त भादिक च यत् ॥७४॥ चरागद्विभगे भाने भानौ युङ्नमवे सुते ॥ स्फुट प्राणपद तस्मात्पूर्ववच्छोधयेत्तनु ॥७५॥

इति श्री बृ० पा० होरासारोपूर्वखण्डे ग्रह–गुण–स्वरूपादिकथनो नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

प्राणपदलग्नसाधन

जन्म इष्ट घटी को ४ से गुणा करके पृथक् स्थापन करे तथा पल यदि १५ से अधिक हो तो १५ का भाग देकर लब्ध चतुर्गुणित घटी मे योग करे, यह राशि है अत १२ से अधिक हो तो १२ का भाग देकर शेष अक ले। अथवा इष्ट घटी पल को पलात्मक (घटी को ६० से गुण कर पलअक योग) करे, १५ का भाग दे, लब्ध अक राशि और शेष को द्विगुणित करे, यह अश है। अब इस अक को सूर्य, चर राशि मे हो तो राशि आदि मे योग करे और स्थिर राशि मे सूर्य हो तो राशि मे ८ जोडकर एव द्विस्वभाव राशि मे सूर्य हो तो ४ जोडकर पूर्वोक्त राशि अश का योग करे तो शुद्ध 'प्राणपद लग्न' स्पष्ट होता है। इसका फलाफल आगे ६ठे अध्याय के अन्त मे कहा गया है।(श्लो० ७२ से ७५ तक)

प्राणपदलग्न का उदाहरण–

इष्ट ६।४३ सूर्यस्पष्ट २।३।१।२७ है।

यहा पर इष्ट घटी ६ को ४ से गुणा किया तो २४ हुआ, इसको अलग रखा तथा पल ४३

में १५ का भाग दिया तो २ लब्ध हुआ, इसको पूर्व प्राप्त २४ में युक्त किया तो २६ हुआ, शेष १३ को ६० से गुणा करके ३० का भाग देने से अथवा पलाक १३ को द्विगुण करने से २६ अंश प्राप्त हुआ तो २६।२६ हुआ, राशि में १२ का भाग दिया तो २।२६ हुआ। यहा सूर्य द्विस्वभाव राशि में है अत २।२६ में ४ राशि जोडा तो ६।२६ हुआ, इसको स्पष्टसूर्य २।३।९।२७ में जोडने से ८।२९।९।२७ यह प्राणपद लग्नस्पष्ट हुआ।

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया ग्रहगुणस्वरूपादिकथन नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

अथ इष्टशोधनमाह

पराशर उवाच—यदेतज्जन्मलग्न वै तन्निषेकस्य चन्द्रमा ॥ जन्मचन्द्रस्य राश्यादि तल्लग्न वै निषेकजम् ॥१॥ इति सिद्धविजानीयात्पया शम्भुप्रणोदितम् । जन्मलग्नस्य घटिका भक्ता वसुशतैरिह ॥२॥ लब्धमाधानगतभजन्मपूर्वांकमासकम् । शिष्टा सख्या तु विप्रेन्द्र खरसघ्ना तु भाजिता ॥३॥ खशून्य वसुभिश्चैव आधानसमकालभम् । यस्मिन् काले भभुक्त तत् मध्यमेष्ट तदेव हि ॥ तस्मात् प्रसाधयेत् सूर्यं भोग्यकाल ततो नयेत् । जन्मचन्द्रस्य भुक्त वै कालमानीय यत्नत ॥ जन्मकालीन चन्द्रस्तु गर्भलग्न विदुर्बुधा । तत्सर्वं साधयेद्धीमान् सायनाच्चन्द्र सूर्यभात् ॥

पराशरजी ने कहा—जो यह जन्मलग्न है उसी के समान गर्भाधान समय का चन्द्र स्पष्ट होता है। इसी प्रकार जन्म समय का जो चन्द्रस्पष्ट है उसीके आसन्न (आसपास) आधानकाल के लग्न का राशि अश होता है। ऐसा इष्टशोधन मे स्वयसिद्ध नियम है यह भगवान् शकर ने कहा है। राश्यादि जन्मलग्न को घटयात्मक करके ८०० आठ सौ का भाग देने से लब्ध सख्या गर्भाधान के गतनक्षत्र की होती है शेष को भी ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने से आधान काल के वर्तमान नक्षत्र का भयात होता है और इसको जन्म से नौ मास पूर्व देखना चाहिए वह भयात जिस दिन जिस इष्ट म प्राप्त हो वह आधान काल का मध्यम इष्ट है। उस मध्यम इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके उसका (सूर्य का) भोग्य काल लेना और जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट का भुक्तकाल लेना। जन्मकाल का चन्द्रस्पष्ट ही आधानकाल का लग्नस्पष्ट है यह होरा शास्त्रज्ञों ने कहा है चन्द्र तथा सूर्य स्पष्ट से होने वाली सब क्रिया अयनांश युक्त करके सावधानता से गणित करनी।

भोग्य भुक्त सुसेयोज्य मध्योदयसमन्वितम् । खरसाप्त तत कुर्यात् निषेकेष्ट सुमध्यमम् ॥ लग्नस्पष्ट तत कुर्यात् सुविचार्य तपोधन । अस्य लग्नस्य राश्यादि जन्मेन्दोश्च तथैव च ॥ मैत्रेय सुमहाप्राज्ञ समासन्नगत भवेत् । एतयोरन्तर कार्य लग्नोदय हत तथा ॥ अष्टादश

शतेनाप्त फल घटयादि जायते गर्भलग्ने जन्मचन्द्रात् अल्पे चैवाधिके तथा ॥ पूर्वागत धनर्ण स्यात् घटयाद्येव निषेकजे । मध्येष्टे तु, ततश्चन्द्र स स्याज्जन्मोदयामित ॥ अस्य चन्द्रस्य भुक्तश्च जन्मसूर्यस्य भोग्यकम् । योज्य मध्योदयैश्चैव जननेष्ट स्फुट भवेत् ॥

इस प्रकार सूर्य का भोग्यकाल तथा चन्द्रमा का भुक्तकाल जोडना और उसमे मध्यगत राशियो के उदय पल जोडना, इस सख्या मे ६० का भाग देना तो आधान काल का मध्यम इष्ट होता है। हे तपोधन! इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करना तो इस स्पष्ट किये हुए लग्न की राशि आदि तथा जन्मकाल के चन्द्रमा की राश्यादि परस्पर आसपास होगी। इस आधान लग्न और जन्मचन्द्र की राश्यादि का परस्पर अन्तर करे और उस अन्तर को लग्न के स्वोदय से गुणा करके १८०० अठारह सौ का भाग दे, जो लब्ध हो वह घटयादि अक होगा।

जन्मकाल के चन्द्रस्पष्ट से आधानकाल का लग्नस्पष्ट कम हो अथवा अधिक हो, तो यह आया हुआ घटयादि, आधानकाल के मध्यम इष्ट मे क्रमश धन या ऋण करना, पश्चात् उससे चन्द्रस्पष्ट करना, तो यह चन्द्रस्पष्ट जन्मकाल के लग्न स्पष्ट के आसन्न (आसपास) होगा। बाद इस आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मकाल के सूर्यस्पष्ट का भोग्यकाल युक्त करना और इन दोनो के मध्य की राशियो के पलात्मक मान युक्त करना, ६० का भाग देना तो जन्म काल मध्यम 'इष्ट' होता है।

चन्द्रमाधानलग्नन्तु कल्पयित्वा ततो द्विज ! जननार्कस्य भोग्यञ्च भुक्तमेतस्य योजयेत् ।
मध्योदया सुसयोज्या खरसाप्त सुनिश्चितेत् । इष्टमेतत् मध्यमन्तु तस्माल्लग्न सुसाधयेत् ।
लग्न चन्द्रमसश्चैव साम्य वै द्विजसत्तम । आधानचन्द्रस्पष्टञ्च जन्मलग्नसम भवेत् ।
एव ससाधनीयञ्च गर्भजन्मभव फलम् । यावत् साम्य भवेदेतत् तावत् कुर्यात् अतन्द्रित ।
इष्टशोधन मेतद्धु यथा शमुप्रणोदितम् । साधारण सुसप्रोक्त ज्ञेय विस्तर मन्यत ।

इसी को पुन स्पष्ट करते है कि चन्द्रमा को आधान लग्न कल्पना करे तथा जन्म कालिक सूर्य के भोग्य काल मे कल्पित लग्न का भुक्तकाल युक्त करे और मध्य के 'उदयकाल' युक्त करे। ६० का भाग दे तो मध्यम जन्मेष्टकाल होता है। इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्र स्पष्ट करे।

एव चन्द्रमस चैव आधानोदयकल्पनम् । तद्भुक्तकालमादाय आधानेनस्य भोग्यकम् । योज्य मध्योदयैश्चैव षष्टिभक्तन्तथैव च । आधानकालोनमिष्ट स्यात्तस्माल्लग्नमानयेत् । तत्लग्नस्य तु राश्यादि जन्म चन्द्रसम भवेत् । एव निषेकचन्द्रस्य जन्मलग्न सम भवेत् । निषेकलग्नराश्यादि जन्मचन्द्रमसस्यता। अनयोरन्तर कार्य तेन घटयादि साधयेत्। तेन सचालयेच्चैव जन्मेन्दु गर्भलग्नकम् ।तथैव जन्मलग्नस्य गर्भचन्द्रमसस्तथा ।अन्तरेण चालयेच्च लग्न चन्द्र तथैव हि ।एव मुहुर्मुहु कार्य यावन समता व्रजेत् ।इष्टशोधनक चैतत् भाषित शभुना पुरा।

इस जन्मकालीन स्पष्टचन्द्र को 'आधानलग्न मानकर भुक्तकाल स्पष्ट करे, तथा आधान कालीन सूर्य का भोग्यकाल स्पष्ट करे। इन दोनो का योग करे तथा इसमे मध्य के उदयकाल युक्त करे। ६० का भाग दे तो आधानकाल का इष्ट होता है, पश्चात् इससे लग्नस्पष्ट करे तो इस लग्न के राश्यादि तथा जन्मचन्द्र के राश्यादि समान होते है। इसी प्रकार आधान चन्द्र

और जन्मलग्न के राश्यादि समान होते है। आधान लग्न के राश्यादि तथा जन्म चन्द्र के राश्यादिका (विशेष अन्तर हो तो) परस्पर अन्तर करे, उस अन्तर की घटचादि करे, उस घटचादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे, इसी प्रकार जन्मलग्न और गर्भचन्द्र के अन्तर की घटी पल से जन्मलग्न और गर्भचालित करे। जब तक पूर्वोक्त प्रकार से परस्पर राश्यादि समान न हो। यह 'इष्टशोधन' प्रक्रिया भगवान् शभु ने वर्णन की है। समान होने पर इष्ट शुद्ध जाने।

इष्टशोधन के मुख्य नियम

स्वम सिद्ध–जन्मलग्न के समान आधानचन्द्र तथा जन्मचन्द्र के समान आधानलग्न।

१–जन्मलग्न को घटचात्मक करके ८०० का भाग दे, लब्धगत 'नक्षत्र' हैं। और शेष को ६० से गुणा कर ८०० का भाग देने पर भयात होता है।

२–आगत भयात ९ मास पूर्व जिस दिन, जिस इष्ट पर मिले वह आधानकाल (मध्यम इष्ट) होता है।

३–इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट करके, इसका भोग्यकाल और जन्मचन्द्र स्पष्ट का भुक्त काल मध्य राशियो के उदय सहित करने से आधान काल का गणितागत मध्यम इष्ट होता है।

४–इस इष्ट पर लग्न स्पष्ट करना। इस लग्न जन्मचन्द्र की राश्यादि आसन्न (आसपास) होगी।

५–आधानलग्न और जन्म चन्द्र की राश्यादि के अन्तर को स्वोदय से गुणा करके १८०० का भाग दे, लब्ध घटचादि अक को जन्मचन्द्र से आधानलग्न कम हो तो मध्यम इष्ट मे जोडे एव अधिक हो तो घटाये।

६–उस मध्यम इष्ट से चन्द्रस्पष्ट करे तो वह जन्मलग्न के आसन्न होगा।

७–बाद आधान चन्द्र का भुक्तकाल और जन्मसूर्य का भोग्यकाल तथा मध्योदय (बीच की राशियो के उदय) सहित (सब का योग) मे ६० का भाग देने से जन्म समय का मध्यम इष्टकाल होता है।

८–इस मध्यम जन्म इष्ट से लग्न तथा चन्द्रस्पष्ट करे।

९–इस चन्द्र का भुक्तकाल तथा आधानसूर्य का भोग्यकाल मध्योदयो सहित, आधान कालिक इष्ट होता है।

१०–इस इष्ट से लग्नस्पष्ट करे तो वह जन्मचन्द्र के समान होता है।

११–यदि इस लग्नस्पष्ट के राश्यादि और जन्मचन्द्र के राश्यादि मे विशेष अन्तर हो तो, उनका अन्तर करके, अन्तर की घटचादि से जन्मचन्द्र और आधान लग्न को चालित करे तथा आधान चन्द्र और जन्म लग्न मे यही सस्कार करे, जब तक कि राश्यादि मे समानता न हो, तब तक करे। समान होने पर इष्ट शुद्ध हुआ जाने।

इष्टशोधन का उदाहरण

श्रीशुभसम्वत् २०१८ द्वितीय ज्येष्ठ शुदी ५ रविवार प्रात ७।२५ (इ० स्टे० टा०) काल मे कलकत्ता मे जन्म हुआ, (कल० स्टे० टा० ७।४८ कल० मेन टाइम ७।४९) मध्यम समय

७।४८ स्पष्ट घटात्मक समय ७।४९ घट्यादि 'इष्ट' ६।४३ लग्नस्पष्ट ३।९।१०।०५ सूर्यस्पष्ट २।३।९।२७ चन्द्रस्पष्ट ३।२७।४२।१० यह है। अब 'इष्टशोधन' के लिये उपर्युक्त क्रिया के अनुसार लग्न ३।९।१०।५ इसकी घटी ५९५० मे ८०० का भाग दिया तो लब्धाक ७ यह गत नक्षत्र सख्या प्राप्त हुई, अत पुनर्वसु नक्षत्र गत हुआ। शेष ३५० को ६० से गुणा करके ८०० का भाग दिया तो पुष्य नक्षत्र की भुक्त घट्यादि २८।१५ प्राप्त हुई। इस पर आधान काल ९ मास पूर्व का प्राप्त हुआ—श्री स २०१७ आश्विन कृ० ११ शुक्रवार। इष्ट २६।०१ अयनाश २३।० सूर्य स्पष्ट ४।२९।४७।५४ तथा चन्द्रस्पष्ट ३।८।५४।२६ अब आधान काल का सायन सूर्य ५।२२।४७।५४ को लेकर, उसके भोग्य अशादि को कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा करके ६० का भाग दिया तो लब्ध भोग्यकाल ८६।१५ प्राप्त हुआ। और सायन जन्मचन्द्र ४।२०।४२।१० को लग्न कल्पना करके "**अर्कभोग्यस्तनोभुक्तकालान्वितो युक्तमध्योदयोभीष्टकालो भवेत्**" (ग्रहलाघव)की रीति के भुक्तकाल साधन किया तो १३५।८ हुआ, ये दोनो युक्त किये, तथा इसमे कलकत्ता के (मध्य के) लग्नमान तुला से ३२९।३३९।३३९।३०५।२५९।२२९।२२९।२५९।३०५।३३९ इन सबका योग किया तो ३२५३।२३ हुआ। इसमे ६० का भाग दिया तो ५४।१३ यह गर्भाधान का मध्यम इष्टकाल हुआ। इस इष्ट पर सूर्यस्पष्ट ५।००।१५।२४ हुआ। इसको सायन किया तो ५।२३।१५।२४ इस सायन सूर्य से "तत्कालार्क सायन. स्वोदयघ्नाः ०" इत्यादि ग्रहलाघवोक्त रीति से लग्नस्पष्ट किया तो ३।२६।४०।०० हुआ। इसके राश्यादि, जन्मकालीन चन्द्र के राश्यादि के आसन्न (आसपास) है। अत इनके अन्तर १।२ को कर्क के स्वोदय ३३९ से गुणा किया ३५०।१८ हुए। इसमे '१८००' का भाग दिया तो लब्ध ११।५६। हुए। यह अक घटी आदि हैं। यहा जन्मचन्द्र से निषेकलग्न अधिक है तो निषेक के मध्यम इष्ट मे हीन किया तो ४२।१७ यह मध्यम निषेक इष्ट हुआ। इससे चन्द्रस्पष्ट किया तो ३।१२।१२।४० हुआ। इसका भुक्तकाल ५७ हुआ। जन्मकालिक सूर्य का भोग्यकाल २६४ पल, इन दोनो का योग किया तो ३२१ हुआ। ६० का भाग देने से ६।२१ यह जन्म कालिक इष्ट (शुद्ध) हुआ। इससे सूर्यस्पष्ट २।३।९।७ परमासन्न है, इससे लग्नस्पष्ट किया तो ३।८।१।५ हुआ और चन्द्रस्पष्ट ३।२७।३८।०५ इसको आधान लग्न मान कर अयनाश युक्त करके 'भुक्तकाल' और आधान कालिक सूर्य का भोग्यकाल मध्योदय सहित करने पर परमासन्न अक प्राप्त होते हैं। यहा पर जन्म लग्न और आधान चन्द्र तथा आधानलग्न और जन्मचन्द्र के अशादि परस्पर आसन्न है। और प्राप्त जन्मेष्ट काल भी परमासन्न है। अत जन्म-इष्ट शुद्ध है, इसके सूर्यादि स्पष्ट—

जन्मकालिक—

इष्ट	सूर्य	सायन	चन्द्र	सायन	लग्न	सायन	
६	२	२	३	४	३	४	गणितागत भेद गणितोदाहरण मे देखें।
४३	३	२६	२७	२०	९	४	
०	९	९	४२	४२	१०	१०	
०	२७	२७	१०	१०	००	००	

आधानकालिक–

इष्ट	सूर्य	सायन	चन्द्र	सायन	लग्न	
३६	४	५	३	४	९	गणितागत भेद उदाहरण मे देखें।
०१	२९	२२	८	१	२६	
०	४९	४९	५४	५४	■	
०	५४	५४	२६	२६	■	

उपर्युक्त उदाहरण तथा विवरण निदर्शन मात्र दिखाया है इसमे सूर्य चन्द्र लग्न स्पष्टीकरण मे गणित का जटिल भाग छोड दिया है कारण कि–वह करण ग्रन्थ का विषय है इस स्थान मे उसका विशेष उपयोग नही है। यहा पर मूलग्रन्थ मे पाराशरी का इष्टशोधन अश छपने के समय छूट गया था उसी की खोज करके तथा अन्य हस्तलिपियो से मिलान करके इस बार सयुक्त किया जा रहा है। जो किसी महानुभाव ने (काशी मे मुद्रित) यह कहा है कि 'इष्टशोधन नाम की कोई वस्तु ही ज्योतिष शास्त्र म नही है हम उनका आभार मानते है कि जिसके कारण छिपी हुई वस्तु की खोज हुई है और वह वस्तु सर्वसाधारण के सम्मुख आई।

पराशर उवाच

मेषो वृषश्च मिथुन कर्कसिहकुमारिका ॥ तुलालिधनुषो नक्रे कुम्भमीनास्तत परा ॥१॥
अहोरात्राद्यन्तलोपाद्धोरेति प्रोच्यते बुधै । तस्य हि ज्ञानमात्रेण जातकर्मफल वदेत् ॥२॥
एकव्यक्तात्मको विष्णु कालरूपो जनार्दन ॥ तस्यागानि निबोध त्व क्रमान्मेषादिराशय
॥३॥ शीर्षाननौ तथा बाहू हृत्क्रोडकटिवस्तय ॥ गुह्योरुयुगले जानुयुग्मे वै जघने तथा ॥४॥
चरणौ द्वौ तथा लग्नात् ज्ञेया शीर्षादय क्रमात् ॥ चरस्थिरद्विस्वभावा क्रूराक्रूरौ नरस्त्रियौ
॥५॥ पित्तानिलत्रिधात्वैक्य श्लेष्मिकाश्च क्रियादय ॥ रक्तवर्णो बृहद् गात्रश्चतुष्पाद्रात्रिविक्रमी
॥६॥ पूर्ववासी नृपज्ञाति शैलचारी रजोगुणी ॥ पृष्ठोदयी पावकी च मेषराशि कुजाधिप
॥७॥ श्वेत शुक्राधिपो दीर्घश्चतुष्पाच्छर्वरीबली ॥ याम्येट् ग्राम्यो वणिग्भूमि रजी पृष्ठोदयो
वृष ॥८॥

राशियो के स्वरूप

पराशरजी ने कहा–मेष वृष मिथुन कर्क सिह कन्या तुला वृश्चिक धनु मकर कुम्भ तथा मीन ये १२ राशिया है।।१।। अहोरात्र शब्द के आदि अकार और अन्त के त्र लुप्त होने से होरा शब्द बना है अत एतद्विषयक शास्त्र के ज्ञान होने से मनुष्य के कर्म का फल कहा जा सकता है।।२।। अव्यक्त ब्रह्म का एकपादरूप जो व्यक्त स्वरूपात्मक भगवान विष्णु है वही अहोरात्र समय के स्वरूप होने स जनार्दन कालरूप है और उन्ही के अग–य मेष आदि १२ राशिया है।।३।। य मेषादि द्वादश राशिया ही मनुष्य के जन्मलग्न म लिख प्रकार जानना। जन्मलग्न शिर द्वितीय भाव मुख तृतीय बाहू इसी प्रकार हृदय छाती कटिभाग वस्ति (पेडू–पेट का निम्नभाग गुह्यभाग ऊपर की आधी जघाद्वय बाकी आधी जघाद्वय जानुयुगल (गाड=घुटन) तथा चरण (पैर) है। और १२ राशिया क्रम म चर स्थिर द्विस्वभाव (तीन सख्याओ की चार बार आवृत्ति) है। तथा विषम राशिया क्रूर और सम राशिया सौम्य हैं। एव विषय राशिया पुरुष और सम राशि स्त्री सज्ञक है।।४।।५।। तथा पित्त वायु कफ और ये तीन बार आवृत्ति करने से प्रकृति जानना। (अब प्रत्येक राशि का

पूरा स्वरूप विस्तार से कहते हैं) मेष राशि का रक्त वर्ण, लम्बा शरीर, चार पैरवाला, रात्रि में बलवान्, पूर्व दिशा का वासी, क्षत्रिय जाति, पर्वतचारी, रजोगुणी, पृष्ठोदयी, अग्नितत्व है, तथा मंगल इसका स्वामी है॥६॥७॥ वृष राशि–श्वेत वर्ण शुक्रग्रह स्वामी, लम्बा कद, चतुष्पाद, रात्रिबली, दक्षिणदिशा का स्वामी, ग्रामवासी, वैश्य जाति, भूमिचारी, रजोगुणी, और पृष्ठोदयी ॥८॥

शीर्षोदयी नृमिथुनं सगदं च सवीणकम् ॥ प्रत्यक्शमी द्विपाद्रात्रिबली ग्राम्यो व्रजोऽनिली
॥९॥ समगात्रो हरिद्वर्णो मिथुनाख्यो बुधाधिपः ॥ पाटलो वनचारी च ब्राह्मणो निशि
वीर्यवान् ॥१०॥ बहुपदुत्तरः स्थौल्यतनुः सत्त्वगुणी जली ॥ पृष्ठोदयी कर्कराशिर्मृगांकोऽधि-
पतिःस्मृतः॥११॥ सिंहः सूर्याधिपः सत्त्वी चतुष्पात्क्षत्रियो बली ॥ शीर्षोदयी बृहद्गात्रः पांडुः
पूर्वेड् सुवीर्यवान् ॥१२॥ पार्वतीयाय कन्याख्या राशिर्दिनबलान्वितः ॥ शीर्षोदया च मध्यांगा
द्विपाद्याम्यचरा च सा ॥१३॥ सा सस्यदहना वैश्या चित्रवर्णा प्रभंजिनी ॥ कुमारी तमसा
युक्ता बालभावा बुधाधिपः ॥१४॥ शीर्षोदयी द्युवीर्याढ्यस्तया कृष्णो रजोगुणी ॥
पंचमोद्भूचरो घाती शूद्रो मध्यतनुर्द्विपात् ॥१५॥ शुक्रोऽधिपोऽथ स्वल्पांगो बहुपाद्ब्राह्मणो
बली॥ सौम्यस्थो दिनवीर्याढ्यः पिशंगो जलभूवहः ॥१६॥ रोमस्वाढ्योऽतितीक्ष्णांगो
वृश्चिकश्च कुजाधिपः ॥ पृष्ठोदयो त्वथ धनुर्गुरुस्वामी च सात्त्विकः ॥१७॥ पिंगलो
निशिवीर्याढ्यः पावकः क्षत्रियो द्विपात् ॥ आदावंते चतुष्पादः समगात्रो धनुर्धरः॥१८॥

मिथुन–शीर्षोदय, स्त्रीपुरुष युग, रूप, पुरुष के हाथ में गदा और स्त्री के हाथ में वीणा है, पश्चिम दिशा का स्वामी, दो पैरवाला, रात्रिबली, ग्रामवासी, समूहचारी, वायुप्रकृति॥९॥ समगात्र, (मझोला कद) हरा रंग तथा बुधग्रह का स्वामी है। कर्क–पाटल रंग, वनचारी, ब्राह्मण वर्ण, रात्रिबली, बहुपाद, स्थूलशरीर, सत्वगुणी, जलचारी, पृष्ठोदयी और चन्द्रमा स्वामी है॥११॥ सिंहराशि का सूर्य स्वामी है, सत्त्वगुणी, चतुष्पाद, क्षत्रिय जाति, बलशाली, शीर्षोदयी, भारी शरीरवाला, पाण्डु वर्ण, पूर्वदिशा का स्वामी तथा दिन में बली है॥१२॥ कन्याराशि-पर्वतचारी,दिनबली, शीर्षोदयी, सम शरीर, दो पैरवाली दक्षिण दिशा॥१३॥ सस्य–अन्न और अग्नि रखनेवाली, वैश्य वर्ण, चित्र विचित्र रंग, वायु तत्व, कुमार अवस्था, तमोगुणी, बाल्य स्वभाव तथा बुध स्वामी है।१४। तुलाराशि-शीर्षोदयी,दिनबली,कृष्णवर्ण, रजोगुणी, पृथ्वीचारी, हानिकारी स्वभाव, शूद्र वर्ण, दोपाया तथा शुक्रस्वामी,कद मझोला है॥१५॥ वृश्चिकराशि–स्वल्प अंगवाला, बहुपाद, ब्राह्मण वर्ण बलयुक्त तथा उत्तर दिशाचारी, दिन बली, पिशंग (हलका पीला), वर्ण, जल तथा पृथ्वीचारी, रोमयुक्त, तीक्ष्ण अंगवाला तथा मंगल ग्रह इसका स्वामी है॥ धनु राशि- पृष्ठोदयी, सत्वगुणी, पिंगल वर्ण, रात्रि बली, अग्नि तत्त्व क्षत्रिय वर्ण, पूर्वार्द्ध में दो पैरवाला, उत्तरार्द्ध में चार पैर वाला, समान शरीर धनुषधारी॥१८॥

पूर्वस्थो वसुधाचारी तेजस्वान्पृष्ठतादृगमा ॥ मदाधिपस्तमो भौमी याम्येट् च निशि वीर्यवान्
॥१९॥ पृष्ठोदयी बृहद्गात्रः कर्बुरो वनभूचरः ॥ आदौ चतुष्पादंते तु विपदो जलगो मतः

॥२०॥ कुम्भः कुंभी नरो बभ्रुर्वर्णमध्यतनुर्द्विपात् ॥ द्युवीर्यो जलमध्यस्थो वातशीर्षोदयी तमः ॥२१॥ शूद्रः पश्चिमदेशस्य स्वामी दैवाकरिः स्मृतः ॥ मीनौ पुच्छास्यसलग्नौ मीनराशिर्दिवा बली ॥२२॥ जली सत्त्वगुणाढयश्च स्वस्थो जलचरो द्विजः ॥ अपदो मध्यदेही च सौम्यस्थो ह्युभयोदयी ॥२३॥ सुराचार्याधिपश्चास्य राशीनां गदितं मया ॥ त्रिंशद्भगणात्मकः स्थूलसूक्ष्माकरफलाय च ॥२४॥

पूर्वदिशा का स्वामी पृथ्वीचारी, तेजस्वी तथा बृहस्पति इसका स्वामी है। मकर राशि–इस राशि का शनि स्वामी है, तमोगुणी, पृथ्वीचारी, दक्षिण का स्वामी, रात्रिबली, पृष्ठोदयी, भारी शरीर, विचित्र वर्ण, बनचारी, पूर्वार्द्ध चतुष्पाद तथा उत्तरार्द्ध विपद, जलचारी है।।२०।। कुम्भराशि–रिक्तघटधारी पुरुष, बभ्रु वर्ण, मध्यम शरीर, दो पैरवाला दिन मे बली, जलचारी, वात प्रकृति, शीर्षोदयी तथा तमोगुणी है।।२१।। शूद्र वर्ण, शनि स्वामी, पश्चिम दिशा का स्वामी है। मीनराशि दो मछली परस्पर मुख पुच्छ संयुक्त स्वरूप, दिन मे बली, जलचारी, सत्वगुणी, पुष्ट शरीर, जल तत्त्व, ब्राह्मण वर्ण, पदहीन, मध्यम शरीर, उत्तरदिशा का स्वामी उभयोदयी तथा बृहस्पति स्वामी है।। इस प्रकार ये बारह् राशियो के स्वरूप कहे। भगण के ३६० अश मे से प्रत्येक राशि के ३०–३० अश है।। स्थूल और सूक्ष्म फल विचार इसका प्रयोजन है।।२४।।

अथातः सप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुगव ॥ जन्मलग्न च सशोध्य निषेक परिशोधयेत् ॥२५॥ तदह सप्रवक्ष्यामि मैत्रेय त्व विधारय ॥ जन्मलग्नात् परिज्ञान निषेक सर्वजतु यत् ॥२६॥ यस्मिन् भावे स्थितोमन्दस्तस्य मादेर्यदतरम् ॥ लग्नभाग्यातर योज्य यच्च राश्यादि जायते ॥२७॥ मासादिस्तन्मित ज्ञेय जन्मतः प्राक् निषेकजम् ॥ यद्यद्स्यदलेगेशस्तवेवोर्भुक्तभाग-युक् ॥२८॥ तत्काले साधयेल्लग्न शोधयेत्पूर्ववत्तनु ॥ तस्माच्छुभाशुभ वाच्य गर्भस्थस्य विशेषतः ॥२९॥ शुभाशुभ वदेत् पित्रोर्जीवन मरण तथा ॥ एव निषेकलग्नेन सम्यक् ज्ञेय स्वकाम्यमात् ॥३०॥

निषेक लग्नज्ञान

हे मैत्रेय! स्पष्ट जन्मलग्न के बाद निषेक–गर्भाधान लग्न की विधि कही जाती है। जिस भाव मे शनि हो उस भाव और मान्दी का अन्तर करे, इसमे लग्न तथा नवम् भाव के अन्तर को जोडे। योगफल के अनुसार जन्मलग्न से पूर्व उतने ही मासादि जानना यदि लग्नेश लग्न से पूर्व ६ राशि मे हो तो चन्द्रमा के भुक्त अशादि और जोडना चाहिये। योग फल मे क्रमश मास, दिन, घटी, पल जन्म समय से पूर्व मानकर, घटी पल से लग्नस्पष्ट करे और उसमे गर्भावस्था का शुभाशुभ तथा माता पिता का शुभाशुभ फल कहना चाहिये।।२५-३०।।

निषेक लग्न का उदाहरण–

शनिस्थित भाव ७।१५।०५।१२ तथा मान्दी ७।२१।४०।२० इनका अन्तर किया तो ००। ६। ५ । ८ प्राप्त हुआ। इसको लग्नस्पष्ट ६।१६।१७।१९ तथा भाग्यभाव स्पष्ट

२।१४।५१।२३ इनका अनन्तर ७ । २८ । ३४ । ४ मे युक्त किया तो ८ । ४ । ३९ ।१२ हुआ। यहा शुक्र अदृश्य दल मे है, अत चन्द्रमा के भुक्ताश २६।३०।३३ और युक्त किया तो ९।००।०९।४५ यह मासादि इष्ट प्राप्त हुआ। अर्थात् जन्म से ९ मास ० दिन पूर्व ९।४५ इष्ट हुआ, इससे लग्न स्पष्ट किया तो ८।२८।५०।३०, यह आधानलग्न (निषेक) सिद्ध हुआ। अर्थात् स० २०१२ मार्गशीर्ष कृ० प० मे समझना।

अयनांशसाधनरीति

ग्रहलाघव से 'वेदाब्ध्यब्ध्यूनः खरसहृतः शकोऽयनांशा।" इष्ट शक मे ४४४ घटाकर ६० का भाग दे, लब्धि अश तथा शेष घटी ही 'अयनाश' होते हैं। इसमे सूर्य की प्रति भुक्त राशि ५ पल जोडना।

उदाहरण–शक '१८८३' इसमे ४४४ घटाया तो १४३९ हुआ। ६० का २३ अश और शेष ५९ घटी। यह अयनाश हुआ।

विशेष

विक्रम सवत्सर मे १३५ घटाने से 'शक सम्वत्' होता है, शक स० मे ७८ जोडने से 'ईसवी सन्' होता है, ईसवी सन् मे ५८३ घटाने से 'हिजरी सन्' तथा इसमे १ घटाने से 'बगला सन्' होता है।)

मकरन्दीय अयनांश साधन

सूनयनाब्धिरहितः शकः स्वीयदृशांशायुक् ॥ वांशैर्भक्तस्तया त्रिघ्न सार्द्ध सूर्य पलेषु च ।

इष्ट शक मे ४२१ कम करना, शेष को दो स्थान मे रखकर एक स्थान मे १० दस का भाग देकर लब्ध अक दूसरी सख्या मे कम करना, शेष मे ६० का भाग देना, तथा इसमे मेषादि स्पष्ट सूर्य की राश्यादि अक को त्रिगुणित करके जो अक राश्यादि हो उसका आधा उसी मे युक्त करके पूर्वागत अश तथा घटी अक के नीचे पल मे युक्त करने से अयनाश स्पष्ट होता है।

उदाहरण–शक स० १८८३ द्वि० ज्ये० शु० २ को शक १८८३ मे ४२१ घटाया तो १४६२ शेष रहे, इसको दो जगह रखा, एक जगह दस १० का भाग दिया तो १४६।१२ लब्धाक प्राप्त हुआ, इसको दूसरे मे युक्त किया तो १३१५।४८ हुआ। इसमे प्रातःकालीन सूर्य स्पष्ट २।००।१२।१४ को त्रिगुणित किया तो ६।०।३६।४२ हुए, इसका आधा ३।०।१८।२१ को युक्त किया तो ९।०।५५।०३ इसकी राशि सख्या ९ को पूर्वानीत १३१५।४८ मे विकला स्थान मे युक्त किया तो १३१५।५४।९ इसमे ६० का भाग दिया तो २१।५५।५४ 'अयनाश' स्पष्ट हुआ। तथा ६० का भाग देकर भी सूर्यस्पष्ट से प्राप्त अक का योग कर सकते हैं। इस मत मे शाकस० का आरभ मेष सक्रान्ति के आरभ से माना जाता है। आजकल प्राय चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से जो शकसम्वत् का परिवर्तन लिखने की प्रणाली है, इसके कारण मेष सक्रमण से प्रथम अयनाश स्पष्ट करने मे पूर्व (गत) शक ग्रहण करना होता है। विस्तार भय से अन्यान्य रीति नही लिखी गई।

अथ पलभाज्ञानं चरखंडसाधनमाह

मेषो रविरयनांशयुतो भवति यद्दिने ॥ शकुच्छायादिनार्द्धे तु पलभेत्युच्यते बुधैः ॥३१॥ स्थानत्रये च सा स्थाप्या गुण्या दिग्वसुपालकै ॥ अंते गुणोद्धृते सद्भिश्चरखण्डः प्रकीर्तितः ॥३२॥

अथ लंकोदयमाह

वसुसागरनेत्राणि पलानि लंकोदये मेषराशौ ॥ शकोकनेत्रे वृषभे मिथुनेऽग्निगुह् नेत्रसंख्यातम् ॥३३॥ विपर्ययमग्निमित्रितये षड्लग्नेष्वेवमेव निर्दिष्टम् ॥ हीनं खडत्रितय युक्तं स्वदेशलग्नोऽयम् ॥३४॥

अथ लग्नसाधनमाह

यस्मिन्काले लग्नं साध्यं च यदा तदा भवेद्द्विज ॥ तात्कालिकसूर्ये वै युक्तं कार्योऽथ सायनांशेन ॥३५॥ तद्राशेर्यस्त्वादेश्य उदयस्तेनाथ भोग्यांशाः ॥ निघ्नश्च भागास्त्रिंशद्भ्युक्तास्तथा भुक्तभागाश्च गुण्या ॥३६॥ भूताश्वन्युद्धृतास्ते च ह्यकाग्निभाजिता यदि ॥ भोग्यकालोऽथ द्युमणेर्विशेयश्च द्विजोत्तम ॥३७॥ इति सायनयाताशैर्भुक्तकालो विधीयते इष्टघटचा पलैः शोध्यो भोग्यकाल इति स्थितिः ॥३८॥ हातव्या राश्युदयकालास्तावत् शोधयेदथ । यच्छेष खगुणघ्न तद्धृतमशुद्धोदयेनाथ ॥३९॥ यल्लब्धं च भवाद्यं सायनांशहीनैर्लग्नस्यात्॥ जानीहि द्विजसत्तम नतोन्नतप्रकारमेवैतत् ॥४०॥

अथ नतोन्नतसाधनमाह

दिनगतघटीभिर्हीनं कार्य्यं मुनिभिश्च दिवसार्द्धम् ॥ पूर्वनतं तद्रात्रौ लक्षणमेतद्धि विज्ञेयम् ॥४१॥ यदा दिनार्द्धोपरीष्टकालो भगोदयादिष्टघटीषु शोध्यम् ॥ तदा दिनार्धस्य नत पर तद्वत्पमु च सर्व खलु बोधहेतुम् ॥४२॥ रात्र्यर्द्धोपरिचेत्स्यादिष्टकालो विचक्षण ॥ सूर्यास्तेष्टघटीशुद्ध रात्र्यर्धे पश्चिमं मतम् ॥४३॥

'पलभा' तथा 'चरखड' साधन प्रकार–

जिस दिन सायन सूर्य मेष राशि मे प्रवेश करे उस दिन मध्याह्नकाल मे १२ अगुल का शकु (कील) धूप मे सीधा रख कर उसकी छाया लेनी चाहिये। वही पलभा कहाती है। उस पलभा को ३ जगह रख कर १०–८–१० क्रमश इन अकों से गुणा करे। अन्त्य के खण्ड मे ३ का भाग देने से ३ चरखण्ड होते है॥३२॥

लकोदयपल

मेष के लकोदय २७८। वृष के २९९। मिथुन के ३२३ है। इनसे अगली तीन राशियो मे यही अक विपरीत क्रम से जानना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी जानना। ये 'लकोदय' पल कहलाते है॥३३॥ऊपर बताये हुए चरखण्ड प्रथम तीन राशियो मे घटाना, पश्चात् तीन राशियो मे जोडना। इसी प्रकार अगली ६ राशियो मे भी करना। इस सस्कार से 'स्वदेशोदय' या 'स्वीयोदय' लग्नमान होते हैं॥३४॥

लग्नसाधन

जिस समय का लग्न स्पष्ट करना हो उस समय का तात्कालिक सूर्य स्पष्ट करके अयनांश जोड़े, पश्चात् राशि का अंक अलग स्थापित कर अंश, कला, विकला अंक लेकर ३० अंश में से घटावे तो 'भोग्यांश' होते हैं, इनको स्वोदय से गुणा करके ३० का भाग देने से लब्ध अंक 'भोग्यकाल' होगा, इसी प्रकार भुक्तांशो से भुक्तकाल होता है। इस भोग्यकाल को इष्टघटी की पल करके इन पलों में यह 'भोग्यकाल' घटावे (और घटाने के बाद सूर्य के राशि अंक में १ संख्या बढ़ा दे) बाद बची हुई पलराशि में जितने आगामी लग्नमान घटे उतने घटावे (और राशि अंक में उतनी संख्या बढ़ाता जाय) जो स्वोदय नहीं घटे, उसकी 'अशुद्ध' संज्ञा है, अब शेष अंक को ३० से गुणा कर अशुद्ध स्वोदयका भाग देकर लब्ध अंशादि सूर्यकी बढ़ाई हुई राशि में युक्त करे और अयनांश घटा दे। यह लग्नस्पष्ट सिद्ध हुआ ॥३५-४०॥

नत तथा उन्नत साधन

१-सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट यदि क्रम से दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से कम हो तो दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध में इष्ट घटाने से 'पूर्व नत' होता है।

२-इसी प्रकार सूर्योदय तथा सूर्यास्त से इष्ट दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध से अधिक हो तो इष्ट में दिनार्द्ध तथा रात्र्यर्द्ध घटाने से 'पर नत' होता है ॥४१-४३॥

अथ चतुर्थदशमसाधनमाह

एवं लंकोदयैर्भुक्तं भोग्यं शोध्यं पलीकृतात ॥ पूर्वपश्चान्नतादन्यत्प्राग्वत्तद्दशमं भवेत् ॥४४॥

अथ भावसंधिमाह

लग्नं सुखात्सुखं कामात्कामं खात्खं च लग्नतः ॥ अंशमेकं द्विगुणितं युञ्ज्याल्लग्नादिषु क्रमात् ॥४५॥
पूर्वापरयुतेरर्धे संधिः स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादशभावाः स्युर्भवन्ति हि ससंधयः ॥४६॥

अथ भोग्यकालादल्पेष्टकाले सति लग्नसाधनम्

भोग्यतोऽल्पेष्टकालात्खरामाहतात्स्वोदयाप्तांशयुग्भास्करः स्यात्तनुः ॥

अथ लग्नपत्रभावपत्रमाह

सूर्यराश्यंशमानेन फलं ग्राह्यं च कोष्ठकम् ॥ इष्टघट्या समायुक्तं लग्नं तात्कालिकं भवेत् ॥४७॥

दशम-भाव साधनप्रकार

इस नत को इष्ट मानकर लग्नस्पष्टसाधन की प्रक्रियाऽनुसार गणित करने से 'दशम भाव स्पष्ट' होता है।॥४४॥

द्वादश भाव साधन प्रकार

(दशमभाव मे ६ राशि जोडने से चतुर्थ और लग्न मे ६ राशि जोडने से 'सप्तमभावस्पष्ट' होता है)

लग्न को चतुर्थ मे से, चतुर्थ को सप्तमभाव मे से, सप्तम को दशमभाव मे से और दशम को लग्न मे से घटाना चाहिये। जो अंक आवे उसके तृतीयांश का (प्रथम पर्याय) लग्न में योग करने से द्वितीय और द्वितीय मे जोडने से तृतीय भाव स्पष्ट होगा। इसी प्रकार द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ पर्याय मे भी करना। दो भावो का जो अन्तर हो उसका अर्द्धभाग सन्धि होगी। इसी तरह सन्धि रहित बारहो भाव स्पष्ट होगे॥४५॥४६॥

इष्ट से भोग्यकाल कम होने पर लग्नसाधन

इष्ट से भोग्यकाल कम हो तो भोग्यकाल को ३० से गुणा करके स्वोदय का भाग देकर लब्ध अंशादि को सूर्य मे योग करने से लग्नस्पष्ट होगा।

सारिणी से लग्नानयन

सूर्य की राशि, अंश से सारिणी के कोष्ठक के अंक को इष्ट मे जोडकर जो अंक प्राप्त हो, सारिणी मे इसकी राशि और अंश ही लग्नस्पष्ट होगा॥४७॥

लग्नस्पष्ट उदाहरण

स्पष्ट सूर्य ४।२३।२८।१८ मे अयनांश २३।५९ युक्त किया तो ५।१७।२७।१८ सायन सूर्य हुआ। इसके भोग्यांश १२।३२।४२ कन्या के कलकत्ता के उदय पल ३२९ से गुणा किया तो ४१२७।१८।१८ हुए। ३० का भाग दिया तो १३७।१७ यह 'भोग्यकाल' हुआ। घट्यादि इष्ट १०।०० के पल ६०० मे भोग्यकाल कम किया तो शेष ४६२।४३ और राशि के स्थान मे (६) राशि रखा गया। अब तुला का उदय ३२९ घटाया तो शेष १३३।४३ रहा और राशि के स्थान मे (७) रखा। वृश्चिक राशि के उदय पल ३३९ न घटने से वृश्चिक राशि अशुद्ध है। अत शेष को ३० से गुणा किया तो ४०११।३० हुआ। वृश्चिक के उदय मे भाग लिया तो १०।१६।१९ अंशादि प्राप्त हुए। इसमे ७ राशि युक्त किया और अयनांश २३।५९ घटाया तो ६।१६।१७।१९ यह स्पष्ट लग्न हुआ।

दशमभावसाधनोदाहरण

इष्ट १०।०० दिनार्द्ध १६।२० मे कम किया तो ६।२० यह 'पूर्वनत' हुआ। अत ऋणरीति से स्पष्ट करना चाहिये। इस ६।२० को इष्ट मान कर सायनसूर्य ५।१७।२७।१८ के भुक्तांश १७।२७।१८ है (दशमभाव साधन मे राशियो के उदय मान लंका के लेने चाहिये) अत लंकोदय लिखते है। "लंकोदया विघटिका गजभानि, गोकदस्रा, स्त्रिपक्षदहनाः क्रमगोत्क्रमस्थाः।" अर्थात् २७८।२९९।३२३ इन पलो को क्रम और उत्क्रम से लेने पर १२ राशियो के लंकोदय पल होते है। यथा–

मे० २७८ मी०, वृ० २९९ कु० मि० ३२३ म० क० ३२३ ध० सि० २९९ वृ० क० २७८ तु०

यहा सायन सूर्य के भुक्तांशो को कन्या के लग्नोदय २७८ से गुणा किया तो ४७२६।७५०६।५००४ प्राप्त हुए। ३० का भाग दिया तो १६१।१२ भुक्तकाल हुआ। इसको पूर्वनत की पल ३८० मे घटाया तो शेष २१८।४८ रहे और कन्या के उदयकाल घटन म राशि के स्थान मे (५) रखा गया। अब सिह का उदय २९९ नही घटा। अत सिह अशुद्ध है अत शेष २१८।४८ को ३० से गुणा किया तो ६५६४ हुआ, इसमे अशुद्ध २९९ का भाग दिया तो २१।५२।३३ अशादि प्राप्त हुए। इस को सिह मे घटाया तो ४।८।७।२७ हुए। इसमे अयनाश घटाया तो ३।१४।८।२५ यह दशम भाव स्पष्ट हुआ।

अब लग्नस्पष्ट ६।१६।१७।१९ तथा दशमस्पष्ट ३।१४।८।२५ मे ६–६ राशि युक्त की तो सप्तमभाव ००।१६।१७।१९ तथा दशमभाव ३।१४।८।२५ हुआ। ऊपर कहे अनुसार चतुर्थ मे लग्न, सप्तम मे चतुर्थ, दशम मे सप्तम, कर्म=दशम को लग्न मे घटा कर षष्ठांश लेकर लग्न मे योग करके सधि, सधि मे युक्त करने से द्वितीय और द्वितीय मे युक्त करने से सधि इसी प्रकार तृतीय सधि और चतुर्थ भाव आदि प्राप्त होगे। अथवा उपर्युक्त रीति से भी वही भाव प्राप्त होते है।

भावस्पष्टचक्र

त		ध		स		पु		पु		रि	
६	७	७	८	८	८	९	९	१०	११	११	००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०
जा		मृ		भा		क		ला		व्य	
००	१	१	२	२	२	३	३	४	५		००
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०

जन्मकुण्डली

८ श
वृ० ६
म
७
रा
श
गु ५
सू
९
१०
४
के
बु०
११
१
३
१२
२

अथ लग्नपत्रमिदमाह

अंश	मे१	वृ२	मि३	क४	सिं५	क६	तु७	वृ८	ध९	म१०	कु११	मी१२
१	२ ५४	७ १४	१२ १२	१७ ४१	२३ १४	२८ ३५	३३ ५३	३९ ३१	४४ ५५	५० १२	५४ ५१	५८ ५७
२	३ २	७ २३	१२ २३	१७ ५३	२३ २५	२८ ४६	३४ ४	३९ ३२	४५ ६	५० २३	५५ ०	५९ ४
३	३ १०	७ ३२	१२ ३३	१८ ४	२३ ३४	२८ ५६	३४ १४	३९ ४३	४५ १८	५० ३३	५५ ९	५९ १२
४	३ १८	७ ४१	१२ ४३	१८ १५	२३ ४७	२९ ७	३४ २५	३९ ५४	४५ २९	५० ४३	५५ १८	५९ २०
५	३ २६	७ ४९	१२ ५४	१८ २६	२३ ५८	२९ १८	३४ ३६	४० ५	४५ ४०	५० ५४	५५ २६	५९ २८
६	३ ३४	७ ५८	१३ ४	१८ ३७	२४ ९	२९ २८	३४ ४६	४० १६	४५ ५१	५१ ४	५५ ३५	५९ ३६
७	३ ४२	८ ७	१३ १४	१८ ४९	२४ २०	२९ ३९	३४ ५७	४० २७	४६ ३	५१ १४	५५ ४४	५९ ४४
८	३ ५०	८ १६	१३ २५	१९ ०	२४ ३१	२९ ४९	३५ ७	४० ३८	४६ १४	५१ २४	५५ ५३	५९ ५२
९	३ ५८	८ २५	१३ ३५	१९ ११	२४ ४२	३० ०	३५ १८	४० ४९	४६ २५	५१ ३५	५६ २	६० ०
१०	४ ७	८ ३५	१३ ४६	१९ २२	२४ ५३	३० ११	३५ २९	४१ ०	४६ ३५	५१ ४४	५६ १०	० ८
११	४ १६	८ ४६	१३ ५७	१९ ३३	२५ ३	३० २१	३५ ४०	४१ ११	४६ ४५	५१ ५३	५६ १८	० १६
१२	४ २५	८ ५६	१४ ९	१९ ४४	२५ १९	३० ३२	३५ ५१	४१ २३	४६ ५६	५२ २	५६ २६	० २४

१३	४ ३४	९ ६	१४ २०	१९ ५५	२५ २९	३० ४३	३६ २	४१ ३४	४७ ६	५२ ११	५६ ३४	० ३२
१४	४ ४३	९ १७	१४ ३१	२० ६	२५ ३५	३० ५३	३६ १३	४१ ४५	४७ १७	५२ २०	५६ ४२	० ४०
१५	४ ५१	९ २७	१४ ४२	२० १७	२५ ४६	३१ ४	३६ २४	४१ ५६	४७ ५७	५२ २८	५६ ५०	० ४८
१६	५ ०	९ ३७	१४ ५३	२० २८	२५ ५६	३१ १४	३६ ३५	४२ ७	४७ ३७	५२ ३७	५६ ५८	० ५६
१७	५ ९	९ ४८	१५ ५	२० ३९	२६ ७	३१ २५	३६ ४६	४२ १९	४७ ४८	५२ ४६	५७ ५	१ ३
१८	५ १८	९ ५८	१५ १६	२० ५०	२६ १७	३१ ३५	३६ ५७	४२ ३०	४७ ५८	५२ ५५	५७ १३	१ ११
१९	५ २७	१० ८	१५ २७	२१ १	२६ २८	३१ ४६	३७ ८	४२ ४१	४८ ८	५३ ४	५७ २१	१ १९
२०	५ ३६	१० १९	१५ ३८	२१ १२	२६ ३९	३१ ५७	३७ १९	४२ ५२	४८ १९	५३ १३	५७ २९	१ २७
२१	५ ४५	१० २९	१५ ४९	२१ २३	२६ ४९	३२ ७	३७ ३०	४३ ३	४८ २९	५३ २२	५७ ३७	१ ३५
२२	५ ५४	१० ३९	१६ ५	२१ ३४	२७ ०	३२ १८	३७ ४१	४३ १५	४८ ३९	५३ ३१	५७ ४५	१ ४३
२३	६ ३	१० ५०	१६ १२	२१ ४६	२७ १०	३२ २८	३७ ५३	४३ २६	४८ ५०	५३ ४०	५७ ५३	१ ५१
२४	६ १२	११ ०	१६ २३	२१ ५७	२७ २१	३२ ३९	३८ ४	४३ ३७	४९ ०	५३ ४९	५८ १	१ ५९
२५	६ २०	११ १०	१६ ३४	२२ ८	२७ ३२	३२ ५०	३८ १५	४३ ४८	४९ १०	५३ ५७	५८ ९	२ ७
२६	६ २९	१६ २१	१६ ४५	२२ १९	२७ ४२	३३ ०	३८ २६	४३ ५९	४९ २१	५४ ६	५८ १७	२ १५

२७	६ ३८	११ ३१	१६ ५७	२२ ३०	२७ ५३	३३ ११	३८ ३७	४४ ११	४९ ३१	५४ १५	५८ २५	० २३
२८	६ ४७	११ ४१	१७ ८	२२ ४१	२८ ३	३३ २१	३८ ४८	४४ २२	४९ ४१	५४ २४	५८ ३३	२ ११
२९	६ ५६	११ ५२	१७ १९	२२ ५२	२८ १४	३३ ३२	३८ ५९	४४ ३३	५९ ५२	५४ ३३	५८ ४१	२ ३९
३०	७ ५	१२ २	१७ ३०	२३ ३	२८ २५	३३ ४३	३९ १०	४४ ४४	५० २	५४ ४२	५८ ४९	२ ४७

अथ भावपत्रमिदमाह्

अंश	मे०१	वृ०२	मि०३	क०४	सिं०५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	म०१०	कु०११	मी०१२
१	३ २४	८ १७	१३ ३४	१८ ५७	२४ २	२८ ४६	३३ २४	३८ १७	४३ ३४	४८ ५७	५४ २	५८ ४६
२	३ ३३	८ २७	१३ ४५	१९ ८	२४ १२	२८ ५५	३३ ३३	३८ २७	४३ ४५	४९ ८	५४ १२	५८ ५५
३	३ ४२	८ ३७	१३ ५५	१९ १८	२४ २२	२९ ४	३३ ४२	३८ ३७	४३ ५५	४९ १८	५४ २२	५९ ४
४	३ ५२	८ ४७	१४ ६	१९ २९	२४ ३२	२९ १४	३३ ५२	३८ ४७	४४ ६	४९ २९	५४ ३२	५९ १४
५	४ १	८ ५७	१४ १७	१९ ४०	२४ ४२	२९ २३	३४ १	३८ ५७	४४ १७	४९ ४०	५४ ४२	५९ २३
६	४ १०	९ ७	१४ २८	१९ ५१	२४ ५२	२९ ३२	३४ १०	३९ ७	४४ २८	४९ ५०	५४ ५२	५९ ३२
७	४ १९	९ १७	१४ ३८	२० १	२५ २	२९ ४१	३४ १९	३९ १७	४४ ३८	५० १	५५ २	५९ ४१
८	४ २९	९ २७	१४ ४९	२० १२	२५ १२	२९ ५१	३४ २९	३९ २७	४४ ४९	५० १२	५५ १२	५९ ५१

९	४	९	१५	२०	२५	३०	३४	३९	४५	५०	५२	०
	३८	३७	०	२३	२२	०	३८	३७	०	२३	२२	२
१०	४	९	१५	२०	२५	३०	३४	३९	४५	५०	५२	०
	४८	४४	११	३३	३१	९	४८	४८	११	३३	३१	९
११	४	९	१५	२०	२५	३०	३४	३९	४५	५०	५५	०
	५८	५९	२२	४३	४१	१९	५८	५९	२२	४३	४१	१९
१२	५	१०	१५	२०	२५	३०	३५	४०	४५	५०	५५	०
	८	९	३२	५३	५०	२८	८	९	३२	५३	५०	२८
१३	५	१०	१५	२१	२५	३०	३५	४०	४५	५१	५५	०
	१८	२०	४३	३	५९	३७	१८	२०	४३	३	५९	३७
१४	५	१०	१५	२१	२६	३०	३५	४०	४५	५१	५६	०
	२८	३१	५४	१३	८	४६	२८	३१	५४	१३	८	४६
१५	५	१०	१६	२१	२६	३०	३५	४०	४६	५१	५६	०
	३८	४२	५	२३	१८	५५	३८	४२	५	२३	१८	५६
१६	५	१०	१६	२१	२६	३१	३५	४०	४६	५१	५६	१
	४८	५२	१५	३३	२७	५	४८	५२	१५	३३	२७	५
१७	५	११	१६	२१	२६	३१	३५	४१	४६	५१	५६	१
	५८	३	२६	४३	३६	१४	५८	३	२६	४३	३६	१४
१८	६	११	१६	२१	२६	३१	३६	४१	४६	५१	५६	१
	८	१४	३७	५३	४५	२३	८	१४	३६	५३	४१	२३
१९	६	११	१६	२२	२६	३१	३६	४१	४६	५२	५६	१
	१८	२५	४८	३	५५	३३	१८	२५	४८	३	५१	३३
२०	६	११	१६	२२	२७	३२	३६	४१	४६	५२	५७	१
	२८	३५	५८	१३	४	४२	२८	३५	५८	१३	३	४३
२१	६	११	१७	२२	२७	३१	३६	४१	४७	५२	५७	१
	३८	४६	९	२३	१२	५१	३८	४५	९	२३	१३	५१
२२	६	११	१७	२२	२७	३२	३६	४१	४७	५२	५७	२
	४६	५७	२०	३३	२२	०	४८	५७	२०	३३	२२	०
२३	६	१२	१७	२२	२७	३२	३६	४२	४७	५२	५७	२
	५८	८	३१	४३	३२	१०	५८	८	३१	४३	३२	१०

२४	७	१२	१७	१२	२७	३२	३७	४२	४७	५२	५७	२
	८	१२	४२	५३	४१	१९	८	१९	४२	५३	४१	१९
२५	७	१२	१७	२३	२७	३२	३७	४२	४७	५३	५७	२
	१७	२९	५२	२	५०	२८	१७	२९	५२	२	५०	२८
२६	७	१२	१८	२३	२८	३२	३७	४२	४८	५३	५८	२
	२७	४०	३	१२	०	३८	२७	४०	३	१२	०	३८
२७	७	१२	१८	२३	२८	३२	३७	४३	४८	५३	५८	२
	३७	५१	१४	२२	९	४७	३७	५१	१४	२२	९	४७
२८	७	१३	१८	२३	२८	३२	३८	४२	४८	५३	५८	२
	४७	२	२५	३२	१८	५६	४८	२	२५	३२	१८	५६
२९	७	१३	१८	२३	२८	३३	३७	४३	४८	५३	५८	३
	५७	१२	३५	४२	२७	५	५७	१२	३५	४२	२८	५
३०	८	१३	१८	२३	२८	३३	३८	४३	४८	५३	५८	३
	८	२३	४६	५२	३७	१५	७	२४	४७	५२	३७	१५

अथमेषादीना सज्ञामाह

क्रियतावुरिजितुमकुलीरलेयपाथोनजूककौर्प्याख्या ॥ तौक्षिक आकोकेरो हृद्रोगश्चान्त्यम चेत्थम् ॥४८॥

अथ मेषादिराशीना स्वामिनः

मेषवृश्चिकयोर्भौमस्तुलावृषभयोर्भृगु ॥ कन्यामियुनयोर्ज्ञ स्याद्धनुर्मीनाधिपो गुरु ॥४९॥
शनिर्मकरकुभे च कुलीरस्य तु चन्द्रमा ॥ सिहस्याधिपति सूर्यो राशीनामधिपा मता ॥५०॥

पुनः राशीशाः

चन्द्रशुक्रधूमाकपरिवेषारकामुका ॥ गुरुपात शनि केतुर्ग्रहा स्युर्द्वादश क्रमात् ॥५१॥

मेषादि राशियो को सज्ञा

क्रिय, तावुरि, जितुम, कुलीर, लेय, पाथोन, जूक, कौर्प्य, तौक्षिव आवोकेरो, हृद्रोग तथा अन्त्य ये सज्ञा है॥४८॥

राशियो के स्वामी

मेष, वृश्चिक का मगल, वृष, तुला का शुक्र, मिथुन, कन्या का बुध, धनु, मीन का गुरु तथा

मकर और कुंभ राशि का शनि, कर्क राशि का चन्द्रमा और सिंह का सूर्य स्वामी है।।४९।।५०।।

अप्रकाश ग्रह सहित स्वामी

चन्द्रमा, बुध, शुक्र, धूम, सूर्य, परिवेष, मंगल, इन्द्रचाप, गुरु, व्यतीपात, शनि और केतु (ध्वज) ये क्रमश १२ राशियों के स्वामी है।।५१।।

अथाग्रे षोडशवर्गानाह

वर्गान् षोडशसंख्याकान् ब्रह्मा लोकपितामहः ॥ तानहं संप्रवक्ष्यामि मैत्रेय श्रूयतामिति ॥५२॥
क्षेत्रं होरा च द्रेष्काणस्तुर्यांशः सप्तमांशकः ॥ नवांशो दशमांशश्च सूर्यांशः षोडशांशकः ॥५३॥
विंशांशो वेदबाह्वंशो भांशस्त्रिंशांशकस्ततः ॥ खवेदांशोऽक्षवेदांशःषष्ठ्यंशश्च ततः परम् ॥५४॥
तत्क्षेत्रं तस्य खेटस्य राशेर्यो यस्य नायकः ॥ सूर्येन्द्वोर्विषमे राशौ समे तद्विपरीतकम् ॥५५॥
पितरश्चन्द्रहोरेशा देवाः सूर्यस्य कीर्तिताः ॥ राशेरर्द्धम्भवेद्धोरा ताश्चतुर्विंशतिः स्मृताः ॥
मेषादि तासां होराणां परिवृत्तिद्वयं भवेत् ॥५६॥

षोडश वर्ग नाम

हे मैत्रेय! लोकपितामह ब्रह्मा के कहे हुए १६ वर्गो को कहता हू, आप सुने ।।५२।। स्वक्षेत्र १ होरा, २ द्रेष्काण ३ तुर्यांश ४ सप्तमांश ५ नवमांश ६ दशमांश ७ द्वादशांश ८ तथा षोडशांश ९ विंशांश १० चतुर्विंशांश ११ भांश १२ त्रिंशांश १३ खवेदांश १४ अक्षवेदांश १५ षष्ठ्यंश १६ ये १६ वर्ग है।।५२।।५३।।५४।।

स्वक्षेत्र और होरा

१–जिस राशि का जो स्वामी है वह 'स्वक्षेत्र वर्ग' है।

२–होरा–विषम राशि मे 'प्रथम सूर्य' १५ अंश तक बाद 'चन्द्रमा ३० अंश तक' होरापति है।
समराशि मे 'प्रथम चन्द्रमा की' बाद 'सूर्य' की होरा है। चन्द्र होरा के स्वामी 'पितर' और सूर्यहोरा के स्वामी देवता हैं। राशि के आधे भाग (१५ अंश) को होरा कहते हैं। वे २४ हैं। राशिचक्र मे दो बार आवृत्ति होती है ।।५५।।५६।।

उदाहरण–जब लग्न में विषम राशि हो तब सूर्य से और समराशि हो तो चन्द्रमा से गिना जाता है। जैसे–लग्न ३।८ हो तो सम राशि होने से चन्द्रहोरा (४) है।
लग्न २।४ हो तो विषम राशि होने से सूर्य होरा (५) है।

होराचक्रमिदम्

स्वा०	राशि०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मीन
दे०	१५	र०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४
पितर	३०	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५	च०४	सू०५

अथ द्रेष्काणमाह

राशित्रिभागा द्रेष्काणास्तेच षट्त्रिंशदीरिताः ॥ परिवृत्तित्रयतेषां मेषादेः क्रमशो भवेत् ॥५७॥
स्वपंचनवमानां च विषमेषु समेषु च ॥ नारदागस्तिदुर्वासा द्रेष्काणेशाश्चरादयः ॥५८॥

३-द्रेष्काण-प्रत्येक राशि के तीसरे भाग को 'द्रेष्काण' कहते है। सब द्रेष्काण १२x३=३६ हैं। मेषादि राशियो मे तीन आवृत्ति होती हैं, प्रथम भाग का राशीश ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमेश और तीसरे का नवमेश स्वामी होता है। क्रम से नारद, अगस्ति, दुर्वासा देवता हैं॥५७॥५८॥

उदाहरण-राशि के ३० अश है, उसके ३ भाग करने पर १०-१० अश का १-१ भाग (द्रेष्काण) होता है। उसमे प्रथम भाग का राशिपति ही स्वामी है, दूसरे का पञ्चमाधिपति और तीसरे का नवम राशिपति स्वामी होता है। जैसे लग्न ३।८ है अत प्रथम भाग मे होने से चन्द्रमा की राशि ४ द्रेष्काण लग्न सिद्ध हुआ।

द्रेष्काणचक्रम्

स्वा०	राशि	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मीन
नारद	अश १०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
अगस्ति	२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
दुर्वासा	३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८

अथ चतुर्थांशमाह

स्वर्क्षादिकेंद्रपतयस्तुर्यांशेशाः क्रियादयः ॥ सनकश्च सनदश्च कुमारश्च सनातनः ॥५९॥

चतुर्थांश वर्ग

राशि के ४ भाग मे प्रथम भाग का स्वामी राशिपति है। द्वितीय भाग का चतुर्थ भावाधिपति एव तृतीय का सप्तमेश और चतुर्थेश का दशमेश स्वामी होता है। और सनक, सनन्दन, सनत्कुमार, सनातन क्रम से देवता है॥५९॥

विवरण-राशि ३० के ४ भाग करने से ७।३० अश का एक भाग होता है, इसका स्वामी राशिपति ही है, दूसरा भाग १५ अश तक हुआ, इसका स्वामी चतुर्थेश और तीसरा भाग २२।३० तक हुआ इसका स्वामी सप्तमेश तथा चौथा भाग ३० अश तक उसका स्वामी दशमेश होता है।

उदाहरण-लग्न ३।८ है । द्वितीय भाग मे होने से शुक्र स्वामी है।

चतुर्थांशचक्रम्													
स्वामी	अंश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सनक	७ ३०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ च	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०
सनंदन	१५ ०	४ च०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०
कुमार	२२ ३०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ च०	५ सू०	६ बु०
सनातन	३० ०	१० श०	११ श०	१२ बृ०	१ मं०	२ शु०	३ बु०	४ च०	५ सू०	६ बु०	७ शु०	८ मं०	९ बृ०

अथ सप्तमांशमाह

सप्तांशपास्त्वोजगृहे गणनीया निजेशतः ॥ युग्मराशौ तु विज्ञेयाः सप्तमर्क्षादिनायकात् ॥६०॥
क्षारक्षीरौ च दध्याज्यौ तथेक्षुरससंभवः ॥ मद्यशुद्धजलावोजे समे शुद्ध जलादिकाः ॥६१॥

सप्तमांश वर्ग

राशी के ७ भाग करने से एक भाग ४।१७।८ अंशात्मक होता है। बाद ४।१७ जोड़ते रहने से सातवे भाग मे ३० अंश पूरे समझना। इसमे ओज (विषम) राशियो मे राशिपति से ही गिनना। समराशियो मे सातवी राशि से गणना करना चाहिये। विषम राशि मे देवता–क्षार, क्षीर, दधि, घृत, इक्षुरस, मद्य, जल क्रम से जानना।

समराशियो मे–जल, मद्य, इक्षुरस, घृत, दधि, क्षीर, क्षार इस क्रम से जानना॥६०॥६१॥

उदाहरण–लग्न–३।८ समराशि का द्वितीय सप्तमांश है अतः कुंभ राशि तथा मद्य देवता है।

सप्तमांशचक्रम्													
स्वामी	लग्न	मे०१	वृ०२	मि०३	क०४	सि०५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	म०१०	कुं११	मी१२
क्षार	४ १७	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६
क्षीर	८ ३४	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७

दधि	१२ ५१	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८
आज्य	१७ ८	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९
इक्षुरस	२१ २५	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०
मद्य	२५ ४२	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११
शुद्ध जलम्	३० ०	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२

अथ नवमांशम्

नवांशेशाश्चरस्तस्मात्स्थिरे तन्नवमादितः॥ उभये तत्पंचमादेरिति चिंत्य विचक्षणैः ॥ देवा नृराक्षसाश्चैव चरादिषु ग्रहेषु च ॥६२॥

नवांश वर्ग

चरराशिमे राशिस्वामीसे स्थिरराशि मे नवमराशि से तथा द्विस्वभाव राशि मे पञ्चम राशि से गणना करनी चाहिए। चर मे देवता, मनुष्य, राक्षस, स्थिर मे मनुष्य, राक्षस, देव और द्विस्वभाव मे राक्षस, देव, मनुष्य तीन बार आवृत्ति होती है॥६२॥

उदाहरण–जैसे लग्न ३।८।४।५ है। अत कन्या नवमांश है।

टिप्पणी–नवांश वर्ग का व्यवहार मे अधिक उपयोग होता है, यहा मूलकार ने सक्षेप तथा कुछ जटिल रीति से इसका विवरण किया है। इसकी सरल प्रक्रिया इस प्रकार है–

राशि के नव भाग करने से प्रत्येक भाग ३।२० का होता है और "क्रियेण–तौलीन्दुभतो नवांशाः।" अर्थात् प्रत्येक राशि पर मेष, मकर, तुला, कर्क, मेष, मकर, तुला, कर्क ॥ मेष, मकर, तुला, कर्क ये आदि राशि है। प्रत्येक राशि के नवांश मे अपनी आदि राशि से नये भाग तक गणना करना और प्रत्येक भाग ३।२० का होता है। अत नौ भागो की सख्या क्रमश ३।२०। – ६।४०–१०।००–१३।२० –१६।४० – २०।००–२३ । २०–२६।४०–३०।०० ये अशादि भाग सख्या है। इसको याद रखने से व्यवहारकाल मे चक्र मे देखना आवश्यक नही होगा।

नवमांशचक्रम्														
स्वामी	रा०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	अंश
देव	१	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	३।२०
नृ०	२	शु०	श०	म०	र०	शु०	श०	म०	र०	शु०	श०	म०	र०	६।४०
राक्षस	३	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	१०।०
देव	४	च०	मं०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	मं०	मं०	श०	गु०	१३।२०
नृ	५	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	१६।४०
राक्षस	६	शु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	२०।०
देव	७	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	गु०	च०	म०	श०	२३।२०
नृ०	८	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	म०	र०	गु०	श०	२६।४०
राक्षस	९	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	बृ०	बु०	बु०	बृ०	३०।०

अथ दशमांशमाह

दिग्दशाथ ततश्चौजे युग्मे तन्नवमाद्वदेत् ॥ पूर्वादिदशदिक्पाला इन्द्राग्नियमराक्षसाः ॥६३॥ वरुणो मारुतश्चैव कुबेरेशानपद्मजाः ॥ अनन्तश्च क्रमादोजे समे वा व्युत्क्रमेण तु ॥६४॥

दशमांश वर्ग

राशि के ३० अंशों के १० भाग करने से प्रत्येक भाग ३ अंश का होता है। इनमें विषमराशियों में अपनी राशि से तथा सम राशियों में अपने से नौवीं राशि से गणना की जाती है। देवता विषम राशि में क्रम से–इन्द्र, अग्नि, यम, राक्षस, वरुण, मारुत, कुबेर, ईशान, पद्मज, अनन्त। सम राशियों में क्रमशः–अनन्त, पद्मज, ईशान, कुबेर, मारुत, वरुण, राक्षस, यम, अग्नि, इन्द्र जानना ॥६३॥६४॥

उदाहरण–लग्न–३।८।४।५ मीन राशि से गणना करने पर वृष राशि प्राप्त हुई।

अथ दशांशचक्रम्

विषमा स्वामिन		मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	समा स्वामि
इन्द्र	३	म० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	म० ८	अनंत
अग्नि	६	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बु० ६	बु० ३	म० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	पद्मज
यम	९	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	ईशान
राक्षस	१२	च० ४	म० १	बु० ६	बु० ३	म० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	कुबेर
वरुण	१५	र० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	मारुत
मारुत	१८	बु० ६	बु० ३	म० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	वरुण
कुबेर	२१	शु० ७	च० ४	बृ० ९	बु० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	सू० ५	शु० २	राक्षस
ईशान	२४	म० ८	र० ५	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बु० ६	बु० ३	यम
पद्मज	२७	बृ० ९	बु० ६	श० ११	म० ८	म० १	श० १०	बु० ३	बृ० १२	र० ५	शु० २	शु० ७	च० ४	अग्नि
अनंत.	३०	श० १०	शु० ७	बृ० १२	बृ० ९	शु० २	श० ११	च० ४	म० १	बु० ६	बु० ३	म० ८	र० ५	इन्द्र

अथ द्वादशांशमाह

द्वादशांशस्य गणना तत्तत्क्षेत्रादिविनिर्दिशेत् ॥ तेषामधीशाः क्रमशो गणेशाऽश्वियमाहय ॥६५॥

द्वादशांश वर्ग

एक राशि के ३० अंशों के १२ भाग करने पर २।३० एक भाग प्राप्त होता है। इसकी गणना अपनी राशि से ही होती है (यथा मेष के द्वादशांश की मेष से, वृष की वृष से, मिथुन की मिथुन से)॥६५॥ देवता—गणेश, अश्विनीकुमार, यम, सर्प—ये तीन आवृत्ति करना।

उदाहरण—लग्न ३।८ कर्क से गुनने पर तुला राशि प्राप्त हुई।

अथ द्वादशांशचक्रमिदम्

स्वामिन	अं०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०
गणेश	२ ३०	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२
अश्विनी कुमारौ	५ ०	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १
यम	७ ३०	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २
अहि	१० ०	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३
गणेश	१२ ३०	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४
अश्विनी कुमारौ	१५ ०	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५
यम	१७ ३०	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६
अहि	२० ०	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७
गणेश	२२ ३०	गु० ९	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८
अश्विनी कुमारौ	२५ ०	श० १०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९
यम	२७ ३०	श० ११	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०
अहि	३० ०	गु० १२	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	र० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु० ९	श० १०	श० ११

अथ षोडशांशमाह

अजसिंहाश्वितो ज्ञेया नृपांशा क्रमशः सदा ॥ अजविष्णू रुद्र सूर्यो ह्योजे युग्मे प्रतीपकम् ॥६६॥

षोडशांश वर्ग (चर, स्थिर, द्विस्व०)

षोडशांश में-मेष सिंह, धनु राशि से अर्थात् (इनको नवांश की तरह आदि राशि मान कर

गणना करना।) इसका एक भाग १।५२।३० होता है। (चक्र मे स्पष्ट है) देवता-विषम राशि मे ब्रह्मा, विष्णु, हर, सूर्य तथा सम राशि मे सूर्य, हर, विष्णु, ब्रह्मा। आगे पुन इसी क्रम से गिन लेना॥६६॥

उदाहरण-लग्न-३।८।४।५। मेष से गणना की तो सिह राशि प्राप्त हुई।

षोडशांशचक्रम्																	
संख्या	विषम स्वा०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	सम स्वा०	अं०	क०	वि०
१	ब्र०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	१	५२	३०
२	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	३	४५	०
३	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	५	३७	३०
४	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब्र०	७	३०	०
५	ब्र०	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	सू०	९	२२	३०
६	वि०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	ह०	११	१५	०
७	ह०	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	वि०	१३	७	३०
८	सू०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	ब्र०	१५	०	०
९	ब्र०	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	सू०	१६	५२	३०
१०	वि०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	ह०	१८	४५	०
११	ह०	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	वि०	२०	३७	३०
१२	सू०	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	ब्र०	२२	३०	०
१३	ब्र०	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	सू०	२४	२२	३०
१४	वि०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	ह०	२६	१५	०
१५	ह०	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	वि०	२८	७	३०
१६	सू०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	ब्र०	३०	०	०

अथ विंशांशमाह

अथ विंशतिभागानामधिपा ब्रह्मणोदिता ॥ क्रियाच्चरे स्थिरे चापान्मृगेन्द्राद्द्विस्वभावके ॥६७॥ काली गौरी जया लक्ष्मीर्विजया विमला सती ॥ तारा ज्वालामुखी श्वेता ललिता बगलामुखी॥६८॥ प्रत्यङ्गिरा शची रौद्री भवानी वरदा जया ॥ त्रिपुरा सुमुखी चेति विषमे परिचिन्तयेत् ॥६९॥ समराशौ दया मेधा छिन्नशीर्षा पिशाचिनी ॥ धूमावती च मातङ्गी बाला भद्राऽरुणाऽनला ॥७०॥ पिङ्गला छुछुका घोरा वाराही वैष्णवी सिता ॥ भुवनेशी भैरवी च मङ्गला ह्यपराजिता ॥७१॥

विंशांश वर्ग

विंशांश वर्ग में चर (मेष, कर्क, तुला,मकर) राशियों में मेष से गणना करना, स्थिर राशियों में धनुराशि से और द्विस्वभाव राशियों में सिंह से गणना करना। इसका परिमाण १।३० है। देवता–विषम राशियों में क्रमशः–काली, गौरी, जया, लक्ष्मी, विजया, विमला सती, तारा, ज्वालामुखी, श्वेता, ललिता, बगलामुखी, प्रत्यंगिरा, शची, रौद्री, भवानी, वरदा जया, त्रिपुरा और सुमुखी। समराशियों में–दया, मेधा, छिन्नशीर्षा, पिशाची, धूमावती मातंगी, बाला, भद्रा, अरुणा, अनला, पिंगला, छुछुका, घोरा, वाराही, वैष्णवी, सिता भुवनेश्वरी, भैरवी, मंगला और अपराजिता ये क्रमशः देवता हैं।६७–७१॥

उदाहरण–लग्न ३।८।४।५″ कर्क चर राशि है अतः मेष से गणना करने पर कन्या राशि प्राप्त हुई।

विंशांशचक्रम्

सं	वि० स्वा०	मे० १	वृ० २	मि० ३	क० ४	सिं० ५	क० ६	तु० ७	वृ० ८	ध० ९	म० १०	कु० ११	मी० १२	स० स्वा	अंश	संख्या
१	काली	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	दया	१।३०	१
२	गौरी	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	मेधा	३।०	२
३	जया	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	छिन्नशी	४।३०	३
४	लक्ष्मी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	पिशाचि	६।०	४
५	विजया	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	धूमाव	७।३०	५
६	विमला	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	मातंगी	९।०	६

७	सती	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	बाला	१०।३०	७
८	तारा	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	भद्रा	१२।०	८
९	ज्वालामु०	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	अरुणा	१३।३०	९
१०	श्वेता	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	अनला	१५।०	१०
११	ललिता	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	पिंगला	१६।३०	११
१२	बगला	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	छुछुका	१८।०	१२
१३	प्रत्यगिरा	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	घोरा	१९।३०	१३
१४	शची	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	वाराही	२१। ०	१४
१५	रौद्री	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	वैष्णवी	२२।३०	१५
१६	भवानी	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	सिता	२४।०	१६
१७	वरदा	५	१	९	५	१	९	५	१	९	५	१	९	भुवनेश्व०	२५।३०	१७
१८	जया	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	६	२	१०	भैरवी	२७।०	१८
१९	त्रिपुरा	७	३	११	७	३	११	७	३	११	७	३	११	मंगला	२८।३०	१९
२०	सुमुखी	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	८	४	१२	अपराजि०	३०।०	२०

अथ सिद्धांशकमाह

सिद्धांशकानामधिपा सिंहादोजभवे गृहे ॥ कर्कात्समभवे खेट स्कन्द- पर्शुधरोऽनलः ॥७२॥
विश्वकर्मा भगो मित्रो मयोऽन्तक वृषध्वजाः ॥ गोविंदो मदनो भीमः सिंहादौ विषमे क्रमात् ॥
कर्कादौ समभे भीमाद्विलोमेन विचिंतयेत् ॥७३॥

सिद्धा (२४)श वर्ग

चतुर्विंशांश वर्ग मे विषमराशियो मे सिंह से तथा सम राशियो मे कर्क राशि से गणना करनी चाहिये। इसका एक भाग १।१५ अंश का होता है।

देवता—स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम, स्कन्द, पशुधर, अनल, विश्वक, भग, मित्र, मय, अन्तक, वृषध्वज, गोविन्द, मदन, भीम ये देवता क्रमश विषम राशि मे जानना तथा सम राशियो मे ये ही देवता विपरीत क्रम से समझना।।७२।।७३।।

उदाहरण—लग्न ३।८।४ कर्कादि गणना मे मकर प्राप्त हुआ।

चतुर्विंशांशचक्रम्

स०	वि०स्वा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	स०स्वा०	अ०क०	स०
१	स्कंद	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीम	१।१५	१
२	पशुधर	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदन	२।३०	२
३	अनल	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविन्द	३।४५	३
४	विश्वक	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वज	५।०	४
५	भग	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अन्तक	६।१५	५
६	मित्र	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	मय	७।३०	६
७	मय	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्र	८।४५	
८	अन्तक	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भग	१०।०	
९	वृषध्वज	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वक	११।१५	९
१०	गोविंद	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनल	१२।३०	१०
११	मदन	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	३	२	पशुधर	१३।४५	११
१२	भीम	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कंद	१५।०	१२
१३	स्कंद	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	५	४	भीम	१६।१५	१३
१४	पशुधर	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	६	५	मदन	१७।३०	१४
१५	अनल	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	७	६	गोविंद	१८।४५	१५
१६	विश्वक	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	८	७	वृषध्वज	२०।०	१६
१७	भग	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	९	८	अंतक	२१।१५	१७
१८	मित्र	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	१०	९	मय	२२।३०	१८
१९	मय	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	११	१०	मित्र	२३।४५	१९
२०	अंतक	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	१२	११	भग	२५।०	२०
२१	वृषध्वज०	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	१	१२	विश्वक	२६।१५	२१
२२	गोविंद	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	२	१	अनल	२७।३०	२२
२३	मदन	३	२	३	२	३	२	३	३	३	२	३	२	पशुधर	२८।४५	२३
२४	भीम	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	४	३	स्कंद	३०।०	२४

अथ भांशशानाह

नक्षत्रेशाः क्रमाद्दस्रयमवह्निपितामहाः ॥ चंद्रेशादितिजीवा हि पितरो भगसंज्ञिताः ॥७४॥
अर्यमार्कस्त्वष्टमरुच्छक्राग्निमित्रवासवासवाः॥निर्ऋत्युदक विश्वेजगो विन्दो वसवोंबुपः॥७५॥
ततोऽजपादहिर्बुध्न्यः पूषाचैव प्रकीर्तितः॥ नक्षत्रेशास्तु भांशेशा भांश संख्यस्त्वभात् क्रमात् ॥७६॥

भांश (सप्तविंशांश) वर्ग

भांश वर्ग में ३० अंश के २७ भाग होते हैं। एक भाग १।६।४ अंशादि होता है, राशियों के आदि गण्य क्रमश मेष, कर्क, तुला, मकर ये तीन बार आवृत्तिरूप मे आते है। और नक्षत्रो के देवता ही इनके देवता है। यथा–अश्विनीकुमार, यम, वह्नि, ब्रह्मा, चन्द्रमा, ईश, अदिति, जीव, अहि, पितर, भग, अर्यमा, सूर्य, त्वष्टा, मरुत्, शक्राग्नि, मित्र, वासव, राक्षस, वरुण, विश्वेदेव, गोविन्द, वसु, वरुण, अजपात्, अहिर्बुध्न्य, पूषा, क्रमश ये देवता है॥७४॥७५॥७६॥

उदाहरण–लग्न ३।८।४।५ मकर से गणना करने पर सिंह लग्न आया।

भांशचक्रम्

स०	स्वामिनः	मे०१	वृ०२	मि३	क०४	सिं५	क०६	तु०७	वृ०८	ध०९	म०१०	कु०११	मी०१२	अंशादि
१	अश्विनीकु०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१।६।४०
२	यम	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२।१३।२०
३	वह्नि	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३।२०।०
४	ब्रह्मा	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४।२६।४०
५	चन्द्रमा	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५।३३।२०
६	ईश	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६।४०।०
७	अदिति	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७।४६।४०
८	जीव	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८।५३।२०
९	अहि	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	१०।०।०
१०	पितर	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	११।६।४०
११	भग	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	१२।१३।२०
१२	अर्यमा	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१३।२०।०

१३	सूर्य	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१४|२६|४०
१४	त्वष्टा	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	१५|३३|२०
१५	पवन्	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	१६|४०|०
१६	शक्राग्नि	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	१७|४६|०
१७	मित्र	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	१८|५३|२०
१८	शक्र	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	२०|०|०
१९	राक्षस	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	२१|६|४०
२०	वरुण	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	२२|१३|२०
२१	विश्वेदेव	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	२३|२०|०
२२	गोविंद	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	२४|२६|४०
२३	वसु	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	२५|३३|२०
२४	वरुण	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	२६|४०|०
२५	अजपात्	१	४	७	१०	१	४	७	१०	१	४	७	१०	२७|४६|४०
२६	अहिर्बुध्न्य	२	५	८	११	२	५	८	११	२	५	८	११	२८|५३|२०
२७	पूषा	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३	६	९	१२	३०|०|०

अथ त्रिंशांशमाह

त्रिंशांशेशाश्च विषमे कुजार्कीज्यज्ञभार्गवाः ॥ पञ्चपञ्चाष्टसप्ताक्षभागा व्यत्ययतः समे ॥७७॥
षड्भिः समीरणाख्यौ च धनदो जलदस्तथा ॥ विषमेषु क्रमाज्ज्ञेयाः समराशौ विपर्ययम् ॥७८॥

विषमत्रिंशांशचक्रम्							
स्वामिन	अंशा	मेष	मिथुन	सिंह	तुला	धनु	कुंभ
वह्नि	५°	म०	म०	म०	म०	म०	म०
वायु	१०°	श०	श०	श०	श०	श०	श०
शक्र	१८°	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
धनद	२५°	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
जलद	३०°	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०

समत्रिंशांशचक्रम्							
स्वामिन	अंशा	वृषभ	कर्क	कन्या	वृश्चिक	मकर	मीन
जलद	५°	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०	शु०
धनद	१२°	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०	बु०
शक्र	२०°	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०	गु०
वायु	२५°	श०	श०	श०	श०	श०	श०
वह्नि	३०°	म०	म०	म०	म०	म०	म०

अथ खवेदांशमाह

चत्वारिंशतिभागानामधिपा विषमे वियात् ॥ विष्णुश्चन्द्रो मरीचिश्च त्वष्टा धाता शिवो रवि
॥७९॥ यमो यक्षेशगन्धर्वं कालो वरुण एव च ॥ समभे तु ततो ज्ञेया स्वस्वाधिपसमन्विता ॥८०॥

खवेदांश (४०) वर्ग

खवेदांश(४०) वर्ग मे ४० भाग है। प्रत्येक भाग ००।४५ अंश घटि का है। विषम राशियो मे मेष से तथा सम राशियो मे तुला से गणना होती है। देवता–विष्णु, चन्द्र, मरीचि, त्वष्टा, धाता, शिव, रवि, यम, यक्षेश, गन्धर्व, काल वरुण तथा विष्णु ये बारह देवता ही बार बार गिनने से ३ बार मे ३६ भाग तक गिनें जाकर बाकी चार भागो मे पुन इन्ही मे से विष्णु, चन्द्रमा, मरीचि और त्वष्टा आकर ४० की संख्या पूर्ण होती है।।७९।।८०।।

उदाहरण–लग्न–३।८।४।५ तुलादि गणना करने से सिंह राशि प्राप्त हुई।

खवेदांशचक्रमिदम्

सं०	स्वामिन	मे०	वृ१	मि२	क३	सि४	क५	तु६	वृ७	ध८	म९	कु१०	मी११	अं०	क०
१	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	०	४५
२	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१	३०
३	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२	१५
४	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३	०
५	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	३	४५
६	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	४	३०
७	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	५	१५
८	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	६	०
९	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	६	४५
१०	गन्धर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	७	३०
११	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	८	१५
१२	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	९	०
१३	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	९	४५
१४	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१०	३०

१५	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	११	१५
१६	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	१२	०
१७	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	१२	४५
१८	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	१३	३०
१९	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	१४	१५
२०	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	१५	०
२१	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	१५	४५
२२	गन्धर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१६	३०
२३	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	१७	१५
२४	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१८	०
२५	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१८	४५
२६	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	१९	३०
२७	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२०	१५
२८	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	२१	०
२९	धाता	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	२१	४५
३०	शिव	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	२२	३०
३१	रवि	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	२३	१५
३२	यम	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	२४	०
३३	यक्षेश	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	२४	४५
३४	गन्धर्व	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	२५	३०
३५	काल	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	११	५	२६	१५

LIBRARY

३६	वरुण	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	१२	६	२७	०
३७	विष्णु	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	१	७	२७	४५
३८	चन्द्र	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२	८	२८	३०
३९	मरीचि	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	३	९	२९	१५
४०	त्वष्टा	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	४	१०	३०	०

अथाक्षवेदांशमाह

तयाक्षवेदभागानामधिपाश्चरभे क्रियात् ॥ स्थिरेसिंहाद्द्विस्वभावे चापाद्ब्रह्मेशकेशवाः ॥
ईशाच्युतसुरज्येष्ठविष्णुकेशाश्चराविषु ॥८१॥

अक्षवेदांश (४५) वर्ग

अक्षवेदांश वर्ग मे ३० अंश के ४५ भाग है और एक भाग ४० घटिका का है। इनमे चरराशियो मे मेष राशि से तथा स्थिर राशियो मे सिंह एवं द्विस्वभाव राशियो मे धनुराशि से गणना होती है। देवता–चरराशि मे ब्रह्मा, शंकर, विष्णु इस क्रम से तथा स्थिरराशियो मे शंकर, विष्णु, ब्रह्मा क्रम से एवं द्विस्वभाव राशि मे विष्णु, ब्रह्मा, शंकर क्रम से बार २ आवृत्ति करके गणना होती है।॥८१॥

उदाहरण–लग्न–२।८।४।५ मेष मे गणना करने पर वृष राशि आई।

अक्षवेदांशचक्रमिदम्														
सं०	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु मे०	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा वृ०१	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर मि०२	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु क०३	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा सि०४	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर क०५	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु तु०६	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा वृ०७	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर ध०८	स्वा० ब्रह्मा शंकर विष्णु म०९	स्वा० शंकर विष्णु ब्रह्मा कु१०	स्वा० विष्णु ब्रह्मा शंकर मी११	अं०	क०
१	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	०	४०
२	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१	२०
३	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२	०
४	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२	४०
५	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	३	२०

६	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	४	०
७	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	४	४०
८	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	५	२०
९	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	६	०
१०	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	६	४०
११	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	७	२०
१२	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	८	०
१३	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	८	४०
१४	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	९	२०
१५	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१०	०
१६	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१०	४०
१७	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	११	२०
१८	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	१२	०
१९	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	१२	४०
२०	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	१३	२०
२१	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	१४	०
२२	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१४	४०
२३	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	१५	२०
२४	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१६	०
२५	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१६	४०
२६	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	१७	२०
२७	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	१८	०

२८	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	१८	४०
२९	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	१९	२०
३०	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२०	०
३१	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२०	४०
३२	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२१	२०
३३	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	२२	०
३४	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	२२	४०
३५	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	२३	२०
३६	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	२४	०
३७	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	२४	४०
३८	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२५	२०
३९	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	२६	०
४०	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	२६	४०
४१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	२७	२०
४२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	६	१०	२	२८	०
४३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	७	११	३	२८	४०
४४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	८	१२	४	२९	२०
४५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	९	१	५	३०	०

अथ षष्टयंशमाह

घोरश्च राक्षसो देव कुबेरो यक्षकिन्नरौ ॥ भ्रष्ट कुलघ्नो गरलो वह्निर्माया पुरीषक ॥८२॥ अपांपतिर्मरुत्वांश्च काल सर्पामृतेन्दुका ॥ मृदु कोमलहेरम्बब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ॥८३॥ देवार्द्रौ कलिनाशश्च क्षितीशकमलाकरौ ॥ गुलिको मृत्युकालश्च दावाग्निर्घोरसंज्ञक ॥८४॥ यमश्च कण्टकसुधाऽमृतौ पूर्णनिशाकर ॥ विषदग्धकुलान्तश्च मुख्यो वंशक्षयस्तथा ॥८५॥ उत्पातकालसौम्याख्या कोमल शीतलाभिध ॥ करालदंष्ट्रचन्द्रास्यौ प्रवीण कालपावक ॥८६॥ दण्डभृन्निर्मल सौम्य क्रूरोऽतिशीतलोऽमृत ॥पयोधि भ्रमणाख्यौ च चन्द्ररेखा त्वयुग्मपे

॥८७॥ समेभे व्यत्ययाज्ज्ञेया षष्ट्यंशाश्च प्रकीर्तिताः ॥ षष्ट्यंशस्वामिनस्त्वोजे तदीशाद्व्यत्ययः समे ॥८८॥ शुभषष्ट्यंशसंयुक्ता ग्रहाः शुभफलप्रदाः ॥ क्रूरषष्ट्यंशसंयुक्ता नाशयन्ति खचारिणः ॥८९॥ राशीन् विहाय खेटस्य द्विघ्नमंशाद्यमर्कहृत् ॥ शेषं सैकं च तद्राशिनाथषष्ट्यंशपाः स्मृताः ॥९०॥

षष्ठ्यंश वर्ग (६०)

षष्ठ्यंश वर्ग में प्रथम देवता कथन करते है। ये देवता विषम राशियों में लिखित क्रम से और सम राशियों में विपरीत क्रम से जानना। घोर। राक्षस। देव। कुबेर। यक्ष। किन्नर। भ्रष्ट। कुलघ्न। गरल। अग्नि। माया। पुरीष। अपां पति। मरुत्वत्। काल। अहिभाग। अमृत। चन्द्र। मृदु। कोमल। हेरम्ब। ब्रह्मा। विष्णु महेश्वर। देव। आर्द्र। कलिनाश। क्षितीश्वर। कमलाकर। गुलिक। मृत्यु। काल। दावाग्नि। यम। कण्टक। सुधा। अमृत। पूर्णचन्द्र। विषप्रदग्ध। कुलनाश। वंशक्षय। उत्पात। कालरूप। सौम्य। कोमल। शीतल। दंष्ट्रा कराल। इन्दुमुख। प्रवीण। कालाग्नि। दण्डायुध। निर्मल। सौम्य। क्रूर। अतिशीतल। सुधाश। पयोधीश। भ्रमण। इन्दुरेखा ये ६० देवता कहे गये है।

वर्ग विवरण

जिस ग्रह या लग्न में षष्ठ्यंश की राशि देखना हो उसके स्पष्ट में से राशि अलग रखकर अंश, घटी, पल के अंक को द्विगुण करना, कला को ३० से शेष कर अंश में युक्त करना। और अंश में १२ का भाग देकर (लब्ध त्याग कर) शेष संख्या में १ मिलाना पश्चात् लग्न या ग्रह जिस राशि में हो उस राशि से गणना करने पर राशि अंक प्राप्त होगा। देवता के सम विषम के बारे में ऊपर लिख चुके हैं॥८२-९०॥

उदाहरण—लग्न—३।८।४५।०० इसके अंशादि ८।४५×२=१६।९० घटिका में ३० का भाग दिया लब्धि ३ अंश में योग किया तो १९ हुए, इसमें १ और योग किया २० हुए। १२ का भाग दिया शेष ८ अंश रहे।अत सारिणी में १७ वां अंश १२ (मीन) राशि और 'कालरूप' अंश प्राप्त हुआ। ग्रह में उदाहरण—सूर्य—अंशादि ४।२८।१×२=८।५६।२ घटी ५६ में ३० के भाग में लब्ध १ को ८ में योग किया ९ हुए १ और योग किया १० हुए मिथुन से गणना करने पर २१ 'हेरम्ब' अंश और १ राशि प्राप्त हुई॥

अथ षष्ट्यंशचक्रमिदम्

सं०	विषमषष्ट्यंश	मे० ०	वृ० १	मि० २	क० ३	सिं० ४	क० ५	तु० ६	वृ० ७	ध० ८	म० ९	कु० १०	मी० ११	समषष्ट्यंश	अं० कला
१	घोरांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	इन्दुरेखांश	० | ३०
२	राक्षसांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भ्रमणांश	१ | ०
३	देवांश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	पयोधीशांश	१ | ३०
४	कुबेरांश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	सुधांश	२ | ०
५	यक्षांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	अतिशीतलांश	२ | ३०
६	किन्नरांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	क्रूरांश	३ | ०
७	भ्रष्टांश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	सौम्यांश	३ | ३०
८	कुलघ्नांश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	निर्मलांश	४ | ०
९	गरलांश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	दण्डायुधांश	४ | ३०
१०	अग्न्यंश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कालाग्न्यंश	५ | ०
११	मायांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	प्रवीणांश	५ | ३०
१२	पुरीषांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	इन्दुमुखांश	६ | ०
१३	अपांपत्यंश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	दंष्ट्राकरालांश	६ | ३०
१४	मरुत्वंश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	शीतलांश	७ | ०
१५	कालांश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कोमलांश	७ | ३०
१६	अहिभागांश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	सौम्यांश	८ | ०
१७	अमृतांश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कालरूपांश	८ | ३०
१८	चन्द्रांश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	उत्पातांश	९ | ०

१९	मृदृशांश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	वंशक्षयांश	९ | ३०
२०	कोमलांश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	कुलनाशांश	१० | ०
२१	हेरम्बांश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	विषप्रदग्धांश	१० | ३०
२२	ब्रह्मांश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	पूर्णचन्द्रांश	११ | ०
२३	विष्णवांश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अमृतांश	११ | ३०
२४	महेश्वरांश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	सुधांश	१२ | ०
२५	देवांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	कण्टकांश	१२ | ३०
२६	आर्द्रांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	यमांश	१३ | ०
२७	कलिनाशांश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	घोरांश	१३ | ३०
२८	क्षितीश्वरांश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	दावाग्निघांश	१४ | ०
२९	कमलाकरांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कालांश	१४ | ३०
३०	गुलिकांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	मृत्योरंश	१५ | ०
३१	मृत्योरंश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कुलिकांश	१५ | ३०
३२	कालांश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	कमलाकरांश	१६ | ०
३३	दावाग्निघांश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	क्षितीश्वरांश	१६ | ३०
३४	घोरांश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कलिनाशांश	१७ | ०
३५	यमांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	आर्द्रांश	१७ | ३०
३६	कण्टकांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	देवांश	१८ | ०
३७	सुधांश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	महेश्वरांश	१८ | ३०
३८	अमृतांश	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	विष्णवांश	१९ | ०
३९	पूर्णचन्द्रांश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	ब्रह्मांश	१९ | ३०

४०	विषप्रदग्धांश	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	हेरम्बांश	२०|०
४१	तप्तांश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	कोमलांश	२०|३०
४२	वंशक्षयांश	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	मृद्वंश	२१|०
४३	उत्पातांश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	चन्द्रांश	२१|३०
४४	कालरूपांश	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	अमृतांश	२२|०
४५	सौम्यांश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	अहिभागांश	२२|३०
४६	कोमलांश	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	कालांश	२३|०
४७	शीतलांश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	मरुत्वदंश	२३|३०
४८	दंष्ट्राकरालांश	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	अपांपत्यंश	२४|०
४९	इन्दुमुखांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पुरीषांश	२४|३०
५०	प्रवीणांश	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	मायांश	२५|०
५१	कालाग्न्यंश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	अग्न्यंश	२५|३०
५२	दण्डायुधांश	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	गरलांश	२६|०
५३	निर्मलांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	कुलघ्नांश	२६|३०
५४	सौम्यांश	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	भ्रष्टांश	२७|०
५५	क्रूरांश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	किन्नरांश	२७|३०
५६	अतिशीतलांश	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	यक्षांश	२८|०
५७	सुधांश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	कुबेरांश	२८|३०
५८	पयोधीशांश	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	देवांश	२९|०
५९	भ्रमणांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	राक्षसांश	२९|३०
६०	इन्दुरेखांश	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	घोरांश	३०|०

फल—शुभ षष्ठ्यंश में ग्रह हो तो फल शुभ होता है अशुभ षष्ठ्यंश में हो तो अनिष्टकारक होता है।

अथ वर्गभेदानाह

वर्गभेदानहं वक्ष्ये मैत्रेय त्वं विधारय ॥ षड्वर्गाः सप्तवर्गाश्च दिग्वर्गा नृपवर्गका ॥९१॥ भवंति वर्गसंयोगे षड्वर्गे किंशुकादय ॥ द्वाभ्यां किंशुकनामा च त्रिभिर्व्यंजनमुच्यते ॥९२॥ चतुर्भिश्चामराख्य च छत्रं पंचभिरेव च ॥ षड्भिः कुण्डलयोगः स्यान्मुकुटाख्यं च सप्तभिः ॥९३॥ सप्तवर्गोऽथ दिग्वर्गे पारिजातादिसंज्ञका ॥ पारिजातं भवेद्द्वाभ्यामुत्तमं त्रिभिरुच्यते ॥९४॥ चतुर्भिर्गोपुराख्य स्याच्छरैः सिंहासनं तथा ॥ पारावतं भवेत्षड्भिर्देवलोकं च सप्तभिः ॥९५॥ वसुभिर्ब्रह्मलोकाख्यं नवभिः शक्रवाहनम् ॥ दिग्भिः श्रीधामयोगः स्यादथषोडशवर्गके ॥९६॥ भेदकं च भवेद्द्वाभ्यां त्रिभिः स्यात्कुसुमाख्यकम् ॥ चतुर्भिर्नागपुष्पं स्यात्पंचभिः कंदुकाह्वयम् ॥९७॥ केरलाख्यं भवेत्षड्भिः सप्तभिः कल्पवृक्षकम् ॥ अष्टभिश्चंदनवनं नवभिः पूर्णचंद्रकम् ॥९८॥ दिग्भिरुच्चैः श्रवा नाम रुद्रैर्धन्वन्तरिर्भवेत् ॥ सूर्यकान्तं भवेत्सूर्यैर्विश्वैः स्याद्विद्रुमाख्यकम् ॥९९॥ शक्रसिंहासनं शक्रैर्गोलोकस्तिथिभिर्भवेत् ॥ भूपैः श्रीवल्लभाख्यः स्याद्वर्गा भेदैरुदाहृता ॥१००॥ स्वोच्चमूलत्रिकोणस्वभवनाधिपतेस्तथा ॥ स्वारूढात्केन्द्रनाथानां वर्गा ग्राह्याः सुधीमता ॥१०१॥ अस्तङ्गता ग्रहजिता नीचगा दुर्बलास्तथा ॥ शयनादि वयावस्था उत्पन्ना योगनाशका ॥१०२॥

वर्गभेदप्रकार नाम

हे मैत्रेय! अब हम वर्गभेद कहते है आप ध्यान से सुनिये। प्राय ४ समूह मे इनका विचार किया जाता है। १–षड्वर्ग।२–सप्तवर्ग। ३–दश वर्ग। ४–षोडशवर्ग। इन ४ समूहो मे षड्वर्ग और सप्तवर्ग मे एक ही सज्ञाएँ है। तथा दशवर्ग और षोडश वर्ग की सज्ञाएँ भिन्न २ है। इनमे पहिले २ की सयुक्त सज्ञाएँ कहते है। दो वर्गो से किंशुक। तीन से व्यजन। चार से चामर। पाच से छत्र। छ से कुडल और सात से मुकुट नाम होता है। अब दश वर्ग की सामुहिक सज्ञा कहते है–

दो वर्गो से पारिजात। तीन से उत्तम। चार से गोपुर। पाच से सिहासन। छ से पारावत। सात से देवलोक। आठ से ब्रह्मलोक। नौ से शक्रवाहन। और दश से श्रीधाम नाम होता है। अब षोडशवर्ग की सामूहिक सज्ञाएँ कहते है। दो से भेदक। तीन से कुसुम। चार से नागपुष्प। पाँच से कदुक। छ से केरल। सात से कल्पवृक्ष आठसे चदनवन। नौ से पूर्णचन्द्र। दश से उच्चै श्रवा। ग्यारह से धन्वन्तरि। बारह से सूर्यकान्त। तेरह से विद्रुम। चौदह से शक्रसिहासन। पन्द्रह से गोलोक। सोलह से श्रीवल्लभ। ये नाम समूहालम्बन परक है अर्थात् नामके साथ की सख्या के वर्गसमुदाय का उल्लिखित नाम है।

केन्द्राधिपति ग्रहो की आरूढ राशि (राशि अश कलादि स) इन वर्गो का विचार करना चाहिए। जो ग्रह स्वगृह उच्च मूल त्रिकोण मे होते है उनके वर्ग भी यदि श्रेष्ठ हो तो अपने शुभकारक फल मे बलवान् होते है। और अस्त नीच शत्रुराशिगत ग्रहो के वर्ग योगनाशक होते है।।९१-१०२॥

किंशुकादिसप्तकवर्गसंज्ञाचक्रमिदमाह					
२	३	४	५	६	७
किंशुकाख्यम्	व्यजनाख्यम्	चामराख्यम्	छत्रम्	कुण्डलाख्यम्	मुकुटाख्यम्

पारिजातादिदशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्								
२	३	४	५	६	७	८	९	१०
पारिजात	उत्तमम्	गोपुराख्य	सिंहासन	पारावत	देवलोक	ब्रह्मलोक	शक्रवाहन	श्रीधाम

भेदादिषोडशवर्गसंज्ञाचक्रमिदम्														
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
भेदकम्	कुसुमाख्यम्	नागपुष्पम्	कन्दुकाख्यम्	केरलाख्यम्	कल्पवृक्षकम्	चन्दनवनम्	पूर्णचन्द्रकम्	उच्चैःश्रवा	धन्वन्तरि	सूर्यकान्तम्	विद्रुमाख्यम्	शक्रसिंहासन	गोलोकम्	श्रीवल्लभाख्य

अथ षोडशवर्गेषु चिन्तालग्न वदाम्यहम् ॥ लग्ने देहस्य विज्ञान होरायां सम्पदादिकम् ॥१०३॥
द्रेष्काणे भ्रातृज सौख्य तुर्यांशे भाग्यचिन्तनम् ॥ पुत्रपौत्रादिकाना वै चिन्तन सप्तमांशके
॥१०४॥ नवमांशे कलत्राणां दशमांशे महत्फलम् ॥ द्वादशांशे तथा पित्रोश्चिन्तन षोडशांशके
॥१०५॥ सुखासुखस्य विज्ञान वाहनाना तथैव च ॥ उपासनाया विज्ञान साध्य विंशतिभागके
॥१०६॥ विद्याया वेदबाह्वंशे भांशे चैव बलाबलम् ॥ त्रिंशांशके रिष्टफल खवेदांशे
शुभाशुभम् ॥१०७॥

वर्ग से विचारणीय विषय

इन षोडश वर्गों में किस वर्ग के लग्न से किस विषय का विचार करना चाहिये यह कहा जाता है। लग्न (जन्म लग्न) से जातक के देह का विचार करना चाहिए। 'होरा लग्न' से सम्पत्ति = पृथ्वी, मकान, जमीन आदि अचल तथा सोना, चांदी, रुपया आदि चल सम्पत्ति का विचार करना चाहिए। 'द्रेष्काण' से भाई बन्धु का सुख दुख का विचार करना चाहिए।

'चतुर्थांश' से भाग्य का विचार करना चाहिए। सप्तमांश' से पुत्र पौत्र आदि परिवार का विचार करना चाहिए। 'नवमांश' से विशेष करके भार्या सम्बन्धी विचार करना। 'दशमांश' से कोई बडी समस्या जिसका अपने जीवन से सम्बन्ध सम्भव हो उसका विचार करना। 'द्वादशांश' से माता पिता की स्थिति तथा सुख, दु ख का विचार करना चाहिए। 'षोडशांश' से सुख दु ख का तथा गाडी, मोटर आदि वाहन का विचार करना चाहिए। विंशांश' से उपासना की सिद्धि-असिद्धि का विचार करना। चतुर्विंशांश' से विद्या की प्राप्ति, अप्राप्ति का विचार करना। 'सप्तविंशांश मे अपना बलाबल का विचार तथा त्रिंशांश मे रिष्ट (कष्ट+रोग) आदि विचार एव 'खवेदांश' मे भले बुरे (शुभ अशुभ) का विचार करना चाहिए। 'अक्षवेदांश तथा 'षष्ठ्यंश' मे सम्पूर्ण समस्याओ का विचार करना चाहिये ॥१०३-१०७॥

अक्षवेदांशभागे च षष्ट्यंशेऽखिलं मीक्षयेत् । यत्र कुत्रापि सम्प्राप्त क्रूरषष्ट्यंशकाधिप ॥१०८॥ तत्र नाशो न संदेहो मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ यत्र कुत्रापि संप्राप्त कलांशाधिपति शुभ ॥१०९॥ तत्र वृद्धिश्च पुष्टिश्च मैत्रेयस्य वचो यथा ॥ इति षोडशवर्गाणां भेदास्ते प्रतिपादिता ॥११०॥ उदयादिषु भावेषु खेटस्य भवनेषु वा ॥ वर्गविंश्वाबलं वीक्ष्य तेषां तेषां शुभाशुभम् ॥१११॥

विचार विवेचन

मैत्रेय जी का कहना है कि- षष्ठ्यंश का स्वामी यदि क्रूर हो तो वह जिस भाव मे स्थित होगा उसी भाव की हानि करता है यह नि संदिग्ध है। और इसी तरह शुभ षष्ठ्यंश का स्वामी भी शुभ होकर जिस भाव मे स्थित होगा उस भाव की पुष्टि और वृद्धि निश्चय करता है। हे मैत्रेय! तुमको यह षोडश वर्ग का विचार कहा। तथा जन्म लग्न और उसके धन, सहज आदि अन्य भाव और सूर्यादि ग्रह जिन स्थानो मे तथा वर्गो मे हो उनका वर्ग विचार तथा विंश्वा बल विचार करके शुभ या अशुभ फल कहना॥१०८-१११॥

अथात संप्रवक्ष्यामि वर्गे विंश्वाबलं द्विज । यस्य विज्ञानमात्रेण विपाक दृष्टिगोचरम् ॥११२॥ गृहविंश्वाबलं वीक्ष्य सूर्यादीनां खचारिणाम् ॥ स्वगृहोच्चे बलं पूर्णं शून्यं तत्सप्तमस्थिते ॥११३॥ ग्रहस्थितिवशाज्ज्ञेयं द्विराश्यधिपतिस्तथा ॥ मध्ये तु पाततो ज्ञेया ओजयुग्मर्क्षभेदत ॥११४॥सूर्यहोराफलं दद्युर्जीवार्कवसुधात्मजा चन्द्रास्फूर्जिदर्कपुत्राश्चन्द्रहोराफलप्रदा ॥११५॥ फलद्वयं बुधो दद्यात्समे चान्द्रतदन्यके ॥ रवे फल स्वहोरादौ फलहीनं विरामके ॥११६॥

विंश्वाबल विचार

हे मैत्रेय! अब हम विंश्वाबल कहते है, जिसके ज्ञान मे शुभाशुभ कर्मफल का परिणाम रूप सुख दु ख का ज्ञान होता है। लग्न आदि भावो तथा सूर्य आदि ग्रहो का विंश्वाबल देख कर (जानकर) फलाफल आग कही गई रीति स निश्चय करना। सूर्यादि ग्रह स्वगृही अथवा उच्चपरमोच्च हो तो पूर्ण बली होते है, नीच गमिगत शत्रुक्षेत्री हो तो बलहीन होते है। ग्रहो

की स्थिति के आधार पर विचार करना। द्विराश्याधिपति ग्रहो का दो भावो पर प्रभाव होता है यह ध्यान रखना। वर्गबल देखने के समय सम विषम राशियो का ध्यान रखना। सूर्य होरा मे सूर्य, मगल, गुरु विशेष फलदायक है। चन्द्र होरा मे चन्द्र शुक्र शनि विशेष फलदाता है। बुध, सूर्य तथा चन्द्र दोनो की होरा मे फलदाता है। सूर्य–अपने होरा आदि मे पूर्ण फल देता है। वर्ग–होरा आदि के अन्त मे (समाप्ति के अश मे) फलहीन होता है। होरा, द्रेष्काण आदि मे आदि, मध्य, अन्त की बलाबलता अनुपात से समझना। स्वगृह के समान ही नवमाश मे तथा चतुर्थांश मे ग्रह का फल होता है।

मध्येऽनुपातात्सर्वत्र द्रेष्काणेपि विचिन्तयेत् । गृहवत्सुर्यभागेऽपि नवांशादावपि स्वयम् ॥११७॥ त्रिशांश के विचिन्त्यैवमत्रापि गृहवत्स्मृतः ॥११८॥ सूर्यः कुजफल धत्ते भार्गवस्य निशापतिः ॥ सर्वे त्रिंशांश सहिताः षड्वर्गा विंशकाः क्रमात् लग्नहोरावृकाणांकभागसूर्यांशकाः इति ॥ स्थूल फल च सस्थाप्य तत्सूक्ष्म च ततस्ततः ॥११९॥ रसनेत्राब्धिपचाग्निभूमयः सप्तवर्गके ॥ त्रयः सार्द्ध द्वय सार्द्धवेव द्वौ रात्रिनायकाः ॥१२०॥ ससप्तमांशक तत्र विंशका पंचलोचनम् ॥ त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेयाः पंचषष्ट्यशक-स्य च ॥१२१॥ दशवर्गाविरंशाढ्याः कलांशाः षष्टिभागकाः ॥ त्रयं क्षेत्रस्य विज्ञेयाः पंचषष्ट्यशक-स्य च ॥१२२॥

त्रिशाश मे इतना विशेष है कि–सूर्य, मगल का और चन्द्रमा, शुक्र का फल देता है। फलाफल भावानुसार ही जानना। इस प्रकार लग्न, होरा, द्रेष्काण, नवमाश, द्वादशाश और त्रिशाश के विश्वाबल क्रम से देखकर विचार करना। यह षड्वर्ग (नाम से प्रसिद्ध) है और षड्वर्ग मे विश्वाबल क्रमश ६,२,७,५,३,१, सख्या मे प्राप्त होते है। प्रथम स्थूल रूप से लग्न भाव स्थित ग्रहो का विचार पुन सूक्ष्मरूप से स्व, उच्चादिरूप से विचार करना फिर उससे भी सूक्ष्म सप्तकवर्ग से विचार करना। इस सप्तकवर्ग मे विश्वाबल की सख्या क्रमश ५,२,३,२॥,४॥,२,१ जानना तथा दशवर्ग बलसाधनमे स्वक्षेत्रका ३ विश्वाबल है, और षोडश षष्ठ्यश का वर्ग बल मे स्व के ३ षष्ठ्यश के ५ विश्वाबल लेना चाहिए। और बाकी वर्गो मे १॥ विश्वाबल लेना ॥११२–१२२॥

सार्द्धकभागाः शेषाणा विंशकाः परिकीर्तिताः ॥ अथ वक्ष्ये विशेषेण विंशकां मम सम्मताम् ॥१२३॥ क्रमात् षोडशवर्गाणा क्षेत्रादीनांपृथक् पृथक्॥ होरांशभागदृक्काणकुचद्रशशिभः क्रमात्॥१२४॥ कलांशस्य द्वयं ज्ञेयं त्रयं नंदांशकस्य च। क्षेत्रे सार्द्धे च त्रितय चतुःषष्ट्यशकस्य हि ॥१२५॥ अर्द्धमर्द्धं तु शेषाणां ह्येतत्स्वोयमुदाहृतम् ॥ पूर्णे विश्वाबल विंशे धृतिः स्यादधिमित्रके ॥१२६॥ मित्रे पचदश प्रोक्त समे दश प्रकीर्तितम्॥शत्रौ सप्ताधिशत्रौ च पच विश्वाबल भवेत् ॥१२७॥ वर्गविश्वाः स्वविश्वघ्नाः पुनर्विंशतिभाजिता. । विश्वाफलोपयोग्यं तत्पंचोन फलदो न हि ॥१२८॥ तदूर्ध्वं स्वल्पफलद दशोर्ध्वं मध्यम मृतम् ॥ तिम्यर्धं पूर्णफलद बोध्यं सर्व खचारिणाम् ॥१२९॥ अथान्यदपि वक्ष्येऽह मैत्रेय त्वं विधारय ॥ खेटाः पूर्णफलं दद्युः सूर्यात्सप्तमके स्थिता. ॥१३०॥ फलाभाव विजानीयात्समे सूर्यनभश्चरे ॥ मध्येऽनुपाता त्सर्वत्र ह्युदयास्तविशोपकाः ॥१३१॥ वर्गविश्वासम ज्ञेयं फलमस्य द्विजर्षभ ॥ यच्च यत्र फल

बुद्ध्वा तत्फलं परिकीर्त्तितम् ॥१३२॥ वर्गविंश्वाफलं चादावुदयास्तमतःपरम् ॥ पूर्णं पूर्णेति पूर्णं स्यात्सर्वत्रैवं विचिंतयेत् ॥१३३॥ हीनं हीनेति हीनं स्यात्स्वल्पाल्पेत्यल्पकं स्मृतम् ॥ मध्यं मध्येति मध्यं स्याद्यावत्तस्य दशास्थितिः ॥१३४॥

पाराशर संमत विंश्वाबल

अब हम अपने सम्मत विश्वाबल कहते है। स्वक्षेत्र से आरभ करके अलग २ होरा, त्रिशांश द्रेष्काण का १–१ षोडशाश में दो और नवाश मे तीन तथा स्वक्षेत्रबल साढे तीन एव षष्ठ्यश में चार विश्वाबल लेना। बाकी नौ वर्गो मे आधा आधा विश्वाबल लेना। पूरा विश्वाबल २० होता है। अधिमित्र मे (१८) और मित्र क्षेत्र में (१५) समक्षेत्र में (१०), शत्रु क्षेत्र में (७) तथा अधिशत्रु क्षेत्र मे (५) विश्वाबल होता है। वर्ग से प्राप्त हुए विश्वा अपनी विश्वा सख्या से गुण करके २० का भाग देकर लब्धि विश्वा प्राप्त होता है। यह विश्वाबल ५ से कम हो तो निष्फल जानना। ५ से १० तक स्वल्पफल दायक है और १० से ऊपर मध्यम फल तथा १५ से ऊपर विश्वाबल पूर्णफल दायक है। हे मैत्रेय[1] विशेष विचार भी कहता हू। सभी ग्रह सूर्य से सप्तमभाव मे स्थित हों तो पूर्णफल देते है। सूर्य के साथ होने से (अस्त होने के कारण) फल नही देते। साथ और सप्तम के बीच मे अनुपात से विश्वाबल का विचार करना। इसका नाम उदयास्त बल है, वर्ग विश्वाबल के समान इसको भी मानना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और उदयास्त दोनो अलग-अलग सब देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। वर्ग विश्वाबल और उदयास्तबल दोनो पूर्ण, पूर्ण (१५ से अधिक हो तो) पूर्ण बल जानना। मध्य, मध्य हो तो १० से १२॥ तक मध्य जाने और दोनो हीन बल हो तो हीनबल जाने। दोनो अल्प हों तो २॥ से ५ तक अल्प जाने। इस प्रकार जिस ग्रह का विश्वाबल निश्चय किया है उससे सूचित शुभाशुभ उस ग्रह की दशा भर मे होगा, ऐसा निश्चय करे॥ ॥१२२-१३४॥

अथान्यदपि वक्ष्यामि मैत्रेय शृणु सुव्रत ॥ लग्नतुर्यास्तवियतां केंद्रसंज्ञा विशेषतः ॥१३५॥
द्विपंचरंध्रलाभाख्यं ज्ञेयं पणफराभिधम्॥ त्रिषड्भाग्यव्ययादीनामापोक्लिममिति द्विज ॥१३६॥
लग्नात्पंचमभाग्यस्य कोणसंज्ञा विधीयते ॥ षष्ठाष्टव्ययभावानां दुःसंज्ञास्त्रिकसंज्ञकाः ॥१३७॥
चतुरस्रं तुर्यरंध्रं कथयन्ति द्विजोत्तम ॥ स्वस्यादुपचयर्क्षाणि त्रिषडायांबराणि हि ॥१३८॥
तनुर्धनंचसहजोबंधुपुत्रारयस्तथा । युवतीरंध्रधर्माख्यंकर्मलाभव्ययाः क्रमात् ॥१३९॥
संक्षेपेणैतदुदितमन्यद्बुद्ध्यनुसारतः ॥ किंचिद्विशेषं वक्ष्यामि यथा ब्रह्ममुखाच्छ्रुतम् ॥१४०॥

भाव संज्ञा

हे मैत्रेय ! अब और भी कुछ विशेष सज्ञा आदि कहते हैं। लग्न, चतुर्थ, सप्तम, दशम की 'केन्द्र' संज्ञा है। २।५।८।११ स्थानो की 'पणफर' सज्ञा है। इसी प्रकार ३।६।९।१२ स्थानों की 'आपोक्लिम' संज्ञा है। लग्न से ५।९ की 'कोण' तथा 'त्रिकोण' सज्ञा है। ६।८।१२ की दुष्ट स्थान तथा 'त्रिक' सज्ञा है। चतुरस्र 'तुर्य रंध्र' को ४।८ कहते है। ३।६।१०।११को 'उपचय' तथा वृद्धि कहते हैं। ये विशेष सज्ञा हैं। सामान्यत १२ भावों के नाम ये हैं। तनु, धन, सहज, बन्धु,

पुत्र, शत्रु, जाया, रन्ध्र, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये १२ भावों के नाम है। ये सज्ञाए हमने सक्षेप से कही है। अब भगवान् ब्रह्मा से सुने हुए कुछ विशेष विचार कहते हैं ॥१३४–१४०॥

नवमेपि पितुर्ज्ञानं सूर्याच्च नवमेऽथवा ॥ यत्किंचिद्दशमे लाभे तत्सूर्याद्दशमे शिवे ॥१४१॥ तुर्ये तनौ धने लाभे भाग्ये यच्चिंतनं च तत् ॥ चन्द्रात्तुर्ये तनौ लाभे भाग्ये तच्चिंतयेद् ध्रुवम् ॥१४२॥ लग्नाद्दुश्चिक्यभवने यत्कुजाद्विक मेऽखिलम् ॥ विचार्य षष्ठभावस्य बुधात्षष्ठे विलोकयेत् ॥१४३॥ पञ्चमस्य गुरोः पुत्रे जायायाः सप्तमे भृगोः ॥ अष्टमस्य व्ययस्यापि मन्दान्मृत्यौ व्यये तथा ॥१४४॥यद्भावाद्यत्फलं चिंत्यं तदीशात्तत्फलं विदुः । ज्ञेयं तस्य फलं तद्धि तत्र चिंत्यं शुभाशुभम् ॥१४५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरापूर्वखण्डशास्त्रे राशिस्वभावषोडशवर्गादिकथन
नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

फल विचार में कुछ विशेष नियम

जातक के पिता के लिये शास्त्र मे जो मुख्यरूप से दशम भाव विचारणीय कहा है उस सम्बन्ध मे विशेष यह है कि पिता के सम्बन्ध का फलाफल नवम भाव से भी जाना जाता है तथा सूर्य से और सूर्य के नवमभाव से भी विचारना होता है। इसी प्रकार जो विचार दशम और एकादश भाव से कहा गया है, वह सूर्य से तथा सूर्य के दशवें और ग्यारहवें भाव से भी करना चाहिये। तथा जो विचार लग्न, द्वितीय, चतुर्थ, नवम तथा एकादश से करना होता है, वह चन्द्रमा से भी लग्न, चतुर्थ, नवम और एकादश भाव से कर सकते हैं। (यहा चन्द्रमा से धनभाव नही कहा है)। लग्न से दुश्चिक्य–तृतीय भाव का विचार मगल के विक्रम (तृतीय) भाव से भी करे। छठे भाव का विचार बुध के छठे भाव से भी करना। पञ्चम भाव का विचार गुरु के पञ्चम भाव से भी करना, इसी प्रकार सप्तमभाव का विचार शुक्र के सप्तमभाव से भी करना। आठवे और बारहवे भाव का विचार शनि के आठवे और बारहवे से भी करना और विशेष बात यह है कि–जिस भाव से जिस फल का विचार कहा है, वह उस भाव के स्वामी से भी उसी प्रकार जानना चाहिये॥१४१–१४५॥

*इति श्री बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया राशिस्वभाव–
षोडशवर्गादिकथन नाम तृतीयोऽध्याय ॥३॥*

पराशर उवाच

**मेषादीनां च राशीनां द्वादशानां पृथक्पृथक् ॥ दृष्टिभेद प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम ॥१॥
राशयोऽभिमुखान्विप्र पश्यन्ति पार्श्वभे तथा ॥ रन्ध्रे षष्ठे तथा द्यूनेऽभिमुखो राशिरुच्यते ॥२॥
पार्श्वभं त्वामहं वक्ष्ये चरस्थिरद्विस्वभावकैः ॥ पञ्चमैकादशौ विप्र चरः पश्येत् क्रमेण हि ॥३॥**

स्थित ग्रह–चरराशिस्थित ग्रह को देखते है। द्विस्वभावराशि गत ग्रह–द्विस्वभाव राशिस्थित ग्रह को देखता है। अपने निकट की राशि पर स्थित ग्रह को छोड कर परस्पर अन्य को देखते है॥ ॥१६-१८॥

ब्रह्मा का कहा हुआ दृष्टिचक्र कहता हू जिसके जानने से दृष्टिभेद जाना जाय, पूर्व दिशा मे मेष और वृष तथा दक्षिण दिशा मे सिह, कन्या, एव पश्चिम मे तुला, वृश्चिक तथा उत्तर मे धनु और मकर लिखना। अग्नि कोण मे मिथुन तथा नैर्ऋत्य मे कन्या वायव्य मे धनु, और ईशान मे मीन लिखना। यह चौकोर चक्र के न्यास पर दृष्टिभेद हुआ। तथा ब्रह्मा ने गोलचक्र भिन्न प्रकार की दृष्टि कही है। यह दृष्टि इस प्रकार है–तीसरे और दशवे तथा पाचवे, नवे और चौथे, आठवे तथा सप्तम भाव पर ग्रहो की दृष्टि होती है। शनि, गुरु तथा मगल ये तीन ग्रह विशेष प्रकार की दृष्टि से देखते है। अर्थात् दृष्टि मे चार भेद है, पूर्ण दृष्टि २० विश्वा मानकर ५ विश्वा की एकपाद, १० की दो पाद, १५ की तीन पाद और २० विश्वा की पूर्ण दृष्टि होती है। शनि–त्रिकोण (५–९) को एक पाद चतुरस्र (४।८) को दो पाद और सप्तम मे ३ पाद तथा त्रिदश (३–१०) को पूर्णदृष्टि से देखता है। गुरु–चतुरस्र को एकपाद, सप्तम को दो पाद और त्रिदश को तीन पाद तथा त्रिकोण (५–९) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मगल–सप्तम मे एक पाद, त्रिदश मे दो पाद, त्रिकोण मे तीन पाद दृष्टि से एव चतुरस्र (४–८) मे पूर्णदृष्टि से देखता है। और ग्रहो की ३-१० मे एक पाद, ५–९ मे दो पाद तथा ४–८ मे तीन पाद और सप्तम मे पूर्णदृष्टि होती है। हे मैत्रेय! ग्रहो की इस प्रकार दो रीति से यह दृष्टि कही है। प्रथम दृष्टि तो जैसे कही है, वैसे ही जानना और दूसरी में पाद अर्द्ध आदि देख कर पूर्णदृष्टि तक के भेद जानना चाहिये ॥११९–१२९॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया दृष्टिभेदकथन नाम
चतुर्थोऽध्याय ॥४॥

अथ रिष्टारिष्टभंगाध्याय:

चतुर्विंशतिवर्षाणि यावद्गच्छति जन्मत: ॥ जन्मारिष्ट तु तावत्स्यादायुर्दाय न चिंतयेत् ॥१॥
षष्ठाष्टरिष्टगश्चन्द्र: क्रूरैश्च सह वीक्षित: ॥ जातस्य मृत्युद: सद्यस्त्वष्टवर्षै: शुभेक्षित: ॥२॥
शनिवन्मृत्युद: ६।८।१२ सौम्याश्चेद्वक्रा: क्रूरवीक्षिता: ॥ शिशोर्जातस्य मासेन लग्ने
सौम्यविवर्जिते ॥३॥ यस्य जन्मनि धीस्था स्यु: सूर्यार्केन्दुकुजाभिधा ॥ तस्य त्वाशु जनित्री
च भ्राता च निधनं लभेत् ॥४॥ पापेक्षितो युतो भौमो लग्नगो न शुभेक्षित: ॥
मृत्युदस्त्वष्टमस्थोऽपि सौरेणार्केण वा पुन: ॥५॥ चंद्रसूर्यग्रहे राहुश्चन्द्रसूर्ययुतो यदि ॥
सौरिभौमेक्षित लग्न पक्षमेक स जीवति ॥६॥ कर्मस्थाने स्थित: सौरि: शत्रुस्थाने
कलानिधि: ॥ क्षितिजे सप्तमस्थाने समात्रा म्रियते शिशु: ॥७॥ लग्ने भास्करपुत्रश्च निधने
चन्द्रमा यदि॥ तृतीयस्थो यदा जीव: स याति यममंदिरम् ॥८॥

अरिष्ट और अरिष्टभगयोग

जातक के २४ वर्ष की आयु तक 'जन्मारिष्ट' कहना चाहिए। आयु का विचार नही करना

चाहिए। (ऐसे 'जन्मारिष्ट' योग कहते हैं) चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त होकर ६।८।१२ वे स्थान में हो तो सद्य जल्दी ही मृत्यु करता है। यदि शुभग्रह देखते हो तो ८ वर्ष तक मृत्यु कारक है। सौम्यग्रह यदि वक्री होकर ६।८।१२ स्थान मे पापदृष्ट हो और लग्न मे सौम्यग्रह नही हो तो बालक की १ साल मे मृत्यु होती है। जिसके लग्न तथा पञ्चम में सू० श० च० म० स्थित हो उसकी माता तथा भ्राता की मृत्यु होती है। जिस जातक के लग्न मे मगल हो, तथा शुभदृष्टि न हो और पापदृष्टि हो अथवा यह योग अष्टमस्थान मे हो तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है। यह योग सूर्य तथा शनि से भी जानना। चन्द्रमा या सूर्य के घर मे राहु, चन्द्र सूर्य के साथ मे स्थित हो तथा लग्न को शनि, मगल दोनो देखते हो तो जातक १५ दिन ही जीता है। जिस जातक के दशमस्थान मे शनि तथा छठे चन्द्रमा और मगल सातवे हो वह बालक माता सहित मृत्यु को प्राप्त होता है। जिस जातक के लग्न मे शनि तथा अष्टभाव मे चन्द्रमा तथा तीसरे मे गुरु हो वह जल्दी ही मृत्यु पाता है। जन्म समय मे लग्न, नवम स्थान मे सूर्य और सप्तममे शनि तथा शुक्र,गुरु एकादश मे हो वह एक महीने तक ही जी सकता है।

होरायां नवमे सूर्यः सप्तमस्थः शनैश्चरः ॥ एकादशे गुरुः शुक्रो मासमेकं स जीवति ॥९॥ व्यये सर्वे ग्रहा नेष्टाः सूर्यशुक्रेन्दुराहवः ॥ विशेषान्नाशकर्तारो दृष्ट्या वा भगकारिणः ॥१०॥ पापान्वितः शशी धर्मे द्यूनलग्नगतो यदि ॥ शुभैरवेक्षितयुतस्तदा मृत्युप्रदः शिशोः॥११॥ संध्यायां चन्द्रहोरायां गण्डांते निधनाय वै॥ प्रत्येकं चन्द्रपापैश्च केन्द्रगैः स्याद्विनाशनम् ॥१२॥ रवेस्तु मण्डलार्द्धास्तात्सायसन्ध्या त्रिनाडिका ॥ तथैवार्द्धोदयात्पूर्वम्प्रातः सन्ध्या त्रिनाडिका ॥१३॥ चक्रपूर्वापरार्द्धेषु क्रूरसौम्येषु कीटभे ॥ लग्नगे निधनं यांति नाऽत्रकार्या विचारणा ॥१४॥ व्ययशत्रुगतैः क्रूरै मृत्युं द्रव्यगतैरपि ॥ पापमध्यगते लग्ने सत्यमेव मृतिं वदेत् ॥१५॥ लग्नसप्तमगौ पापौ चन्द्रोऽपि क्रूरसयुतः ॥ यदा त्ववीक्षितः सौम्यैः शीघ्रामृत्युर्भवेत्तदा ॥१६॥

बारहवे घर मे सभी ग्रह नेष्ट हैं परन्तु सू, शु० च० रा० हो अथवा इनकी दृष्टि हो (और शुभ दृष्टि नही हो तो विशेष करके हानि करने वाले होते हैं। पापग्रहयुक्त चन्द्रमा लग्न, सप्तम या नवम स्थान मे हो तथा शुभ दृष्टि या योग न हो तो बालक की मृत्यु होती है। सन्ध्याकाल का अथवा चन्द्रमा की होरा या गडान्त (मूल, आश्लेषा, ज्येष्ठा) मे जन्म हो, चन्द्रमा और ग्रह केन्द्र में हों तो मृत्युकारक होते हैं। (सूर्यास्त के बाद तथा सूर्योदय के पहले ३ घडी 'सध्याकाल' कहा जाता है।) कर्क लग्न हो और लग्न से सातवे भाव तक पापग्रह और सातवे से बारहवे तक सौम्य ग्रह हो तो बालक की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवे और दूसरे स्थान मे पाप ग्रह हो तो निश्चय मृत्यु होती है। लग्न तथा सप्तम मे पाप ग्रह हो, चन्द्रमा को क्रूरग्रह देखते हो और सौम्यदृष्टि नही हो तो शीघ्र मृत्युकारक योग है।

क्षीणे शशिनि लग्नस्थे पापैः केन्द्राष्टसंस्थितैः ॥ यो जातो मृत्युमाप्नोति स विद्वेश न संशयः ॥१७॥ पापयोर्मध्यगश्चन्द्रो लग्नाष्टांतसप्तमः ॥ अचिरान्मृत्युमाप्नोति यो जातः स शिशुस्तदा ॥१८॥ पापद्वयमध्यगते चन्द्रे लग्नसमाश्रिते ॥ सप्ताष्टमेन पापेन मात्रा सह मृतः शिशुः ॥१९॥ शनैश्चरार्कभौमेषु रिष्फधर्माष्टमेषु च ॥ शुभैरवीक्ष्यमाणेषु यो जातो निधन गतः

॥२०॥यद्द्रेष्काणे च यामित्रे यस्य स्याद्दारुणो ग्रहः ॥ क्षीणचन्द्रो-विलग्नस्थः सद्यो हरति जीवितम् ॥२१॥ आपोक्लिमस्थिताः सर्वे ग्रहा बलविवर्जिताः ॥ षण्मासं वा द्विमासं वा तस्यायुः समुदाहृतम् ॥२२॥

वृद्ध चन्द्रमा (कृष्ण पक्ष की १० से ३० तक चन्द्रमा की वृद्ध अवस्था है।) लग्न मे हो, पापग्रह केन्द्र तथा अष्टम स्थान मे हो तो हे मैत्रेय! ऐसे योग मे हुआ बालक नही जीता है। चन्द्रमा पापमध्यगत होकर लग्न से सातवे, आठवे या बारहवे मे हो ऐसे योग मे जन्म होने वाले बालक की जल्दी मृत्यु होती है। चन्द्रमा दो पापग्रहो के मध्य होकर लग्न मे स्थित हो तथा सप्तम अष्टमभाव मे पापग्रह हो तो बालक की माता के साथ ही मृत्यु होती है। आठवे बारहवे तथा नौवे स्थान मे सूर्य, मगल, शनि हो और शुभग्रह की दृष्टि नही हो तो जातक की मृत्यु होती है। जिसके सप्तम स्थान मे (द्रेष्काण और लग्न मे) पापग्रह हो और लग्न मे क्षीणचन्द्रमा हो तो जल्दी ही मृत्यु देनेवाला योग है। जिसके जन्मसमय मे सारे ही ग्रह निर्बल होकर ३।६।९।१२ स्थान में हो वह बालक २ मास से ६ मास तक जी सकता है॥१-२२॥

अथ मातृकष्टम्

चन्द्रमा यदि पापानां त्रितये न प्रदृश्यते ॥ मातृनाशो भवेत्तस्य शुभदृष्टे शुभं वदेत् ॥२३॥ धने राहुर्बुधः शुक्रः सौरिः सूर्यो यदा स्थितः ॥ तस्य मातुर्भवेन्मृत्युर्मृते पितरि जायते ॥२४॥ पापात्सप्तमरंध्रस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ॥ बलिभिः पापकैर्दृष्टे जाते भवति मातृहा ॥२५॥ उच्चस्थो वाऽथ नीचस्थः सप्तमस्थो यदा रविः ॥ पानहीनो भवेद्बालः अजाक्षीरेण जीवति ॥२६॥ चन्द्राच्चतुर्थगः पापो रिपुक्षेत्रे यदा भवेत् ॥ तदा मातृवधं कुर्यात्केन्द्रे यदि शुभो न चेत् ॥२७॥ द्वादशे रिपुभावे च यदा पापग्रहो भवेत् ॥ तदा मातुर्भयं विद्याच्चतुर्थे दशमे पितुः ॥२८॥ लग्ने क्रूरो व्यये क्रूरो धने सौम्यस्तथैव च । सप्तमे भवने क्रूरःपरिवारक्षयंकरः ॥२९॥ लग्नस्थे च गुरौ सौरी धने राहौ तृतीयगे ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यान्माता तस्य न जीवति ॥३०॥क्षीणचन्द्रात्त्रिकोणस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः ॥ माता परित्यजेद्बालं षण्मासाच्च न संशयः ॥३१॥ एकांशकस्थौ मंदारौ यत्र कुत्र स्थितौ यदा ॥ शशि केन्द्रगतौ तौ वा द्विमातृभ्यां न जीवति ॥३२॥

मातृ कष्टकारक योग

यदि चन्द्रमा पापत्रितय (सूर्य, मगल, शनि) के साथ न हो तो माता को कष्ट सम्भव है। शुभदृष्टि होने से कष्ट नही है। जिसके धनस्थान (द्वितीय) मे रा० बु० शु० श० सू० हो उस जातक को पिता की मृत्यु होने के बाद जन्म हो और माता की मृत्यु होती है पापग्रह मे चन्द्रमा, ७।८ मे पापयुक्त तथा बलवान् पापग्रहो से दृष्ट हो तो जातक माता का मारक होता है। जिस जातक के सप्तम स्थान मे सूर्य उच्च अथवा नीच राशि का हो वह बालक माता का दूध न पाकर बकरी के दूध से जीता है। चन्द्रमा से चौथे पापग्रह छठे भाव मे हों और केन्द्र मे शुभग्रह न हों तो माता की मृत्यु होती है। छठे तथा बारहवे घर मे यदि पापग्रह हो तो माता

को कष्ट और चतुर्थ दशम मे पापग्रह हो तो पिता को कष्ट होता है। लग्न, सप्तम तथा व्यय मे क्रूर ग्रह हो तथा द्वितीय मे सौम्यग्रह हो तो परिवार के लिये हानिकर योग है। लग्न मे गुरु, द्वितीय मे शनि तथा तृतीय मे राहु हो तो माता की मृत्यु होती है। क्षीण चन्द्र से सौम्यग्रहरहित पापग्रह त्रिकोण (५–९) स्थान मे हो तो छ महीने भीतर ही माता की मृत्यु होती है। मगल और शनि एक ही-नवाश मे होकर किसी भी भाव मे हो अथवा चन्द्रमा से केन्द्र स्थान मे हो तो माता या मौसी से पालित होने पर भी नही जीता है॥२३–३२॥

अथ पितृकष्टम्

लग्ने सौरिर्मदे भौमः षष्ठस्थाने च चंद्रमाः ॥ इति चेज्जन्मकाले स्यात्पिता तस्य न जीवति ॥३३॥ लग्ने जीवो धने मंदरविभौमबुधास्तथा ॥ विवाहसमये तस्य बालस्य म्रियते पिता॥३४॥ सूर्य. पापेन संयुक्तः सूर्यो वा पापमध्यगः ॥ सूर्यात्सप्तमगः पापस्तदापितृवधो भवेत् ॥३५॥ सप्तमे भवने सूर्यः कर्मस्थो भूमिनंदनः ॥ राहुर्व्यये न यस्यैव पिता कष्टेन जीवति ॥३६॥ दशमस्थोयदाभौमः शत्रुक्षेत्रसमाश्रितः ॥ म्रियते तस्य जातस्य पिता शीघ्र न संशयः ॥३७॥ रिपुस्थाने यदा चन्द्रो लग्नस्थाने शनैश्चरः ॥ कुजश्च सप्तमे स्थाने पिता तस्य न जीवति ॥३८॥ भौमांशकस्थिते भानौ स्वपुत्रेण निरीक्षिते ॥ प्राग्जन्मनो निवृत्तिः स्यान्मृत्युर्वापि शिशोः पितुः ॥३९॥ पाताले चांबरे पापौ द्वादशे च यदा स्थितौ ॥ पितरं मातरं हत्वा देशाद्देशांतरं व्रजेत् ॥४०॥ राहुजीवौ रिपुक्षेत्रे लग्ने वाथ चतुर्थके। त्रयोविंशतिमे वर्षे पुत्रस्तात न पश्यति ॥४१॥ भानु पिता च जतूनां चन्द्रो माता तथैव च ॥ पापदृष्टियुतो भानुः पापमध्यगतोऽपि वा ॥४२॥ पितृरिष्टं विजानीयाच्छिशोर्जातस्य निश्चितम् ॥ भानोः षष्ठाष्टमर्क्षस्थैः पापैः सौम्यविवर्जितैः ॥ चतुरस्रगतैर्वापि पितृरिष्टं विनिर्दिशेत् ॥४३॥

पितृकष्ट कारक योग

जिसके जन्मसमय मे—लग्न मे शनि, सातवे मगल, तथा छठे चन्द्रमा हो तो पिता की मृत्यु होती है। लग्न मे गुरु तथा द्वितीय मे सू० श० म० बु० हो तो जातक के विवाह मे पिता की मृत्यु होती है। सूर्य के साथ पापग्रह हो अथवा सूर्य पापग्रह मध्यगत हो और सूर्य से सप्तम मे भी पापग्रह हो तो पिता का वध होता है। सप्तमस्थान मे सूर्य हो, दशम मे मगल हो और राहु बारहवां हो तो पिता रोगी रहता है। जबकि—मगल शत्रुक्षेत्री होकर दशम मे हो तो शीघ्र ही पिता की मृत्यु होती है। चन्द्रमा षष्ठस्थान मे, लग्न मे शनि, मगल सातवे हो उसका पिता नही रहता। मगल के नवमाश मे सूर्य शनि से दृष्ट हो तो बालक के जन्म के पहिले ही पिता का घर छोडना या मृत्यु होती है। चौथे या दशवे अथवा व्यय मे पापग्रह हो तो जातक मातृपितृ हीन होकर देश–विदेश मे भटकता रहता है। राहु, गुरु छठे हो या लग्न मे अथवा चौथे घर मे हो तो तेईसवे वर्ष मे पुत्र जन्म से पहले पिता की मृत्यु होती है। जातक का सूर्य ही पिता है और चन्द्रमा माता है, अत सूर्य पापग्रहो से दृष्ट हो अथवा युक्त हो तो निश्चय ही

पिता को कष्ट जानना।। सूर्य से छठे आठवे स्थान मे पापग्रह हो, सौम्यदृष्टि या योगरहित हो अथवा सूर्य से चौथे स्थान मे इसी प्रकार हो तो पिता को अरिष्ट जानना चाहिए ।।३३–३४।।

अथारिष्टभगमाह

एकोऽपि ज्ञार्यशुक्राणा लग्नात्केंद्रगतो यदि ।। अरिष्ट निखिल हति तिमिर भास्करो यथा ।।४४।। एक एव बली जीवो लग्नस्थो रिष्टसचयम् ।। हति पापक्षय भक्त्या प्रणाम इव शूलिन ।।४५।। एक एव विलग्नेश केन्द्रसस्थो बलान्वित ।। अरिष्ट निखिल हति पिनाको त्रिपुर यथा ।।४६।। शुक्लपक्षे क्षपाजन्म लग्ने सौम्यनिरीक्षिते ।। विपरीत कृष्णपक्षे तथारिष्टविनाशनम् ।।४७।। व्ययस्थाने यदा सूर्यस्तुलालग्ने तु जायते ।। जीवेत्स शतवर्षाणि दीर्घायुर्बालको भवेत् ।।४८।। गुरुभौमौ यदा युक्तौ गुरुदृष्टोऽथ वा कुज ।। हत्वारिष्टमशेष च जनन्या शुभकृद्भवेत् ।।४९।। चतुर्थदशमे पाप सौम्यमध्ये यदा भवेत् ।। पितु सौख्यकरो योग शुभै केंद्रत्रिकोणगै ।।५०।। लग्नाच्चतुर्थे यदि पापखेट केंद्रत्रिकोणे सुरराजमत्री ।। कुलद्वयानदकरे प्रसूतौ दीर्घायुरारोग्यसमन्वितश्च ।।५१।। सौम्यान्तरगतै पापै शुभै केंद्रत्रिकोणगै ।। सद्योनाशयतेऽरिष्ट तद्भावोत्थफल न तत् ।।५२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडे रिष्टारिष्टभगाऽध्याय ।।५।।

अरिष्ट भग योग

बुध गुरु शुक्र मे से एक भी ग्रह केन्द्र मे हो तो सब अरिष्ट दूर करता है।। यदि बलवान् होकर गुरु लग्न मे हो तो समस्त अरिष्ट योग को दूर करता है जैसे भगवान शकर की शरणता समस्त पाप को भस्म कर देती है।। लग्न का स्वामी बलवान होकर केन्द्र स्थान मे हो तो सब अरिष्ट दूर करता है।। शुक्लपक्ष की रात्रि का जन्म हो और लग्न को सौम्यग्रह देखते हो इसी प्रकार कृष्णपक्ष मे दिन का जन्म हो लग्न पाप दृष्टि युक्त हो तो अरिष्ट का नाश होता है।। तुला लग्न मे जन्म लेने वाले के बारहवे स्थान मे सूर्य हो तो सौ वर्ष जीनेवाला दीर्घायु होता है।। गुरु मगल एक स्थान मे हो या मगल पर गुरुदृष्टि हो तो सब अरिष्ट दूर होते है और जातक की माता सुखी रहती है।। चौथे दशवे स्थान मे स्थित पाप ग्रह यदि सौम्य ग्रहो के मध्य मे हो तथा केन्द्र मे शुभग्रह हो तो जातक के पिता को सुखकारी हैं।। लग्न से चतुर्थ स्थान मे पापग्रह होने पर भी केन्द्र या त्रिकोण मे गुरु हो तो मातृ पितृ पक्ष के दोनो कुल को आनन्द देनेवाला नीरोगी दीर्घायु बालक होता है। पापग्रह सौम्यग्रहो के मध्य मे हो शुभग्रह केन्द्र त्रिकोण मे हो तो सब अरिष्ट को दूर करते हैं और पाप दूषित भाव का नेष्ट फल नही होता ।।४५–५२।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रकाशिकाया रिष्टारिष्टभगाध्याय पञ्चम ।।५।।

अथाऽप्रकाशग्रहफलाध्यायः ६

शूरो विमलनेत्रांशः सुस्तब्धो निर्घृणः खलः ॥ मूर्तिस्थे धूमसंप्राप्ते गाढरोषो नरः सदा ॥१॥ रोगी धनी तु हीनांगो राज्यापहृतमानसः ॥ द्वितीये धूमसंप्राप्ते मंदप्राज्ञो नपुंसकः ॥२॥ मतिमान् शौर्यसंग्रामे इष्टचित्तः प्रियवदः ॥ धूमे सहजभावस्थे धनाढ्यो धनवान् भवेत् ॥३॥ कलत्रांगपरित्यक्तो नित्यं मनसि दुःखितः ॥ चतुर्थे धूमसंप्राप्ते सर्वशास्त्रार्थचिंतकः ॥४॥ स्वल्पापत्यो धनैर्हीनो धूमे पंचमसंस्थिते ॥ गुरुता सर्वभक्षं च सुहृन्मंत्रविवर्जितः ॥५॥ बलवाञ्छत्रुवधको धूमे च रिपुभावगे। बहुतेजोयुतः ख्यातः सदा रोगविवर्जितः॥६॥ निर्धनः सततं कामी परदारेषु कोविदः ॥ धूमे सप्तमगे प्राप्तो निस्तेजाः सर्वदा भवेत् ॥७॥ विक्रमेण परित्यक्तः सोत्साही सत्यसंगरः ॥ अप्रियो निष्ठुरःस्वामी धूमे मृत्युगते सति ॥८॥ सुतसौभाग्यसंपन्नो धनी मानी दयान्वितः ॥ धर्मस्थाने स्थिते धूमे धनधान्यधुवत्सलः ॥९॥ सुतसौभाग्यसंयुक्तः संतोषी मतिमान् सुखी ॥ कर्मस्थे मानवो नित्यं धूमे सत्यपदस्थितः ॥१०॥ धनधान्यहिरण्याढ्यो रूपवांश्च कलान्वितः ॥ धूमे लाभगते चैव विनीतो गीतकोविदः ॥११॥ पतितः पापकर्मा च द्वादशे धूमसंगते ॥ परदारेषु संसक्तो व्यसनी निर्घृणः शठः ॥१२॥ इति धूमफलम्॥

अप्रकाशक ग्रह फल

धूमग्रहफल

यदि लग्न मे धूम ग्रह हो तो शूरवीर निर्मल नेत्रवाला हठी घृणारहित दुष्टबुद्धि महाक्रोधी होता है॥ द्वितीयभाव मे धूमग्रह हो तो जातक धनी, रोगी, अंगहीन, राजपक्ष से चिन्ताशील, मूर्ख और नपुंसक होता है॥ तृतीय स्थान मे धूमग्रह हो तो बुद्धिमान्, संग्राम मे धीर, मिष्टभाषी, शान्तचित्त तथा धनवान् होता है॥ चतुर्थ भाव मे हो तो स्त्रीरतिहीन, नित्य चिन्ताशील, शास्त्रव्यसनी होता है॥ पंचम भाव मे हो तो कम सन्तानवाला, धनहीन, स्थूलकाय, सर्वभक्षी तथा मित्र रहित होता है॥ छठे भाव मे होने मे बलवान्, शत्रु को जीतनेवाला, तेजस्वी, नीरोग और विख्यात होता है॥ सातवें भाव मे हो तो दरिद्री, अतिकामी, लम्पट, कान्तिरहित होता है॥ आठवें भाव मे हो तो–हिम्मतहीन, उत्साही, सत्यवादी, निष्ठुर, कठोर वृत्तिवाला होता है॥ नवमभाव मे धूम हो तो धनी, मानी, प्रजावाला, बन्धुप्रेमी, ऐश्वर्यशाली होता है॥ दशमभाव मे हो तो सन्तान तथा ऐश्वर्य सम्पन्न, बुद्धिमान्, सुखी, सत्यवादी होता है॥ एकादशभाव मे धूम ग्रह हो तो धन सम्पत्तियुक्त, रूपवान् कलाप्रेमी, विनीत और गान वाद्यनिपुण होता है॥ द्वादश भाव मे धूमग्रह हो तो पतित, पापी, लम्पट, (परस्त्रीगामी) व्यसनी और निर्घृण, दुष्टप्रकृति होता है॥ धूम फल समाप्त॥

अथ पातफलानि

मूर्तौ च पाते संप्राप्ते दुःखेनांगप्रपीडितः ॥ क्रूरो घातकरो मूर्खो द्वेष्यो बंधुजनस्य च ॥१३॥

जिह्मोऽतिपित्तवान् भोगी धनस्थे पातसञ्ज्ञके ॥ निर्घृणश्च कृतघ्नश्च दुष्टात्मा पापकृत्तथा ॥१४॥ स्थिरप्रज्ञो रणी दाता धनाढ्यो राजवल्लभः ॥ सहजे पापसम्प्राप्ते सेनाधीशो भवेन्नरः ॥१५॥ बन्धुव्याधिसमायुक्तः सुतसौभाग्यवर्जितः ॥ चतुर्थगो यदा पातस्तदा स्यान्मनुजश्च सः ॥१६॥ दरिद्रो रूपसंयुक्तः पाते पंचमगे यदि ॥ कफपित्तानिलैर्युक्तो निष्ठुरो निरपत्रपः ॥१७॥ शत्रुहन्ता सुपुष्टश्च सर्वास्त्राणां च ग्राहकः ॥ कलासु निपुणः शान्तः पाते शत्रुगते सति ॥१८॥ धनदारसुतैस्त्यक्तः स्त्रीजितः सप्तमस्थिते ॥ पाते कलत्रगे कामी निर्लज्जः परसौहृदः ॥१९॥ विकलाक्षो विरूपश्च दुर्भगो द्विजनिंदकः ॥ मृत्युस्थाने स्थिते पाते रक्तपीडापरिप्लुतः ॥२०॥ बहुव्यापारको नित्यं बहुमित्रो बहुश्रुतः ॥ धर्मभे पापसम्प्राप्तो स्त्रीप्रियः प्रियवदः ॥२१॥ सश्रीको धर्मकृच्छान्तो धर्मकार्येषु कोविदः ॥ कर्मस्थे पातसम्प्राप्ते महाप्राज्ञो विचक्षणः ॥२२॥ प्रभूतधनवान्मानी सत्यवादी दृढव्रतः ॥ अश्वाढ्यो गीतसंसक्तः पाते लाभगते सति ॥२३॥ कोपी च बहुकर्माढ्यो व्यंगो धर्मस्य दूषकः ॥ व्ययस्थाने गते पाते विद्वेषी निजबन्धुभिः ॥२४॥ इति पातफलानि॥

पातग्रहफल

लग्न मे यदि पातग्रह हो तो दुःखी रोगी क्रूर घातकारी मूर्ख और बन्धुद्वेषी होता है॥ धनस्थान मे पात हो तो कुटिल पित्तप्रकृति भोगी घृणारहित दुष्टात्मा पापी और कृतघ्न होता है॥ तृतीयभाव मे पात हो तो अपने विचार पर दृढ रहनेवाला रणवीर दानशील धनाढ्य राज मे मानवाला सेनाध्यक्ष होता है॥ चतुर्थ भाव मे पात हो तो सुख सौभाग्यहीन रोगी दरिद्री तथा कैदी होता है॥ पाँचवे भाव मे पात हो तो रूपवान् दरिद्री त्रिदोषयुक्त शरीर निष्ठुर और निर्लज्ज होता है॥ छठे भाव मे पात हो तो शत्रुहन्ता पुष्टशरीर हथियार चलाने मे प्रवीण कलाचतुर तथा शान्तप्रकृति होता है॥ सप्तम स्थान मे पात हो तो धनऐश्वर्यहीन स्त्री–पुत्र–रहित या स्त्री के आधीन रहनेवाला तथा निर्लज्ज और परप्रेमी होता है॥ आठवे स्थान मे पात हो तो नेत्ररोगी विरूप दुर्भागी परनिन्दक रक्तस्राव आदि रोगवाला होता है॥ नवमभाव मे पात हो तो अनेक व्यापार करनेवाला अनेक मित्रोवाला बहुश्रुत मिष्टभाषी दारप्रेमी होता है॥ दशमभाव मे पात हो तो लक्ष्मीवान् धर्मात्मा शान्तप्रकृति महापण्डित और अतिचतुर होता है॥ लाभस्थान मे पात हो तो महाधनी प्रतिष्ठित सत्यवादी दृढसंकल्पवाला सवारीवाला गायनप्रेमी होता है॥ बारहवे स्थान मे पात हो तो क्रोधी अंगहीन धर्मद्रोही बन्धुद्वेषी तथा अनेक कामो मे संसक्त रहता है॥१३–२४॥

अथ परिधिफलम्

विद्वान्सत्यरतः शान्तो धनवान् पुत्रवाञ्छुचिः ॥ दाता च परिधौ मूर्तौ जायते गुरुवत्सलः ॥२५॥ ईश्वरो रूपवान् भोगी सुखी धर्मपरायणः ॥ धनस्थे परिधौ प्राप्ते प्रभुर्भवति मानवः ॥२६॥ स्त्रीवल्लभः सुरूपांगो देवस्वजनसंगतः ॥तृतीये परिधौ भृत्यो गुरुभक्तिसमन्वितः ॥२७॥ परिधौ सुखभावस्थे विस्मितः त्वरिमङ्गलम् ॥ अक्रूरः स्वयं सम्पूर्णं कुरुते गीतकोविदः ॥२८॥ लक्ष्मीवान् शीलवान् कान्तः प्रियवान् धर्मवत्सलः ॥ पंचमे परिधौ जाते स्त्रीणां भवति वल्लभः ॥२९॥

लाभगे चापसंपाते साम्ययुक्तो भवेन्नरः ॥ नीरोगो बहुकोपाग्निर्मैस्त्रस्त्रीपरमास्त्रवित् ॥४७॥ खलेऽतिमानी दुर्बुद्धिर्निर्लज्जो व्ययसंस्थितः ॥ चापे परस्त्रीसंयुक्तो जायते निर्धनः सदा ॥४८॥ इति चापफलानि ॥

अप्रकाश चापग्रहफल

लग्न मे चापग्रह हो तो धन ऐश्वर्य युक्त, सर्वदोषरहित कृतज्ञ और समाज मे मान्य होता है॥ धनभाव मे चाप हो तो प्रिय वचन बोलने वाला, प्रगल्भ (ढीठ) विनीत, विद्वान्, धर्मात्मा तथा रूपवान् होता है॥ तीसरे भाव मे चाप हो तो कलाप्रेमी परन्तु कृपण, चोरी करनेवाला, हीनाग मैत्री तत्पर रहता है॥ चौथे भाव मे चाप हो तो सुखी नीरोग धनादि ऐश्वर्यवान् राजमान्य होता है॥ पचम भाव मे चाप हो तो रूपवान् गम्भीर विचारवाला, सुरुचि सम्पन्न, प्रियभाषी, देवभक्त, सब कामो मे अनुभवी होता है॥ छठे स्थान मे चाप हो तो, शत्रु का नाश करने वाला धूर्तता रहित, सुखी, प्रीति मे रुचिवाला, पवित्र विचार और सर्व कार्य मे दक्ष होता है॥ सप्तम भाव मे चाप हो तो आज्ञाकारी, पूर्णगुणी, शास्त्रज्ञानवाला धार्मिक होता है॥ अष्टमस्थान मे चाप हो तो दूसरो की नौकरी करनेवाला, क्रूरस्वभाववाला, परस्त्रीगामी, चिन्ताशील होता है। नवमभाव मे चाप हो तो आदर करनेवाला तपस्वी, व्रतादि मे निष्ठावाला, विद्यावान्, समाज मे विख्यात होता है॥ दशमभाव मे चाप हो तो धन, ऐश्वर्य, सन्तानवाला, गौ आदि का पालक लोक समाज मे प्रसिद्ध होता है॥ यदि लाभस्थान मे चाप हो तो व्यापार से बहुत लाभ होता है॥ नीरोगी, बहुक्रोधी, अस्त्रविधानिपुण, स्त्रीभोगी होता है॥ बारहवे भाव मे चाप हो तो अभिमानी, दुर्बुद्धि, निर्लज्ज, परस्त्रीगामी तथा दरिद्री होता है ॥३७–४८॥

अथ शिखिफलम्

कुशलः सर्वविद्यासु सुखी वाङ्निपुणः प्रियः ॥ मूर्तिस्थे शिखिसंपाते सर्वकामान्वितो भवेत् ॥४९॥ वक्ता प्रियंवदः कांतो धनस्थानगते शिखी ॥ काव्यकृत्पण्डितो मानी विनीतो वाहनान्वितः ॥५०॥ कदर्यक्रूरकर्मा च कृशांगो धनवर्जितः ॥ सहजस्थे तु शिखिनि तीव्ररोगी प्रजायते ॥५१॥ रूपवान् गुणसपन्नः सात्त्विको विश्रुतिप्रियः ॥ सुखस्थे तु शिखिनि सदा भवति सौख्यभाक् ॥५२॥ सुखी भोगी कलावित्त्व पंचमस्थानगः शिखी ॥ युक्तिज्ञो मतिमान् वाग्मी गुरुभक्तिसमन्वितः ॥५३॥ मातृपक्षक्षयकरः पीठगो बहुबांधवः ॥ रिपुस्थाने शिखिप्राप्ते शूरः कांतो विचक्षणः ॥५४॥ रक्तपीडाविचरतः कामी भोगसमन्वितः ॥ शिखी तु सप्तमस्थाने वेश्यासु कृतसौहृदः ॥५५॥ नीचकर्मरतः पापो निर्लज्जो निंदकः सदा ॥ मृत्युस्थाने शिखिप्राप्ते गतस्त्र्यपरपक्षकः ॥५६॥ लिंगधारी प्रसन्नात्मा सर्वभूतहिते रतः ॥ धर्मगे शिखिनि प्राप्ते धर्मकार्येषु कोविदः ॥५७॥ सुखसौभाग्यसंपन्नः कामिनीनां च वल्लभः ॥ दाता द्विजसमायुक्तः कर्मस्थे शिखिनि भवेत् ॥५८॥ नित्यलाभसुधर्मी च लाभे शिखिनि पूज्यते ॥ धनाढ्यः सुभगः शूरः सुयज्ञप्रतिकोविदः ॥५९॥ पापकर्मरतः शूरः श्रद्धाहीनोऽघृणो नरः ॥ परदाररतो रौद्रः शिखिनि व्ययगे सति ॥६०॥ इति शिखिफलम् ॥

शिखीग्रह फल

प्रथमभाव मे शिखी हो तो सर्वविद्या मे कुशल, सुखी, प्रिय व्याख्यान से निपुण सर्व समृद्धिमान् होता है॥ दूसरे भाव मे शिखी हो तो व्याख्याता, मिष्टभाषी, सुन्दर, कवि, पण्डित, मान सम्मानवाला, विनीत और सवारी वाला होता है॥ तीसरे भाव मे शिखी हो तो अतिकामी, दुर्बल, धनहीन तथा कठिन रोगवाला होता है॥ चौथे भाव मे शिखी हो तो रूपवान्, गुणी, सात्त्विक, विविध ज्ञान श्रवणप्रिय सुखी होता है॥ पञ्चमभाव मे शिखी हो तो सुखी भोगी, कलाज्ञानवाला गुरुभक्त, चतुर, बुद्धिमान् तथा वाचाल होता है॥ छठे भाव मे शिखी हो तो मातृपक्ष का नाशक, किसी पद पर रहनेवाला, बहुकुटुम्बी, बलवान्, सुन्दर और चतुर होता है॥ सातवे भाव मे शिखी हो तो रक्त विकारवाला, कामी, भोगी तथा वेश्यागामी होता है॥ आठवे भाव मे शिखी हो तो नीच कर्म करनेवाला, पापी, निर्लज्ज, निन्दक, स्त्रीहीन, परपक्ष मे रहनेवाला होता है॥ धर्म, आचार तथा जाति की संस्कृति धारण करनेवाला, सुखी, सबका हित चाहनेवाला, धर्मकार्यो मे चतुर, ऐसे लक्षण—नवमभाव के शिखी वाले के होते हैं॥ दशम भाव मे शिखी होने से सुख और सौभाग्य से युक्त, कामिनियो का प्यारा, दानशील, ब्राह्मणभक्त होता है॥ लाभभाव मे शिखी होने से नित्य नये लाभ होते हैं। सब जगह आदर होता है, धनी, सुखी, शूरवीर, पंडित तथा धर्मतत्पर होता है॥ बारहवे भाव मे शिखी होने से बुरे कर्म करनेवाला, बलवान्, धर्म मे श्रद्धाहीन, घृणारहित, परस्त्रीगामी, तथा क्रूर होता है॥ शिखिफल समाप्त॥४९-६०॥

अथ गुलिकफलम्

रोगार्तः सततं कामी पापात्माधिगतः शठः॥ मूर्तिस्थे गुलिके भवे खलभावोऽतिदुःखितः॥६१॥ विकृतो दुःखितःक्षुद्रो व्यसनी च गतत्रपः॥ धनस्थे गुलिके जातो निःस्वो भवति मानवः ॥६२॥ चार्वंगो ग्रामपः पुण्यः संयुक्तः सज्जनप्रियः॥ मंदे तृतीयगे जातो जायते राजपूजितः ॥६३॥ रोगी सुखपरित्यक्तः सदा भवति पापकृत्॥ यमात्मजे सुखस्थे तु वातपित्ताधिको भवेत् ॥६४॥ विस्तुतिर्विधनोऽल्पायुर्द्वेषी क्षुद्रो नपुंसकः॥ सुतस्थानगते पापे स्त्रीजितो नास्तिको भवेत्॥६५॥ वीतशत्रुः सुपुष्टांगो रिपुस्थाने यमात्मजे॥ सुदीप्तः सम्मतः स्त्रीणां सोत्साहः सुदृढो हितः॥६६॥ स्त्रीजितः पापकृज्जारः कृशांगो गतसौहृद॥ जीवितः स्त्रीधनेनैव सप्तमस्थे रवेः सुते॥६७॥ क्षुधार्तुर्दुःखितः क्रूरस्तीक्ष्णरोषोऽतिनिर्घृणः॥ रंध्रे प्राणहरो निःस्वो जायते गुणवर्जितः॥६८॥ बहुक्लेशी कृशतनुर्दुष्टकर्माऽतिनिर्घृणः॥ मंदे धर्मस्थिते मंदःपिशुनो बहिराकृतिः॥६९॥ पुत्रान्वितः सुखी भोक्ता देवाग्न्यर्चनवत्सलः॥ दशमे गुलिके जातो योगधर्माश्रितः सुखी॥७०॥ सुस्त्रीभोगी प्रजाध्यक्षो बंधूनां च हिते रतः॥ लाभे यमानुजे जातो नीचांगः सार्वभौमकः॥७१॥ नीचकर्माश्रितः पापो हीनांगो दुर्भगोऽलसः॥ व्ययगे गुलिके जातो नीचेषु कुरुते रतिम्॥७२॥ इति गुलिकफलम्॥

गुलिकयोग फल

लग्न मे गुलिक हो तो रोगी, कामी, पापी, शठ, खल तथा दुःखी होता है॥ धनभाव मे गुलिक हो तो विकृत (बदशकल) दुःखी, क्षुद्रप्रकृतिवाला, व्यसनी, निर्लज्ज तथा निर्धन होता

है।। तृतीयभाव मे गुलिक हो तो सुन्दर, ग्रामाधिपति, पुण्यकर्ता, सज्जनप्रिय तथा राजपूजित होता है।। चतुर्थ भाव मे गुलिक हो तो रोगी, दुःखी, सदा पापकर्म करनेवाला, वात्तपित्त रोगी होता है।। पचमभाव मे गुलिक होने से समाज मे निन्दित, निर्धन, अल्पायु, द्वेषी, क्षुद्रप्रकृति, नपुसक, स्त्री मे अनुरक्त तथा नास्तिक होता है।। छठेभाव मे गुलिक हो तो शत्रुहीन, पुष्टशरीर, कान्तिवाला, स्त्रियो को प्रिय, उत्साही, सुदृढ (गठीला) सबका प्रिय होता है।। सातवे भाव मे गुलिक हो तो स्त्री का अनुचर, पापी, जार, दुर्बल, प्रेमरहित, स्त्री की कमाई पर जीनेवाला होता है।। आठवे स्थान मे गुलिक हो तो निर्धन, दुःखी, क्रूरकर्मरत, क्रोधी, घृणारहित, हिसक, गुणहीन दरिद्र होता है।। नौवे भाव मे गुलिक हो तो बडे कष्ट से उपार्जन करनेवाला, दुर्बल, बुरे कर्म करनेवाला, घृणारहित, पिशुन (चुगलखोर) बाहर से अच्छा दीखनेवाला होता है।। दशमभाव मे गुलिक हो तो पुत्रसन्तानवाला सुखी, भोगी, देवपूजा तथा हवनादि करनेवाला, कर्मयोगी, सुखी होता है। लाभस्थान मे गुलिक हो तो सुन्दर भार्यावाला, सन्तानवाला, बन्धुवर्ग का हित करनेवाला, हीनाग (छोटा कद) पर्यटनशील होता है। व्ययभाव मे गुलिक हो तो नीच कर्म का आश्रय लेनेवाला, पापी, हीनाग, दुर्भागी, आलसी, नीच, सगति मे रहनेवाला होता है।। गुलिक फल समाप्त ॥६१–७२॥

अथ प्राणपदफलम्

मूकोन्मत्तो जडांगस्तु हीनाग़ो दुःखितःकृशः ।। लग्ने प्राणपदे क्षीणो रोगी भवति मानव. ॥७३॥ बहुधान्यो बहुधनो बहुभृत्यो बहुप्रज. ।। धनस्थानस्थिते प्राणे सुभगो जायते नर. ।।७४।। हिंस्रो गर्वसमायुक्तो निष्ठुरोऽतिमलिम्लुचे ।। तृतीयगे प्राणपदे गुरुभक्तिविवर्जित' ।।७५।। सुखस्थे तु सुखी कात. सुहृद्रामासु वल्लभ. ।। गुरौ परायण. शील. प्राणे वै सत्यतत्परः ।।७६।। सुखभाक् च क्रियोपेतस्त्वपचारदयान्वितः ।। पचमस्थे प्राणपदेसर्वकामसमन्वितः ।।७७।। बंधुशत्रुव· शस्तीक्ष्णो मंदाग्निर्निर्दयः खलः ।। षष्ठे प्राणोऽल्परोगश्च वित्तपोऽल्पायुरेव च ।।७८।। ईर्षालुः सतत कामी तीव्ररौद्रवपुर्नरः ।। सप्तमस्थे प्राणपदे दुराराध्यः कुबुद्धिमान् ।।७९।। रोगसंतापितांगश्च प्राणपादेऽष्टमे सति ।। पीडितः पार्थिवैर्दुःखैर्भृत्यबपुसुतोद्भवैः ।।८०।। पुत्रवान् धनसपन्नः सुभगः प्रियदर्शनः ।।प्राणे धर्मस्थिते भृत्यःसदाऽदुष्टो विचक्षणः ।।८१।। वीर्यवान् मतिमान् दक्षो नृपकार्येषु कोविदः ।। दशमे वै प्राणपदे देवार्चनपरायणः ।।८२।। विख्यातो गुणवान् प्राज्ञो भोगी धनसमन्वितः ।। लाभस्थानस्थिते प्राणे गौरांगो मानवत्सलः ।।८३।। क्षुद्रो दुष्टस्तु हीनांगो विद्वेषी द्विजबधुषु ।। व्यये प्राणे नेत्ररोगी काणो वा जायते नरः ।।८४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे धूमादिगुलिकप्राणपदफलनिरूपण नाम षष्ठोऽध्यायः ।।६।।

प्राणपद फल

लग्न में प्राणपद हो तो मूक (गूंगा) उन्मत्त (पागल) तथा हीनाग, जडाग (बेकार अगवाला) दुःखी, दुर्बल, तथा रोगी होता है॥ धनभाव मे प्राणपद हो तो बहुधनी, बडे अन्नभंडारवाला, बहुत नौकरवाला, बहुत सन्तानवाला, सौभाग्यवाला होता है॥ तृतीयभाव मे प्राणपद हो तो हिंसकवृत्ति, अभिमानी, निष्ठुर, मलीन, मातृपितृभक्ति रहित होता है॥ चौथे भाव मे प्राणपद हो तो सुखी, सुन्दर, प्रेमी, स्त्रियो मे प्यारा, गुरुभक्त, सुशील होता है॥ पचमभावमे प्राणपद हो तो सुखभोगी, धर्मक्रियातत्पर, दयावान्, सर्वत सन्तोषी होता है॥ छठे भाव मे प्राणपद हो तो दूसरे के वश मे रहनेवाला, क्रोधी, मन्दाग्नि रोगवाला, दयाहीन, दुष्ट, धनी तथा अल्पायु होता है। सातवे भाव मे प्राणपद हो तो ईर्षालु, कामी, भयानक आकार, कुबुद्धिवाला, विरोधी स्वभाव वाला होता है। आठवे भाव मे प्राणपद हो तो निरन्तर रोगी, नौकर चाकर, भाई बन्धु, तथा समाज से पीडित रहता है॥ नौवें भाव मे प्राणपद हो तो पुत्रवान्, धनवान्, सौभाग्यवान्, सुन्दर, विनीत तथा प्रेमी होता है॥ दशमभाव मे प्राणपद हो तो बलवान्, मतिमान, चतुर, राजकार्य मे बुद्धिमान्, देवभक्ति परायण होता है॥ लाभस्थान मे प्राणपद हो तो विख्यात गुणवान्, पडित, भोगी, धनी, गौरवर्ण, मानी होता है॥ बारहवे भाव मे प्राणपद हो तो क्षुद्रबुद्धि, दुष्ट, हीनाग, ब्राह्मण तथा बन्धुओ का द्वेषी, नेत्ररोगी अथवा काना होता है॥ प्राणपद फल सम्पूर्ण ॥७३-८४॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वख० भावप्रकाशिकाया धूमादि गुलिक प्राणपद फल निरूपण नाम षष्ठोऽध्याय ॥६॥

अर्गलाफलाध्यायः ७

पाराशर उवाच–अथातः सप्रवक्ष्यामि अर्गलाफलमुत्तमम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण ग्रहाणा च फल वदेत् ॥१॥ तुर्ये द्वितीये लाभे च विद्यमानग्रहार्गला ॥ तस्य दृष्टयात्मक ज्ञेय निर्विशंक द्विजोत्तम ॥२॥ एकग्रहार्गलाल्पं च द्विग्रहा मध्यमा भवेत् ॥ त्रयेण ग्रहयोगेन अर्गला पूर्णमुच्यते ॥३॥ राश्यर्गलापि सा ज्ञेया ग्रहयुक्ता विशेषतः ॥ तुर्यवितैकादशेषु यस्य कस्यार्गला भवेत् ॥४॥ द्विविधा सार्गला विप्र ब्राह्मणा चोदिता पुरा ॥ शुभकृत् पापकृच्चैव तन्वादीनां विचिन्तयेत् ॥५॥ मिश्रार्गलां पुनर्वक्ष्ये चतुर्यार्गलपापयुक् ॥ तृतीये तु यदा विप्र बहुपापयुते यदि ॥६॥ बहुपापा तृतीयस्था पापषड्वर्गयोगत. ॥ पापार्जित पापदृष्टश्च सयुक्तार्गलकारक. ॥७॥ तृतीये शुभसम्बन्धे शुभक्षेत्रे शुभेक्षिते ॥ शुभवर्गे च षड्वर्गे विज्ञेय तुर्यमर्गला ॥८॥

अर्गलाफलाध्याय

पराशरजी ने कहा–अब यहा से 'अर्गला' का फल कहते है, जिस उत्तम अर्गला ज्ञान से राशि (भाव) और ग्रहो का फल कहा जाय॥ हे द्विजोत्तम ! (मैत्रेय) दूसरे, चौथे, और ग्यारहवे स्थान मे रहनेवाले ग्रहो से 'अर्गला' योग होता है, उसका निशक रूप से

दृष्ट्यात्मक विचार करना चाहिये॥ एक या दो ग्रह २।४।११ वे स्थान मे होने से मध्यम 'अर्गला' होती है (किन्तु एक या दो ग्रहो से 'अर्गला' योग नही माना जाता, यह बात अगले ११ वे श्लोक से कही गई है। अत: यह मध्यम का तात्पर्य अमान्य मे समझना चाहिये) तीन (या तीन से अधिक) ग्रहो के योग से अर्गला योग पूर्ण होता है॥ (यही सिद्धान्त जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ५ "दार—भाग्य—शूलस्थार्गला निधातु:। कामस्था भूयसा पापानाम्। रिःफ—नीच—कामस्था विरोधिन:। न न्यूना विबलाश्च।" इन चारो सूत्रो मे बहुवचन से स्पष्ट है।) राशि से भी अर्गला जानना किन्तु ग्रहयुक्त का विशेष महत्व है। २।४।११ वे स्थान मे जिस किसी भी ग्रह से अर्गला हो॥ ब्रह्माजी ने हमे पहिले दो प्रकार की कही है, एक 'शुभार्गला', दूसरी 'अशुभार्गला' ये दोनो प्रकार की अर्गला तन्वादि बारहो भावो मे देखना चाहिये॥ अब इस 'अर्गला' से अर्यात् २।४।११ स्थानो की अर्गला से भिन्न (दूसरी) अर्गला कहता हू। (अर्थात् पहिली अर्गला तीन भावो को लेकर होती है और यह दूसरी अर्गला उपर्युक्त तीन भाव २।४।११ से भिन्न तृतीय भाव मात्र को लेकर कही है, इसलिये इसको प्रथम अर्गला से भिन्न कहा। यह एकदेशी मत प्रतीत होता है क्योकि 'जैमिनीय सूत्र' मे अर्गला प्रकरण अध्याय १ पाद १ सूत्र 'प्राग्वत् त्रिकोणे' 'विपरीतं केतो:' कह कर इस प्रकरण को समाप्त कर दिया।)

हे मैत्रेय! तृतीय भाव मे यदि अनेक पापग्रह हो तो, वे तृतीय भावस्थ पापग्रह षड्वर्ग मे पापग्रहो के वर्ग मे हो तथा पापग्रहो की दृष्टियुक्त हो तो 'अर्गला' योगकारण होते हैं॥७॥ इसी प्रकार तृतीय भाव मे शुभग्रह योग (स्थिति) शुभ सम्बन्ध शुभक्षेत्र (शुभग्रह की राशि) शुभदृष्टि तथा षड्वर्ग मे शुभ वर्ग हो तो यह शुभार्गला है॥८॥ (इस अर्गला का प्रकरण समाप्त)

तुर्यवित्तैकादशे च पापयुग्वा शुभोऽपि वा॥ उभयक्षेत्रसबधे अर्गला कारयेद्द्विज॥९॥ तृतीये बहुपापस्थे बहुयुक्तार्गला भवेत्॥ निर्बाधिका तु सा ज्ञेया निर्विसक द्विजोत्तम॥१०॥ एकेन द्वितीयेनापि अर्गला या भवेद्द्विज॥ साऽर्गला नैव विज्ञेया बहुपापयुतिं विना॥११॥ चतुर्थे धनलाभस्था शुभपापकृतार्गला॥ तस्यापि बाधका: खेटा व्योमरिष्फतृतीयगा:॥१२॥ क्रमेण ज्ञायते विप्र चतुर्थे व्योमबाधकम्॥ धने च व्ययभावे च भयं ज्ञेयं तृतीयकम्॥१३॥ निर्बाधिका च फलदा च दातव्या सबाधका॥ चिंतनीयं प्रयत्नेन तत्फलं द्विजपुङ्गव॥१४॥ अर्गलाया बाधकानां बाधकान् कथयेऽधुना॥ नूनं सा विबला खेटा ज्ञायते गणकैस्तदा॥१५॥ वित्तलाभचतुर्थानां य: पश्यति शुभार्गलाम्॥ व्ययभ्रातृनभस्थाच्चेद्विपरीतार्गला द्विज॥१६॥ पुनर्योगार्गलं ज्ञेयं त्रिकोणे पूर्ववद्द्विज॥ पंचमे चार्गलास्थान नवमस्तद्विरोधक:॥१७॥ विपरीतेन केतुश्च नवमेऽर्गलकारक:॥ पञ्चम स्यस्तद्विरोधो ज्ञायते गणकैर्द्विज॥१८॥ क्रमेण पचमे केतु: प्रकरोत्यर्गलां द्विज॥ नवमस्थस्तद्विरोधी लग्नार्गलमिद विदु:॥१९॥ राश्यर्गलं च खेटानां चिंतयेद्द्विविधार्गलम्॥ यस्या यस्या दशा प्राप्ता तस्यां तस्यां फलं भवेत्॥२०॥ यत्र राशिस्थित: खेटस्तस्य पाकांतरे दशा॥ तत्र काले फल वाच्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम॥२१॥

२।४।११ भावो मे पापग्रह हो या शुभग्रह हो अथवा कोई ग्रह इन तीन स्थानो मे एक मे

स्थित होकर दूसरे स्थान से क्षेत्र या दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो भी अर्गलायोग होता है॥ तीनों ही स्थानों मे अनेक पापग्रह हों तो वह बाधारहित निश्चय ही अर्गला जानना॥ हे मैत्रेय! एक या दो ग्रहो से जो अर्गला होती है उसको अर्गला ही नही मानना चाहिए क्योंकि तीन या अधिक पापयोग से ही अर्गला मानी गई है॥

अर्गलायोग–बाधक

दूसरे चौथे, ग्यारहवे स्थान मे बहुग्रह योग से जो अर्गला कही गई है उस अर्गला योग के बाधक स्थान है बारहवा दशवा तथा तीसरा॥ क्रम से प्रथम का द्वितीय बाधक है। जैसे दूसरे का बारहवां, चौथे का दशवां, तथा ग्यारहवे का तीसरा॥ हे मैत्रेय! बाधारहित ही अर्गला फलदायक होती है इसलिए इसका अच्छी तरह विचार करना चाहिए॥ अब अर्गला के बाधक योग कहते हैं जिससे बाधित होने से निर्बल अर्गला का भी भली प्रकार ज्ञान हो॥ २।४।११ स्थान की 'शुभार्गला' को उपर्युक्त बाधक स्थानो मे स्थित ग्रह देखता या देखते हो तो वह 'विपरीतार्गला' या 'बाधतार्गला' कहाती है॥ अब द्वितीय अर्गला योग समझना कि, त्रिकोण के ५।९ दो स्थानो मे पूर्वोक्त प्रकार से पञ्चमभावस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह बाधक है॥ तथा केतु के लिए इससे विपरीत अर्थात् केतु से नवमस्थ ग्रह अर्गला कारक और पञ्चमस्थ बाधक है॥ (यही भाव जैमिनीय सूत्र के अध्याय १ पाद १ सूत्र ९–१० मे कही है। परन्तु अगले श्लोक मे जै० सू० से कुछ विरुद्ध कहा है सो हो सकता है, एकदेशी मत हो) इसी क्रम से केतु के पञ्चमस्थ ग्रह अर्गला कारक है और नवमस्थ ग्रह अर्गला बाधक है। इसका नाम 'लग्नार्गला' है॥ इस प्रकार राशि से (भाव से) तथा ग्रह से अर्गला का विचार करके जिस २ राशि की दशा प्राप्त हो उस २ राशि मे उस भाव का फल होगा यह निश्चय करे॥ जिस राशि मे ग्रह स्थित हो उसकी दशा या अतर्दशा मे उसका फल कहे॥ अर्गला विवेचन समाप्त॥ ॥९–२१॥

अथाग्रेऽर्गलाफलमाह

पदे लग्ने सप्तमे वा निराभासार्गलां द्विज ॥ निर्बन्धा चार्गला तत्र विख्यातो भाग्यं भवेन्नरः ॥२२॥ अर्गला प्रतिबन्धं च प्रथमाद्वैविचिंतयेत् ॥ धनधान्यपुत्रपशुदारावधूकलैर्युतः ॥२३॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यभृत्यवाहनसंयुतः ॥ हरभक्तः सुधर्मज्ञो दिष्टपापान्यस्य लक्षणम् ॥२४॥ शुभग्रहार्गला विप्र बहुद्रव्यप्रदायका ॥ पापेन स्वल्पवित्तः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२५॥ उभयार्गला भवेत्तत्र कदाचिद्धनवान् भवेत् ॥ कदाचिद्वित्तचिंतार्त्तैर्जायते द्विजसत्तम ॥२६॥ यत्र जन्मनि सोऽपि स्याच्छुभदृष्टे शुभार्गला ॥ तेन दृष्टेक्षिते लग्ने प्राबल्याद्योगकल्पने ॥२७॥ यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितः ॥ प्रथमां तु विजानीयाद्विपरीतार्गलां द्विज ॥२८॥ लग्नसप्तमयोगेन भाग्ययोगं विचिंतयेत् ॥ भाग्यप्रबलता ज्ञेया लग्नसप्तशुभार्गला ॥२९॥ शुभार्गले स्ववृद्धिः स्यात्पापे स्वल्पधनं वदेत् ॥ उभयार्गले तु तत्रैव क्वचिद्वृद्धिः क्वचित् क्षयम् ॥३०॥तत्तद्राशिदशायां तु अर्गला फलमिष्यते॥शुभो वाऽप्यशुभो वापि ह्यर्गलाफलदायकः॥३१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे अर्गलाफलकथननामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अर्गला फल

हे मैत्रेय! लग्न मे या सप्तम मे प्रतिबंधरहित शुभ अर्गला पूर्णरूप से मनुष्य बडे भाग्य से पाता है।। अर्गला (शुभार्गला) मे प्रतिबंध भी (फल प्रतिबंध भी) प्रथम के चतुर्थांश मात्र मे ही होता है, बाद मे धन, धान्य, पुत्र, पशु भार्या, बन्धु, और कुल से युक्त होता है।। उपर्युक्त 'शुभार्गला' मे भगवद्भक्त, आरोग्यता, ऐश्वर्य, नोकर, सवारी (मोटर आदि) तथा धर्मज्ञ आदि मुख होना ही भाग्य का लक्षण है।। हे मैत्रेय! शुभार्गला हो तो बहुत धन हो तथा पापग्रह से हो तो मामूली द्रव्य हो।। तथा शुभ-पाप मिश्रित अर्गला हो तो कभी धनवान् और कभी धनहीन होता है।। जहा पर जन्मलग्न मे मिश्रित अर्गला हो तो भी शुभग्रह की दृष्टि होने मे शुभार्गला ही हो जाती है। इसी प्रकार लग्न को भी शुभग्रह देखते या युक्त हो तो योग की प्रबलता जानो।। यदि अर्गला का बाधक योग भी हो तो शुभदृष्टि होने से अनिष्टकारी नही है।। लग्न तथा सप्तम भाव मे इस प्रकार अर्गला योग का विचार करके 'शुभार्गला' है या नही यह देखकर निश्चय करे। यदि शुभार्गला हो तो भाग्य की प्रबलता जाने।। शुभार्गला मे धन की वृद्धि होती है तथा पापार्गला मे स्वल्पधन होता है एव 'उभयार्गला मे कभी कभी धनवृद्धि कभी धनहानि होती है।। जिस २ भाव की अर्गला हो उसका फल उस २ राशि की दशा तथा अन्तर्दशा मे (जो कि आगे राशि दशा कहेगे) अच्छा या नेष्ट होता है ॥२२-३१॥ अर्गलाध्याय समाप्त।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० स० भावप्रदीपिकाया अर्गलाफल क० नाम सप्तमोऽध्याय

कारकाध्याय: ८

अथापि सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहाणा कारकान् द्विज ॥ आत्मादिकारकान् सप्त यथावत् कथयामि ते ॥१॥रव्यादिशनिपर्यन्ता भवति सप्तकारका ॥ अशै साम्यौ ग्रहौ द्वौ च राह्वन्तान् गणयेद्द्विज ॥२॥ रव्यादिषगुपर्यंतमशाधिकग्रहोऽपि चेत् ॥ कारकेन्द्रोऽपि स ज्ञेय आत्मा कारक उच्यते ॥३॥ अशसाम्यग्रहो यत्र कलाधिक्य च पश्यति ॥ कलासाम्ये पलाधिक्यमात्मा कारक ईर्यते ॥४॥ तत्र राशिकलाधिक्ये नैव ग्राह्य प्रधानक ॥अशाधिक्ये कारक स्यादल्पभागोंतकारक ॥५॥ मध्याशो मध्यखेट स्यादुपखेट स एव हि ॥ अथोऽथ कारका ज्ञेयाश्चराणि सप्त कारका ॥६॥ तेषा मध्ये प्रधान तु आत्मकारक उच्यते ॥ जातकराट स विज्ञेय सर्वेषा मुख्यकारक ॥७॥ यथा भूमौ प्रसिद्धोऽस्ति नराणा क्षितिपालक ॥ सर्ववार्त्ताधिकारी च बधकृन्मोक्षकृत्तया ॥८॥ पुत्रामात्यप्रजाना तु तत्तद्दोषगुणैस्तथा ॥ बधकृन्मोक्षकृद्विप्र तथा सन्मानकारक ॥९॥ तथैव कारको राजन् ग्रहाणा फलकारक ॥ आत्मेत्यादिफल तत्ते अन्यथा स्थापयेद्द्विज ॥१०॥ यथा राजाज्ञया विप्र पुत्रामात्यादयोऽपि च ॥ समर्था लोककार्येषु तथैवान्योपकारक ॥११॥ कारको राजवश्येन फलदातान्यकारक ॥ यथा राजनि क्रुद्धे च सर्वेऽमात्यादयो द्विज॥१२॥ स्वजनाना कार्यकर्तुमसमर्था भवति हि॥ स्निग्धे सूदे ह्यमात्यादि स्वशत्रूणा द्विजोत्तम॥१३॥ अकार्य कर्तुं नो शक्तस्तथैवान्योऽपकारक ॥ आत्मकारकवश्येन ह्यमात्यादिफल वदु ॥१४॥ इत्यात्मकारक ॥

आत्मकारकखेटेन न्यूनभागो हि तद्ग्रह ॥ अमात्यसज्ञा तस्यैव जायते द्विजसत्तम ॥१५॥

अमात्यन्यूनो भ्राता च भ्रातृन्यूनं च मातृकम् ॥ मातृकारकखेटेन न्यूनभागो हि यो ग्रहः ॥१६॥ स पुत्रकारको ज्ञेयस्तद्धीनो ज्ञातिकारकः ॥ ज्ञातिकारकखेटेन हीनभागो हि यो ग्रहः ॥१७॥ दारकारकविज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ चराश्च कारकाः सप्त ब्रह्मणा चोदिताः पुरा ॥१८॥ अंशसाम्यौ ग्रहौ द्वौ च जायेतां यस्य जन्मनि ॥ स्वकारक विना विप्र लुप्यति चांत्यकारकः ॥१९॥ तत्कारको लुप्यति चेदन्यत्रैवास्ति कारकम् ॥ कारकाणा स्थिराणां च मध्ये सचिंतयेद्द्विज ॥२०॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि खेटान् कारकसंज्ञकान् ॥ यस्य जन्मनि भावानां यथास्थाने च वै द्विज ॥२१॥ स्वर्क्षे तुंगे च मित्रर्क्षे कटके संस्थिता ग्रहाः ॥ अन्योन्यकारका विप्र कर्मगास्तु विशेषतः ॥२२॥ लग्ने सुखे तथा लाभे ग्रहभाववशेन च ॥ भवंति कारका विप्र विशेषेण च भैरवौ ॥२३॥ स्वमित्रर्क्षोच्चभे हेतुरन्योऽस्य यदि कर्मगः ॥ स सुहृद्गुणसंपन्नः सोऽपि कारक एव वै ॥२४॥ नीचान्वये यस्य जन्मबभूव द्विजसत्तम ॥ पर्नात कारका लग्ने प्रधानं च न याप्नुयात् ॥२५॥ राज्ञां कुले समुत्पन्नो राजा भवति निश्चितम् ॥ एव कुलानुसारेण कारकाणां फल भवेत् ॥२६॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि कारकाणि स्थिराणि च ॥ सूर्यादीनां ग्रहाणां च वीर्यवान् कारको भवेत् ॥२७॥ वीर्यवान् जायते विप्र जन्मनि रविशुक्रयोः ॥ स पितृकारको ज्ञेयो निर्विशक द्विजोत्तम ॥२८॥ चन्द्रारयोश्च बलवान् मातृकारक उच्यते ॥ भौमहय विशेषेण भगिनी दारभ्रातृकौ ॥२९॥ बुधान्मातुलतो ज्ञेयो मातृतुल्यानपि द्विज ॥ गुरुणाऽत्र च विज्ञेयाः पुत्रस्वामिपितामहाः ॥३०॥ स्वभार्या मातृपितरौ तथा मातामही द्विज ॥ भृगुद्वारा विजानीयादेतेषा शुक्र कारकः ॥३१॥ अर्यम्णः पुष्यभे तात इन्वोर्माता च तुर्यतः ॥ कुजात्तृतीयतो भ्राता मातुलो रिपुभाद्बुधात् ॥३२॥ देवेज्यात्पंचमात्पुत्रो दैत्येज्याद्घूनभात्स्त्रियः ॥ मवादष्टमतो मृत्युस्तातादीनां विचिन्तयेत् ॥३३॥

अथ कारकाध्यायः

अब आगे सूर्यादि ग्रहो के आत्मादि सात कारक यथावत् कहते है।। सूर्य से शनि तक सात कारक होते है, सूर्यादि ग्रहो मे अशादि साम्य होने पर राहु को भी गिनना चाहिये किन्तु राहु सदा वक्री रहता है, अत उसके अशो को ३० मे घटा कर शेष अशादि से कारक का निर्णय करे। अत सूर्य से राहु पर्यन्त अश, कला, विकला मे जो सबसे अधिक होता है वह कारको मे राजा 'आत्मकारक' होता है।। जहा पर दो ग्रहो मे अशो की समता हो तो कलाधिक ग्रहो और अश, कला बराबर होने पर पलाधिक ग्रह 'आत्मा कारक ' होता है।। इन अशादि साम्य मे राशि नही लेना, अशाधिक्य से ही कारकता होती है। सबसे कम अश वाला अतिम कारक होता है।। इस प्रकार सर्वाधिक और सर्वन्यून अशादि आदि और अत कारक होते है।। बीच के अशादि से मध्यकारक होते हैं। अत मध्याशो मे उसके बाद तथा उसके बाद इस प्रकार न्यून अशवाले से न्यून अशादिवाला क्रमश गिनने से सात चरकारक होते है।। इन सात कारको का राजा 'आत्मा कारक' होता है। वह जातक शास्त्र मे सब कारको मे मुख्य होने से कारकराज कहा गया है।। जैसे कि ससार मे मनुष्यो मे से सबसे प्रधान (बडा) राजा होता है और वही प्रधान न्याय कारक एव बध, मोक्ष का कर्ता है। राजपुत्र, मन्त्री, अन्य अधिकारी तथा प्रजा इन सबके दोष और गुणो से बधन और सन्मान करता है।। इसी प्रकार यह आत्माकारक भी

सब कारको मे मुख्य होकर सब ग्रहो के फल का अधिष्ठाता है अत अन्यथा नही स्थापन करना चाहिए।। जैसे राजा की आज्ञा से राजपुत्र, मन्त्री आदि लोक कार्य मे समर्थ होते हैं और अन्य भी सहायक कार्यकर्ता होते है।। कारक भी राजा के वशीभूत रहकर कर्म तथा फलदाता है। और जैसे कि राजा के क्रुद्ध होने पर मन्त्री आदि सभी कोई अपने घर के स्वजनो का भी कोई उपकार करने मे असमर्थ होते हैं एव राजा के प्रसन्न होने पर भी (राजाज्ञा के बिना) शत्रु का भी अपकार करने मे समर्थ नही है।। इसी प्रकार आत्मा कारक के वशीभूत ही अन्य सब कारक अपने २ अधिकार का फल देते है।।आत्मकारकप्रशसा समाप्त।। आत्म कारक से कम अंशादि वाला "अमात्यकारक" होता है।। अमात्य कारक से कम अशवाला "भ्रातृ कारक" और उससे न्यून "मातृ कारक" तथा "मातृ कारक" से न्यून "पुत्र कारक" होता है। उससे न्यून "ज्ञाति कारक" है। ज्ञाति कारक ग्रह से हीन अशवाला "दारकारक" होता है। ये सात 'चरकारक' (अस्थायी होने से) पहिले ब्रह्माजी ने कहे।। यदि दो ग्रहो के सर्वाधिक अश समान हो तो (पूर्वोक्त रीति से)कलाधिक आत्माकारक लेना क्योकि आत्माकारक के अभाव मे अत्यकारक का भी अभाव होगा।। आद्यन्त लोप मे फिर अन्य कारक भी नही हो सकते। अत चरकारक और स्थिरकारकी का विचार करना चाहिए।। अब कारक–सज्ञक ग्रह बताते हैं। जन्मलग्न मे यथास्थान ग्रह लिख कर विचार करना चाहिए।। जो ग्रह अपनी राशि या मित्रराशि मे अथवा उच्चराशि मे या केन्द्रस्थान मे हो अथवा दशमभाव में हो वे परस्पर कारक होते हैं।। स्थान वश से कारकत्व– लग्न, चतुर्थ या लाभ स्थान मे होने से तथा विशेष करके मूर्य राशि मे होने से भी ग्रह 'कारक' होते हैं।। स्वगृही', मित्रराशिगत अथवा उच्च राशिगत तथा दशमभावस्थ हो तो सौम्यगुणसम्पन्न होने से वह भी कारक होता है।। जिस जातक का जन्म नीच कुल मे हो और जन्म लग्नकुण्डली बहुत ग्रह कारक भी हो तो भी वह जातक राजा आदि की प्रधान पदवी प्राप्त नही कर सकता।। किन्तु राजकुल मे जिसका जन्म हो वह निश्चय कारक ग्रह के होने पर राजा होता है। इस प्रकार कुलानुसार भी कारको का फल होता है।। अब स्थिर कारक कहते हैं। सूर्यादि ग्रहो मे जो बलवान् होता है, वह कारक होता है।। हे मैत्रेय! लग्न मे सूर्य शुक्र मे से जो बलवान् होता है, वह निश्चयरूप से 'पितृकारक' होता है।। चन्द्रमा और मगल मे से जो बलवान् हो वह 'मातृकारक' होता है। विशेष करके मगल के अधिकार मे दो कारक है। एक उपर्युक्त तथा दूसरा भाई और भार्या मे से स्थिर कारकत्व है। बुध से मामापक्ष का कारकत्व विचार करना और गुरु से, पुत्र स्वामी, पितामह के कारकत्व का विचार करना।। अपनी भार्या, माता, पिता, नानी का कारकात्वभाव शुक्रद्वारा जानना। अर्थात् इनका कारक शुक्र है।। सूर्य–पुण्यकारक, चन्द्रमा मातृ कारक तथा चतुर्थ भाव से भी माता का विचार करना इसी प्रकार मगल से तथा तृतीयभाव से भ्राता का और बुध से तथा छठे भाव से मामा का विचार करना योग्य है।। बृहस्पति से तथा पचमभाव से पुत्र का तथा शुक्र से तथा सप्तम मे भार्या का शनि से तथा अष्टमभाव से निर्वाण (मृत्यु) का तथा पिता आदि का विचार करना।। (ग्रहो के कारकत्व का विचार समाप्त) ॥१–३३॥

अथ भावकारकमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि विशेष भावकारकान् । जनुर्लग्न च विद्याद्वै आत्मा कारकमेव च ॥३४॥ धनभाव विजानीयाद्दारकारकमेव च ॥ एकादशो ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये तु कनिष्ठक ॥३५॥ सुते सुत विजानीयात्तथा सप्तमभावत ॥ सुतस्थाने ग्रहास्तिष्ठेत्सोऽपि कारक उच्यते ॥३६॥ सूर्यो १ गुरु २ कुज ३ सोमो ४ गुरु ५ भौम ६ सित ७ शनि ८ ॥ गुरु ९ श्चन्द्रसुतो १० जीवो ११ मदश्च १२ भावकारका ॥३७॥ पुनस्तन्वादयो भावा स्थाप्यास्तेषा शुभाऽशुभम् ॥ लाभ तृतीय रन्ध्र च शत्रुस्वस्त्रीव्यय तथा ॥ एषा योगेन यो भावस्तन्नाश प्राप्नुयाद्ध्रुवम् ॥३८॥ चत्वारो राशयो भद्रा केन्द्रकोणशुभावहा ॥ तेषा सयोगमात्रेण ह्यशुभोऽपि शुभो भवेत् ॥३९॥

कारकवस्तुविचार

अब हम विशेष कर भावकारको को कहते है। जातक के जन्म का लग्न ही आत्माकारक है।। और धनभाव भार्याकारक है। एकादशभाव बडे भाई का तथा तृतीयभाव छोटे भाई का कारक है। पञ्चम तथा सप्तमभाव से और पञ्चमभावस्थ ग्रह से भी पुत्रसन्तान का विचार करना।। १२ भावो के कारक ग्रह कहते है। क्रम से सूर्य, गुरु, कुज, चन्द्र, गुरु भौम, शुक्र, शनि, गुरु, बुध, गुरु, शनि ये कारक है।। तन्वादि १२ भाव लिखकर शुभाशुभ फल का विचार करे। भावो मे २।३।६।७।८।११।१२ इन भावो के परस्पर दृष्ट्यादि सम्बन्ध से जो भाव सम्बद्ध हो उस भाव की निश्चय हानि होती है।। तथा केन्द्रभाव की चार राशि और त्रिकोण की दो राशि इनके सम्बन्ध से अशुभ राशि भी शुभफलकारक होती है।। स्थिरकारक विचार समाप्त।। ३४-३९।।

चरकारकग्रहाः स्युः

सर्वग्रहेभ्योऽधिकांशादिनात्मकारकस्तत्क्रमेण ज्ञेय । आत्माऽमात्यभ्रातृमातृपुत्रज्ञातिदारा इत्यादिचरकारकग्रहा स्यु ।

चरकारकग्रहाणा चक्रम्

गुरु	बृहस्पति	शनि	चन्द्रमा	मंगल	बुध	सूर्य	शुक्र
आत्मकारक	अमात्यकारक	भ्रातृकारक	मातृकारक	पुत्रकारक	ज्ञातिकारक	दारकारक	चरकारक

अथ सूर्यादिग्रहकारकमांह

राज्यविद्रुमरक्तवस्त्रमाणिक्यराजवनपर्वतक्षत्रपितृकारको रवि ॥४०॥ मातृमन पुष्टिगन्ध-रसे क्षुधोधूमकारकश्चन्द्रः कृषिजलार्यसस्यरजतादिकारकश्चन्द्रः ॥४१॥ मत्स्यसमुद्रभूमिपुत्रनीतिवीर्य-रोग ब्रह्मभ्रातृपराक्रमाग्निसाहसराजशत्रुकारक कुज ॥४२॥ ज्योतिर्विद्यामातुलगणितकाय-

नर्तनवैद्यहासभीश्रीशिल्पविद्यादिकारको बुध ॥४३॥ स्वकर्मयजनदेवब्राह्मणधनगृहकाचन-वस्त्रपत्रमित्रबोलनादिकारको गुरु ॥४४॥ कलत्रकार्मुकसुखगीतशास्त्रकाव्यपुष्पसुकुमारयौ-वना भरणरजतयानगर्वलोकमौक्तिकविभवकवितारसादिकारक शुक्र ॥४५॥महिषायोगजतैल वस्त्र शृङ्गारप्रयाणसर्वराज्यदार्वायुधगृहयुद्धसचारशूद्रनीलमणिविघ्नकेशशल्यशूलरोगदासदा-सीजनायुष्यकारक शनि ॥४६॥ प्रयाणसमयसर्परात्रिसकलसुप्तार्थद्यूतकारको राहु ॥४७॥ व्रणरोगचर्मातिशूलस्फुटक्षुधार्तिकारक केतु ॥४८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखडे कारकाध्यायकथन नामाष्टमोऽध्याय ॥८॥

कारक वस्तु विचार (गद्यभाग)

राज्य विद्रुम (मूगा) रक्त वस्त्र माणिक राजा वन पर्वत क्षत्री पिता इनका कारक सूर्य है। माता मन पुष्टि गध रस ईख गेहू नमक सोडा आदि द्विज (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शक्ति कार्य चादी का कारक चन्द्रमा है॥ बल मकान भूमि पुत्र शील चोरी रोग वह्नि भ्राता पराक्रम अग्नि साहस राज शत्रु इनका कारक मगल है॥ ज्योतिर्विद्या मामा गणित शरीर नाचना वैद्य हास भय सजावट शिल्पविद्या इनका कारक बुध है॥ स्वकर्म यज्ञ देवता ब्राह्मण धन मकान सुवर्ण वस्त्र पत्र (चिट्ठी) मित्र आन्दोलन (प्रचार) इनका कारक बृहस्पति है॥ भार्या धनुष सुख गीतशास्त्र काव्य पुष्प सुकुमार (अवस्था) यौवन आभरण (भूषण) चान्दी सवारी गर्व (अभिमान) लोक (समाज) मोती सम्पति कविता रस इनका कारक शुक्र है॥ महिष अयसु (लौह) गज तेल वस्त्र शृगार यात्रा राजकीय वस्तु काठ हथियार गृह युद्ध सचार (यात्रा) शूद्र नीलम विघ्न देश शल्य (सर्जरी) दास दासीजन आयु इनका कारक शनि है॥ यात्रा समय सर्प रात्रि समस्त स्वप्न तथा द्यूत (जूआ) इनका कारक राहु है॥ व्रण चमडा रोग अतिशूल फुटकर भूख कष्ट इनका कारक केतु है॥ कारक वस्तु विचार समाप्त ॥४०–४८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया कारकाध्याय नामाऽष्टमोध्याय ॥८॥

कारकांश कुडली

सू ८ | रा श गु ७ | ६
बु ९ | ५
१० | ४
गुलिक ११ गु | के १ | म० ३
च १२ | २

कारकग्रहा									
र०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०	गु०
८	१२	३	९	११	७	७	७	१	११

अथ कारकांशग्रहफलमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकस्याधिपान् ग्रहान् ॥ योगसंबधमात्रेण यथावद्गदतो मम ॥१॥
स्वांशकारककुंडल्यां नवमांशाधिपोऽथवा ॥ यस्मिन्राशौ स्थितो विप्र तद्राशिफलमुच्यते
॥२॥ मेषादिमीनपर्यन्तं सर्वेषां फलमादिशेत् ॥ यथावद्गदितं शूलिप्रोक्तं यद्रुद्रयामले ॥३॥
अजांशकारकांशेषु तिष्ठंति च यदा ग्रहाः ॥ तथा मूषकमार्जारौ दुःखदौ भयकारकौ ॥४॥
शुभेयोगे च यदा विप्र मार्जारादिप्रसिद्धिदौ ॥ वृषे च कारकांशे च भयार्ता च चतुष्पदात् ॥५॥
शुभे चतुष्पदात्सिद्धिरिति तत्त्व द्विजोत्तम ॥ युग्मकाराशके खेटे कड्वादिरोगसंभवः ॥६॥
कर्कांशे च चलाद्दुःखं जलभीतिर्न संशयः ॥ कुष्ठादिरोगसंभूतिः शुभे फलविपर्ययः ॥७॥
सिंहांशे कारके खेटे तिष्ठत्येव द्विजोत्तम ॥ शुनकादिभयं दद्याच्छुभे सिद्धिप्रदायकः ॥८॥
कन्यायां कारकांशे च तिष्ठत्येव यदा ग्रहः ॥ मृत्युवत्कष्टरोगार्तिर्वह्निदोषेण दुःखभाक् ॥९॥
तुलाख्यकारकांशे च व्यापारेषु रतोऽधिकः ॥ क्रयविक्रयकर्ता च यदि जातो नृपालये ॥१०॥
वृश्चिके कारकांशे च सर्पविषमयकारकः ॥ मातुः पयोधरे पीडा जायते द्विजसत्तम ॥११॥
धनुर्धरकारकांशे वाहनाद्भयमादिशेत् ॥ उच्चात्प्रपतनं वापि कोपि वस्तुसमन्वितः ॥१२॥
नक्रकारकांशे विप्र सिद्धिर्जलचरादयः ॥ शङ्खमुक्ताप्रवालादिमत्स्यखेचरदेवता. ॥१३॥
कुम्भाख्यकारकांशे च तडागादीनि कारयेत् ॥ कीर्तिमान्धर्मवान्सोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥१४॥
पश्यति कंडुरोगादि भवतीह न संशयः ॥ मीने च कारकांशे वै सायुज्यमुक्तिभाग्भवेत् ॥१५॥

कारकांश राशि फल

अब पूर्वोक्त कारकाधिपति ग्रहो के नवमांश योग से होने वाले फल को कहते हैं॥ कारकांश कुण्डली में नवमांशपति जिस राशि मे हो उस राशि का फल कहते हैं॥ रुद्रयामल मे महादेवजी के कहे हुए १२ राशियो के फल को विचार कर कहना चाहिये॥ कारक ग्रह मेष नवमांश मे हो तो मूषक और विलाव से भय तथा दु:ख होता है॥ यदि मेष राशि मे शुभग्रहो का योग या दृष्टि हो तो मूषक मार्जार ही प्रसिद्धि के कारण होते हैं॥ वृषराशि मे कारकांश हो तो चौपाया पशु से भय और दु:ख हो ॥ शुभयोग होने से वही चतुष्पद सिद्धिकारक होते हैं॥ कारकांश मे मिथुन राशि होने मे खुजली आदि रोग होते है॥ इसी प्रकार कर्क राशि हो तो चलवस्तु सवारी आदि तथा जलभय और कुष्ठ आदि रोग होता है। शुभयोग होने से उक्त वस्तुओ से सिद्धि होती है॥ सिंह राशि यदि कारकांश मे हो तो कुत्ता आदि से भय होता है और शुभयोग होने से उन्ही मे सिद्धि होती है॥ कन्या राशि मे होने पर मृत्यु के समान कष्ट देनेवाले रोग, दु:ख अथवा अग्निभय होता है॥ तुलाराशि मे स्थित कारकांश मे जातक अधिकतर व्यापार मे अनुरक्त क्रय–विक्रय का कर्ता होता है। राजवंश मे होने पर भी प्रसिद्ध व्यापारी ही होता है॥ कारकांश मे वृश्चिक राशि हो तो सर्प आदि से भय तथा माता को स्तन पीडा होती है॥ धनु के कारकांश मे हो तो सवारी मे भय तथा ऊँचे मे गिरने का भय होता है॥ मकर राशि के कारकांश मे होने से जलचर जीव, शंख, मोती, मूगा, मत्स्य तथा आकाशचारी भी लाभकारक होते हैं॥ कुम्भ के कारकांश मे जलाशय बनानेवाला, कीर्तिमान् तथा धर्मात्मा होता है तथा कडू (खुजली) आदि रोग होते है। मीन राशि के कारकांश मे होने से जातक को सायुज्य मुक्ति होती है॥ कारकांश राशिफल समाप्त ॥१–१५॥

अथ कारकांशग्रहाणां फलमाह

शुभराशौ शुभांशे वा कारके धनवान् भवेत् ॥ तदंशकेन्द्रे शुभो नूनं सत्यं राजा प्रजायते ॥१६॥
कारके शुभराश्यंशे लग्नांशस्थे शुभग्रहे ॥ उपग्रहस्य पश्चात्ये स्वोच्चस्वर्क्षे शुभर्क्षगे ॥१७॥
पापदृग्योगरहिते कैवल्यं तस्य निर्दिशेत् ॥ मिश्रे मिश्रं विजानीयाद्विपरीते विपर्ययम् ॥१८॥
चन्द्रभृगुवारवर्गस्थे कारके पारदारिकः ॥ वृषतौल्यंशकगते तस्मिन्वाणिज्यपाण्भवेत् ॥१९॥
मेषसिंहांशके तस्मिन्मूषान्मूषकदंशकः ॥ कारके कार्मुकांशस्थे वाहनात्पतनं भवेत् ॥२०॥
अथैकः कारकांशेषु रव्यादिस्तिष्ठति ग्रहः ॥ तेषां फलं प्रवक्ष्यामि शृणु त्वं द्विजसत्तम ॥२१॥
कारकांशे यदा सूर्यस्तिष्ठति द्विज वीर्ययुक् ॥ आदावते पुमान्सोऽपि राजकार्य्येषु तत्परः
॥२२॥ कारकांशे तु पूर्णेन्दुर्दैत्याचार्येण वीक्षितः ॥ शतभोगी भवेत्सोऽथ विद्याजीवी भवेद्द्विज
॥२३॥ कारकांशे यदा भौमे बलाढ्येन युतेक्षिते ॥ रसवादी कुन्तधारी वह्निकृज्जीवनं भवेत्
॥२४॥ कारकांशे यदा सौम्ये तिष्ठत्येव बलाढ्यकः ॥ शिल्पज्ञो व्यवहारी च वणिक्कृत्यपरो
द्विज ॥२५॥ कारकांशे गुरौ विप्र कर्मनिष्ठापरो भवेत् ॥ सर्वशास्त्राधिकारी च विख्यातः
क्षितिमंडले ॥२६॥ कारकांशे यदा शुक्रे राजमानी सदा भवेत् ॥ सर्वेन्द्रियः शताब्दायुः
कथनीयः द्विजोत्तम ॥२७॥ कारकांशे यदा सौरिर्मृत्युलोके प्रसिद्धवान् ॥ महता कर्मणा वृत्तिः
क्षितिपालेन पूजितः ॥२८॥ कारकांशे यदा राहुर्धनुर्धारी प्रजायते ॥ आगत्यलोहयन्त्रादि-
कारकश्चौरसगमी ॥२९॥ कारकांशे यदा केतुस्तिष्ठति द्विजसत्तम ॥ व्यवहारी गजादीना-
मुशति परद्रव्यके ॥३०॥कारकांशे यदा विप्र संस्थितौ रविसैंहिकौ ॥ सर्पाद्भीतिर्भवेन्मृत्युः
शुभदृष्ट्या निवर्तते ॥३१॥ कारकांशे भानुतमौ शुभषड्वर्गसंयुतौ ॥ विषवैद्यो भवेन्नूनं
विषहर्ता विचक्षणः ॥३२॥ भौमेक्षिते कारकांशे भानुस्वर्भानुसंयुते ॥ अन्यग्रहा न पश्यन्ति
स्ववेश्मपरदाहकः ॥३३॥ यदि सौम्येक्षिते विप्र ह्यग्निदो नैव जायते ॥ पापर्क्षे च गुरौ दृष्टे
समीपगृहदाहकः ॥ ३४॥ सगुलिके कारकांशे पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सति चौरैर्नीतधनः स्वयं
चोरोऽथ वा भवेत् ॥३५॥ सगुलिके कारकांशे अन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अण्डवृद्धिः
प्रजायते ॥३६॥ कारकांशे केतुयुक्ते पापग्रहनिरीक्षिते ॥ श्रोत्रच्छेदो भवेन्नूनं कर्णरोगार्तितो
द्विज ॥३७॥ कारकांशे स्थिते केतौ भृगुणा च समीक्षिते ॥ युते वा जायते विप्र
क्रियाकर्मसमन्वितः ॥३८॥ कारकांशे स्थिते केतौ शनिसौम्यनिरीक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो
जायते सोऽपि मानवः ॥३९॥ सकेतौ कारकांशे च बुधशुक्रनिरीक्षिते ॥ जायते यौनियुतिको
'दासीपुत्रोऽथ वा भवेत् ॥४०॥ सकेतौ कारकांशे च अन्यग्रहनिरीक्षिते शनिदृष्टिविहीने च
सत्याच्च रहितो भवेत् ॥४१॥ कारकांशे यदा विप्र भृगुभास्करवीक्षिते ॥ राजप्रेष्यो भवेद्बालो
जायते नात्र संशयः ॥४२॥

कारकांश ग्रहफल

कारक ग्रह शुभराशि या शुभांश मे हो तो जातक धनवान होता है। यदि कारकांश राशि तथा ग्रह केन्द्रस्थान मे हो तो निश्चय ही राजा होता है।। कारकग्रह शुभराशि मे हो, नवांश मे लग्नराशि पर शुभग्रह हो और उपग्रह के अन्त्य भाग मे तथा स्वगृह, उच्च, तथा शुभदृष्टि युक्त हो और पापग्रह की दृष्टि तथा योग से रहित हो तो निश्चय कैवल्य–मुक्ति होती है। दोनो प्रकार के योग (शुभाशुभयोग) हो तो मिश्रित फल और केवल पापयोग हो तो कथित फल से विपरीत फल होता है।। कारकांश ग्रह यदि चन्द्रमा, शुक्र के वर्ग मे हो तो परस्त्रीगामी

होता है। वृष और तुला के अंश में हो तो व्यापारी होता है।। मेष तथा सिंह के अंश में हो तो मूषकभय तथा धनु के अंश में हो तो वाहन से गिरना होता है।। कोई एक ग्रह कारकांश में स्थित हो तो उसका भिन्न भिन्न फल कहते हैं।। कारकांश में जब सूर्य बलवान् होकर स्थित हो तो जातक सारी आयु राजकार्य में तत्पर रहता है।। चन्द्रमा यदि कारकांश शुक्रदृष्ट हो तो पूर्णायु तक भोगी और विद्याजीवी होता है।। कारकांश में मंगल बली ग्रह से दृष्ट होकर स्थित हो तो शस्त्रधारी, "रसभस्मज्ञाता", अग्निजीवी होता है।। कारकांश में बलयुक्त होकर बुध हो तो शिल्प विद्या जाननेवाला, वणिक्वृत्ति, व्यापारी होता है।। हे मैत्रेय[1] कारकांश में जब गुरु हो तो कर्मकाण्ड में निष्ठावाला विख्यात सर्वशास्त्रज्ञ होता है।। कारकांश में शुक्र हो तो राजमान्य इन्द्रियजित् तथा शतायु होता है।। कारकांश में शनि हो तो ससार प्रसिद्ध राजपूज्य महान् कार्यकर्ता होता है।। कारकांश में यदि राहु हो तो धनुर्विद्यावान, लौहयन्त्र (ताले) आदि बनानेवाला चोरसगी होता है।। कारकांश में केतु हो तो पराक्रम से हाथी आदि का व्यापारी होता है।। कारकांश में जब सूर्य, राहु हो तो सर्प से मृत्यु होती है, शुभदृष्टि नहीं होती।। कारकांश में रविराहू शुभषड्वर्ग में हो तो विषवैद्य (गारडी) विचक्षण विषहर्ता होता है।। कारकांश में रविराहू मंगल से दृष्ट हो और अन्य दृष्टि न हो तो अपना तथा पराया घर का जलानेवाला होता है।। हे मैत्रेय[1] यदि शुभदृष्टियुक्त हो तो दाहक नहीं होता।। पापराशि में हो और गुरु दृष्टि हो तो समीप के घर का दाहक होता है।। कारकांश यदि गुलिक योगवाला हो तो स्वयं चोर या जातक का धन चोरी हो।। कारकांश सगुलिक हो तथा अन्य ग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा बुधदृष्टियुक्त हो तो 'अंडवृद्धि' रोग होता है।। कारकांश में केतु हो और पापग्रह दृष्ट हो तो कर्णरोग के कारण कर्णच्छेद हो।। कारकांश में केतु शुक्रदृष्ट हो अथवा युक्त हो तो क्रियाकर्म युक्त होता है।। कारकांश में केतु शनि और सौम्यग्रह दृष्ट हो तो बलवीर्य रहित होता है।। कारकांश में केतु बुध शुक्र दृष्ट हो तो वर्णसंकर या दासीपुत्र होता है।। कारकांश में केतु शनिदृष्टि रहित अन्यदृष्टि युक्त हो तो कृतप्रतिज्ञा से रहित होता है।। कारकांश में केतु सूर्य शुक्र दृष्ट हो तो राजा का नौकर होता है।।कारकांश ग्रहफल समाप्त।।१६-४२।।

अथ कारकांशदशमफलमाह

दशमे कारकांशे च बुधेन समवीक्षिते ।। व्यापारे बहुलाभश्च महत्कर्मविचक्षणः ।।४३।। कारकांशे च दशमे रविणा च युते यदि ।। गुरुदृष्टे तथा विप्र जायते योगकारकः ।।४४।। कारकांशे च दशमे शुभखेटनिरीक्षिते।। स्थिरचित्तो भवेद्वालो गंभीरो बहुवीर्यवान् ।।४५।।

अथ कारकांशे चतुर्थस्थानफलम्

पाताले कारकांशे च शशिशुक्रयुतेक्षिते ।। प्रासादवान् भवेद्वालो विचित्रहर्म्यवान्द्विज ।।४६।। कारकांशे च पाताले तुंगर्क्षे कोऽपि संस्थितः ।। हर्म्यमंदिरसंयुक्तो ह्यत्युच्चो बहुदीप्तिमान् ।।४७।। कारकांशे च पाताले शनिराहुयुतेक्षिते ।। विप्राच्छादनपट्टीयुग्जायते मंदिरं द्विज ।।४८।। कारकांशे च पाताले कुजकेतुशनीक्षिते ।। ऐष्टिकं मंदिरं तस्य जायते नात्र संशयः ।।४९।। कारकांशे

च पातालेगुरुयुक्तनिरीक्षिते ।। ऐष्टिकं मंदिरं तस्य जायते नात्र संशयः ।।५०।। कारकांशे च पाताले गुरुयुक्तनिरीक्षिते ।। कणवेष्टितसंयुक्तं जायते तस्य मंदिरम् ।।५१।।

कारकांश विभिन्नभावफल

दशमभावफल

कारकांश मे दशमभाव हो और बुधदृष्ट हो तो बडे बडे कार्य करनेवाला तथा व्यापार मे बहुत धन प्राप्त करनेवाला होता है।। कारकांश दशम मे रवियुक्त तथा गुरुदृष्ट हो तो राजयोग होता है।। दशमभाव मे कारकांश हो तथा शुभग्रहदृष्ट हो तो जातक दृढविचारी, गंभीर और बलवान् होता है।। दशम कारकांशफल समाप्त ।।४३-४५।।

कारकांश मे चतुर्थस्थानफल

चतुर्थ स्थान मे कारकांश हो चन्द्र शुक्रदृष्टि युक्त हो तो अनेक प्रकार के मकानवाला होता है।। चतुर्थस्थान मे कारकांश उच्चराशिगत ग्रहयुक्त हो तो लम्बे कदवाला, सुन्दर शरीर, बडे बडे मकानवाला होता है।। चतुर्थ कारकांश शनि राहु से युक्त या दृष्ट हो तो बडे बगीचेवाला मकान होता है।। चतुर्थ कारकांश यदि मं० श० के० से दृष्ट हो तो ईंट से बना मकान होता है।। चतुर्थ कारकांश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो पक्की ईंट का मकान होता है तथा कजरी (पत्थर के छोटे टुकडे) का पक्का मकान होता है ।। चतुर्थ फल सम्पूर्ण ।।४६-५१।।

अथ कारकांशे नवमभावफलमाह

कारकांशे च नवमे शुभखेटयुतेक्षिते ।। सत्यवादी गुरौ भक्तः स्वधर्मनिरतो भवेत् ।।५२।।
कारकांशे च नवमे पापग्रहयुतेक्षिते ।। स्वधर्मनिरतो बाल्ये मिथ्यावादी भवेद्द्विज ।।५३।।
कारकांशे च नवमे शनिराहुयुतेक्षिते ।। गुरुद्रोही भवेद्विप्र शास्त्रेषु विमुखो नरः ।।५४।।
कारकांशे च नवमे गुरुभानुयुतेक्षिते ।। तदापि च गुरुद्रोही गुरुवाक्यं न मन्यते ।।५५।।
कारकांशे च नवमे भृगुभौमयुतेक्षिते ।। षड्वर्गाधिकयोगे च मरणं पारदारिकं ।।५६।।
कारकांशे च नवमे तमयुतेक्षिते द्विज ।। परस्त्रीसंगमाद्बालो बधको भवति ध्रुवम् ।।५७।।
कारकांशे च नवमे गुरुयुक्तेक्षिते द्विज ।।स्त्रीलोलुपो भवेद्बालो विषयी चैव जायते।।५८।।

नवमभाव के कारकांश का फल

कारकांश नवमभाव में हो शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो धर्मात्मा गुरुभक्त और सत्यवादी होता है।। नवमभावगत कारकांश पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो बाल्यावस्था मे धार्मिक वृत्तिवाला, मिथ्यावादी होता है।। नवमभावगत कारकांश शनि राहुयुक्त या दृष्ट हो तो मूर्ख और गुरुद्रोही होता है।। नवमभावगत कारकांश यदि सूर्य गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो भी गुरुद्रोही, आज्ञापालक नही होता।। नवमभावगत कारकांश शुक्रमंगलयुक्त या दृष्ट हो और षड्वर्ग मे भी इन्ही से युक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण मरण होता है।। नवमभावगत कारकांश राहुयुक्त या दृष्ट हो तो परस्त्री के कारण बंधन होता है।। नवमगत कारकांश गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो कामी और विषयी होता है ।।५२-५८।।

अथ कारकांशसप्तमभावफलमाह

कारकांशे च द्यूनस्थे गुरुचंद्रयुते द्विज ॥ सुंदरी गेहिनी तस्य पतिभक्तिपरायणा ॥५९॥ राहुणा विह्वला बाला जायते चांगना द्विज ॥ शनिना च वयोधिक्या रोगिणी वा तपस्विनी ॥६०॥ भौमेन विकलांगी च तया कांताद्यलक्षणा ॥ रविणा स्वकुले गुप्ता आसक्ता परवेश्मनि ॥६१॥ बुधे कलावती ज्ञेया कलाभिज्ञा प्रजायते ॥ शुक्रेण तद्वज्ज्ञेया च निर्विशंक द्विजोत्तम ॥६२॥

अथ कारकांशे तृतीयभावफलमाह

कारकांशे तृतीये च पापखेटयुतेक्षिते ॥स शूरो जायते बालो वीर्यवान्बहुविक्रमी॥६३॥कारकांशे तृतीयेऽपि शुभखेटयुतेक्षिते ॥ जायते तत्त्वहृदयः कातरोऽपि विशेषतः ॥६४॥ कारकांशे तृतीये च षष्ठे पापयुतेक्षिते ॥ कृषिकर्मरतो नित्य जायते च न संशयः ॥६५॥

सप्तमभावगत कारकांशफल

सप्तमस्थ कारकांश गुरुचन्द्रयुक्त हो तो पतिभक्त सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है॥ इसी प्रकार राहुयुक्त हो तो अतिकामासक्त भार्या प्राप्त होती है और शनियुक्त होने से अपने से अधिक उमरवाली और रोगिणी और विरक्त होती है॥ और इसी प्रकार मंगलयुक्त होने से विकलांगी और पुरुष समान होती है॥ सूर्य के योग से अपने घर मे सुरक्षित रखने पर भी अन्य घर मे आसक्त रहती है॥ बुध के योग से गायनवाद्य आदि कलाओ की जाननेवाली होती है॥ शुक्र के योग से भी बुध के ही समान फल होता है॥५९-६२॥

तृतीयभावगत कारकांशफल

तृतीयभावगत कारकांश हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो जातक बलशाली और पराक्रमी होता है॥ तृतीयभावगत कारकांश शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो तत्त्वज्ञानी और डरपोक होता है॥ कारकांश तृतीय या षष्ठभाव गत हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो खेती से आजीवन करता है ॥६३-६५॥

अथ कारकांशे द्वादशभावफलमाह

कारकांशे व्ययस्थाने उच्चस्थेऽपि शुभग्रहे ॥ सद्गतिर्जायते तस्य शुभलोकमवाप्नुयात् ॥६६॥
कारकांशे व्यये केतौ शुभखेटैर्युतेक्षिते ॥ तदापि जायते मुक्तिः सायुज्यपदमाप्नुयात् ॥६७॥
मेषेऽथ धनुषि चापि कारकांशे व्यये शिखी ॥ शुभग्रहेण संदृष्टे कैवल्यपदमाप्नुयात् ॥६८॥
केवलेऽपि व्यये केतुः पापग्रहयुतेक्षितः ॥ न मुक्तिर्जायते तस्य शुभलोक न पश्यति ॥६९॥
रविणा संयुते केतौ कारकांशे व्ययस्थिते ॥ गौर्यां भक्तिर्भवेत्तस्य शाक्तिको जायते नरः ॥७०॥
रविभक्तिर्भवेत्तस्य निर्विशंक द्विजोत्तम ॥ चंद्रेण संयुते केतौ कारकांशे व्ययस्थिते ॥७१॥
शुक्रेण संयुते केतौ कारकांशे व्ययस्थिते ॥ समुद्रतनयाभक्तिर्जायतेऽसौसमृद्धिमान् ॥७२॥
कुजेन स्कंदभक्तो वा जायते द्विजसत्तम ॥ वैष्णवो बुधसौरिभ्यां गुरुणा शिवभक्तिमान् ॥७३॥

राहुणा तामसीं दुर्गां भूतप्रेतादिसेवकः ॥ हेरंबभक्तः शिखिना स्कंदभक्तोऽथ वा भवेत् ॥७४॥
कारकांशे व्यये शौरिः पापराशौ यदा भवेत् ॥ तदैव क्षुद्रदेवस्य भक्तिस्तस्य न संशयः ॥७५॥
पापर्क्षेऽपि व्यये शुक्रस्तदापि क्षुद्रसेवकः ॥ कारकान्न्यूनभागो हि अमात्यो जायते ग्रहः ॥७६॥
कारके च फलं ब्रूयादमात्येऽनुचरो भवेत् ॥ आदित्येंदुधरापुत्राद्गणनीयोऽष्टमो ग्रहः ॥७७॥
तस्मिन् ग्रहेऽप्येव फलं वक्तव्यं नात्र संशयः ॥ अमात्याद्द्वादशे राशौ पापर्क्षे पापसंयुते ॥
तथापि क्षुद्रदेवस्य भक्तिर्भवति निश्चितम् ॥७८॥ अमात्यो वर्तते यत्र तन्वादौ द्विजसत्तम ॥
सूर्यादिग्रहसंयुक्ते तत्फलं पूर्ववद्द्विज ॥७९॥

द्वादशभावगत कारकांशफल

बारहवें भाव में कारकांश हो और उच्चस्थ शुभग्रहयुक्त हो तो सद्गति होती है, अन्त में शुभलोक की प्राप्ति होती है।। व्ययभावगत कारकांश में केतु हो और शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो भी सायुज्य मुक्ति प्राप्त होती है।। व्ययभाव में मेष या धनु राशि हो और उसमें केतु शुभग्रहदृष्ट हो तो भी सायुज्यमुक्ति प्राप्त होती है।। और वही केतु पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो उसकी न तो मुक्ति होती है और न शुभ लोक ही प्राप्त होता है।। व्ययभावगत कारकांश में केतु सूर्ययुक्त हो तो जातक गौरीभक्त और शाक्त होता है।। व्ययभावस्थित कारकांश में चन्द्रयुक्त केतु हो तो सूर्य में भक्ति होती है।। व्ययभावगत कारकांश में केतु शुक्र से युक्त हो तो लक्ष्मीदेवी की आराधना से समृद्धिवाला होता है।। इसी प्रकार केतु मंगलयुक्त हो तो स्वामी कार्तिकेय का भक्त होता है। बुध तथा शनियुक्त होने से विष्णुभक्त और गुरु युक्त होने से शिवभक्त होता है।। कारकांश के व्ययभाव में राहु होने से काली पूजक तथा भूत प्रेतादि को सिद्ध करनेवाला होता है। तथा केवल केतु से गणेश या स्कन्द का भक्त होता है।। कारकांश के व्ययभाव में पाप राशि में शनैश्चर हो तो क्षुद्र देवता यक्ष आदि का उपासक होता है।। इसी प्रकार पापराशि में शुक्र हो तो भी क्षुद्र देवताओं का भक्त होता है। यह सम्पूर्ण फल आत्मकारक के नवमांश का जानना।। आत्मकारक से कम अंशवाला ग्रह 'आत्मकारक' होता है।। कारकांश में जो फल कहा है अमात्यकारक भी उसी का अनुगामी है। तथा सूर्य, चन्द्रमा, मंगल से अष्टम राशि गणना करना ॥ उस राशि में भी इसी प्रकार फल जानना । अमात्यकारक से बारहवीं राशि यदि पापराशि हो या पाप ग्रहयुक्त हो तो भी क्षुद्रदेवता भक्त होता है।। हे मैत्रेय! अमात्यकारक राशि लग्न आदि भावों में सूर्यादि ग्रह के योग से भी पूर्ववत् फल जानना।। कारकांश ग्रहफल सम्पूर्ण ॥ १६-७९॥

अथ कारकांशे त्रिकोणफलमाह

कारकांशे त्रिकोणस्थे खेटे च तांत्रिको भवेत् ॥ पापैन क्षुद्रदेवस्य शुभेन शुभसेवकः ॥८०॥
कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् पापवीक्षिते ॥ भूतानुग्रहकर्ता स्यान्निर्विशंक द्विजोत्तम ॥८१॥
कारकांशे त्रिकोणस्थे पापयुक् शुभवीक्षिते ॥ पुत्रैश्वर्यप्रदो नित्यं राजानुग्रहकारकः ॥८२॥
कारकांशे लग्ने चंद्रे कुजराहुनिरीक्षिते ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य श्वासकासादिरोगयुक् ॥८३॥
लग्नेक्षिते प्रबंधे च पापद्वययुते द्विज ॥ तांत्रिको जायते विप्र निर्विशंकं कुले द्विज ॥८४॥

पापैर्निरीक्षितौ तत्र तंत्रनिग्राहको भवेत् ॥ शुभैर्निरीक्षितौ वापि तंत्रानुग्रहकारकः ॥८५॥
कारकांशेंदुशुक्रौ च शुभदृष्टिनिरीक्षितौ ॥ रसवादी भवेद्बालो धातूनां भस्मकारकः ॥८६॥
शुक्रेंदुबुधसंदृष्टौ सद्वैद्यो हि भवेन्नरः ॥ पीयूषपाणिः कुशलःसर्वरोगहरो द्विज ॥८७॥
कारकांशेंदुतुर्यस्थो दैत्याचार्यनिरीक्षितः ॥ श्वेतकुष्ठी भवेन्नूनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥८८॥

कारकांश त्रिकोणफल

कारकाश राशि त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयोग हो तो 'तान्त्रिक' होता है॥ कारकाश त्रिकोणमे हो तथा ग्रहयुक्त और पापदृष्टि हो तो भूत प्रेतादिसे सिद्धि प्राप्त करता है॥ कारकाश के त्रिकोण मे होने और पापग्रहयुक्त तथा शुभग्रह की दृष्टि होने से पुत्र–सन्तान और ऐश्वर्य तथा राजा का अनुग्रह प्राप्त होता है॥ कारकाश मे चन्द्रयुक्त होकर अष्टमभाव मे हो और मगल राहु से दृष्ट हो तो जातक क्षय रोगी अथवा श्वास–खासी वाला होता है॥ लग्न मे दूसरे या तीसरे स्थान मे दो पापग्रहो से युक्त हो तो निश्चय ही 'तान्त्रिक' होता है॥ पूर्वोक्त स्थान मे अनेक पापग्रहो से दृष्ट हो तो तन्त्र का निग्रहकारक होता है, और शुभग्रह दृष्ट हो तो अनुग्रह कारक होता है॥ कारकाश मे चन्द्रमा और शुक्र शुभग्रहदृष्ट हो तो रसभस्म का जानने और करनेवाला होता है। और चन्द्र, बुध, शुक्र से दृष्ट हो तो चिकित्सा प्रणाली मे कुशल, पीयूषपाणि (चिकित्सा मे यश पानेवाला) रोगो को दूर करनेवाला सद्वैद्य होता है॥ कारकाश मे चन्द्रमा चतुर्थ मे हो और शुक्रदृष्ट हो तो निश्चय ही श्वेत कुष्ठरोग वाला होता है ॥८०-८८॥

कारकांशेंदुचापस्थे यदि शुक्रयुतेक्षिते ॥ पांडुश्वित्री भवेद्बालः श्वेतकुष्ठांगपीडितः ॥८९॥
कारकांशेंदुचापस्थे धरापुत्रेण वीक्षिते ॥ राजरोगो भवेत्तस्य रक्तपित्तार्तिको द्विज ॥९०॥
कारके चंद्रधनुषि शिखिना वीक्षिते सति ॥ नीलकुष्ठं भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९१॥
चतुर्थे पंचमे रंध्रे धने राहुकुजौ यदि ॥ क्षयरोगो भवेत्तस्य चंद्रदृष्ट्या विशेषतः ॥९२॥
कारकांशे लयस्थाने केवलः संस्थितः कुजः ॥ पिटकादि भवेत्तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९३॥
कारकांशे लये केतौ ग्रहणीरोगपीडितः ॥ स्वर्भानुगुलिकौ रंध्रे विषवैद्यःप्रजायते ॥९४॥
कारकांशे धने तुर्ये केवले संस्थिते शनौ ॥ धनुर्विद्याधरो बालो जायतेऽपि न संशयः ॥९५॥
कारकांशे सुखे वित्ते केवले संस्थिते शिखी ॥ घटिकायंत्रवादी स्यादिष्टशोधनतत्परः ॥९६॥
उच्चस्थाने स्थिते सौम्ये तद्वत्परमहंसके ॥ तथा संन्यस्तके ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥९७॥

कारकाश चन्द्रमा धनु राशि मे शुक्र से युक्त या दृष्ट हो तो पाडुरोगी तथा श्वेतकुष्ठी होता है॥ कारकाश चन्द्रमा धनु राशि मे मगल से दृष्ट हो तो रक्तपित्त की बीमारी या क्षयरोगी हो ॥ कारकाश चन्द्रमा धनुराशि मे यदि केतुदृष्ट हो तो नील कुष्ठरोग निश्चय होता है। कारकाश मे दूसरे, चौथे, पाचवे, आठवे यदि मगल राहु हो तो क्षयरोगी होता है, चन्द्रदृष्टि हो तो अवश्य ही होता है॥ कारकाश मे मगल आठवे घर मे हो तो फोडा–फुन्सी की व्याधि होती है॥ कारकाश मे छठे केतु हो तो सग्रहणी रोग होता है। राहु तथा शुक्र आठवे हो तो विषवैद्य (गारुडी) होता है॥ कारकाश मे चतुर्थ या द्वितीय मे केवल शनि हो तो निश्चय धनुर्विद्याविशारद होता है॥ कारकाश मे द्वितीय, चतुर्थ स्थान मे केतु हो तो घटिका मन्त्र

(प्राचीन काल की घडी) से इष्ट (समय) शोधन मे प्रवीण होता है॥ कारकाश मे २।४ स्थान मे बुध हो तो निश्चय ही परमहस सन्यासी होता है ॥८९-९७॥

उक्तस्थाने स्थिते राहौ लोहयन्त्रादिकारक ॥ शिखिना खड्गकारी च कुजेन कुतधारक ॥९८॥ चद्रेज्यौ कारकाशे च लग्ने वा नवपचमे ॥ ग्रथकर्ता भवेन्नून सर्वविद्याविशारद ॥९९॥ उक्तस्थानगते शुक्रे स्वल्पग्रथकरो द्विज ॥ उक्तस्थानगते सौम्ये किचिद्ग्रथकरो ह्यसौ ॥१००॥ शुक्रेण काव्यकर्ता च प्राकृतग्रथतत्पर ॥ गुरुणा सर्वग्रथाना कारको द्विजसत्तम ॥१॥ वाक्यहीनो भवेद्वाल सभाक्षोभो न जायते ॥ वैयाकरणश्च वेदाती जायते तर्कशास्त्रकृत् ॥२॥ उक्तस्थानगतसौरि सभाजाड्यो भवेन्नर ॥ मीमासको भवेन्नूनमुक्तस्थानगते बुधे ॥३॥ कारकाशे धरासूनुर्लग्ने वानवपचमे ॥ नैयायिको भवेन्नून सुष्ठुकाव्यकरो नर ॥४॥ कारकाशे निशानाथे त्रिकोणे चाथ लग्नगे ॥ साख्यशास्त्रज्ञनिपुणो जायते मतिमान्नर ॥५॥ भाग्ये लब्धे प्रबधे वा कारकाशे शिखी तथा ॥ गणितज्ञो भवेन्नून ज्योति शास्त्रविशारद ॥६॥ सुराचार्येण सबधे साप्रदायिकशास्त्रधृक् ॥ ये योगा भाग्यभावे तु यथावद्रूपित मया ॥७॥

कारकाश मे २।४ स्थान मे राहु हो तो मशीनरी बनाने या सुधारने मे प्रवीण होता है। केतु होने से तलवार आदि हथियार बनाता और रखता है॥ कारकाश मे चन्द्र गुरु लग्न मे या पचम नवम मे हो तो सर्वविद्याओ मे पारगत तथा ग्रन्थकर्ता होता है॥ उक्तस्थान मे शुक्र हो तो छोटी पुस्तके लिखनेवाला तथा बुधहोनेसे कभी कोई२ग्रन्थ करनेवाला होता है॥ शुक्र के होने से कवि तथा प्राकृतभाषा का विद्वान् होता है। गुरु होने से सब बिषयो का विद्वान् होता है॥ गुरु होने से वैय्याकरण नैयायिक और वेदान्ती होते हुए भी कम बोलनेवाला तथा सभा मे भी शान्त रहनेवाला होता है॥ उक्त स्थान मे शनि हो तो पडित होते हुए भी समाज मे जड हो। बुध हो तो निश्चय ही मीमासक होता है॥ कारकाश मे लग्न या पचम अथवा नवम स्थान मे मगल हो तो कवि और न्यायशास्त्र का ज्ञाता होता है॥ कारकाश के लग्न या त्रिकोण मे चन्द्रमा हो तो साख्यशास्त्र का ज्ञाता होता है॥ कारकाश के ९।११।२ स्थान मे केतु हो तो ज्यौतिष शास्त्र मे पारगत गणितज्ञ होता है॥ गुरु के सम्बन्ध से धार्मिक शास्त्र का ज्ञाता होता है। जो योग भाग्यभाव मे होते हैं वे यथावत् कहे गये ॥९८ १००॥ तथा ॥१ ७॥

वित्तस्थानेऽपि ते ज्ञेया पूर्ववज्जायते फलम् ॥ केऽपि तृतीयभागे तु कथयति पुरा द्विज ॥८॥ कारकाशे धने केतौ तथा भाग्यालये गते ॥ पापग्रहेण सदृष्टे वाचालश्च भवेन्नर ॥९॥ कारकाशे तथारूढे धने राहौ स्थिते द्विजे ॥ ग्रहसाम्येतिविज्ञेयो योग केमद्रुमो भवेत् ॥१०॥ उक्तस्थाने ग्रहो नास्ति तदा केमद्रुमो भवेत् ॥ चद्रदृष्टे विशेषेण दारिद्र्यार्तियुतो भवेत् ॥११॥ आरूढाज्जन्मलग्नाद्वा पापा स्त्रीहानिगा यदि ॥ केवले सग्रहत्वेऽपि समसौख्यौ शुभाशुभौ ॥१२॥ चद्रदृष्टिविशेषेण योग केमद्रुमो मत ॥ द्वितीयाष्टमभावाभ्या योगोऽयं कथ्यते द्विज ॥१३॥ कारकाशेषु ये योगा पूर्वोक्ता गदिता मया ॥ तत्तद्राशिदशापाके सर्वेषा फलमादिशेत् ॥१४॥ एव दशाप्रदो राशिर्द्वितीयाष्टमयोर्द्विज ॥ ग्रहसाम्येति विज्ञेय केमद्रु शशिनेक्षिते ॥१५॥दशाप्रारभसमये शोधयेज्जन्मलग्नवत् ॥सूर्यादिखेचरान्स्पष्टान् साधयेज्ज-

न्मवद्द्विज ॥१६॥ तत्र वित्ताष्टमे भावे ग्रहसाम्ये तु यद्भवेत् ॥ तदा केमद्रुमो ज्ञेयश्चन्द्रदृष्ट्या विशेषत. ॥१७॥ एवं तन्वादिभावाना दशारम्भेषु योजयेत् ॥ तत्तद्ग्रहानुसारेण फल वाच्य बुधै सदा ॥१८॥

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडेकारकांशफलकथन नाम नवमोऽध्याय. ॥९॥

ऊपर कहे गये सभी योग धनस्थान मे भी इसी प्रकार माने। कोई आचार्य तृतीय भाव मे भी इन योगो को मानते है॥ कारकांश मे केतु द्वितीय स्थान मे या नवमस्थान मे पापदृष्ट हो तो वाचाल (बकवादी) होता है॥ 'केमद्रुम योग कहते है । कारकांश मे अथवा आरूढ लग्न मे दूसरे और आठवे स्थान मे बराबर ग्रह हो तो 'केमद्रुम' (केम नामक जगली बेकारफल होता है उसका वृक्ष यह सार्थक सज्ञा है) योग होता है॥ उक्त स्थानो मे कोई ग्रह नही हो तो भी 'केमद्रुम' योग होता है और चन्द्रमा की दृष्टि हो तो योग बलवान् होता है, यह योग दरिद्रता तथा पीडाकारक ही है॥ आरूढलग्न या जन्मलग्न से पापग्रह सप्तम और द्वादश भाव मे हो अथवा ये स्थान खाली हो तो समान सुख दु ख अर्थात् मिश्रित फल होता है॥ 'केमद्रुम' योग द्वितीय और अष्टमभाव से ही होता है और विशेष करके चन्द्रमा की दृष्टि से बलवान् होता है॥ कारकांश मे जो योग कहे गये है उनका फल उन राशियो की दशा मे होता है॥ इस प्रकार दशाप्रद द्वितीय अष्टम राशि ग्रहसाम्य (दोनो स्थान मे बराबर ग्रह होने अथवा न होने से) कहाती है और चन्द्रदृष्ट होने से 'केमद्रुम' योग कहा जाता है॥ दशा के प्रारभकाल मे जन्म के समान १२ भावो को स्पष्ट करना चाहिये, और सूर्यादि ग्रहो को स्पष्ट करके देखना चाहिये॥ इसके बाद द्वितीय तथा अष्टमभाव ग्रहसाम्य (उपर्युक्त प्रकार से) होने पर 'केमद्रुम' योग होता है, चन्द्रदृष्टि से बलवान् होता है॥ इस प्रकार तनु, धन (प्रथम, द्वितीय) आदि १२ भावो का ग्रहो के अनुसार जो शुभाशुभ फल हो वह फल उस राशि के दशा काल मे कहना॥ कारकांश फल समाप्त ॥८०-११८॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भावप्रकाशिकाया कारकांशफलकथन नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

अथ भाव-होरा-घटीलग्नमाह

अथ वक्ष्याम्यह विप्र ! कल्पनात्मकलग्नकम् ॥ भावहोराघटीसज्ञ-लग्नानीह यथाक्रमम् ॥१॥ सूर्योदयात् समारभ्य घटिकानान्तु पञ्चकम् ॥ इष्टपर्यन्तसेत्तत्तु भावलग्न समुच्यते ॥२॥ इष्ट घटयादिक यत्तु पञ्चभिर्भाजित फलम् ॥ योज्य मौदयिके सूर्ये 'भावलग्न' तदेव हि ॥३॥ होरालग्न वक्ष्येऽह शृणु त्व द्विज पुगव ! सार्द्धद्विघटिका तुल्य विधि तस्य वदाम्यहम् ॥४॥ इष्टघटयादिक द्विघ्न पञ्चाप्त भादिक फलम् ॥ योज्यमौदयिके सूर्ये 'होरालग्न' तदेव हि ॥५॥

हे मैत्रेय ! अब मैं भावलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न जो कि वास्तविक नही है, काल्पनिक है, वे यथाक्रम से कहता हू। सूर्योदय से ५-५ घटी मे इष्टपर्यन्त १-१ राशि का भोग होता है, इसको भावलग्न कहते है। जो घटयादि इष्ट हो उसमे ५ का भाग देकर लब्ध राश्यादि अक मानकर प्रात कालिक सूर्य मे युक्त करे तो 'भावलग्न' स्पष्ट होता है ॥१-३॥

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलग्न स्पष्ट हुआ॥

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालग्न' कहते है, २॥–२॥ घटी मे १–१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रात सूर्य मे युक्त करने से 'होरालग्न' स्पष्ट होता है॥४।५॥

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ, ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रात सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालग्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यद्घटीलग्नं कल्पनीय द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारभ्य जन्मकालावधि स्फुटम् ॥६॥
एकैकघटिकामाने लग्नं यद् भादिक भवेत् ॥ तदेव घटिकालग्नं कथितं नारदादिभिः ॥७॥
घटीतुल्यां राशयस्तु पलार्द्धप्रमितांशकाः ॥ योज्याश्चौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्न' स्फुट भवेत् ॥८॥
क्रमादेषां हि लग्नानां भावकुण्डलिकां लिखेत् ॥ ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्थाप्या वै गणितागताः ॥९॥
वर्णदाख्यदशां भानां कथयामि तवाग्रत ॥ यस्या विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥
ओजलग्नप्रसूतानां मेषादेर्गणयेत् क्रमात् ॥ समलग्न प्रसूताना मीनादेरपसव्यतः ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न' की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है, वही राशि अशरूप मे 'घटीलग्न' है, ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक 'राशि' है और पलाक का द्विगुण अक 'अश' होता है, प्राप्त राशि अश को प्रात कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लग्न के राशि अश आदि स्पष्ट होते है ॥६–८॥

उदाहरण–

इष्ट १०।०० यहा १० यह राशि अक है, पल नही होने से अशादि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ॥

इन (भाव, होरा, घटी) लग्नो से कुडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम 'वर्णद' दशा कहते है, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि मे लग्न हो तो मेष आदि से क्रम से गिनना चाहिये और सम राशि मे लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये॥११॥

एवं मेषादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालग्नान्त गणनीय द्विजोत्तम ॥१२॥
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुभय यदि ॥ तर्हि संख्ये योजनीये वैजात्ये तु वियोजयेत् ॥१३॥
मेष मीनादितो ज्ञात्वा यो राशिः स तु वर्णदः ॥ प्रयोजनं च वक्ष्येऽह् शृणु त्व द्विजपुंगव ॥१४॥
होरा लग्नभयोर्नेया सबलाद् 'वर्णदा' दशा ॥ यत् संख्यो वर्णदो राशि तत्तत् सख्या क्रमेण तु ॥१५॥
क्रम व्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज–युग्मयोः ॥ भावहोरादि लग्नानां सर्वत्रैव समानता ॥१६॥
जन्मलग्नन्तुस्वस्वीय देशोद्भूमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसव्यमार्गेण गणनीय प्रयत्नतः ॥१७॥

यल्लब्धंमतिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्षसंख्यां विजानीयाच्चरपर्यायप्रमाणतः ॥१८॥
होरालग्नभयोर्नेया सबलाद्वर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा त्लग्नात्तत्र सख्या क्रमेण तु ॥१९॥
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजयुग्मयोः ॥ वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात् ॥२०॥
वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना। पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनो ही सम या दोनो ही विषम हो तो इन सख्याओ का योग करे। और यदि एक सख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनो का अन्तर करे। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्न तथा जन्मलग्न मे जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरुप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नही होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है।। इस प्रकार जो अतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशिकी दशाके वर्षो की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्नमे जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना।वर्णददशाकी जो विषम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना।। यह वर्णद राशि त्रिकोण मे पडे और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१८–२१॥

उदाहरण–

जन्मलग्न–६।१६।१७।१९। होरालग्न –६।२३।२८।१८, दोनो ही विषम राशि हैं, अत मेष से क्रम से गणना किया तो ७–७ हुई, प्राप्त दोनो सख्या विषम (सजातीय) हैं, अत. योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

रुद्रशूले यथैवायुर्निर्दिशाक द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमाद्राशेः कलत्रायुर्विचिंतयेत् ॥२२॥ पंचमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्यपंचके ॥ तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज ॥२३॥ पितुस्तु नवमान्मातुः पचमाद्वर्णदस्य तु ॥ शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एव तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ॥ पूर्ववच्च फलं ज्ञेयं द्विजोत्तम शुभाशुभम् ॥२५॥ ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ॥ ग्रहारूढपदत्वेन चिंतयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशाया अन्तरं कार्यं भानुभागं प्रदापयेत् ॥ चरस्थिरदशायां वै वर्णदायास्तथैव च ॥२७॥ यत्तल्लब्ध्वा पूर्वमब्दानां भानुभागं च कारयेत् ॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन संलिखेद्दै दशांतरम् ॥२८॥ पूर्णायां कारकस्यैव केंद्रस्थानां दशा भवेत् ॥ ततः पणफरस्थानामापोक्लिमदशा ततः ॥ जन्मांगं जन्मलग्नं च कालं होरा प्रशस्यते ॥२९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावलग्नादिकथनं नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० मे ५ का भाग दिया तो २।० लब्ध हुआ। सूर्य ४।२३।२८।१८ मे युक्त किया तो ४।२३।२८।१८ यह भावलग्न स्पष्ट हुआ॥

हे द्विजश्रेष्ठ ! अब हम 'होरालग्न' कहते है, २॥–२॥ घटी मे १–१ लग्न का भोग होता है। इष्ट घटी को २ से गुणा करके ५ का भाग देकर लब्धाक को प्रात सूर्य मे युक्त करने से 'होरालग्न स्पष्ट होता है॥४॥५॥

उदाहरण–

इष्टघटी १०।०० को द्विगुण किया तो २०।०० हुआ ५ का भाग दिया तो लब्ध ४ राशि को प्रात सूर्य मे युक्त किया तो ६।२३।२८।१८ 'होरालग्न' स्पष्ट हुआ।

पुनरन्यद्व घटीलग्न कल्पनीय द्विजोत्तम ॥ सूर्योदयात् समारम्य जन्मकालावधि स्फुटम् ॥६॥
एकैकघटिकामान लग्न यद् भादिक भवेत् ॥ तदेव घटिकालग्न कथित नारदादिभि ॥७॥
घटीतुल्या राशयस्तु पलार्द्धप्रमिताशका ॥ योज्याश्चौदयिके-सूर्ये 'घटीलग्न' स्फुट भवेत् ॥८॥
क्रमादेषा हि लग्नाना भावकुण्डलिका लिखेत् ॥ ये ग्रहा यत्र ते तत्र स्थाप्या वै गणितागता ॥९॥
वर्णदाख्यदशा भाना कथयामि तवाग्रत ॥ यस्या विज्ञानमात्रेण ज्ञेयमायुर्भव फलम् ॥१०॥
ओजलग्नप्रसूताना मेषादेर्गणयेत् क्रमात् ॥ समलग्न प्रसूताना मीनादेरपसव्यत ॥११॥

हे द्विजोत्तम ! अब तुमको तीसरे 'घटीलग्न की कल्पना करनी चाहिये। सूर्योदय से जन्मसमय का इष्टकाल जो घटीपल इष्ट है वही राशि अशरूप मे घटीलग्न है ऐसा नारद आदि का मत है। इसमे घटी अक राशि है और पलाक का द्विगुण अक अश' होता है, प्राप्त राशि अश को प्रात कालीन सूर्यस्पष्ट मे युक्त करने से घटी लग्न के राशि अश आदि स्पष्ट होते है॥६–८॥

उदाहरण–

इष्ट १०।०० यहा १० यह राशि अक है पल नही होने से अशादि वही रहा तो राशि मे १२ से भाग देने पर २।२३।२८।१८ यह घटी लग्न स्पष्ट हुआ॥

इन (भाव होरा घटी) लग्नो से कुडली बनाकर जो ग्रह जिस राशि मे हो उसी राशि मे लिखे। अब हम वर्णद दशा कहते है, जिसके ज्ञान से आयुभर का शुभाशुभ फल जाना जाता है। विषम राशि मे लग्न हो तो मेष आदि से क्रम से गिनना चाहिये और सम राशि मे लग्न हो तो मीन राशि से उलटे क्रम से गिनना चाहिये॥११॥

एव मेषादिमीनादि जन्मलग्नान्त मेव हि ॥ तथैव होरालग्नान्त गणनीय द्विजोत्तम ॥१२॥
ओजत्वेन समत्वेन साजात्यमुभय यदि ॥ तर्हि सख्ये योजनीये वैजात्ये विपोजयेत् ॥१३॥
मेष मीनादितो ज्ञात्वा यो राशि स तु वर्णद ॥ प्रयोजन च वक्ष्येऽह् शृणु त्व द्विजपुगव ॥१४॥
होरा लग्नभयोर्नेया सबलाद् 'वर्णदा' दशा ॥ यत् सख्यो वर्णदो राशि तत्तत् सख्या क्रमेण तु ॥१५॥
क्रम व्युत्क्रम भेदेन दशा स्यादोज–युग्मयो ॥ भावहोरादि लग्नाना सर्वत्रैव समानता ॥१६॥
जन्मलग्नन्तुस्वस्वीय देशोद्भूवमितीरितम् ॥ मीनाद्यपसव्यमार्गेण गणनीय प्रयत्नत ॥१७॥

यल्लब्धंमन्तिमो राशिस्तद्राशिर्वर्णदो भवेत् ॥ वर्षसंख्यां विजानीयाच्चरपर्यायप्रमाणतः ॥१८॥
होरालग्नभयोर्नेया सबलाद्वर्णदा दशा ॥ यत्संख्या वर्णदा लग्नात्तत्र संख्या क्रमेण तु ॥१९॥
क्रमव्युत्क्रमभेदेन दशा स्यादोजयुग्मयोः ॥ वर्णदा राशिमेषादि मीनादि गणयेत्क्रमात् ॥२०॥
वर्णदा स्यात्त्रिकोणे च पापयुक् पापराशिकः॥ पापयोगकृते विप्र दशापर्यन्तजीवनम् ॥२१॥

हे द्विजोत्तम ! इस प्रकार मेष आदि से (क्रम से) और मीन आदि से (उलटे क्रम से) जन्म लग्न तथा होरा लग्न तक गिनकर भिन्न भिन्न सख्या लेना। पश्चात् यदि होरा लग्न और जन्मलग्न दोनो ही सम या दोनो ही विषम हो तो इन सख्याओ का योग करे। और यदि एक सख्या सम और दूसरी विषम हो तो दोनो का अन्तर करे। इस प्रकार योग अथवा अन्तर करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह यदि विषम हो तो मेष से क्रम से और सम हो तो मीन से व्युत्क्रम से गिनकर जो राशि प्राप्त होती है, वही 'वर्णद' राशि है। होरालग्न तथा जन्मलग्न मे जो बलवान् हो उससे 'वर्णद' दशा ग्रहण करना। 'वर्णद' राशि की जो सख्या सम, विषम है, उसके अनुसार क्रम व्युत्क्रम भेद से दशा ग्रहण करना चाहिये। भाव, होरा तथा घटी लग्न सर्वत्र समानरूप से मानना (अर्थात् देशभेद से भेद नही होता) और जन्म लग्न अपने अपने देश (स्थान) के अनुसार विभेद होता है तो परस्पर घटाने से शेष सख्यात्मक अक मीनादि अपसव्यमार्ग से गिनने पर वर्णद राशि होती है।। इस प्रकार जो अंतिम राशि प्राप्त होती है वह वर्णद राशि है। उस राशिकी दशाके वर्षो की सख्या 'चरपर्या' दशा के अनुसार लेना। जन्मलग्न तथा होरालग्नमे जो बलवान् हो उससे वर्णददशा लेना।वर्णददशाकी जो विषम या सम सख्या हो उसके अनुसार क्रम से तथा व्युत्क्रम से मेषादि और मीनादि क्रम से गणना करना।। यह वर्णद राशि त्रिकोण मे पडे और पापग्रह की ही राशि हो और पापग्रहयुक्त हो तो उस दशा तक ही जातक का जीवन जानना ॥१२–२१॥

उदाहरण–

जन्मलग्न–६।१६।१७।१९ । होरालग्न –६।२३।२८।१८, दोनो ही विषम राशि हैं, अत मेष से क्रम से गणना किया तो ७–७ हुई, प्राप्त दोनो सख्या विषम (सजातीय) है, अत योग किया तो १४ हुआ, १२ से भाग दिया तो '२' यह 'वृष' वर्णद राशि प्राप्त हुआ।

तद्रशूले यथैवायुर्निर्विशके द्विजोत्तम ॥ वर्णदा सप्तमाद्राशेः कलत्रायुर्विचिन्तयेत् ॥२२॥ पञ्चमे तनयस्यायुर्मातुः स्यात्तुर्यपंचके ॥ तृतीये भ्रातुरायुः स्याज्ज्येष्ठभ्रातुर्भवेद्द्विज ॥२३॥ पितुस्तु नवमान्मातुः पञ्चमाद्वर्णदस्य तु ॥ शूलराशिदशायां वै प्रबलायामरिष्टकम् ॥२४॥ एवं तन्वादिभावानां कारयेद्वर्णदा दशा ॥ पूर्ववच्च फलं ज्ञेयं द्विजोत्तम शुभाशुभम् ॥२५॥ ग्रहाणां वर्णदा नैव राशीनां वर्णदा दशा ॥ ग्रहारूढपदत्वेन चिंतयेद्ग्रहवर्णदा ॥२६॥ दशाया अन्तरं कार्यं भानुभागं प्रदापयेत् ॥ चरस्थिरदशाया वै वर्णदायास्तथैव च ॥२७॥ यल्लब्ध्वा पूर्वमब्दानां भानुभागं च कारयेत् ॥ क्रमव्युत्क्रमभेदेन सन्निलेद्वै दशांतरम् ॥२८॥ पूर्णायां कारकस्यैव केंद्रस्थानां दशा भवेत् ॥ ततः पणफरस्थानामापोक्लिमदशां ततः ॥ जन्मांग जन्मलग्न च काल होरा प्रशस्यते ॥२९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावसप्रादिकथन नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

रुद्र, शूल दशा के अनुसार ही कष्टकारी जानना। वर्णद के सप्तम भाव मे जातक की स्त्री की आयु देखना॥ पञ्चम से पुत्र की, और चतुर्थ से माता की आयु देखना। तीसरे से छोटे भ्राता की आयु देखना, ग्यारहवे से बडे भाई की॥ माता से पचम अथवा जातक के वर्णद से नवम से पिता की आयु का विचार करना। प्रवल शूल राशि की दशा मे अरिष्ट होता है॥ इस प्रकार तन्वादि १२ भावो की वर्णदा दशा देखनी चाहिये। और हे द्विजोत्तम! पहिले उक्त प्रकार ही शुभाशुभ फल जानना॥ यह वर्णदा दशा ग्रहो की नही होती, केवल राशियो की ही होती है। क्योंकि ग्रहो के स्थित होने के स्थान राशियाँ ही है, अत ग्रहो का ही फल देनेवाली यह 'वर्णदा' दशा है॥ इस दशा की अतर्दशा बनाने के लिये प्रत्येक भाग की दशा के १२ भाग करना। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियो मे अन्तर्दशा निकालना॥ पूर्वोक्त जो दशावर्ष आये है, उनके द्वादशाश अन्तर दशा होती है॥ इसी प्रकार केन्द्रादि दशा का प्रकार जानना, प्रथम कारक होने से केन्द्रस्थ की दशा बाद पणफरस्थ की और बाद आपोक्लिमस्थ की दशा जानना। जन्मलग्न शरीर है, होरा समय है, यह तत्त्व है॥ वर्णददशा समाप्त ॥२२-२९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखडे काल्पनिक होरालग्नादि कथन नाम दशमोऽध्याय ॥१०॥

अथाऽऽरूढमाह

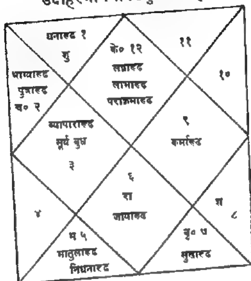
अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यारूढपद द्विज ॥ राशीना द्वादशाना तु यावदीशाश्रयो भवेत् ॥१॥ सख्या स्वीशोवधावग्रे समाप्ता तत्पद वदेत् ॥ राशिवद्ग्रह आरूढ ज्ञायते गणकैर्जनैः ॥२॥ यावद्दूर यस्य राशिस्तावत्सख्या क्रमेण वै ॥ अग्रे खगारूढपद ज्ञायते द्विजसत्तम ॥३॥ जनुर्लग्नाल्लग्नस्वामी यावद्दूर हि तिष्ठति ॥ तावद्दूर तदग्रे च लग्नारूढ च कथ्यते ॥४॥ यदि लग्नेश्वर. स्वर्क्षे कलत्रे सस्थितोऽथवा ॥ आरूढलग्नमित्याहुर्जन्मलग्न द्विजोत्तम ॥५॥ एव तन्वादिभावाना भावारूढपद भवेत् ॥ यत्र यत्र ग्रहा लग्ने तत्र तत्र सुसलिखेत् ॥६॥

आरूढपद

हे मैत्रेय! अब मैं राश्यारूढपद कहता हू। १२ राशियो का तो वही आरूढ स्थान होता है कि राशि का स्वामी राशि से जितनी राशि पर हो उतनी सख्या पर की अगली राशि उस राशि का आरुढपद होता है॥ राशि के स्वामी से आगे की उतनी ही सख्या 'पद' जानना, इस प्रकार राशि के समान ही ग्रह का भी आरूढ पद होता है॥ (ग्रह मे) जिस ग्रह की राशि अपने से जितनी सख्या पर हो उससे आगे उतनी ही सख्या पर जो राशि होती है वह ग्रहारूढपद कही जाती है॥ जातक के लग्न से लग्न का स्वामी जितनी दूर पर स्थित है, उससे उतनी सख्या पर आगे की राशि लग्नारूढ पद कहाती है॥ हे मैत्रेय! यदि लग्नेश्वर जन्मलग्न मे अथवा सप्तम मे हो तो जन्मलग्न ही आरूढपद कहाता है॥ इसी प्रकार लग्न आदि बारहो भावो का पद (आरूढलग्न) जानना। लग्न मे जिस जिस स्थान पर ग्रह हो वहा वहा पर

लिखे॥ पश्चात् उपर्युक्त रीती से तत् तत् भावो का आरूढ पद तत्तत् स्थानो मे लिखे ॥१-६॥

उदाहरणार्थमारूढकुंडलीमाह



पराशर उवाच

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि तन्वारूढफल द्विज ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते कर्मसूचक ॥७॥
यावदीशास्त्वय राशिरित्युक्त मुनिभि पुरा ॥ पदमारूढसंज्ञ हि तदारूढ्यविधि
द्विज ॥८॥

अथैकादशस्थानमाश्रित्य फलमाह

यदादेकादशे स्थाने शुभग्रहयुतेक्षिते ॥ लक्ष्मीवाञ्जायते बाल प्रभावाञ्छीलसयुत ॥९॥
वित्तोपार्जनन्यायेन नीतिवाञ्जायते सदा ॥ नगो न नास्तिको नून न तु शास्त्रविरुद्धकृत्
॥१०॥ यदादेकादशे विप्र पापखेटयुतेक्षिते ॥ अन्यायोपार्जित वित्त विरुद्ध शास्त्रमार्गत
॥११॥ मिश्रैर्मिश्रफल ज्ञेयमुच्चमित्रादिखेचरा ॥ बहुधा जायते लाभो यत्र यत्र द्विजोत्तम
॥१२॥ आरूढाल्लाभभवन पश्यति न व्ययम् ॥ यस्य जन्मनि सोऽपि स्यात्प्रयत्नो
घनवानपि ॥१३॥ दृष्टग्रहाणा बाहुल्ये तदा दृष्टग्रहतुल्यगे ॥ मार्गते चापि तत्रापि
बहुर्गलमभागमे ॥१४॥ शुभग्रहार्गले तत्र तत्राप्युच्चग्रहार्गले ॥ गुणानि स्वामिना दृष्टे
लग्नभाग्याधिपेन वा ॥१५॥ ज्ञानस्य पुस प्राबल्य निर्दिशेद्गुणगोचरम् ॥ उत्पयोगेषु तेदा
द्वादश तु न पश्यति ॥१६॥

लग्नारूढफल

हे मैत्रेय ! अब हम लग्नारूढ का फल कहते है। जिसके ज्ञान से कर्म का सूचित करनेवाला होता है।। यह राशि अपने स्वामी की सख्या तक होती है, ऐसा प्राचीन महर्षि लोग कहते है। इसीलिये उससे आरभ करके उतने ही आगे और जाने पर वह स्थान होता है॥७॥८॥

एकादश स्थान का फल

आरूढपद से एकादशस्थान शुभग्रह से युक्त हो तो जातक प्रजावान्, लक्ष्मीवाला और सुशील होता है।। वह न्याय से धन का उपार्जन करनेवाला नीतिनिपुण होता है, न तो नास्तिक होता है और न शास्त्रविरुद्ध कार्य करता है॥ हे मैत्रेय ! पहले एकादश स्थान मे यदि पापग्रह युक्त या देखते हो तो अन्याय से उपार्जन करता है और शास्त्रविरुद्ध कर्म करता है।। इसी प्रकार सौम्य पाप उभययोग से मिश्रित फल जानना। यदि उस स्थान मे उच्च या मित्र आदि मे ग्रह स्थित हो तो हे मैत्रेय! उस जातक को जहा तहा बहुत प्रकार से लाभ होता है।। सौम्यग्रह लाभस्थान को तो देखता हो और व्ययस्थान को नही देखता हो तो भी जातक बहुत धनवान होता है।। यदि एकादशस्थान को अनेक ग्रह देखने वाले हो जिनमे कोई शत्रुराशि मे हो, कोई उच्चराशि मे हो, अर्गला होने पर भी अनेक अर्गला योग का समावेश हो, कोई शुभग्रहजनित अर्गला हो, कोई उच्च राशिगत ग्रहजनित अर्गला हो, ऐसे अनेक अर्गला हो, स्थान स्वामी की दृष्टि हो अथवा लग्न या भाग्येश की दृष्टि हो और इन उक्त योगो मे द्वादशभाव को न देखते हो तो सुख की बहुलता योगानुयोगक्रम से उत्तरोत्तर भाग्य की प्रबलता कहनी चाहिये॥९ ~ १६॥

अथ द्वादशराशिमाश्रित्य फलमाह

पदारूढे व्यये विप्र शुभपापयुतेक्षिते ॥ बाहुल्यव्ययमित्येव विशेषोपार्जनात्सदा ॥१७॥
शुभग्रहे सुमार्गेषु कुमार्गात्पापखेचरैः ॥ मिश्रैर्मिश्रफल वाच्य यथालाभेषु पूर्ववत् ॥१८॥
पदारूढे व्यये शुक्रे भानुस्वर्भानुवीक्षिते ॥ राजमूलाद्धनव्यय वाच्य चन्द्र दृष्ट्या विशेषतः ॥१९॥
पदारूढे व्यये सौम्ये शुभखेटयुतेक्षिते ॥ ज्ञातिमध्ये व्ययो नित्य पापदृक्कलहाद्धनव्ययः ॥२०॥
पदव्ययेऽसुराचार्ये वीक्षिते चान्यखेचरैः ॥ करमूलाद्धव्यय वाच्य करव्याजेन वै द्विज ॥२१॥
आरूढे द्वादशे सौरे धरापुत्रेण सयुते ॥ अन्यग्रहेक्षिते विप्र भ्रातृमूलाद्धनव्ययम् ॥२२॥ पदेषु
द्वादशे स्थाने ये योगास्तान्वदाम्यहम् ॥ लाभभावेषु ये योगा लाभयोगकराः सदा ॥२३॥ पदेषु
सप्तमे राहुरथवा सस्थितः शिखी ॥ कुक्षिव्यथायुतो बालः शिखिना पीडितोऽधिकम् ॥२४॥
पदे च सप्तमे केतुः पापखेटयुतेक्षिते ॥ साहसी श्वेतकेशी च दीर्घलिगी भवेन्नरः ॥२५॥ पदे च
सप्तमे स्थाने गुरुशुक्रनिशाकराः ॥ एको द्वयं त्रय तत्र लक्ष्मीवान्कारयेद् ध्रुवम् ॥२६॥ तुंगर्गे
सप्तमे खेटे शुभो वाप्यशुभः पदे ॥ धीमान्सोऽपि भवेन्नूनं सत्कीर्तिसहितो द्विज ॥२७॥ ये
योगाः सप्तमे भावे राज्ञादिकथिता मया ॥ ते योगा धूनषष्ठ्यन्स्या वित्तभावे च
सद्द्विज ॥२८॥

द्वादश राशि (बारहो भाव) का फल

शुभ तथा पापग्रह दोनो प्रकार के ग्रहो से व्ययारूढ पद युक्त तथा दृष्ट हो तो बहुत खर्च होता है और आय भी बहुत होती है॥ शुभग्रह युक्त दृष्ट हो तो सुमार्ग मे और पापग्रहो से कुमार्ग मे व्यय होता है॥ दोनो प्रकार के ग्रहो से फल भी दोनो प्रकार का होता है॥ लाभस्थान के समान ही यहा भी जानना॥ पदारूढ के व्ययभाव मे शुक्र हो सूर्य राहु देखते हो तो राजसम्बन्ध से खर्च हो चन्द्र दृष्टि हो तो विशेष हो॥ व्यय पदारूढ मे सौम्यग्रह हो, अन्य शुभग्रह भी देखते हो तो अपने बन्धु वर्ग मे व्यय हो पापग्रह की दृष्टि से कलह (लड़ाई–झगड़ा) के कारण व्यय हो॥ व्ययपद म (गुरु) शुक्र हो तथा अन्यग्रह भी देखते हो तो कर (टैक्स) के कारण खर्च होता है (कर के रूप मे धन व्यय होता है।) द्वादश आरूढ मे शनि हो तथा मगल भी हो एव और ग्रह भी देखते हो तो भ्राताओ के कारण धन व्यय होता है॥ द्वादश आरूढपद के और जो योग है उनका कथन करत है॥ लाभभाव मे जो लाभयोगकारी योग है॥ सातवे आरूढपद मे राहु अथवा केतु हो तो बाल्य अवस्था मे कुक्षि (कॉख) व्यथा से युक्त हो॥ केतु से अधिक कष्ट जानना॥ तथा सप्तम पद मे केतु हो और पापग्रहो से युक्त तथा दृष्ट हो तो असमय मे बाल सफेद हो जावे तथा असम साहसी और दीर्घेन्द्रियवाला हो॥ सप्तम पद मे चन्द्र गुरु शुक्र इनमे से एक दो या तीनो हो तो उत्तरोत्तर (योगानुसार) लक्ष्मीवान् निश्चय होता है॥ हे मैत्रेय ! शुभग्रह उच्च राशि का होकर सप्तम आरूढ पद मे हो ग्रह शुभ हो अथवा अशुभ हो किन्तु जातक कीर्तियुक्त धनी होता है॥ हे द्विजश्रेष्ठ ! हमने सप्तम भाव मे राहु आदि ग्रहो के जो शुभाशुभ योग कहे है वे सब योग द्वितीयभाव से भी समझना॥१७–२८॥

उच्चो वाय हिरण्य वा जीयो वा शुभ एव वा ॥ एको बली धनगत श्रियदिशति देहिन ॥२९॥ ये योगाश्च पदे लग्ने यथावद्गदतो मम ॥ कारकाशस्य कुण्डल्या निर्वाधिका विचिन्तयेत् ॥३०॥ आरूढादष्टमे पापे सौरे स्याच्छुभवर्जित ॥ तथा वित्तालये पापे पूर्ववज्जायते फलम् ॥३१॥ आरूढाद्वितीये सौम्ये सर्वदेशाधिपो भवेत् ॥ सर्वज्ञो यदि चेन्न स्यात्कविर्वादी च भार्गव ॥३२॥ आरूढात्केन्द्रकोणेषु तथा लाभपदे द्विज ॥ लग्नसप्तमराशयग्नौ सबले खेट सयुते ॥३३॥ श्रीमांश्च जायते नून देशे विख्यातिमान् भवेत् ॥ षष्ठोऽष्टमे व्यये स्थाने श्रीमान्स न भवेत्कवा ॥३४॥ पदाल्लग्ने सप्तमे वा केन्द्रे त्रिकोणोपचये ॥ शुभवीर्यसस्थिते खेटे भार्याभर्तृसुखप्रद ॥३५॥ एव लग्नपदाद्विप्र पुत्रभावादि चिन्तयेत् ॥ मित्रामित्रे विजानीयाद्व्ययभावेषु वै द्विज ॥३६॥ षष्ठाष्टमे व्यये खेटस्तत्तद्भावेषु तिष्ठति ॥ यद्यद्भावेषु यद्वैर लग्नारूढे विचिन्तयेत् ॥३७॥ लग्नारूढ दारपद मिथ केन्द्रगत यदि॥ लाभे वापि त्रिकोणे वा तथा राजधराधिप ॥३८॥ आरूढ पुत्रमित्रैस्तु त्रिलाभकेन्द्रगो यदि ॥ द्वयोर्मैत्री त्रिकोणेषु साम्य द्वेषोऽन्यथा भवेत् ॥३९॥ एव दारादि भावानामर्थयित्वारिमित्रता ॥ जातकद्वयमालोक्य चिन्तनीय विचक्षणै ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आरूढफलकथन नाम एकादशोऽध्याय ॥११॥

उच्चग्रह होने से सुवर्ण की प्राप्ति तथा गुरु या शुभग्रह हो तथा एक भी ग्रह बलवान् होकर द्वितीय पद मे होने से जातक को धन की प्राप्ति कराते है॥ जो योग हमने आरूढ पद मे कहे है वे योग पूर्वोक्त कारकांश कुण्डली मे भी निर्वाधरूप से समझना॥ आरूढ लग्न से अथवा शनिसे शुभयोगरहित पापग्रह हो,द्वितीयभाव मे भी पापग्रह हो तो धन हानि होती है। आरूढ पद से द्वितीयभाव मे सौम्यग्रह हो और शुक्र न हो तो सर्वदेशाधिपति तथा सर्वशास्त्रपारगामी होता है।। आरूढ से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान में लग्न तथा सप्तम राशि नवांशमे बलवान् शुभग्रह हो तो जातक श्रीमान्, देश मे विख्यात होता है। किन्तु ६।८।१२ स्थान मे यह योग होने से धनी नही होता॥ आरूढ पद से सप्तम स्थान या लग्न मे, केन्द्र, त्रिकोण या उपचय स्थान मे बलवान् ग्रह स्थित हो तो पुरुष को स्त्री का तथा स्त्री को सौभाग्य का अखण्ड सुख होता है।। हे मैत्रेय! इसी प्रकार लग्नारूढ पद से भी पुत्रभाव आदि स्थान मे ग्रहस्थिति विचार करना॥ बारहों भावो मे मित्र, शत्रु आदि का भी विचार करना॥ इसी तरह छठे, आठवें, बारहवें भाव मे जो ग्रह हो उनका मित्र शत्रुभाव भी इस आरूढ लग्न मे विचार करना॥ सप्तम स्थान का लग्न ही आरूढपद कहा गया है, उनके स्वामी यदि केन्द्रस्थान मे हो (चतुर्थ दशम मे) अथवा लाभ या त्रिकोण स्थान मे हो तो राजाधिराज होता है ॥ लग्नारूढ यदि तीसरे,ग्यारहवें या केन्द्रमें हो तो पुत्र मित्र युक्त होता है।। त्रिकोण के दोनो भावो मे परस्पर मैत्री साम्यभाव है अन्य भाव से शत्रुता है। इस प्रकार स्त्री आदि भावो की परस्पर शत्रुमित्रता जानकर ग्रह, भाव दोनो का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए ॥२९–४०॥ भाव फल समाप्त ॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया आरूढफलकथन नाम एकादशोऽध्याय

पराशर उवाच

अधुना सम्प्रवक्ष्याम्युपपद च द्विजोत्तम ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण जायते फलसूचकः ॥१॥
पदारूढाद्व्ययस्थानेपद चोपपद स्मृतम् ॥ लग्नानुचरसज्ञोपपद च द्विजसत्तम ॥२॥

उपपदस्योपपदद्वितीये वा गुणविशेषफलमाह

पापाक्रांते पापयुते पापर्क्षे पापवीक्षिते ॥ पापसबधसयोगे उपपदद्वितीयके ॥३॥ प्रव्रज्यायोगो विज्ञेयः संन्यासो भवति ध्रुवम् ॥ तथा भार्याविरोधी स्यादथवा स्त्रीविनाशकृत् ॥४॥ रवि पापत्वनास्त्येव सिहर्क्षे पापदे राति ॥ पूर्वोक्त नो फल ज्ञेय जायते गृहिणीसुखम् ॥५॥ मेषादिपापराशौ च संस्थिते दिवसाधिपे ॥ पूर्वोक्त च फल ज्ञेय प्रव्रज्यादारनाशकः ॥६॥ उपपदे द्वितीये वा शुभसबधदृष्टियुक् ॥ शुभर्क्षे शुभसयोगे पूर्वोक्तफलदो भवेत् ॥७॥ उपपदे द्वितीये वा नीचांशे नीचखेटयुक् ॥ नीचसबधयोगे वा प्रणेता दारनाशकृत् ॥८॥ उच्चांशे उच्चसंस्थे वा उच्चसबधदृष्टियुक् ॥ बहुदारा भवेयुश्च रूपलक्षणसयुताः ॥९॥ उपपदद्वितीयेपि युग्मर्क्षे मेषराशित. ॥ मिथुनेऽपि स्थिते विप्र बहुदारयुतो भवेत् ॥१०॥ उपपदे द्वितीयेपि स्वस्वामिखेटसयुते ॥ उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न सशयः ॥११॥ वृषस्थे वा तुले वापि दैत्येज्ये दारकारके ॥ अन्यराशौ च वा विप्र निर्दार उत्तरायुषि ॥१२॥ स्वराशौ

सस्थिते खेटे नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तरायुषि निर्दारो भवत्येव न सशय ॥१३॥
उपपदेशोपि तुगर्क्षे नित्याख्ये दारकारके ॥ उत्तमकुलाद्दारलाभो नीचस्थेऽपि विपर्यय ॥१४॥
शुभसबधयुक् दृष्टे उपपदे दारकारके ॥ सुदरी लभ्यते भार्या भव्या रूपवती द्विज ॥१५॥
सबधे शनिराहुभ्यामुपपदे च शनिर्द्विज ॥ निर्दारकारके वापि शनिराहुयुतेक्षिते ॥१६॥ अथ
वादयुतो विप्र भार्यया सहितो द्विज ॥ स्त्रीविनाशो भवेन्नून तथा स्त्रीपरित्यागवान् ॥१७॥
उपपदे च सयुक्तौ शिखिशुक्रौ द्विजोत्तम ॥ रक्तप्रदररोगार्ता जायते तस्य भामिनी ॥१८॥
उपपदादिषु सयोगे बुधकेत्वोर्द्विजोत्तम ॥ अस्थिस्रावयुता बाला गृहे तस्य न सशय ॥१९॥
रवौ राहुस्तथा पगुरुपपदे योगकारक ॥ अस्थिज्वरक्षती बाला तन्वागा च दिवानिशम्
॥२०॥ उपपदे बुधकेतुभ्या योगसबधके द्विज ॥ स्थूलागी गृहिणी तस्य जायते मात्र सशय
॥२१॥ उपपदे बुधक्षेत्रे भौमर्क्षे चाथवा द्विज ॥ मदारौ सस्थितौ तत्र प्राणरोगार्तिपित्तयुक्
॥२२॥ सौम्यारौ चान्यक्षेत्रे वा उपस्थिये शनिर्युते ॥ कर्णरोगवती बाला नेत्ररोगयुता तथा
॥२३॥ कुजसौम्यौ चान्यक्षेत्रे उपपदे द्विजोत्तम ॥ योगे स्वर्भानुदेवेज्यौ दतार्ता गृहिणी भवेत्
॥२४॥ उपपदे तु कन्याख्ये अन्यर्क्षेऽपि तया द्विज ॥ शनिस्वर्भानुयोगाच्च पगवगी तस्य भामिनी
॥२५॥ ये योगा पूर्वकथिता मया ते विप्रसत्तम ॥ शुभयुक् दृष्टिरायोगे न भवेयु फलप्रदा
॥२६॥ लग्नादुपपदाद्वापि यो राशि सप्तमो द्विज ॥ तत्रवाना राशयोगा स्वसप्तमलदशका
॥२७॥ तत्र पापे स्थिते दृष्टे उक्तयोगफल विदु ॥ शनि शुक्रस्तथा चाद्रि सप्तमांशग्रहेषु च ॥
त्रिकयोगकृते विप्र अपत्यरहितो नर ॥२८॥ पदोपपदलग्नेषु पुत्रकारके द्विज ॥ पचमस्थे गुरौ
भानौ तत्र स्वर्भानुयोगकृत् ॥२९॥ बहुपुत्रो भवेन्नून प्रतापी बलवीर्ययुक् ॥ प्रचडविजयी विप्र
रिपुनिग्रहकारक ॥३०॥ उक्तस्थाने निशानाथे एकपुत्रो भवेद्द्विज ॥ उक्तस्थाने शुभे पापे
पुत्रसौख्य विलबितम् ॥३१॥

उपपदफल विचार

हे मैत्रेय! अब उपपद का कथन करते है कि–जिसके स्थान से जातक मे फल का ज्ञान होता है॥ पदारूढ लग्न के १२ बारहवे स्थान के आरूढ की पद या उपपद सज्ञा है। (पदारूढ शब्द से यहा लग्न समझना अर्थात पद व्यत्यय करके आरूढ पद अर्थात आरूढपद अर्थात का पद=कारण=जन्म लग्न) लग्न का अनुचर (पीछे वाला) सज्ञक होने से इसका नाम 'उपपद' है॥ उपपदस्थ उपपद द्वितीय भाव का फल–उपपद के द्वितीय स्थान मे पापराशि हो, पापग्रहयुक्त हो, पापग्रहो स (उभयत) आक्रान्त हो पापग्रहो से या ग्रह से दृष्ट हो, पापग्रहो से परम्परा सयोग हो तो ॥ घर से विरक्तिभाव होकर निश्चय ही सन्यास होता है। भार्या से विरोध हो अथवा स्त्रीका मरण हो जावे॥ यहा (इस प्रकरण मे) सूर्य सिह मे पापराशि मे होने पर भी क्रूरग्रह नही माना जाता। अत सूर्य योग हो तो पूर्वोक्त फल नही होता, प्रत्युत भार्या का सुख रहे ॥ (सिहराशि स भिन्न) मेष आदि पापराशियो पर सूर्य पूर्वोक्त फल सन्यास, भार्या की हानि है॥ आरूढलग्न अथवा आरूढ से द्वितीय मे शुभराशि, शुभग्रह का योग और शुभग्रह की दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तो पूर्वोक्त फल (अनुपद मे जो सूर्य के सबन्धमे कहा है) भार्या का सुख रहेगा॥ (यहा पूर्वोक्त फल पद मे प्रव्रज्या दारनाश अर्थ नही लेना क्योंकि आगे श्लोक २६ मे स्पष्ट कहा है, उससे विरोध होगा) उपपद द्वितीय मे नीचाश तथा

नीचग्रह युक्त हो तथा नीचग्रह से ही दृष्टयादि सम्बन्ध हो तो विवाहित स्त्री की मृत्यु होती है।। उच्चांश हो और उच्चराशिगत ग्रह हो, उच्चग्रह की दृष्टि हो तो रूपलावण्ययुक्त अनेक स्त्री प्राप्त हो।। उपपद द्वितीस्थान मे युग्मराशि (मेषादि गणना से समराशि) हो तो भी अनेक भार्या होती हैं और यही फल मिथुन राशि मे भी जानना।। (इस वचन से युग्मराशि तथा मिथुन अर्थात् वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन इतनी राशि समझनी चाहिये)।। उपपद द्वितीय मे भाव की राशि का स्वामी ग्रह ही स्थित हो तो उत्तर आयु (प्रौढ अवस्था) मे तो स्त्री की हानि होती ही है।। स्त्रीकारक होकर शुक्र यदि वृष या तुला राशि मे हो अथवा अन्य (उच्च, मित्रराशि) मे हो तो भी प्रौढ अवस्था मे तो स्त्री की हानि होती है।। स्थिरकारको मे दारकारकग्रह स्वराशि मे स्थित हो तो भी प्रौढ अवस्था मे स्त्री की हानि होती है।। उपपद का स्वामी उच्चराशि मे हो और वही स्थिर 'दारकारक' हो तो उत्तम कुल से स्त्री का लाभ होता है। और नीचस्थ हो तो नीच कुल की स्त्री प्राप्त होती है।। हे मैत्रेय! शुभ दृष्टियुक्त दारकारक उपपद मे हो तो अति रूपवती श्रेष्ठ भार्या प्राप्त होती है।। उपपद मे शनि हो या शनि राहु से सम्बन्ध हो या 'दारकारक' रहित होकर शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो भार्या से सदा विद्वेष रहे अथवा स्त्री की हानि हो या स्त्री का परित्याग करनेवाला हो।। हे मैत्रेय! उपपद मे केतु शनि हो तो उसकी स्त्री को रक्तप्रदर की बीमारी रहे।। यदि उपपद मे बुध केतु हो तो उसकी भार्या को 'अस्थिस्राव' (हड्डी का क्षीण होना) की बीमारी हो।। उपपद मे सूर्य, राहु तथा शनि का योग हो तो जातक की भार्या अस्थिगत ज्वर रोग वाली होती है, दिनरात शरीर गर्म रहता है।। उपपद मे बुध, केतु का योग हो तो स्त्री स्थूल शरीरवाली होती है।। उपपद मे बुध की राशि हो या मंगल की राशि हो और शनि मंगल स्थित हो तो प्राणांत कष्ट देनेवाली पित्त की बीमारी होती है।। शनि मंगल अन्यराशि मे होकर सम्बन्ध करते हो अथवा शनि उपपद मे हो तो कान तथा आंख के रोगवाली होती है।। मंगल, बुध, अन्यस्थान मे सम्बन्धित हो उपपद मे गुरुराहु हो तो स्त्री दंतरोगवाली होती है।। उपपद मे कन्या राशि हो या अन्य (मिथुन) राशि हो, शनि राहु का योग हो तो भार्या पंगु (एकपाद विकल) होती है।। हे विप्रवर! हमने जो योग (दुर्योग) कहे है, उनमे यदि शुभग्रह की दृष्टि अथवा योग हो तो पूर्वोक्त बुरा फल नही होता है।। आरूढ लग्न और उपपद से जो सप्तम राशि है, उसमे जो नवांश है, वह और उससे सप्तम नवांश मे यदि पापग्रह हो या पापदृष्ट हो तो भी उक्तयोग भार्या सम्बन्धी फल जानना। शनि, शुक्र तथा बुध ये यदि सप्तम राशि के नवांश मे हो तो इन तीन ग्रहो के योग के फल से जातक सन्तान–रहित होता है।। जन्मलग्न,आरूढलग्न तथा उपपद मे पुत्र कारक युक्त, गुरु, सूर्य, राहु ये पञ्चमभाव मे हो या गुरु, सूर्य स्थित और राहु योग करता हो तो निश्चय ही बहुत पुत्र होते है, जातक प्रतापी बलवान तथा विजीय एवं शत्रुओ को जीतनेवाला होता है।। उक्त स्थान मे चन्द्रमा हो तो एक पुत्र होता है और सौम्य–पाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो विलम्ब से पुत्र सुख होता है ।।१३-३१।।

उक्तस्थाने कुजार्किभ्यां जायते च ह्यपुत्रवान् ॥ परपुत्रयुतो वापि सहोदरसुतवान् भवेत् ॥३२॥
उक्तस्थाने चौजराशौ बहुपुत्रप्रदो भवेत् ॥ मिथुने युग्मराशौ चेत्स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ॥३३॥

ग्रहक्रमात्कुक्षिसंज्ञे तदीशं पंचमांशतः ॥ सिंहाधीशे रवौ विप्र स्वल्पापत्यो भवेन्नरः ॥३४॥ उपपदे सिंहलग्ने निशानाथयुतेक्षितः ॥ स्वल्पप्रजो भवेद्विप्र तथा कन्याप्रजो भवेत् ॥३५॥ सुतभावनवांशाच्च तथापि पुत्रकारकात् ॥ यद्वा त्रिंशांशकुंडल्यां पंचमांशात्तदा द्विज ॥३६॥ तदीशाच्चिंतयेद्विप्र संततेर्योगमुत्तमम् ॥ एवं सर्वप्रकारेण चिंतनीयं सदा बुधैः ॥३७॥ उपपदे शनी राहुर्भ्रातृस्थौ भ्रातृनाशदौ ॥ एकादशे ज्येष्ठभ्रातुस्तृतीये च कनिष्ठकम् ॥३८॥ उपपदैकादश स्थाने तृतीये दानवेज्यके ॥ व्यवहितार्थनाशः स्यात्तथा सम्भवति द्विज ॥३९॥ लग्ने वापि लये वापि दैत्याचार्ययुतेक्षिते ॥ व्यवहितांगनाशः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥४०॥ तृतीयैकादशे विप्र कुजेज्यबुधचंद्रमाः ॥ भ्रातृबाहुल्यता वाच्या प्रतापी बलवत्तरः ॥४१॥ शनेरसंयुते दृष्टे तृतीयैकादशे द्विज ॥ कनिष्ठज्येष्ठयोर्नाशं भिन्नस्थे भिन्नभावहृत् ॥४२॥ भ्रातृस्थाने युते सौरौ लाभस्थे वा तृतीयगे ॥ स्वस्य माता स्वस्तिमती अन्यत्रश्यति वै द्विज ॥४३॥ तृतीयैकादशे केतुर्बाहुल्यं भगिनीसुतम् ॥ भ्रातृस्वल्पसुखं तस्य निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥४४॥ सप्तमे द्वादशे स्थाने सैंहिकेये युतेक्षिते ॥ ज्ञानवांश्च भवेद्वालो बहुभाग्ययुतो द्विज ॥४५॥ सप्तमेशाद्द्वितीयस्थे पुच्छनाथयुतेक्षिते ॥ स्तब्धवाग्जायते बालस्तथा स्खलितवाग् द्विजः ॥४६॥ आरूढे शत्रुभावस्थे पापस्थे शुभवर्जिते ॥ शुभसंबंधरहिते चोरो भवति निश्चितम् ॥४७॥ आरूढे वापि सौम्ये तु सर्वदेशाधिपो भवेत् ॥ सर्वशास्त्रज्ञ जीवः स्यात्कविर्वादी च भार्गवः ॥४८॥ आरूढेऽपि पदे वापि धनस्थे शुभखेचरे ॥ सर्वद्रव्याधिपो धीमाञ्जायते द्विजसत्तम ॥४९॥ उपपदाद्धनपो यत्र वर्तते तस्य वित्तभे ॥ पापखेचरसंयुक्ते चौरो भवति निश्चितम् ॥५०॥

उक्त स्थान मे मगल, बुध के होने से पुत्रहीन होता है। अथवा दत्तक पुत्र हो या सहोदर सुतवान् (भ्राता के पुत्र से पुत्रवाला) होता है॥ उक्त स्थान मे विषम राशि होने से बहुपुत्रवान् हो। मिथुन या युग्मराशि हो तो जातक कम सन्तानवाला होता है॥ पूर्व बताये शरीर के अंगाधिपति ग्रहों मे जो कुक्षिसंज्ञक ग्रह हो उसकी राशि के स्वामी के पचमांश मे यदि सिंहाधीश सूर्य हो तो कम सन्तान वाला जातक होता है॥ उपपद मे सिंहलग्न हो तथा चन्द्रमा युक्त अथवा दृष्ट हो तो केवल एक या दो कन्या होती है॥ पचमभाव के नवांश से तथा पुत्रकारक से तथा त्रिंशांश कुण्डली मे पचमांश के स्वामी से उत्तम सतान का योगायोग देखना चाहिये। इस प्रकार ऊपर कहे गये सर्वप्रकारों से विचार करना चाहिये॥ उपपद मे शनि, राहु, तृतीय स्थान मे हों तो भ्राता की मृत्यु करते हैं। एकादश स्थान मे ज्येष्ठभ्राता की तथा तृतीयस्थान मे कनिष्ठ भ्राता की हानि (मृत्यु) करते हैं॥ उपपद के एकादश स्थान में या तृतीय मे शुक्र हो तो दूर का तथा छिपे हुए (गुप्त) अर्थ भी जैसा सम्भव हो नष्ट होता है॥ लग्न मे या सप्तम मे शुक्र युक्त हो या शुक्र की दृष्टि हो तो गुप्तांग की हानि होती है॥ तृतीय तथा एकादश स्थान मे म०, बु० बृ० चन्द्र हो तो भाइयों की सख्या बहुत होती है और जातक प्रतापी और बलवान् होता है॥ शनि ग्रह तृतीय तथा एकादश भाव को देखता हो, स्वयं स्थित न हो तो भी बडे और छोटे भाई का नाश करता है। भिन्न राशि में हो तो भिन्न भाव की ही हानि करता है॥ शनैश्चर तृतीय या एकादश भाव मे स्थित हो अथवा (भ्रातृस्थान) मे हो तो अपनी माता सुखी रहे (जननी स्वस्थ रहे), यदि अन्य माता हो

तो नष्ट हो जावे॥ तृतीय एकादश मे केतु हो तो भगिनी पुत्रो की बहुलता हो और भाइयो का सुख कम हो यह निश्चय है। सप्तम तथा द्वादश स्थान मे राहु युक्त हो या दृष्ट हो तो जातक बडा भाग्यशाली और ज्ञानवान् होता है॥ सप्तमभाव के स्वामी से द्वितीय भाव मे केतु स्थित हो या देखता हो तो जातक गूगा या तोतला होता है॥ आरूढलग्न छठेभाव मे पापग्रह युक्त हो और शुभ सम्बन्ध रहित हो तो जातक निश्चय चोर होता है॥ आरूढलग्न मे बुध हो तो महाराजा होता है। बृहस्पति हो तो सर्वज्ञकल्प और शुक्र हो तो कवि और व्याख्याता होता है॥ आरूढलग्न मे या धनस्थान मे शुभग्रह हो तो बहु धनवान और बुद्धिमान होता है॥ उपपद स्थान से द्वितीयस्थान का स्वामी जिस स्थान मे स्थित हो उससे दूसरे स्थान मे पापग्रह हो तो निश्चय चोर होता है॥३२-५०॥

सप्तमेशाद्द्वितीये च राहुस्थे मूक एव च ॥ खलस्थितो यदा विप्र दंतानामधिक भवेत् ॥५१॥ शिखिगायातव्याधिः स्याद्धद्वास्यादस्फुटोक्तिवान् ॥ तत्र नानाग्रहैर्योगे सिद्ध फलमुदाहरेत् ॥५२॥ सप्तमेशाद्द्वितीये च छायासूनुयुते द्विज ॥ गौरः श्यामो नीलपीतो जायते बुद्धिमान्नरः ॥५३॥ अमात्यानुचराद्विप्र देवभक्ति विचिंतयेत् ॥ नीचत्वादेव नीचत्व शुभपापाच्छुभाशुभम्॥५४॥ कारकांशे पापखगैः पापांशे पापयोगकृत् ॥ पापवर्गे शुभैर्हीने जायते परजातवान् ॥५५॥ कारकांशे भवेत्पापो न नेमः परजातकः ॥ अन्येषा पापखेटाना योग घटत्वमाप्नुयात् ॥५६॥ अथवा रन्ध्रभे पापे नाम योगो विचिंत्यते ॥ शनिराहुयुतौ यत्र शनिराह्वो क्षेत्रके द्विज ॥५७॥ परजातः प्रसिद्धोऽस्ति ह्यन्येभ्यो गुप्त एव च ॥ शुभवर्गे यदा खेटो वर्गोक्तानां यथा द्विज ॥५८॥ जारजः कथनमात्रे न तु जारज इत्यपि ॥ यत्र कुत्रापि स्वोच्चे द्वौ कुलमुख्यो भवेन्नरः ॥५९॥आदिपद्कं च पर्यन्ता ग्रहाः सौख्य विचिंतयेत् ॥ सार सारमह वक्ष्ये तवाग्रे द्विजसत्तम ॥६०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे कारकमारकादिविचारकथन
नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

सप्तमेश से द्वितीयभाव मे राहु हो तो गूगा होता है॥ पापग्रहस्थित हो तो दांत अधिक होते है॥ केतु स्थित हो तो वातव्याधि हो अथवा तोतली बोलीवाला हो और अनेक ग्रह हों तो उन उन ग्रहो का भी फल जानना॥ सप्तमेश से द्वितीय स्थान मे यदि राहु हो तो मिश्रित वर्ण और बुद्धिमान् होता है॥ भातृकारक से देवभक्ति का विचार करो। नीच होने से भक्ति की हीनता और शुभपाप दोनो प्रकार के मिश्रित योग होने से मिश्रित शुभाशुभ फल होता है॥ कारकाश लग्न मे पापग्रह हो, पापनवाश मे पापग्रहो का ही योग हो तथा पापग्रहो के ही वर्ग हो तो जारज होता है॥ कारकाश मे केवल पापग्रह के योग से ही जारज नही होता, अन्य पाप ग्रहो का योग भी होना चाहिये॥ अथवा अष्टमभाव मे पापग्रह होने से भी इसका निश्चय नही किंतु शनि राहु के क्षेत्र (राशि) मे शनि राहु भी हो तो जारजरूप से दूसरे लोगो मे प्रसिद्ध रहता है॥ शुभग्रहो के वर्ग मे वर्गोक्त ग्रह हो तो कहने मात्र का जारज है, वास्तव मे नही है, जहा कही किसी भी राशि आदि मे दो ग्रह उच्च के हों तो जातक कुल मे मुख्य होता है॥ इस प्रकार आदि के छ भावो के फल कहे॥ हे मैत्रेय ! हम तुमको सार सार ही कहते हैं॥ उपपद फल समाप्त ॥५१-६०॥

इति बृ० पा० हो० शा० पूर्वखडे भावप्रकाशिकाया उपपदफलकथन
नाम द्वादशोध्याय ॥१२॥

अथ कारकमारकादिविचारमाह

पचम नवम चैव विशेषधनमुच्यते ।। चतुर्थं दशम चैव विशेष सुखमुच्यते ।।१।। चद्रभानू विना सर्वे मारके मारकाधिपा ।। षष्ठाष्टमव्ययेशास्तु राहु केतुस्तथैव च ।।२।। केद्राधिपतय सौम्या शुभ नैव दिशति च ।। क्रूरा नैवाशुभ कुर्यु कोणपौ शुभदायकौ ।।३।। धनेशो हि व्यये शश्च सयोगात्फलदौ मतौ ।। लाभारि अधिपा पापा रध्रेशो न शुभप्रद ।।४।। जायाकुटुबका-धीशौ मारकौ परिकीर्त्तितौ।। क्रूरा केद्राधिपा भूपात्क्षीणचद्रो रविस्तथा ।।५।। शनिर्भौमश्च विज्ञेया प्रबला ह्युत्तरोत्तरा ।। लग्नाबुद्यूनकर्माणि प्रबलान्युत्तराणि हि ।।६।। सुतधर्मौ तथा स्थानौ प्रबलौ चोत्तरोत्तरौ ।। लाभारित्रितयस्थाने त्वघोक्ष प्रबल भवेत् ।।७।। पुनर्मारकयोर्म ध्ये ह्युत्तर प्रबल मतम् ।। भाग्यस्थानाद्व्यय रध्र तस्माच्चैवाशुभ वदेत् ।।८।। एतत्स्थानानुसा रेण ग्रहाणा मानमालिखेत् ।। चद्रचाद्रो गुरुसितौ केन्द्रदोषो यथोत्तरम् ।।९।। तथैव च ग्रहा क्रूरा बल चैवोत्तरोत्तरम् ।। भाग्येश सर्वदा सौम्यो न क्रूर फलदायक ।।१०।। पुत्राधिपोऽपि शुभद क्रूरोऽपि सुखद स्मृत ।। त्रिलाभरिपुमृत्यूना पतयो दुखदायका ।।११।। शुभोऽपि शुभदो नैव दशायामशुभस्तथा ।। अष्टमाधिपतिर्दोषस्तुला मेषे न हि क्वचित्तुअलौ षष्ठाष्टदोषो न वृषभोऽपि म दोषभाक् ।।१२।। यद्यद्भावगतो राहु केतुश्च जनने नृणाम् ।। यद्यद्भावेशसयुक्तस्त त्फल प्रदिशेदलम् ।।१३।।

कारक-मारक विचार

भावाधिपतित्व से कारक मारक के विशेष नियम

पचम और नवमभाव विशेष धनभाव है। चतुर्थ और दशम विशेष सुखभाव है।। सूर्यचन्द्र को छोडकर बाकी ग्रह मारकाधिपति होकर मारक होते है। ६।८।१२ ये स्थान और राहु केतु तथा केन्द्राधिपति सौम्यग्रह ये शुभफल नही करते और केन्द्राधिपति क्रूरग्रह पापफल नही देते ।। तथा ५।९ के स्वामी शुभफल दाता होते है।। द्वितीय और द्वादशेश अन्यग्रह के साथ होकर फलदाता होते है। लाभ शत्रुभाव के स्वामी पापग्रह और अष्टमेश म शुभफल दायक नही होते।। द्वितीय सप्तम के स्वामी मारक कहलाते है। केन्द्राधिपति पापग्रह, राज्येश क्षीणचन्द्र सूर्य शनि और मगल ये उत्तरोत्तर प्रबल है। लग्न चतुर्थ सप्तम दशम ये उत्तरोत्तर बलवान् है।। पचम और नवम य उत्तरोत्तर बलवान् है। लाभ शत्रु तथा तृतीय प्रथम प्रथम बलवान् है। दो मारको म दूसरा मारक द्वितीयश बलवान है। भाग्यस्थान बारहवा स्थान जो अष्टमभाव है उससे अशुभ फल का विचार करना।। इन स्थानो के अनुसार ग्रहो का बलाबल जानना।। केन्द्राधिपतित्व दोष क्रमश चन्द्र, बुध गुरु शुक्र म उत्तरोत्तर विशेष है।। इसी प्रकार क्रूर ग्रहो म भी उत्तरोत्तर अधिक बल है। भाग्यश सदा ही श्रेष्ठ है। कभी भी पाप फलदायक नही होता।। पचमेश भी क्रूरग्रह होने पर भी शुभ फलदायक ही होता है। ३।११।६।८ इन स्थानो के स्वामी पाप फलदाता (दुखदाता) होते है।। शुभग्रह भी शुभदाता नही होता अपनी दशा मे अशुभ फल देता है। अष्टमाधिपतित्व दोष तुला और वृष राशि मे नही होता। वृश्चिक म षष्ठाष्ट दोष नही होता। तथा वृष म भी षष्ठाष्ट दोष नही होता।। राहु केतु जिस जिस भाव म हो और जिस जिस भावेश से युक्त हो वैसा ही उनका फल कहना चाहिये।। कारक मारक विचार समाप्त ।।१-१३।।

अथ मेषलग्नम्

मंदसौम्यसिताः पापाः शुभौ गुरुदिवाकरौ ॥ न शुभं योगमात्रेण प्रभवेच्छनिजीवयोः ॥१४॥
परतंत्रेण जीवस्य पापकर्मापि निश्चितम् ॥ कविः साक्षान्निहंता स्यान्मारकत्वेन लक्षितः ॥१५॥
मंदादयो निहंतारो भवेयुः पापिनो ग्रहाः ॥ शुभाशुभफलान्येवं ज्ञातव्यानि क्रियोद्भवैः ॥१६॥

द्वादशराशि कारक मारक निर्णय

मेष लग्न–शनि, बुध, शुक्र पापफलप्रद है। गुरु, सूर्य शुभ है। शनि और गुरु के कारक योग मात्र से शुभ फल नही हो सकता क्योंकि–(शनि के भाभेश होने) गुरु के व्ययेश होने से पाप भी हो गया है। शुक्र साक्षात् मारक है, २-७ स्वामीका होने से शनि आदि भी (मारक के सम्बन्ध से) मारनेवाले होते है। मेष जन्म वाले के ये शुभाशुभ ग्रह कहे ॥१४–१६॥

अथ वृषलग्नम्

जीवशुक्रेंदवः पापाः शुभौ शनिदिवाकरौ ॥ राजयोगकरः साक्षादेक एव रवेः सुतः ॥१७॥
जीवादयो ग्रहाः पापा सन्ति मारकलक्षणाः ॥ बुधस्तत्र फलान्येव ज्ञेयानि वृषजन्मनः ॥१८॥

वृष लग्न–गुरु, शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद और शनि सूर्य शुभ है। एक शनि ही राजयोग कारक है।बुध,गुरु,पापी और मारक है। वृष लग्न मे जन्मवाले के ये फल है॥१७॥१८॥

अथ मिथुनलग्नम्

भौमजीवारुणाः पापा एक एव कविः शुभः ॥ शनैश्चरेण जीवस्य योगो मेषभवो यथा ॥१९॥ नाम
शशी निहंता स्याल्लक्षणं पापनिष्फलम् ॥ ज्ञातव्यानि द्वन्द्वजस्य फलान्येतानि सूरिभिः ॥२०॥

मिथुन लग्न–मगल, गुरु, सूर्य पापफलप्रद है। केवल एक शुक्र ही शुभ है। गुरु, शनिका योग मेषलग्न के समान जानना। द्वितीयेश होने से चन्द्रमा मारक नही होता, इसका मारकत्व निष्फल है। मिथुन लग्न वाले के ये फल जानना॥१९॥२०॥

अथ कर्क लग्नम्

भार्गवेंदुसुतौ पापौ भूसुतांगिरसौ शुभौ ॥ एक एव ग्रहः साक्षाद्भूसुतो योगकारकः ॥२१॥ निहंता
रविजोऽन्ये तु मानिनो मारकाह्वयाः ॥ कुलीरसम्भवस्यैव फलान्युक्तानि सूरिभिः ॥२२॥

अथ सिंहलग्नम्

बुध शुक्र यमा पापा कुजेज्यार्का शुभावहाः ॥ प्रभवेद्योगमात्रेण न शुभं गुरुशुक्रयो. ॥२३॥ प्रति
शन्यादयः पापा मारकत्वेन लक्षिता. ॥ एवं फलानि वेद्यानि सिंहे यस्य जनुर्भवेत् ॥२४॥

अथ कन्यालग्नम्

कुजजीवेंदवः पापा एक एव भगुः शुभः ॥ भार्गवेंदुसुतावेव भवेतां योगकारकौ ॥२५॥ निहंता कविरन्ये तु मारकास्तु कुजादयः ॥ प्रतीक्षेत् फलान्युक्तान्येवं कन्याभवे बुधैः ॥२६॥

कर्क लग्न—शुक्र, चन्द्रमा पापफलप्रद है। मंगल, शनि शुभ हैं। एक मंगल ही योगकारक है। शनि मारक है। अन्य सूर्य, बुध, गुरु मध्यम है। कर्क लग्न वाले के ये फल मुनियों ने कहे है॥२१॥२२॥

सिंह लग्न—बुध शुक्र शनि पापफलदाता और मंगल, गुरु, सूर्य, शुभफलप्रद हैं। गुरु शुक्र का सम्बन्ध (केन्द्र त्रिकोण योग होने पर भी) शुभ नहीं है। मारकलक्षण युक्त शनि बुध मारक है। यह सिंह जन्म का फल है॥२३॥२४॥

कन्या लग्न—चन्द्रमा, मंगल, गुरु, पापफलप्रद है। केवल एक शुक्र शुभ है। शुक्र और बुध योगकारक है। शुक्र निहन्ता है, अन्य मंगल, शनि, मारक है। (सूर्य मध्यम है) कन्या लग्न वाले के ये फल हैं॥२५॥२६॥

अथ तुलालग्नम्

जीवार्कमहिजाःपापाः शनैश्चरबुधौ शुभौ ॥ भवेतां राजयोगस्य कारकौ चंद्रतत्सुतौ ॥२७॥ कुजो निहंति जीवाद्याः परेमारकलक्षणाः ॥ निहंतारःफलांन्येव काव्यो न तु तुला भवः ॥२८॥

अथ वृश्चिक लग्नम्

सौम्यभौमाः सिताःपापाःशुभौ गुरुनिशाकरौ ॥ सूर्यचन्द्रमसावेवं भवेतां योगकारकौ ॥२९॥ जीवो निहंता सौम्याद्या हतारो मारकाह्वयाः ॥ तत्तत्फलानि विज्ञेयान्येव वृश्चिकजन्मनः ॥३०॥

अथ धनुर्लग्नम्

एक एव कविः पापः शुभौ सौम्यदिवाकरौ ॥ योगो भास्करसौम्याभ्यां । निहंता भास्वतः सुतः ॥३१॥ भांति शुक्रादयः पापा मारकत्वेन लक्षिताः ॥ तान्यत्रापि फलान्येवं जपन्त्या मनीषिभिः ॥३२॥

तुलालग्न—सूर्य, मंगल, गुरु पापफलदाता हैं। शनैश्चर, बुध शुभ हैं। चन्द्रमा, बुध, राजयोग कारक है। मंगल निहन्ता (मृत्युकारक) है। बाकी गुरु, शुक्र भी मारक हैं। तुला लग्नवाले के ये फल कहे गये है॥२७॥२८॥

वृश्चिक लग्न—मंगल, बुध, शुक्र, पापफलदाता है। चन्द्रमा, गुरु शुभ है। सूर्य, चन्द्रमा, राजयोग कारक है। गुरु मृत्युकारक है। बुध, शनि मारक के समान है। वृश्चिक जन्मवाले के ये फल जानना॥२९॥३०॥

धनुलग्न—शुक्र मात्र एक ही पूर्ण फलदाता है। सूर्य, बुध शुभ है। सूर्य, बुध, राजयोग कारक है। शनि मृत्युकारक है। शुक्र आदि मारक के समान है। यह फल धनु लग्न का

जानना।।३१।।३२।।

अथ मकरलग्नम्

कुजजीवेन्दव पापा शुभौ भार्गवचन्द्रजौ ।। स्वय चैव निहन्ता स्यान्मदो भौमादय परे ।।३३।।
तल्लक्षणानि हतार कविरेक सुयोगकृत् ।। ज्ञातव्यानि फलान्येव विबुधैर्मृगजन्मन ।।३४।।

अथ कुंभलग्नम्

जीवचन्द्रकुजा पापा एको दैत्यगुरु शुभ ।। राजयोगकरो भौम कविश्चैव बृहस्पति ।।३५।। निहता
प्रति भौमाद्या मारकत्वेन लक्षिता ।। एवमेव फलान्यूह्यान्येतानि घटजन्मन ।।३६।।

अथ मीनलग्नम्

मदशुक्राशुमत्सौम्या पापा भौमविधू शुभौ ।। महीसुतगुर्वोर्योगे–कारकोऽत्रैव भूमुत ।।३७।।
मारकान्मारकान्वीक्ष्य मदज्ञौ चैव मारकौ ।। इत्यूह्यानि फलान्येव बुधैस्तु झषजन्मन ।।३८।।
एतच्छास्त्रानुसारेण मारकानिर्दिशेद्बुध ।। चद्रसूर्यौ विना सर्वे मारका परिकीर्तिता ।।३९।।
स्वदशाया स्वभुक्तौ च नराणा निधन नहि ।। क्वचिद्दशायामिच्छन्ति स्वभुक्तौ न कदाचन ।।४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडे कारकमारकादिविचारकथन
नाम त्रयोदशोऽध्याय ।।१३।।

मकर लग्न–चन्द्रमा मगल गुरु पापफल दाता है। बुध शुक्र शुभ है। शनि स्वय मृत्युकारक है। शुक्र एक ही राजयोगकारक है। मगल आदि बाकी मारक के समान है। यह फल मकरलग्न वाले का कहा गया है।।३३।।३४।।

कुम्भ लग्न–चन्द्र मगल गुरु पापफलप्रद है। एक शुक्र शुभ है। मगल शुक्र राजयोगकारक है। बृहस्पति मृत्युयोग कारक है। मगल और बाकी ग्रह मारक के समान हैं। यह फल कुम्भ लग्नवाले के जानना।।३५।।३६।।

मीन लग्न–शनि, शुक्र सूर्य और बुध पापफलदाता है। मगल चन्द्रमा, शुभ है। मगल, गुरु राजयोगकारक हैं। मगल, मृत्युकारक नही है। शनि बुध सम्बन्ध से मारक है। मीन लग्न वाले के ये फल कहे गये है।।३७।।३८।।

इस होराशास्त्र के अनुसार मारकों का विचार (तथा कारकों का भी विचार) करे। चन्द्रमा और सूर्य के बिना और ग्रह मृत्युकारक होते है।। किसी भी मारक की दशा तथा उसके ही अन्तर में मृत्यु नही होती है। मारक की दशा मे तो मृत्यु होती है, पर अन्तर मे नही।।३९।।४०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखडे भावप्रकाशिकाया विचारकथन
नाम त्रयोदशोऽध्याय ।।१३।।

अथ द्वादशभावनिरीक्षणमाह

तनौ रूपं च ज्ञानं च वर्णं चैव बलाबलम् ॥ शीलं वै प्रकृतिं चाथ तनुस्थानान्निरीक्षयेत् ॥१॥
धनस्यापि कुटुंबस्य मृत्युजालममित्रकम् ॥ धातुरत्नादिकं सर्वं धनस्थानान्निरीक्षयेत् ॥२॥
विक्रमं भृत्यभ्रात्रादि चोपदेशप्रयाणकम् ॥ पित्रोर्वै मरणं विद्यादुश्चिक्याच्च निरीक्षयेत् ॥३॥
वाहनस्याथ बन्धूनां मातृसौख्यादिकानपि ॥ निधिक्षेत्रगृहं चापि हर्म्यारामादिकानपि ॥४॥
धर्मस्य विमलस्यास्य पातालाच्च निरीक्षयेत् ॥ यन्त्रमन्त्रौ तथा विद्या बुद्धेश्चैव प्रबन्धकाः
पुत्रराज्यापभ्रंशादि पश्येत्पुत्रालयाद्बुधः ॥५॥ मातुलातंकशंकानां शत्रूंश्चैव
व्रणादिकान् ॥ सपत्नीमातरश्चापि छष्ठस्थानान्निरीक्षयेत् ॥६॥ जाया
मध्यप्रयाणं च व्ययभावं तथा निशि ॥ मरणं च स्वदेहस्य जायाभावान्निरीक्षयेत् ॥७॥
ऋणदानग्रहणयोर्गुदे चैवांकुरादय ॥ गत्यनुक्तादिकं सर्वं पश्येद्रन्ध्राद्विचक्षणः ॥८॥ हर्म्यं धर्मं च
श्यालं च भ्रातृपत्न्यादिकांस्तथा ॥ तीर्थयात्रादिकं सर्वं धर्मस्थानान्निरीक्षयेत् ॥९॥ राज्यं
चाकाशवृत्तिं च मानं चैव पितुस्तथा ॥ प्रवासस्य ऋणस्यापि व्योमस्थानान्निरीक्षणम् ॥१०॥
नानावस्तुभवस्यापि पुत्रजायादिकस्य च ॥ रिपूणां रिपवश्चैव भवस्थानान्निरीक्षणम् ॥११॥
व्ययं च वैरिवृत्तांत रिःफमन्त्यादिकं तथा ॥ एवं भावफलं सम्यक् तत्तल्लक्षणपूर्वकम् ॥१२॥
व्ययाच्चैव हि ज्ञातव्यं चेति सर्वत्र बुद्धिमान् ॥ यो यो भावपतिर्नष्टस्त्रिकेशाद्यैश्च संयुतः ॥
भावं न वीक्षते सम्यग्ग्रहो वापि मृतो यदा ॥१३॥ स्वचिरो वा भवेत्खेटः गुप्तो वापि प्रपीडितः
॥ तदा तद्भावजं सौख्यं नष्टं ब्रूयादशंकितः ॥१४॥ यदा सौम्यग्रहैर्दृष्टो भावो भावेशसौम्ययुक्
॥ पुनः प्रबुद्धराजस्थः कुमारो वापि तद्भवेत् ॥१५॥ ईशेक्षणवशात्तत्र भावसौख्यं वदेद् बुधः ॥
शुक्रः शुक्रश्च नेत्रं च चन्द्रमा मनसस्तथा ॥१६॥ आत्मा वै दिनकृत्तत्र जीवो जीवितसौख्यकम् ॥
क्रोधः पराक्रमो भौमो बुधो वाक्त्वधीमतः ॥१७॥ शनिर्दुःखप्रदानश्च प्रपवः मार्भकरस्तथा
॥१८॥ राहुरेश्वर्यकं विद्धि मुखनाभिपदस्तलः ॥ शिरो नेत्रे तथा कर्णौ नासा चापि कपोलकौ ॥१९॥
हनू मुखं तथा वाच्य कण्ठांसौ बाहुकौ तथा ॥ पार्श्वे बाहृदये चैव क्रोडे नाभौ तथैव च ॥२०॥
बस्तिर्लिंगगुदे वृष्णावूरू जानू च जंघके ॥ पेदति चैव सर्वांगे सत्या ब्रूयुर्विचक्षणाः ॥२१॥ लग्ने
तत्कालद्रेष्काणे शिरादि परिकल्पयेत् ॥ तस्माद्यस्मिन्स्थितः खेटस्तत्र चिह्नं स्फुटं वदेत् ॥२२॥
एवं भेदानुभेदेन सर्वत्रैवोपलक्षयेत् ॥ संक्षेपेणैतदुदितमस्मद्बुद्ध्यनुसारतः ॥२३॥

द्वादशभावनिरीक्षण

लग्न से विचारणीय— शरीर का रूप, ज्ञान, वर्ण, बलाबल, चरित्र और प्रकृति ये बातें लग्न से विचारना चाहिये॥

द्वितीय भाव से—द्रव्य कुटुम्ब (परिवार) मृत्यु, कष्ट, शत्रु, सोना, चांदी आदि धातु ये सब धनस्थान से विचारना चाहिये॥

तृतीयभाव से—बल, भ्राता, नौकर, परदेशयात्रा, माता पिता की मृत्यु ये तृतीय भाव से विचारना चाहिये॥

चतुर्थ भाव से—सवारी, बन्धुसुख, माता का सुख खजाना, मकान, भूमि, खेत बगीचा मन्दिर (देवस्थान) ये सब चतुर्थ से विचारना चाहिये॥

पंचम भाव से—यन्त्र, मन्त्र, विद्या, बुद्धि के सहायक, पुत्र, राज्य, हानि ये सब विचार पंचम भाव से करना चाहिये॥

छठे भाव से—मामा की मृत्यु तथा कष्ट आदि, शत्रु, व्रण, (फोड़ा, फुन्सी, दाद, खाज आदि) सपत्नी, सास आदि विचारना॥

सप्तमभाव से—भार्या, साधारण यात्रा, खर्च, अपना मरण, ये सब सप्तमभाव से विचारना चाहिये॥

अष्टमभाव से—कर्ज लेना या देना, गुदा का रोग (बवासीर आदि) गति (यात्रा) आदि आदि विचार अष्टमभाव से करना॥

नवमभाव से—मकान, धर्मकार्य, साले (पत्नीभ्राता) भाइयो की स्त्रिया, तीर्थयात्रा मे यह सब नवमभाव से विचार करे॥

दशमभाव से—राज्य से सम्बन्ध, अस्थिर वृत्ति, सन्मान पिता का सुख, परदेश का रहना, ऋण इनका विचार दशमभाव से करे॥

एकादश भाव से—अनेक प्रकार की वस्तुओ का विचार, पुत्र, स्त्री आदि परिवार का विचार, शत्रुओ का विचार एकादशस्थान से विचारे॥

द्वादशभाव से—अनेक प्रकार के खर्च, शत्रुओ के भेद विचार करे।

इस प्रकार ऊपर बताये गये विचार अपने भावो से करे॥

बारहवे भाव का जानने का विचार भी बुद्धिमान् को जान लेना चाहिये। जिस जिस भाव का स्वामी त्रिकस्थान ३।६।१२ के स्वामी से सयुक्त हो तथा अपने स्थान को नही देखता हो और अवस्था विचार से मृत अवस्था मे हो। अथवा वृद्ध सुप्त या प्रपीडित (पापाक्रान्त) हो तो नि शक भाव से उस भाव से प्राप्त होनेवाला सुख नही है यह कहना॥ तथा जो भाव अपने स्वामी से युक्त वा दृष्ट हो या सौम्यग्रहो से युक्त या दृष्ट हो, अवस्था मे युवा या कुमार अवस्था मे प्रबुद्ध हो, दशमभाव मे स्थित (भावेश) हो तो उस भाव का सुख पूर्ण प्राप्त होता है। शुक्र वीर्य का स्वामी है और नेत्र इन्द्रिय का भी स्वामी है॥ चन्द्रमा मन का स्वामी है॥ सूर्य आत्मा है। बृहस्पति जीवन और सुख का स्वामी है। मगल क्रोध और पराक्रम का तथा बुध बाल्य अवस्था तथा बुद्धि का स्वामी है॥ शनि दु खदाता और नौकर तथा पडोसी का और राहु ऐश्वर्य का स्वामी है।

ग्रहो के अग (विभाग)—

सूर्य—मुख, शिर, नेत्र, कान, नाभि पैर, तल ॥ चन्द्रमा—नासिका और कपोल॥ मगल—हनू (ठोडी) मुख। बुध—कठ, कधे, बाहू। गुरु—पार्श्व (पसली) दोनो हाथ। शुक्र—क्रोड (गोदी) नाभि। शनि—वस्ति (पेडू) लिंग गुदा, वृषण (अडकोश) राहु—ऊरू (ऊपर की आधी जघा) जानू (घुटना) जघा, पैर। इस प्रकार मे ग्रहो की सिर से पैर तक के अगो मे स्थिति है॥ इसी प्रकार से लग्न मे तथा तात्कालिक द्रेष्काण मे शिर आदि अगो की कल्पना करे। और जिस भाव मे शुभ या क्रूर जैसा ग्रह हो उसके अनुसार वैसा चिह्न उस अग मे कहे॥ इस तरह भेदप्रभेद से सभी स्थलो मे अपनी बुद्धि से भी कल्पना करे। हमने यह सक्षेप से कहा है॥१-२३॥

अथ प्रथमभावफलम्

देहाधिप पापयुतोऽष्टमस्थो व्ययरिगो वागसुख निहन्ति ॥ सर्वत्र भावेषु च योजनीयमेवं बुधैर्भवशात्फल हि ॥२४॥ एव तृतीयेपि च सप्तमेपि फल विमृश्य कृतिभि प्रयत्नात् ॥ तथा व्यये मित्रगृहे रिपौ मृते स्थिते विलग्नाधिपतौ फल स्यात् ॥२५॥ पापो विलग्नाधिपतिर्विलग्ने चन्द्रे विलग्ने यदि बालक स्यात् ॥ तदाऽतिरोग स हि केंद्रसस्थत्रिकोणलाभेषु गद निहन्ति ॥२६॥ बलोनतामेव तु पापवत्तामेतस्य वित्त फलमानुरूप्यताम् ॥ नीचारिसूर्यस्य गृहेषु तिष्ठन् स्वर्क्षादिचक्रादिगृहत्रये च ॥२७॥ देहाधिपश्चन्द्रगृहाधिपो वा तृतीयारि फारिगतोऽबल स्यात् ॥ नीचास्तगद्व्यष्टगृहे स्थितो वा कार्श्यं शरीरेऽतिगद करोति ॥२८॥ लग्नाधिपो वा जीवो वा शुक्रो वा यदि केन्द्रग.। तस्य पुत्रस्य दीर्घायुर्धनवान्राजवल्लभ ॥२९॥ लग्नाधिपोऽत्तबलैश्च शुभैर्नवकेन दृष्टस्य ॥ केंद्रस्थिते शुभावलोक्ये मृत्युहीनेऽपि दीर्घायु ॥३०॥ केन्द्रत्रिकोणेषु न यस्य पापा लग्नाधिपो सुरगुरुश्चतुरष्टमस्थ ॥ भुक्त्वा सुखानि विविधानि च पुण्यकर्मा जीवेत्तु वर्षशतमेव विमुक्तरोग ॥३१॥ लग्नेशो चरराशिस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ॥ कीर्तिश्रीमान्महा-भोगी देहपुष्टिसमन्वित ॥३२॥ जीव शुक्रो बुधश्चन्द्रो लग्ने शशिसमन्वित ॥ लग्नात्केन्द्रगतश्चैव राजलक्षणसयुत ॥३३॥ लग्ने राहुसमायुक्ते तथा सोमनिरीक्षिते ॥ लग्नाशे मदसूरी चेज्जातश्च यमलो भवेत् ॥३४॥ जातो नरो बालविवेष्टिताङ्गो लग्ने फणिर्मन्दसमन्वितश्च ॥ लग्ने च पार्श्वे त्रितये च पापे निरीक्षिते जीवबुधेन्दुशुक्रे ॥३५॥ रविचन्द्रौ च ह्येकस्थावेकांशकसमन्वितौ ॥ त्रिमात्रा च त्रिभिर्मासैर्भ्रात्रा पित्रा च पोषित ॥३६॥

प्रथम भावफल

देह (लग्न) का स्वामी ६।८।१२ भाव मे हो देह की आरोग्यता का सुख नही। इस योग को (६।८।१२ भावस्थिति को) १२ भावो म समझ लेना, यह भाव से फलकथन है॥ इसी तरह तृतीयभाव तथा सप्तमभाव मे भी फल का विचार करना। और ६।८।१२ मे यदि मित्र राशि मे भावेश हो, तो भी यही फल कहना॥ यदि लग्न का स्वामी पापग्रह हो और लग्न मे ही चन्द्र तथा लग्नेश हो तो जातक अतिरोगी रहे। और यदि लग्नेश केन्द्र त्रिकोण या लाभस्थान मे हो तो निरोग रहे॥ इस लग्नेश की बलहीनता एव पाप शीलता देखकर अनुरूप फल का निर्देश करना। अथवा नीचराशि के या शत्रुक्षेत्री सूर्य के घर मे हो या स्वराशि से तीन घरो मे हो तो अनुरूप फल कहना॥ लग्नेश या चन्द्रराशिपति तीसरे, छठे, बारहवे स्थान मे हो तो निर्बल होता है॥ नीचराशि मे या अस्त का हो अथवा दूसरे, आठवे घर मे हो तो जातक के शरीर मे कृशता और बीमारी रहती है॥ जिसके जन्मलग्न मे लग्नेश या, गुरु शुक्र केन्द्रस्थान मे हो उसके पुत्र की आयु बडी होती है और धनवान् तथा राजमान्य होता है॥ लग्नेश यदि बलवान् शुभग्रहो से दृष्ट होकर केन्द्र मे स्थित हो तो(नवकेन दृष्टस्य अष्टमेशेन दृष्टस्य । कटपयादि सका)अष्टमेश स दृष्ट होने पर भी मृत्यु न होकर दीर्घायु होता है॥ जिस जातक के केन्द्र और त्रिकोण म पापग्रह न हो तथा लग्नेश और गुरु चतुर्थ और अष्टमस्थान म हो तो वह जातक अनेक सुख भोगता हुआ नीरोगी होकर पुण्यकार्य करता है॥ लग्न का स्वामी चरराशि मे शुभग्रह से दृष्ट हो तो नीरोगी भोगी कीर्तिवान तथा धनवान होता है॥ चन्द्रमा, बुध,

गुरु, शुक्र ये चारो शुभग्रह केन्द्र मे हो तथा इनमे से किसी एक या दो के साथ चन्द्रमा लग्न मे हो तो राजा के समान होता है॥ लग्न मे राहु हो, चन्द्रमा देखता हो, लग्ननवांश मे शनि गुरु हो तो जातक यमल (जोडा) होता है॥ लग्न मे राहु, शनि हो और लग्न तथा पास की २ राशियो (२।१२) को पापग्रह तथा बु० गु० शु० देखते हो तो बालक नालवेष्टित होता है॥ सूर्य, शुक्र एक घर मे हो तथा एक ही नवांश मे हो तो तीन महीने तक ३माताओ द्वारा पालन हो या भाई, पिता पालन करे ॥२४–३६॥ प्रथमभावफल समाप्त॥

अथ द्वितीयभावफलम्

शुक्रेण युक्तो यदि नेत्रनाथ शुक्रस्य वाक्षीविग्रहत्रयस्य ॥ सबधवान्स्याद्यदि देहपेन नेत्र विधत्ते विपरीतभावम् ॥३७॥ लग्न स्थितौ चन्द्ररवी निशान्ध्य जात्यधता नेत्रपदेहपार्को ॥ पैत्रर्क्षनाथेन युतास्तदाध्यं कुर्वन्ति भाग्यविफल तथेवृक् ॥३८॥ दोषकृन्न च सर्वत्र स्वोच्चस्वर्क्षगतो ग्रह ॥ षडादित्रयसस्थैश्चेत्तद्विना दोषकृच्छुभ ॥३९॥ वागीशवाग्गृहाधीशौ षडादित्रयसस्थितौ ॥ मूकता कुरुतोऽप्येव पितृमातृगृहाधिपा. ॥४०॥ वागीशवाग्गृहाधीशा युतास्ते त्रयसस्थिता ॥ कुर्वंति तेषा मूकत्वमेवमूह्य मनीषिभि ॥४१॥ कुटुबकारका केन्द्रत्रिकोणेषु गता ग्रहा सकुटुंबकलत्रेशा कलत्र वा कुटुम्बकम् ॥४२॥ पश्यति च द्वयस्था वा यावत्तावत्प्रमाणकम् ॥ कलत्र निर्दिशेत्प्राज्ञोऽथवा तेषा च नो वदेत् ॥४३॥ विद्याधिपौ जीवबुधावविद्यामरित्रयस्थौ कुरुतोऽपि तौ चेत् ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसस्थौ प्रयच्छता द्रागनवद्यविद्याम् ॥४४॥ एव बुधस्यागिरस षडादित्रय स्थितौ नीचग्रहोऽरिनाथ ॥ केन्द्रत्रिकोणस्थगृहोच्चसस्थौ धनाभिवृद्धि कुरुतस्तदेव ॥४५॥ धनाधिपो गुरुर्यस्य धनराशिस्थितो यदि ॥ भौमेन सहितो वापि धनवान् स नरो भवेत् ॥४६॥ धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे वा धन गते ॥ तावुभौ केन्द्रराशिस्थौ धनवान्स नरो भवेत् ॥४७॥ धनेशे केन्द्रराशिस्थे लाभेशे तत्त्रिकोणगे ॥ गुरुशुक्रयुते दृष्टे धनलाभमुदीरयेत् ॥४८॥ वित्तेशे रिपुभावस्थे लाभेशे तद्गते यदि ॥ वित्तलाभौ पापयुक्तौ दृष्टे निर्धन एव स ॥४९॥ वित्तलाभाधिपौ द्विस्थे पापखेचरसयुते ॥ जन्मप्रभृतिदारिद्र्य भिक्षान्न लभते नर ॥५०॥ षष्ठाष्टमव्ययस्थेषु धनलाभाधिपौ स्थितौ । लाभे कुजे धने राहौ राजदण्डाद्धनक्षय ॥५१॥ लाभे जीवे धने शुक्रे तदीशे शुभसयुते ॥ व्यये शुभग्रहयुते धर्ममूलाद्धनव्यय ॥५२॥ कुटुबराशेरधिप स सौम्ये केन्द्रेऽथ सौम्ये च सुहृद्गृहे वा ॥ सौम्यर्क्षयुक्तो यदि जातपुण्य कुटुबसरक्षणवाग्विभूत ॥५३॥ कुटुम्बनाथे परमोच्चयुक्ते देवेन्द्रपूज्ये समीक्षिते वा ॥ तथाविधे तद्भवनेऽभिजात सहस्ररक्षो भुवनप्रतापो ॥५४॥ तत्रार्थे भृगुणा बुधेन सहिते पारावतांशे तथा स्वोच्चे चाथ सुहृद्गृहे धनपतौ स्वस्थानकोलाहल ॥५५॥ कुटुबराशिस्थपतौ यदि स्याद्भृगौ बुधे तादृशभावनाथे ॥ स्वोच्चे सुहृत्क्षेत्रगतेऽथवा स्यात्परोपकारी जनरक्षक स्यात् ॥५६॥ नेत्रेशे बलसयुक्ते शोभनाक्षो भवेन्नर ॥ षष्ठाष्टमव्यये युक्ते नेत्रे वैकल्यमादिशेत् ॥५७॥ धनेशे पापसयुक्ते धने पापसमन्विते ॥ असत्यवादी पिशुन पवनव्याधिसयुत ॥५८॥

द्वितीयाभावफल

यदि नेत्रनाथ=द्वितीयश शुक्रयुक्त हो अथवा द्वितीय लग्न या सूर्य से सम्बन्ध करता हो तो नेत्र विद्रूप करता है॥ द्वितीय भाव मे सूर्य चन्द्र स्थित हो तो जातक रात्र्यध (रात मे न

शुभयुक्तनिरीक्षिते ॥ भावे वा बलसंपूर्णे भ्रातृणां वर्धनं भवेत् ॥६३॥ केंद्रत्रिकोणगे वापि स्वोच्चमित्रस्ववर्गगे ॥ नाथे वा कारके वापि भ्रातृलाभ वदेद्बुधः ॥६४॥ भ्रातृभे बुधसंयुक्ते तदीशे चन्द्रसंयुते ॥ कारके मंदसयुक्ते भगिन्येकाथतो भवेत् ॥६५॥ पश्चात्सहोदरेप्येततृतीयस्तु मृतो भवेत् ॥ कारके राहुसंयुक्ते विक्रमेशस्तु नीचग. ॥६६॥ पश्चात्सहोदराभावात्पूर्वस्तु त्र्यकृद्भवेत् ॥ भ्रातृस्थानाधिपे केन्द्रे कारके तत्त्रिकोणगे ॥६७॥ जीवेन सहितश्चोच्चे सख्या द्वादश सोदराः ॥६८॥ अथ तृतीयगर्भश्च प्रथमाच्च तृतीयके ॥ सप्तमश्चैव नवमो द्वादशश्च मृतिप्रदः ॥६९॥ शेषाः सहोदरा दीर्घाः षड्भार्या यमलो भवेत् ॥ व्ययेशेन युते भौमे गुरुणा सहितोऽपि वा ॥७०॥ भ्रातृस्थाने शशियुते सप्तसख्यास्तु सोदरा ॥ एतेषा द्विप्रजानाथः शुक्रयुक्तेक्षितेन हि अग्रे जात रविर्हन्ति पृष्ठे जातं शनैश्चरः । अग्रज पृष्ठज हन्ति सहजस्थो धरासुतः ॥७१॥

तृतीय भावफल

तृतीयभाव का स्वामी भ्रातृ–स्थान को देखता हो, मगल सहित हो या तीसरे भाव मे ही हो ६।८।१२ मे न हो तो भ्राता का सुख रहता है॥ वे मगल तथा तृतीयेश पापग्रह या पापराशि से युक्त हो तो बन्धुओ को हटाने या मारनेवाला होता है॥ तृतीयभाव का स्वामी यदि स्त्री ग्रह हो और स्त्रीग्रह ही भ्रातृ स्थान मे हो तो अधिक भगिनी होती है और यदि पुरुष राशि और पुरुष ग्रह हो तो अधिक भाई का सुख होता है। दोनो प्रकार का योग हो तो बलाबल देखकर भाई या बहन या दोनो कहे॥ तृतीयेश और मगल अष्टमस्थान मे पापदृष्ट होकर स्थित हो तो भ्राताओ के नाश का कारण है॥ तथा वे दोनो पापदृष्ट या पापयुक्त हो तो सब विद्या व्यर्थ होती है॥ तृतीयराशि मे कारकग्रह हो शुभग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा भ्रातृभाव मे बलवान् होकर स्थित हो तो भाइयो की वृद्धि होती है॥ भ्रातृस्थान का स्वामी अथवा भ्रातृकारक केन्द्र या त्रिकोण मे उच्च या मित्र अथवा अपने वर्ग मे हो तो भाइयो का लाभ (वृद्धि) होता है॥ भ्रातृस्थान मे बुध हो और भ्रातृस्थान के स्वामी के साथ चन्द्रमा हो, भ्रातृकारक के साथ शनि हो तो अगली बार केवल एक भगिनी ही हो॥ पश्चात् एक सहोदर हो और उसके नेष्ट योग हो तो तीसरे की मृत्यु होती है। भ्रातृ–कारक के साथ मे राहु हो और भ्रातृस्थान स्वामी भी नीचराशि का हो तो उसके बाद सहोदर भ्राता न होने से वही तीसरा होता है॥ भ्रातृस्थान स्वामी केन्द्र मे हो और भ्रातृकारक अपने से त्रिकोण मे हो गुरु सहित उच्च राशि मे हो तो १२ भाई होते है॥ इन १२ भाइयो मे तीसरा, छठा, सातवा, नौवा और बारहवा गर्भ या बालक नष्ट होता है॥ बाकी भाई दीर्घायु तथा बाकी कन्याये होती है॥ (अथवा ३ बार २–२ यमल कन्या होकर ६ कन्याए होती हैं।) व्ययेश के साथ मगल या गुरु हो और तीसरे स्थान मे चन्द्रमा हो तथा चन्द्रमा शुक्र युक्त या दृष्ट हो तो सात भाई होते है। तृतीयभाव मे सूर्य से बडे भाई की, शनि से छोटे भाई की, मगल से छोटे बडे दोनो की मृत्यु होती है ॥५९–७१॥

अथ चतुर्थभावफलम्

गेहाधिनाथेन युते तु गेहे देहाधिपेनापि गृहाभिलब्धि. ॥ युते षडादौ तु विपर्ययः स्याद्गृहाधिपे देहपतौ च तद्वत् ॥७२॥ केंद्रत्रिकोणे च शुभग्रहेण युते समीचीनगृहाभिलब्धिः ॥ क्षेत्रस्य चिता

सदनाधिपेन जीवेन चिन्ता तु सुखस्य कार्या ॥७३॥ दिव्याङ्गनावाहनवस्त्रभूषाचिन्ता तु कार्या भृगुणा बुधेन्द्रैः ॥ तमःशनिभ्यामभिचिन्त्यमायुरर्केण तातः शशिनात्र माता ॥७४॥ बुधेन बुद्धिः सदनर्क्षसंस्था गतेन सप्तेशयुतेन च स्यात् ॥ केन्द्रत्रिकोणेषु गतेषु सप्त प्रपश्यता वापि स्वतुङ्गगेन ॥७५॥ स्वकीयस्वांशगो स्वोच्चे सुतस्थानस्थितो यदि ॥ सुखवाहनवृद्धिः स्याच्छश्वभेर्यादिवाद्ययुक् ॥७६॥ विचित्रसौधप्राकार मंडित गृहमादिशेत् ॥ कर्माधिपेन सहिते नाथे चन्द्रार्कसूनुना ॥७७॥ बधुस्थानेश्वरे सौम्यशुभग्रहनिरीक्षिते ॥ शशिजे लग्नसंयुक्ते बुधपूज्यो भवेन्नर ॥७८॥ मातुः स्थाने शुभयुते तदीशे स्वोच्चराशिगे ॥ कारके बलसंयुक्ते मातृदीर्घायुरादिशेत् ॥७९॥ स्वतुंगसंस्थे हिबुकाधिनाथे स्वर्क्षे त्रिभे मित्र गृहे स्थिते च ॥ शुभेन दृष्टे शुभसंयुते च क्षेत्राभिवृद्धिं प्रवदेन्नराणाम् ॥८०॥ सुखेशे केन्द्रभावस्थे तथा केन्द्रे स्थितो भृगुः ॥ शशिजे स्वोच्चराशिस्थे विद्वान्पंडित एव स ॥८१॥ सुखे मंदे रविंयुते सद्रो भाग्यगतो यदि ॥ लाभस्थानगते भौमे गोमहिष्यादिलाभकृत ॥८२॥ चरग्रहसमायुक्ते सुखे तद्राशिनायके ॥ षष्ठे भौमे व्ययगते मूकत्वं प्राप्नुते नरः ॥८३॥ लग्नस्थानाधिपे सौम्ये सुखेशे नीचराशिगे ॥ कारके व्ययराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते ॥८४॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् वाहने रविसंयुक्ते स्वोच्चे तद्राशिनायके ॥८५॥ युते शुक्रेण संयुक्ते द्वात्रिंशे वाहनं भवेत् ॥ कर्मेशेन युते बधुनाथे तुगांशसंयुते ॥८६॥ द्विचत्वारिंशके प्राप्ते नरो वाहनभाग्भवेत् ॥ लाभेशे सुखराशिस्थे सुखेशे लाभसंयुते ॥ द्वादशे वत्सरे प्राप्ते नरवाहनलाभकृत् ॥८७॥

चतुर्थ भावफल

लग्नेश तथा चतुर्थेश चतुर्थभाव मे हो तो मकान का लाभ हो। दोनो ६।७।८ मे हो तो अपना भी नष्ट हो जावे। वही लग्न चतुर्थेश केन्द्र या त्रिकोण मे हो और शुभग्रह से युक्त हो तो सुन्दर मकान प्राप्त हो। भूमि की चिन्ता (विचार) चतुर्थेश से और भूमि से सुख का विचार गुरु से करना।। और शुक्र से सुन्दर स्त्री वाहन वस्तु आभूषण इनका विचार करना चाहिए। राहु शनि से आयु का विचार करना। सूर्य से पिता और चन्द्रमा से माता का विचार करना चाहिए।। बुध से बुद्धि का विचार करना। बुध चतुर्थ भाव मे सप्तमेश से युक्त हो तो श्रेष्ठ बुद्धिमान हो। यह बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे अपने उच्चराशि का होकर स्थित हो सातवे स्थान को देखता हो तो और श्रेष्ठ है।। चतुर्थ स्थानपति अपनी राशि का या अपने कारकांश मे अथवा उच्च मे होकर पञ्चम भाव मे स्थित हो तो अनेक वाद्ययुक्त सुख और वाहन की वृद्धि होती है।। और विचित्र महल चारो तरफ से प्राकार युक्त होना चाहिये।। दशमेश से युक्त तथा चन्द्रमा और शनि युक्त चतुर्थेश हो तो पूर्वोक्त प्रकार का महल (भारी मकान) होता है।। तृतीयेश शुभग्रह तथा बुध की दृष्टियुक्त अथवा बुध लग्न मे हो तो पडितो से मान्य होता है।। चतुर्थ स्थान मे शुभग्रह हो और चतुर्थेश उच्च का हो तथा मातृकारक बलवान् हो तो माता की आयु बडी होती है।। चतुर्थेश अपने उच्च मे हो या स्वगृही हो अथवा मित्रराशि म होकर तीसरे घर मे हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य को भूमि की वृद्धि का सुख होता है।। चतुर्थेश केन्द्र म हो केन्द्र मे ही शुक्र हो तथा बुध उच्चराशि का हो तो जातक विद्वान मेधावी होता है।। चतुर्थ स्थान म सूर्ययुक्त शनि हो चन्द्रमा नवमस्थान मे हो तथा लाभस्थान मे मगल हो तो गौ भैंस आदि का लाभ हो।। सुखभाव म चरराशि या चर

कारक (मातृकारक) हो और सुखेश षष्ठस्थान में हो, मंगल द्वादशस्थान में हो तो जातक मूक (गूंगा) होता है॥ लग्नेश सौम्य बुध हो और सुखेश नीच राशि में हो, मातृकारक द्वादशभाव में हो, सुखेश लाभस्थान में हो तो जातक के १२ वे वर्ष में पालकी की सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थभाव में सूर्य हो चतुर्थेश उच्चराशि का हो और शुक्र युक्त हो तो ३२ वे वर्ष में सवारी का लाभ होता है॥ चतुर्थेश दशमेश से युक्त उच्चांश (परमोच्च) में हो तो ४२ वे वर्ष में वाहन का लाभ होता है॥ लाभेश चतुर्थभाव में हो तथा चतुर्थेश लाभ स्थान में हो तो १२ वे वर्ष में पालकी (या रिक्सा) का लाभ हो॥७२–८७॥

अथ पचमभावफलम्

षष्ठाद्विव्ययस्थे तु सुताधीशे त्वपुत्रता ॥ केन्द्रत्रिकोणसंस्थे तु पुत्रलाभादिसम्भव ॥८८॥ सत्पुत्रलाभ सुतपे सुरेज्ये शुभेषु गेहेषु गते च भानौ ॥ एक स्थिर स्यात्सुत एक एव स्थित शुभ केन्द्रवातमजस्थे ॥८९॥ पितापि वित्यो नवमे सुतर्क्षे एवंविध चिंतनमूहनीयम् ॥९०॥ क्षेत्रस्य कारको भौम कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥ अस्तगते पञ्चमेशे पापक्रान्ते च दुर्बले ॥९१॥ षष्ठे नीचे सुताधीशे काकवन्ध्या विशेषत ॥ षष्ठस्थाने सुताधीशे लग्नेशे कुजवेश्मनि ॥ म्रियते प्रथमापत्य काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ॥९२॥ सुताधीशो हि भौमस्य षष्ठाद्विव्ययसंस्थित ॥ काकवन्ध्या भवेन्नारी सुते केतुबुधौ यदि ॥९३॥ सुतेशो नीचगो यत्र सुतस्थान न पश्यति ॥ तत्र सौरिबुधौ स्याता काकवन्ध्यात्वमाप्नुयात् ॥९४॥ भाग्येशो मूर्तिवर्ती च सुतेशो नीचगो यदि ॥ सुते केतुबुधौ स्याता सुत कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९५॥ षष्ठाद्विव्ययसंस्थोऽपि नीचो वाऽप्यरिसंस्थित ॥ पापाक्रान्ते सुतस्थाने पुत्र कष्टाद्विनिर्दिशेत् ॥९६॥ पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मंदक्षेत्रेऽथवा पुन ॥ मंदे मान्द्युते दृष्टे तदा दत्तादय सुता ॥ रविचन्द्रौ यदैकस्थावेकांशकसमन्वितौ ॥९७॥ त्रिमात्रभिरसौ भ्राता द्विपित्राऽपि च पोषक ॥ पचमे परगृहे युक्ते तदीशे व्ययराशिगे ॥लग्नेशे दुर्बलो यस्य दत्तपुत्रभवोवय ॥९८॥ सुतभवने भृगुजीवसौम्यनाथे बलसहिते रविलोकिते युते वा ॥ बहुसुतजनन वदति सत सुतभवनेशबलेन चिंत्यमेतत् ॥९९॥ सुतेशे शशियुक्ते च त्रिराश्यंशगतेऽपि च॥ तथैव कन्यकालाभ प्रवदेन्मतिमान्नर ॥१००॥ सुतेशे नरराशिस्थे राहुणा सहित शशी ॥ पुत्रस्थान गते मंदे परजात वदेच्छिशुम् ॥१०१॥ सुतेशे राहुसयुक्ते सुतस्थान समाश्रितम् ॥ न वीक्ष्यतेन्दुगुरुणा परजातो भवेन्नर ॥१०२॥न लग्नमिंदु च गुरुर्निरीक्षिते न वा शशाङ्को रविणा समागत ॥ सपापकार्केण युते नवांशके परेण जात प्रवदंति निश्चितम् ॥१०३॥ लग्नाद्द्वादशगे चंद्रे लग्नादष्टमगो गुरु ॥ पापयुक्तेन सदृष्टे अन्यबीज न सशय ॥१०४॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नाच्चेद्द्वित्रिकोणगे ॥ गुरुणा सयुते दृष्टे पुत्रभाग्ययुपैति स ॥१०५॥ त्रिवत् पापसयुक्ते सुतेशेनाधिपे तु युक् ॥ सुतेशे नाशराशिस्थे नीचसस्थो भवेच्छिशु ॥१०६॥ पुत्रस्थान गते जीवे तदीशे भृगुसयुते ॥ द्वात्रिंशे च त्रयस्त्रिंशे वत्सरे पुत्रलाभकृत ॥१०७॥ सुतेशे केंद्रभावस्थे कारकेण समन्विते ॥ षट्त्रिंशे त्रिंशदब्दे च पुत्रोत्पत्ति विनिर्दिशेत् ॥१०८॥ लग्नाद्भाग्यगते जीवे जीवाद्भाग्यगते भृगौ॥लग्नेशे भृगुसयुक्ते चत्वारिंशे सुत लभेत् ॥१०९॥ पुत्रस्थान गतो राहुस्तदीशे पापसयुते ॥ नीचराशिगते जीवे द्वात्रिंशे पुत्रमृत्युद ॥११०॥ जीवात्पचमगे पापे लग्नात्पत्र गतेऽपि च ॥ षड्विंशे च त्रयस्त्रिंशे चत्वारिंशे सुतक्षय ॥१११॥ लग्ने मांदिसमायुक्ते

लग्नेशे नीचराशिगे ।। षट्पचाशद्दशाब्देषु पुत्रशोकसमाकुल ॥११२॥ चतुर्थे पापसयुक्ते षष्ठे पापसमन्विते ।। सुतेशे परमोच्चस्थे लग्नेशेन समन्विते ॥११३॥ कारके शुभसयुक्ते दशसख्यास्तु सूनव ।। परमोच्चगते जीवे धनेशे राहुसयुते ॥११४॥ भाग्येशे भाग्यसयुक्ते सख्याता नवसूनव ।। पुत्रभाग्यगते जीवे सुतेशे बलसयुते ॥११५॥ धनेशे कर्मराशिस्थे वसुसख्यास्तु सूनव ॥ पचमात्पचमे मदे सुतस्थे च तदीश्वरे ॥११६॥ सूनव सप्तसख्याश्च द्विगर्भे यमल भवेत् ॥ वित्तेशे पचमस्थे च सुतस्थे पचमाधिपे ॥११७॥ षट्सख्या च सुतप्राप्तिस्तेषा च त्रिप्रजामृति ।। मदात्पचमगे जीवे जीवात्पचमगे रवौ ॥११८॥ सूर्यात्पचमगे राहौ पुत्रमेक विनिर्दिशेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमग शनि ॥११९॥ कलत्रान्तरे पुत्रलाभ कलत्रत्रयभाग भवेत् ॥ पचमे पापसयुक्ते गुरो पचमगे शनौ ॥१२०॥ पचमे भौमसयुक्ते लग्नेशे धनसगते ॥ जात जात विनाश च दीर्घायुर्भ्रैव मानव ॥१२१॥

पचम भावफल

पचमेश ६।७।८ इन स्थानो मे हो तो पुत्रहीन होता है। और पचमेश केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो पुत्रलाभ की सभावना है।। पचमेश यदि गुरु हो और सूर्य शुभस्थान मे हो तो एक पुत्र स्थिर रहता है पर यदि पचमेश केन्द्र या नवमभाव मे हो । नवमभाव मे तथा पचमभाव मे इसी प्रकार के योग हो तो उन पर से पिता का विचार भी करे।। कारक मगल दशमभाव मे हो, पचमेश अस्त हो या पापग्रहो के बीच मे (पापाक्रान्त) तथा बलहीन हो और पुत्रस्थान पचम का स्वामी नीचराशि का बलहीन हो तो स्त्री 'काकबध्या' (एक सन्तान होने के बाद और सन्तान न हो) होती है।। पचमेश षष्ठस्थान मे हो और लग्नेश मगल की राशि मे हो तो प्रथम सन्तान के बाद स्त्री काकवन्ध्या होती है। सुताधीश नीचराशि का होकर ६।७।८ स्थानो मे हो और पचमस्थान मे केतु या बुध हो तो स्त्री काकवन्ध्या होती है।। जिस जन्मकुण्डली मे सुतेश नीच का होकर सुतस्थान को न देखता हो और सुतस्थान मे शनि बुध हो तो स्त्री काकवन्ध्या होती है।। भाग्येश लग्न मे हो, पचमेश नीचराशि का हो और सुतस्थान मे केतु, बुध हो तो बडे कष्ट से पुत्रजन्म होता है।। सुतेश नीच का होकर छठेभाव मे या सातवे आठवे स्थान मे शत्रुराशि मे हो और सुतस्थान मे पापग्रह हो तो बडे कष्ट से पुत्रजन्म होता है।। पुत्रस्थान मे बुध की राशि ३।६ हो या शनि की राशि १०।११ हो और पचमभाव को शनि या मादीयुक्त या देखते हो तो दत्तक आदि पुत्र होते है।। सूर्य, चन्द्रमा यदि एक स्थान मे एक ही नवमाश मे हो तो बालक तीन माताओ से भाई और दो पिता से पोषित होता है।। पचमेश छठे घर मे हो षष्ठेश बारहवे स्थान मे हो और लग्नेश दुर्बल हो तो दत्तक पुत्र होता है।। सुतस्थान मे बुध, गुरु या शुक्र हो और बलवान् हो, सूर्ययुक्त हो या देखता हो और सुतेश बलवान् हो तो बहुत पुत्र होते है।। सुतेश चन्द्रमा से युक्त हो और त्रिराशिपति भी चन्द्रमा हो तो कन्या होवे।। सुतेश पुरुष राशि मे हो चन्द्रमा राहु के साथ हो और पचमभाव मे शनि हो तो सन्तान जारज है।। सुतेश राहु के साथ होकर सुतस्थान मे ही स्थित हो और चन्द्रमा या गुरु की दृष्टि नही हो तो सन्तान जारज है।। लग्न और चन्द्रमा को गुरु नही देखता हो और चन्द्रमा सूर्ययुक्त नही हो तथा पापग्रह युक्त सूर्य पुत्र नवाश मे हो तो जारज सन्तान

हों। लग्न से द्वादशभाव मे चन्द्रमा हो और आठवे गुरु हो और पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो सन्तान जारज है॥और पुत्रस्थानपति उच्च का हो लग्न से दूसरे तथा त्रिकोण मे हो और बृहस्पति की दृष्टि हो या युक्त हो तो भाग्यशाली पुत्र होता है॥ तीन चार पापग्रहो से युक्त पञ्चमेश अष्टमभाव मे हो तो नीची श्रेणी मे रहनेवाला बालक होता है॥ गुरु पुत्रभाव मे हो, सुतेश शुक्र के साथ हो तो ३२ या ३३ वे वर्ष मे पुत्र प्राप्ति होती है॥ सुतेश केन्द्र मे हो और पुत्रकारक से युक्त हो तो ३०–३६ वे वर्ष मे पुत्रप्राप्ति होती है। लग्न से नवमस्थान मे बृहस्पति हो तथा गुरु से नवमभाव मे शुक्र हो लग्नेश भी शुक्र के साथ हो तो ४० वे वर्ष मे पुत्र होता है॥और पुत्रस्थान मे राहु हो सुतेश पापग्रह हो एव गुरु नीच मे हो तो ३२ वे वर्ष मे पुत्र की मृत्यु होती है॥ बृहस्पति पचम स्थान मे पापग्रह युक्त हो तथा पचमस्थान मे भी पापग्रह हो तो २६,३३,४० वे वर्षो मे पुत्रक्षय होता है॥ लग्न मे मान्दी (शनिका गुलिक लग्न) लग्नेश नीचराशि मे हो तो ५६ वे वर्ष म पुत्रशोक होता है॥ चतुर्थ तथा षष्ठस्थानो मे पापग्रह हो और सुतेश परमोच्च का होकर लग्नेश से युक्त हो पुत्रकारक भी शुभग्रह सयुक्त हो तो दस पुत्रसन्तान होती हैं। बृहस्पति परमोच्च मे प्राप्त हो धनेश राहुयुक्त हो, भाग्येश भाग्यस्थान मे हो तो ९ पुत्रसन्तान होती है। बृहस्पति पुत्र या भाग्यस्थान मे हो तथा पुत्रेश बलवान हो, धनेश दशम मे हो तो ८ पुत्र होते हैं। पचम के पञ्चम (नवम) मे शनि हो तथा नवमेश पञ्चम मे हो तो ७ पुत्र होते हैं एव दो गर्भो मे २-२ (जुडवा) होते हैं। धनेश तथा पञ्चमेश पञ्चमभावमे हो तो छ पुत्र होते हैं और उनमे से तीन सन्तान नष्ट होती है॥ शनि से पचमस्थान मे गुरु हो, गुरु से पचम सूर्य हो सूर्य से पचम राहु हो तो एक पुत्र होता है॥ पचमस्थान मे पापग्रह हो, गुरु से पचमभाव मे शनि हो तो दूसरी या तीसरी स्त्री से पुत्र हो और वह जातक ३ स्त्रीवाला हो। पचम स्थान मे पापग्रह हो तथा गुरु से पचम मे शनि हो पचम स्थान मे मगल भी हो तथा लग्नेश दूसरे भावो मे हो तो अनेक पुत्र होकर भी न रहे तथा जातक दीर्घायु होता है॥८८–१२१॥

अथ षष्ठभावफलम्

षष्ठाधिपोऽपि पापश्चेद्देहे वाप्यष्टमे स्थित तदा व्रणो भवेद्देहे कर्मस्थानेऽप्यय विधि ॥१२२॥ एव पित्रादिभावेशास्तत्तत्कारकसयुता ॥ व्रणाधिपयुताश्चापि षष्ठाष्टमयुता यदि ॥१२३॥ तेषामपि व्रण वाच्यमादित्येन शिरोव्रणम्॥इन्दुना च मुखे कण्ठे भौमेन ज्ञेन नाभिषु ॥१२४॥ गुरुणा नासिकाया च भृगुणा नयने पदे ॥ शनिना राहुणा कुक्षौ केतुना च तथा भवेत् ॥१२५॥ लग्नाधिप कुजक्षेत्रे बुधस्य यदि सस्थित ॥ यत्र कुत्र स्थितो ज्ञेन वीक्षितो मुखरुक्प्रद ॥१२६॥ लग्नाधिपौ कुजबुधौ चद्रेण यदि सस्थितौ ॥ राहुर्वा शनिना सार्द्धं कुष्ठ तत्र विनिर्दिशेत् ॥१२७॥ लग्नाधिप विना लग्ने स्थितश्चेत्तमसा शशी ॥ श्वेतकुष्ठ तदा कृष्ण कुष्ठ च शनिना सह ॥१२८॥ कुजेन रक्तकुष्ठ स्यात्तत्तदेव विचारयेत् ॥ लग्ने षष्ठाष्टमाधीशौ रविणा यदि सस्थितौ ॥१२९॥ ज्वरगड कुजे यदि शस्त्रव्रणमथापि वा ॥ बुधेन पित्त गुरुणा रोगाभाव विनिर्दिशेत् ॥१३०॥ स्त्रीभि शुक्रेण शनिना वायुना सयुतो यदि ॥ गण्डश्चाण्डालतो नाभौ तम केत्वोर्गृहे भयम् ॥१३१॥ चद्रेण गण्डसलिले कफश्लेष्मादिना भवेत् ॥ एव पित्रापि भावाना तत्तत्कारक योगत ॥१३२॥ गण्डे तेषा भवेदेवमूह्यमत्र मनीषिभि ॥

हृतवामुग्रहादस्त्रिगजवाजिधनाधिपा ॥१३३॥ श्रीपति स्वोच्चतेजस्वी गृहारामसुखो भवेत् ॥
षष्ठे विरचित पुसा प्रभावरिपुनीचयो ॥१३४॥ लक्ष्म्या संलिंगितो देहे गजभूमिसहस्रभृत् ॥
रोगस्थानगते पापे तदीशे पापसयुते ॥१३५॥ राहुणा सयुते मदे सर्वदा रोगसयुत ॥
रोगस्थानगते भौमे तदीशे रध्रसयुते ॥१३६॥ षड्वर्षेद्वादशे वर्षे ज्वररोगी भवेन्नर ॥
षष्ठस्थानगते जीवे तद्गृहे चन्द्रसयुते ॥१३७॥ द्वाविंशैकोनविंशेऽब्दे कुष्ठरोग विनिर्दिशेत् ॥
रोगस्थान गतो राहु केन्द्रे मान्दिसमन्वित ॥१३८॥ लग्नेशे नाशराशिस्थे षड्विंशे क्षयरोगता ॥
व्ययेशे रोगराशिस्थे तदीशे व्ययराशिगे ॥१३९॥ त्रिशद्वर्षैकोनवर्षे गुल्मरोग विनिर्दिशेत् ॥
रिपुस्थानगते चन्द्रे शनिना सयुते यदि ॥१४०॥ पञ्चपञ्चाशताब्देषु रक्तकुष्ठ विनिर्दिशेत् ॥
लग्नेशे सप्तराशिस्थे मदे शत्रुसमन्विते ॥१४१॥ एकोनषष्टिवर्षे तु वातरोगार्दितो भवेत् ॥
रन्ध्रेशे रिपुराशिस्थे व्ययेशे लग्नसंस्थिते ॥१४२॥ चन्द्रे षष्ठांशसयुते वसुवर्षे मृगाद्भयम् ॥
षष्ठाष्टमगतो राहुस्तस्मादष्टगते शनौ ॥१४३॥ वत्सराग्निभय तस्य त्रिवर्षे पक्षिदोषभाक्
॥१४४॥ षष्ठाष्टमगते सूर्ये तद्द्वये चन्द्रसयुते ॥ पञ्चमे नवमेऽब्दे तु जलभीति विनिर्दिशेत्
॥१४५॥ अष्टमे मदसयुक्ते राहौ द्वादशे कुज ॥ त्रिंशाब्द च दशोऽष्टेतु स्फोटकादिविनिर्दिशे
त् ॥१४६॥ रन्ध्रेशे राहुसयुक्ते तदशे रन्ध्रकोणगे ॥ द्वाविंशेऽष्टादशे वर्षे प्रथिमेहादिपीडनम्
॥१४७॥ लाभेशे रिपुभावस्थे तदीशे लाभराशिगे ॥ एकत्रिंशैकचत्वारि शत्रुमूलाद्धनव्यय
॥१४८॥ सुतेशे रिपुभावस्थे षष्ठेशे गुरुसयुते ॥ व्ययेशे लग्नभावस्थे तस्य पुत्रो रिपुर्भवेत् ॥
१४९॥ लग्नेशे षष्ठराशिस्थे तदशे षष्ठराशिगे ॥ दशमैकोनविंशेऽब्दे शुनका्द्भीतिरुच्यते
॥१५०॥

षष्ठभावफल

षष्ठस्थान का स्वामी पापग्रह हो और लग्न मे या अष्टमभाव मे हो तो देह मे फोडा–फुन्सी होते हैं॥ दशमस्थान से भी इसी तरह विचार करना॥ इसी प्रकार पिता आदि भावो के स्वामी भी अपने २ कारक (पितृकारक) आदि से तथा षष्ठेश से युक्त हो ६।८ भावगत हो तो उनके भी व्रण (फोडा आदि) कहना चाहिये। विशेष षष्ठाधिपति यदि सूर्य हो तो शिर मे घाव या फोडा, चन्द्रमा से मुख मे या कठ मे, मगल तथा बुध से नाभि मे, गुरु से नासिका मे, शुक्र से आख तथा पैर मे, शनि, राहु, तथा केतु मे कोख मे फोडा या घाव अथवा नासूर होता है॥ लग्न का स्वामी मगल या बुध के स्थान मे किसी भी स्थान मे हो किन्तु बुध की दृष्टि हो तो मुख मे रोग होता है॥ लग्न के स्वामी मगल या बुध मे से कोई हो और चन्द्रमा की दृष्टि हो अथवा शनि के साथ राहु लग्न मे हो तो कुष्ठ (कोढ) होता है॥ लग्नेश के बिना लग्न मे राहु के साथ चन्द्रमा हो तो श्वेत कुष्ठ होता है और राहु के साथ शनि हो तो काला कोढ होता है॥ ऐसे ही मगल राहु के योग मे रक्तकुष्ठ होता है॥ इसी प्रकार तत्तद् भाव का विचार करना चाहिए। लग्न मे ६।८ के स्वामी यदि सूर्य के साथ हो तो ज्वर, गलगण्ड रोग होते हैं। मगल हो तो ग्रन्थि अथवा हथियार का घाव, बुध मे पित्त सम्बन्धी बीमारी हो। यदि बृहस्पति मे यह योग हो तो नीरोग रहे॥ यह योग शुक्र के साथ हो तो स्त्रियो के द्वारा, शनि के साथ हो तो वायु द्वारा गण्डरोग व्रण या घाव होता है। राहु मे चाण्डाल के द्वारा केतु मे घर मे भय चन्द्रमा से जल मे या कफ श्लेष्म से गण्ड (घाव आदि) जानना। इसी प्रकार पिता, माता

आदि के कारकों के साथ उपर्युक्त योग हो तो उनको भी व्याधि, भय होता है। (यहां से २ श्लोक आत्मकारक के दीप्तादि अवस्था के फल निर्देशक है, प्रमाद से यहा प्रक्षिप्त हो गये हैं तथापि अर्थ लिखा जाता है शत्रुओ का नाश करने के बाद शत्रुओ के घर से प्राप्त हाथी, घोड़े, घर, महल आदिका स्वामी होता है। लक्ष्मीपति तथा प्रचण्ड तेजस्वी, मकान बगीचा आदि से सुखी होता है।। दीप्त अवस्थावाले प्रभौ = स्वामी (ग्रह का विशेषण) शत्रुराशि तथा नीचराशि का न हो तो हाथी आदि युक्त राज्यलक्ष्मी जातक को घेरे रहती है। षष्ठस्थान मे पापग्रह हो, षष्ठेश पापग्रहयुक्त हो। राहु से शनि युक्त हो तो सर्वदा रोगी ही रहता है।। रोगस्थान (षष्ठ) मे मगल हो तथा रोगेश अष्टम भाव मे हो तो ६।१२ वे वर्ष मे ज्वर रोग होता है।। षष्ठस्थान मे गुरु हो, छठे घर मे चन्द्रमा हो तो १९ या २२ वे वर्ष मे कुष्ठ रोग होता है। रोग स्थान मे राहु हो केन्द्रस्थान मे मान्दी (शनि – गुलिक लग्न) हो लग्नेश अष्टमभाव मे हो तो २६ वे वर्ष मे क्षय (तपेदिक) रोग होता है।। व्ययेश छठे भाव मे हो, षष्ठेश व्ययभावमे हो तो २९।३० वर्ष मे गुल्मरोग होता है। षष्ठस्थान मे चन्द्रमा यदि शनि से युक्त हो तो ५५ वे वर्ष मे रक्तकुष्ठ होता है।। लग्नेश लग्न मे हो, शनि शत्रुग्रह के साथ हो।। तो ५९ वे वर्ष मे वात व्याधि होती है। अष्टमेश शत्रुराशि मे हो, व्ययेश लग्न मे हो तथा चन्द्रमा षष्ठभाव के नवाश मे हो तो ८ वे वर्ष मे पशु से भय हो। षष्ठ तथा अष्टमभाव मे राहु हो और राहु से आठवे शनि हो।। तो जातक को प्रथम वर्ष मे अग्नि से भय और तीसरे वर्ष मे पक्षी से खतरा हो।। छठे आठवे सूर्य हो और उन्ही भावो मे चन्द्रमा साथ हो तो पाचवे या नौवे वर्ष मे जल से भय होता है।। मगल और शनि ७।८।१०।१२ इन स्थानो मे सयुत होकर स्थित हो तो ३० वर्ष की आयु तक स्फोटक (चेचक = शीतला) का भय होता है तथा अष्टमेश राहु यक्त हो अष्टमभाव की नवमाश राशि अष्टमभाव से त्रिकोण भाव मे हो १८ या २२ वे वर्ष मे ग्रन्थिवात या प्रमेह आदि रोग हो लाभेश छठे भाव मे हो और षष्ठेश लाभ स्थान मे हो तो ३१ या ४१ वे वर्ष मे शत्रु के कारण (मुकदमा आदि मे) धनव्यय होता है।। सुतेश षष्ठभाव मे हो, षष्ठेश गुरु के साथ हो तथा व्ययेश लग्न मे हो तो उस जातक का पुत्र ही शत्रु हो जाता है।। लग्नेश छठे भाव मे हो, लग्ननवमाश राशि भी छठे भाव मे हो तो १० वे या १९ वे वर्ष मे कुत्ते से भय हो ॥१२२–१५०॥

अथ सप्तमभावफलम्

कलत्रपो विना स्वर्क्षं षडादित्रयसंस्थित ॥ रोगिणीं कुरुते भार्यां तथा तुगादिकं विना ॥१५१॥ स्त्रीपुत्रयात्राफलचिन्तनानि कार्याण्यनेनापि सहाधिपेन ॥ शुभेन कार्यं शुभद तथैव पापेन पाप फलमूहनीयम् ॥१५२॥ सप्तमे तु स्थिते शुक्रेऽतीवकामी भवेन्नर ॥ यत्रकुत्रस्थिते पापयुते स्त्रीमरण भवेत् ॥१५३॥ दाराधिप पुण्यग्रहेण युक्तो दृष्टोऽपि वा पूर्णबल प्रसन्न ॥ सौभाग्ययुक्तो गुणवान्प्रभुश्च दाता विभोगय बहुधान्यमाहु ॥१५४॥ कलत्रेशे बहुगुणे तुगवक्रादिहेतुभि ॥ बहुभार्यान्तर विद्याच्छत्रुनीचास्तगेषु च ॥१५५॥ परमोच्चगते मन्दाधिनाथे मन्दराशौ शुभखेचरेण दृष्टे ॥ अथवा भृगुसदने तुगे बहुभार्य प्रवदति बुद्धिमन्त ॥१५६॥ वध्यासगो मदे भानौ चन्द्रराशिसम स्त्रिय ॥ कुजे रजस्वलासगो वध्यासगश्च कीर्तित ॥१५७॥ बुधे वेश्या च हीना च वणिक्स्त्री वा प्रकीर्तिता ॥ गुरौर्ब्राह्मण

भार्या स्याद्गर्भिणी सग एव च ॥१५८॥ हीना च पुत्रिणी वाच्या मन्दराहुफणीश्वरै' ॥ कुजोक्ते सुस्तना मन्दा व्याधिर्वोर्बलिनस्तथा ॥१५९॥ कठिनोर्ध्वकुजाचार्ये श्रेष्ठस्थूलोत्तमस्तना ॥ पापे द्वादशकामस्थे क्षीणचद्रस्तु पचमे ॥१६०॥ जातश्च भार्यावश्य स्यादिति जातिविरोधकृत् ॥ जामित्रे मदभौमस्थे तदीशे मदसूमिजे ॥१६१॥ वेश्या वा जारिणी वापि तस्य भार्या न सशय' ॥ दारेशे स्वोच्चराशिस्थे दारे शुभसमन्विते ॥१६२॥ लग्नेशे बलसयुक्ते स कलत्रसमन्वित ॥१६३॥ कलत्रनाथे रिपुनीचसस्थे मूढेऽथवा पापनिरीक्षिते वा ॥ कलत्रभे पापयुते च दृष्टे कलत्रहानि प्रवदति सत' ॥१६४॥ षष्ठाष्टमव्ययस्थेषु मदेशो दुर्बलो यदि ॥ नीचराशिगते कारको युक्ते दारनाश विनिर्दिशेत् ॥ कलत्रस्थानगे चद्रे तदीशे व्ययराशिगे ॥१६५॥ कारको बलहीनश्च दारसौख्य न विद्यते ॥ भार्याधिपे नीचगृहे च पापेपापर्क्षगे वा बहुपापयुक्ते ॥ क्लीबे ग्रहे सप्तमराशिसस्थे तस्योदयाशे द्विकलत्रसिद्धि ॥१६६॥ कलत्रस्थानगे भौमे शुक्रे जामित्रगे शनौ ॥१६७॥ लग्नेशे रध्रराशिस्थे कलत्रत्रयवान् भवेत् ॥ द्विस्वभावगते शुक्रे स्वोच्चेतद्राशिनायके ॥१६८॥ दारेशे बलसयुक्ते बहुदारसमन्वित ॥ दारेशे शुभराशिस्थे स्वोच्चस्वर्क्षगतो भृगु' ॥१६९॥ पचमे नवमेऽब्दे तु विवाह प्रायशो भवेत् ॥ दारस्थान गते सूर्ये तदीशे भृगुसयुते ॥१७०॥ सप्तमैकादशे वर्षे विवाह प्रायशो भवेत् ॥ कुटुबस्थानगो शुक्रे दारेशे लाभराशिगे ॥ दशमे षोडशाऽब्दे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७१॥ लग्नकेन्द्रगते शुक्रे लग्नेशे मदराशिगे ॥ वत्सरैकादशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७२॥ लग्नात्केन्द्रगते शुक्रे तस्मात्कामगते शनौ ॥ द्वादशैकोनविंशे च विवाह प्रायशो भवेत् ॥१७३॥ चन्द्राज्जामित्रगे शुक्रे शुक्राज्जामित्रगे शनौ ॥ वत्सरेऽष्टादशे प्राप्ते विवाह लभते नर' ॥१७४॥ धनेशे लाभराशिस्थे लग्नेशे कर्मराशिगे ॥ अब्दे पचदशे वर्षे विवाह लभते नर ॥१७५॥ धनेशे लाभराशिस्थे लाभेशे धनराशिगे ॥ अब्दे त्रयोदशे प्राप्ते विवाह लभते नर ॥१७६॥ रन्ध्राज्जामित्रगे शुक्रे तदीशे भौमसयुते ॥ द्वाविंशे सप्तविंशाब्दे विवाह लभते नर ॥१७७॥ दाराशकगते लग्ने नाथे दारेश्वरे व्यये ॥ त्रयोविंशे च षड्विंशे विवाह लभते नर ॥१७८॥ रन्ध्राशे दारराशिस्थे लग्नाशे भृगुसयुते ॥ पचविंशे त्रयस्त्रिंशे विवाह लभते नर ॥१७९॥ भाग्याद्भाग्यगते शुक्रे तद्द्वये राहु सयुते ॥ एकत्रिंशात्त्रयस्त्रिंशे दारलाभ विनिर्दिशेत् ॥१८०॥ भाग्याज्जामित्रगे शुक्रे तद्द्यूने दारनायके ॥ त्रिंशे वा सप्तविंशाब्दे विवाह लभते नर ॥१८१॥ दारे च नीचराशिस्थे शुक्रे रध्रारिसयुते ॥ अष्टादशे त्रयस्त्रिंशे वत्सरे दारनाशनम् ॥१८२॥ मदेशे नाशराशिस्थे व्ययेशे मदराशिगे ॥ तस्य वैकोनविंशाब्दे दारनाश विनिर्दिशेत् ॥१८३॥ कुटुबस्थानगो राहु कलत्रे भौमसयुते ॥ पाणिग्रहे च त्रिदिने सर्पदष्टेवधूमृति ॥१८४॥ रध्रस्थानगते शुक्रे तदीशे सौरिराशिगे ॥ द्वादशैकोनविंशाब्दे दारनाश विनिर्दिशेत्॥१८५॥लग्नेशे नीचराशिस्थे धनेशे निधन गते ॥ त्रयोदशे तु सप्राप्ते कलत्रस्य मृतिर्भवेत् ॥१८६॥ शुक्राज्जामित्रगे चद्रे चद्राज्जामित्रगे बुधे ॥ रध्रेशे सुतभावस्थे प्रथमदशमाब्दिकम् ॥१८७॥ द्वाविंशे च द्वितीये च त्रयस्त्रिंशे तृतीयके ॥ विवाह लभते मर्त्यो नात्र कार्या विचारणा ॥१८८॥

सप्तम भाव फल

सप्तमभाव का स्वामी उच्चादि रहित होकर छठे या आठवे भाव मे हो तो स्त्री सदा रोगिणी रहती है॥ इस भाव से विचार योग्य कहते है–भार्या सम्बन्धी तथा पुत्रसम्बन्धी एव

यात्रा का फलाफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा।। सप्तमभाव मे शुक्र हो तो जातक अतिकामी होता है। अन्यभाव मे पापयुक्त हो तो स्त्री–मरण होता है।। भार्येश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नही हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानो मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है।। भार्या भवन का स्वामी ग्रह स्वगृह, उच्च, वक्र आदि कारणो से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नही रहती।। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रिया होती है। यह योग शुक्र से भी देखना।। उपर्युक्त योग शनि राशि मे सूर्य से हो तो स्त्री बन्ध्या होती है और स्त्रियो की सख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मगल के योग से भी बन्ध्या–सग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वेश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या वह पुरुष चरित्रहीनता मे इतना गिर जाता है कि–गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी–सग भी करता है और शनि राहु केतु से योग हो तो हीन जाति की प्राय रजोवती से सग हो।। मगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से सयोग हो स्वय जातक भी व्याधिग्रस्त होकर दुर्बल हो।। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो दीर्घ' लम्ब अतिस्थूल, वृत्तपीन घनस्तनी' नारी से सग हो। पापग्रह ७।१२ मे हो और क्षीण चन्द्रमा पचमभाव मे हो ।। ऐसे योग मे हुआ जातक स्त्री के वश मे रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव मे शनि मगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जारिणी हो अथवा वेश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि मे हो सप्तम घर मे शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है।। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर मे हो मूढावस्था मे या पापदृष्ट हो सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नही होता।। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान मे दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान मे चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे मे हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नही होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वय पापग्रह हो पापग्रह की राशि मे नीचराशि गत हो और पापग्रहो का सग हो नपुसक ग्रह भी सप्तम भाव मे हो उसकी नवाश दशा मे दो स्त्रिया हो सप्तमस्थानमे मगल और शुक्र भी हो शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव मे हो तो तीन स्त्रिया होती हैं। शुक्र द्विस्वभावराशि मे हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रिया होती है। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि मे हो और शुक्र स्वगृही या उच्च का हो , तो प्राय पाचवे या नौवे वर्ष मे विवाह होता है। सप्तमभाव मे सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवे या ग्यारहवे वर्ष मे प्राय विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव मे हो सप्तमेश लाभ (११) मे हो तो दशवे या सोलहवे वर्ष मे प्राय विवाह होता है।। शुक्र लग्न (केन्द्र) मे हो और लग्नेश शनि की राशि मे हो तो जातक का ११ वे वर्ष मे विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवे शुक्र हो और शुक्र से सातवे शनि हो तो अठारहवे वर्ष मे विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान मे हो तथा लग्नेश दशम मे हो तो १५ वे वर्ष मे विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान मे हो और लाभेश द्वितीय मे हो तो

१३वे वर्ष मे विवाह होता है।। आठवे स्थान से सातवे स्थान मे शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष मे विवाह होता है।। सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न मे हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान मे होतो २३या २६वे वर्षमे विवाह होता है।। आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव मे हो और लग्न के नवाश मे शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष मे विवाह होता है।। भाग्यस्थान से नौवे स्थान मे शुक्र हो उससे दूसरे स्थान मे राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष मे विवाह होता है।। भाग्यस्थान से सातवे स्थान मे शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान मे सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष मे विवाह होता है।। सप्तमेश नीचराशि मे हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष मे विवाह होता है।। शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव मे हो और व्ययेश शनि की राशि मे हो उसके १९ वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है।। द्वितीय स्थान मे राहु और सप्तम मे मगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है।। आठवे स्थान मे शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि मे हो तो १२ वे या १९वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है।। लग्नेश नीच राशि मे हो तथा धनेश अष्टमभाव मे हो तो १३ वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है।। शुक्र से सातवे स्थान मे चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे मे बुध हो और अष्टमेश पचमभाव मे हो तो पहिला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा २३वे मे होता है।।१५१–१८८।।

अथाष्टमभावफलम्

आयुःस्थानाधिपः पापैः सहैव यदि संस्थितः ।। करोत्यल्पायुषं जातं लग्नेशोऽप्यत्रसंस्थितः ।।१८९।। एवं हि शनिना चिंता कार्या तर्कविचक्षणैः ।। कर्माधिपेन च तथा चिंतनं कार्यमायुषः ।।१९०।। षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ।। लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायुः प्रयच्छति ।।१९१।। स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ।। दीर्घायुषं करोत्येव लग्नेशोऽष्टमपः पुनः ।।१९२।। लग्नाष्टमपकर्मेशमदाः केंद्रत्रिकोणयोः ।। लाभे वा संस्थितास्तद्वद्दिशेयुर्दीर्घमायुषम् ।। येषु यो बलवांस्तस्यानुसारादायुरादिशेत् ।।१९३।। अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ।। विंशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशत्परमायुषम् ।।१९४।। रंध्रेशे नीचराशिस्थे रंध्रे पापग्रहैर्युते ।। लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम् ।।१९५।। रन्ध्रेशे पापसंयुक्ते रध्रे पापग्रहैर्युते ।। व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्रं मृतिर्भवेत् ।।१९६।। केंद्रत्रिकोणपापस्थाः षष्ठाष्टसु मगा यदि ।। लग्ने रंध्रेश नीचस्थे जातः सद्योमृतो भवेत् ।।१९७।। पंचमे पापसंयुक्ते रंध्रेशे पापसंयुते ।। रंध्रे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्यः प्रजायते ।।१९८।। रध्रेशे रंध्रराशिस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ।। शुभदृष्टेन सफलं मासांते च मृतिर्भवेत् ।।१९९।। लग्नेशे स्वोच्चराशिस्थे चंद्रे लाभसमन्विते ।। रध्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्यं न संशयः ।।२००।।

अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रहो के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव मे) हो तो जातक को अल्पायु करता है।। इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये।। षष्ठभाव का स्वामी छठे या बारहवे मे हो और व्ययाधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

यात्रा का फलाफल ये सब विचार सप्तमभाव तथा सप्तमाधिपति से भी करना चाहिये। शुभयोग हो तो शुभफल होगा, और पापयोग हो तो अशुभ फल होगा।। सप्तमभाव मे शुक्र हो तो जातक अतिकामी होता है। अन्यभाव मे पापयुक्त हो तो स्त्री–मरण होता है।। भार्येश सौम्यग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो तथा पूर्ण बलवान् हो और अस्तगत नही हो तो भार्याका स्वामी भाग्यवान् गुणवान् दानी मानी तथा अनेक भोग का साधनवाला होता है।। भार्या भवन का स्वामी ग्रह स्वगृह, उच्च, वक्र आदि कारणो से बलवान् हो तो अनेक भार्या होती हैं। एव शत्रुराशि, नीच तथा अस्त हो तो भी अनेक भार्या होने पर भी जीवित नही रहती।। शनि स्थित राशि का स्वामी शनि के साथ परमोच्च का हो तथा शुभग्रह से युक्त हो अथवा दृष्ट हो तो एक से अधिक स्त्रिया होती हैं। यह योग शुक्र से भी देखना।। उपर्युक्त योग शनि राशि मे सूर्य से हो तो स्त्री वन्ध्या होती है, और स्त्रियो की सख्या चन्द्रमा की राशि के अनुसार जानना। इसी प्रकार मगल के योग से भी वन्ध्या–सग होता है और ऐसा योग बुध से हो तो वेश्या से योग हो, अथवा हीन जाति की स्त्री से एव वैश्य जाति की स्त्री से भी सम्बन्ध हो सकता है, विशेष क्या, वह पुरुष चरित्रहीनता मे इतना गिर जाता है कि–गुरु की स्त्री तथा ब्राह्मणी या गर्भिणी–सग भी करता है और शनि, राहु, केतु से योग हो तो हीन जाति की प्राय रजोवती से सग हो।। मगल के योग से हीन जाति और सुस्तना से सयोग हो स्वय जातक भी व्याधिग्रस्त होकर दुर्बल हो।। बृहस्पति से उपर्युक्त योग हो तो 'दीर्घ' लम्ब, अतिस्थूल, वृत्तपीन-घनस्तनी' नारी से सग हो। पापग्रह ७।१२ मे हो और क्षीण चन्द्रमा पचमभाव मे हो ।। ऐसे योग मे हुआ जातक स्त्री के वश मे रहता है और स्वजाति से विरोध करता है। सप्तम भाव मे शनि मगल और भावेश भी हो, तो जातक की स्त्री जारिणी हो अथवा वेश्या ही हो। सप्तमेश उच्चराशि मे हो, सप्तम घर मे शुभग्रह हो, लग्नेश बलवान् हो तो स्त्री का सुख स्थायी होता है।। सप्तमेश नीचराशि का शत्रु के घर मे हो मूढावस्था मे वा पापदृष्ट हो सप्तमराशि पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो स्त्री का सुख नही होता।। सप्तमेश ६।८।१२ स्थान मे दुर्बल होकर स्थित हो तथा नीच का हो तो स्त्री की हानि होती है। सप्तमस्थान मे चन्द्रमा हो और सप्तमेश १२वे मे हो भार्या कारक बलहीन हो तो स्त्री का सुख नही होता। स्त्रीभाव का स्वामी स्वय पापग्रह हो पापग्रह की राशि मे नीचराशि गत हो और पापग्रहो का सग हो, नपुसक ग्रह भी सप्तम भाव मे हो उसकी नवाश दशा मे दो स्त्रिया हो सप्तमस्थानमे मगल और शुक्र भी हो, शनि लग्नेश होकर अष्टमभाव मे हो तो तीन स्त्रिया होती है। शुक्र द्विस्वभावराशि मे हो और उस राशि का स्वामी उच्च का हो तथा स्त्रीभाव स्वामी बलवान् हो तो अनेक स्त्रिया होती हैं। दारेश (सप्तमेश) शुभ राशि मे हो और शुक्र स्वगृही या उच्च का हो , तो प्राय पाचवे यानौवे वर्ष मे विवाह होता है। सप्तमभाव मे सूर्य हो और सप्तमेश शुक्रयुक्त हो तो सातवे या ग्यारहवे वर्ष मे प्राय विवाह होता है। शुक्र द्वितीय भाव मे हो, सप्तमेश लाभ (११) मे हो तो दशवे या सोलहवे वर्ष मे प्राय विवाह होता है।। शुक्र लग्न (केन्द्र) मे हो और लग्नेश शनि की राशि मे हो तो जातक का ११ वे वर्ष में विवाह होता है। चन्द्रमा से सातवे शुक्र हो और शुक्र से सातवें शनि हो तो अठारहवे वर्ष मे विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान मे हो तथा लग्नेश दशम मे हो तो १५ वे वर्ष मे विवाह होता है।। द्वितीयेश लाभस्थान मे हो और लाभेश द्वितीय मे हो तो

१३वे वर्ष मे विवाह होता है॥ आठवे स्थान से सातवे स्थान मे शुक्र हो और उस स्थान की राशि के स्वामी के साथ मगल हो तो २२ वे या २७ वे वर्ष मे विवाह होता है॥ सप्तमभाव की नवाश राशि लग्न मे हो, लग्नेश तथा सप्तमेश १२वे स्थान मे होतो २३या २६वे वर्षमे विवाह होता है॥ आठवे भाव की नवाश राशि सप्तमभाव मे हो और लग्न के नवाश मे शुक्र हो तो २५ या ३३ वे वर्ष मे विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से नौवे स्थान मे शुक्र हो उससे दूसरे स्थान मे राहु हो तो ३१ से ३३वे वर्ष मे विवाह होता है॥ भाग्यस्थान से सातवे स्थान मे शुक्र हो और शुक्र से सातवे स्थान मे सप्तमेश हो तो २७वे या ३०वे वर्ष मे विवाह होता है॥ सप्तमेश नीचराशि मे हो और शुक्र ६।८ भाव के स्वामी से युक्त हो तो १८ वे या ३३ वे वर्ष मे विवाह होता है॥ शनिस्थान का स्वामी अष्टमभाव मे हो और व्ययेश शनि की राशि मे हो उसके १९ वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है॥ द्वितीय स्थान मे राहु और सप्तम मे मगल हो तो विवाह होने के तीसरे दिन सर्प से मृत्यु होती है॥ आठवे स्थान मे शुक्र हो और उसका स्वामी शनि की राशि मे हो तो १२ वे या १९वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है॥ लग्नेश नीच राशि मे हो तथा धनेश अष्टमभाव मे हो तो १३ वे वर्ष मे स्त्री की मृत्यु होती है॥ शुक्र से सातवे स्थान मे चन्द्रमा हो और चन्द्रमा से सातवे मे बुध हो और अष्टमेश पचमभाव मे हो तो पहिला विवाह १०वे, दूसरा २२वे और तीसरा ३३वे मे होता है॥१५१–१८८॥

अथाष्टमभावफलम्

करोत्यल्पायुष जात लग्नेशोऽप्यत्रसंस्थित ॥१८९॥
आयुस्थानाधिपः पापै सहैव यदि संस्थित ॥ कर्माधिपेन च तथा चिंतन कार्यमायुष एव हि शमिना चिंता कार्या तर्कविचक्षणे ॥ कर्माधिपेन च तथा चितन कार्यमायुष एव हि शमिना चिंता कार्या तर्कविचक्षणे ॥ लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायु ॥१९०॥ षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ लग्नेऽष्टमे स्थितो वापि दीर्घमायु ॥१९०॥ षष्ठे व्ययेऽपि षष्ठेशो व्ययाधीशो रिपौ व्यये ॥ स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ॥ दीर्घायुष करोत्येव प्रयच्छति ॥१९१॥ स्वस्थाने स्वांशकेनापि मित्रेशे मित्रमंदिरे ॥ लाभे वा लग्नेशोऽष्टमप पुन ॥१९२॥ लग्नाष्टमपकर्मेशमंदा केंद्रत्रिकोणयो ॥ लाभे वा लग्नेशोऽष्टमप पुन ॥१९२॥ लग्नाष्टमपकर्मेशमदा केंद्रत्रिकोणयो ॥ येषु यो बलवांस्तस्यानुसारादायुरादिशेत् ॥१९३॥ संस्थितास्तद्वद्विशेयुर्दीर्घमायुषम् ॥ येषु यो बलवास्तस्यानुसारादायुरादिशेत् ॥१९३॥
संस्थितास्तद्वद्दिशेयुर्दीर्घमायुषम् ॥ विशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिंशत्परमायुषम् ॥१९४॥
अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ विशद्वर्षाण्यसौ जीवेद्द्वात्रिशत्परमायुषम् ॥१९४॥
अष्टमाधिपतौ केंद्रे लग्नेशे बलवर्जिते ॥ लग्नेशे दुर्बले यस्य अल्पायुर्भवति ध्रुवम् ॥१९५॥
रध्रेशे नीचराशिस्थे रध्रे पापग्रहैर्युते ॥ व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्र मृतिर्भवेत् ॥१९६॥
रन्ध्रेशे पापसयुक्ते रध्रे पापग्रहैर्युते ॥ व्यये क्रूरग्रहैर्जाते जातमात्र मृतिर्भवेत् ॥१९६॥
केंद्रत्रिकोणपापस्था षष्ठाष्टसु भगा यदि ॥ लग्ने रध्रेश नीचस्थे जात सद्योमृतो भवेत् ॥१९७॥
केद्रत्रिकोणपापस्था षष्ठाष्टसु भगा यदि ॥ रध्रे पापग्रहैर्युक्ते अल्पायुष्य प्रजायते ॥१९८॥ रध्रेशे पचमे पापसयुक्ते रध्रेशे पापसयुते ॥ शुभदृष्टेन सफल मासाते च मृतिर्भवेत् ॥१९९॥ लग्नेशे रध्रराशिस्थे चन्द्रे पापसमन्विते ॥ रध्रस्थानगते जीवे दीर्घायुष्य न सशय ॥२००॥
स्वोच्चराशिस्थे चद्रे तामससमन्विते ॥

अष्टम भावफल

अष्टमेश पापग्रहो के तथा लग्नेश के साथ (अष्टमभाव मे) हो तो जातक को अल्पायु करता है॥ इसी प्रकार चन्द्रमा तथा दशमभाव के स्वामी से भी आयु का विचार करना चाहिये॥ षष्ठभाव का स्वामी छठे या बारहवे मे हो और व्ययाधीश ६।८।१२ वे या लग्न में

हों तो दीर्घायु होता है।। मित्रेश पचमेश, पचमभाव मे अपने ही नवाश मे हो तथा लग्नेश और अष्टमेश भी हो तो दीर्घायु होता है।। लग्नेश, अष्टमेश तथा दशमेश और शनि केन्द्र, त्रिकोण या लाभस्थान मे हो तो दीर्घायु होती है।। इनमे जो बलवान् हो उसके अनुसार आयु कहे।। अष्टमाधिपति केन्द्र मे हो लग्नेश बलहीन हो तो ३० या ३२ वर्ष की परमायु होती है।। अष्टमेश नीच राशि मे हो, अष्टम भाव मे पापग्रह हों और लग्नेश बलहीन हो तो अल्पायु होती है।। अष्टमेश पापयुक्त हो, अष्टमभाव मे पापग्रह हो तथा१२वे भी पापग्रह हो तो जन्मके बाद ही मृत्यु होती है।। केन्द्र त्रिकोण मे पापग्रह हो तथा छठे, आठवे शुभग्रह हो और अष्टमेश नीच का होकर लग्न मे हो तो जन्म के बाद ही मृत्यु होती है।। पचमभाव पापग्रह युक्त हो और अष्टमेश पापग्रह युक्त हो तथा अष्टमभाव मे पापग्रह युक्त हो तो अल्पायु होता है।। अष्टमेश अष्टम मे हो, चन्द्रमा पापयुक्त हो और शुभग्रह नही देखते हो तो एक महीने बाद मृत्यु होती है।। और शुभग्रह देखते हो तो मृत्यु नही होती।। लग्नेश उच्चराशि मे हो चन्द्रमा लाभ मे हो, आठवे स्थान मे बृहस्पति हो तो दीर्घायु होती है ।।१८९–२००।।

अथ नवमभावफलम्

भाग्याधिनाथोऽपि च भाग्यकर्ता शुक्रोऽपि पापे सह चेत्त्रिषु स्यात् ।। त्रिषडादिभावेषु च भाग्यहीन केन्द्रत्रिकोणोपगतोऽतिभाग्यम् ।।२०१।। अनेन धर्म परिकल्पनीय पिता तु चिन्त्यो निजमातुलस्य ।। शुभे शुभस्थानगते शुभ स्याद्विपर्यये तत्र विपर्यय स्यात ।।२०२।। भाग्यस्थिते वाहनराशिसस्थे शुक्रे च जीवे शुभराशियुक्ते ।। भाग्याधिपे कोणचतुष्टये वा महत्वदेशाभरण च यानम् ।।२०३।। भाग्यस्थानगते जीवे तदीशे केन्द्रसस्थिते ।। लग्नेशे बलसयुक्ते बहुभाग्याधिपो भवेत् ।।२०४।। भाग्येशे बलसयुक्ते भाग्ये भृगुसमन्विते ।। बलात्कोणगते जीवे पितृभाग्यसमन्वित ।।२०५।। भाग्यस्थानाद्द्वितीये वा सुखे भौमसमन्विते ।। भाग्येशे नीचराशिस्थे पिता निर्धन एव स ।।२०६।। भाग्येशे परमोच्चस्थे भाग्याशे जीवसयुते ।। लग्नाच्चतुष्टये शुक्रे पिता दीर्घायुरादिशेत् ।।२०७।। भाग्येशे केन्द्रभावस्थे गुरुणाभिनिरीक्षिते ।। तत्पिता वाहनैर्युक्तो राजा वा तत्समो भवेत् ।।२०८।। भाग्येशे कर्मभावस्थेकर्मेशे भाग्यराशिगे ।। कर्मेशाच्च धनाढ्यश्च कीर्तिमास्तत्पिता भवेत् ।।२०९।। परमोच्चाशगे सूर्ये भाग्येशे लाभसस्थिते ।। धर्मिष्ठो नृपवात्सल्य पितृपुण्यो भवेन्नर ।।२१०।।

नवमं भावफल

भाग्यस्थान (नवम) का स्वामी भाग्य को बनानेवाला है तथा ग्रहो मे शुक्र भाग्यकर्ता है। यदि शुक्र पापग्रहो के साथ ३।६।११ अथवा अष्टम मे हो तो मनुष्य को भाग्यहीन करता है। और यदि केन्द्र या त्रिकोण १।४।७।१०।।५।९, मे हो तो भाग्यशाली बनाता है।। और इस नवमस्थान से धर्म का विचार करना और अपने मामा के पिता का विचार करना चाहिये।। नवमभाव मे शुभग्रह हो अथवा शुक्र शुभस्थान मे हो तो शुभ होता है। और इसके विपरीत अशुभ जानना।। शुक्र और बृहस्पति इन दोनो ग्रहो मे से एक या दोनो ही नवमस्थान मे या चतुर्थस्थान मे शुभग्रह तथा शुभराशि मे युक्त हो और नवमेश केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो जमीन जायदाद, सम्पत्ति, सवारी आदि का सुख होता है।। भाग्येश केन्द्र मे हो और

भाग्यस्थान मे बृहस्पति हो एव लग्नेश बलवान हो तो जातक बडा भाग्यशाली होता है।। भाग्येश बलवान हो भाग्यस्थान मे शुक्र हो बलवान् गुरु केन्द्र मे हो तो पिता भी और आप भी भाग्यशाली होता है।। भाग्यस्थान से द्वितीय या चतुर्थ स्थान मे मगल हो तथा भाग्येश नीच राशि का हो तो पिता निर्धन ही होता है।। भाग्येश परमोच्च मे हो तथा भाग्यराशि के नवाश मे बृहस्पति हो तथा शुक्र केन्द्र मे हो तो पिता दीर्घायु होता है।। भाग्येश केन्द्रस्थान मे हो और बृहस्पति देखता हो तो जातक वाहनोसे युक्त राजा या राजा के समान होता है।। भाग्येश दशम मे हो और दशमेश भाग्यस्थान मे हो तो कर्मेश के प्रभाव स जातक का पिता धनी और यशस्वी होता है।। सूर्य परमोच्च मे हो तथा भाग्येश लाभस्थान मे हो तो पिता पुण्यात्मा राजमान्य होता है।।२०१-२१०।।

लग्नात्त्रिकोणगे सूर्ये भाग्येशे सप्तमस्थिते ।। गुरुणा सहिते दृष्टे पितृभक्तिसमन्वित ।।२११।। भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे ।। द्वात्रिंशात्परतो भाग्य वाहन कीर्तिसभव ।।२१२।। लग्नेशे भाग्यराशिस्थे षष्ठेशे भाग्यराशिगे ।। अन्योन्यवैर कुवते जनक कुत्सितो भवेत् ।।२१३।। कर्मेशे रिपुरन्ध्ररि फभवने जीवे च भिक्षाशन ।। भाग्येशे यदि जन्मकालसमये प्राप्नोति दीक्षा रवि ।।२१४।। कर्माधिपेन सहितो विक्रमेशो विधिबल ।। नीचराशिविमूढस्थो योगो भिक्षाशनात्प्रभु ।।२१५।। षष्ठाष्टमव्यये भानू रन्ध्रेशे भाग्यसयुते ।। व्ययेशे लग्नराशिस्थे षष्ठाशपचमे स्थिते ।।२१६।। जातस्य जननात्पूर्व जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। रन्ध्रस्थानगते सूर्ये रन्ध्रेशे भाग्यनायके ।।२१७।। जातस्य प्रथमाब्दे तु पितुर्मरणमादिशेत् ।। व्ययेशे भाग्यराशिस्थे नीचाशे भाग्यनायके ।।२१८।।

लग्न से त्रिकोण ५।९ मे सूर्य हो तथा भाग्येश सप्तमभाव मे हो और गुरुयुक्त या दृष्ट हो तो जातक पिता का भक्त होता है।। भाग्येश धनभाव मे हो और धनेश भाग्यभाव मे हो तो ३२ वर्ष की उम्र के बाद भाग्योदय होता है और वाहन तथा कीर्ति होती है।। लग्नेश तथा षष्ठेश भाग्यस्थान मे हो तो पिता पुत्र का आपस मे वैर होता है और पिता दुष्टबुद्धि होता है।। यदि दशम भाव मे बुध हो और जन्मलग्न मे भाग्येश सूर्य हो, ६।८।१२ स्थान मे गुरु हो तो भिखारी होता है।। तृतीयभाव का स्वामी दशमेश के साथ नीचराशि और मूढ अवस्था मे हो तो भिक्षाटन करता हुआ भगवान् के भरोसे पर जीता है।। सूर्य- ६।८।१२ म हो, अष्टमेश भाग्यस्थान मे हो और व्ययेश लग्न के छठे पचमाश मे हो , तो जातक के जन्म के पहिले ही पिता की मृत्यु होती है। अष्टमभाव मे सूर्य हो तथा अष्टमेश और नवमेश एक ही हो (जैसे मिथुन लग्न मे शनि) तो जातक के पहिले वर्ष मे ही पिता की मृत्यु होती है।। व्ययेश ही भाग्यस्थान मे हो, भाग्येश परमनीच का हो।।२११-२१८।।

तृतीये षोडशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। लग्नेशे नाशराशिस्थे रन्ध्रेशे भानुसयुते ।।२१९।। द्वितीये द्वादशे वर्षे पितुर्मरणमादिशेत् ।। भाग्याद्व्ययगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ ।।२२०।। षोडशेऽष्टादशे वर्षे जनकस्य मृतिर्भवेत् ।। भाग्याद्व्ययगते राहौ भाग्याद्भाग्यगते रवौ ।।२२१।। राहुणा सहिते सूर्ये चद्राद्भाग्यगते शनौ।।सप्तमैकोनविंशाब्दे तातस्य मरण

ध्रुवम् ॥२२२॥ भाग्येशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे भाग्यराशिगे ॥ चतुश्चत्वारिवर्षान्त्ये पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२३॥ रव्यंशे च स्थिते चद्रे लग्नेशे रन्ध्रसयुते ॥ पचत्रिंशैकचत्वारिवत्सरे पितृनाशनम् ॥२२४॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये मदभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२५॥ भाग्यात्सप्तमगे सूर्ये भ्रातृसप्तमगस्तम ॥ षष्ठमे पचविंशाब्दे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२६॥ रध्रजामित्रगे मदे मदाज्जामित्रगे रवौ ॥ त्रिंशैकविंशे षड्विंशे जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२२७॥

तो तीसरे या सोलहवे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है। लग्नेश अष्टमभाव मे हो, अष्टमेश के साथ मे सूर्य हो तो दूसरे या बारहवे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है। नवमस्थान से आठवे राहु और नौवे सूर्य हो तो सोलहवे या अठारहवे वर्ष मे पिता की मृत्यु हो। नवमभाव से आठवे राहु और नौवे सूर्य हो तथा राहु के साथ सूर्य हो और चन्द्रमा से नौवे शनि हो तो सातवे या १९ वे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्येश व्ययभाव मे हो और व्ययेश भाग्यभाव मे हो तो २४ वे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ चन्द्रमा सूर्यनवाश मे हो तथा लग्नेश आठवे भाव मे हो तो ३५ या ४१ वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और शनि, मगलयुक्त हो तो पचासवे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ भाग्यभाव से सूर्य सप्तम मे हो तथा तीसरे भाव से सातवे राहु हो तो छठे या २५वे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ आठवे भाव से सातवे शनि हो और शनि से सातवे सूर्य हो तो २१ या २६ अथवा ३० वे वर्ष मे पिता की मृत्यु हो ॥ ॥२१९–२२७॥

भाग्येशे नीचराशिस्थे तदीशे भाग्यराशिगे ॥ षड्विंशगे त्रयस्त्रिंशे पितुर्मरणमादिशेत् ॥२२८॥ रव्यंशकस्थिते चद्रे लग्नेशे रन्ध्रसयुते ॥ पचत्रिंशैकचत्वारिंवत्सरे पितृनाशनम् ॥२२९॥ पितृस्थानाधिपे सूर्ये चन्द्रभौमसमन्विते ॥ पचाशद्वत्सरे प्राप्ते जनकस्य मृतिर्भवेत् ॥२३०॥ परमोच्चगते शुक्रे भाग्येशेन समन्विते ॥ भ्रातृस्थाने शनियुते बहुभाग्याधिपो भवेत् ॥२३१॥ गुरुणा सयुते भाग्ये तदीशे केन्द्रराशिगे ॥ त्रिंशद्वर्षात्पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत् ॥२३२॥ परमोच्चगते सौम्ये भाग्येशे भाग्यराशिगे ॥ षट्त्रिंशाच्च पर चैव बहुभाग्य विनिर्दिशेत् ॥२३३॥ लग्नेशे भाग्यराशिस्थे भाग्येशे लग्नसयुते ॥ गुरुणा सयुते द्यूने धनवाहनलाभकृत् ॥२३४॥ भाग्याद्व्ययगतो राहुर्भाग्येशो निधन गते ॥ भाग्येशे नरराशिस्थे भाग्यहीनो भवेन्नर ॥२३५॥ भाग्यस्थानगते मदे शशिना च समन्विते ॥ लग्नेशे नीचराशिस्थे भिक्षाशी च नरो भवेत् ॥२३६॥

भाग्येश नीचराशि मे हो और उस राशि का स्वामी भाग्यराशि मे हो तो २६ या ३३ वे वर्ष मे पिता की मृत्यु हो॥ सूर्य के नवाश मे चन्द्रमा हो तथा लग्नेश आठवे भाव मे हो तो ३५ या ४१वे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ सूर्य दशमेश हो और चन्द्र मगलयुक्त हो तो ५० वे वर्ष मे पिता की मृत्यु होती है॥ शुक्र परमोच्च मे हो, भाग्येश युक्त हो, तृतीयभाव में शनि हो तो बहुत भाग्यवान् होता है॥ भाग्यस्थान मे गुरु हो, भाग्येश केन्द्र मे हो तो २० वर्ष के बाद भाग्योदय होता है॥ बुध परमोच्च मे हो, भाग्येश भाग्यराशि (स्वगृही) हो तो ३६ वे वर्ष मे पूर्ण भाग्योदय होता है॥ लग्नेश भाग्यराशि मे और भाग्येश लग्न मे तथा गुरु सप्तम मे हो तो

धन और सवारी का लाभ होता है।। भाग्यस्थान मे नीचे राहु हो और भाग्यराशि स्वामी पुरुषराशि मे अष्टमभाव मे हो तथा लग्नेश नीच राशि मे हो तो जातक का जीवन भिक्षा पर ही व्यतीत होता है।। २२८-२३६।।

अथ दशमभावफलम्

कर्माधिपो बलोनश्चेत्कर्मवैकल्यमादिशेत् ।। सौंहि केन्द्रत्रिकोणस्थो ज्योतिष्टोमादियागकृत् ।।२३७।। अत्रायुषश्चिंतन च कार्य स्यात्कर्मणस्तथा ।। शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा षष्ठाष्टमगृहं तथा।।२३८।। दशमे पापसंयुक्ते लाभे पापसमन्विते ।। दुष्कृतिं लभते मर्त्य स्वजनानां विदूषकः ।।२३९।। कर्मेशे नाशराशिस्थे कर्मेशे राहुसंयुते ।। जनद्वेषी महामूर्खो दुष्कृतिं लभते नरः ।। कर्मेशेद्यूनराशिस्थे मन्दभौमसमन्विते ।।२४०।। द्यूनेशे पापसंयुक्ते शिश्नोदरपरायणः ।। तुङ्गराशिं समाश्रित्य कर्मेशे गुरुसंयुते ।।२४१।। भाग्येशे कर्मराशिस्थे मानैश्वर्यप्रतापवान् ।। लाभेशे कर्मराशिस्थे कर्मेशे लग्नसंयुते ।। तावुभौ केन्द्रगौ वापि सुखजीवनभाग् भवेत् ।।२४२।। कर्मेशे बलसंयुक्ते मीनेगुरुसमन्विते ।। वस्त्राभरणसौख्यादि लभते मात्र संशय ।।२४३।। लाभस्थानगते सूर्ये राहुभौमसमन्विते ।। रविपुत्रेण संयुक्ते कर्मच्छेत्ता भवेन्नर ।।२४४।। मीने च राहौ यदि चोच्चकाशे भागीरथीस्नानफल लभेन्नर ।।२४५।। मानेच मीने यदि चार्कपुत्रे सन्यासयोग प्रवदन्ति तस्य।।२४६।। मीने जीवे भृगुयुते लग्नेशे बलसंयुते।। स्वोच्चराशिगते चन्द्रे सम्यग्ज्ञानार्थवान् भवेत् ।।२४७।। कर्मेशे लाभराशिस्थे लाभेशे लग्नसंस्थिते ।। कर्मराशिस्थिते शुक्रे रत्नवान् स नरो भवेत् ।।२४८।। केन्द्रत्रिकोणगे कर्मनाथे स्वोच्चसमाश्रिते ।। गुरुणा सहिते दृष्टे ■ कर्मसहितो भवेत् ।।२४९।। कर्मेशे लग्नभावस्थे लग्नेशेन समन्विते ।। केन्द्रत्रिकोणगे चन्द्रे सत्कर्मनिरतो भवेत् ।।२५०।। कर्मस्थानगते मंदे नीचखेचरसंयुते ।। कर्मेशे पापसंयुक्ते कर्महीनो भवेन्नर ।।२५१।। कर्मेशे व्ययराशिस्थे रन्ध्रेशे कर्मसंस्थिते ।। पापग्रहेण संयुक्ते दुष्कर्मनिरतो भवेत् ।।२५२।। कर्मेशे नीचराशिस्थे कर्मस्थे पापखेचरे।। कर्मभात्कर्मणि पापे कर्मवैकल्यमादिशेत् ।।२५३।। कर्मस्थानगते चन्द्रे तदीशे तत्त्रिकोणगे ।। लग्नेशे केन्द्रभावस्थे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२५४।। लाभेशे कर्मभावस्थे कर्मेशे बलसंयुते ।। देवेन्द्रगुरुणा दृष्टे सत्कीर्तिसहितो भवेत् ।।२५५।। कर्मस्थानाधिपे भाग्ये लग्नेशे कर्मसंयुते ।। लग्नात्पञ्चमगे चन्द्रे ख्यातिकीर्ति विनिर्दिशेत् ।।२५६।।

दशमभाव फल

दशमेश बलहीन हो तो कर्म (क्रियाशक्ति) मे विकलता होती है। सूर्य केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो 'ज्योतिष्टोम' आदि यज्ञ करनेवाला होता है।। इस दशमस्थानसे आयुका विचार तथा भले बुरे कर्मो का विचार करना चाहिये। कर्मेश के लिये शत्रुराशि और नीचराशि का त्याग तथा ६।८ भाव का त्याग उत्तम होता है।। दशमभाव पापराशियुक्त हो और लाभस्थान मे भी पापग्रह हो तो जातक कर्महीन होता है और स्वजनो का निन्दक होता है।। दशमेश अष्टमभाव मे हो और राहु साथ मे हो तो जनद्वेषी, महामूर्ख और दुर्गतियुक्त होता है।। दशमेश सातवे स्थान मे हो, शनि मगल युक्त हो और सप्तमेश पापग्रह युक्त हो तो जातक केवल कामी, भोगासक्त और पेट भरना ही परम पुरुषार्थ जानता है। दशमेश उच्च मे तथा

बृहस्पति युक्त हो और भाग्येश दशम मे हो तो प्रतिष्ठा ऐश्वर्य और प्रतापवाला होता है। लाभेश दशमभाव मे हो और दशमेश लग्न मे हो अथवा ये दोनो केन्द्र मे हो तो जीवन सुखमय होता है।। दशमेश बलवान् होकर मीनराशि मे बृहस्पतियुक्त हो तो उत्तमवस्त्र, आभूषण आदि प्राप्त होता है।। लाभस्थान मे सूर्य, मगल, शनि, राहु हो तो जातक कर्मबन्धन का करनेवाला होता है।। राहु यदि मीन राशि मे अपने उच्चाश पर हो तो मनुष्य को भागीरथी गगास्नान का सुयोग प्राप्त होता है। शनि यदि मीनराशि का होकर दशमभाव मे स्थित हो तो सन्यास ग्रहण करता है।। मीनराशि मे स्थित गुरु, शुक्र से युक्त हो, लग्नेश बलवान् हो और चन्द्रमा उच्च राशि का हो तो ज्ञानी, धनी, मानी होता है।। दशमेश लाभराशि मे हो, लाभेश लग्न मे हो, दशमभाव मे शुक्र हो तो जातक रत्नवाला (जौहरी) होता है और दशमेश केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे उच्च राशि मे हो और गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्य कर्मयोगी होतर है।। दशमेश लग्नेश के साथ लग्न मे हो और चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो श्रेष्ठकर्मरत रहता है।। दशमभाव मे शनि नीचराशिगत ग्रह युक्त हो और दशमराशि के नवाश मे भी पापग्रह हो तो मनुष्य कर्महीन होता है।। दशमेश अपने नवाश मे हो, अष्टमेश दशमभाव मे हो और पापग्रह से युक्त हो तो जातक दुष्कर्म निरत रहता है। दशमेश नीचराशि मे हो और दशमभाव मे पापग्रह हो तथा दशमभाव से दशमभाव मे (अर्थात् लग्न से सप्तम मे) पापग्रह हो तो जातक का कोई काम पूरा नही होता।। दशमभाव मे चन्द्रमा हो दशमेश चन्द्रमा से त्रिकोण ९।५ मे हो लग्नेश दशम मे हो तो श्रेष्ठ कीर्तिवाला होता है।। लाभेश दशमभाव मे हो और दशमेश बलवान् हो गुरु की दृष्टि हो तो सुयशवाला होता है।। दशमेश नवम मे हो लग्नेश दशमभाव मे हो लग्न से पचमभाव मे चन्द्रमा हो तो जातक सत्कीर्ति से विख्यात होता है ।।२३७-२५६।।

अथैकादशभावफलम्

लाभाधिपो यदा लाभे तिष्ठेत्केन्द्रत्रिकोणयो ।। बहुलाभ तदा कुर्यादुच्चसूर्यांशगोऽपि वा ।।२५७।। लाभेशे धनराशिस्थे धनेशे केन्द्रसस्थिते ।। गुरुणा सहिते भावे गुरुलाभ विनिर्दिशेत् ।।२५८।। षट्त्रिंशे वत्सरे प्राप्ते सहस्रद्वयनिष्कभाक्।। केन्द्रत्रिकोणगे भावेनाथे शुभसमन्विते ।। चत्वारिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रार्ध च निष्कभाक् ।।२५९।। लाभस्थाने गुरुयुते धने चद्रसमन्विते ।। भाग्यस्थानगते शुक्रे षट्सहस्राधिपो भवेत् ।।२६०।। लाभाच्च लाभगे जीवे गुरुचद्रेण सयुते ।। धनधान्याधिप श्रीमान्रत्नाद्याभरणैर्युत ।।२६१।। लाभेशे लग्नभावस्थे लग्नेशे लाभसयुते ।। त्रयस्त्रिंशे तु सम्प्राप्ते सहस्रनिष्कभाग्भवेत् ।।२६२।। धनेशे लाभराशिस्थे तदीशे धनराशिगे ।। विवाहात्परतश्चैव बहुभाग्य समादिशेत् ।।२६३।। धैर्येशे लाभराशिस्थे लाभेशे भ्रातृसस्थिते ।। भ्रातृभावाद्धनप्राप्तिर्दिव्याभरणसयुत ।।२६४।। लाभे पापे च व्यये पापयुक्ते दृष्टे पापे क्षेत्रयुक्तेन युक्ते ।। लाभात्कामे लाभवित्ते निरर्थं सौम्यार्थं यो वीक्षण विघ्ननाश ।।२६५।।

एकादशभाव फल

लाभेश लाभ मे हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो बहुत लाभ कारक होता है। उच्चराशि का और सिह नवाश मे और भी श्रेष्ठ है।। लाभेश द्वितीय मे हो तथा द्वितीयेश

द्र मे हो और गुरु से युक्त हो तो अच्छा बडा लाभ होता है॥ और छत्तीसवे वर्ष मे दो हजार ष्कमुद्रा (प्राचीन मुद्रा सुवर्ण की के हिसाब से तो बहुत होता है) का लाभ होता है। भेश केन्द्र या त्रिकोण मे शुभग्रह युक्त हो तो चालीसवे वर्ष मे ५०० निष्क प्राप्त होता है॥ भस्थान मे गुरु हो, द्वितीय मे चन्द्रमा हो भाग्यस्थान मे शुक्र हो तो छ हजार निष्कमुद्रा धनी होता है॥ लाभस्थानमे गुरु हो, बलवान् चन्द्रमासे युक्त हो तो जातक धनधान्ययुक्त न–भूषणवाला होता है॥ लाभेश लग्न मे और लग्नेश लाभ मे हो तो ३३ वे वर्ष मे एक ज़ार निष्क की प्राप्ति होती है॥ धनेश लाभ मे और लाभेश धन मे हो तो विवाह के बाद ही ग्यशाली होता है॥ तीसरे भाव का स्वामी लाभस्थान मे हो और लाभेश तृतीय मे हो तो ाता से श्रेष्ठ वस्त्राभरणादि प्राप्त होते है॥ लाभस्थान मे और व्ययभाव मे पापग्रह हो या ष्टि हो तथा ग्रह स्वगृही होकर युक्त या द्रष्टा हो और लाभ से सप्तमभाव पर भी पापदृष्टि ा युक्त हो तो लाभ मे विघ्न होता है और सौम्य दृष्टि हो तो विघ्नोका नाश होता है॥२५७-२६५॥

अथ व्ययभावफलम्

चंद्रो व्ययाधिपो धर्मलाभमन्त्रेषु सस्थित ॥ स्वोच्चस्वर्क्षनिजांशे वा लाभधर्मात्मजांशके ॥ दिव्या
गारादिपर्यंको दिव्यगंधैकभोगवान् ॥२६६॥ परार्घ्यरमणो दिव्यवस्त्रमाल्यादिभूषण ॥
परार्घ्यसयुतो वित्तो दिनानि नयति प्रभु ॥ २६७॥ एव स्वशत्रुनीचांशे अष्टांशे वाष्टमे रिपौ ॥
सस्थित कुरुते जात कातासुख विवर्जितम् ॥२६८॥ व्ययाधिक्यपरिक्लात दिव्यभोगनिराकृतम्
॥ स हि केंद्रत्रिकोणस्थ स्वस्त्रियालंकृत स्वयम्॥२६९॥ एव भ्रात्रादिभावेषु तत्तत्सर्वं विचारयेत्
॥ लग्नस्य पूर्वार्द्ध १०।११।१२।१।२।३। गता नभोगा फल प्रदद्युस्त्वपरोक्षक ते ॥ परार्द्ध
४।५।६।७।८।९। षट्कोपगता परोक्ष फल वदतीति बुधा पुराणा ॥२७०॥ व्ययस्थानगतो
राहुर्भौमार्करविसयुत ॥ तदीशेनार्कसयुक्ते नरके पतन भवेत् ॥२७१॥ व्ययस्थानगते सौम्ये
तदीशे स्वोच्चराशिगे ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे परोक्ष स्यान्न सशय ॥२७२॥ व्ययेशे पापसयुक्ते व्यये
पापसमन्विते ॥ पापग्रहेण सदृष्टे देशाद्देशातर गत ॥२७३॥ व्ययेशे शुभराशिस्थे व्ययगे
शुभसयुते ॥ शुभग्रहेण सदृष्टे स्वदेशात्सचरो भवेत् ॥२७४॥ व्यये मदादिसयुक्ते भूमिजेन
समन्विते ॥ शुभदृष्टैश्च सप्राप्ति पापमूलाद्धनार्जनम् ॥२७५॥ लग्नेशे व्ययराशिस्थे व्ययेशे
लग्नसयुते ॥ भृगुपुत्रेण सयुक्ते धर्ममूलाद्धनव्ययम् ॥२७६॥ अग्रे जात रविर्हन्ति पृष्ठे जात शनैश्चर
॥ अग्रज पृष्ठज हति सहजस्थो धरासुत ॥२७७॥ पत्नीस्थाने यदा राहु पापयुग्मेन वीक्षित ॥
पत्नी योगस्थिता तस्य मृतापि म्रियतेऽचिरात्॥२७८॥ षष्ठे च भवने भौम सप्तमे राहुसम्भव ॥
अष्टमे च यदा सौरिस्तस्य भार्या न जीवति ॥२७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे द्वादशभावविचारकथन नाम चतुर्दशोऽध्याय ॥१४॥

व्ययभावफल

व्ययभाव का स्वामी होकर चन्द्रमा ५।९।११ मे स्थित हो और अपनी राशि या नवांश या उच्च का हो अथवा ५।९।११ वे नवांश मे हो तो अति सुन्दर मकान तथा अति सुन्दर भोग

विभूति वाला होता है। उम्र भर उत्तम भोग भोगता है। और यदि वही चन्द्रमा शत्रुराशि मे नीच अंश वाला होकर ६।८ भाव मे हो तो स्त्रीसुख से रहित करता है और अधिक खर्च से दु खी तथा अच्छे पदार्थो से रहित रहता है।। और वह चन्द्रमा निर्बल होकर भी केन्द्र या त्रिकोण भावो मे हो तो अपनी स्त्री का सुख रहता है।। इसी प्रकार भ्राता, आदि के लिए उनके भाव से व्ययेश या चन्द्रमा से उपर्युक्त योगानुसार विचार करना चाहिये।। लग्न के पूर्वार्द्ध भाग (१।२।३।१०।११।१२) मे स्थित ग्रह प्रत्यक्ष फल देते है। और लग्न के परार्द्ध भाग मे स्थित ग्रह परोक्ष फल देते है (परार्द्धभाग की 'पट्कोप' सज्ञा है) यह प्राचीन आचार्यो का कथन है।। व्ययस्थान मे स्थित राहु सूर्य, मगल, शनि युक्त हो अथवा व्ययेश सूर्य युक्त हो तो (कुकर्म के फल से) नरक मे वास होता है।। व्ययस्थान मे बुध हो और उसका स्वामी उच्च राशि मे हो शुभग्रह युक्त और शुभदृष्ट हो तो यज्ञ, दान, धर्म आदि परोक्ष फलप्रद कर्म मे व्यय होता है।। व्यय स्थान और स्वामी पाप ग्रहो से युक्त अथवा दृष्ट हो तो देश देशान्तरो मे भ्रमण करता है। (एक स्थान पर जम कर नही रह सकता) व्ययेश शुभ राशि मे हो, व्ययभाव मे शुभ ग्रह युक्त हो या शुभग्रह देखते हो तो अपने देश मे ही सचरण (यातायात) करता रहता है।। व्ययभाव मे शनि मगल आदि हो परन्तु शुभग्रहो की दृष्टि हो तो पापजनक कार्यो से धनार्जन होता है।। लग्नेश ग्रह व्ययभाव मे हो और व्ययेश लग्न मे हो और शुक्र युक्त हो तो धर्म कार्यो मे धन का खर्च होता है।। (यह अगला श्लोक तीसरे भावफल मे होना चाहिये) तीसरे भाव मे रवि हो तो अपने जन्म के बाद जन्म लेनेवाले भाइयो को मारता है। और शनैश्चर अपने से पहिले जन्म लेनेवालो को मारता है। और मगल यदि तीसरे भाव मे स्थित हो तो बडे छोटे सभी भाइयो को मारता है।। भार्यास्थान मे जब राहु हो और दो पापग्रहो से दृष्ट हो तो उस जातक के प्रथम तो पत्नी हो नही, और हो भी तो जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त होती है।। छठे भाव मे मगल, सप्तम मे राहु और अष्टम भाव मे शनि हो तो उसकी स्त्री जीवनलाभ नही कर सकती। (इन २ श्लोकोका सम्बन्ध सप्तम भावफलसे है) बारहो भावो का फल समाप्त ॥२६६-२७९॥

इति श्री बृ०पा०हो०शा०पू०भा०प्र० द्वादशभावविचारकथन नामचतुर्दशोऽध्यायः॥१४॥

मैत्रेय उवाच–

परजातः कथ ज्ञेयः कथ ज्ञेयः शुभाशुभम् ॥ एतत्सर्व समालक्ष्य ग्रहराशिफल शुभम् ॥१॥ पराशर उवाच–तुर्यचन्द्रेक्षितः खेटः शत्रुभिर्वा युतेक्षितः ॥ परेण जायते बालो निश्चितं च यथा पशुः ॥२॥ त्रिपष्ठद्विसुताधीशो यदा लग्ने स्थितस्तदा ॥ तथापि परजातः स्याद् मृत्याद्यन्यसुतादिभि ॥३॥ लग्ने क्रूरोऽस्तगः सौम्य कर्मस्थो रविनन्दनः ॥ अस्मिन्योगे च यो जातो जायते वर्णसकरः ॥४॥ मूर्तौ चेन्दुश्च वृश्चिकस्थे भूमिनदनभार्गवौ ॥ यदा पंचदशावर्णे तदापि परबालकः ॥५॥ ग्रहराजे स्थिते लग्ने चतुर्थे सिंहिकासुतः ॥ स्वदेवरात्सुतोत्पत्तिर्जाता तस्या न सशयः ॥६॥ लग्ने राहुधरापुत्रौ सप्तमे चंद्रभास्करौ ॥ नीचेन जायते बालो यदि राज्ञी भवेदपि ॥७॥ सूर्यपुत्रेन्दुलग्नस्थे सप्तमे भौमभास्करौ ॥ अस्मिन्योगे यदा जन्म परेणैव हि जायते ॥ केद्र शून्य भवेद्यस्य सोऽपि जातः परेणहि ॥८॥ द्विपष्ठाष्टमरिः फेषु ग्रहास्तिष्ठंति यस्य सः ॥ परजातो भवेत्सत्यमन्यत्रापि च सस्थितः ॥९॥ एकस्थाने यदाऽस्तेशलग्नेशो सोऽपि जारजः

॥१०॥ जीवो निशाकरं लग्नं नेक्षेतापि स जारजः ॥ जीववर्गविहीनांशे तदा योग. पराज्जने ॥११॥ द्विशत्रू चैककेन्द्रस्थावन्यग्रहविवर्जितौ ॥ तदापि परजातः स्यात्स्थिरलग्ने विशेषतः ॥१२॥ चतुर्थे दशमे लग्ने पापयुग् विधुसंस्थितः ॥ लग्नेशेनेक्षितं लग्नं तदापि परबालकः ॥१३॥ लग्नेशे संस्थिते लग्ने परजातः कदाचन ॥ भङ्गोऽयं सर्वयोगानामिति ते कथितं मया ॥१४॥

परजातयोगफल

मैत्रेय बोले–परजात (दूसरे के संयोग से जन्म होना) को किन योगो से जाने? और उसका शुभाशुभ फल कैसे जाने? ग्रह और भाव के फल सब कथन करिये।

पराशरजी ने कहा–चतुर्थ भावस्थ चन्द्र से दृष्ट और शत्रुग्रह से युक्त या दृष्ट तो बालक निश्चय परजात है। ३।६।२।५ इन स्थानो का कोई भी स्वामी लग्न मे हो तो भी उपर्युक्त योग मे परजात है और यह गर्भाधान नौकर आदि से हुआ है। लग्न मे पापग्रह, सातवे भाव मे अस्त बुध, दशम मे शनि इस योग मे हुआ बालक वर्णसकर है। लग्न मे चन्द्रमा, तीसरे मगल, शुक्र हो तो पन्द्रह आवरण मे भी परबालक है। लग्न मे शनि या सूर्य चतुर्थ भाव मे राहु हो तो अपने देवर से सन्तान की उत्पत्ति हुई है। लग्न मे राहु, मगल हो, सप्तम मे सूर्य चन्द्रमा हो तो रानी होने पर भी नीच जाति से बालक हुआ है। लग्न मे सूर्य, चन्द्रमा हो, सप्तम मे मगल सूर्य हो इस योग मे जन्म लेने वाला दूसरे से ही होता है। केन्द्रस्थान शून्य हो तो भी पर से ही जन्म है। २।६।८।१२ इन स्थानो मे अधिक तर ग्रह हो तो परजात है। अन्य स्थान मे १–२ ग्रह हो तो भी परजात है। लग्नेश और सप्तमेश दोनो एक स्थान मे हो तो परजात होता है। बृहस्पति यदि चन्द्रमा या लग्न को नही देखता हो तो भी जारज है। षड् वर्ग मे बृहस्पति का अश न हो तो जारज है। दो शत्रुग्रह किसी एक केद्र स्थान मे हो और अन्य ग्रह न हो तो भी परजात है, स्थिर लग्न मे विशेष करके योग बलवान् है। चतुर्थ, दशम तथा लग्न मे पापग्रह सहित चन्द्रमा हो और लग्नेश से लग्न दृष्ट हो तो भी परजात है। लग्नेश लग्न मे हो तो परजात कभी ही होता है। यह परजातभग सब कथित योगो का भजक है। सो मत्र तुमको कहा गया है ॥१–१४॥

अथ लग्नेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लग्नेशे लग्नगे पुन्सः स्वदेहस्वभुजाक्रमी ॥ मनस्वी चातिचांचल्यो द्विभार्यः परगोपि वा ॥१५॥ लग्नेशे धनगे लाभे सलाभः पीडितो नरः ॥ सुशीलो धर्मविन्मानी बहुदारगुणैर्युतः ॥१६॥ लग्नेशे सहजे षष्ठे सिंहतुल्यपराक्रमी ॥ सर्वसम्पद्युतो मानी द्विभार्यो मतिमान्सुखी ॥१७॥ लग्नेशे दशमें तुर्ये पितृमातृसुखान्वितः ॥ बहुभ्रातृयुतः कामी गुणसौंदर्यसयुतः ॥१८॥ लग्नेशे पचमे मानी सुतसौख्य च मध्यमम्। प्रथमापत्यनाशः स्यात्क्रोधी राजप्रवेशकः ॥१९॥ लग्नेशः सप्तमे यस्य भार्या तस्य न जीवति ॥ विरक्तो वा प्रवासी वा दरिद्रो वा नृपोपि वा ॥२०॥ लग्नेशे व्ययमेऽष्टस्थे सिद्धविद्याविशारदः ॥ द्यूती चौरो महाक्रोधी परनार्यतिभोगकृत् ॥२१॥ लग्नेशे नवमे पुन्सो भाग्यवान् जनवल्लभ. ॥ विष्णुभक्तः पटुर्वाग्मी पुत्रदारधनैर्युत. ॥२२॥

लग्नेशद्वादशभावफल

लग्नेश जिसके लग्न मे हो वह अपनी कमाई करनेवाला, मनस्वी, चचल, दो स्त्री वाला होता है।। लग्नेश दूसरेभाव मे हो तो लाभ करनेवाला, पीडा भोगनेवाला, सुशील, धर्मात्मा, मानी तथा स्त्रीभावप्रधान होता है।। लग्नेश के तीसरे भाव मे होने से तथा छठे भाव मे होने से सिह के समान पराक्रमी, सर्वगुणसम्पन्न, मतिमान्, सुखी, मानी, दो स्त्रियोवाला होता है।। लग्नेश जिसके चौथे या दशम भाव मे हो–वह माता पिता का सुखवाला, भाइयो मे युक्त, कामी, सुन्दर, गुणी होता है।। लग्नेश पञ्चम मे हो तो मानी तथा कम सन्तानवाला, दूसरी स्त्री तथा क्रोधी और राजकार्य मे निपुण होता है।। लग्नेश सप्तम भाव में हो तो स्त्री सुख से वचित, विरक्त, प्रवासी, दरिद्र या राजा होता है।। लग्नेश बारहवे या आठवे हो तो अनेक विद्यायुक्त, जुवारी, चोर, क्रोधी, परदारगामी होता है।। लग्नेश नौवे हो तो भाग्यवान्, सबका प्रेमी, विष्णुभक्त, चतुर, वाचाल, स्त्री–पुत्र–धनयुक्त होता है ।।१५–२२।।

अथ धनेशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनेशे धनगे सोऽथ धनवान् गर्वसंयुत ।। भार्याद्वय त्रय चापि सुतहीन प्रजायते ।।२३।। धनेशे सहजे तुर्ये विक्रमी मतिमान् गुणी ।। परदाराभिगामी च लोभी वा देवनिंदक ।।२४।। धनेशे रिपुगे शत्रोर्धन प्राप्नोति निश्चितम् ।। शत्रुतो वित्तनाश स्याद्गुदे चोर्वोर्भवेच्च रुक् ।।२५।। धनेशे सप्तमे वैद्य परजायाभिगामिक ।। जाया तस्य भवेद्वेश्या मातापि व्यभिचारिणी ।।२६।। धनेशे मृत्युगेहस्थे भूमिद्रव्य लभेद् ध्रुवम् ।। जायासौख्य भवेत्स्वल्प ज्येष्ठभ्रातृसुख न हि ।।२७।। धनेशे नवमे लाभे धनवानुद्यमी पटु ।। बाल्यरोगी सुखी पश्चाद्यावदायु समाप्यते ।।२८।। धनेशो दशमे यस्य कामी मानी च पडित ।। बहुदारधनैर्युक्त सुतहीनोपि जायते ।।२९।। धनेशो व्ययगे मानी साहसी धनवर्जित ।। जीविका नृपगेहाच्च ज्येष्ठपुत्रसुख न हि ।।३०।। धनेशे च तनौ पुत्री स्वकुटुबस्य कटक ।। धनवान्निष्ठुर कामी परकार्येषु तत्पर ।।३१।।

धनेश द्वादशभाव फल

धनेश (द्वितीयेश) द्वितीय मे हो तो धनवान्, अभिमानी हो,स्त्री दो या तीन तथा पुत्रहीन होता है।। धनेश तीसरे या चौथे भाव मे हो तो विक्रमी, बुद्धिमान्, गुणी, परस्त्रीगामी, लोभी, देवनिन्दक होता है।। धनेश छठे भाव मे हो तो शत्रु का धन प्राप्त होता है तथा बाद मे शत्रु के कारण ही नष्ट होता है तथा जाघ की बीमारी होती है।। धनेश सप्तम मे हो तो वैद्य, परस्त्रीसेवी तथा स्त्री और माता व्यभिचारिणी होती है।। धनेश अष्टम मे हो तो भूमि मे गडा हुआ धन प्राप्त होता है, स्त्रीसुख कम तथा बडे भाई का सुख नही होता।। धनेश नौवे या लाभ मे हो धनवान्, उद्यमी, चतुर, भोगी, बाल्य अवस्था का रोगी बाद मे सदा सुखी रहता है।। धनेश दशवे हो तो कामी, मानी, पडित, अनेक स्त्रीवाला, धनी तथा सन्तान हीन होता है।। धनेश व्ययभाव मे हो तो मानी, साहसी, दरिद्र तथा राजसेवी होता है और ज्येष्ठ पुत्र नही रहता।। धनेश लग्न मे हो तो पुत्रवाला, अपने कुटुम्ब का द्रोही, धनवान् निष्ठुर, कामी तथा औरो के काम मे सहायक होता है ।।२३–३१।।

अथ तृतीयेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तृतीयेशे तृतीयस्थे विक्रमी सुतसयुत. ॥ धनयुक्तो महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्॥३२॥ तृतीयेशे सुखे कर्मे पंचमे वा सुखी सदा ॥ अतिक्रूरा भवेद्भार्या धनाढ्यो मतिमान्भवेत् ॥३३॥ तृतीयेशो रिपौ यस्य भ्राता शत्रुर्महाधनो ॥ मातुलानां सुख न स्यान्मातुल्या भोगमिच्छति ॥३४॥ तृतीयेशे व्यये भाग्ये स्त्रीभिर्भाग्योदयो भवेत् ॥ पिता तस्य महाचोरः सुखेऽपि दुःखदर्शकः ॥३५॥ तृतीयेशेऽष्टमे द्यूने राजद्वारे मृतिर्भवेत् ॥ चौरो वा परगामी वा बाल्ये कष्टं दिने दिने ॥३६॥ तृतीयेशे तनौ लाभे स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥ मूर्खः कृशो महारोगी साहसी परसेवकः ॥३७॥ गुदाभंजनिकः स्थूलः परभार्याधने रुचिः ॥ स्वल्पारभी सुखी न स्यात्तृतीयेशे धने गते ॥३८॥

तृतीयेश द्वादशभावफल

तृतीयेश तृतीय मे हो तो विक्रमी सन्तान, सुखवाला, धनी और सुखी, सदा प्रसन्न रहनेवाला होता है॥ तृतीयेश चौथे भाव मे दशवे या पचम मे हो तो सदा सुखी, मतिमान्, धनी किन्तु स्त्री क्रूर स्वभाववाली होती है॥ तृतीयेश छठे भाव मे हो तो महाधनी पर उसका भ्राता द्रोही तथा मामा न रहे पर मामी से आसक्त रहे॥ तृतीये नवम तथा व्यय मे हो तो स्त्री से भाग्योदय हो और पिता महाचोर हो, सुख मे भी कलह करे॥ तृतीयेश सातवे आठवे मे हो तो राजकार्य मे मृत्यु हो, चोर और परगामी तथा सदारोगी रहता है॥ तृतीयेश लग्न मे या लाभ मे हो तो स्वय कमाई करनेवाला, दुर्बल, मूर्ख, रोगी, साहसी, परसेवी होता है॥ तृतीयेश धनस्थान मे हो तो गुदगामी, स्थूलशरीर, अन्य स्त्री के धन का लालची, कम काम करनेवाला तथा दुःखी होता है ॥३२–३८॥

अथ चतुर्थेशद्वादशभावस्थितफलमाह

तुर्येशे तुर्यगे मन्त्री भवेत्सर्वधनाधिपः ॥ चतुरः शीलवान् मानी धनाढ्यः स्त्रीप्रियः सुखी ॥३९॥ तुर्येशे पचमे भाग्ये सुखी सर्वजनप्रियः ॥ विष्णुभक्तिरतो मानी स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥४०॥ सुखेशे शत्रुगेहस्थे तथा स्याद्व्ययात्मकः ॥ क्रोधी चौरोऽभिचारी च दुष्टचित्तो मनस्यपि ॥४१॥ सुखेशे सप्तमे लग्ने बहुविद्यासमन्वितः ॥ पित्रार्जितधनत्यागी सभायां मूकवद्भवेत् ॥४२॥ सुखेशे व्ययरंध्रस्थे सुखहीनो भवेन्नरः ॥ पितृसौख्य भवेदल्पं क्लीबो वा जारजोऽपि वा ॥४३॥ सुखेशे कर्मगेहस्थे राजमान्यो भवेन्नरः ॥ रसायनी महाहृष्टो भुनक्ति सुखमद्भुतम्॥४४॥ सुखेशे सहजे लाभे नित्यरोगी भवेन्नरः ॥ उदारो गुणवान्दाता स्वभुजार्जितवित्तवान् ॥४५॥ सर्वसपद्युतो मानी साहसी कुहकान्वितः ॥ कुटुबसयुतो भोगी सुखेशे च धने गते ॥४६॥

चतुर्थेश द्वादशभावफल

चतुर्थेश अपने अश मे होकर चतुर्थभाव मे स्थित हो तो सब प्रकार की धन सम्पत्तिवाला, चतुर, शीलवान्, मानी एव स्त्रीप्रिय, सुखी होता है॥ चतुर्थेश पचम तथा भाग्य मे हो तो

सबका प्रेमी, सुखी, विष्णुभक्त, मानी और अपने उद्योग से धनी होता है।। सुखेश यदि छठे भाव मे हो तो यात्रारत, क्रोधी, चोर, दुष्ट, अपकारी और मनस्वी होता है।। सुखेश सप्तमभाव मे या लग्न मे हो तो अनेक विद्यायुक्त, पिताकी सम्पत्ति का त्यागी और सभाचातुर्यहीन होता है।। सुखेश ८।१२ मे हो तो जातक सुखरहित, पितृसुखवंचित, नपुसक या जारज होता है।। सुखेश दशम मे हो तो राजमान्य, अद्‌भुत सुखभोगी, सदासुखी तथा रसायन जाननेवाला होता है।। सुखेश तृतीयभाव मे या लाभ मे हो तो सदा रोगी, उदार, गुणवान् तथा निजोपार्जित धनी होता है।। सुखेश धनभाव मे हो तो सर्वसम्पत्ति युक्त, मानी, साहसी, भोगी, कुटुम्बी, छली एव कपटी होता है ॥३९–४६॥

अथ सुतेशद्वादशभावस्थितफलमाह

सुतेशः पचमे यस्य तस्य पुत्रो न जीवति ॥ क्षणिकः क्रूरभाषी च धार्मिको मतिमान् भवेत् ॥४७॥ सुतेशे षष्ठरिःफस्थे पुत्रः शत्रुत्वमाप्नुयात् ॥ मृतापत्यो भ्राह्यपुत्रो धनपुत्रोऽथवा भवेत् ॥४८॥ सुतेशे कामगे मानी सर्वधर्मसमन्वितः ॥ तुगयष्टिस्तनुस्वामी भक्तियुक्तैकतेजसा ॥४९॥ सुतेशे चायुषि धने बहुपुत्री न सशय. ॥ कासश्वासी सुखी न स्यात् क्रोधयुक्तो धनान्वित ॥५०॥ सुतेशे नवमे कर्मे पुत्रो नृपसमोभवेत् । अथवा ग्रथकर्ता च विख्यातः कुलदीपक ॥५१॥ सुतेशे लाभभवने पडितो जनवल्लभ. ॥ ग्रथकर्ता महादक्षो बहुपुत्रधनान्वितः ॥५२॥ सुतेशे लग्नसहजे मायावी पिशुनो महान् ॥ लोष्ट तु ददमात्रैव कश्चिद्द्रव्यस्य का कथा ॥५३॥ सुतेशे मातृभवने चिरं मातृसुख भवेत ॥ लक्ष्मीयुक्तः सुबुद्धिश्च सचिवोऽप्यथवा गुरु ॥५४॥

सुतेश द्वादशभावफल

पचमेश पचमभाव मे शुभग्रहयुक्त हो तो पुत्रवान्, क्षणिक मिष्टभाषी, धर्मात्मा तथा बुद्धिमान् होता है।। सुतेश ६।१२ मे हो तो अपना पुत्र ही शत्रु होता है और जीता भी नही है। अत दत्तक या धन से खरीदा हुआ पुत्र होता है।। सुतेश सप्तमभाव मे हो तो अभिमानी, धार्मिक, लम्बा कद, गठीला शरीर, भक्त और तेजस्वी होता है।। सुतेश अष्टम भाव तथा धनभाव मे हो तो अनेक सन्तानवाला, श्वासखासी रोग होने से दु खी, क्रोधी और धनी होता है।। सुतेश नवम या दशमभाव मे हो तो उसका पुत्र राजा के समान हो अथवा ग्रन्थकर्ता विख्यात और अपने कुल का नामी होता है।। सुतेश लाभस्थान मे हो तो पण्डित और समाजसेवी, ग्रन्थकर्ता, अत्यन्त चतुर, अनेक पुत्र, धन से युक्त होता है।। सुतेश लग्न या तृतीयभाव मे हो तो मायावी (कपटी) पिशुन (चुगलखोर) जीवन मे किसी को कुछ भी न देनेवाला होता है। सुतेश चौथे भाव मे हो तो माता पिताका सुख पूर्ण हो, लक्ष्मीयुक्त,बुद्धिमान् या तो सचिव (मन्त्री) या गुरु होता है ॥४७–५४॥

अथ षष्ठेशद्वादशभावस्थितफलमाह

षष्ठेशे रिपुभावस्थे स्वज्ञातिः शत्रुवद्भवेत् ॥ परज्ञातिर्भवेन्मित्रं भूमौ न चलति ध्रुवम् ॥५५॥ षष्ठेशे सप्तमे लाभे लग्ने वा कीर्तिमान् भवेत् ॥ धनवान् गुणवान् मानी साहसी पुत्रवर्जितः ॥५६॥

अथाष्टमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

द्यूती चौरोऽन्ययावादी गुरुनिंदासु तत्पर. ॥ अष्टमे ह्यष्टमस्थाने भार्या पररता भवेत् ॥६९॥
अष्टमेशे तप स्थाने महापापी च नास्तिक ॥ सुतहा ह्यथवा वध्या परभार्याधने रुचि ॥७०॥
अष्टमेशे सुखे कर्मपिशुनो बधुवर्जित ॥ मातापित्रोर्भवेन्मृत्यु स्वल्पकालेन भीतियुक् ॥७१॥
अष्टमेशे सुते लाभे तस्य वृद्धिर्न जायते ॥ द्रव्य न स्थीयते गेहे स्थिरबुद्धिर्भवेज्जन ॥७२॥
अष्टमेशे व्यये षष्ठे नित्य रोगी प्रजायते ॥ जलसर्पादिकाद्घातो भवेत्तस्य च शैशवे ॥७३॥
अष्टमेशे तनौ कामे भार्यायुग्म समादिशेत् ॥ विष्णुद्रोहरतो नित्यं व्रणरोगी प्रजायते ॥७४॥
धन तस्य भवस्वल्प गत वित्त न लभ्यते ॥ अष्टमेशे धने बाहुबलहीन प्रजायते ॥७५॥

अष्टमेशद्वादशभावफल

अष्टमेश अष्टम मे हो तो जुवारी, चोर, झूठा, गुरुनिन्दक हो और उसकी स्त्री व्यभिचारिणी होती है॥ अष्टमेश यदि ११ मे हो तो पापी, नास्तिक, उसकी स्त्री वन्ध्या हो तथा आपका मन सदा दूसरे के धन और स्त्री मे रहता है॥ अष्टमेश ४।१० मे हो तो चुगलखोर, बन्धुहीन, माता तथा पिता का सुख कम रहे, और डरपोक होता है॥ अष्टमेश ५।११ मे हो तो परिवार मे वृद्धि नही हो और घर मे धन स्थिर नही रहे, जातक स्थिरमति हो॥ अष्टमेश ६।१२ मे हो तो सदारोगी रहे, बाल्य अवस्था मे जल या सर्प से घात हो॥ अष्टमेश लग्न या सप्तम मे हो तो दो भार्या हो, सदा ईश्वर द्रोही और व्रणरोगी होता है॥ अष्टमेश धनस्थान मे हो तो दरिद्री, साहस तथा बलहीन होता है ॥६९-७५॥
(यहा फल कथन मे ३।९ भाव का फलादेश का श्लोक अनुपलब्ध है)

अथ भाग्येशद्वादशभावस्थितफलमाह

धनधान्ययुतो नित्य गुणसौंदर्यसयुत ॥ बहुभ्रातृसुख युक्त भाग्येशे नवमे स्थिते ॥७६॥ भाग्येशे दशमे तुर्ये मन्त्री सेनापतिर्भवेत् ॥ पुण्यवान्सुयशा वाग्मी साहसी क्रोधवर्जित ॥७७॥ भाग्येशे पचमे लाभे भाग्यवान् जनवल्लभ ॥ गुरुभक्तिरतो मानी धीरो धीरगुणैर्युत ॥७८॥ भाग्येशे तु तुले रिष्फे भाग्यहीनो भवेद् ध्रुवम् ॥ मातुलस्य सुख न स्याज्ज्येष्ठभ्रातृसुख तथा ॥७९॥ भाग्येशे च मदे लग्ने गुणवान्कीर्तिमान् भवेत् ॥ कदाचिन्न भवेत्सिद्ध यत्कार्यं कर्तुमिच्छति ॥८०॥ भाग्येशे सहजे वित्ते सदा भाग्यानुचिंतक ॥ धनवान् गुणवान्कामी पडितो जनवल्लभ ॥८१॥

भाग्येशद्वादशभावफल

भाग्येश नवमभाव मे हो तो धनधान्ययुक्त और गुणी, सुन्दर तथा अनेक भ्राता हो॥ भाग्येश १०।४ मे हो तो मन्त्री या सेनापति हो, पुण्यात्मा, सुयशवाला, वाग्मी (अच्छा बोलनेवाला) साहसी और क्रोधरहित हो॥ भाग्येश ५।११ मे हो तो भाग्यवान्, बन्धुप्रेमी, गुरुभक्त,धीर, मानी होता है॥ भाग्येश—तुलाराशि मे या बारहवे स्थान मे हो तो

भाग्यहीन मामा का सुख तथा बड़े भाई के सुख से हीन होता है॥ भाग्येश लग्न या सप्तम मे हो तो गुणवान्, कीर्तिवाला, किन्तु कभी कभी इच्छित कार्य सिद्ध नही हो॥ भाग्येश २।३ मे हो तो भविष्य चिन्तक, गुणी, धनी तथा कामी पंडित एवं जनप्रिय होता है॥७६–८१॥

अथ दशमेशद्वादशभावस्थितफलमाह

दशमेशे सुखे कर्मे ज्ञानवान्सुखविक्रमी ॥ गुरुदेवार्चनरतो धर्मात्मा सत्यसंयुतः ॥८२॥ दशमेशे सुते लाभे धनवान्पुत्रवान् भवेत् ॥ सर्वदा हर्षसंयुक्तः सत्यवादी सुखी नरः ॥८३॥ कर्मेशोऽरिव्यये यस्य शत्रुभिः परिपीडितः ॥ चातुर्यगुणसंपन्नः क्वचिच्च न सुखी नरः ॥८४॥ दशमाधिपतौ लग्ने कवितागुणसंयुतः ॥ बाल्ये रोगी सुखी पश्चादर्थवृद्धिर्दिने दिने ॥८५॥ धने मदे च सहजे कर्मेशो यदि संस्थितः ॥ मनस्वी गुणवान्वाग्मी सत्यधर्मसमन्वितः ॥८६॥

दशमेशद्वादशभावफल

दशमेश ४।१० मे हो तो ज्ञानी सुखी पराक्रमी, देवगुरुभक्त, धर्मात्मा तथा सत्यवादी होता है॥ दशमेश ५।११ मे हो तो धनवान् और पुत्रवान्, सदा प्रसन्नचित्त, सुखी और सत्यवादी होता है॥ दशमेश ६।१२ मे हो तो जातक शत्रुओं से पीडित, चतुर तथा कभी–कभी दुःखी रहता है॥ दशमेश लग्न मे हो तो कविता करनेवाला तथा बाल्यावस्था मे रोगी पश्चात् नीरोग और दिनानुदिन धनवृद्धि होती है॥ दशमेश २।७।३ में हो तो मनस्वी, गुणी, वक्ता तथा सत्यवादी होता है ॥८२–८६॥

अथ लाभेशद्वादशभावस्थितफलमाह

लाभेशे संस्थिते लाभे स वाग्मी जायते ध्रुवम् ॥ पांडित्यं कविता चैव वर्द्धते च दिने दिने ॥८७॥ प्राप्तिस्थानाधिपे रिःफे म्लेच्छसंसर्गकारकः ॥ कामुको बहुकांतश्च क्षणिको लम्पटः सदा ॥८८॥ लाभेशे संस्थिते लग्ने धनवान्सात्त्विको महान् ॥ समदृष्टिर्महावक्ता कौतुकी च भवेत्सदा ॥८९॥ लाभेशे च धने पुत्रे नानासुखसमन्वितः ॥ पुत्रवान्धार्मिकश्चैव सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥९०॥ लाभेशे सहजे वित्ते तीर्थेषु तत्परो महान् ॥ कुशलः सर्वकार्येषु केवलं शूलरोगवान् ॥९१॥ लाभेशे षष्ठभवने नानारोगसमन्वितः ॥ सर्वं सुखं भवेत्तस्य प्रवासी परसेवकः ॥९२॥ लाभेशे सप्तमे रन्ध्रे भार्या तस्य न जीवति ॥ उदारो गुणवान्कर्मी मूर्खो भवति निश्चितम् ॥९३॥ लाभेशे गगने धर्मे राजपूज्यो धनाधिपः ॥ चतुरः सत्यवादी च निजधर्मसमन्वितः ॥९४॥

लाभेश द्वादशभावफल

लाभेश स्वगृही हो तो वाग्मी, पण्डित और दिनानुदिन उत्तम कविता करनेवाला होता है॥ लाभेश १२ भाव मे हो तो म्लेच्छ संसर्गी, कामी अनेक स्त्रीसंसर्गी, क्षणिकमति और लम्पट होता है॥ लाभेश लग्न मे हो तो धनवान्, सात्त्विक भाववाला, समदर्शी श्रेष्ठवक्ता तथा कौतुकी होता है॥ लाभेश २।५ मे हो तो नानासुखभोगी, पुत्रवान्, धार्मिक तथा सर्वसिद्धिसम्पन्न होता है॥ लाभेश २।३ मे हो तो तीर्थसेवी, सर्वकार्यकुशल होता है केवल शूल रोग रहता है॥ लाभेश छठे भाव मे हो तो नाना व्याधिग्रस्त, सर्वसुखसम्पन्न तथा परदेशवासी

एवं नौकरी करनेवाला होता है।। लाभेश ७।८ मे हो तो उसकी भार्या नहीं जीवे। उदार गुणी तथा कर्मी हो एवं मूर्ख हो।। लाभेश ९।१० मे हो तो धनी, राजपूज्य, चतुर, सत्यवादी तथा धर्मात्मा होता है ।।८७—९४।।

अथ व्ययेशद्वादशभावस्थितफलमाह्

व्ययेशेऽरिव्यये पापी मातृमृत्युविचिंतकः ।। क्रोधी सन्तानदुःखी च परजायासु लंपटः।।९५।। व्ययेशे मदने लग्ने जायासौख्यं भवेन्नहि ।। दुर्बलः कफरोगी च धनविद्याविवर्जितः ।।९६।। व्ययेशे द्वितीये रंध्रे विष्णुभक्तिसमन्वितः ।। धार्मिकः प्रियवादी च सम्पूर्ण गुणसंयुतः ।।९७।। मायद्वेषी प्रियद्वेषी गुरुद्वेषी भवेन्नरः ।। व्ययेशे सहजे धर्मे स्वशरीरस्य पोषकः ।।९८।। व्ययेशे दशमे लाभे पुत्रसौख्यं भवेन्नहि ।। मणिमाणिक्यमुक्तादि धनं किंचित्समालभेत् ।।९९।। एतत्ते कथितं विप्र भावानां च फलाफलम् ।। बलाबलविवेकेन सर्वेषां फलमादिशेत् ।।१००।।

व्ययेश द्वादशभावफल

व्ययेश ६।१२ मे हो तो पापी तथा माता को मारने के संकल्प वाला, क्रोधी, सन्तान से दुःखी, परस्त्री-रत रहता है।। व्ययेश लग्न या सप्तम मे हो तो स्त्री सुखरहित, दुर्बल, कफरोगी, धन और विद्यारहित होता है।। व्ययेश २।८ मे हो तो विष्णुभक्त, धार्मिक, प्रियभाषी, सम्पूर्ण-गुणयुक्त होता है।। व्ययेश ३।९ मे हो तो मायाद्वेषी, तथा प्रियद्वेषी, गुरुद्वेषी एवं स्वयंपोषक होता है।। व्ययेश १०।११ मे हो तो पुत्र सुख नहीं होता, मणिमाणिक्य आदि का लाभ होता है।। हे मैत्रेय! १२ भावो का ग्रह फलाफल हमने कहा, ग्रहों के बल जानकर इनका फल कहना चाहिए।।

वक्री चेत्स्वच तुर्थः स्यात्फलं भौमो ददाति च ।। बुधस्तुर्येऽथ देवेज्ये पञ्चमे शशिभार्गवौ ।।१०१।। सप्तमस्य तमध्वंसी पुत्रस्य नवमस्य च ।। वित्तस्य विपुवत्यर्के ददाति स्वफलं विधुः ।।१०२।। ग्रहे पूर्णफले प्राप्ते फलं पूर्वं समादिशेत् ।। अर्द्धमर्द्धं पादहीने तथैव पादमंभ्रिणा ।।१०३।। भावानां द्वादशानां च सर्वेषां फलमादिशेत् ।। भावस्थानां ग्रहाणां च फलं ते कथितं मया ।।१०४।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावस्थग्रहाणां फलकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ।।१५।।

उद्दिष्ट ग्रह मे वक्री मंगल यदि चतुर्थभाव मे स्थित हो तो पूर्णफल प्राप्त होता है। इसी प्रकार उद्दिष्ट ग्रह से चतुर्थ बुध हो, पञ्चम गुरु हो।। चन्द्र-शुक्र सप्तम हो, शनि नवम हो, कर्क के सूर्य मे चन्द्रमा दूसरे हो तो पूर्वोक्त भावफल होता है।। और ग्रह पूर्णबली हो तो पूर्ण फल होता है।। आधे बल मे आधा और हीनबल मे चौथाई फल होता है।। इस कथित ग्रह फल से १२ भावो का फल कहना चाहिये ।।९५—१०४।।

इति बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रकाशिकाया भावस्थग्रहफलकथननाम पञ्चदशोऽध्याय ।।१५।।

अथ प्राणिनां पूर्वजन्मशापद्योतकम्

पार्वत्युवाच

देवदेव जगन्नाथ शूलपाणे वृषध्वज ॥ केन योगेन मर्त्यानां जायते शिशुनाशनम् ॥१॥ तत्सर्वमत्र योगेन ब्रूहि मे शशिशेखर ॥ शापमोक्षं च कृपया प्राणिनामल्पमेधसाम ॥२॥

पूर्वजन्म शापकथन

पार्वतीजी ने कहा, हे शूलपाणि वृषध्वज! भगवन् महादेव! जगत् के स्वामी!! किस योग से मनुष्यों के सन्तान की हानि होती है? आप सिद्धयोगी हैं अतः यह सब कहिये और हे शशि शेखर! उन अज्ञानी पुरुषों के शाप को दूर करने का उपाय भी कहियेगा॥१॥२॥

शङ्कर उवाच

साधु पृष्टं त्वया देवि कथयामि सविस्तरात् ॥ शृणुष्वैकमना भूत्वा बलाबलवशादपि ॥३॥ ज्ञेयं सुनिश्चितं सर्वैराशिचक्रे विशेषतः ॥ मेषादिमीनपर्यंत मूर्त्यादिद्वादशक्रमात् ॥४॥ भावं च भावजं ज्ञात्वा फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥ तनुर्वित्तं बंधुमातृपुत्रशत्रुस्मरोमृतिः ॥५॥ पितृकर्म च लाभं च व्ययाता भावसंज्ञका ॥ गुरुर्लग्ने शदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु च ॥६॥ सर्वेषुबलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता ॥ रव्यारराहुशनयः पुत्रस्था बलसंयुता ॥७॥ कारकाद्यात्क्षीणबलादनपत्यत्वमादिशेत् ॥ पुत्रस्थानगते राहौ कुजेनापि निरीक्षिते ॥ कुजक्षेत्रगते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ॥८॥ पुत्रेशे राहुसंयुक्ते पुत्रस्थे भानुनन्दने ॥ चंद्रदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ॥९॥

शंकरजी ने कहा–हे देवि! तुमने बहुत अच्छा प्रश्न किया, ध्यान देकर सुनो। हम विस्तार से सबका उत्तर कहते हैं॥ ग्रहों के बलाबल से बारह राशियों के भावों का सुनिश्चित फल जाना जाता है। मेष से मीन पर्यन्त बारह राशियों का स्वरूप जानकर भाव और भाव का फल जानकर कहना चाहिये॥ १२ भावों के नाम कहते हैं: तनु, वित्त, बन्धु, माता, पुत्र, शत्रु, भार्या, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ और व्यय ये बारह भाव हैं। बृहस्पति, सप्तेश, पुत्रेश इन सब भावों के और भावेशों के बलहीन होने पर पुत्रहीनता कहनी चाहिये। सूर्य, मंगल, राहु और शनि ये बलवान होकर पंचम भाव में हों, पुत्रकारक हीनबल हो तो पुत्रहीनता कहनी चाहिये। पंचम भाव में राहु हो, मंगल देखता हो अथवा मंगल की राशि हो तो पूर्वजन्म के सर्प के शाप से इस जन्म में पुत्र की मृत्यु होती हैं॥ पंचमेश राहुयुक्त हो, पंचम भाव में शनि हो। चन्द्रमा युक्त अथवा देखता हो, तो सर्प के शाप से पुत्र नाश होता है॥३–९॥

कारके राहुसंयुक्ते पुत्रेशे बलवर्जिते ॥ विलग्नेशे भौमयुते सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१०॥ कारके भौमसंयुक्ते लग्ने च राहुसंयुते ॥ पुत्रस्थानेश्वरे दुःस्थे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥११॥ भौमांशे भौमसंयुक्ते पुत्रेशे सोमनन्दने ॥ राहुमांदियुते लग्ने सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१२॥ पुत्रस्थाने कुजक्षेत्रे पुत्रे राहुसमन्विते ॥ सौम्यदृष्टे युते वापि सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१३॥ पुत्रस्था

भानुमंदाराः स्वर्भानुः शशिजोगिराः ॥ निर्बलौ पुत्रलग्नेशौ सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१४॥ लग्नेशे राहुसंयुक्ते पुत्रेशे भौमसंयुते ॥ कारके राहुसंदृष्टे सर्पशापात्सुतक्षयः ॥१५॥ तद्दोषपरिहारार्थं नागपूजां समारभेत् ॥१६॥ स्वगृह्योक्तविधानेन प्रतिष्ठां कारयेत्सुधीः ॥ नागमूर्तिं सुवर्णेन कृत्वा पूजां समाचरेत् ॥१७॥ गोभूतिलहिरण्यादि दद्याद्वित्तानुसारतः ॥ एवं कृते तु नागेद्रप्रसादाद्वर्धतेकुलम् ॥१८॥ पुत्रस्थान गते भानौ नीचे मंदांशकस्थिते ॥ पार्श्वयोः क्रूरसम्बन्धे पितृशापात्सुतक्षयः॥१९॥ पुत्रस्थानाधिपे भानौ त्रिकोणे पापसंयुते ॥ क्रूरान्तरे पापदृष्टे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२०॥

पुत्रकारक राहु के साथ हो, पुत्रेश बलहीन हो, लग्नेश मंगलयुक्त हो तो सर्प शाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रकारक मंगलयुक्त हो, लग्न में राहु, पुत्रेश तीसरे हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। मंगल अपने नवमांश में हो, पुत्रेश बुध हो, लग्न में राहु और मान्दी हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान में मंगल की राशि और राहु हो बुध युक्त या देखता हो, तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान में सूर्य मंगल शनि, राहु, बुध और शुक्र हो, पुत्रेश और लग्नेश निर्बल हो, तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। लग्नेश के साथ राहु हो, पुत्रेश के साथ मंगल हो, पुत्रकारक को राहु देखता हो तो सर्प शाप से सुत–क्षय होता है।। (इतने योग कहे गये और इनका उपाय कहते हैं) इस दोष के दूर करने के लिये, नागपूजा करनी चाहिये। सुवर्ण की नागमूर्ति बनाकर, विधान से प्रतिष्ठा करे और फिर पूजा करे।। तिल, गौ, सुवर्ण इनका शक्ति के अनुसार दान करे और मूर्ति का भी दान करे, तो ऐसा करने पर नागेन्द्र की कृपा से कुल में वृद्धि होती है।। (यह उपाय किसी महान पर्व में गया आदि तीर्थ पर किया जाता है) अब पितृशाप के योग कहते हैं। पुत्रस्थान में सूर्य हो और नीच का होकर शनि के अंश में हो, १२ में तथा दूसरे स्थान में पापग्रह हो तो पितृशाप से सुत–क्षय होता है।। पुत्रस्थान का स्वामी सूर्य त्रिकोण स्थानों में पापग्रह से युक्त होकर स्थित हो और सूर्य के दोनों तरफ क्रूर ग्रह हो, पापग्रह की दृष्टि हो तो पितृशाप से सुत–क्षय होता है ॥१०–२०॥

भानुराशिस्थिते जीवे पुत्रेशे भानुसंयुते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२१॥ लग्नेशे दुर्बले पुत्रे पुत्रेशे भानुसंस्थिते ॥ पुत्रे लग्ने पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२२॥ पितृस्थानाधिपे पुत्रे पुत्रेशे वा तथा स्थिते ॥ लग्ने पुत्रे पापयुते पितृशापात्सुतक्षयः ॥२३॥ पितुः स्थानाधिपो भौमःपुत्रेशेन समन्वितः ॥ लग्ने पुत्रे पितृस्थाने शापात्सततिनाशनम् ॥२४॥ पितृस्थानाधिपे दुःस्थे कारके पापराशिगे ॥ पुत्रे लग्नेश्वरे पापे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२५॥ लग्नपंचमभावस्था भानुभौमशनैश्चराः ॥ रन्ध्रे रिष्फे राहुजीवौ पितृशापात्सुतक्षयः ॥२६॥ लग्नादष्टमगे भानौ पुत्रस्थे भानुनंदने ॥ पुत्रेशे राहुसंयुक्ते लग्ने पापे सुतक्षय ॥२७॥ व्ययेशे लग्नभावस्थे रन्ध्रेशे पुत्रराशिगे ॥ पितृस्थानाधिपे रन्ध्रे पितृशापात्सुतक्षयः ॥२८॥ रोगेशे पुत्रभावस्थे पितृस्थानाधिपे तथा॥कारके राहुसंयुक्ते पितृशापात्सुतक्षय॥२९॥तद्दोषपरिहारार्थं गयाश्राद्धं च कारयेत् ॥ ब्राह्मणान् भोजयेदत्र अयुतं वा सहस्रकम् ॥३०॥ कन्यादानं ततः कृत्वा गां च दद्यात्सवत्सकाम् ॥ एवं कृते पितुः शापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥३१॥ वर्द्धते च कुलं तस्य पुत्रपौत्रादिभिस्तथा ॥ दृष्टियोगपदैः सर्वं फलं ब्रूयाद्विचक्षणः ॥३२॥

अथ मातृशाप के योग एवं उपाय कहते हैं

पुत्रेश चन्द्रमा नीच का हो और पापग्रहो के बीच मे हो अर्थात् चतुर्थ और षष्ठभाव मे पापग्रह हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय मे हो, लग्न मे नीच राशि हो, चन्द्र और पापग्रहो का योग हो तो मातृशाप से सुत क्षय होता है। पुत्रेश तृतीय मे, चन्द्रमा पाप नवमांश मे, लग्न मे तथा पुत्रभाव मे पापग्रह हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है॥ पुत्रेश चन्द्रमा, शनि, राहु, मगल से युक्त होकर नवम या पचम भाव मे स्थित हो, अथवा यही योग पुत्र कारक के साथ हो तो मातृशाप से सुतक्षय होता है। चतुर्थेश मगल, शनि, राहु, युक्त हो, पुत्र भाव मे चन्द्रमा एव सूर्य हो या लग्न मे हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है॥ लग्नेश एव पुत्रेश शत्रुस्थान मे हो, चतुर्थेश अष्टमभाव मे हो अष्टम और दशम के स्वामी लग्न मे हो तो मातृ शाप से सुत क्षय होता है॥ षष्ठेश और अष्टमेश लग्न मे हो या व्यय मे हो चतुर्थेश पचम मे हो या व्यय मे हो, पचम भाव मे चन्द्रमा और बृहस्पति पापयुक्त हो तो मातृ–शाप से सुत–क्षय होता है॥ लग्न की दोनो पार्श्व राशि मे पापग्रह हो क्षीण चन्द्रमा सप्तम भाव मे हो, चौथे भाव मे और पाचवे भाव मे राहु शनि हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है॥ अष्टमेश पचम मे हो पचमेश अष्टम मे हो चन्द्रमा और चतुर्थेश तृतीय भाव मे हो, तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है॥ चन्द्रमा की राशि मे लग्न हो, मगल राहु युक्त हो चन्द्रमा और शनि पचम भाव मे हो तो मातृशाप से सुत–क्षय होता है॥ लग्न पचम अष्टम और द्वादश भाव मे क्रमश मगल, राहु शुक्र एव शनि हो चतुर्थ एव लग्नेश तृतीय भाव मे हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है॥ अष्टम भाव मे बृहस्पति हो, मगल राहु से युक्त हो, पचम भाव मे शनि चन्द्रमा हो तो मातृ शाप से सुत–क्षय होता है॥ पण्डित को विचारकर इस प्रकार उपर्युक्त योग से फल कहना चाहिये। शुभयोग से सुख और मिश्र योग से मध्यम फल होता है (उपाय) सतुबन्ध रामेश्वर मे स्नान करे एक लाख गायत्री मन्त्र का जाप करे जिस ग्रह का दुर्योग हो उस ग्रह का दान करे चादी के पात्र मे दूध भर कर दान दे। यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराये, पीपल की प्रदक्षिणा करे भक्तियुक्त होकर ये कर्म करे। ऐसा करने से शकर कहते है हे देवी ! शाप से मुक्ति मिलती है एव श्रेष्ठ पुत्र की प्राप्ति होती है और उस पुत्र से परिवार चलता ॥३३ ४९॥

अत पर प्रवक्ष्यामि भ्रात्रादी शापकारणम् ॥ पापयोगेन भावेन कारकेण बलावले ॥५०॥ भ्रातृस्थानाधिपे पुत्रे कुजराहुसमन्विते ॥ पुत्रलग्नेश्वरौ रन्ध्रे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५१॥ लग्ने सुते कुजे मदे भ्रातृपे भाग्यराशिगे ॥ कारके नाशराशिस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५२॥ भ्रातृस्थाने गुरौ नीचे मद पचमगो यदि ॥ नाशस्थौ न तु मन्दारौ भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५३॥ मूर्तिस्थानाधिपे रि फे भौम पचमगो यदि ॥ पुत्रेशे रध्रपापस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५४॥ पाप मध्यगते लग्ने भुतभे पापमध्यगे ॥ नाथौ न कारकौ दुःस्थे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५५॥ कर्मेशे भ्रातृ भावस्थे पापयुते सुते शुभे ॥ पुत्रे च कुजसयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५६॥ पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे शनिराहुसमन्विते ॥ रिफे विदारौ शापत्वाद् भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५७॥ लग्नेशे मातृराशिस्थे भ्रातृस्थानाधिपे सुते ॥ लग्ने भ्रातृसुते पापे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५८॥ भ्रात्रीशे नाशराशिस्थे पुत्रस्थे कारके तथा ॥ राहुमादियुते दृष्टे भ्रातृशापात्सुतक्षय ॥५९॥ नाशस्थानाधिपे पुत्रे

भ्रातृनाथेन संयुते ॥ रंध्रे आरार्किसंयुक्ते भ्रातृशापात्सुतक्षयः ॥६०॥ भ्रातृशापविमोक्षार्थं श्रवण विष्णुकीर्तनम् ॥ चांद्रायणं चरेत्पश्चात्कावेर्यां विष्णुसंनिधौ ॥६१॥ अश्वत्थस्थापनं कार्यं दश धेनूः प्रदापयेत् ॥ प्राजापत्यं चरेत्तत्र भूमिं दद्यात्फलान्विताम् ॥६२॥ एवं यः कुरुते भक्त्या पुत्रवृद्धिः प्रजायते ॥६३॥ पुत्रस्थाने बुधे जीवे कुजराहुसमन्विते ॥ लग्ने मंदसमायोगे मातुलात्सुतनाशनम् ॥६४॥ लग्नपुत्रेश्वरौ पुत्रे बुधभौमसमन्विते ॥ मंदे मातुलशापत्वात्पुत्रसंततिनाशनम् ॥६५॥

भ्रातृशाप के योग तथा उपाय

अब यहां से भ्रातृशाप का कारण कहते हैं॥ भाव में पापग्रह के योग से तथा पुत्र एवं भ्रातृकारक के बलाबल से शापयोग कहते हैं। तृतीयेश पंचमभाव में मंगल, राहुयुक्त हों, पुत्रेश तथा लग्नेश अष्टमभाव में हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न में मंगल, पंचम में शनि, तृतीयेश नवमभाव में तथा पुत्रकारक अष्टमभावमें स्थित हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय है॥ तृतीयभाव में नीचराशि का गुरु हो, शनि पंचमभाव में हो तथा अष्टमभाव में भौम, शनि न हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्नेश १२में मंगल पंचमभाव में हो, पुत्रेश अष्टमभाव में पापग्रह युक्त हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न तथा पंचमभाव दोनों पापग्रह के मध्य में हो और इन भावों के स्वामी तृतीयभाव में हों एवं कारकग्रह भी तृतीयभाव में हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ दशमेश तृतीयभाव में हो, पंचमभाव में पापग्रह युक्त शुभग्रह हो, पंचमभाव में मंगल हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ पंचमभाव में बुध राशि शनि राहुयुक्त हो, १२वें भाव में मंगल और बुध हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्नेश तृतीय भाव में हो और तृतीयेश पंचमभाव में हो लग्न, तृतीय, पंचम में पापग्रह हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ तृतीयेश अष्टम में हो और पुत्रकारक पुत्रभाव में राहु और मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ अष्टमेश पंचम में हो और तृतीयेशयुक्त हो तथा अष्टमभाव में मंगल शनि हो तो भ्रातृशाप से सुतक्षय होता है॥ (उपाय) भ्रातृशाप को दूर करने के लिए 'विष्णु पुराण' का श्रवण तथा विष्णुनाम जप कीर्तन करे, बाद में चान्द्रायण व्रत करे, पश्चात् कावेरी नदी के तट या विष्णु मंदिर में पीपल का वृक्ष लगावे तथा दश गोदान करे, प्राजापत्यव्रत करे, सफलभूमि प्रदान करे॥ इस प्रकार भक्ति से जो करता है उसके पुत्र की वृद्धि होती है॥५०–६३॥

मामा के शाप का वर्णन और उपाय

पंचमभाव में बुध गुरु मंगल राहु हो, लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से सुतक्षय होता है॥ लग्नेश और पंचमेश पुत्र भाव में हो, बुध मंगल शनि के साथ हो तो मामा के शाप से सुतक्षय होता है॥६४-६५॥

लुप्ते पुत्राधिपे लग्ने सप्तमे भानुनन्दने ॥ लग्नेशे बुधसंयुक्ते तस्य संततिनाशनम् ॥६६॥ ज्ञातिस्थानाधिपे लग्ने व्ययेशेन समन्विते ॥ शशिसौम्यकुजे पुत्रे तस्य संततिनाशनम् ॥६७॥ पुत्रलग्नाधिपौ युक्तावन्योन्य साथ योजितौ ॥ पुत्रे परस्परस्थौ वा पुत्रयोगा इमे स्मृताः ॥६८॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुस्थापनमुच्यते ॥ वापिकूपतडागादिबंधनसेतुदर्शनम् ॥६९॥ पुत्रवृद्धिर्भ-

वेतस्य सपव्वृद्धि प्रजायते ॥ इद योगग्रहेणैव फल ब्रूयाद्विचक्षण ॥७०॥ गुरुक्षेत्रे यदा राहु पुत्रे जीवारभानुजा ॥ धर्मस्थानाधिपे नाशे ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७१॥ विद्यागर्वेण यो मर्त्यो ब्राह्मणानवमन्यते ॥ तद्दोषाद् ब्रह्मशापत्वात्सततेस्तस्य नाशनम् ॥७२॥ धर्मेशे पुत्रभावस्थे पुत्रेशे नाशराशिगे ॥ जीवारराहुमृत्युस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षय. ॥७३॥ धर्माधिपे नीचगते व्ययेशे पुत्रराशिगे ॥ राहुयुक्तेक्षिते वापि ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७४॥ जीवे नीचगते राहुर्लग्ने वा पुत्रराशिगे ॥ पुत्रस्थानाधिपे दुःखे ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७५॥ पुत्रस्थानाधिपे जीवे रन्ध्रे पापसमन्विते ॥ पुत्रेशावर्कचन्द्रौ वा ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७६॥ मदांशे मदसयुक्ते जीवे भौमसमन्विते ॥ पुत्रेशे व्ययराशिस्थे ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७७॥ लग्ने गुरुयुते मदे भाग्ये राहुसमन्विते ॥ व्यये गुरुसमायोगे ब्रह्मशापात्सुतक्षय ॥७८॥ तस्य दोषस्य शात्यर्थं कुर्याच्चान्द्रायण नर ॥ ब्रह्मकूर्चत्रय कृत्वा धेनु दद्यात्सदक्षिणाम् ॥७९॥ पचरत्नानि देयानि सुवर्णेन समन्वितम् ॥ अन्नदान तत कुर्यादयुत वा सहस्रकम् ॥८०॥ एव कृते तु सत्पुत्र लभते नात्र सशय ॥ मुक्तशापो विशुद्धात्मा स पुमान्सुखमेधते ॥८१॥ दारेशे पुत्रभावस्ते दारेशस्याशपे शनौ ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्थे पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८२॥ कलत्रेशे नाशसस्थे रिःफेशे पुत्रराशिगे ॥ कारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८३॥ पुत्रस्थानगते शुक्रे कामपे रन्ध्रसंस्थिते ॥ कारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८४॥ कुटुम्बे पापसबन्धे कामेशे नाशराशिगे ॥ पुत्रे पापग्रहैर्युक्ते पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८५॥ भाग्यस्थानगते शुक्रे दारेशे नाशराशिगे ॥ लग्ने पापे सुते पापे पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८६॥ भाग्यस्थानाधिपे शुक्रे पुत्रेशे शत्रुराशिगे ॥ गुरुलग्नेशदारेशा दुःस्था सततिनाशनम् ॥८७॥ पुत्रस्थाने भृगुक्षेत्रे राहुचन्द्रसमन्विते॥ व्यये लग्ने धने पापे स्त्रीशापात्सुतनाशनम् ॥८८॥ सप्तमे मदगुरू च रन्ध्रेशे पुत्रभेरवौ ॥ लग्ने राहुसमायोगे पत्नीशापात्सुतक्षय ॥८९॥

पुत्रेश लग्न मे अस्त होकर स्थित हो सप्तमभाव मे शनि हो लग्नेश के साथ बुध हो तो सन्तति नष्ट होती है। पुत्र भावेश लग्न मे हो व्ययेश के साथ च० म०, बु० पचम मे हो तो सन्तति नष्ट होती है । पुत्रेश और लग्नेश परस्पर दृष्ट या परस्पर स्थान सम्बन्ध हो तो पुत्र सुख होता है । पूर्वोक्त दोष दूर करने के लिए कुआ, बावडी, तालाब बनाना सेतुबन्ध रामेश्वर का दर्शन करना॥ इनके करने से पुत्रसुख होता है तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है॥ इन ग्रहयोगो से पण्डित को फल कहना चाहिये॥ गुरु के घर मे राहु हो पचम मे सू० म वृ० हो नवमेश अष्टम मे हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है॥ विद्वत्ता के घमण्ड से जो मनुष्य ब्राह्मण का अपमान करता है उस पाप से ब्रह्मशाप होता है और उससे सन्तति नाश होती है॥ नवमेश पुत्रभाव मे हो पुत्रेश अष्टम मे हो वृ० म० रा० अष्टम मे हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है॥ नवमेश नीच का हो व्ययेश पुत्रभाव मे हो, राहुदृष्ट हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है॥ गुरु नीचराशि का हो, राहु लग्न मे हो या पुत्रभाव मे हो, पुत्रेश छठे भाव मे हो तो ब्रह्म शाप से सुतक्षय होता है॥ गुरु सुतेश होकर तथा पापग्रहयुक्त अष्टमभाव मे हो तथा पुत्रेश सूर्य या चन्द्रमा हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है॥ शनि अपने नवाश मे हो, गुरु मगल के साथ हो, पुत्रेश व्ययभाव मे हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे गुरु, शनि भाग्यस्थान मे राहुयुक्त हो या गुरु व्ययभाव मे हो तो ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है॥ इस दोष की शान्ति के लिए चान्द्रायण व्रत करे, बाद ब्रह्मकूर्च व्रत ३ करे

पश्चात् गोदान, सुवर्ण, पञ्चरत्नदान, अन्नदान करे, ब्राह्मण भोजन कराये।। ऐसा करने से सत्पुत्र अवश्य होता है इसमे संशय नहीं। उसका शाप दूर होकर आत्मा शुद्ध हो जाती है और सुख की वृद्धि होती है।। सप्तमेश पुत्रभाव मे हो सप्तमभाव के नवांश का स्वामी शनि हो पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो पत्नी के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमेश अष्टम मे हो, व्ययेश पुत्रभाव मे हो, पुत्रकारक पापयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक्र पचम मे हो, सप्तमेश अष्टम मे हो, पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। तृतीयभाव का पापग्रह से सम्बन्ध हो, सप्तमेश अष्टम मे हो, पुत्रभाव मे पापग्रह हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। शुक्र भाग्यस्थान मे हो, सप्तमेश अष्टम में हो, लग्न मे तथा पचम मे पापग्रह हों तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। भाग्येश शुक्र हो पुत्रेश छठे भाव मे हो, गुरु, लग्नेश और सप्तमेश तृतीयभाव मे हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। पुत्रभाव मे शुक्रराशि हो, चन्द्रमा और राहुयुक्त हों लग्न व्यय, धन भाव मे पापग्रह हो तो स्त्री के शाप से सुतक्षय होता है।। सप्तमभाव मे शनि शुक्र हो अष्टमभाव मे पुत्रेश की राशि हो, राहुसहित सूर्य लग्न म हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है ।।६६-८९।।

धने कुजे व्यये जीवे पुत्रस्थे भृगुनन्दने ।। राहुयुक्तेक्षिते वापि पत्नीशापात्सुतक्षय ।।९०।। नाशस्थौ वित्तदारेशौ पुत्रे लग्ने कुजे शनौ ।। कारके पापसयुक्ते पत्नीशापात्सुतक्षयः ।।९१।। लग्नपचमभाग्यस्था राहुमन्दकुजा क्रमात् ।। रध्रस्थौ पुत्रदारेशौ पत्नीशापात्सुतक्षय ।।९२।। तस्य दोषस्य शान्त्यर्थं कन्यादान समाचरेत् ।। लक्ष्मीनारायण देव सर्वाभरणभूषितम् ।।९३।। मूर्तिदान च कर्तव्य दशधेनू प्रदापयेत् ।। शय्या च भूषण चैव दपत्योर्दापयेत्सुधी ।।९४।। पुत्र प्रसूयते तस्य भाग्यवृद्धिश्च जायते ।। मन्त्रशापमिद मर्त्य पिशाच बाध्यते सदा ।।९५।। कर्मलोप पितृभ्यश्च तच्छापाद्वशनाशनम् ।। पुत्रस्थितौ मदसूर्यौ क्षीणचद्रस्तु सप्तमे ।। लग्ने व्यये राहुजीवौ प्रेतशापात्सुतक्षय ।।९६।। पुत्रस्थानाधिपे मदे नाशस्थे लग्नगे कुजे ।। कारके नाशराशिस्थेप्रेतशापात्सुतक्षय ।।९७।। लग्ने पापे व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजा। पुत्रेशे रध्रभावस्ते प्रेतशापात्सुतक्षय ।।९८।। लग्ने पापा व्यये भानौ सुते चारार्किसोमजा ।। पुत्रेशे रध्रभावस्थे प्रेतशापात्सुतक्षय ।।९९।। लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनदने ।। कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षय ।।१००।।

धनभाव मे मगल, व्ययभाव मे गुरु, पचमभाव मे शुक्र हो, राहु से युक्त या दृष्ट हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।। द्वितीयेश तथा सप्तमेश अष्टम मे हो पुत्रभाव में मगल, लग्न मे शनि हो और पुत्रकारक पापग्रहयुक्त हो तो पत्नी शाप से सुतक्षय होता है।। लग्न मे राहु पचम में शनि, नवम मे मगल हो, पुत्रेश तथा सप्तमेश अष्टमभाव में हो तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है इस दोष की शान्ति के लिए 'कन्यादान' करे लक्ष्मीनारायण की मूर्ति आभरण (गहनों से) युक्त करके दान करे तथा दस गोदान करे। शय्या और भूषण दान करे। यह दान दम्पत्ति को दे तो पुत्र प्राप्त होता है भाग्यवृद्धि होती है। यह शाप पिशाचरूप है और दुःखदायी है इसमें कर्मलोप होकर पितरो के शाप से वंश का नाश होता है।। पचमभाव में शनि और सूर्य हो, क्षीण चन्द्रमा सप्तम मे हो लग्न मे राहु तथा व्यय म गुरु हो तो प्रेतशाप से

सुतक्षय होता है।। शनि, पुत्रेश, ये अष्टम मे, लग्न मे मगल हो, पुत्रकारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न मे पापग्रह तथा व्यय मे सूर्य हो सुतभाव मे मगल, शनि और बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न मे पापग्रह तथा व्ययभाव मे सूर्य हो, पचमभाव मे मगल, शनि, बुध हो तथा पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।। लग्न मे राहु पुत्रभाव मे शनि हो पुत्रकारक अष्टमभाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।।(९८-९९ इन दोनो श्लोकोमे एकरूपता है)।।९०-१००।।

लग्ने राहौ च शुक्रेज्ये चन्द्रे मदयुते तथा ॥ लग्नेशे मदराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०१॥ लग्ने राहुसमायोगे पुत्रस्थे भानुनदने ॥ कुजदृष्टे युते वापि प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०२॥ कारके नीचराशिस्थे पुत्रस्थानाधिपे स्थिते ॥ नीचदृष्टे नीचयुते प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०३॥ लग्ने मदे सुते राहौ रध्रे भानुसमन्विते ॥ व्यये भौमसमायोगे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०४॥ कामस्थानाधिपे दुस्थे पुत्रे चन्द्रसमन्विते ॥ मदमादियुते लग्ने प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०५॥ बाधस्थानाधिपे पुत्रे शनिशुक्रसमन्विते ॥ कारके नाशराशिस्थे प्रेतशापात्सुतक्षय ॥१०६॥ तद्दोषस्य प्रशान्त्यर्थं विष्णुश्राद्ध च कारयेत् ॥ रुद्रजाप प्रकुर्वीत ब्रह्ममूर्ति प्रदापयेत् ॥१०७॥ धेनु रजतपात्र च नील चैव प्रदापयेत् ॥ एतत्कर्म कृते तत्र शापमोक्ष प्रजायते ॥१०८॥ पुत्रप्राप्तिर्भवेत्तस्य विप्रेभ्यो दक्षिणा दिशेत् ॥ पुत्रे राहुरविसौम्या कारके शुभसयुते ॥ शुभेन वीक्षिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥१०९॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे शुभदृष्टिसमन्विते ॥ कारके केन्द्रभावस्थे बहुपुत्र समादिशेत् ॥११०॥ लग्नेशे पुत्रराशिस्थे पुत्रेशे लग्नमाश्रिते ॥ केन्द्रत्रिकोणगे जीवे बहुपुत्र समादिशेत् ॥१११॥ पुत्रस्थानगते राहौ मदाशकविवर्जिते ॥ बहुपुत्र नर विद्याच्छुभग्रहनिरीक्षिते ॥११२॥ पुत्रस्थानाधिपे स्वोच्चे लग्नेशे शुभसयुते ॥ कारके शुभसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११३॥ पुत्रस्थाने तदीशे वा गुरौ वा शुभवीक्षिते ॥ शुभेन सहिते वापि बहुपुत्र समादिशेत् ॥११४॥ परिपूर्णबले जीवे लग्नेशे पुत्रराशिगे ॥ पुत्रेशे बलसयुक्ते बहुपुत्र समादिशेत् ॥११५॥ पुत्रस्थानगते जीवे परिपूर्णबलान्विते ॥ लग्नेशे बलसयुक्ते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११६॥ वर्गोत्तमाशगे जीवे लग्नेशस्याशपे शुभे ॥ पुत्रेशेन युते दृष्टे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११७॥ वित्तेशे पुत्रभावस्थे परिपूर्णबलान्विते ॥ वैशेषिकाशके जीवे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११८॥ लग्नात्पुत्राधिपे स्वोच्चे अन्योन्यत्वादिवीक्षिते ॥ परस्परस्थानगते पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥११९॥ पुत्रस्थानाधिपस्याशराशीशे शुभसयुते ॥ शुभेन वीक्षिते वापि पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२०॥ लग्नपुत्राधिपौ केन्द्रे शुभग्रहसमन्विते ॥ कुटुबेशे बलाढ्ये तु पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२१॥ लग्नेशे दारभावस्थे दारेशे लग्नमाश्रिते ॥ द्वितीयेशे विलग्नस्थे पुत्रयोगा इमे स्मृता॥ ॥१२२॥ दारेशे ग्रहसयुक्ते नवाशभवनाधिपे ॥ पुत्रवित्तविलग्नेशे पुत्रयोगा इमे स्मृता ॥१२३॥ इति बहुपुत्रयोगा ॥ पुत्रवित्तकलत्रेशा सयुक्ता नवभागपा पापाशका पापयुता अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२४॥ गुरुर्लग्नेशदारेशपुत्रस्थानाधिपेषु वा ॥ सर्वेषु बलहीनेषु वक्तव्या त्वनपत्यता ॥१२५॥ व्ययेशसयुताशेशे मृत्युराशौ स्थिते यदि ॥ पुत्रेशे क्रूरषष्ठयशे अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२६॥ लग्नपुत्रेश्वरौ दुस्थे कारके नीचराशिगे ॥ अनपत्यग्रहे पुत्रे अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२७॥ क्रूरषष्ठ्यशके जीवे पुत्रस्थे नाशराशिके ॥ पुत्रेशे नाशराशिस्थे अनपत्यत्वमादिशेत् ॥१२८॥ लग्नाधिपे कुजे स्वोच्चे रध्रे

मंदयुते रवौ ॥ शुभदृष्टि समायोगे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१२९॥ लग्ने मंदे गुरौ रंध्रे घ्यये भौमसमन्विते ॥ शुभदृष्टे स्वतुंगे वा चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥ १३०॥ पुत्रस्था मदजीवज्ञा लग्ने पुत्राधिपे शुभे ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३१॥ सुते गह्वर्कशुक्रेज्या शुभर्क्षे शुभवीक्षिते ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३२॥ लग्ने सौम्ये धने पापे तृतीये पापखेचरे ॥ पुत्रेशे शुभराशिस्थे चिरात्पुत्रमुपैति सः ॥१३३॥ इति पुत्रयोगाः ॥ पुत्रस्थाने कुजे मदे बुधक्षेत्रे विलग्नपे ॥ बुधदृष्टे युते वापि तदा दत्ताः सुतादयः ॥१३४॥

लग्न मे राहु, शुक्र, गुरु, चन्द्र, शनि हो, लग्नेश शनि के भाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे राहु हो, पुत्रस्थान मे शनि हो, मगल से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ पुत्रकारक नीचराशि मे हो तथा पुत्रेश भी स्थित हो, नीचग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ लग्न मे शनि, पचम मे राहु तथा अष्टम मे सूर्य हो तथा व्ययभाव मे मगल हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ सप्तमेश तृतीयभाव मे हो, पुत्रभाव मे चन्द्रमा हो, लग्न मे शनि और मान्दी हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ बाध (६) स्थान का स्वामी पुत्रस्थान मे हो और शुक्र शनि युक्त हो पुत्रकारक अष्टम भाव मे हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है॥ इस दोष की शान्ति के लिए 'विष्णुश्राद्ध' करे, रुद्रस्नान करे, ब्रह्मा की मूर्ति का दान करे॥ गौ तथा चान्दी का पात्र और नील वृषभ (बैल) का दान करे। यह उपाय करने से शाप की शान्ति होती है॥ पुत्र की प्राप्ति होती है, पुत्र प्राप्त होने पर ब्राह्मणो को दक्षिणा दे। पुत्र स्थान मे राहु, सूर्य, बुध हो, पुत्र कारक शुभराशि मे हो, शुभग्रहो की दृष्टि हो तो बहुत पुत्र होते है॥ पुत्रेश शुभराशि मे हो, शुभदृष्टि युक्त हो, पुत्रकारक केन्द्रभाव मे हो तो बहुत पुत्र होते है॥ लग्नेश पुत्रभाव मे हो, पुत्रेश लग्न मे हो, गुरु केन्द्र त्रिकोण मे हो तो बहुत पुत्र होते है॥ पुत्रस्थान मे राहु हो परन्तु शनि के नवाश मे नही हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥ पुत्रेश उच्च का हो, लग्नेश शुभयुक्त हो, पुत्रकारक शुभग्रहयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते है॥ पुत्रभाव या भावेश अथवा गुरु शुभग्रह दृष्ट या युक्त हो तो बहुत पुत्र होते हैं॥ बृहस्पति पूर्ण बलवान हो, लग्नेश पुत्रभाव मे हो, पुत्रेश भी बलयुक्त हो तो बहुत पुत्र होते है॥ पुत्रस्थान मे गुरु हो, पूर्णबलवान् हो तथा लग्नेश भी बलवान् हो तो पुत्रप्राप्ति का योग है॥ बृहस्पति वर्गोत्तमाश मे हो, लग्नेश के नवाश का स्वामी शुभग्रह हो तथा पुत्रेश मे युक्त या दृष्ट हो तो पुत्रसुख होने के योग हैं॥ धनेश पुत्रभाव मे हो और पूर्णबली हो, गुरु अपने विशेष अश मे हो, ऐसे योग पुत्रप्रद होते हैं॥ लग्न से पचमेश उच्चराशि मे हो, लग्नेश पुत्रेश परस्पर दृष्टियोग या स्थान योगकर्ता हो तो पुत्रयोग होता है॥ पुत्रेश की नवांमाश राशि का स्वामी शुभग्रह हो और शुभयुक्त या दृष्ट हो तो पुत्रयोग होता है॥ लग्नेश पुत्रेश केन्द्र मे शुभग्रहयुक्त हो, तृतीयेश बलवान् हो तो पुत्रयोग है॥ लग्नेश सप्तमेश परस्पर एक दूसरे के स्थान मे हो और द्वितीयेश लग्न मे हो तो पुत्रयोग होता है॥ सप्तमेश ग्रहयुत हो, लग्न, द्वितीय, पचम के स्वामी नवाश के स्वामी हो तो पुत्रयोग होता है॥ (ये 'बहुपुत्र' योग कहे गये। अब 'पुत्रहीन' योग कहते है) २।५।७ भावो के स्वामी अपने नवाश मे हों, और पाप नवमाश पापग्रह युक्त हो तो 'पुत्रहीन' योग कहना चाहिये॥ बृहस्पति, लग्नेश, पचमेश, सप्तमेश ये सब ग्रह वर्ग आदि बलहीन हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है॥ नवाश पति स्वपंच

युक्त होकर अष्टमभाव मे हो, पुत्रेश पापग्रह के षष्ठ्यंश मे हो तो 'पुत्रहीन' योग होता है।। लग्नेश तथा पुत्रेश तृतीय भाव मे हो, पुत्रकारक नीचराशि मे हो, पुत्रस्थान मे पुत्रनाशक पापग्रह हो तो अनपत्य (पुत्रहीन) योग होता है।। बृहस्पति पापग्रह के षष्ठ्यंश मे हो, अष्टमेश पुत्रभाव मे हो, पुत्रेश अष्टमभाव मे हो तो अनपत्य योग होता है।।
यहा से देरी से पुत्र होने के योग कहते हैं ।
(१) लग्नेश मगल उच्चराशि का हो अष्टमभाव मे शनियुक्त सूर्य हो, शुभदृष्टि हो तो बहुत देर से पुत्र होता है।। लग्न मे शनि, गुरु अष्टम मे, व्यय मे मगल हो शुभदृष्ट या उच्चराशि मे हो तो देरी से पुत्र होता है।। पुत्रभाव मे शनि, गुरु बुध हो, पुत्रेश शुभग्रह हो और लग्न मे अथवा शुभभाव मे हो तो देर से पुत्र होता है।। पुत्रस्थान मे राहु सूर्य शुक्र, गुरु हो तथा पचमभाव मे शुभ राशि, शुभदृष्ट हो और पुत्रेश शुभराशि मे हो तो देरी से पुत्र होता है।। लग्न मे सौम्यग्रह तथा धनभाव मे पापग्रह एव तृतीयभाव मे भी पापग्रह हो और पुत्रेश शुभराशि मे हो तो देरी से पुत्र होता है।। (पुत्रयोग समाप्त) (अब दत्तपुत्रयोग कहते है) पुत्रस्थान मे मगल तथा शनि बुध राशि मे हो और लग्नेश को बुध देखता हो अथवा युक्त हो तो 'दत्तपुत्र' होता है।।१०१-१३४।।

पुत्रस्थाने बुधक्षेत्रे मदक्षेत्रेऽथवा भवेत् ।। मदमादियुते दृष्टे तदा दत्ता सुतादय ।।१३५।। पुत्रस्थाने बुधे क्षेत्रे बुधसस्थेक्षितेऽपि वा ।। लग्नाधिपे शनौ वापि दत्तपुत्रा भवति हि ।।१३६।। पुत्रेशे मदसयुक्ते कुजे सौम्यनिरीक्षिते ।। लग्नाधिपे बुधाशे वा दत्तपुत्रा भवति हि ।।१३७।। कामेशे लाभभावस्थे पुत्रेशे शुभसयुते ।। पुत्रे मदे बुधे वापि दत्तपुत्रा भवति हि ।।१३८।। पुत्रेशे भाग्यभावस्थे भाग्येशे कर्मराशिगे ।। पुत्रे मदजदृष्टे तु दत्तपुत्रेण सतति ।।१३९।। लग्नाधिपे भृगोश्चोच्चे पुत्रे मदसमन्विते ।। कारके बलसयुक्ते दत्तपुत्रात्तु सतति ।।१४०।। पुत्रस्थानाधिपे षष्ठे लग्ने पुत्रे शनैश्चरे ।। परिपूर्णबले जीवे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत् ।।१४१।। पुत्राधिपे रवौ लग्ने पुत्रस्थौ शनिसोमजौ ।। पुत्राधिपे बलयुते दत्तपुत्रात्सुतो भवेत् ।।१४२।। लग्नाधिपे बुधे पुत्रे कुजदृष्टिसमन्विते ।। कारके लाभराशिस्थे दत्तपुत्रात्सुतो भवेत् ।।१४३।। लग्नाधिपे गुरौ पुत्रे शनिदृष्टिसमन्विते ।। पुत्रेशे भौमराशिस्थे दत्तपुत्रा भवति हि ।।१४४।। वशान्तो हरिरुग्णगौ त्रिपुरहाब्जे भूसुते रुद्रिय सौम्ये सपुटकास्यपात्रविधिवज्जीवे च पैत्र्यातिथि ।। शुक्रे गोप्रतिपालन च कथित मदे च मृत्युजय ।। कन्यादानभुजगकेतुकपिला सतानसौख्यप्रद ।।१४५।। यावत्सख्या भवेद्राशिस्तावद्वार विनिर्दिशेत् ।। शिवविष्णुस्थापनाद्वालक्षयोगात्सुख भवेत् ।।१४६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडे सतानभावफलादेशवर्णन नाम षोडशोऽध्याय ।।१६।।

पुत्रभाव मे बुधराशि या शनिराशि हो, शनि या मान्दी से युक्त या दृष्ट हो तो दत्तपुत्र (गोद का पुत्र) होता है।। पुत्रस्थान मे बुधराशि बुधयुक्त या दृष्ट हो और लग्नपति शनि हो तो दत्तपुत्र होता है।। पुत्रेश शनि से युक्त हो, मगल को बुध देखता हो और लग्नेश बुध के

नवांश में हो तो दत्तपुत्र होता है॥ सप्तमेश लाभस्थान में हो पुत्रेश शुभग्रहयुक्त हो पुत्रभाव में शनि या बुध हो तो दत्तपुत्र होता है॥ पुत्रेश भाग्यभाव में हो, भाग्येश दशमभाव में और पंचम शनि से दृष्ट हो तो दत्तपुत्र होता है॥ उच्चराशिस्थित शुक्र लग्नेश हो, पुत्रभाव में शनि हो और पुत्रकारक बलवान हो तो 'दत्तपुत्र' होता है॥ पंचमेश चन्द्रमा हो लग्न या पुत्रभाव में शनिश्चर हो, गुरु पूर्ण बली हो तो दत्तपुत्र होता है॥ पुत्रेश सूर्य लग्न में हो, पुत्रस्थान में शनि, बुध हो, पुत्रस्थान स्वामी बलवान् हो तो दत्तपुत्र होता है॥ लग्नस्वामी बुध हो, पंचम भाव पर मंगल की दृष्टि हो, पुत्रकारक बलवान् हो और लाभस्थान में हो तो दत्तपुत्र से सुख होता है॥१४४॥ लग्नेश गुरु पुत्रभाव में हो, पुत्रभाव पर शनि की दृष्टि हो और पुत्रेश मंगल की राशि में हो तो दत्तपुत्र होता है॥

(अब पुत्रोत्पत्ति के लिये उपाय कहते हैं)

सूर्य के दोष में 'हरिवंश पुराण' श्रवण करना, चन्द्रदोष में महादेवजी का प्रदोष व्रत तथा उद्यापन, मंगलदोष में 'रुद्राभिषेक' बुधदोष में 'सम्पुट कांसीपात्र में घृत सुवर्ण दान, गुरुदोष में पितृपूजा, शुक्रदोषमें 'गोपालन' (या गोदान) शनिदोष में मृत्युंजय मन्त्र-पुरश्चरण और राहु-केतु के दोष अथवा शापजनित दोष में पूर्वोक्त कन्यादान, सुवर्ण भुजंगदान, कपिला, गोदान आदि उपाय सन्तान सुख देनेवाले है॥ राशि की संख्या के अनुरूप उपाय की आवृत्ति कहना अथवा शिव विष्णु की स्थापना करना या सन्तान गोपाल आदि के पुरश्चरण आदि से सुख कहना ॥१३५-१४६॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० संतानभावकफलादेश वर्णन
नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

अथ नाभसयोगमाह

अधुना वै विस्तरतः कथिता योगास्तु नाभसा नाम्ना ॥ अष्टादशशतगुणितास्तेषां संक्षेपतो वक्ष्ये ॥१॥आश्रयाख्यास्त्रयो योगा दलयोगद्वय ततः ॥ आकृतिर्विंशतिः संख्या योगानां सप्तक स्मृतम् ॥२॥ रज्जुर्योगो मुसलश्च नलो मालाभुजंगमौ ॥३॥ गदायोगश्च शकटः शृंगाटकविहंगमौ ॥ हलवज्रयवाश्चैव कमलो वापियूपकौ ॥४॥ शरशक्तिश्च नौकाकूटच्छत्रधनूंषि च ॥ अर्द्धेन्दुयोगश्चक्राख्यः समुद्रश्चेति विंशतिः ॥५॥ वीणादामनिकायोगः पाशकेदारशूलकाः ॥ युगगोलौ ततः प्रोक्तो योगा द्वात्रिंशका इमे ॥६॥

अथाश्रययोगत्रयमाह

सर्वे चरस्था अपि वा स्थिरस्था द्विदेहसंस्था यदि वा भवति ॥ क्रमेण रज्जुर्मुसल नलश्च योगत्रयं स्यादिदमाश्रयाख्यम् ॥७॥

नाभस योग

अब हम विस्तार से 'नाभस' नाम के जो योग पूर्व आचार्यों ने कहे हैं जो कि-सब मिलाकर १८०० है उनमें से मुख्य मुख्य योग-संक्षेप से कहेंगे ॥ तीन आश्रय नाम के योग है।

दल योग २ है। आकृति नाम के योग २० है, योग नाम के ७ हैं, जिनके विशेष नाम रज्जू, मूसल, नल, माला, भुजङ्गम, गदा, शकट, शृङ्गाटक, विहङ्गम, हल, वज्र, यव, कमल, वापी, यूपक, शर, शक्ति, दण्ड, नौका, कूट, छत्र, धनुष, अर्धेन्दु, चक्र और समुद्र ये २० है। वीणा, दामनिका, पाश, केदार, शूलक, युग, गोल ये [redacted] है॥ सब मिलकर ३२ योग होते हैं॥१-६॥

तीन आश्रययोग

सब ग्रह यदि चर राशि मे हो तो 'रज्जू' योग और स्थिर राशि मे 'मूसल' तथा द्विस्वभाव राशि मे हो तो 'नल' योग होता है। ये आश्रय नाम के ३ योग हुए॥७॥

अथ दलाख्ययोगद्वयमाह

केन्द्रत्रये सौम्यखगैस्तु माला खलग्रहैर्व्यालसमाह्वय. स्यात् ॥ इद तु योगद्वितयं दलाख्य मुनीश्वरेण प्रतिपादित हि ॥८॥

अथाकृतियोगविंशतिमाह

आसन्नकेन्द्रद्वयगैर्गदाख्यो लग्नास्तसस्थै. शकटः समस्तै. ॥ खबन्धुयातैर्विहग. प्रदिष्टः शृंगाटक लग्नवात्मजस्थैः ॥९॥ धनारिखस्थैस्त्रिमदायगैर्वा चतुर्थरन्ध्रव्ययसस्थितैर्वा ॥ नभस्तलस्थैर्हलनामयोगः किलोदितोय निखिलागमज्ञै. ॥१०॥ लग्नस्मरस्थानगतै शुभाख्यै. पापैश्च मेषूरणबन्धुयातैः ॥ वज्राभिधस्तैर्विपरीतसस्थैर्यवश्च मिश्रै कमलाभिधानः ॥११॥ त्यक्त्वा केन्द्राणि चेत्खेटा' शेषस्थानेषु सस्थिताः ॥ वापीयोगो भवेदेव गदित. पूर्वसूरिभिः ॥१२॥ लग्नाच्चतुर्थात्स्मरतः खमध्याच्चतुर्गृहस्थैर्गगनेचरेन्द्रैः क्रमेण यूपश्च शरश्च शक्तिर्दण्ड. प्रदिष्टः खलु जातकज्ञै. ॥१३॥ लग्नाच्चतुर्थात्स्मरत' खमध्यात्सप्तर्क्षगैर्नौरथकूटसज्ञ. ॥ छत्रधनुश्चाप्यगृहप्रवृत्तैर्नौपूर्वकैर्योग इहार्द्धचन्द्रः ॥१४॥ तनोर्धनाद्येकगृहान्तरेण स्युः स्थानषट्के गगनेचरेन्द्राः ॥ चक्राभिधानश्च समुद्रनामा योगा इतीहाकृतिजाश्च विंशत् ॥१५॥

दो दल योग

तीन केन्द्र स्थानो मे सौम्य ग्रह हो तो 'माला' योग होता है और पापग्रह हो तो 'व्याल' योग होता है। इस प्रकार ये दो दल योग मुनीश्वरो ने कहे है॥८॥

बीस आकृति योग

समीप के दो केन्द्र स्थानो मे यदि सब ग्रह हो तो गद योग। लग्न और सप्तम मे सब ग्रह हो तो 'शकट' योग। दसवे और तीसरे स्थान मे 'विहग' योग। लग्न,पचम,नवममे सब ग्रह हो तो 'शृङ्गाटक' योग। दूसरे, छठे, दसवे अथवा तीसरे, सातवे, ग्यारहवे एव चौथे, आठवे, बारहवे मे सब ग्रह हो तो 'हल' नाम का योग शास्त्राचार्यो ने कहा है। लग्न सप्तम स्थान मे शुभग्रह हो, तीसरे, दसवे स्थान मे पापग्रह हो तो 'वज्र' योग होता है। इसके विपरीत हो तो 'यव' नाम का योग होता है । और मिले जुले ग्रह हो तो 'कमल' नाम का योग होता है । केन्द्र स्थान को छोडकर बाकी स्थानो मे सब ग्रह हो तो 'वापी' नाम

और स्थिर-चित्त होते है। 'नल' योग मे होनेवाले जातक कम या अधिक अङ्ग वाले, कजूस, व्यापार मे निपुण, सुडौल और बन्धु से हित चाहनेवाले होते है। 'माला' योग मे जन्म लेनेवाले जातक सदा सुखी, अन्न, वस्त्र, भोग, वाहन, सम्पन्न, बहुस्त्रीभोगी होते है। 'सर्प' योग मे होनेवाले क्रूर स्वभाव, दरिद्र, नित्य दु खी,दीन और सर्वभक्षी होते है। 'गदा' योग मे पैदा हुए जातक सदा उद्योगशील, यज्ञ आदि धार्मिक कार्य करनेवाले, शास्त्रज्ञान मे कुशल, सुवर्ण आदि सम्पत्ति से युक्त होते है। 'शकट' योग मे होनेवाले मनुष्य रोगी कुनखी, मूर्ख, सवारी से जीविका चलानेवाले, मित्र-स्वजन हीन, और दरिद्री होते हैं। 'विहग' योग मे होनेवाले मनुष्य भ्रमण रुचि, नौकर, कामी, धृष्ट और कलह प्रिय होते है। 'शृङ्गाटक' योग मे होनेवाले मनुष्य कलह प्रिय, युद्ध प्रेमी, सुखी, राजा के प्यारे, अच्छी स्त्रीवाले और धनी होते है।। ।।१७-२५।।

बह्वाशिनो दरिद्रा कृषीवला दु खिताश्च सोद्वेगा ।।बधुसुहृद्भि सक्ता प्रेष्या हलसज्ञके सदा पुरुषा ।।२६।। आद्यतयय सुखिन शूरा सुभगा निरीहाश्च ।। भाग्यविहीना वज्रे जाता खला विपक्षाश्च ।।२७।। व्रतनियममगलपरा वयसो मध्ये सुखार्थपुत्रयुता ।। दातार स्थिरचित्ता यवयोगभवा सदा पुरुषा ।।२८।। विभवगुणाढ्या पुरुषा स्थिरायुषो विपुलकीर्तय शुद्धा ।। शुभशतका पृथ्वीशा कमलभवा मानवा नित्यम् ।।२९।। निधिकरणे निपुणधिय स्थिरार्थसुख सयुता सुतयुताश्च ।। नयनसुखसप्रहृष्टा वापीयोगेन राजान ।।३०।। आत्मविद्विज्यानिरत स्थिया युत सत्त्वसपन्न ।। व्रतनियमनिरतो यूपे जातो विशिष्टश्च ।।३१।। इष्ट करणे दस्युबधनमृगयाधनसेविताश्च मासादा ।। हिस्रा कुशिल्पकारा शरयोगे मानवा प्रसूयते ।।३२।। धनरहित विफलदु खितनीचालसाश्चिरायुष पुरुषा ।। सग्रामबुद्धिनिपुणा शक्त्या जाता स्थिरा शुभगा ।।३३।। हतपुत्रदारनि स्वा सर्वत्र च निर्घृणा स्वजनबाह्या ।। दु खितनीचप्रेष्या दडप्रभवा भवति नरा ।।३४।। सलिलोपजीविविभवा बह्वाशा ख्यातकीर्त यो दुष्टा ।। कृपणा मलिना लुब्धा नौसजाता सदा पुरुषा ।।३५।।

'हल' योग मे होने वाले मनुष्य बहुभोजी, दरिद्री, खेतिहर दु खी, चिन्ताशील, इष्टमित्रो मे रात दिन रहनेवाले होते है। 'वज्र' योग मे पैदा होनेवाले मनुष्य बचपन और बुढापा मे सुखी, शूरवीर सौभाग्ययुक्त और निष्कामी होते है। यव योग मे पैदा हुए मनुष्य व्रत, नियम, सयमशील तथा जवानी मे सुखी धन-पुत्रयुक्त दानी और स्थिर चित्त होते है। 'कमल' योग मे होनेवाले वैभवशाली दीर्घायु कीर्तिमान्, शुद्धाचरणी, राजा होते है। 'वापी' योग मे होनेवाले धन सचयकारी, स्थिर सुख सम्पन्न, सुख सतान से युक्त, स्थिर इन्द्रियोवाले राजा के समान होते है। 'यूप' नामक योग मे पैदा हुए जातक आत्मज्ञानी, कर्मयोगी, विद्वान, साहसी, गृहस्थ-धर्म-सम्पन्न, समाज मे विशिष्ट व्यक्ति होता है। 'शर' योग मे हुआ जातक अपना मतलब सिद्ध करने मे निपुण, शिकारी, चोर, ठग, मासाहारी, हिसक और नीच कार्य करनेवाला होता है। 'शक्ति' योग मे पैदा हुए मनुष्य निर्धन, विफल मनोरथ, दु खी, नीच, आलसी, दीर्घायु, झगडालू और दृढप्रतिज्ञ होते है। 'दण्ड' योग मे होने वाले निर्धन, स्त्रीपुत्रहीन, सर्वभक्षी, समाज बहिस्कृत, दु खी, नीच, नौकर होते है। 'नौका' योग मे पैदा हुए मनुष्य नदीवासी, बहुभोजी, विख्यात, दुष्ट, कृपण, मलिन, लोभी और चुगलखोर होते है।।२६-३५।।

अनतकथनवधपापा निष्किंचना शठाः क्रूराः॥ कूटसमुत्था नित्यं भवंति गिरिदुर्गवासिनो मनुजाः ॥३६॥ स्वजनाश्रयो दयावाञ्छानानृपवल्लभः प्रकृष्टमतिः ॥ प्रथमेऽन्त्ये वयसि नरः सुखवान्दीर्घायुरातपत्री स्यात् ॥३७॥ आनृतिकगुप्तपापाश्चौरा कितवाश्च कानने निरताः ॥ कार्मुकयोगे जाता भाग्यविहीना सुभा वयोमध्ये ॥३८॥ सेनापतयः सर्वे कांतशरीरा नृपप्रिया बलिनः ॥ मणिकनकभूषणयुता भवंति योगे चार्धचंद्राख्ये ॥३९॥ प्रणताशेषनराधिपकिरीटरत्नप्रभास्फुरितपादः ॥ भवति नरेंद्रो मनुजश्चक्रे यो जायते योगे ॥४०॥ बहुरत्नधनसमृद्धा भोगयुता धनजनप्रियाः सयुताः ॥ उदधिसमुत्था पुरुषा स्थिरविभवाः साधुशीलाश्च ॥४१॥ प्रियगीतनृत्यवाद्यनिपुणाः सुखिनश्च धनवन्तः ॥ नेतारो बहुभृत्या वीणाया कीर्तिता पुरुषाः ॥४२॥ दामिन्यामुपकारी नयधनयुक्तो महेश्वरः स्यात ॥ बहुसुतरत्नसमृद्धो धीरो जायेत विद्वांश्च ॥४३॥ पाशे बंधनभाजः कार्ये दक्षा प्रपंचकाराश्च ॥ बहुभाषिणो विशीला बहुभृत्या सप्रतानाश्च ॥४४॥ सुबहूनामुपयोज्याः कृषीवला सत्यवादिनः सुखिनः ॥ केदारे सम्भूताश्चलस्वभावा धनैर्युक्ता ॥४५॥

'कूट' योग मे पैदा हुए मनुष्य झूठे पापी और हिंसक, दरिद्र, शठ, क्रूर और वनवासी होते हैं। 'छत्र' योग मे होने वाले आश्रय दाता दयावान, राजवल्लभ, श्रेष्ठ बुद्धिवाले, सुखी, दीर्घायु, बाल्य और वृद्ध अवस्था के सुखी होते है। धनुष योग मे होनेवाले झूठे चोर गुप्त पापी, धूर्त, जंगलवासी, भाग्यहीन, जवानी मे सुखी होते हैं। 'अर्द्धचन्द्रयोग' मे होने वाले जातक सेनापति, सुन्दर शरीर, राजप्रिय, बलवान् धनी होते हैं। जो महाभाग 'चक्र' योग मे जन्म लेते हैं वे राजाधिराज होते हैं और राजा लोग उनके चरणो मे सदा प्रणाम करते हैं।। 'समुद्र' योग मे जन्म लेनेवाले सदा ऐश्वर्यशाली, श्रेष्ठ आचारवाले, धनीजनो के मान्य भोगी, वैभवयुक्त बहु पुत्रवाले होते हैं।। 'वीणा' योग म होनेवाले जातक गान–वाद्य नृत्य मे निपुण और धनवान्, सुखी, नेता तथा बहुत कर्मचारीवाले होते हैं। 'दामिनी' योग मे जन्म लेनेवाले उपकारी, नीतिमान् धनी, ऐश्वर्यशाली, विख्यात बहुत परिवारवाले और धीर होते हैं। 'पाश' योग मे पैदा हुए मनुष्य कभी कभी कैद भोगनेवाले, छल छिद्रकारी, चतुर, बहु भाषी (बकवादी), शीलरहित, डपोरशख होते हैं। 'केदार' योग मे पैदा होनेवाले सत्यवादी, सुखी, चञ्चल स्वभाववाले, धनी और उपकारी होते हैं।।३६-४५।।

तीक्ष्णालसधनहीना हिंस्रा सुबहिष्कृता महाशूरा ॥ संग्रामे सब्धशब्दा शूले योगे भवंति नराः ॥४६॥ पाखंडवादिनो वा धनरहिता वा बहिष्कृता लोके ॥ सुतमातृधर्मरहिता युगयोगे ये नरा जाताः ॥४७॥ बलसयुक्ता विधना विद्याविज्ञानवर्जिता मलिनाः ॥ नित्यं दुःखितदीना गोले योगे भवंति नराः ॥४८॥ सर्वास्वपि दशास्वेते भवेयुः फलदायिनः ॥ प्राणिनामिति विज्ञेया प्रवदंति तदग्रजाः ॥४९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे नाभसयोगादि फलकथन नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

'शूल' योग में पैदा हुए मनुष्य तीखे स्वभाववाले, आलसी, धनहीन, हिंसक, बलवान् किन्तु समाज से निन्दित होते हैं। 'युग' योग में होने वाले मनुष्य पाखण्डी, झूठे, दरिद्र, समाज से निन्दित, धर्ममर्यादा रहित होते हैं।। 'गोल' योग में होनेवाले मनुष्य बलवान्, निर्धन, ज्ञान और विद्यारहित, मलिन और सदा दुःखी होते हैं। हे मैत्रेय! ये योग अपना पूरा फल विशेष करके सभी दशा में दिखाते हैं॥४६-४९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भा० प्र० नाम सयोगादिफलकथन
नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

अथ गजकेसरियोगमाह

केन्द्रस्थिते देवगुरौ मृगाङ्काद्योगस्तदाहुर्गजकेसरीति ॥ दृष्टे युते वेदसुते शशाङ्के नीचास्तहीनैर्गजकेसरी स्यात् ॥१॥ गजकेसरिसञ्जातस्तेजस्वी धनवान् भवेत् ॥ मेधावी गुणसम्पन्नो राजप्रियकरो भवेत् ॥२॥

अथाऽमलायोगमाह

यस्य जन्मसमये शशिलग्नात्सद्ग्रहे यदि च जन्मनि सत्य ॥ तस्य कीर्तिरमला भुवि तिष्ठेदायुषोन्तमविनाशनसंपत् ॥३॥ लग्नाद्वा चन्द्रलग्नाद्वा दशमे शुभसंयुते ॥ योगोऽयममला नाम कीर्तिराचन्द्रतारकी ॥४॥ राजपूज्यो महाभोगी दाता बन्धुजनप्रिय ॥ परोपकारी गुणवानमलायोगसम्भव ॥५॥

गज केसरी योग

चन्द्रमा से बृहस्पति केन्द्र में हो तो गजकेसरी नाम का योग होता है। और नीच और अस्तरहित ग्रहों से दृष्ट अथवा युक्त बुध या चन्द्रमा हो तो भी गजकेसरी' योग होता है। गजकेसरी में उत्पन्न हुआ मनुष्य तेजस्वी, धनवान, बुद्धिमान्, गुणी और राजप्रिय होता है॥१॥२॥

"अमला" योग

जिस जातक के जन्म समय में चन्द्रमा यदि शुभग्रह के साथ लग्न में हो अथवा लग्न में शुभग्रह हो या चन्द्रमा के साथ शुभग्रह हो तो उस जातक को निर्मल कीर्ति होती है और जीवन पर्यन्त सम्पत्तिशाली रहता है। लग्न से या चन्द्र लग्न से दशमभाव में शुभग्रह हो तो 'अमला' नाम का योग होता है। इस योग में होनेवाले जातक का यश संसार में अनन्तकाल तक रहता है और वह जातक महाभोगी, राजपूज्य, दाता, समाजप्रिय, परोपकारी एवं गुणवान् होता है॥३-५॥

अथ मालिकायोगमाह

लग्नादिसप्तगृहगा यदि सप्तखेटा जातो महीपतिरनेकगजाश्वनाथः ॥ वित्तादिगे निधिपतिः पितृभक्तियुक्तो धीरोग्ररूपधनवान्नरचक्रवर्ती ॥१२॥ जातो यदा विक्रममालिकाया भूपः स शूरो धनिकश्च रोगी ॥ सुखादिका चेद्बहुदेशभाग्यभोगी महादानपरो महीपः॥१३॥ पुत्राद्या यदि मालिका नरपतिर्यज्वाथ वा कीर्तिमान् जातः षष्ठगृहाद्धन च सुखभृत्प्रातो दरिद्रो भवेत् ॥ कामाद्या गृहमालिका यदि बहुस्त्रीवल्लभो भूपतिर्दीर्घायुर्धनवर्जितो नरवरः स्त्रीनिर्जितश्चाष्टमात् ॥१४॥ धर्मादिग्रहमालिकागुणनिधिर्यज्वा तपस्वी विभुः कर्माद्यो यदि धर्मकर्मनिरतः सपूजितः सज्जनैः ॥ लाभाद्याजवरांगनारमणिपतिः सर्वक्रियादक्षको जातो रिःफगृहाद्बहुव्ययकरः सर्वत्र पूज्यो भवेत् ॥१५॥

मालिका योग

लग्न से सप्तमभाव तक सात भावो मे सूर्यादि सात ग्रह प्रत्येक घर मे १–१ ग्रहरूप से स्थित हो तो यह 'मालिका' या 'माला' योग होता है। इस योगमे होनेवाला हाथी घोडे युक्त राजा होता है॥ यही योग यदि धनभाव से हो तो बहुधनी, पितृभक्त, धीर, प्रतापी रूपवान्, उग्रस्वभाववाला राजाधिराज होता है और यही योग तृतीय भाव से हो तो शूरवीर, धनिक तथा राजा और रोगी होता है॥ और चतुर्थ स्थान से हो तो महादानी,महाभाग्यशाली महाराजा होता है॥ पञ्चमभाव से यदि 'माला' योग हो तो जातक यशस्वी, धार्मिक राजा होता है॥ छठेभाव से यह योग हो तो वनवासी, दरिद्र होता है॥ सप्तमभाव से 'माला' योग हो तो बहुस्त्रीभोगी, दीर्घायु राजा होता है॥ अष्टमभाव से यह योग हो तो धनहीन और स्त्री के आधीन रहनेवाला होता है॥ नवमभाव से यह योग हो तो गुणी, यज्ञ करनेवाला तथा तपस्वी होता है। दशमभाव से यह योग हो तो धर्मकर्मज्ञाता तथा सज्जन वदनीय होता है॥ लाभस्थान से यह योग हो तो महासुन्दरी भार्या होती है तथा सब कामो मे चतुर होता है॥ यही योग बारहवे भाव से हो तो बहुत खर्च करनेवाला तथा सर्वपूज्य होता है॥१२–१५॥

अथ चामरयोगमाह

लग्नेश्वरे केन्द्रगते स्वतुगे जीवेक्षिते चामरनामयोगः ॥ सौम्यद्वये लग्नगृहे कलत्रे नवास्पदे वा यदि चामरः स्यात् ॥१६॥ योगे जातश्चामरे राजपूज्यो विद्वान्वाग्मी पडितो वा महीपः ॥ सर्वज्ञः स्याद्वेदशास्त्राधिकारी जीवेद्वर्षं सप्ततिर्वत्सराणाम् ॥१७॥

चामर योग

लग्नेश उच्चराशि का होकर केन्द्र मे हो और गुरुदृष्टि हो तो 'चामर' योग होता है। अथवा दो शुभग्रहो मे से १–१ लग्न और सप्तम मे इसी प्रकार नवम और आस्पद(१०)मे हो तो भी 'चामर' योग होता है। इस चामर योग मे होनेवाला राजपूज्य, विद्वान्, वाक्पटु, ज्ञानी, वेद और शास्त्र का अधिकारी ७० वर्ष आयु वाला राजा होता है॥१६॥१७॥

अथ शङ्खयोगमाह

अन्योन्यकेंद्रगृहगौ सुतशत्रुनाथौ लग्नाधिपे बलयुते यदि शङ्खयोग ॥ लग्नाधिपे च गगनाधिपतौ चरस्थे भाग्याधिपे बलयुते तु तथा वदति ॥१८॥ शङ्खे जातो भोगशीलो दयालु स्त्रीपुत्रार्थ: क्षेत्रवान्पुण्यकर्मा॥ शास्त्रज्ञानाचारसाधुक्रियावान् जीवेद्वर्षं वत्सराणामशीतिम् ॥१९॥

शङ्खयोग

पंचम तथा षष्ठभावस्वामी परस्पर केन्द्र मे हों और लग्नेश बलवान् हो तो 'शङ्ख' योग होता है। इसी प्रकार लग्न, दशम के स्वामी चरराशि मे हो और भाग्येश बलवान् हो तो भी 'शङ्ख' योग होता है॥ शङ्ख योग मे होनेवाला भोगी, दयालु, धन, स्त्री पुत्र वाला, भूमिपति, पुण्यात्मा, शास्त्रज्ञानी श्रेष्ठकर्म करनेवाला और प्राय ८० वर्ष का दीर्घायु होता है॥१८॥१९॥

अथ भेरीयोगमाह

स्वात्योदयास्तभवनेषु वियच्चरेषु कर्माधिपे बलयुते यदि भेरियोग केन्द्रे गते सुरगुरौ सितलग्नपायौ भाग्येश्वरे बलयुते तु तथैव वाच्यम् ॥२०॥ दीर्घायुषो विगतरोगभया नरेंद्रा बह्वर्थभूमिसुतदारयुता प्रसिद्धा ॥ आचारभूरिसुखशौर्यमहानुभावा भेरीप्रजातमनुजा निपुणा. कुलीना ॥२१॥

भेरी योग

लग्न, द्वितीय, द्वादश और सप्तमस्थान मे सब ग्रह हो और दशमेश बलवान् हो तो 'भेरी' योग होता है। तथा लग्नेश, शुक्र, गुरु केन्द्र मे हो तथा भाग्येश बलवान् हो तो भी 'भेरी' योग होता है॥२०॥ इस योग मे होनेवाला जातक रोगभयरहित धनभूमिसम्पन्न, स्त्री पुत्र युक्त, दीर्घायु, प्रसिद्ध, आचारवान् सुखी तथा शूरवीर कुलीन राजा चतुर होता है॥२०-२१॥

अथ मृदंगयोगमाह

उच्चग्रहांशकपतौ यदि केंद्रकोणे तुंगस्वकीयभवनोपगते बलाढ्ये ॥ लग्नाधिपे बलयुते [illegible] मृदंगयोग कल्याणरूपनृपतुल्ययश प्रद: स्यात् ॥२२॥

मृदंग योग

उच्चराशिस्थित नवांशस्वामी यदि केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे हो और लग्नेश बलवान होकर उच्च या स्वगृही हो तो 'मृदंग' योग होता है। इस योग मे होनेवाला सुन्दर रूप, गुणो से युक्त राजा के समान यश प्रतापवाला होता है॥२२॥

अथ श्रीनाथयोगमाह

कामेश्वरे कर्मगते स्वतुंगे कर्माधिपे भाग्यपसंयुते च ॥ श्रीनाथयोग' शुभदस्तदानीं जातो नर. शक्रसमो नृपाल ॥२३॥

श्रीनाथ योग

सप्तमेश दशमभाव में उच्चराशि में हो और दशमेश भाग्यस्थान में हो तो 'श्रीनाथ' योग होता है॥ इस योग में सजात मनुष्य महाप्रतापी राजा होता है॥२३॥

अथ शारदायोगमाह

योगः शारदसंज्ञकः सुतगते कर्माधिपे चंद्रजे केन्द्रस्थे दिननायके निजगृहप्राप्तेतिवीर्यान्विते॥ चंद्रात्कोणगते पुरंदरगुरौ सौम्यत्रिकोणे कुजे लाभे वा यदि देवमंत्रिणि बुधास्तच्छारदासंज्ञकः ॥२४॥ स्त्रीपुत्रबंधुसुखरूपगुणानुरक्ता भूपप्रियागुरुमहीसुरदेवभक्ताः ॥ विद्याविनोदरतिशील तपोबलाढ्या जाताः स्वधर्मनिरता भुवि शारदाख्ये ॥२५॥

शारदा योग

पञ्चमेश दशमभाव में हो और बुध केन्द्र में तथा सूर्य पूर्ण बलयुक्त स्वगृही हो तो 'शारदा' योग होता है॥ तथा चन्द्रमा से गुरु त्रिकोण स्थान में हो, सौम्यग्रह त्रिकोण में, मंगल लाभस्थान में या गुरु लाभ में हो तो 'शारदा' योग होता है। इस योग में होनेवाला स्त्री पुत्र-युक्त, सुखी, रूपवान्, गुणी, राजप्रिय, गुरु देवता का भक्त, धर्मशील, विद्यावान्, कामक्रीडा रत तपोबल संपन्न होता है॥२४॥२५॥

अथ मत्स्ययोगमाह

लग्नधर्मगते पापे पंचमे सदसद्युते ॥ चतुरस्र गते पापे योगोऽयं मत्स्यसंज्ञकः ॥२६॥ कालज्ञः करुणासिंधुर्गुणधीर्बलरूपवान् ॥ यशोविद्यातपस्वी च मत्स्ययोगसमुद्भव. ॥२७॥

मत्स्य योग

लग्न तथा नवमभाव में पापग्रह, पञ्चमभाव में शुभपाप मिश्रितग्रह हो और केन्द्र में भी पापग्रह हो तो 'मत्स्य' योग होता है॥ इस योग में होने से दैवज्ञ, दयावान्, बल बुद्धि गुण रूपवाला, यशस्वी विद्वान् तपस्वी होता है ॥२६-२७॥

अथ कूर्मयोगमाह

कलत्रपुत्रारिगृहेषु सौम्याः स्वतुंगमित्रांशकराशियाताः ॥ तृतीयलाभोदयगास्त्वसौम्या मित्रोच्चसंस्थो यदि कूर्मयोगः ॥२८॥ विख्यातकीर्तिर्भुवि राज्यभोगी धर्माधिकः सत्त्वगुणप्रधानः ॥ धीरः सुखी वागुपकारकर्ता कूर्मोद्भवो मानवनायको वा ॥२९॥

कूर्म योग

५।६।७ स्थानों में सौम्यग्रह,उच्च स्वगृही या मित्रनवांश में हो और लग्न, तृतीय तथा लाभस्थान में उच्च या मित्रराशि में पापग्रह हो तो 'कूर्मयोग' होता है॥२८॥ इस योग में होनेवाला विख्यात् कीर्ति, राजसमान ऐश्वर्यसम्पन्न, धर्मात्मा सात्त्विक, धीर, सुखी, व्याख्याता जननायक होता है ॥२८-२९॥

अथ खड्गयोगमाह

भाग्येशे धनभावस्थे धनेशे भाग्यराशिगे ॥ लग्नेशे केंद्रकोणस्थे खड्गयोग इतीरितः ॥३०॥
वेदार्थशास्त्रनिखिलागमतत्त्वयुक्तिबुद्धिप्रतापबलवीर्यसुखानुरक्ताः ॥ निर्मत्सराश्च निजवीर्य-
महानुभावाः खड्गे भवति पुरुषाः कुशलाः कृतज्ञाः ॥३१॥

खड्ग योग

भाग्येश धनभाव में एव धनेश भाग्यस्थान में हो और लग्नेश केन्द्र या त्रिकोण में हो तो 'खड्गयोग' होता है। इस योगमें होनेवाला वेदादि शास्त्र का ज्ञाता, बुद्धिमान्, प्रतापी, सुखी, द्वेषरहित, अपने उद्योग से उन्नति करनेवाला कृतज्ञ और कुशल होता है॥३०॥३१॥

अथ लक्ष्मीयोगमाह

केंद्रमूलत्रिकोणस्थे भाग्येशे परमोच्चगे ॥ लग्नाधिपे बलाढ्ये च लक्ष्मीयोग इतीरितः ॥३२॥
गुणाभिरामो बहुदेशनाथो.विद्यामहाकीर्तिरनंगरूपः ॥ दिगन्तविश्रांतनृपालवंद्यो राजाधिराजो
बहुदारपुत्रः ॥३३॥

लक्ष्मी योग

परमोच्चराशि स्थित भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण में हो और लग्नेश बलवान् हो तो 'लक्ष्मी' नामक योग होता है॥ इस योग में सञ्जात व्यक्ति विद्वान्, सुन्दरराजा तथा महाराजाधिपति एव अनेक स्त्री पुत्र वाला होता है॥३२॥३३॥

अथ कुसुमयोगमाह

स्थिरलग्ने भृगौ केंद्रे त्रिकोणेऽब्जे शुभेतरे ॥ मानस्थानगते सौरे योगोऽयं कुसुमो भवेत् ॥३४॥
दाता मही-मण्डलनाथवंद्यो भोगी महावंशजराजमुख्यः ॥ लोके महाकीर्तियुतः प्रतापी नाथो
नराणां कुसुमोद्भवः स्यात् ॥३५॥

कुसुम योग

स्थिर राशि का लग्न हो, शुक्र केन्द्र में तथा चन्द्रमा त्रिकोण में एव पापग्रह और शनि मानस्थान (दशम) में हो तो 'कुसुम' योग होता है॥३४॥ इस योग में होने से दानशील राज वैद्य भोगी, राजाधिराज, यशप्रताप युक्त होता है॥३५॥

अथ पारिजातयोगमाह

विलग्ननाथस्थितराशिनाथस्थानेशराशीशतदंशनाथाः ॥ केन्द्रत्रिकोणोपगता यदि स्युः
स्वतुंगगा वा यदि पारिजातः ॥३६॥ मध्यान्तसौख्यः क्षितिपालवंद्यो युद्धप्रियो
वारणवाजियुक्तः ॥ स्वकर्मधर्माभिरतो दयालुर्योगी नृपः स्याद्यदि पारिजातः ॥३७॥

पारिजात योग

लग्नेश, तथा लग्नेश जिस राशि मे हो उस राशि का स्वामी तथा वह जिस राशि मे हो, एव उस राशि का स्वामी तथा वह भी जिस राशि मे हो, उस राशि का स्वामी, और उनके नवमाश के स्वामी ये यदि उच्च राशि के हो अथवा केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो 'पारिजात' योग होता है॥३६॥ इस योग मे जवानी तथा वृद्धावस्था मे सुखी, राजवद्य, युद्धप्रिय, हाथी घोडेयुक्त, स्वकर्म धर्मरहित, दयालु तथा राजा होता है॥३६-३७॥

अथ कलानिधियोगमाह

द्वितीये पञ्चमे जीवे बुधशुक्रयुतेक्षिते ॥ क्षेत्रे तयोर्वा सम्प्राप्ते योगः स्यात्स कलानिधिः ॥३८॥ कामी कलानिधिभवः सुगुणाभिरामः सस्तूयमानचरणो नरपालमुख्यैः ॥ सेनातुरंगमवबारण-शंखभेरीवाद्यान्वितो विगतरोगभयारिसघ. ॥३९॥

कलानिधियोग

द्वितीय या पचमभाव मे गुरु हो तथा बुध, शुक्र से युक्त या दृष्ट हो अथवा इनकी राशि मे हो तो 'कलानिधि' योग होता है॥३८॥ 'कलानिधि' योग मे जन्म लेनेवाला कामी, गुणी, सुन्दर तथा राजपूज्य, सेना आदि से युक्त, नीरोग, निर्भय तथा शत्रुजेता होता है॥३८॥३९॥

अथ पारिजातादियोगमाह

स पारिजातद्युचरः सुखानि नीरोगतामुत्तमवर्गयातः ॥ सगोपुरांशे यदि गोधनानि सिंहासनस्थ. कुरुते विभूतिम् ॥४०॥ करोति पारावतभागयुक्तो विद्या यश श्रीविपुल नराणाम् ॥ स देवलोके बहुमानसेनामैरावतस्थो यदि भूपतित्वम् ॥४१॥

पारिजात योग मे विशेष

पारिजात योगकारक ग्रह षोडशवर्ग मे—श्रेष्ठवर्ग मे हो तो जातक को नीरोग, और पूर्वोक्त 'गोपुराश' मे हो तो गोधन, और सिंहासन मे हो तो 'राजसिंहासन' मे योग्य विभूति होती है॥४०॥ और पारावताश मे हो तो विद्या, यश, धन ऐश्वर्यशाली होता है॥ और 'ऐरावताश मे' हो तो इन्द्र के समान राजा होता है॥४१॥

अथ लग्नाधियोगमाह

लग्नाच्च दाराष्टमगेहसस्थै. शुभैर्न पापग्रहयोगदृष्टैः ॥ लग्नाधियोगो भवति प्रसिद्धः पापैः सुखस्थानवियर्जितैश्च ॥४२॥ लग्नाधियोगे बहुशास्त्रवक्ता विद्याविनीतश्च बलाधिकारी ॥ मुख्यस्तु निष्कापटिको महात्मा लोके यशोवित्तगुणाधिकः स्यात् ॥४३॥

लग्नाधियोग

लग्न से सप्तम तथा अष्टमभाव मे शुभग्रह हो और पापग्रहो मे युक्त या दृष्ट न हो तो

'लग्नाधियोग' होता है किन्तु चतुर्थभाव में पापग्रह न होना चाहिए।।४२।। लग्नाधियोग में होनेवाला बहुशास्त्रज्ञाता, विद्वान्, विनीत सेनापति जनमान्य, निष्कपट, यश-धन-गुण-सम्पन्न महात्मा होता है।।४३।।

अथ चन्द्रयोगादीनाह

सहस्ररश्मितश्चन्द्रे कण्टकादिगते सति ।। न्यूनमध्यवरिष्ठानि धनीधीनैपुणानि च ।।४४।। स्वांशेऽधिमित्रस्यांशे वा स्थिते वा दिवसे शशी ।। गुरुणा दृश्यते तत्र जातो वित्तसुखान्वितः ।।४५।। स्वाधिमित्रांशगश्चन्द्रो दृष्टो दानवमन्त्रिणा ।। निशासु कुरुते लक्ष्मीं छत्रध्वजसमाकुलाम् ।। विपर्ययस्थे शीतांशौ जायतेऽल्पधनो नरः ।।४६।।

चन्द्र योग

सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो योग बलानुसार उत्तम, मध्यम और कनिष्ठरूप में बुद्धि, धन और वैभव होते हैं।। चन्द्रमा अपने नवांश या अतिमित्र के नवांश में हो तथा दिन का जन्म लग्न हो तथा गुरु की दृष्टि हो तो धनी और सुखी होता है।। अधिमित्रांश में स्थित चन्द्र शुक्र से दृष्ट तथा रात्रि का जन्म हो तो ध्वजा छत्र-युक्त राजा होता है।। इससे विपरीत होने से सामान्य धनवाला होता है ।।४४-४६।।

अथाऽधियोगमाह

शशिनः सौम्याः षष्ठे द्यूने वा निधनसंस्थिता वा स्युः ।। स्यादधियोगे जातः सौम्यैः सबलैर्धराधीशः ।।मध्यबलैर्मंत्री स्यादधमबले सैन्यनायकः स स्यात् ।।४७।। चन्द्राद्वृद्धिगतैः सौम्यैर्धर्मशीलो महाधनी ।। द्वाभ्यां समोऽल्पवसुमानेकेन परिकीर्तितः ।।चन्द्राल्लग्नाद्ग्रहाभावे दरिद्रो दुःखितो भवेत् ।।४८।।

अधियोग

चन्द्रमा से ६।७।८। स्थान में सौम्यग्रह हो और बलवान् हो तो राजा तथा मध्यबली हो तो मन्त्री, और हीनबली हो तो सेनानायक होता है।। चन्द्रमा से वृद्धिस्थान (३।६।१०।११।) में सौम्यग्रह हो तो धर्मात्मा तथा श्रेष्ठ आचारवाला होता है। दो सौम्यग्रहों से फल समान, और एक ग्रह से अल्पधनवाला होता है।। चन्द्र या लग्न से उपर्युक्त स्थान में कोई भी ग्रह नहीं हो तो दरिद्र और दुःखी होता है।।४७।।४८।।

अथ सुनफाऽनफादुरधराकेमद्रुमयोगानाह

शीतांशोर्द्रविणस्थितैश्च सुनफायोगोऽनफात्यस्थितैः स्वात्यस्थैः खचरैर्भवेद्दुरधरा पक्षेरहेशोज्झितैः ।। चेद्वित्तव्ययगा न चेद्दिविचराः केमद्रुमः स्यात्सदा प्राचीनैर्मुनिभिः स्मृता श्रुतिमिता योगाः शशाङ्कोद्भवाः ।।४९।।

सुनफा, अनफा, दुरधरा, केमद्रुम योग

चन्द्रमा से दूसरे स्थान मे ग्रह हो तो 'सुनफा' योग होता है। (ग्रह ३ या तीन से अधिक होने चाहिए) और द्वादशभाव मे यदि तीन या तीन से अधिक ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है।। और सूर्य छोडकर दूसरे तथा द्वादश भाव मे ग्रह हो तो 'दुरधरा' योग और दूसरे बारहवे स्थान मे कोई भी ग्रह नही हो तो 'केमद्रुम' योग होता है।।४९।।

अथ सुनफायोगफलमाह

भूमीपतेश्च सचिव सुकृती कृती च नून भवेन्निजभुजार्जितवित्तयुक्त ।। ख्यात सदाखिलजनेषु विशालकीर्त्या बुद्ध्याधिकश्च मनुज सुनफाभिधाने ।।५०।।

सुनफा योग फल

राजमन्त्री, पुण्यकर्ता, कर्मवीर, स्वोपार्जित धन से धनी, समाज मे विख्यात, कीर्तिमान् तथा बुद्धिमान् होता है।५०।।

अथाऽनफायोगफलमाह

प्रभुर्विनीत शुभवाग्विलास सच्छीलशाली गुणपूर्तियुक्त ।। उदारकीर्ति. स्मरतुष्टचित्तो नित्य नर स्यादनफाभिधाने ।।५१।।

अनफा योग फल

विनीत, मान्य, मिष्टभाषी, सुशील, गुणी, यशस्वी तथा विरक्त होता है।।५१।।

अथ दुरधरायोगफलमाह

सद्वित्तसद्वारणवाहधात्रीसौख्याभियुक्त सतत हतारि ।। कान्तासुनेत्राचललालस स्याद्योगे सदा वौरधरे मनुष्य ।।५२।।

दुरधरा योग फल

इस योग मे होनेवाला, धनी वाहनयुक्त, सुखी, शत्रुहीन, तथा कामी होता है।।५२।।

अथ केमद्रुमफलमाह

सद्वित्तसूनुवनितात्मजनैर्विहीन प्रेष्यो भवेत्तु मनुजो हि विदेशवासी ।। नित्य विरुद्धधिषणो मलिन कुवेष केमद्रुमे च मनुजाधिपते सुतोऽपि ।।५३।।

केमद्रुम योग फल

स्त्री, पुत्र, धनहीन, भृत्यवृत्ति (नौकरी) विदेशवासी, विरुद्धबुद्धि, मलीन तथा कुवेशवाला होता है।।५३।।

अथ केमद्रुमभंगमाह

चद्रचतुर्थैः सुनफा दशमस्थितैः कीर्तितोऽनफा विहगैः उभयस्थितैर्दुरधरा केमद्रुमसंज्ञितोऽन्यथा योगः ॥५४॥ यद्राशिसंज्ञे शीतांशुर्नवांशे जन्मनि स्थितः ॥ तद्द्वितीयस्थितैर्योगःसुनफाख्यः प्रकीर्तितः ॥५५॥ द्वादशैरनफा ज्ञेयो ग्रहैर्द्विद्वादशस्थितैः ॥ प्रोक्तो दुरधरायोगोऽन्यथा केमद्रुमो मतः ॥५६॥ प्रालेयांशुः सूतिकाले यदा वा सर्वैः खेटैर्वीक्ष्यमाणः करोति ॥ दीर्घायुष्य राजयोग मनुष्य सत्कोशाढ्यं हंति केमद्रुमं च ॥५७॥ सर्वे खेटाः केन्द्रतुर्येषु सस्था दुष्टो योगश्चापि केमद्रुमोऽयम् ॥ दुष्टं सर्व स्व फल संविहाय कुर्युः पुंसां सत्फल वै विचित्रम् ॥५८॥ सर्वेषु चद्रयोगेषु चेद यत्नाद्विचिंतयेत् ॥ केमद्रुमादिका योगा समवेऽस्य लयं ययुः ॥५९॥

केमद्रुमभंग योग

चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान ग्रहो के होने से 'सुनफा' योग और दशमभाव मे होने से 'अनफा' योग होता है। दोनो ४।१० स्थानो मे ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा होने से 'केमद्रुम' योग होता है॥५४॥ जन्मलग्न मे चन्द्रमा जिस नवांश मे हो उससे द्वितीय नवांश मे ग्रह हो तो 'सुनफा' और द्वादश नवमांश मे ग्रह हो तो 'अनफा' योग होता है॥५५॥ तथा २।१२ नवांश मे ग्रहो के होने से 'दुरधरा' योग अन्यथा 'केमद्रुम' योग होता है॥५६॥ जन्मलग्न मे चन्द्रमा पर सब ग्रहो की दृष्टि हो तो 'केमद्रुम' योग का बाधक होकर श्रेष्ठ धन युक्त दीर्घायु और राजयोग कारक होता है॥५७॥ सारे ग्रह चारो केन्द्र स्थानो मे हो तो यह भी 'केमद्रुम' योग होता है परन्तु यह योग अपना सब दुष्ट फल छोड़कर सब प्रकार शुभफल करता है॥५८॥ सब प्रकार के चन्द्रयोगो के इनका अवश्य ही विचार करना चाहिए। योगायोग विचार से 'केमद्रुम' योग के भंग होने की अधिक संभावना रहती है॥५९॥

अथ रवियोगमाह

वेसिश्चान्त्यगतैर्ग्रहैर्द्विभवणैर्वेशिः शशांकोज्झितैर्भानोस्तूभयगैस्तदोभयचरीयोगः स्मृतः प्राक्तनैः ॥ किंचित्तद्वचनेषु नैव नियमोऽस्य नरश्चानृतोऽलस कष्टकरो नरश्च मृदुदृक् स्याद्वेसियोगोद्भवः ॥६०॥

रवियोग

चन्द्रमा रहित तीन या तीन से अधिक ग्रह सूर्य से बारहवे हो तो 'वेसि' योग होता है और सूर्य से द्वितीयभाव मे हो तो 'वेशि' योग होता है। तथा सूर्य से २।१२ स्थानो मे (चन्द्ररहित) ग्रह हो तो 'उभयचरी' योग होता है।

वेसियोगफल-'वेसि' योग मे होनेवाले के वचन का कोई सिद्धान्त नही (कभी कुछ २ कहता है) अत झूठा, कष्टकारी किन्तु दर्शन का मीठा होता है॥६०॥ (देखने का मीठा करनी का कड़ा-छिपी छुरी होती है।)

अथ वेशियोगफलम्

तिर्यग्दृष्टिः सत्यसत्यानुकम्पी मर्त्योऽत्यर्थं दीर्घकायोऽलसश्च ॥ मूर्ती यस्य स्याद्वा वेशियोगस्त्वल्पद्रव्योवाग्विलासाधिशाली ॥६१॥

वेशियोग फल

जिसका जन्म 'वेशि' योग मे होता है, वह सत्वगुणी, सत्यभाषी, तिरछी नज़रवाला, लम्बा कद, आलसी, दरिद्र तथा वाचाल होता है॥६१॥

अथोभयचरीफलमाह

यस्य स्याज्जनने किलोभयचरीयोगस्य चेत्सम्भवः सोत्पत समवायवानपि तदा मर्त्यो भवेत्सद्यशाः ॥ नात्युच्चः प्रबलायलाञ्छितनयायुक्तः समृद्धः सदा ह्यत्यर्थं स्थिरमानसः सरलधुक् सर्वसहः सन्मतिः ॥६२॥

उभयचरी योगफल

जिसके जन्मलग्न मे उभयचरी योग होता है, वह कजूस (अत सग्रही) यशस्वी, मझोला कदवाला, लक्ष्मीवान्, सरल, स्थिर बुद्धि और धीर होता है॥६२॥

अथ पुरुषस्त्रीनपुंसकजन्मज्ञानमाह

बलाबलं विलोक्यैषां ग्रहाणां योगकारिणाम् ॥६३॥ स्त्रीपुंसनिर्णयः क्लीबयोगास्तु तदसंभवाः ॥६४॥ ओजभे च विषमांशकोपगैर्लग्नचन्द्रगुरुभास्करैर्नरः॥ स्यात्तथापि समभे समांशगैः स्त्रीमिथेकसमये प्रसूतिषु ॥६५॥ लग्नं त्यक्त्वा च विषमे पुत्रदो भास्करात्मजः ॥ समे कन्याप्रदः प्रोक्तो नान्यग्रहनिरीक्षितः ॥६६॥

पुरुष, स्त्री, नपुसक ज्ञान

योगकारक ग्रहो का बलाबल विचार करके पुरुष स्त्री का जन्म जानना और उन पुरुषयोग तथा स्त्रीयोग के अभाव मे नपुसक का जन्म जानना॥ लग्न मे विषमराशि तथा विषम नवाश हो और चन्द्र, सूर्य, गुरु विषम नवाश मे हो तो 'नर' का जन्म हो। एव समराशि और चन्द्र, सूर्य, गुरु सम नवाश मे हो तो 'कन्या' जन्म होता है॥ लग्न को छोडकर शनि विषमराशि (या विषम नवाश) मे हो तो पुत्र और समराशि (या सम नवाश) मे हो तो कन्या होती है ॥६३–६६॥

अथ षट्क्लीबयोगानाह

अन्योन्यं रविशशिनौ विषमाविषमर्क्षगौ निरीक्ष्येते ॥ इन्दुजरविपुत्रौ वा तथैव हि नपुंसकं कुरुतः ॥६७॥ वक्रो विषमे सूर्यः समगश्चैव परस्परालोकात् ॥ विषमर्क्षे लग्नेन्दुसमराशिगः कुजोऽप्यवलोकयति ॥६८॥ बुधचन्द्रौ कुजदृष्टौ विषमर्क्षसमर्क्षगौ तथैवोक्तौ ॥ ओजनवांशकसंस्था लग्नेन्दुसितास्तथैवोक्ताः ॥६९॥

नपुंसक छह योग

सूर्य चन्द्रमा विषम सम राशियों मे होकर परस्पर देखते हो अथवा चन्द्रमा और शनि इसी प्रकार हो तो जातक 'नपुसक' होता है॥ मगल विषम राशि मे सूर्य सम राशि मे होकर

परस्पर देखते हो अथवा लग्न विषम राशि मे चन्द्रमा सम राशि मे दोनो को मंगल देखता हो॥ अथवा बुध विषम राशि मे चन्द्रमा सम राशि मे दोनो को मंगल देखता हो अथवा विषम नवमांशक मे लग्न, चन्द्रमा और शुक्र हो तो नपुंसक होता है॥ ये ६ योग नपुंसक के कहे गये॥६७॥६८॥६९॥

अथ प्राणिनां वृत्तिनिर्णयमाह

अर्थाप्ति कथयेद्विलग्नशशिनो प्राबल्यतः खेचरैर्मानस्थैः पितृमातृशत्रुसुहृद्भ्रात्रादिभिः स्याद्धनम् ॥ सूर्याद्वा दिननाथलग्नशशिना मध्ये बली यस्ततः कर्मेशास्यनवांशराशिपवशाद्-वृत्तिं जगुस्तद्विदः ॥७०॥ भैषज्यचामीकरतोयपानपण्येन मुक्तामणिविप्रलम्भात् ॥ अन्योऽन्यवृत्तागमवृत्तिमार्गाज्जीवत्यसौ वासरनायकांशे ॥७१॥ मन्त्रोपदेशरसवादविनोदमार्गै-र्वृत्तिं जगुः सकलशास्त्रपुराणमार्गैः ॥ ज्ञानोपदेशपथिभिः क्षितिपालपूज्यो जीवत्यसौ खलु पुमान्विधुनायकांशे ॥७२॥ जलोद्भवानां क्रयविक्रयेण कृषेश्च मृद्भाण्डविनोदमार्गात् ॥ राजाङ्गनासंश्रयवृत्तिरूपान्निशाकरांशे वसनक्रयाद्वा ॥७३॥ धातोर्विवादेन रणप्रहारात्तथा-भिवादात्कलहप्रवृत्त्या ॥ जीवत्यसौ साहसमार्गरूपया धरासुतांशे यदि चौरवृत्त्या ॥७४॥ शिल्पादिकाव्यागमशास्त्रमार्गाज्ज्योतिर्गणज्ञानवशाद्बुधांशे ॥ वेदार्थविद्याध्ययनाज्जपाच्च पुरोहितव्याजवशात्प्रवृत्तिः ॥७५॥ जीवांशके भूसुरदेवतानामुपासकाध्यापकमार्गरूपात् ॥ पुराणशास्त्रागमनीतिमार्गाद्धर्मोपदेशेन कुलीनमाहुः ॥७६॥ सुवर्णमाणिक्यगजाश्वमूलाद्गवां क्रयाज्जीवनमाहुरार्याः ॥ गुडौदनक्षीरदधिक्रयेण स्त्रीणां प्रलोभेन भृगोः सुतांशे ॥७७॥ शन्यंशके कुत्सितमार्गवृत्त्या शिल्पादिभिर्दारुमयैर्वधाद्यैः ॥ वित्यस्तभाराज्जनविप्रलम्भादन्यो-न्यवैरोद्भवमूलमार्गात् ॥७८॥ स्वक्षेत्रे स्वनवांशके सुहृदि वा स्वास्युच्चभागे यदा स्वद्रेष्काणचतुष्टयेषु सहिता मूलत्रिकोणेषु वा ॥ तत्तत्कालबलान्विताश्च खचरा वर्गोत्तमांशेऽपि वा ते सर्वे शुभदा भवन्ति हि तदा स्यात्तद्दशादावपि ॥७९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे बहुयोगफलकथनं नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

मनुष्यो की वृत्ति निर्णय

लग्न और चन्द्रमा का बलाबल विचार करके दशम भाव मे स्थित ग्रह के अनुसार पिता, माता, शत्रु मित्र, भ्राता आदि के द्वारा धन की प्राप्ति होती है॥ अथवा सूर्य, लग्न और चन्द्रमा मे जो बलवान् हो तथा दशम भाव मे स्थित जो राशि वा नवमांश उसके स्वामी के अनुसार वृत्ति का निर्णय करे॥७०॥ दशमेश राशि नवमांश पति यदि सूर्य हो तो औषधि–विक्रय, सुवर्ण–विक्रय, शर्बत आदि विक्रय, मोती–माणिक आदि जवाहरात मे आजीविका हो अथवा ठगी से अथवा दलाली से आजीविका हो॥ सूर्य के नवमांश मे हो तो मन्त्रोपदेश, रसधातु व्यापार, खेल, बाजीगरी आदि शास्त्रपुराण उपदेश से, या ज्ञानोपदेश मे प्रसिद्ध और राजपूज्य होता है॥ चन्द्रमा के नवांश मे जन्म हो तो जलजीव मछली आदि के व्यापार से या कृषि (खेती) से या मिट्टी के बने हुए पदार्थो से या राजाङ्गना सम्पर्क मे अथवा वस्त्र व्यापार से जीवनयापन होता है॥ उसी प्रकार मंगल के नवमांश मे धातु का व्यापार, मुकदमाबाजी, मारपीट, आग लगाना, लड़ाई झगड़ा, अथम साहस के कार्यो मे

अथवा चोर वृत्ति से आजीविका होती है॥ बुध के नवमाश के शिल्प व्यापार, काव्य–कविता शास्त्रो द्वारा, ज्योतिष से, वेदपाठ आदि से, पुरोहिति या ब्याज से आजीवन होता है। बृहस्पति के नवमाश होने पर देवोपासना अथवा अध्यापन कार्य, पुराण शास्त्र आदि का उपदेश, व्याख्यान वृत्ति या ब्याज आदि से आजीवन होता है। शुक्र के नवमाश मे सुवर्ण, मणि–माणिक, हाथी घोडे, गाय, आदि से अथवा अन्न, गुड, दूध, दही आदि के व्यापार से जीवनयापन होता है। शनि के नवमाश मे निन्दित वृत्ति से अथवा लकडी के खेल खिलौने से, अथवा हिंसक वृत्ति से, भाडे से, ठगी से, परस्पर वैर कराने से तथा वकालत से आमदनी होती है॥ किसी भी ग्रह के शुभफल देने मे ये निमित्त होते हैं–स्वक्षेत्री होना, स्व नवाश मे होना, मित्र राशि या मित्र नवाश में होना, अपने उच्च राशि का या उच्च नवाश मे होना, केन्द्र या त्रिकोण मे होना, अपने द्रेष्काण मे होना, मूल त्रिकोण या वर्गोत्तम होना, जन्मकाल मे पूर्ण बली होना, इस कथित स्वरूप मे ग्रह अपनी दशा और अन्तर्दशा मे अपना पूर्ण फल करते है। अर्थात् इन कथित योगो मे भी ग्रह का स्वरूप कथित रीति से देखना चाहिए।।७०-७९।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे भावप्रका॰ बहुयोगफलकथन नाम अष्टादशोऽध्याय ॥१८॥

अथ मारकभेदाध्यायः

त्रिविधाश्चायुषो योगा स्वल्पायुर्मध्यमोत्तमा ॥ द्वात्रिंशात्पूर्वमल्पायुर्मध्यमायुस्ततो भवेत् ॥ चतुःषष्ट्या पुरस्तात्तु ततो दीर्घमुदाहृतम् ॥१॥ उत्तमायु शतादूर्ध्व ज्ञातव्य मुनिसत्तम ॥ चतुर्विंशतिवर्षाणामायुर्ज्ञातु न शक्यते ॥२॥ जपहोमचिकित्साद्यैर्बालरक्षा तु कारयेत् ॥ पित्रोर्दोषैर्मृता केचित्केचिन्मातृग्रहैरपि ॥३॥ अपरेऽरिष्टयोगाच्च त्रिविधा बालमृत्यव ॥ अल्पायुर्योगजातस्य विपत्तारा मृति वदेत् ॥४॥ जातस्य मध्यमे योगे प्रत्यरिस्तु मृतिर्भवेत् ॥ दीर्घायुर्योगजाताना वधभे तु मृतिर्भवेत् ॥५॥ त्रिषु योगेषु सर्वेषु प्रत्येक त्रिविध भवेत् ॥६॥ अल्पायुरल्पमध्य तु पूर्णायुस्त्रिविध भवेत् ॥ मध्यमादल्पमध्य तु पूर्णायुस्त्रिविध भवेत् ॥७॥ दीर्घायुषोऽल्पमध्य तु पूर्णायुस्त्रिविध भवेत् ॥ एव बहुविध प्रोक्त आयुषस्तु विनिर्णय ॥८॥ अष्टमर्क्ष तृतीय च लग्नादायुरुदाहृतम् ॥ द्वितीय सप्तमस्थान मारकस्थानमुच्यते ॥९॥ लग्नेशरन्ध्रपत्योश्च लग्नेन्द्वोर्लग्नहोरयो ॥ पूर्वार्ध्येव प्रयुञ्जीयात्सवादादायुषा त्रये ॥१०॥ चरे चरस्थिरद्वन्द्वा स्थिरे द्वन्द्वचरस्थिरा ॥ द्वन्द्वे स्थिरोभयचरा दीर्घमध्याल्पकायुष ॥११॥

मारकभेदाध्याय

आयु योग तीन प्रकार के है। नाम–स्वल्पायु, मध्यायु और दीर्घायु। ३२ वर्ष तक स्वल्पायु। ६४ तक मध्यायु। इसके बाद दीर्घायु होती है॥ १०० वर्ष तक बाद उत्तमायु कही जाती है। २४ वर्ष की अवस्था तक निश्चित आयु का ज्ञान नही होता॥ यदि कष्ट हो तो जप, होम, दान तथा चिकित्सा आदि से बालको के जीवन की रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि कुछ बालको की मृत्यु पितृ दोष से और कुछ की मातृबाधा विस्फोटक आदि से॥ एव कुछ की बालारिष्ट मे होती है। अल्पायुयोग मे उत्पन्न बालक की 'विपत्' नाम के तारा मे भी मृत्यु होती है।

मध्यायु योग मे जन्म वाले की भी 'प्रत्यरि' तारा मे मृत्यु सभव है। दीर्घायु योगोत्पन्न शिशु की भी 'वध' तारा मे मृत्यु सभव है।। अल्प, मध्यम, दीर्घ इन तीन भेदो मे प्रत्येक के ३-३ भेद हैं। यथा–अल्पायु मे अति अल्प, मध्यम अल्प, पूर्णाल्प। इसी प्रकार मध्यायु के तीन भेद है–मध्याल्प, मध्यम पूर्णमध्यमायु। इसी प्रकार पूर्णायु के ३ भेद है। पूर्णाल्प पूर्णमध्यम पूर्णायु। इस प्रकार पूर्वाचार्यों ने आयु के अनेक भेद कहे हैं।। लग्न से अष्टम तथा तृतीयभाव आयु के स्थान है। और द्वितीय तथा सप्तमभाव मारकस्थान हैं।। लग्नेश–अष्टमेश से तथा लग्न–चन्द्रमा से और लग्न–होरा से आयु का निर्णय होता है। परस्पर विभिन्न योग प्राप्त होने पर अधिक फल से आयु योग स्थिर करना।। चर मे (क्रम से) चर, स्थिर, द्विस्वभाव मे क्रमश दीर्घायु मध्यायु, अल्पायु होती है। स्थिर मे द्विस्वभाव, चर, स्थिर हो तो दीर्घ मध्य अल्प आयु। तथा द्विस्वभाव मे–स्थिर, द्विस्वभाव, चर हो तो दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होती है।।१–११।।

अल्पमध्यमपूर्णायु प्रमाणमिह योगजम् ॥ विज्ञाय प्रथम पुसा ततो मारकचिन्तनम् ॥१२॥ वृश्चिके मकरे जन्म नृणा राहुर्मृतिप्रद ॥ ग्रहस्थितावशभेदे शनि स्यान्मारको ध्रुवम् ॥१३॥ महामारकसज्ञौ तौ मान्दिकेतू इति स्मृतौ ॥ जायाकुटुम्बकाधीशौ मारकावष्टमेश्वरौ ॥१४॥ प्रायेण मारका राशिदशास्वत्राविशेषत ॥ षष्ठभे पापभूयिष्ठे षष्ठेशो मुख्यमारक ॥१५॥ षष्ठत्रिकोणगो चापि मुख्यमारक इष्यते ॥ मध्यायुषि मृति षष्ठदशायामष्टमस्य वा ॥१६॥ षष्ठात्त्रिकोणस्य/पुनर्दीर्घाल्पविषयो भवेत् ॥ षष्ठे बलयुते तस्य त्रिकोणे मृतिमादिशेत् ॥१७॥ षष्ठेशश्चेद्बलाढ्य स्यात्तत्त्रिकोणे मृति वदेत् ॥ व्यवस्थेय समस्तापि कारकादिदशास्वनु ॥१८॥ चरे चरस्थिरद्वन्द्वा इति यो राशिरागत ॥ स एव मारको राशिर्भवतीति विनिर्णय ॥१९॥ मारकेशदशाकाले मारकस्थस्य पापिन ॥ पाके पाकयुजा पाके समये निधन दिशेत् ॥२०॥ असभवे व्ययाधीशदशाया मरण नृणाम् ॥ अभावेऽव्ययभावेशसबधिग्रहभुक्तिषु॥२१॥तदभावेऽष्टमेशस्य दशाया निधन पुन॥मदभ्रेऽपाप सयुक्तो मारकग्रहयोगत ॥२२॥ तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वाञ्निहता पापकृच्छुद ॥२३॥ मारकग्रहसबन्धी पापकर्ता शनिस्तदा ॥ तिरस्कृत्य ग्रहान्सर्वाञ्निहता भवति ध्रुवम् ॥२४॥

पूर्वोक्त प्रकार से अल्प, मध्य, पूर्ण आयु का योग जान कर आगे कहे योगानुसार मारक का विचार करना चाहिए।। वृश्चिक और मकर राशि मे जिनका जन्म होता है, उनका राहु मारक होता है।। ग्रहों मे नवाश भेद हो तो शनि निश्चय ही मारक होता है।। मान्दी और केतु तो महामारक ही है। द्वितीय और सप्तमभाव के स्वामी तथा षष्ठेश, अष्टमेश मारक है।। इस शास्त्र मे प्राय मारकराशि की दशा मे उपर्युक्त ग्रह मारक होते है। षष्ठभाव मे पापग्रह योग अधिक हो तो षष्ठेश ही मुख्य मारक होता है।। षष्ठभाव का त्रिकोण स्थान भी मुख्य मारक होता है। मध्यायु योग वाले की षष्ठ या अष्टमभाव की दशा मे मृत्यु होती है।। छठे भाव से त्रिकोण स्थान दशम और द्वितीय ये दोनो भावदशा क्रमश दीर्घायु और अल्पायु वाले के विषय मे जानना। षष्ठभाव बलीग्रहयुक्त हो तो षष्ठभावकी त्रिकोण राशि मारक होती है।। अर्थात् षष्ठेश यदि बलयुत हो तो उसकी त्रिकोण राशि की दशा मे मृत्यु कहना।। मारक ग्रह

की दशा के भोग के पश्चात् ही मारक विचार की व्यवस्था जानना (क्योंकि मारक का फल यदि प्रथम हो तो कारक का फल किसको प्राप्त होगा)

प्रथम 'चरे चरस्थिरद्वन्द्वा' इस कथन के अनुसार जो मारक राशि प्राप्त हुई है, 'वही मारक राशि है' यह निश्चय है॥ मारकेश ग्रह की महादशा मे मारक स्थान स्थित पापी ग्रह की अन्तर्दशा हो या पापसम्बन्धी ग्रहों का अन्तर हो तो (यदि सम्भव प्रतीत हो तो) मृत्यु होती है॥२०॥ यदि संभव न हो तो व्ययाधीश की दशा मे भी मरण हो सकता है। और व्ययाधीश की बहुत दूर पड़ती हो तो व्ययाधीश से सम्बन्ध रखनेवाले ग्रह के अन्तर मे मरण हो॥ वह भी न प्राप्त हो तो अष्टमेश की दशा मे मरण कहना॥ शनि यदि पापग्रह युक्त हो तथा मारक ग्रह से भी सम्बन्ध रखता हो तो सब मारको को हटाकर आप मारक होता है॥ क्योंकि शनि स्वय पापकर्मकर्ता है, अत. यदि मारकग्रह से सम्बन्ध हो तो सबको हटाकर निश्चय मारक होता है॥१२–२४॥

एतद्दशासमुक्त्यादौ विचार्यैव मृतिं वदेत् ॥ षष्ठद्रेष्काणपश्चैव: तथा वै नाशकाधिप: ॥२५॥ विपत्ताराप्रत्यरीशौ वधभेशस्तथैव च ॥ आद्यंतपौ च विज्ञेयौ चंद्रक्रांतग्रहाधिप: ॥२६॥ दशाक्षिप्तेषु कालेषु मारको मरणप्रद: ॥ दुष्टतारापते: पाके निर्याणं कथितं बुधै: ॥२७॥ चेदंगपो यदि गृहे ह्यरिरेव हीनं पूर्णं सुहृद्यतिसम: सममायुराहु: ॥ या लग्नपो हितसमारि-पदेऽपि पूर्णं मध्यं च हीनमिहजातकतत्त्वविज्ञा: ॥२८॥ अधुना सम्प्रवक्ष्यामि मारकाख्यं ग्रहं द्विज ॥ तस्मात्फलप्रभेदेन कथयामि तवाग्रत: ॥२९॥स्वात्मकारकलग्नाच्च चिंतयेद्द्विजसत्तम ॥ भ्रातृषष्ठाष्टमं रिष्फं धनं द्यूनांतरेष्वपि ॥३०॥ सर्वेषां बलवान्खेटो मारको ग्रह उच्यते ॥ सर्वबलसमानत्वे मारक: संज्ञको ग्रह: ॥३१॥ षष्ठाधिपस्तु प्रायेण बहुधा मारक: स्मृत: ॥ तेषां मध्येऽधिकारी च षष्ठेशो मुख्यमारक: ॥३२॥ मारकग्रहाश्रितो राशिर्मारकस्वामिनोऽथवा ॥ ताभ्यां महादशाकाले विंशोत्तर्या: स्थिरादिक:॥३३॥पापे मृत्युर्विजानीयात्त्रिविंशकं द्विजोत्तम ॥ मारका बहव: खेटा यदि वीर्यसमन्विता: ॥३४॥ तत्तद्दशांतरे विप्ररोगकष्टादिसंभव: ॥ षष्ठाधिपदशायां च निधनं भवति ध्रुवम् ॥३५॥ न्यूनातिरिक्तभेदेन बहुखेटास्तु मारका: ॥ दुर्बलाश्रयराशीशदशा स्वल्पार्तिदा भवेत् ॥३६॥ प्रबलस्य दशायां च महारोगार्तिमृत्युवत् ॥ भयशोकमृताद्भीतिस्तस्कराग्निभयं भवेत् ॥३७॥ मारकस्य दशायां च महत्या निधनाश्रयो ॥ भूतामंतर्दशामाह तवाग्रे कथयामि भो:॥३८॥मारकग्रहाश्रयीभूतमहापाके चिंतयेत्॥कारकाच्च विलग्नाद्वा सप्तमाद्वा द्वितीयकम् ॥३९॥ षष्ठाष्टरि: फनाथानामपहराष्टके मृति: ॥ तेषामंतर्दशाधीशास्तेषां मध्ये बलाढ्यक: ॥४०॥

इन मारकेश की दशा का अन्त तक विचार करके मारक की अन्तर्दशा मे मरण कहना चाहिए। षष्ठभाव के द्रेष्काण का स्वामी तथा अष्टमेश, और 'विपद्' नामक तारा और 'प्रत्यरि' तारा के स्वामी एव 'वध' तारा का स्वामी ये आदि मारक और अन्तिम मारक हैं। और चन्द्रयुक्तग्रह राशिपति ये इतने मारक जानना ॥ मारकदशा से प्राप्त समय मे मारकग्रह मृत्यु देनेवाला है॥ विपद् प्रत्यरि, वध इन तारापति के अन्तर मे भी मरण सम्भव है॥ अङ्गप अर्थात् लग्नेश यदि लग्न मे शत्रु के घर में हो तो हीनायु, मित्र के घर में हो तो दीर्घायु तथा सम के घर मे हो तो मध्यायु होती है॥२८॥ यदि लग्न का स्वामी शत्रु के घर मे हो तो हीन

आयु, मित्र के घर मे हो तो पूर्ण आयु, सम के घर मे हो तो मध्य आयु जानना।।

हे मैत्रेय! अब हम 'मारक ग्रह' कहते हैं और उस मारक ग्रह के फल के भेद भी तुम्हारे सामने कहते है । द्वितीयेश और आत्मकारक और लग्न मे विचार करना चाहिए। तीसरे, छठे, आठवे, बारहवे, दूसरे और सातवे घर से भी मारक का विचार करना चाहिए। इन सब स्थानो के स्वामी ग्रहो मे जो सबसे बलवान् हो वह 'मारक' ग्रह होता है। सब का बल समान हो तो पहले कहा हुआ मारक ही मारक होता है। षष्ठेश प्राय अधिकतर मारक होता है।। पहले कहे हुए भावो मे बलवान् हो तो षष्ठेश मुख्य मारक है। मारक ग्रह स्थित राशि या मारक ग्रह की राशि इन दोनो राशि की दशा मे मरण कहना।। या विशोत्तरी दशा के अनुसार मारक की दशा मे मरण कहना।। इस प्रकार पापी ग्रह की दशा मे निःसन्देह मृत्यु जानना।। हे मैत्रेय! बहुत से मारक यदि बलवान् हो तो उन २ की दशा अथवा अन्तर मे रोग कष्ट आदि होना सम्भव है।। किन्तु षष्ठेश की दशा मे निश्चय मरण होता है। इस प्रकार न्यूनाधिक भेद से अनेक ग्रह मारक है।। बलहीन ग्रह स्थित राशि के स्वामी की दशा साधारण कष्ट देनेवाली होती है। बलवान् ग्रह की दशा मे महान् रोग दुःख या मृत्यु के समान कष्ट चिन्ता, भय, चोरी, अग्नि आदि से भय होना है।।३७।। हे मैत्रेय! मारक ग्रह की महादशा मे बलवती होने मे अष्टमभाव स्थित ग्रह की अन्तर्दशा मे मृत्यु होती है यह (महादेवजी) ने कहा है, (यह गोप्य तत्व) तुम्हारे सामने कहते है।।३८।। मारक ग्रह की आश्रयीभूत जो राशि है (अर्थात् जिस भाव मे मारक ग्रह स्थित है वही राशि उसकी आश्रयीभूत है) उसकी महादशा मे किस अन्तर्दशा मे मृत्यु होगी यह विचार करे। (यही बात अब आगे कहते है) आत्मकारक से लग्न से और सप्तम मे जो द्वितीयभाव है (उस राशि की अन्तर्दशा मे या तदीश की अन्तर्दशा मे मृत्यु होती है) ।।३९।। षष्ठ अष्टम द्वादश भावो मे अपहर=हरण-मारण मे बलवान् अष्टम भावराशि की अन्तर्दशा या भावेश की अन्तर्दशा मे निधन होता है। उन (अर्थात् कथित भावो के स्वामी ही उन अन्तर्दशा के स्वामी है कि -जिस अन्तर्दशा मे निधन हो) अन्तर्दशा के स्वामी (जो अभी कहे गये है) है इनमे जो ग्रह बल मे अधिक बलवान् है।।४०।।

तदीयान्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम् ॥ अपरा पापकाले तु रोगदुःखादिकान्दिश ।।४१।। बलिगुरुस्य च शनेर्ग्राह्य षष्ठाष्टमादिकम् ॥ द्वितीयद्यूननाथेन ज्ञेय चैवोत्तरोत्तरम् ।।४२।। लग्नसप्तमयोर्मध्ये बलवांस्तद्द्विगीयते ॥ षष्ठाष्टमेशौ द्वौ मुख्यौ व्ययेशायुपलक्षणम् ।।४३।। द्वाभ्या मध्ये ह्यभिप्राय अष्टमेशो हि मारक ॥ षष्ठस्थे पापबाहुल्ये षष्ठेशो मुख्यमारक ।।४४।। मध्यायुषि समायोगे चिंतयेद्द्विजसत्तम ॥ षष्ठेशाश्रयराशीशदशाया निधन भवेत् ।।४५।। षष्ठात्षष्ठेतराशापि त्रिकोणगोपि मारक ॥ दीर्घायुषोहि योगेन चिंतनीय द्विजोत्तम ।।४६।। षष्ठस्य वा तदीशस्य त्रिकोणे संस्थितो ग्रह ॥ तस्याश्रितस्वामिराशेर्दशाया निधन ध्रुवम् ।।४७।। षष्ठे बलवति विप्र तत्त्रिकोणे विचिंतयेत् ॥ तदीशे वा त्रिकोणेषु प्रायेणापि मृति वदेत् ।।४८।। राहुराशिस्तमोवेशाद्बलवान्मारक स्मृत ॥ लग्नरध्रद्वय मध्ये नाथपरेभून-मस्ति चेत् ।।४९।। स राशिर्मारको ज्ञेयो ग्रहरीत्या विचिंतयेत् ॥ तत्तद्राशिदशाया तु तदीशाश्रयराशि च ।।५०।। दशाया निधन वाच्य पुरा शुभमनोदितम् ॥ अपरे तु चरेन्द्यादि

पूर्ववत्सामान्य च ॥५१॥ यो राशि स तु विज्ञेयो मारकश्चेति सम्मत ॥ तद्दशाया च निधन निर्विशक द्विजोत्तम ॥५२॥ अत्राध्याये च सर्वेषु ये योगा गदिता मया ॥ तेषां सर्वं समालोच्य जातस्य च मृतिं वदेत् ॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडे मारकभेदकथन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

उसकी अन्तर्दशा मे निश्चय मृत्यु होती है। हे मैत्रेय! दूसरी जो पापी ग्रहो की अन्तर्दशाए है वे रोग, दु ख, कष्ट देनेवाली है॥४१॥ बलवान् शुक्र और शनि के (मारकत्व मे हेतु) षष्ठ, अष्टम आदि भाव–(स्थितित्व या तदीशत्व ही मारकत्व मे हेतु) ग्रहण करना। और (ये शुक्र तथा शनि) द्वितीयेश तथा सप्तमेश होने से उत्तरोत्तर प्रबल मारक होते है॥४२॥ लग्न और सप्तमभाव मे जो बलवान् हो उससे (मारक का) विधान करना चाहिए। षष्ठेश तथा अष्टमेश भी मुख्य मारक है, और व्ययेश उपलक्षक (६–८ के स्वामी की प्राप्ति के अभाव मे मारक है) है॥४३॥ षष्ठेश और अष्टमेश इन दोनो मे अष्टमेश मारक है इसमे अभिप्राय यह है कि षष्ठभाव मे पापग्रह अधिक हो तो षष्ठेश ही मुख्य मारक है॥४४॥ मध्यायु योग हो तो हे द्विजोत्तम! षष्ठभावस्थित राशि के स्वामी की दशा मे निधन होता है॥४५॥ (अर्थात् मारकेश दशा दूर हो तो षष्ठाश्रयराशीश दशा मे मृत्यु कहना) षष्ठभाव या षष्ठभाव से त्रिकोण भाव मे स्थित ग्रह भी मारक होता है (यदि दीर्घायु योग हो तो) ॥४६॥ षष्ठभाव या षष्ठेश से त्रिकोण स्थान मे जो ग्रह है। उसकी आश्रित राशि के स्वामी की दशा मे निश्चय मृत्यु होती है॥४७॥ हे विप्र! षष्ठभाव म बलवान् (राक्षस) ग्रह हो तो उससे त्रिकोण भावस्थ की दशा मारक जानना। अथवा त्रिकोणेश की दशा ही मारक कल्पना करना॥४८॥ राहु ग्रहाश्रित राशि (यद्यपि राहु पिण्डरूप ग्रह नही है तथापि) अधकाराच्छन्न होने मे बलवान् मारक है। लग्न और अष्टम इनमे यदि ग्रह न हो तो (अर्थात् आश्रय = आधार = स्थान। और आश्रयी तदाधारस्थित ग्रह) वह राशि ही (चरपर्याय दशा म) मारक होती है, ऐसा ग्रह मारक की रीति से विचार करे। इस प्रकार वह २ पाप राशि की दशा तथा उस राशि के स्वामी की आश्रित राशि की दशा॥५०॥ इन दशाओ मे मृत्यु कहना, यह भगवान् महादेवजी का कथन है। और जो चरे चरास्थिरद्वद्वा इत्यादि से आयु का विचार किया गया है॥५१॥ उसम जो राशि पूर्वनिर्देशानुसार मारक कही गई है उसकी दशा मे नि सन्देह मारक कहना॥५२॥ इस अध्याय मे हमने जो मारक योग कहे है। उन सबके लक्षण का विचार करके जातक की मृत्यु का निर्णय करना चाहिए॥५३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे मारकभेदकथन नाम ऊनविंशोऽध्याय ॥१९॥

अथायुर्दायाध्यायप्रारम्भ.

मैत्रेय उवाच–कर्मवेत्ता महाभाग आयुर्दायहने गति ॥ निर्विशक ममाग्रे च कथयस्व कृपानिधे ॥१॥

पराशर उवाच–अधुना सप्रवक्ष्यामि आयुर्दाया गतिं तव ॥ यस्या विज्ञानमात्रेण बालतो

भवति ध्रुवम् ॥२॥ लग्नेशाष्टमनाथाभ्यामायुर्दायं विचिन्तयेत् ॥ दीर्घमध्याल्पयोगत्वं यथावद्वदतो मम ॥३॥ चरेऽचरे स्थिते द्वौ च लग्नरन्ध्राधिपौ यदि ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशङ्क द्विजोत्तम ॥४॥ स्थिरर्क्षे लग्ननाथो हि लयेशे द्वन्द्वभे स्थिते ॥ तदायु पूर्णयोगस्य स भवेद्गणिताग्रणी ॥५॥ तन्वधीशे स्थिते द्वन्द्वे स्थिरे स्थिते लयाधिपे ॥ पूर्णायुर्योगो विज्ञेयो निर्विशङ्क द्विजोत्तम ॥६॥ अथात सम्प्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगमुत्तमम् ॥ चरे लग्नाधिपे विप्र स्थिरे रन्ध्रपतिर्यदि ॥७॥ तदा मध्यायुष विद्याद् द्वौ द्वन्द्वे मध्यमायुष ॥ अधुनाल्पायुर्योग च भवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८॥ अगाधीशश्चरे यस्य द्वन्द्वभे रन्ध्रनायके ॥ तस्याल्पायुर्महाप्राज्ञ निर्विशङ्क द्विजोत्तम॥९॥स्थिरेऽस्थिरे स्थिते द्वौ च लग्नरन्ध्राधिपौ द्विज ॥ स्वल्पायुस्तत्र विज्ञेय सृष्टिकर्त्ता प्रणोदितम् ॥१०॥ पूर्ववत्तनुचन्द्राभ्यामायुर्योग विचिन्तयेत् ॥ जन्मेन्दौवास्थिते द्यूनेवान्यस्थे मन्दचन्द्रयो ॥११॥ त्रिधा योग सम प्रोक्तश्चिन्तयेद् गणिताग्रणी ॥ एकरूपास्त्रयो योगा आयुषि सुविचिन्तयेत् ॥१२॥ एकरूपत्वयोगौ द्वौ तृतीयो भिन्नरूपक ॥ द्वयोर्योगेन सग्राह्य न ग्राह्य चैक रूपत ॥१३॥

आयुर्दायाध्याय

मैत्रेय बोले–हे कृपासागर महाभाग! आप कर्मवेत्ता है, अब मुझको आयुर्दाय का गहन विचार शकारहित रूप से कहिये॥१॥ श्रीपाराशरजी ने कहा–अब हम तुमको आयु के विषय का विज्ञान कहते है, जिसके ज्ञान से मनुष्य काल की गति का ज्ञाता होता है॥२॥ लग्नेश और अष्टमेश से प्रथम दीर्घ, मध्य, अल्प रूप से आयु का योग जानना चाहिए॥ लग्नेश और अष्टमेश दोनो चरराशि मे हो तो निश्चितरूप से पूर्णायु जानना॥ लग्नेश स्थिर मे हो और अष्टमेश द्विस्वभाव मे हो तो गणितज्ञ को पूर्णायु योग जानना चाहिए॥ लग्नेश द्विस्वभाव राशि मे हो और अष्टमेश स्थिर राशि मे हो तो दीर्घायु योग जानना॥ अब हम मध्यायु योग कहते है। चरराशि मे लग्नेश हो और स्थिर मे अष्टमेश हो तो मध्यायु होती है। लग्नेश, अष्टमेश दोनो द्विस्वभाव मे हो तो मध्यमायु होती है। अब अल्पायु योग कहते है। लग्नेश चरराशि मे, अष्टमेश द्विस्वभाव मे हो तो अल्पायु होती है॥९॥ दोनो ही स्थिर राशि मे हो तो अल्पायु होती है, यह ब्रह्मा का कथन है॥१०॥ इसी प्रकार लग्न और चन्द्रमा से भी आयुयोग का विचार करना चाहिए॥ लग्न और सप्तम मे चन्द्रमा हो तो लग्न, चन्द्र से अन्यथा शनि, चन्द्र से आयु का विचार करना चाहिए॥११॥ यह तीन प्रकार (दीर्घ मध्य, अल्परूप से) उपर्युक्त (लग्नेश, अष्टमेश और लग्न, चन्द्र या शनि चन्द्र से) आयु के विषय मे गणितज्ञ को विचार करना चाहिए॥ दो प्रकार से एकरूप आयु हो और तीसरे प्रकार से भिन्नरूप से हो तो दो प्रकार से प्राप्त आयु का ग्रहण करे और भिन्न प्रकार से प्राप्त आयु का परित्याग करे॥१३॥

योगत्रय त्रय रूप भिन्न भिन्न भवेद्द्विज ॥ होरालग्नविलग्नाभ्या प्राप्तायुर्योगनिश्चितम् ॥१४॥ लग्नेशादष्टमेशाच्च योगैक कथितो द्विज ॥ होरालग्नाभ्या द्वितीय योगमेव विचिन्तयेत् ॥१५॥ तृतीय शनिचन्द्राभ्या चिन्तनीय सदा द्विज ॥ लग्नेन्दुभवने यापि चिन्तयेल्लग्नचन्द्रत ॥१६॥ यन्त्रोद्धारमह वक्ष्ये शृणु त्व त द्विजोत्तम।चतूरेखा लिखेत्तिर्यक् चतुरूर्ध्व लिखेत्पुन॥१७॥नव कोष्ठे त्रयो योगा दीर्घमध्याल्पमायुषि ॥ आद्यत्रये चर लेख्य तदधस्थे क्रमेण च॥१८॥ चर स्थिर द्वि

स्वभावं संलिखेद्द्विजसत्तम ॥ मध्ये स्थिरत्रयं कोष्ठे तदधो द्विस्वभावतः ॥१९॥ द्वंद्वं चरं स्थिरं लेख्यं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥ अंतत्रये द्विःस्वभावं तदधः स्थिरमादिशेत् ॥२०॥ स्थिरं द्वंद्वं चरं विप्र क्रमेण संलिखेत्सुधीः ॥ तिर्यक्कोष्ठानुसारेण दीर्घमध्याल्पमायुपि ॥२१॥ एवं पंक्तित्रये विप्र आदौ पंक्तित्रयेण च ॥ धराधः स्थिरपंक्तिश्च स्थिरपंक्तिरयोभयम् ॥२२॥ चतुरस्रं लिखेद्यंत्रं नवकोष्ठान्तरे द्विज ॥ प्रथमांकेन संलेख्यमूर्ध्वकोष्ठत्रयात्मके ॥२३॥ तिर्यक्पंक्तौ च द्वित्रीणी तिर्यक्पंक्तित्रयेष्वपि ॥ तदधोप्यूर्ध्वपंक्तौ च लिखेदेक त्रयं द्वयम् ॥२४॥ मध्यपंक्त्यूर्ध्वं संलेख्यं द्वय चैकं त्रयं पुनः ॥ अंतपंक्त्यूर्ध्वके लेख्यं त्रयं द्वैकं द्विजोत्तम ॥२५॥ एवं क्रमेण वै विप्र प्रतिकोष्ठत्रिपंक्तिषु ॥ दीर्घमध्याल्पआयुष्याद्विज्ञेयानि भवति हि ॥२६॥ अधरोत्तरक्रमेणैव वामभागत्रिकोष्ठके ॥ दीर्घायुश्च विजानीयान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२७॥ मध्यकोष्ठत्रयंमध्यं दक्षिणकोष्ठत्रयेल्पकम् ॥ सप्तविंशतिका भेदा भाषिता द्विजसप्तम ॥२८॥ लग्नाष्टमेशयोर्विप्र दीर्घायौ च त्रयं त्रयम् ॥ नवकोष्ठं विजानीयादायुः साधनहेतवे ॥२९॥ तदैव सविजानीयात्को ष्ठांकलग्नचंद्रयोः ॥ नव कोष्ठा महाप्राज्ञ विज्ञेया लग्नहोरयोः ॥३०॥ एवं चरादिराशीनां भेदेनापि पृथक्पृथक् ॥ नानाभेदादिसयुक्ते तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥३१॥

यदि तीनो प्रकार से प्राप्त हुई आयु का मिश्र २ रूप हो तो होरा और लग्न से प्राप्त आयु का ग्रहण करें॥१४॥ लग्नेश, अष्टमेश से प्रथम आयु देखे। यह प्रथम योग है। होरा तथा लग्न से देखना द्वितीय योग है॥१५॥ शनि और चन्द्र से देखना तृतीय योग है। चन्द्रमा लग्न सप्तम मे होतो लग्न चन्द्रमासे देखना भी तृतीय योग है ॥ अब हम इसका चक्र (सरलता से समझने के लिए) कहते हैं। चार तिरछी रेखा और चार खडी रेखा (आपस मे मिलाकर) लिखे, तो ९ कोष्ट (३–३ कोष्टक के) होते है। पहिले तीनो मे चर नाम लिखे और उसके नीचे क्रमश चर, स्थिर, द्विस्वभाव लिखे॥ मध्य के तीन कोष्टको मे प्रथम सबमे स्थिर नाम लिखे और उसके नीचे द्विस्वभाव, चर, स्थिर लिखे। अन्त्य के तीन कोष्टको मे प्रथम द्विस्वभाव लिखे, पश्चात् उसके नीचे स्थिर, द्विस्वभाव और चर लिखे इस प्रकार लिखकर तिरछे क्रम से प्रथम पक्ति मे दीर्घ, मध्य, अल्प आयु लिखे॥ हे विप्र! तीनो पक्तियोमे क्रमसे लिखना॥ मध्य पक्ति मे स्थिर पक्ति तीनों हैं॥ (और नीचे की तीनो कोष्टको की पक्ति द्विस्वभाव की है) इस प्रकार से लिखे हुए चक्र मे नौ कोष्टो मे ऊपर के कोठो मे प्रथम १–१ अंक लिखकर पश्चात् तिरछी पक्ति मे १–२–३ अंक लिखे। और खडी पक्ति मे १–३–२ के अंक लिखे उसके नीचे मध्यपक्ति मे २–१–३ लिखे (खडी पक्ति मे) और तिरछी पक्ति मे ३–१–२ लिखे॥ नीचे की पक्ति मे ऊपर ३–३–३ लिखे और नीचे २–३–१ लिखे॥ इस प्रकार प्रति कोष्टत्रिक मे अंक निवेश करना। प्रथम पक्ति मे (ऊपर की पक्ति मे दीर्घ, मध्य, अल्प आयु होगी। ऊपर नीचे के बाईं तरफ के तीनो कोष्टो मे 'दीर्घायु' नाम होगा और इसी तरह मध्य के कोठो मे 'मध्यायु' और अन्त्य कोष्टो मे 'अल्पायु' शब्द होगे। इस प्रकार ९X३=२७ भेद कहे। लग्नेश और अष्टमेश के विचार मे दीर्घ आदि ९ भेदो मे आयु का साधन करे। और आगे भी इसी तरह नौ कोष्टो मे लग्न, चन्द्र से तथा लग्न होरा से आयु निर्णय करे। इस प्रकार चरादि राशियों के अलग अलग भेद से नाना प्रकार के आयु के भेद होते हैं। सो स्पष्टरूप से अब तुम्हारे सामने कहते है॥ १४–३१॥

अथ दीर्घाद्यनेकभेदानामायुश्चक्रम्		
दीर्घायु चर॰ १ लग्नेश चर॰ १ अष्टमेश	मध्यायु॰ चर॰ १ लग्नेश स्थिर॰ २ अष्टमेश	अल्पायु॰ चर॰ १ लग्नेश द्विस्वभाव॰ ३ अष्टमेश
दीर्घायु स्थिर॰ २ लग्नेश द्विस्वभाव ३ अष्टमेश	मध्यायु स्थिर॰ २ लग्नेश चर॰ १ अष्टमेश	अल्पायु स्थिर॰ २ लग्नेश स्थिर २ अष्टमेश
दीर्घायु द्विस्वभाव॰ ३ लग्नेश स्थिर॰ २ अष्टमेश	मध्यायु॰ द्विस्वभाव॰ ३ लग्नेश द्विस्वभाव॰ ३ अष्टमेश	अल्पायु॰ द्विस्वभाव ३ लग्नेश चर॰ १ अष्टमेश

स्पष्टायु चक्र			
दीर्घायु	त्रियोगे १२०	द्वियोगे १०८	एकयोगे ९६
मध्यायु	त्रियोगे ८०	द्वियोगे ७२	एकयोगे ६४
अल्पायु	त्रियोगे ४०	द्वियोगे ३६	एकयोगे ३२
खण्ड	४०	३६	३२

कदाचित्कश्चिद्भवति इत्युक्त द्विजसत्तम ॥ लग्नाष्टमेशयोरेक त्वपर लग्नचन्द्रयो ॥३२॥
बिलग्नहोरयोरन्यदितिपक्षत्रय द्विज ॥ तदेभि प्रेत्य सवादादित्यादियोगसकथाम् ॥३३॥
दीर्घमध्याल्पभेदेषु चरेत्यादि निरूप्यते ॥ द्वात्रिंशच्च चतु षष्टि षण्णवति स्वल्पके ॥३४॥
षट्त्रिंशद्वा द्विसप्ताब्दे अष्टोत्तरशताब्दके ॥ चत्वारिंशत्तथाशीतेर्विंशोत्तरशतात्मके ॥३५॥
योगान्यग्रहमायुष्य वा शेषेषु समानत ॥ समागतेषु आयुर्दास्पष्टीकरणसकथाम् ॥३६॥
पूर्णमादौ हानिरतेऽनुपाते मध्यमो भवेत ॥ राशिद्वयस्य योगार्द्ध वर्षाणा स्पष्टमुच्यते ॥३७॥
एव द्विकाना सचिन्त्य त्रयाणा योगविन्मते ॥ यत्रास्यायुर्यैर्निर्णीत योगजातेन यत्कृतम् ॥३८॥

तत्रायुर्दीर्घसलब्धा सिद्धिर्मध्यावधिर्भवेत् ॥ निर्विशक महाप्राज्ञ स्फुटीपातानुपाततः ॥३९॥ लब्धाब्दमनुपातेन मध्यमध्येपि योजयेत् ॥ दीर्घायुषा विजानीयात्संस्फुटी चपलात्मका ॥४०॥

कभी कोई आयु और कभी कोई आयु होती है, यह हम कह चुके है। (उनमे निर्णय करने के लिए) लग्नेश और अष्टमेश से (१) तथा लग्न और चन्द्रमा से (२) ॥ लग्न और होरा से (३) आयु निर्णय करे। इस प्रकार तीन पक्ष है। इन तीन पक्षो मे से अधिक पक्ष से जो आयु प्राप्त हो सो ग्रहण करना यह हम कह चुके है। दीर्घ, मध्य, अल्प आयु के विषय मे विचार दशा तथा वर्ष परिमाण का है वह अब कहते है। वर्षसख्या के परिमाण भी तीन प्रकार के है, उनमे प्रथम ३२ वर्ष, ६४ वर्ष और ९६ वर्ष क्रमश अल्प, मध्य, दीर्घ के वर्ष परिमाण है। और दूसरा परिमाण ३६, ७२, १०८ वर्ष का है। तीसरा परिमाण ४०, ८०, १२० वर्ष का है॥ अन्य योगो से प्राप्त आयु प्राय इनके समान है। योग से आयु का दीर्घ, मध्य आदि निर्णय होने पर ठीक स्पष्ट करने का विचार होता है॥ पहले नियम से पूर्ण आयु प्राप्त हो और तीसरे से अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात से मध्यायु होती है॥ आई हुई २ आयु के वर्ष जोडकर उनका आधा करने से स्पष्ट वर्ष सख्या होती है। इस प्रकार इन तीन आयु के निर्णय मे जो प्रधानत दो आयु प्राप्त हो उनको जोड कर आधा करने से स्पष्ट होती है। पूर्वोक्त नियमो से जो आयु निर्णीत हुई और योग समूह से जो स्पष्ट हुई उसमे यदि दीर्घायु है तो उसका आरम्भ मध्यायु की अवधि से होता है। और इसके बीच मे अनुपात से स्पष्ट करना चाहिए॥३९॥ अनुपातसे प्राप्त हुई वर्ष सख्या मध्यायु के भी मध्यमे जानना। और दीर्घायु की अवधि पर्यन्त जो स्पष्ट प्राप्त हो सो गणित से पल पर्यन्त आयु जानी जा सकती है॥३२–४०॥

मध्यमायुर्लभेत्तत्र अल्पायु सिद्धिसभवम् ॥ पूर्ववदनुपातेन यत्र युङ्मध्यमायुषि ॥४१॥ कदाचित्सर्वयोगेन अल्पायु सममागते ॥ यत्र भावानुपातस्य तत्रैक खड सिद्धयति ॥४२॥ खडत्रयप्रयोगेण आयुर्दा कथिता मया॥ द्वात्रिंशत्षष्ठषित्राब्दा चत्वारिंशत्समं द्विज ॥४३॥ किं ग्राह्य कियती ग्राह्य कदाचिद् ग्राह्यमाणक ॥ इति सशयनिवृत्यर्थ कथयामि पृथक् पृथक् ॥४४॥ लग्नेशाष्टमनाथाभ्या तदायुर्योगसभवः ॥ चत्वारिंशात्मक खण्ड मग्राह्य द्विजसत्तम ॥४५॥ योगत्रयेषु चागत्य अल्पायुर्द्विजसत्तम ॥ द्वात्रिंशाब्दकखण्ड च सत्रैव ब्रह्मणोदितम् ॥४६॥ कदाचिदनुपातेन युक्ते सिद्धिः प्रजायते ॥ दत्ताब्देन तु सदेहो रुद्रशूल विचिंतयेत् ॥४७॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि ह्यनुपातविधि द्विज ॥ पृथक् स्पष्ट च तस्याप्य विलग्नेशाष्टमेशयोः ॥४८॥ गतराशौस्त्यजेद्विप्र विद्यमानेन सगुणेत् ॥ त्रैराशिकैकखडस्य यदाप्त वर्षमादिशेत् ॥४९॥ लग्नेशस्याष्टमेशस्य आयुरागतयोर्द्विज ॥ वर्षादिपिडयोर्योग तदर्ध स्पष्टकारितम् ॥५०॥ दीर्घमायुर्लभेद्विप्र द्विसप्ताब्देषु योजयेत् ॥ तदा चाशीतिमे योज्य दीर्घसज्ञा स्फुटा भवेत् ॥५१॥ मध्यमायुषि यत्रैव षट्त्रिंशद्भवेदयो. ॥ अनुपातेन चागत्य युक्तेब्दे मध्यमायुषि ॥५२॥ त्रैराशिकमह वक्ष्ये तवाग्रे द्विजसत्तम ॥ प्रमाणमिच्छातुल्य च स्थाप्यमाद्यतयोर्द्वयोः ॥५३॥ मध्ये फलेन्यजाती च सगुणेदिच्छया द्विज ॥ प्रमाणासस्फुटफल तस्याख्यमनुपातकम् ॥५४॥

॥६४॥ आयुर्दायसमाप्तौ कक्षात्रयमिहोच्यते ॥ दीर्घमध्याल्पस्य चैतत्प्रमाणं वदाम्यहम् ॥६५॥ षट्त्रिंशेऽब्देन वर्षे का तस्या हानिः प्रजायते ॥ मध्यमायुर्भवेत्तत्र निर्विशंक द्विजोत्तम ॥६६॥ मध्यमायुः समागत्य स्वल्पायुर्जायते ध्रुवम् ॥ योगेऽल्पायुः समायाते शनिर्योगं करोत्यपि ॥६७॥ षट्त्रिंशाब्दश्च रूपेण कक्षाह्रासो भवेद्‌द्विज ॥ अत्यल्पायुर्विजानीयाद्बाल्ये च निधनं भवेत् ॥६८॥ अथ योगत्रये विप्र शनिर्योगं करोति च ॥ एकएकादशाह्रास कक्षाह्रासस्त्वयं क्रमात् ॥६९॥ ततः फलविशेषार्थं गुणदोषौ वदाम्यहम् ॥ गुणैः प्रपूरितः सौरिः कक्षावृद्धिं करोति च ॥७०॥ दोषयुक्तो भवेद्धानिस्ताभ्यां निर्णय उच्यते ॥ स्वर्क्षतुंगादिगुणिभिर्युक्तो मार्तंडवंशजः ॥७१॥ कक्षावृद्धिकरो विप्र त्रिभागेनायुवृद्धिकृत् ॥ अत्यल्पायुर्भवेदल्पमल्पान्मध्यं प्रजायते ॥७२॥ मध्यमाज्जायते दीर्घं कक्षावृद्धेश्च लक्षणम् ॥ एवं नीचारिगः सौरिः पापदृष्टिसमन्वितः ॥७३॥ कक्षाह्रासकृते विप्र त्रिभागेनायुहानिकृत् ॥ वृद्धाद्भवति मध्यायुर्मध्यादल्पायुरेव च ॥७४॥ अल्पादत्यल्पकं याति बाल्ये निधनसंभवः ॥ लग्नेशे वापि होरेशे केवले शनिसंयुते ॥७५॥

अनुपात दीर्घायु और मध्यायु म नियुक्त करना चाहिए। जबकि अल्पायु प्राप्त हो तो अनुपात व्यर्थ है। इस प्रकार म जन्म स लेकर आयु का विचार करना चाहिए॥ इसी प्रकार लग्न होरा से और लग्न चन्द्रमा स विचार करना चाहिए। तीन प्रकार स आई हुई आयु के खण्डो को जोडकर ३ का भाग देने स स्पष्ट आयु जानना। होरा लग्न से आई हुई खण्ड सख्या आदि की हो और अन्य प्रकार से आई हुई खण्ड सख्या अन्तिम हो तो इसी प्रकार स्पष्टीकरण होगा। ऐसे ही दीर्घायु मध्यायु तथा अल्पायु मे स्पष्टीकरण करना चाहिए॥ होरा और लग्न का स्पष्ट राशि अंश कला विकला पर्यन्त स्पष्ट करके पहले कही हुई रीति के अनुसार त्रैराशिक के गणित के वर्षादि आयु स्पष्ट करना चाहिए। आई हुई आयु के अन्तिम खण्ड पर्यन्त इन वर्षो की सख्या हो सकती है। और इस प्रकार आयु का निर्णय होता है। होरा लग्न प्राय २॥ घटी का होता है। उसका सूर्य राशि से स्पष्ट करके और पूर्व रीति के अनुसार आयु निकालना होरा–लग्न का स्पष्ट करना हम पूर्व के अध्याया मे कह चुके है। अब हम तुमको आयु सिद्ध करन के लिये आयु मे कक्षा ह्रास और वृद्धि जो कि शनि के योग से होती है वह कहते है। (अर्थात शनि के योग से आयु मे वर्षो की कमी व अधिकता होना कहा जाता है।) लग्नेश अथवा होरेश शनि युक्त हो तो कक्षा ह्रास (आयु म कमी) होती है। किन्तु जहा शनि निर्बल हो वहा कक्षा ह्रास कहना चाहिए। दीर्घ मध्य व अल्प आयु का जो प्रमाण आया है उसम विचार करना चाहिए। जहा मध्यायु आई है वहा यदि कक्षा ह्रास हो तो ३६ वर्ष की अल्पायु जानना। इस प्रकार मध्यायु कक्षा ह्रास से स्वल्पायु हो जाती है। योग से यदि अल्पायु आई है और शनि योग करता है तो ३६ वर्ष की अल्पायु मे कक्षा ह्रास होकर अत्यल्प आयु जानना और बाल्यावस्था में ही निधन कहना। मैत्रेय! यदि तीनो योगो म शनि, योग करता हो तो प्रत्येक दशा म कक्षा का ह्रास करता है। इसलिये अब विशेष फल जानने के लिये आयु विचार के लिए शनि के गुण और दोष दोनो बताते है। गुणो से युक्त शनैश्चर कक्षा मे वृद्धि करता है। दोष युक्त शनि कक्षा मे हानि करता है। इस हानि वृद्धि का निर्णय कहते है। शनि अपनी राशि या उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि करता है। अर्थात् अल्पायु से मध्यायु मध्यायु से दीर्घायु करता है॥ शनि दोषयुक्त हो तो

कक्षाह्रास करता है। (अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु) कक्षा वृद्धि मे अत्यल्पायु से अल्पायु तथा अल्पायु से मध्यायु तथा मध्यायु से दीर्घायु होना कक्षा वृद्धि का लक्षण है।। इसी प्रकार नीच राशि का या शत्रु राशि का शनि पापग्रह की दृष्टियुक्त हो तो कक्षा ह्रासकारी है और आयु का तीसरा भाग कम करता है। अर्थात् दीर्घायु से मध्यायु और मध्यायु से अल्पायु तथा अल्पायु से अत्यल्पायु कारक है बाल्यावस्था मे मृत्युकारक होता है।। अष्टमेश अथवा होरेश यदि केवल शनियुक्त हो।।५५–७५।।

पापर्क्षे पापयुक्ते वा पापदृष्टिसमन्विते ॥ कक्षाह्रास न कुर्वीत विना नीचारिगे द्विज ॥७६॥ एव तुगादिरहित कक्षावृद्धि न कारयेत् ॥ शुभर्क्षे शुभसयुक्ते शुभदृष्टौ च तुगगे ॥७७॥ पापयोगेन रहिते कक्षावृद्धिकर शनि ॥ एव नीचादिदोषेण कक्षाह्रास प्रजायते ॥७८॥ साधारण्ये स्थिते युक्ते कष्ट घाततरा भवेत् ॥ अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कक्षावृद्धिद्वितीयकम् ॥७९॥ गुरुणा स्थानसबन्धे भविष्यति द्विजोत्तम ॥ लग्ने वा सप्तमे वापि तुगादिगुणसयुते ॥८०॥ शुभर्क्षे शुभदृग्युक्ते कक्षावृद्धिकरे गुरौ ॥ जीवने सशयो यस्य अल्पायुर्वृद्धिकारकम् ॥८१॥ अल्पायुपि च मध्यायुर्मध्याप्ते दीर्घमायुषि ॥ एव भेदानुभेदेन कथयामि तवाग्रत ॥८२॥ अथायुर्बाधक विप्र दर्शयामि तवाग्रत ॥ दीर्घायुर्योगे सप्राप्ते प्रकारसकलेष्वपि ॥८३॥

पापराशि मे पापदृष्टि या पापयुक्त हो तो कक्षाह्रास नही करता। क्योकि–शनि के नीचराशि या शत्रुराशि मे होने पर ही कक्षा ह्रास होता है।।७६।। इसी प्रकार शनि के उच्चराशि या मित्रक्षेत्री के बिना कक्षावृद्धि भी नही करता।। शनि यदि शुभराशि मे सौम्ययुक्त तथा शुभदृष्टियुक्त अथवा उच्चराशि मे हो और पापग्रह योग रहित हो तो कक्षा वृद्धिकारक है और नीचादि दोष से कक्षा ह्रास कारक होता है।।७८।। साधारणरूप मे शनियुक्त हो तो विशेष कष्टकारक होता है।। अब हम कक्षावृद्धि का दूसरा योग कहते हैं।।७९।। गुरु से स्थान सम्बन्ध होने पर जैसे लग्न मे या सप्तमभाव मे उच्च आदि गुणयुक्त शुभराशि मे शुभ दृष्टियुक्त हो तो कक्षावृद्धिकारक होता है। अर्थात् अत्यल्पायु (जीवन म सशय) हो तो अल्पायु और अल्पायु से मध्यायु और मध्यायु म दीर्घायु होती है। इन योगो ये भेद तथा अनुभेद तुमको कहते है।।८२।। और आयु के बाधक योग भी कहते है। सब प्रकार मे दीर्घायु योग प्राप्त होने पर।।८३।।

कि दशाया च निधनमिति कर्तुमपेक्षया ॥ निर्णय तस्य कुर्वीत तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८४॥ यस्य दीर्घायुष लब्ध्वा पर्यंत मध्यमायुषि ॥ निरपवादता ज्ञेया तदग्रे निधनमुच्यते ॥८५॥ मध्यायुष समायोग लब्ध्वा पूर्वप्रकारत ॥ निर्विंशकाल्पपर्यंत तदग्रे मृतिचिंतनम् ॥८६॥ योगेऽल्पायु समागत्य स्वय खण्डे विचिंतयेत् ॥ किस्विद्दशाया निधन भविष्यति द्विजोत्तम ॥८७॥ दीर्घे त्रिसप्ततिवर्षे तदूर्ध्वं चिंतयेन्मृतिम् ॥ षट्त्रिंशदब्दादूर्ध्वं च चिंतयेन्मध्यमायुषि ॥८८॥ अथ स्पष्ट प्रवक्ष्यामि मलिने द्वारबाह्यपो ॥ नवाशे निधन तस्य त्रिशूलिभाषित पुरा ॥८९॥ द्वारद्वारेशयोर्विप्र मालिन्य तत्रवांशके ॥ जातस्य हि भवेन्मृत्यु सत्यमेव न सशय ॥९०॥ पाकयोगद्वये विप्र चिंतनीय प्रयत्नत ॥ स्वय पाप पापदृष्टे पापखेटसमन्विते ॥ तत्रवांशदशाकाले निधन च भवेद्ध्रुवम् ॥९१॥

अब हम तुमको यह बताते है कि, जातक का मरण किस दशा मे होगा इसका निर्णय करने के लिए कहते है॥८४॥ (प्रथम स्थूलरूप से कहते है) जिस जातक की दीर्घायु प्राप्त हुई है, उसके लिये मध्यायु तक तो बाधारहित जीवन है, उसके बाद ही मृत्यु कहना॥ पूर्वोक्त प्रकारो से जिसका मध्यायु योग प्राप्त है, उसका जीवन अल्पायु की अवधि तक तो है ही, पश्चात् मृत्यु के विषय मे विचार करना चाहिए॥८६॥ योग मे यदि अल्पायु आई हो तो उसके खण्ड मे ही विचार करना चाहिए। किस दशा मे मृत्यु होगी यह विचार करना॥ दीर्घायु हो तो ७२ वर्ष के बाद मृत्यु समझना, और मध्यायु मे ३६ वर्ष के बाद मृत्यु विचारना॥८८॥ अब यह स्पष्ट कहा जाता है कि–द्वारराशि या बाह्य राशी के मलिन पापदृग्योग होने पर उसकी नवाश दशा मे या अन्तर्दशा मे मृत्यु होती है जो कि भगवान् शकर ने पहिले कहा था॥८९॥ हे मैत्रेय! जिस जातक के द्वारराशि या द्वारराशीश की मलिनता हो तो उसके नवाशदशा या अन्तर्दशा मे नि सन्देह मृत्यु होती है॥९०॥ यह विचार पाक – दशा और भोग – अन्तर्दशा दोनो मे करना। जो द्वारराशि या द्वारराशीश स्वय पाप या पापदृष्ट या युक्त हो उसकी नवाशदशा काल मे निश्चय मृत्यु होती है॥९१॥

निर्विशक महाप्राज्ञ तदन्तरगते मृति ॥९२॥ द्वारे च बाह्यराशेर्वा नवाशे निधन भवेत् ॥
पापयोगे नवांशेशास्तदन्तर्गते द्विज ॥९३॥ यदा दशाप्रदो राशि पापसक्त प्रजायते ॥
लग्नाद्यावति यो दूर तावद्दूर विभोगका ॥९४॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि नवाशकपदेन च ॥
प्रतिराशिनवाशेन नवाब्देन दशास्थिरम् ॥९५॥ विशेषरूप मे प्रोक्त नवाब्दाद् द्वारबाह्ययो ॥
राशिसबधिनो ग्राह्याश्चरदशाया विचितयेत् ॥९६॥ भावाना स्पष्टकृत्यैव द्वारबाह्य विचित-
येत् ॥ यद्भावस्पष्टता सग्रहनवाशेषु भो द्विज ॥९७॥ रीत्याब्दे च समानीते मरण भवति
ध्रुवम् ॥ एव तन्भावयो भावा स्पष्टीकार्या यथार्थत ॥९८॥ ग्रहनवाशवैपरीत्याद्द्वावशाना
नवाशके ॥ नवाशायु समानेन विशेष च समादिशेत् ॥९९॥ एव विचिन्तयेद्विप्र द्वारबाह्यद्वयोर
पि ॥ मलिनत्वमथैवेव निधन न तु कथ्यते ॥१००॥

अथवा हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! उसकी अन्तरदशा मे मृत्यु होती है॥९२॥ जिस द्वारराशि या बाह्यराशि के नवाश मे पापग्रहदृष्टि या योग हो तो उसी नवाश दशा मे निधन (मृत्यु) होता है॥९३॥ स्वय पाप या पापदृग्योग युक्त राशि दशाप्रदरूप मे (चर पर्यायदशा मे) भोगरूप से आरभ होती है तो वह लग्न से जितनी सख्या पर हो उतनी सख्या पर का भोग–अन्तरदशा मारक होगी अर्थात् द्वारराशि के द्वारनवाश से या सभव हो तो लग्न से उतनी सख्या परे की राशि दशा या नवाश दशा मे मृत्यु होती है ॥९४॥ अब नवाश राशि के आब्द (राशि) से यह विचार कहते है। हर एक राशि की दशा ९–९ वर्ष की होती है और उसमे अन्तर एक अश के १–१ वर्ष जानना। यह 'नवाशस्थिरदशा' कहाती है॥ जो कि, आगे दशाप्रकरण मे कही जायगी॥९५॥ और द्वार तथा बाह्य राशि के राशिसम्बन्धी विशेषरूप चरदशा या चरपर्यायदशा मे विचार करना॥ द्वादशभावो को स्पष्ट करके द्वार तथा बाह्य राशि का विचार करना। जिस भाव या नवाश मे द्वार राशि हो और जिस भाव मे या नवाश मे बाह्यराशि हो उसको देखकर पूर्वोक्त ग्रहयोगानुसार जिस राशि म मरणयोग प्राप्त हो उसमे

वृद्धानंतर्यदा मृत्युस्तस्य विश्वात्मकोऽच्युतः ॥ सर्वात्मना मृत्युयोगः शुभदृग्योगसंभवः ॥११३॥ लयेशे तुंगराशिस्थे इत्याकांक्षा द्विजोत्तम ॥ तस्या विनिर्णयं कर्तुं स्पष्टमुक्तेन भाषितम् ॥११४॥ यस्य वृद्धिकरे विप्र पदेशस्य दशांतरे ॥ निधनं च भवेत्तस्य निर्विशंकं वदाम्यहम् ॥११५॥ पदेशस्य नवांशे वा लग्नाष्टमत्रिकोणगे ॥ दशायां निधनं तस्य यस्य वृद्धिपदं भवेत् ॥११६॥ यदि वृद्धाब्दमादाय निधन न भवेत्कदा ॥ दशात्रयाणामंते तु मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥११७॥ पदेशस्य दशा तत्र लग्नारूढे पदस्य च ॥ रंध्रारूढे तदा ग्राह्य तदीयस्य यदा द्विज ॥११८॥ तदाश्रये राशिदशा ग्राह्यमाणा द्विजोत्तम ॥ अत्र केवलखेटानां दशायां चिंतयेत्सुधीः ॥११९॥ यद्वा पदेशस्य दशा निसर्गबललक्षणा ॥ विशोत्तरी दशा रीत्या दशा चाष्टोत्तरी मता ॥१२०॥

द्वारराशि की दशा, द्वारनवांश की दशा एवं बाह्यराशि की दशा को लाघ कर बाह्य राशिदशा से भी आगे ९ वर्ष तक और आयुवृद्धि होती है॥१११॥ द्वारबालराशिदशा से आगे दूसरी राशि की दशा मे भी पापसम्बन्ध होने पर भी आयु की निश्चय वृद्धि होती है॥११२॥ आयुवृद्धि के पश्चात् शुभदृष्टि तथा योग से कष्टरहित अवस्था मे मृत्यु होती है॥ अष्टमेश यदि उच्चराशि मे हो तो क्या होना चाहिये, इस आकांक्षा के विषय पहिले कहे जा चुके है, उसी से समझना चाहिये॥ जिस जातक के आयुवृद्धि का योग हो, उसकी आरूढ लग्न के स्वामी की दशा या अन्तर मे मृत्यु निश्चितरूपसे जाने। अथवा जिस जातक के वृद्धियोग हो उसकी मृत्यु आरूढ लग्नाधीश के नवांश मे या लग्न से अष्टमेश की त्रिकोण राशि के स्वामी की दशा मे मृत्यु होती है॥ यदि कदाचित् बढे हुए ९ वर्ष के बाद भी मृत्यु न हो तो, आरूढेश, उपपदेश और अष्टमभावारूढ इन तीनो का ग्रहण करना॥११७॥ (अर्थात् आयुवृद्धि योग बलवान् हो तो द्वारराशिदशा तथा बाह्यराशिदशा, अष्टमेश दशा, इनके बाद आनेवाली दशाओ मे मृत्यु हो और समय निर्देश के लिये आरूढेश की दशा, या उपपदेश की दशा या अन्तरदशा का निर्देश करना) यही बाते कहते है कि–लग्न से आरूढ स्थान के स्वामी की या उपपद राशि की स्वामी की या अष्टमभाव के आरूढ के स्वामी की दशा मारक निर्देश मे ग्रहण करना चाहिये॥११८॥ आयुवृद्धि योग मे ग्रहण की हुई राशि के (बाध्य होने पर) केवल ग्रहो की दशा का उपयोग करना॥११९॥ अथवा केवल आरूढ लग्नाधीश की दशा मे मारक निश्चय करे। यह दशा ग्रहण करने मे यद्यपि अनेक दशा है किन्तु विंशोत्तरी दशा अथवा अष्टोतरी दशा ग्रहण करना चाहिये॥१२०॥

तदा पददशाया च निधन गणिताग्रणी. ॥ अत्रपद तदीशस्य पदशीच तयोर्दशा ॥१२१॥
नाथातेन समारीत्या 'राशिखेटद्वयोर्दशा । निवर्तिता दशा विप्र तदंतेषु विचिंतयेत् ॥१२२॥
चरपर्यादशारीत्या पदेशस्य दशातरे ॥ अवश्य निधन तस्य निर्विशक द्विजोत्तम ॥१२३॥
तथापदेशस्य च तत्त्रिकोण धाय योद्विज ॥ नवांशकदशारीत्या समानीय दशातरे ॥१२४॥
पुनः पदत्रिकोणाभ्यामनतरगते द्विज ॥ दशाया निधन वाच्य जातकस्य न संशयः ॥१२५॥
नवांशकदशा प्रोक्ता द्विधा ग्राह्या द्विजोत्तम ॥ ताभ्यां लग्नाष्टमाधीशा अथ वा राशिकोणपा

॥ १२६॥ दशायां निधनं वाच्यं त्रिशूलिभाषितं पुरा ॥ इत्येवा निधनं योगादवश्यं चिंतयेद्द्विज ॥१२७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे आयुर्दायकथनं नाम विंशोऽध्याय ॥२०॥

गणितज्ञ को चाहिये कि—आरूढ की दशा मे या आरूढ राशि के स्वामी के 'अष्टापद' त्रिकोणेश की दशा मे अथवा 'पदशौच' अष्टमेश (पद=आरूढ का शौच=शुद्धि=शोधन का स्थान=अष्टमभाव) की दशा मे निधन कहना॥१२१॥ 'नाथान्तेन समा ज्ञेया०' आदि रीति से जो चरदशा कही जायेगी, उस रीति से दशास्पष्ट करके बाद उसमे मरण का विचार करे॥ चरपर्यायदशा की रीति से स्पष्ट की हुई दशा मे आरूढेश की अन्तरदशा मे निश्चय मरण कहना ॥१२३॥ अथवा नवांशदशा स्पष्ट करके आरूढ की दशा या उससे त्रिकोण ५।९ की दशा या अंतर मे अथवा आरूढ के त्रिकोण की दशा मे हो निःसंशय मरण कहना ॥ नवांश दशा दोनो रीति से (कही जायेगी) ग्रहण करना। उन दशाओ लग्नेश और अष्टमेश से या त्रिकोणाधीश की दशा मे निधन (मृत्यु) कहना, ऐसा भगवान् शंकर का कहना है। इन मारको का हे मैत्रेय! अवश्य विचार करना चाहिये ॥ श्लोक १ से १२७ ॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे भावप्रकाशिकाया आयुर्दायकथन नाम विंशोऽध्याय ॥२०॥

पराशर उवाच—अथातः संप्रवक्ष्यामि प्रकारं वै द्वितीयकम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण आयुर्दायसूचको भवेत् ॥१॥ विलग्नारमदशा विप्र अष्टमेशात्तयोर्द्वयो ॥ मध्ये चैको बली चिन्त्य सोपि ह्यायु प्रदो ग्रह ॥२॥ केंद्रादित्रिकयोगेन दीर्घमध्याल्पतायुषि॥ सा चिंतेया महाभाग तथापि प्रवदाम्यहम् ॥३॥ केंद्रे स्थितेऽपि दीर्घायुर्मध्यायु पणफरे स्थिते ॥ आपोक्लिमे स्थिते स्वल्पमायुर्भवति निश्चितम् ॥४॥

पराशरजी ने कहा—अब हम दूसरा प्रकार कहते है जिसके ज्ञान से आयु की सूचना होती है॥१॥ हे मैत्रेय! लग्नेश तथा अष्टमेश से आयु का विचार करे इन दोनो मे जो ग्रह बलवान् होता है, वह आयु का देनेवाला है॥ उस ग्रह के केन्द्रादि स्थान मे होने से दीर्घ मध्य, अल्प आयु समझना॥ सो हम स्पष्ट (खुलासा) कहते हैं। उस बली ग्रह के केन्द्र स्थान १।४।७।१०मे होने से 'दीर्घायु' पणफर २।५।८।११ मे होने से 'मध्यायु' और आपोक्लिम ३।६।९।१२ मे होने से 'अल्पायु' होती है॥१-४॥

कर्कलग्ने तु युञ्ज्यात् तदेव चिंतयेद्द्विज ॥ लग्ने वा मदने वापि वाष्टमेशो तयोर्द्वयो ॥५॥ तान्या मध्ये बली चैक स्थित केंद्रादिपूर्ववत् ॥ दीर्घमध्याल्पभेदेन आयुर्निश्चित्य पूर्ववत् ॥६॥ पूर्ववद्द्वादशखंडस्य चैरराशिकक्रमेण च ॥ आयुर्दाये कृते स्पष्ट प्रवक्ष्यामि इदं वच ॥७॥ स्वस्मिन्समबले खेटेऽन्यस्मिन् च बले द्विज ॥ न वीर्यतायां दीर्घादि विपरीतायुषो भवेत् ॥८॥

र्घमध्ये च चाल्पं च ह्रास्यं वा किंचिदेव च ॥ विपरीत योगभंगे सत्यमेव न संशयः ॥९॥
सप्तमात्सप्तमे विप्र नवमे कारके स्थिते ॥ विपरीत च दीर्घादि योगायुर्न तु संशयः ॥१०॥
अथापरेऽनेकभेदानामायुषो निर्णयः कृतः ॥ दीर्घादित्रयरूपेण इत्युक्तं ब्रह्मणोदितम् ॥११॥
लग्नलग्नाष्टमेशौ द्वौ चित्तयेज्जन्मपत्रके ॥ पञ्चमैकादशे विप्र दीर्घायुश्च प्रजायते ॥१२॥ लाभे
तृतीये मध्य आयुर्दाय विचिन्तयेत् ॥ लाभे वित्ते त्रिकोणे वा ह्यायुरल्पं भवेद्द्विज ॥१३॥
गतायुर्लाभगौ द्वौ च जातकोपि न जीवति ॥ एवं समस्तजन्तूनामीदृग्योग
विचिंतयेत् ॥१४॥

कर्क लग्न की कुंडली में भिन्नता है, सो यह है—लग्नेश, सप्तमेश में से जो बलवान् हो वह और अष्टमेश इनमें से जो एक ग्रह बली हो उसके केन्द्र, पणफर, आपोक्लिम स्थानों में होने से क्रमश. दीर्घ, मध्य और अल्प आयु होती है॥ और दीर्घादि आयु प्राप्त होने पर पूर्वके हीन खण्ड को छोडकर प्राप्त खड को ग्रह की वर्तमान राशि से गुणा करके आगामी खण्ड का भाग देने से जो वर्षादि अंक प्राप्त हो, उनको पूर्व त्यक्त खण्ड में योग करने से स्पष्ट आयु के वर्षादि जानना ॥ इस स्पष्ट गणित में इतना विशेष है कि—ग्रह यदि अपनी राशि में समबली हो और दूसरा ग्रह अधिक बली न हो तो ग्रह का बल समान होने के कारण दीर्घ आदि जो आयु प्राप्त हो वही रहेगी, विपरीत (भिन्न) आयु नहीं होगी॥ और यदि लग्नेशाष्टमेश हीन बल हो तो दीर्घादि आयु में कक्षा ह्रास होता है, इसमें सन्देह नहीं है॥९॥ और आत्म कारक सप्तम से सप्तम (लग्न) या नवमभाव में हो तो प्राप्त योगायु विपरीत जाने, इसमें संशय नहीं है॥१०॥ अब आगे आयु के अनेक भेदों का निर्णय किया जाता है। जिसमें दीर्घ, मध्य, अल्परूप से विचार किया गया है॥११॥ लग्नेश और अष्टमेश का विचार करना, यदि ये दोनों पंचम और एकादश भाव में हो तो दीर्घायु होती है॥१२॥ और वही लग्नेशाष्टमेश लाभ (११) स्थान या तृतीय भाव में हों तो मध्यायु जानना। तथा दूसरे या लाभ ११ अथवा त्रिकोण ५।९ में हो तो अल्पायु होती है॥१३॥ और दोनों ग्रह यदि लाभभाव में हों तो जातक गतायु (आयुहीन) होता है और वह बालक अधिक दिन नहीं जी सकता है। इस प्रकार से सबके लिए आयु योग का विचार करना चाहिए॥१४॥

अथैव भिन्नमार्गेण आयुर्दायं निरूपितम् ॥ तनुतन्वीशतत्प्राधिपत्युर्भानां त्रिकोणगे ॥१५॥
अल्पमध्यचिरायुष्ये स्ववर्षप्रमाणतः ॥ अष्टमेशादियोगेन निर्णयं कारयेद् ग्रहः ॥१६॥
लग्नेत्रिकोणगेऽल्पायुर्लग्नेशस्य त्रिकोणगे ॥ मध्यमायुर्विजानीयात्त्रिविंशकः द्विजोत्तम ॥१७॥
लग्नेशात्स्वीयराशीशे त्रिकोणे रन्ध्रनायके ॥ दीर्घायुषि प्रदातव्यं पुरा शम्भुप्रणोदितम् ॥१८॥

अब और एक रीति से आयु का निरूपण है। लग्न की राशि, लग्नेश की राशि, लग्नेशस्थित राशि के स्वामी की राशि इन तीन राशियों के त्रिकोण में अष्टमेश के होने से अल्प, मध्य, दीर्घ आयु अपने वर्षों के प्रमाणानुसार जानें। और अष्टमेश आदि (षष्ठेश, द्वादशेश) के योग से प्राप्त आयु वर्ष में ह्रास होता है॥ लग्न से त्रिकोण में अष्टमेश हो तो अल्प आयु और लग्नेश

से त्रिकोण मे अष्टमेश हो तो मध्यायु और लग्नेशराशीश से त्रिकोण मे अष्टमेश हो तो दीर्घायु जानो, ऐसा महादेवजी का वचन है॥१८॥

तेषां मध्ये त्रिकोणानां विभागे च नव कथम् ॥ स्वल्पमध्य चिरायुष्य द्वादशाब्दाधिकेन च ॥१९॥
अल्पायुषस्त्रयो भेदास्त्रयस्थाने पृथक् पृथक् ॥ विलग्नेशाष्टमेशादि लग्नस्थेऽपि द्विजोत्तम ॥२०॥
द्वादशाब्द भवेदायुश्चतुर्विंशतिपञ्चमे ॥ नवमे च षट्त्रिंशाब्दमित्येव न तु संशय ॥२१॥
लग्नेशराशिकोणेषु लग्नर ध्राधिपादि चेत् ॥ तत्र स्थितेऽष्टवेदाब्दे षष्टचाब्द पञ्चमे स्थिते ॥२२॥
नवमस्थे द्विसप्ताब्द लग्नवर्कमिद मतम् ॥ लग्नेशाश्रितराशीशे त्रिकोणेषु स्थिते द्विज ॥२३॥
लग्नेशादष्टमेशादि त्रिभाग दीर्घमायुषि ॥ लग्नस्थे चतुरशीति पञ्चमे षण्नवाशके ॥२४॥
नवमेऽष्टोत्तरशत वर्षोऽस्त्वायुर्विनिर्णय ॥ द्वादशाब्दानुपाते च ह्येतच्छम्भुप्रणोदितम् ॥२५॥ तुला
मेषविलग्नेषु प्राय शुक्रो भवेद्बली ॥ स दशादौ स्वरूप स्यादन्ते च स्यात्स्वभावत ॥२६॥

इन त्रिकोणभावो मे प्रत्येक भाव के फलाफल मे क्या नवीनता है, सो कहते है। अल्पायु मे १२-१२ वर्षों की इसी प्रकार मध्यायु और दीर्घायु मे ग्रहयोग वश मे १२-१२ वर्षों की न्यूनाधिकता होती है, सो दिखाते हैं। अल्पायु के ३ भेद हैं, वे तीन स्थानो मे अलग अलग समझना ॥ लग्नेश और अष्टमेश ये दोनो लग्न मे हों तो १२ या ८ वर्ष की आयु जानना। और पञ्चम मे हो तो २४ वर्ष और नवमभाव मे हो तो ३६ वर्ष की आयु जानना॥२१॥ मध्यायु के तीन भेद–लग्नेशराशि से त्रिकोण मे, लग्नेश और रन्ध्रेश हो तो ४८ वर्ष और पञ्चमभाव मे हो तो ६० वर्ष और नवमभाव मे हो तो ७२ वर्ष की आयु होती है॥ इसी प्रकार दीर्घायु मे लग्नेशस्थितराशीश यदि लग्न मे हो तो ८४ वर्ष और पञ्चमभाव मे हो तो ९६ ये वर्ष, और नवमभाव मे हो तो १०८ वर्ष की आयु होती है॥ इस प्रकार १२-१२ वर्ष के अनुपात मे भगवान् शकर ने कहा है॥२५॥ अब आठ श्लोको मे मेष, तुला लग्न के विषय मे कुछ विशेष कथन करते है॥ तुला–मेष लग्नो मे (शुक्र लग्नेश तथा केन्द्रेश होने मे प्राय शुक्र बलवान् होता है। वह शुक्र दशारम्भ अपने मुक्तग्रह रूप मे और दशा के अन्त मे भावरूप मे बलवान् है॥२६॥

पूर्वार्द्धे वस्पष्टदशा मेषस्यापि तुलस्य च ॥ चरमपर्यासमानीते अब्दे चैकाब्दयोजिते ॥२७॥
द्वादशाब्दाधिके कृत्वा पूर्वमायु समागते ॥ नायाताब्दसमूहे च मेलनीय द्विजोत्तम ॥२८॥ तत्र
त्राय विभागश्च तयापि कथितो द्विज ॥ लग्नेशादौ समारम्भे प्रथमाशादिसख्यया ॥२९॥
योजयेद्द्वादशाब्द च ह्यायु साधनहेतवे ॥ अते त्रिशतमासाते सग्रे स्पष्टे सति द्विज ॥३०॥
स्वभावतद्रूपाञ्जून्ये द्वादशाब्द तु योजयेत् ॥ मध्ये तथानुपाते च विधाय च यदागतम् ॥३१॥
तद्योजन तु कर्तव्य निर्विशक स्वभावत ॥ इत्येव नायाताब्दा ये स्वभावता भवति च ॥३२॥
नाधिके चैव नाब्देन युक्तो लग्नस्थितो यदि ॥ भानुनष्टे च शून्याप्ते न युक्त द्वादशात्मक
॥३३॥ एकोऽष्टमेश स्वोच्चस्थे पर्यायार्थ प्रयच्छति ॥ नाशस्थो नाशयेत्पर्यायार्धमायुर्यनि
श्चितम् ॥३४॥ नीचरन्ध्रेशसयुक्ता पर्यायार्द्ध पृथक्पृथक् ॥ यहा विनाशयत्येव निर्णीत
परमायुषि ॥३५॥ उच्चरन्ध्रेशसयुक्ते पर्यै प्रत्येकमुत्क्षयेत् ॥ एव हि मध्यपर्याय
परमायुर्विनिश्चितम् ॥३६॥ रवि कुज शनी राहुर्यस्तो यत्रिन क्षमात् ॥ किंयद्दुर्बल हित्वा

गृह्णीयाद्दलिनं सुधीः ॥३७॥

मेषराशि या तुला राशि की दशा के पूर्वार्द्ध मे (चरपर्यायदशाके मान मे) १ वर्ष योग करना॥ और इसी प्रकार *गणितागत* उत्तरार्द्ध मे *१२ वर्ष योग करना॥* इस प्रकार *नाथान्त* वर्ष सख्या मे १२ वर्ष मिलाना॥ इस रीति से यह विभाग तुम्हारे सामने कहा। लग्नेश राशि की दशा मे प्रथम अश मे १२ वर्ष योग करना और स्पष्ट लग्न की दशा मे ३० वे अश मे १२ वर्ष का योग करना तब मध्य के अश जितने वर्तमान हो उतने अशो पर अनुपात (त्रैराशिक गणितद्वारा, अर्थात् यदि लग्नेशराशि की दशा के आदि मे १२ वर्ष मिलते है और आगे प्रति अश ४ मास २४ दिन कम होते जाते है तो इष्ट अश मे कितने वर्ष मास दिनादि मिलेंगे। और इसी प्रकार लग्न की दशा मे प्रति अश ४।२४ आरभ से बढते जॉयगे। और शून्य अश होगा तो उपर्युक्त शास्त्र से १ वर्ष तो बढेगा ही।) से स्पष्ट करके जितने वर्ष मास दिनादि प्राप्त हो उतने भावराशि की दशा मे युक्त करना (जोडना) इस प्रकार से युक्त करने पर भावराशि का दशावर्ष—परिमाण स्पष्ट होगा (यह विशेष नियम मेष, तुला के विषय मे ही है) और शुक्र यदि अष्टमभाव मे स्थित हो तो न कम होंगे, न अधिक होंगे। और गणितागत वर्ष सख्या योग करने पर यदि १२ से भाग देने पर शून्य प्राप्त हो तो भी १२ वर्ष नही जोडे जाते है॥ (अब अन्य भेद कहते है) केवल एक अष्टमेश उच्चराशि मे हो तो राशि दशा मे दशामान का आधा और बढाता है और उच्चस्थ न हो तो आई हुई आयु मे से आधा कम करता है॥३४॥ तथा अन्य ग्रह भी यदि नीच राशिस्थ अष्टमेश से युक्त हो तो अपनी २ भावराशि दशाओ मे आधा २ भाग घटाते है॥ उच्चराशि स्थित अष्टमेश से युक्त हो तो अपने २ भाव की दशा मे आधा २ भाग बढाते है॥ उपर्युक्त कारण,रहित भाव की समागत निर्णीत आयु एकरूप ही रहती है॥३६॥ सूर्य, मगल, शनि, राहु ये चार ग्रह मृत्यु के विषय मे क्रमश उत्तरोत्तर अधिक बलवान् है। इनमे विशेष दुर्बल ग्रह को छोडकर बाकी ग्रहो को लेना॥३७॥

केतुश्च शनिवन्मृत्युनायनेमित्यमादिशेत् ॥ शनिना राहुणा वापि युक्ते सौम्ये रवीक्षिते ॥ पर्यायमेक तन्मध्यएकराशौ मृति वदेत् ॥३८॥ तयोस्तु शुभयोगेन तद्राशौ मृतिमादिशेत् ॥३९॥ भोगराशौ दुर्बले वा प्रबले वा ग्रहे स्थिते ॥ तथापि निर्दिशेत्काले मरण तत्र सशयः ॥४०॥ केतौ चैषावसानस्ते नाथे वाऽशुभवीक्षिते ॥ केतोर्दशान्ते मृत्युः स्याच्छुभदृष्टेन किं च न ॥४१॥ तन्वधीशाष्टमेशाभ्यां योगेनायुः कृते द्विज ॥ अष्टमेशात्तदुच्चस्थे चर्पर्याब्दप्रमाणके ॥४२॥ अर्धाधिकाब्द दत्त्वैव योजयेत्पूर्वमायुषि ॥ एव नाथान्तरीत्या च चरपर्यातिरिक्तय ॥४३॥ मर्यादयापि यद्यायुरष्टमेशेन दीयते ॥ तत्सर्वमर्धाधिकय च विधेय द्विजसत्तम ॥४४॥ एव रध्रपतिर्विप्र नीचराशिगतोपि च ॥ दीयमानायुरर्द्ध चेन्नाशयेत्तु न सशयः ॥४५॥

और केतु भी शनि के समान ही अष्टमेश का फल देने मे समान है। सौम्यग्रह यदि शनि या राहु से युक्त और सूर्य से दृष्ट हो तो एक ही पर्याय की आयु मे मृत्यु होती है॥३८॥ शनि राहु से शुभग्रह का योग हो तो उसी राशि की दशा मे मृत्यु होती है॥३९॥ दशाप्रदराशि मे दुर्बल या सबल कैसा भी ग्रह हो (किन्तु पूर्वोक्त ग्रहो का योग हो तो) तो भी उस समय (पापयुक्त

दशाकाल मे मरण मे सशय नही है।) केतु की दशा यदि अन्त मे (योग समागत, दीर्घ, मध्य, अल्प आदि आयु मे) और राशिस्वामी अशुभ ग्रह से दृष्ट हो तो केतु की दशा मे ही दशा के अन्तभाग मे मृत्यु होती है। यदि शुभग्रह की दृष्टि हो तो नही होती।।४०।। लग्नेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योगानुसार आयु स्पष्ट होने पर भी अष्टमेश के उच्चस्थ होने पर पूर्व आई हुई आयु मे अर्द्ध भाग देकर ही सिद्ध समझना। यहा इस प्रकरण मे 'नाथान्त' रीति से आई हुई चरपर्या दशा का ही ग्रहण है।।४३।। अष्टमेश अपनी मर्यादा (उच्च राशिस्थिति) से जो अर्द्धभाग आयु का देता है, वह सब समागत आयु मे ही अधिक कर देना चाहिये।।४४।। इसी प्रकार अष्टमेश नीच राशिगत हो तो अन्यग्रहो से दी हुई सयुक्त आयु का अर्द्धभाग निश्चय कम कर देता है।।४५।।

एवं रंध्रपतिर्विप्र नीचखेटेन सयुतः ॥ तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं विनश्यति ।।४६।। एव रंध्रपतिर्विप्र तुगखेटेन संयुतः ॥ तद्ग्रहेण दीयमानमायुरर्द्धं च वर्द्धति ।।४७।। एवमुक्तं च विप्रेन्द्र परमायुर्विनिश्चितम् ॥ लग्नेश्वराष्टमेशाभ्यां योगायुर्दायमागते ।।४८।। तेषु संस्कारमाज्ञेयमिद पूर्वोक्तसफयाम् ॥ लग्नेशाद्वायुरित्येवं तत्तद्योगकलात्मकम् ।।४९।। संयुक्ताश्च ग्रहा उच्चनीचादिगुणदोषतः ॥ वृद्धिह्रासानुक्तरीत्या कार्या वै संप्रदायतः ।।५०।। द्वित्र्यादिमृत्युयोगश्च प्रबलः पूर्वभाषितः ॥ नैसर्गिकोपि वीर्याय तस्य पाके मृतिर्भवेत् ।।५१।। स्वारराहुपगूना चतुःखेटांतरे बली ॥ तस्य योगानुसारेण जातकस्य मृति वदेत् ।।५२।। अष्टमेशेन संयुक्ताःशनी राहुःकुजो रविः ॥ न वीक्ष्यते ग्रहैर्वापि तस्य मृत्युं विनिर्दिशेत्।।५३।। एषां मध्येषु प्रबला सा तत्स्वामिकराशिगे ॥ पाके मृत्यु विजानीयान्निर्विशकं द्विजोत्तम ।।५४।।

अर्थात् नीचग्रह से युक्त अष्टमेश अन्यग्रह से प्राप्त आयु का भी अर्द्धभाग नष्ट कर देता है।।४७।। इसी प्रकार अष्टमेश यदि उच्चग्रह से युक्त हो तो उस ग्रह से दी हुई आयु मे और अर्द्धभाग बढाता है।।४८।। हे विप्रेन्द्र ! निश्चित परमायु लग्नेश और अष्टमेश के गुण दोष से जो सस्कार युक्त होती है उसका निर्णय कहा।। लग्नेश, अष्टमेश से जो आयु स्पष्ट होती है, उसमे ह्रास वृद्धि के नियम कहे गये।।४९।। उच्च नीच आदि गुणदोष से युक्त ग्रह आयु मे वृद्धि तथा ह्रास करते हैं। यह सप्रदायरीति है।।५०।। (लग्नेश तथा अष्टमेश का विचार समाप्त) दो तीन प्रकार के तथा एक एव दो आदि ग्रहो से होनेवाले प्रबल मृत्युयोग अब तक कहे गये इन योगो मे नैसर्गिक बल से युक्त भी योग अपनी दशा मे मृत्यु के लिये पर्याप्त है।।५१।। सूर्य, मगल, शनि, राहु, इन चार ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसके योगानुसार जातक की मृत्यु कहना।।५२।। जिस जातक के जन्म लग्न मे उपर्युक्त ग्रह अष्टमेश से युक्त हो और कोई शुभग्रह नही देखता हो तो उसकी मृत्यु कहना।।५३।। इन ग्रहो मे जो ग्रह बलवान् हो उसकी राशि की दशा मे जातक की मृत्यु नि शक रूप से जानना ।।५४।।

एतेषां चतुःखेटानां मध्ये यैको बलीक्वचित् ॥ तस्य राशिदशाकाले मृतिस्थानं विनिर्दिशेत् ।।५५।। मृत्युस्थानाभिमूतयां सिद्धायां च महादशा ॥ तत्तस्यापि क्रमेणैव तदनन्तर्दशाप्रदा

॥५६॥ राशिषु मारकत्वेन बलवदागमेपि च ॥ शूलाद्यधिष्ठातृगृहदशांतरगते मृतिः ॥५७॥ शुभग्रहेण संबंधे शनिराह्वोस्तयोरपि ॥ तत्तत्स्वामिदशाकाले मरणं च विनिर्दिशेत् ॥५८॥ तदाश्रयाद्राशिपाके मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ निर्विशंकं महाप्राज्ञ पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥५९॥ सुखदुःखादि संब्रूयात्पाकराशौ विचिंतयेत् ॥ भोगांतरागता तत्तु तत्तद्वीर्यानुसारतः ॥६०॥ सबलायां सुखं ब्रूयाद्दुर्बला दुःखदायिका ॥ वैषम्येन फलं वाच्यं तथा मरणमेव च ॥६१॥ द्वादशे दशमे वापि सस्थिते पुच्छनायके ॥ पापदृष्टे दशाप्राप्ते तदंतरगते मृतिः ॥६२॥ द्वादशे दशमे केतुःशुभग्रहनिरीक्षितः ॥ नायं योगो महाप्राज्ञ न कष्टं न तु मृत्युकृत् ॥६३॥

इन चार ग्रहों में से एक भी बलवान् हो तो उसकी दशा में मृत्यु स्थान का निर्देश करना॥ जो महादशा मृत्युस्थान नाम से निर्दिष्ट हो वह भी क्रम से ही अपने अन्तर में मारक होती है॥५६॥ राशिदशा में बलवान् मारक के सम्बन्ध होने पर भी रुद्र, शूल, संज्ञक दशा के अन्तर्दशा में ही मृत्यु होती है॥ शनि, राहु का शुभग्रह से सम्बन्ध होने पर उस ग्रह की राशि के दशाकाल में ही मृत्यु का निर्देश करो॥ उस ग्रह के सम्बन्ध से उसकी राशि की दशा में निश्चित् मृत्यु होती है॥ ऐसा प्रथम भगवान् ने कहा है॥५९॥ राशि के बलाबल के अनुसार राशि की महादशा के अन्तर में सुख, दुःख आदि कहना चाहिये॥ यदि राशि बलवान् हो तो सुख और दुर्बल हो तो दुःख कहना। और अति पापयोग आदि वैषम्य हो तो मृत्यु कहना। द्वादश या दशमभाव में केतु हो और पापग्रहदृष्ट हो तो उसके अन्तर में मृत्यु होती है॥ तथा १२।१० भाव में केतु शुभग्रह दृष्ट हो तो यह मारक नहीं होता। न रोग न मृत्यु होती है॥ प्राणिनीत्युक्त विप्रेन्द्र प्राणानयनमुच्यते ॥ राश्यधीनं बलं ज्ञेयं तदुक्तं कथ्यतेऽधुना ॥६४॥ अग्रहात्सग्रहो ग्यायान्सग्रहे त्वधिकग्रहः ॥ साम्ये चरस्थिरद्व्यङ्गाः क्रमात्स्युर्बलशालिनः ॥६५॥ अधुना संप्रवक्ष्यामि मध्यायुर्योगनिश्चितम् ॥ मारकांतरतो विप्र तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥६६॥ विलग्नास्तदशा वा चेद्रुभयोरष्टमेशयोः ॥ सस्थितेऽन्यतरे विप्र मध्यायुर्योग उच्यते ॥६७॥ अस्मिन्योगे स्थिते सैव दीर्घस्य मध्यपादके ॥ बालस्य मध्यता पादे केचिदिति वियेचनम् ॥६८॥ अथ दीर्घादियोगेषु त्रिषु च द्विजसत्तम ॥ कक्षाह्रासकृते योगान्दर्शयामि तवाग्रतः ॥६९॥ लग्नसप्तमयोर्विप्र द्विर्द्वादशकयोरपि ॥ षष्ठरन्ध्राधिपस्यापि अनुलग्ने विचिन्तयेत् ॥७०॥ पापकाते पापयोगे पापमध्यत्वमागते ॥ कक्षाह्रासी विजानीयान्निर्विशंक द्विजोत्तम ॥७१॥

पहिले जो हमने बलवती दशाका कथन किया था, वह बलवत्ता कहते है। राशिके ही आधीन बल है, सो कहते है॥ ग्रहरहित राशि से ग्रहसहितराशि बलवान् है और सग्रह राशि से अधिक ग्रहवाली बलवती है। बल समान होने पर चर, स्थिर, द्विस्वभाव ये राशि उत्तरोतर बलशाली है॥६५॥ लग्नेश अष्टमेश दोनो लग्न या अष्टमभाव मे से किसी एक स्थान में हो तो मध्यायु योग कहा जाता है॥ केचित्– कोई आचार्य ऐसा कहते है कि–दीर्घायु मध्यभाग तक बालक की आयु जानना॥ दीर्घ, मध्यादि आयु के कक्षाह्रासकारी योग तुम्हारे सामने कहते है॥६९॥ जन्म लग्न मे लग्न, सप्तमभाव का तथा द्वितीय द्वादशभाव और षष्ठ अष्टमभाव का विचार करें॥ ये भाव पापग्रहयुक्त दृष्ट या पापमध्यगत हो तो निश्चय ही कक्षा ह्रासकारी है॥७१॥

वीर्घस्य मध्यमा याता भवेदायुषि मध्यमे ॥ अल्पावल्प च विज्ञेय कक्षाह्रासस्य लक्षणम् ॥७२॥
कक्षाह्रासे यदाऽर्योऽपि पूर्ववज्जायते ध्रुवम्॥ अथैव लग्नकुण्डल्या पापयोगत्रिकोणगे ॥७३॥
लग्नपचमभागेषु पापयोगकृते द्विज ॥ कक्षाह्रासो भवेद्विप्र निर्विशक विधे सुत ॥७४॥
अत्राऽस्मिन्कारके लग्ने चिन्तयेज्जनिलग्नवत् ॥ कारकाशे द्यूनराशे पापमध्यत्वमेव हि ॥७५॥
एको योग स विज्ञेय कक्षाह्रास च पूर्ववत् ॥ अथैककक्षाह्रासस्य चापवाद वदाम्यहम् ॥७६॥
एकस्यकक्षाह्रास च वित्तपे चान्यथा भवेत् ॥ पूर्ववच्छुभयोगेन कक्षावृद्धिर्भविष्यति ॥७७॥
जनुर्लग्ने कारके च चिन्तयेत्पूर्ववद्द्विज । लग्ने द्यूने धने रिष्फे षष्ठे रन्ध्रे स्थलत्रये ॥७८॥ शुभखेटकृते
योगे कक्षावृद्धिर्भवत्यपि ॥ चिन्तयेत्पूर्ववद्विप्र त्रिकोणेषु स्थलद्वये ॥७९॥ जनुर्लग्ने कारके च
शुभयोग करोति च ॥ कक्षावृद्धिर्न सदेहो भविष्यति द्विजोत्तम ॥८०॥ कारके च त्रिकोणस्थे
नीचस्था पापखेचरा ॥ कक्षाह्रासो महाप्राज्ञ द्वितयेन भविष्यति ॥८१॥

दीर्घायु का मध्यायु होना और मध्यायु का अल्पायु होना तथा अल्पायु का अत्यल्पायु होना कक्षाह्रास का लक्षण है॥७२॥ कक्षाह्रास होने पर वर्ष प्रमाण भी पूर्व कहे अनुसार घट जाते है। अब कुण्डली मे त्रिकोणस्थान मे पापयोग का विचार करते है॥ हे मैत्रेय! लग्न पचम और नवमभाव मे पापग्रह योग होने पर कक्षाह्रास होता है॥ इसी प्रकार से कारकलग्न मे भी जन्मलग्न के समान विचार करना होता है। कारकाश मे सप्तमराशि यदि पापमध्य हो ॥७५॥ तो यह एक योग हुआ और पूर्ववत कक्षाह्रास होगा॥ इस कक्षा ह्रास का अपवाद कहते हैं। एक योग द्वादशभाव कक्षा ह्रास का हो और धनेश शुभयोगी हो तो कक्षा वृद्धि होती है॥७७॥ जन्मलग्न तथा कारक मे प्रथम कथनानुसार विचार करे॥ ऊपर तो १२।१।२ मे तथा नीचे ६।७।८ भावो मे दोनो जगह ३–३ स्थल मे॥७८॥ शुभग्रह युक्त दृष्ट या आक्रान्ता हो तो कक्षावृद्धि होगी। इसी प्रकार इन दोनो के त्रिकोण स्थल मे भी देखना॥७९॥ तथा ये दोनो शुभग्रह से योग करे तो नि सन्देह कक्षावृद्धि होती है॥ कारक यदि नीच राशि के पापग्रहो से युक्त होकर त्रिकोणमे हो तो कक्षा ह्रास होता है।दो ग्रहोसे यह योग जाने॥८१॥

कारकाशे त्रिकोणेषु शुभखेटे शुभस्थले ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र न सदेहो द्विजोत्तम ॥८२॥ कारके पापखेटाच्च व्ययगे पापसयुते ॥ कक्षाह्रासो भवेत्तत्र प्रणीते द्विजसत्तम ॥८३॥ कारके शुभसयुक्ते स्वतुगे शुभखेचरा ॥ कक्षावृद्धिर्भवेत्तत्र निर्विशक द्विजोत्तम ॥८४॥ पापकारक-गे ह्रासो वृद्धिर्वा कथिता द्विज ॥ अथैव गुरुणा कक्षा ह्रासवृद्धि वदाम्यहम् ॥८५॥ वित्ते व्यये लग्नषष्ठे त्रिकोणे पापयोर्द्विज ॥ कक्षाह्रासो भवेत्तत्र पूर्ववद्द्विजसत्तम ॥८६॥ गुरौ नीचे द्यूतुगे च सयुतेऽशुभखेचरै ॥ कक्षाह्रासो भवत्येव निर्विशक द्विजोत्तम ॥८७॥ वित्तगे च गुरौ ज्ञेय पूर्वद्योजन द्विज ॥प्रागुक्तार्थकृतेय च कक्षा सर्वा प्रकथ्यते ॥८८॥ तथैव शुभयोगेषु चापवादवदाम्यहम् ॥ उक्तस्थाने शुभैर्योगे पूर्णेन्दुशुक्रयोर्द्विज ॥८९॥

कारकाश शुभग्रह का हो और शुभस्थान मे हो या त्रिकोण मे हो तो नि सन्देह कक्षावृद्धि होती है॥८४॥ पापग्रह कारक हो और पापग्रह युक्त १२ भाव मे हो तो कक्षा ह्रास होता है॥ कारक शुभयुक्त हो, शुभग्रह उच्च का हो तो कक्षा वृद्धि होती है॥

पापकारक से ह्रास और शुभयोगो से कक्षा वृद्धि कही। अब बृहस्पति से होनेवाली कक्षा की ह्रास वृद्धि कही जाती है॥८५॥ दो पापग्रह धन, व्यय तथा षष्ठ और त्रिकोण भाव मे हो तो कक्षाह्रास होता है॥८६॥ बृहस्पति नीचराशि मे हो तथा पापग्रहो से युक्त हो तो कक्षाह्रास होता है॥ गुरु धनस्थान मे हो तो पूर्ववत् (प्रथम कथनानुसार) समझना। प्रागुक्त कक्षाविषयक आलोचना पुन स्पष्ट करते हैं॥ और शुभयोग तथा अपवाद भी कहेगे। प्रथम कहे गये स्थानो मे चन्द्रमा और शुक्र के साथ शुभग्रह का योग हो तो॥८९॥

योगप्रकरणे कक्षाह्रासाय न तु वृद्धये ॥ तत्रैकराशिवृद्धिश्च भवत्येव न सशय ॥९०॥ पूर्ववच्चोक्तपापेषु शनिना योगकारक ॥ कक्षाह्रासश्च तत्रैव यत्रैको राशिह्रासकृत् ॥९१॥ अधुनासप्रवक्ष्यामि विशेषेण द्विजोत्तम ॥ आलब्य स्थिरदशाया योगांश्चिधनमेव च ॥९२॥ शशिनन्दपावकाब्देरित्युक्ता च दशा स्थिरा ॥ चरे स्थिर द्वि स्वभावेमानुनाराशिषु द्विज ॥९३॥ त्रिभिस्त्रिभीराशिरेक खण्डाश्चत्वार एव च ॥ कस्मिन्खडे च निधन तस्य योग विचिन्तयेत् ॥९४॥ यस्मिन्खण्डे मृत्युयोगस्तस्मिन्खडे विचिन्तितम् ॥ मरण भवतीत्यर्थं निर्विशक वदाम्यहम् ॥९५॥ योगत्रयमह वक्ष्ये दीर्घमध्याल्पभेदत ॥ चतु खडेषु यत्रायुरागत त्रि चिंतयेत् ॥९६॥ दीर्घायुर्योगवत्तत्तु यस्मिन्खडे समागते ॥ तस्मिन्खडे च निधन भवत्यपि न सशय ॥९७॥ वक्ष्यमाणप्रकारेण मध्यमाल्पायुषि द्विज ॥ निधनाश्रयखण्डेषु लक्षणाक्रांतया दशा ॥९८॥

योग प्रकरण मे कहे अनुसार कक्षाह्रास होती है। और ऐसे स्थल मे एकराशि की वृद्धि होती है॥९०॥ पूर्व कहे अनुसार उक्त पापग्रहो मे शनि से यदि योग कारक सम्बन्ध हो तो कक्षा ह्रास तथा एक राशि का ह्रास होता है॥ हे मैत्रेय! अब हम स्थिरदशा मे होनेवाले विशेष योग से मृत्यु का कथन करते है॥९२॥ चर स्थिर द्विस्वभाव राशियो मे जो स्थिर दशा नामक सूर्यदेवद्वारा कही गई है॥ उसमे तीन २ राशियो के चार विभाग है॥ उनमे किस विभाग मे मृत्यु होगी उसके योग का विचार कहता हूँ॥९४॥ जिस खण्ड मे मृत्यु योग है उसका विचार किया गया है उससे मरण समय का ज्ञान होने के लिए पूर्णरूप से कहते है॥ दीर्घ, मध्य, अल्प भेद से तीन योग कहेगे, उसका प्रयोग चार विभाग मे आई हुई दशा मे विचार करना चाहिए॥९६॥ दीर्घायु योग जिस खड मे समाप्त मे प्राप्त हो उस खड मे मृत्यु होती है, यह निश्चित है॥९७॥ इस कहे जानेवाले प्रकार से जिस खण्ड मे मध्य या अल्प आयु के लक्षण से युक्त जो खण्ड हो उस खण्ड मे उसकी मृत्यु होती है॥९८॥

तद्दशायां च निधन भवत्येव द्विजोत्तम ॥ कदाचिच्च मृतिस्तत्र क्लेशदु खमवाप्नि वा॥९९॥ भवति तत्र सस्कार्य पुनरित्य वदाम्यहम् ॥ पापद्वयमध्यगते राशिपाके मृतिर्भवेत्॥१००॥ लग्नाद्वा कारकाद्विप्र पापाक्रांते त्रिकोणगे ॥ द्वादशाष्टमराशेव पापाक्रात भवेदपि ॥१०१॥ तद्दशाया च निधन जातकस्य न सशय ॥ खण्डे स्थिरदशाया च चिंतनीय प्रयत्नत ॥१०२॥ पापराशेस्त्रिकोणेषु द्वादशाष्टमराशिषु । पापाक्रांते तद्दशाया निधन भवति ध्रुवम् ॥१०३॥ शुभमध्ये मृतिर्नैव पापमध्ये मृतिर्भवेत् ॥ भूयोपि निधनार्थाय राशिदोष वदाम्यहम् ॥१०४॥

द्वादशाष्टमयोः पत्योर्दृष्टौ क्षीणेन्दुशुक्रयोः ॥ तद्दशायां च निधनं सत्यमेव न संशयः ॥१०५॥
क्षीणेंदोः केवलं दृष्टिः शुक्रदृष्टिश्च केवलम् ॥ दृष्टिमात्रेण निधनं स्थिरदशायां विचिन्तयेत् ॥१०६॥

उस दशा मे मृत्यु होती है, पर यदि मृत्यु नही हो तो क्लेश, दुख, भय आदि होंगे।। अतः उस दशा के आगे कहे जानेवाला विचार करना। जो राशि दो पापग्रहो के मध्य मे हो उसकी दशा मे निधन होता है।। लग्न या कारक से त्रिकोण स्थान के पापाक्रान्त हो अथवा अष्टम द्वादश राशि पापाक्रान्त हो।। तो उस दशा मे जातक का निधन होता है। इसमे कोई संशय नही है।।१००।। उन भावो मे यदि शुभग्रहयोग हो तो मृत्यु नही होती। पापग्रह का योग होने पर ही मृत्यु होती है। मृत्युज्ञान के लिए और भी राशि मे होनेवाले दोष कहते हैं।। अष्टमद्वादशभाव मे जो राशि है उसके स्वामी को क्षीण चन्द्रमा और शुक्र देखते हों तो उस राशि की दशा मे निधन होता है, इसमे कोई संशय नही है।।१०५।। केवल एक क्षीण चन्द्रमा की या केवल शुक्र की ही दृष्टि हो तो दृष्टिमात्र से ही मृत्यु होती है। स्थिरदशा मे यह विचार करना चाहिए।।१०६।।

मृत्युस्थानेन या दृष्टिः पापस्पर्शं च पश्यति ॥ दशां तस्य समालोक्य व्योमषष्ठाधिपावृहिज ॥१०७॥ निरीक्षिते नवांशेषु द्वयोः स्थाने द्विजोत्तम ॥ तत्रैव निधनं ज्ञेयं भाषितं च तवाग्रके ॥१०८॥ पूर्वोक्तनिधनस्थाने महापाके नरेष्वपि ॥ व्योमषष्ठाधिपो विप्र तयोरंशे निरीक्षिते ॥१०९॥ राशेरन्तर्दशाकाले निधनं भवति ध्रुवम् ॥ अंतर्दशायां रूपे द्वे निधनस्थानमेव च ॥११०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे आयुर्दायकथनं नाम एकविंशोऽध्यायः ॥२१॥

अष्टमभावेश द्वारा पापयोगयुक्त भाव पर दृष्टि हो तो उस राशि की दशा मे, इसी प्रकार छठा तथा दशमभाव के स्वामी द्वारा भी दृष्टि होने से, केवल राशि ही नही, जिस नवांश पर दृष्टि हो उस राशि की दशा तथा दृष्टियुक्त नवांश वर्ष मे मृत्यु होती है।।१११।। इसी प्रकार पूर्वोक्त अष्टमस्थान से षष्ठेश तथा दशमेश देखते हो या युक्त हो और अपने नवांश पर दृष्टि हो तो उस राशि की महादशा मे और नवांशराशि के अन्तर वर्ष मे निश्चय मृत्यु होती है।। अन्तरदशा के दो भाव है, एक षष्ठ तथा दूसरा अष्टम।। इनका विचार करके निधन का निर्देश करना चाहिए।।१-११३।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू०ख० भा० प्र० आयुर्दायकथनं नाम एकविंशोऽध्याय ॥२१॥

ग्रहलक्षणम्

पराशर उवाच—अथातः सम्प्रवक्ष्यामि निधनार्थे विशेषतः ॥ प्रकारान्तर्दशायास्तच्च रुद्रावृद्विजसत्तम ॥१॥ लग्नद्यूनाष्टमे शौचे तयोर्मध्ये च यो बली ॥ प्राणी रुद्रः स विज्ञेय सूर्यादिखेचरोऽपि च ॥२॥ तयोर्मध्ये बली चिन्त्य शुभदृष्टेन सयुते ॥ दुर्बलः सोपि गौणाख्यो रुद्रग्रह इतीर्यते ॥३॥ तत्रैव प्राणिरुद्रस्य विशेष गणयेत्फलम् ॥ प्रवक्ष्यामि तवाग्रे च भृगुश्च त्व महामते ॥४॥ शुभैर्युक्ते शुभैर्दृष्टे शुभसम्बन्धकारक ॥ प्राणी रुद्रः स विज्ञेयस्तस्याधीनायुरेव च ॥५॥ रुद्रशूलान्तमायुः स्यात्त्रिकोणान्ते तथा पुनः ॥ लग्नान्ते पञ्चमान्ते च नवमान्ते त्रयस्थले ॥६॥ चिन्तनीय महाप्राज्ञ तत्तद्राशिदशान्तरे ॥ अल्पमध्य च दीर्घायुर्योगभेदा न सशय ॥७॥ यत्राल्पायु समायोगे त्रिकोणमध्यमान्तरे ॥ आयुस्तत्रैव विज्ञेय तदग्रे च क्रमेण च ॥८॥ योगे मध्यायुष प्राप्ते त्रिकोणे मध्यमान्तगे ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च निर्विशक द्विजोत्तम ॥९॥ दीर्घायुर्योगसलब्धे त्रिकोणे नवमान्तगे ॥ दशान्तरे महाप्राज्ञ आयुर्दायसमाप्तये ॥१०॥ अथैव लग्नद्यूनादि आरभ्य च दशाक्रमः ॥ प्रवृत्तिर्जन्मतो ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥११॥ यत्ररुद्रग्रहस्यापि शुभदत्व न भाव्यते ॥ तत्र जीवस्य मध्दत्वान्नेद फलमिति स्थिति ॥१२॥

रुद्रमहेश्वरबल–ग्रहलक्षण

अब हम मृत्युकाल ज्ञान के लिए विशेष प्रकार से अन्तर्दशा का ज्ञान कहते है॥ लग्नेश तथा सप्तमादि ७।८।९ भावेश इन दो भावेशो मे जो ग्रह बलवान् हो वह बली रुद्र (या प्रधान रुद्रसज्ञक ग्रह) ग्रह है। इस रुद्र सज्ञक ग्रह मे सूर्यादि सभी ग्रहो का ग्रहण है॥ (जो ग्रह न्यूनबली है, वह गौण रुद्र है।) इन दोनो रुद्रग्रहो मे बली रुद्र ग्रह का विचार करना चाहिए। वह रुद्रग्रह यदि शुभदृष्टग्रह युक्त हो या शुभग्रहयुक्त हो तो न्यूनबली होने पर भी मुख्य बली रुद्र के समान ही है॥३॥ इस बली रुद्र का फलसम्बन्धी विशेष विचार करना चाहिए सो वह तुमको कहते है॥४॥ वही प्राणी (बलवान्) रुद्र ग्रह शुभग्रहो से युक्त या दृष्ट अथवा अन्य सम्बन्ध हो तो वह पूर्ण बलवान् रुद्र है और उसीके आधीन आयु है॥५॥ जातक की आयु रुद्रशूल तक या उसके त्रिकोण (राशि की दशा) तक है (शूल दशा जो आगे कही जायगी उसी को रुद्रशूल दशा जानना) लग्न तक या पञ्चम अथवा नवम भाव की दशा तक आयु है ऐसा समझना॥६॥ (अब और स्पष्ट करते हैं) अर्थात् हे महाप्राज्ञ मैत्रेय! अल्पायु मध्यायु और दीर्घायु को पूर्व कथित लग्न आदि राशि की दशा से विचार करे॥७॥ जहा अल्पायु योग है वहा त्रिकोण के पञ्चम भाव तक (अर्थात् लग्न पञ्चम के मध्य के भाव तक की राशि से विचारे) उस अल्पायु वाले जातक की आयु वही तक है॥८॥ उससे आगे यदि मध्यायु प्राप्त हो तो पञ्चमभाव से नवमभाव तक विचार करे। क्योंकि—उसकी आयु यही तक है इसमे कोई शका नही है॥९॥ दीर्घायु योग प्राप्त होने पर त्रिकोण नवम भाव से अत तक विचार करना। (अर्थात् जैसे आयु के तीन भाग कल्पना किये वैसे ही कुण्डली मे भी ३ भाग कल्पित हैं। यथा लग्न से चतुर्थ तक अल्पायु विचार पचम से अष्टम तक मध्यायु विचार और नवम से द्वादश तक दीर्घायु का विचार करना चाहिए) अब लग्न से ६ भाव तथा सप्तम आदि ६ भाव इस प्रकार १२ भावो की दशाक्रम स्पष्ट करके जन्म लग्न से विचार आरभ करे॥११॥ जिस

जन्मकुंडली में रुद्रसंज्ञक ग्रह की शुभफलरूपता नहीं मालूम हो वहां तो जातक के जीवहीन होने से यह विचार ही निष्फल है॥१२॥

अथैवरुद्रशूलातमायुर्दायेतिकारणे ॥ योगेस्मिश्च समुत्कर्षात्किंचिद्दर्शयति द्विज ॥१३॥ प्राणीरुद्रशुभे दृष्टे पूर्वोक्तफलदायक ॥ शुभयोगे न संदेहो रुद्रे शूलातमायुषि ॥१४॥ स्थित एव फल जन्म कथित कारणातरे ॥ निरुक्ते शुभसयोगे कि कीर्तयति भो द्विज ॥१५॥ पूर्वमेव फल सादो समुत्कृष्टे तदेव चेत् ॥ सुतरा तदेव वक्तव्य निर्विशंक द्विजोत्तम ॥१६॥ अनेन पूर्वयोगेन फल किंचिद्धि न्यूनता ॥ अद्योतितादुक्तकालात्पूर्वपश्चान्मृतिर्यदि ॥१७॥ निरुक्तयोगश्च तदा ह्यपवाद वदाम्यहम् ॥ रवि विहाय नितरा पापयोगो भवेद्द्विज ॥१८॥ योगोऽप्य निष्फलो वाच्य पुरा ब्रह्मप्रणोदितः ॥ इद फल न भवति योगेस्मिन्द्विजसत्तम ॥१९॥ नाशयोगस्य वक्तव्य फल वापि भयकरम् ॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि गौणरुद्रस्य वै द्विज ॥२०॥

रुद्रशूल दशा पर्यन्त जीवन हो एवं जीवनस्थापन के उत्कृष्ट योग दिखाते (कहते) हैं॥१३॥ प्राणी रुद्रग्रह–शुभग्रह से दृष्ट होने मात्र से ही जातक का जीवन रुद्रशूलदशा पर्यन्त रहेगा। और प्राणी रुद्र ग्रह यदि शुभग्रह युक्त हो तो जातक के रुद्रशूल दशा के भोग पर्यन्त जीते रहने में कोई सन्देह ही नहीं है॥१४॥ जातक का जीवन कारणान्तर से भी स्थित रह सकता है फिर शुभ सयोग रहने पर तो कहना ही क्या है॥१५॥ हे मैत्रेय[1] प्रथम निश्चित, दीर्घ, मध्य आयु आदि फल यदि उत्कृष्टयोग युक्त हो तो नि शकरूप से वही कहना॥१६॥ पहिले कहे हुए आयु के सहायक योगों में कुछ न्यूनता है। क्योंकि– पूर्वयोगानुसार उक्त अर्थात् ज्ञात हुए काल जिसका कि द्योतन (ज्ञापन = ज्ञान) नहीं हुआ उससे पहिले या पीछे यदि मृत्यु सभव हो तो पूर्वोक्त योग सापवाद (निन्दित) होते हैं। (अथवा पूर्वोक्त योग की निष्फलता में 'अपवाद' बाधक योग कहते हैं यह तात्पर्य है) सूर्य के बिना अन्य पापग्रहों से योग हो तो यह योग निष्फल होता है और इसका फल नहीं होता॥१९॥ और इसके विपरीत दुर्योग का फल भयकर होता है॥ अब हम मुख्य रुद्रग्रह का फल बताकर गौण रुद्र का फल कहते हैं॥२०॥

गुणप्रकर्षेण फल विशेषेण तथाप्रत ॥ गौणरुद्रे महाप्राज्ञ मदारेन्दुनिरीक्षिते ॥२१॥ अभावे शुभयोगस्य पापयोगातरे तथा ॥ फल विर्देद्र शूलान्तादायुर्दाय भवत्यपि ॥२२॥ शुभदृष्टे वा शूलातात्परश्चायुर्भवेदपि ॥ योगद्वय परत्वेन योजनीय न सशय ॥२३॥ एतद्योगद्वय किंचिन्न्यूनतायामपि द्विज ॥ नेद फल प्रवक्तव्य मैत्रेयाभाषित पुरा ॥२४॥ शुभदृष्टिमवे चैव योगे च परपूर्ववत् ॥ शुभदृष्टावसत्या च पापयोगादमावत ॥२५॥ कृत एको हि योगश्च पूर्वयोजनमेव च ॥ अशुभयोगे शुभौ दृष्टो योगोऽयमपरो द्विज ॥२६॥ पापयोगैरभावे च शुभदृष्टी च सयुते ॥ कैमुतिकाख्यन्यायेन सिद्धो योगस्तृतीयकः ॥२७॥ पुरा प्रोक्ताव पश्चाद्भुक्तयादौ कथयाम्यहम् ॥ द्वितीययोजनाया तु शुभदृष्टिसमन्विते ॥२८॥ पापयोगस्य चाभावे योग प्रथम उच्यते ॥ पापयोगे महाप्राज्ञ शुभदृष्टे प्रभावके ॥२९॥

'गौण रुद्रग्रह' गौण होने पर भी योगरूप गुण के बल से विशेष कथन योग्य है। हे मैत्रेय! गौणरुद्रग्रह शनि, मगल, चन्द्रमा से दृष्ट हो और शुभ ग्रह के योग का अभाव हो एव पापग्रहो के मध्य मे हो तो भी वह जातक की आयु शूलदशा तक करता है (अत जातक के लिए तो वही श्रेष्ठ है) और यदि इसके विपरीत शुभयोग हो तो 'शूल'-दशा के बाद भी उसकी आयु हो सकती है। इस उपर्युक्त आयु के साधक, बाधक दोनो प्रकार के योग से आयु का विचार करे॥२३॥ (यहा गौणरुद्रग्रह के शुभाशुभ दृष्टि तथा योग के ३ भेद कहते हैं)
१– शुभग्रहकी दृष्टि हो और ग्रहयोग पूर्वोक्तके समान हो। तथा शुभ दृष्टि नही हो और पापग्रह योग भी नही हो। यह एक योगका कथन हुआ, इसमे पूर्व के कहे योग भी युक्त है।
२– अशुभग्रह का योग और शुभ दृष्टि हो यह दूसरा योग है।
३– पापयोग न हो और शुभदृष्टि हो। यह तीसरा योग है। (इसके फल की श्रेष्ठता का तो कहना ही क्या है) इस योग का फल कैमुतिक न्याय से हो सिद्ध है। अर्थात् अतिश्रेष्ठ है॥२७॥ पहिले जो शभु ने कहा सो सुनाते है। इस दूसरी योजना मे पापग्रह योगाभाव और शुभदृष्टि युक्त होना यह प्रथम योग है। पापयोग और शुभदृष्टि यह द्वितीय योग है॥२९॥

द्वितीययोगपक्षेऽह पूर्वस्मिन् द्विजसत्तम ॥ पापयोगस्य चाभावे चाशुभदृष्टिविवर्जित ॥३०॥ कैमुतिकाख्यन्यायेन तृतीयो योग उच्यते ॥ अथव प्राणिरुद्रस्य ह्युक्ता पक्षातरे कथा ॥३१॥ तत्रैव प्रथमे योगे शुभदृष्टिविवर्जिते ॥ शुभयोगादियोगश्च द्वितीयोक्तेन योगकृत् ॥३२॥ तृतीयेन द्वयस्यापि योगभग करोत्यपि ॥ अधुनोक्तत्रयाभावे मदादिदृष्टिमात्रत ॥३३॥ एव स्थिते सुयोगश्च नि शक प्रतिपद्यते ॥ अशुभे खेचरैर्दृष्टे पापयोग इति स्थिति ॥३४॥ शुभयोगविहीने च मन्दारेन्दुनिरीक्षिते ॥ तदायु परतो विप्र समानादिति योजयेत् ॥३५॥ प्रथमद्वितीये सत पापयोगैरभावत ॥ योगो भगमपेक्षा च तृतीयोक्तमिद भवेत् ॥३६॥ पापदृष्टिमात्रमेव योगनिर्वाहकारणे ॥ अपवादविहीनेन इत्येवोक्त तृतीयके ॥३७॥ रुद्राभ्या प्राणिगौणाभ्या ताभ्यामाश्रितमेव च ॥ गुणविशेष आयुरत वक्ष्यामीह महामते ॥३८॥

इस द्वितीय योग मे तो प्रथम योजनावाले योग से समानता है और पापयोग न हो और अशुभदृष्टि भी नही हो तो अतिश्रेष्ठ। अब प्राणी (बली) रुद्र के योग के विषय मे भिन्न विचार है। पूर्व ही कह चुके है कि–प्रथम योग मे शुभदृष्टिरहित हो। और द्वितीययोग मे शुभयोग दृष्टि हो॥३२॥ और तीसरे योग मे शुभ दृष्टि और शुभयोग दोनो का अभाव कहा है, तथा योगभग का प्रकार कहा है। अब यह कहते है कि–उक्त तीनो प्रकार के योगो के अभाव मे शनि, राहु की दृष्टिमात्र से ही योग होता है॥३३॥ इस केवल एक की दृष्टिमात्र से भी सुयोग होता है। और अनेक पापग्रहो की दृष्टि से तो पापयोग होगा, ऐसा समझना॥३४॥ प्राणी रुद्रग्रह शुभदृष्टिहीन हो, चन्द्र, मगल, शनि से दृष्ट हो तो अपने मान से भी परे आयु जाने। यह पहिले कहा हुआ जानना चाहिए॥३५॥ प्रथम द्वितीय योग मे शुभयोग हो और पापयोग न हो। और तीसरे योग मे योगभग की अपेक्षा आदि कहा है। तृतीययोग मे एक ग्रह पापग्रह का होने से योग का निर्वाह होता है और अपवाद नही होना चाहिए॥३७॥ बली तथा निर्बल, अतएव मुख्य और गौण रुद्रग्रह के योगविशेष के आश्रित हो आयु है, यह अब कहते है॥३८॥

गौणरुद्रेशुभैर्योगे शुभदृष्टिसमन्विते ॥ रुद्रशूलांतमायुश्च योजनीयं द्विजोत्तम ॥३९॥
पूर्वोक्तप्राणिरुद्रेण द्वियोगप्राणकेन च ॥ द्वाभ्यां शूलांतमायुश्च तवाग्रे कथितं मया ॥४०॥
अधुना संप्रवक्ष्यामि द्वयोर्निर्वाहकारणे ॥ तयो रूपं भिन्नभिन्नं शृणुष्व मुनिपुंगव ॥४१॥
प्राणिरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं द्विजसत्तम ॥ शुभयोगेति का वार्ता शूलांतायुर्विनिश्चितम् ॥४२॥
गौणरुद्रे शुभैर्दृष्टे योगोऽयं क्लेशदायकः ॥ रोगशोकभयं कर्ता मृत्युं नैव करोति च॥४३॥
शुभयोगे महाप्राज्ञ योगोऽयं बलवत्तरः ॥ तस्य शूलांतमायुश्च निर्विशंकं न संशयः ॥४४॥ उभौ
यदौ शुभग्रहैर्योगदृष्टौ द्वयोरपि ॥ शुभग्रहेण क्लेशश्च रुद्रशूलांतमायुषि ॥४५॥ प्राणी
चाप्राणिरुद्राभ्यां कृतयोगद्वयेन च ॥ तयोर्वा संप्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजसत्तम ॥४६॥
मार्तंडरहिते चान्य पापयोगकृते द्विज ॥ योगद्वयं न भवति पापयुक्त द्वयोरपि ॥४७॥

यदि गौण रुद्रग्रह शुभयुक्त, शुभदृष्ट हो तो रुद्रशूल दशा तक जातक की आयु है। यह समझना चाहिए।।३९।। पूर्वोक्त प्राणीरुद्रग्रह के सम्बन्ध मे प्रथम निश्चित कर दिया है कि–प्रथम कहे हुए दो योगो मे भी आयु शूलदशापर्यन्त जानना।।४०।। अब प्राणिरुद्र मे आयु के निर्वाह के कारण आदि के दो योगो मे कहते है सो अलग २ सुनिये।।४१।। प्राणिरुद्रग्रह शुभदृष्टि युक्त हो, यह एक योग है। इस शुभ योग मे शुभपन यही है कि–जातक की आयु शूल दशा तक निर्बाध है।।४२।। गौण रुद्र यदि केवल शुभदृष्ट हो तो क्लेशदायक होता है रोग शोक, भयमात्र करता है, मृत्यु नही होती।।४३।। हे महाभाग! शुभग्रह का योग हो तो यह योग अतिबली होता है। उस जातक की आयु के शूल दशा तक होने मे कोई सन्देह नही रहता।।४४।। दोनो रुद्रग्रह यदि शुभग्रहो से युक्त हो तो आयु तो शूल पर्यन्त है, परन्तु कष्ट सहित हो।।४५।। हे द्विजश्रेष्ठ! प्राणी रुद्र और गौण रुद्र इन दोनो से प्रभावकारी योग होते है, सो कहते है।।४६।। दोनो ही रुद्रग्रहो से सूर्ययोगरहित अन्य पापग्रहो से योग हो तो ये योग विशेष प्रभावकारी नही होते।।४७।।

शुभयोगे शुभर्द्दृष्टेरभयेऽपि विना रविम् ॥ पापयोगकृते विप्रभययोगो विनश्यति ॥४८॥
शुभयोग शुभैर्दृष्टिरभावे न भवत्यपि ॥ यत्रायु कथयाचकुर्वतव्य द्विजसत्तम ॥४९॥ उभयो
पापयोगे च कश्चिद्रोगोऽस्तिको भवेत् ॥ क्लेश शोको नृपाद्भीतिर्देहपीडनम् द्विज ॥५०॥
शुभदृष्टेरभावे च शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगप्रभावेण मरणं मारणं वृथा ॥५१॥
शुभयोगदृष्ट्यभावे पापयोगे द्विजोत्तम ॥ पुष्टदशाचलेनैव संप्रासादो न संशयः ॥५२॥
अस्मिन्प्रकरणे चैवमुपपत्तौ द्विजोत्तम ॥ शुभवर्गो पापवर्गो तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥५३॥
अर्कारमंदफणिनः क्रमात्क्रूरा अयाश्रयम् ॥ चन्द्रोऽपि क्रूर एवात्र क्वचिद्गतरकाश्रयात् ॥५४॥ गुरु
शिखि कविज्ञाश्च यथापूर्वं शुभग्रहा ॥ क्रूरखेटा महाप्राज्ञ चार्काद्या उत्तरोत्तरम् ॥५५॥ क्रूरा
क्रूरखेटगाश्च क्रूराणि ह्यपमादकम् ॥ शुभक्षेत्रगते क्रूरे क्रूरता ह्युपशाम्यति ॥५६॥

दोनो ही रुद्रो मे शुभदृष्टि और शुभयोग हो पर सूर्य मे न हो तो पाप (नेष्ट) योग का भय नही रहता।४८।। शुभग्रह का योग तो हो, पर शुभदृष्टि न हो तो जो दीर्घादि आयु प्राप्त हुई है, वही आयु कहना चाहिए।।४९।। दोनो रुद्रग्रहो से यदि पापयोग हो तो शोक, क्लेश,

राजभय तथा पर्यटन (मुसाफरी) होता है॥५०॥ शुभदृष्टि और शुभयोग न हो तो पापयोग और दृष्टि के प्रभाव से मरण निश्चित है ॥५१॥ शुभयोग और दृष्टि न हो तथा पापयोग दृष्टि हो तो बलवान् शुभदशा रहगी तब तक ही सुख जानना॥५२॥ हे द्विजोत्तम! इस रद्रप्रकरण मे शुभाशुभफल की उत्पत्ति कर्ता जो योग है, उनके सहायक शुभवर्ग और पापवर्ग (वर्ग-समूह) कहते है॥५३॥ प्रथम पापग्रहों का वर्ग (समूह) कहते है। सूर्य, मगल, शनि, राहु, अपने आर्ययानुसार कूर है और चन्द्रमा भी मगल के योग से क्रूर है॥५४॥ (शुभवर्ग) गुरु, शुक्र, बुध तथा केतु पूर्वोक्तानुसार शुभ हैं। और पापग्रह जो अभी कहे है वे सूर्य से उत्तरोत्तर बलहीन है॥५५॥ क्रूरग्रह तथा क्रूरराशि मे जो ग्रह हो वे भी क्रूर हैं। किन्तु यही क्रूरग्रह जब शुभराशि तथा भाव मे हो तो इनकी क्रूरता दूर हो जाती है। यह अपवाद है॥५६॥

गुर्वादय शुभग्रहा यथापूर्वं बुध कवि ॥ कवित' केतुर्विज्ञेय' केतुतो वाक्पतिर्द्विज ॥५७॥ क्रमेणैव विजानीयाच्छुभखेटोत्तरोत्तरम् ॥ यथापूर्वं क्रूरग्रहा क्रूराश्रयसमागते ।५८॥ एव क्रौर्यं समापन्न क्रौर्यं तु शोभनाश्रय ॥ एव गुर्वादिसौम्याश्च शुभा श्रेयातिशोभना ॥५९॥ क्रूराश्रये सौम्यखेटा सौम्यता नश्यते क्वचित् ॥ एवमेवापरामुक्ति कथयामि द्विजोत्तम ॥६०॥ प्रत्येक शुभराशिस्थ उच्चस्थो वा बुध शुभ ॥ गुरुशुक्रौ च सौम्यस्थौ ततोऽन्ये च शुभा स्मृता ॥६१॥ पूर्वस्मिन्पापयोगेन योगभगद्वये द्विज ॥ निरूपित तथाग्रे च निर्विशक न सशय ॥६२॥ योगद्वयेऽपि भगार्थे पापदृष्टौ विशेषकम् ॥ न वर्णयति कदापि स्यात्तथाग्रे कथयामि वै ॥६३॥ शुभग्रहाणा चाभावे मदारेन्दुनिरीक्षिते ॥ पापयोगे शुभैर्दृष्टे परतश्चायुषि द्विज ॥६४॥ प्राणिरुद्रेप्यगौणेन शुभयोगविवर्जिते ॥ पापयोगेऽथवा दृष्टे तथा शुभनिरीक्षिते ॥६५॥

बुध शुक्र, केतु, गुरु ये चार ग्रह भी उत्तरोत्तर बलवान् शुभ है॥५७॥ पूर्वोक्त शुभग्रह उत्तरोत्तर बलवान् है। और क्रूर ग्रह सब यथापूर्व बलवान् है। शुभग्रह भी पापराशि मे हो तो क्रूर है॥५८॥ इस प्रकार क्रूरता जाने यदि सौम्यराशि और शुभभाव मे क्रूरग्रह हो तो शुभ होते है। और गुरु आदि सौम्यग्रह शुभ है तथा शुभाश्रयी हो तो अति शुभ है॥५९॥ सौम्य ग्रह यदि क्रूराश्रयी हो तो कही २ इनकी सौम्यता नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार और नियम कहते है॥६०॥ अब प्रत्येक ग्रह के लिए कहते है। बुध शुभराशि मे या उच्च का हो तो शुभ है। तथा गुरु और शुक्र भी सौम्यराशि मे शुभ है। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी उच्च या शुभराशि मे शुभ होते है॥६१॥ और पहिले जो हमने पापग्रह के योग मे योगभग के दो योग कहे है, उनमे कोई शका नही है॥६२॥ योगभगकारी दो योग मे पापदृष्टि रहते भी जो योगभग का फल नहीं होता, उसका कारण कहते हैं॥६३॥ शुभग्रहो के योग का अभाव हो चन्द्र, मगल शनि की दृष्टि हो तथा शुभग्रह की भी दृष्टि हो तो प्राप्त आयु अल्प मध्य दीर्घ, योग कुछ और आगे तक जानना॥६४॥ केवल प्राणीरुद्रग्रह शुभयोगरहित हो और पापग्रह का योग अथवा दृष्टि हो एव शुभदृष्टि भी हो॥६५॥

ध्यापारतानुविज्ञेया पूर्ववद्द्विजसत्तम ॥ अत्रोपपदपापाच्च राहोरप्युपलक्षणम् ॥६६॥ एव सूर्यातिरिक्तोपि पापयोगस्तथैव च ॥ तस्यै वेहानुवादाच्च राहोश्चिद्रुपबृहणात् ॥६७॥

परिग्रहदर्शनाच्च परतो रुद्रपाश्रयात् ॥ शुभस्थाने आयुरत. शूलत्रयमलघनात् ॥६८॥ न तु शूलदशायां च आयुरंत द्विजोत्तम ॥ एव शूले चेतदतशूलरीत्येति याधके ॥६९॥ पूर्वोक्तपापयोगेन शुभयोगेन दृष्टितः ॥ कृतयोगद्वयस्यापि भङ्गार्थे च वदाम्यहम् ॥७०॥ शुभयोगेन वै विप्र पापयोगोऽतिदुर्बलः ॥ शुभदृष्टिकृतो योगः पापदृष्टेः कथ क्षम ॥७१॥ न भंजनसमर्थश्च कोटियत्ने कृते द्विज ॥ शुभकृद्योगभगार्थे पापयोगमपेक्षितम् ॥७२॥ शुभयोगे दृष्टिकृते पापयोगेऽपि भञ्जकः ॥ शुभदृष्टिकृते योग पापयोगो विनश्यति ॥७३॥ यदायुर्वायमध्यस्य वेदितव्य द्विजोत्तम ॥ पापमात्रस्य शूलत्वे प्रथमर्क्षे मृति वदेत् ॥७४॥ द्वौ रुद्रौ पूर्वं वक्ष्येऽह यदि चैकत्र सस्थिते ॥ मिश्रमध्यमशूलर्क्षे शुभमात्रेऽन्तिमे मृतिः ॥७५॥

तो इसका विचार पूर्व कहे अनुसार जानना। और पहिले जो उपदेश से फल कहा गया है, उस विचार मे और ग्रहो के समान ही राहु को भी समझना चाहिए।।६६।। राहु यद्यपि सूर्यातिरिक्त ग्रह है, तथापि अन्य ग्रहो के साथ होकर सूर्य के समान ही योग कारक है और स्व-रूप मे शिरोभाग होने से चिन्यिश्रित (चित् शक्तियुक्त) है। और ग्रहण मे सूर्य का भी आच्छादक है।।६७।। अत रुद्रग्रह को राशि के स्वामी से यदि सम्बन्ध हो तो अति बलवान होता है। अत राहु शुभस्थान मे हो तो अतरदशा तक आयु जानो क्योकि—राहुयोग होने पर तीनो शूलदशाओ का लघन नही हो सकता।।६८।। इसी प्रकार राहुयोग होने पर शूलदशा के अन्त तक आयु नही जाती है। शूलदशा मे ही तत्-तत् शूलदशा के अन्तर मे ही निधन जानना।।६९।। पूर्वोक्त जो शुभ तथा पाप दोनो की दृष्टि अथवा योग मे जो 'भगयोग' होता है, इसके लिए अब हम कहते है।।७०।। हे मैत्रेय ! शुभयोग से पापयोग दुर्बल हो जाता है। क्योकि—शुभदृष्टि की सामर्थ्य भग करने मे पापदृष्टि की क्षमता नही है।।७१।। शुभदृष्टि के योग को पापदृष्टि यदि कोटि (करोड़ो) यत्न करे तो भी शुभ दृष्टि का नाश नही कर सकती।।७२।। शुभयोग और दृष्टि दोनो हो तो शुभदृष्टि से ही पापयोग का नाश हो जाता है।।७३।। जब मध्यायु योग हो और पापग्रह मात्र का योग हो तो शूलदशा के प्रथम चरण मे ही मृत्यु होती है।।७४।। और प्रथम जो दो रुद्र गौण मुख्य भेद से कहे हैं, उनके विषय मे अब यह कहना है कि—वे दोनो यदि एक स्थान मे हो, या मिश्रराशि मे हो तो मध्य या अन्तिम शूलराशि की दशा मे मृत्यु होती है।।७५।।

द्वयोः पापी च प्रथमे शूले मृत्युर्भवत्यपि ॥ यद्येकरुद्रः पापी च द्वितीय. शुभखेचरः ॥७६॥ मध्ये शूले मृतिर्विप्र निर्विशंकं भविष्यति ॥ शुभग्रहद्वय विप्र एकत्र यदि तिष्ठति ॥७७॥ अत शूले मृतिर्ज्ञेया शूलिना भाषित पुरा ॥ एव भेदानुभेदेन विचारात् सर्वत्र बुद्धिमान् ॥७८॥ शूलक्षेत्रे च रुद्रौ द्वौ यदि पापोऽथवा शुभः ॥ मिश्रग्रहोऽय वा विप्र चितयेद्बलवत्तरः ॥७९॥दीर्घायुरायुर्योगेन भङ्गाभावे द्विजोत्तम ॥ मृत्युशूलदशाया च पापयोग विना रविः ॥८०॥ क्रूराश्र येषु क्षेत्रेषु शुभनामाश्रयेषु च ॥ निर्याणमितरेषा तु शूलर्क्षे निर्दिशेदयम् ॥८१॥ शुभानामत्र पक्षे तु तथा क्रूराश्रयेषु च ॥ तस्मिञ्जातकशूलर्क्षे मृति ब्रूयात्र सशयः ॥८२॥ यद्यप्राप्तौ रुद्रयोगे यत्किंचिन्न्यूनता द्विज ॥ तर्हि रुद्राश्रय लक्ष्य त्रिधा न परतोऽपि च ॥८३॥ रुद्राश्रयेऽपि चायुर्दा समाप्तिर्भवति ध्रुवम् ॥ प्रायेण चिन्तयेद्विप्र पूर्वापरप्रयत्नतः ॥८४॥ यद्राहुप्राणिरुद्रस्य

योगे पूर्णे भवत्यपि ॥ रुद्रशूले परत्वेन आयुर्दायसमाप्तये ॥८५॥ रुद्राश्रयेण प्रायेण शूलमेकद्वयत्रयम् ॥ उल्लंघनं कृतं विप्र यदि योगविशेषतः ॥८६॥

और दोनो रुद्रग्रह पापी हो तो प्रथम शूलदशा मे मृत्यु होती है। और दो रुद्रो मे एक पापी और एक शुभ हो तो निश्चयरूप से मध्य शूलदशा मे मृत्यु होती है॥७६॥ और दोनो रुद्रग्रह शुभ हो और एक ही स्थान मे हो तो अन्तिम शूलदशा मे मृत्यु जानना ॥७७॥ ऐसे इसके भेद और अनुभेद जानना॥७८॥ शूलदशा के मारक विचार मे दोनो रुद्रग्रहो का योग हो तो देखना चाहिये कि ये दोनो पाप है या शुभ है, अथवा एक पाप एक शुभ है, तो इन दोनो मे बलवान रुद्र को (प्राणी रुद्र) लेना चाहिये॥७९॥ आयुयोग मे दीर्घायु प्राप्त हो और योगभंगकारी योग नहीं हो, और पापयोग सूर्य के बिना हो तो शूलदशा मे मृत्यु होती है॥८०॥पापग्रह शुभ राशियोमे हो और शुभग्रह पाप राशियोमे हो तो भी शूलराशिवशा मे मृत्यु होती है॥८१॥ पापग्रह पापराशियो मे हो तो भी जातक की मृत्यु शूलदशा मे होती है॥८२॥ यदि गौणरुद्रग्रह के साथ पूर्वोक्त योग हो तो भी रुद्राश्रयफल पूर्वोक्त ही है, उस फल के तीन प्रकार नही होकर एक प्रकार ही है॥८३॥ अतः हे मैत्रेय ! रुद्राश्रयी विचार मे पूर्वापर का ध्यान से विचार करके आयु समाप्ति का निर्णय करे॥८४॥ और यदि बाल राशि मे प्राणी रुद्र का पूर्ण योग हो तो शेष की शूल दशा मे आयु समाप्ति (मृत्यु) होती है॥८५॥ हे विप्र ! यदि योग के विशेष बलाबल के विचार से शूल दशा पहिली, दूसरी और तीसरी मे निर्याण (मृत्यु) कहे। और विशेष बलवान् योग मे तीनो का भी उल्लंघन हो सकता है॥८६॥

तर्हि रुद्राश्रयेप्येवं प्रायेणायुर्भवेद् ध्रुवम् ॥ तावद्वर्षेण कथनं जीवनं जातकस्य च ॥८७॥ इत्युक्ते च प्रयाणे च पूर्वे रुद्राश्रयाद्द्विज ॥ आयुर्दायसमाप्तिश्च कष्टयोगादिकारके ॥८८॥ रुद्राश्रमायुर्ह्येव हि निरुक्ते चायुषि द्विज ॥ भवेद्विशेषरूपं किं तवाग्रे दर्शयामि च ॥८९॥ मेषलग्ने विशेषेण आयूरुद्राश्रयातके ॥ कुष्ठरोगादि कुर्वीत पूर्णायुर्न समाप्यते ॥९०॥ द्वन्द्वराशौ स्थितौ रुद्रौ प्राणी गौणद्वयेऽपि वा ॥ रुद्राश्रय तदन्ते वा आयुर्दायं भवत्यपि ॥९१॥ आयुर्दा योगभेदेन प्रथमे मध्यमोत्तमे ॥ दर्शयामि तवाग्रे च कथा शम्भुप्रणोदिताम् ॥९२॥ स्वल्पमध्यमदीर्घायुर्यो गादिकं वदेद्द्विज ॥ तदायुर्दायमल्पादि यथोक्तं कथितं मया ॥९३॥ स्वल्पायुः प्रथमे शूले मध्यमायुर्द्वितीयके ॥ दीर्घायुश्च तृतीयान्ते शूलान्ते निधनं भवेत् ॥९४॥ अधुना सम्प्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजनंदन ॥ मृत्युर्मुख्याश्रयीभूतदशायां तद्दशास्वपि ॥९५॥ ततः फलविशेषार्थं माहेश्वरग्रहं द्विज ॥ लक्षयति तदाग्रे च तस्मादायुर्विनिश्चितम् ॥९६॥ चिन्तयेत्कारके तस्य ह्यष्टमेशो महेश्वरः ।अथैवाऽन्यप्रकारेण माहेश्वरं वदाम्यहम् ॥९७॥ कारके तुङ्गराशिस्थे सग्रहो बलवत्तरः ॥ रिष्फरन्ध्राधिपौ मध्ये सोऽपि माहेश्वरो ग्रहः ॥९८॥ कारकान्त्य ग्रहाभावे नाथो माहेश्वरो भवेत् ॥ रिष्फरन्ध्राधिपौ विप्र बले सामान्यता यदि ॥९९॥ [illegible] माहेश्वर पातो यथा रुद्रग्रहौ द्वयम् ॥ ताभ्यां च निर्णयार्थाय प्रकारान्यं वदाम्यहम् ॥१००॥

इसलिये रुद्राश्रय योग मे भी बल से आयु का निर्णय करे बलाबल के अनुसार जितने वर्ष प्राप्त हो उतनी आयु कहे॥८७॥ इस प्रकार अब हमने रुद्र ग्रह के योग से प्रयाण (मृत्यु) का

विचार किया। और इसके साथ ही कष्ट रोग आदि का विचार किया॥८८॥ इस प्रकार रुद्राश्रय विचार है। इसमे जो विशेष विचार है, वह अब कहते है॥८९॥ मेषलग्न मे विशेष करके रुद्राश्रित राशि के अन्तिम शूल दशा मे मृत्यु होती है और 'पूर्णायु' योग हो भी तो पूरी आयु जीवित नही रहता। और कुष्ठादि रोग भी हो सकता है॥९०॥ प्राणी और गौणरुद्र दोनो ग्रह यदि द्विस्वभाव राशि मे हो तो रुद्राश्रयी शूलदशा मे या उसके अन्त मे मृत्यु होती है॥९१॥ अब महेश्वर के कहे हुए आयुर्दाय सम्बन्धी प्रथम, मध्यम, उत्तम, शूल दशा निर्वाण के योग कहते है॥९२॥ योगानुसार अल्प, मध्य, दीर्घ, आयु का योग निर्देश करो। इसके अल्पादि भेद के योग कह चुके है॥९३॥ स्वल्पायु हो तो प्रथम शूल दशा मे, मध्यायु हो तो द्वितीय और दीर्घायु हो तो तृतीय शूलदशा मे मृत्यु होती है॥९४॥ (अब आगे माहेश्वर ग्रह का निरूपण करते है) हे द्विजनन्दन ! अब आपको माहेश्वरग्रह का विचार कहते हैं, जो कि मृत्यु की आश्रयीभूत मुख्य दशा और अन्तर्दशा विचार मे उपयोगी है॥ उसके पश्चात् उसके लक्षण कहेगे, जिनसे आयु का विचार या निर्णय कहेगे॥९६॥ कारक कुण्डली मे अष्टमाधीश ग्रह महेश्वर संज्ञक होता है॥ अथवा दूसरी रीति से 'माहेश्वर' कहते हैं॥९७॥ कारक यदि उच्च राशि का हो तो द्वादश तथा अष्टमाधीश मे जो ग्रह अधिक बली हो वह 'महेश्वर' होता है॥९८॥ और कारक से यदि बली ग्रह नही मिले तो, अर्थात् १२।८ भावेश बलहीन या समबली हो तो कारकेश ही 'माहेश्वर' होता है॥९९॥ तथा ८।१२ द्वादशेश के समबली होने पर दोनो की ही माहेश्वर संज्ञा मानकर दो माहेश्वर हो जाते हैं॥१००॥

स्वकारकस्य योगश्चेद्राहुकेतुरवीन्विना ॥ माहेश्वरो भवत्येव विकल्पेन द्विजोत्तम ॥१॥ कारकस्याष्टमे पापग्रहो माहेश्वरो भवेत् ॥ रविचन्द्रौ च चान्द्रिश्च गुरुः शुक्रः शनिस्तमः॥२॥ शिखिना गणनायां च यः षष्ठः कारकग्रहात् ॥ सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो नवभागसमुच्चयात् ॥३॥ 'एवं चार्कविभागश्च राशिव्यवहारोज्वला ॥ तदयं तृतीयः खेटो रव्यादीनां महेश्वरः ॥४॥ यद्वा कारकस्थानाच्च षष्ठाधिपतये स्थिते ॥ सोऽपि माहेश्वरो ज्ञेयो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥५॥ माहेश्वरग्रहस्यापि ब्रह्मसाहित्यकेन च ॥ ततो ब्रह्मग्रहं वक्ष्ये विशेषेण फलाय वै ॥६॥ लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि रिपुरंध्रव्ययाधिपाः ॥ एतेषु बलवान्विप्र मेषादिविषमस्थिते ॥७॥ लग्नसप्तमयोर्मध्ये राश्योश्च बलवान्भवेत् ॥ उच्चैरपृष्टभागाद्यसंयोगो विद्यमानतः ॥८॥ एतद्गुणत्रयाद् युक्तः सोपि ब्रह्मा ग्रहः स्मृतः ॥ लग्नस्य पृष्ठभाग च षट्कं च द्यूनवादिकम् ॥९॥ सप्तमस्य पृष्ठभागं षट्कलग्नादिकं द्विज ॥ बलवान्विषमस्थोपि ब्रह्मा खेटः स उच्यते ॥११०॥

ऐसी स्थिति मे उनके निर्णय के लिये अन्य प्रकार कहते हैं॥ आत्मकारक का योग, राहु, केतु, सूर्य को छोडकर किसी भी ग्रह से हो तो वह भी माहेश्वर होता है॥१०१॥ (इस प्रकार कितने ही माहेश्वर हो सकते है) इनमे से कुछ की गणना तथा लक्षण कहते हैं। प्रथम–कारक से अष्टमभावस्थित ग्रह माहेश्वर होता है। दूसरा–सूर्य, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इस क्रम से आत्मकारक ग्रह से गणना करने पर जो छठा ग्रह है, वह भी माहेश्वर है। यह द्वितीय है॥ और इसी प्रकार नवमाश तथा द्वादशाश मे भी गणना करना अर्थात् आत्मकारक के नवाश या द्वादशाश से जो छठा हो और बली हो या उच्चादि बलयुक्त हो वह

तीसरा माहेश्वर संज्ञक ग्रह है और सूर्यादि बाकी सभी ग्रहों का स्वामी है॥४॥ अथवा कारकस्थान (भाव) से छठे घर के स्वामी की राशि मे हो,वह भी (चौथा) माहेश्वर होता है॥५॥ यह माहेश्वर ग्रह बताये गये। अब माहेश्वर के समान होने से 'ब्रह्मा' नामक ग्रह भी बताया जाता है। विशेष करके फलविचार के लिये भी 'ब्रह्मा' ग्रह कथन करते हैं॥६॥ (ब्रह्मग्रहलक्षण) लग्न से या सप्तमभाव से ६।८।१२ स्थानो के स्वामियो मे जो बलवान् होता है। वह 'ब्रह्मा' ग्रह है। यह नियम विषम राशि के लग्न के लिये है॥७॥ लग्न, सप्तम भाव तथा इनके स्वामी मे जो बलवान् हो और उच्चादि राशि मे स्थित ग्रह से संयोग रहित हो। इन तीन गुणो से युक्त ग्रह भी 'ब्रह्मा' ग्रह है॥८॥ लग्न से पीछे की छ राशि, और सप्तम से पीछे की छ राशि (अर्थात् लग्न से छठे भाव तक और सप्तम से १२ भाव तक), इन दोनो भागो मे जो ग्रह विषम राशि मे हो और बलवान् हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है॥९॥११०॥

ब्रह्मणा लक्षणाक्रान्ते बलवान्वापि पातयोः ॥ शनिराहुरयो केतुर्यदि षष्ठो ग्रहो द्विज ॥११॥ रवादिगणनाथा च शन्यादौ तृतीयो ग्रहः ॥ स्थानात्षष्ठराशिगे च षष्ठराशधिपोऽथवा ॥१२॥ सोऽपि ब्रह्मा ग्रहो ज्ञेयो निर्विशंक द्विजोत्तम ॥ बहुना ब्रह्मणाक्राते को ग्रहो ग्राह्यमाणकः ॥१३॥ संदेहे निर्णयं चात्र तवाग्रे कथयामि च ॥ द्वित्र्यादिको ग्रहाणां च योगो ब्रह्मेति लक्षितः ॥१४॥ योगःस्वजातियो ग्राह्यः कारक याति यो ग्रहः ॥ बहूनामधिको भागः सोऽपि ब्रह्मा ग्रहउच्यते ॥१५॥ राहोर्ब्रह्मत्वयोगेन अधिकारी यदा भवेत् ॥ विपरीत विजानीयात्सर्वेषु न्यूनभागकम् ॥१६॥ इत्येवमपि पूर्वोक्त ब्रह्मणा ग्रहकारकात् ॥ रन्ध्राधीशो ष्टमस्थो वा जात्यप्राणैक्यबलान्वित. ॥१७॥ द्वौ ब्रह्मा विपरीतार्थे ह्यथवा बहुब्रह्मणा ॥ सामान्यभागांतरे हि कतमो ग्राह्यमाणकः ॥१८॥ सर्वे भागसमानास्तु अग्रहात्सग्रहो बली ॥ इति न्यायेन विज्ञेय बलवान् ब्रह्मणोच्यते ॥१९॥ ब्रह्मत्वेन प्रधानेन ब्रह्मकार्यं करोत्यपि ॥ स च ब्रह्मा ग्रहो प्राह्यः पुरा शम्भुप्रणोदितः ॥१२०॥

तथा ब्रह्मा के लक्षण से युक्त और अनुपात से जो बली हो। शनि, राहु अथवा केतु को भी गणना करके जो छठा हो या छठे का स्वामी हो वह भी 'ब्रह्मा' होता है। अनेक ग्रह 'ब्रह्म लक्षण युक्त हो तो कौनसा ग्रह लेना चाहिये॥११३॥ इस संदेह मे निर्णय कहते हैं। २–३ ग्रह ब्रह्म लक्षण से युक्त हो तो जो आत्मकारक समान जातीय हो अथवा सब ब्रह्मलक्षण ग्रहो मे अधिक अंशवाला हो॥११५॥ राहु के ब्रह्मत्व लक्षण–सम्पन्न होने पर (अनेको मे अंशाधिक्य निर्णय स्थल मे, वक्री होने से कम अंश ही अधिक जानना) सब ग्रहो (ब्रह्मलक्षणसम्पन्न ग्रहो) से यदि कम अंश हो तो राहु भी ब्रह्मा होता है॥११६॥ इस प्रकार ग्रहो मे तो आत्मकारक से तथा अष्टमाधीश या अष्टमभावस्थ, अथवा पूर्वोक्त सजातीयता या बलाधिक्य से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना॥११७॥ दो अथवा अनेक ब्रह्मा प्राप्त हो तो जो अधिक अंशवाला हो वह ब्रह्मा॥११८॥ और अंश भी समान हो तो "अग्रहात् सग्रहो ज्यायान् सग्रहादधिकग्रह ।" इस नियम से 'ब्रह्मा' का निर्णय करना चाहिये॥ ब्रह्मस्वरूप होने से प्रधान है और ब्रह्मशक्ति के समान कार्यकारी होने से इस ग्रह को ब्रह्मा कहा गया है॥१२०॥

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्ममाहेश्वरौ ग्रहौ ॥ विशेषेण फलं ब्रूयात्तथापि द्विजनंदन ॥२१॥
ब्रह्मग्रहाश्रितेशस्य दशादि परिचिंतयेत ॥ माहेश्वरर्क्षपर्यन्तं जातकस्यायुषि द्विज ॥२२॥
तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशिरंतर्गते मृतिः ॥ चरश्च स्थिरपर्यन्तं दशाया चिंतयेद्द्विज ॥२३॥ तथा
महादशाया च आयुर्दाय विलोकयेत् ॥ विंशोत्तर्यादिकं चैव यथान्यायेषु योजयेत् ॥२४॥
माहेश्वरश्च यो राशिरष्टमेशाश्रयी द्विज ॥ तत्तद्राशित्रिकोणेषु राशावंतर्गते मृतिः ॥२५॥
अथाब्द इति निर्देशात्तत्तद्राशिदशाक्रम: ॥ अब्दो द्वादशधा भागे अंतरैकैकराशि च ॥२६॥
एकैकाब्दांतरदशा विज्ञेया गणितागमे ॥ द्वादशाब्दे तथाधिक्ये भाग सूर्येण दापयेत् ॥२७॥
प्राप्तेंतरदशा ज्ञेया न्यूनाधिक्यं न जायते ॥ अब्दाना द्वादशाधिक्ये भानुराश्यंतरं दशा ॥२८॥
दशाब्दे द्वादश न्यून यस्मिन् राशौ दशा द्विज ॥ भागद्वादशमध्ये च सम्यक् तदनंतरम् ॥२९॥
महादशाक्रमेणैव चालनीयेति भाषितम् ॥ अर्कभागेंतरदशानयनं द्विजसत्तम ॥१३०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे रुद्रमाहेश्वरब्रह्मग्रहलक्षणकथनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

हे द्विजनन्दन ! हमने ये 'ब्रह्मा' और 'महेश्वर' नामक ग्रह कहे। अब इनका फल कहते हैं॥१२१॥ ब्रह्म ग्रह जिस राशि मे हो उसके स्वामी की दशा का विचार करे। माहेश्वर राशि की दशा तक जातक का जीवन जानना ॥१२२॥ राशिदशा मे तत्तत् राशि के त्रिकोण राशि की अन्तर्दशा मे मृत्यु कहना। चरराशि का जन्म हो तो स्थिर राशि तक जीवन है॥१२३॥ ग्रहदशाओ मे, महादशा मे आयु के विचार करने के लिये विंशोत्तरी आदि दशाओ में विचार करना चाहिये॥१२४॥ अष्टमेशस्थित राशि की दशा मे-माहेश्वर के अन्तर मे या उससे त्रिकोण राशि दशा के अन्तर मे 'मृत्यु' कहना॥१२५॥ इस ब्रह्मा का वर्ष देखने के लिये "अथाब्द०" इस वचन के अनुसार जो राशि दशा है, उसमे १२ का भाग देने से अर्थात् बारह भाग करने से १–१ भाग की १–१ राशि जानना ॥१२६॥ और एक एक राशि का १–१ वर्ष जानना। इस प्रकार १–१ वर्ष की अन्तरदशा प्राप्त होगी। १२ से अधिक या कम होने पर १२ का भाग देना॥१२७॥ जो वर्ष प्राप्त हो उसमे मृत्यु जानना, उसमे न्यूनाधिक्य नहीं होता। यदि वर्ष १२ से अधिक हो तो सूर्य राशि के अन्तर मे मृत्यु कहना॥१२८॥ अथवा दशावर्षों मे १२ कम कर देना। जो शेष रहे उस राशि की दशा जानो। १२ भाग के भीतर ही दशा होती है॥१२९॥ महादशा के क्रम से ही आगे भी विचार करना। और १२ भाग के अनुसार अन्तरदशा का विचार करना। (सम्भवत यहा ग्रन्थ का कुछ भाग छूट गया है) ॥१–१३०॥ ग्रहलक्षण समाप्त ॥

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शा० पूर्वखडे भावप्रकाशिकाया रुद्र, माहेश्वर, ब्रह्मग्रहलक्षण नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

—

अथ पित्रादिनिर्याणमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि पित्रादेश्च द्विजोत्तम ॥ योग निर्याणका स्यात तथा शम्भुप्रणोदितम् ॥१॥
लग्नसप्तमयोर्मध्ये यो राशिर्बलवान्द्विज ॥ तस्य राशे समारम्य क्रमेण पूर्ववद्द्विज ॥२॥
प्रवर्तकदशारीत्या रुद्रशूलदशान्तरे ॥ भविष्यति पितुर्मृत्युर्निर्विशंकद्विजोत्तम ॥३॥

पित्रादिनिर्याण

हे द्विजोत्तम! अब हम पित्रादिनिर्याण सुने अनुसार कहते है॥१॥ लग्न तथा सप्तम से जो राशि बलवान् हो, उस राशि से विचार करके पितृ स्थान दशम के प्रवर्तक ग्रह से रुद्रशूल दशा मे पितृमृत्यु होती है॥२॥३॥

अथमातुर्निर्याणम्—लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली राशि चतुर्थक ॥ तस्या शूलदशाया च मातुर्मृत्युर्न संशय ॥४॥
मातृनिर्याण—लग्न या सप्तमभाव मे जो इन भावो की बलवान् राशि हो उससे चतुर्थ भाव की रुद्रशूल दशा मे माता की मृत्यु होती है॥४॥

भ्रातृनिर्याणम्—लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि बली वीक्षेत्तृतीयकम् ॥ तस्या शूलदशाया च भ्रातृनिर्याणमेव च ॥५॥
भ्रातृ निर्याण—लग्न से या सप्तम से देखना इनमे जो बली हो और तीसरे भाव को देखता हो। उसकी शूल दशा मे छोटे भ्राता का निर्याण होता है॥५॥

भगिनीभगिनीपुत्रनिर्याणमाह—लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि राशिपचमके बली ॥ तस्या शूलदशाया च भगिनीपुत्रयोर्मृति ॥६॥
भगिनी तथा भागिनेय निर्याण—लग्न से या सप्तम से पचमभाव मे से जो बलवान् हो उसकी शूलदशा मे भगिनी तथा भागिनेय की मृत्यु होती है॥६॥

ज्येष्ठभ्रातुर्निर्याणम्—लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि एकादशे बली द्विज ॥ तस्या शूलदशाया च निर्याण ह्यग्रजस्य च ॥७॥ लग्नाद्वा सप्तमाद्वापि नवराशिर्बली द्विज ॥ निर्विशङ्कं भवेत्तस्य शम्भुना कथित पुरा ॥८॥
ज्येष्ठभ्रातृनिर्याण—लग्न से या सप्तम से एकादश स्थान मे जो बलवान् हो उसकी शूलदशा मे ज्येष्ठ भ्राता का निर्याण होता है॥७॥ लग्न से या सप्तम से नवमभाव मे जो बली हो उसकी शूलदशा मे ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु होती है॥८॥

मातापित्रो कारकाभ्या चिंतयेत्पूर्ववद्द्विज ॥ तदायुर्निधन चापि दीर्घादीना प्रभेदत ॥९॥
मातृमार्गवयोर्मध्ये सद्वीर्याधिक्यतो द्विज ॥ ग्रहादित्यादिरीत्या च स खेट पितृकारक ॥१०॥
चन्द्रमगलयोर्मध्ये तथैव रविशुक्रयो ॥ बलेन रहित सोऽपि पापग्रहनिरीक्षित ॥११॥

पित्रादिकानां भवते यथाक्रम द्विजोत्तम ॥ उभयोर्बलसाम्ये च उभौ पित्रादिकारकौ॥१२॥
द्विविध चिंतयेतत्र प्राण्यप्राणिविभेदत: ॥ पित्रादिकारकस्यैव प्राणिफल वदाम्यहम् ॥१३॥
पित्रादिकारके विप्र शुभग्रहनिरीक्षिते॥ मातृकारकाश्रयीभूतराशिरेतत्त्रिकोणगे॥१४॥ दशायां
निधन वाच्य मातापित्रोरथ भ्रयम् ॥ इति प्राणिकारकस्य तवाग्रे कथित फलम् ॥१५॥
अप्राणिकारकस्यैवमष्टमेशो बलान्वित: ॥ तस्याश्रयीभूतराशित्रिकोणे निधन भवेत् ॥१६॥

मातृकारक से माता की, पितृकारक से पिता की योगानुसार प्रथम दीर्घ मध्य अल्प आयु का विचार करके पूर्वोक्त चतुर्थ और दशम भाव से इनकी आयु तथा मृत्यु का विचार करें॥९॥ सूर्य और शुक्र मे से जो बली हो और अशो मे अधिक हो वह पितृकारक है॥१०॥ मगल और चन्द्रमामे से तथा सूर्य शुक्रमे से जो बलवान् न हो,पापग्रहदृष्ट हो वह भी पितृ, मातृकारक होता है॥११॥ और दोनो का समान बल हो तो दोनो ही कारक होते है ॥१२॥ और इससे प्राणी अप्राणी भेद से दोनो विचार करे। इन पित्रादि कारक का फल कहते है॥१३॥ पित्रादि कारक के शुभग्रहदृष्ट होने स मातृकारक की आश्रयी राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि की दशा मे माता पिता भ्राता की मृत्यु कहना॥ इस प्रकार बलवान् कारक का फल कहा गया॥१५॥ तथा निर्बल कारक का अष्टमेश यदि बली हो तो तद् स्थित राशि के त्रिकोण मे निधन होता है॥१६॥

यदा रध्रेश वीर्याढ्य तच्छूले निधन द्विज ॥ पितृमातृकारके च शूले निधनमेव च ॥१७॥ यद्वा प्राणिकारकस्य ह्येव ह्यन्तरेऽपि च ॥ फल वै निर्दिशेद्विप्र पर तद्भावमारके ॥
अप्राणिकारकफल निर्दिशेद्द्वयमने द्विज ॥१८॥ सर्वान् प्रकारानित्येव चितयेद्रुद्रशूलवत् ॥१९॥
अल्पाद्यायुर्योगके चेदायुर्दनियन द्विज ॥ दशाशावारभेदेन ह्यायुर्दाय च पूर्ववत् ॥२०॥
राश्यादी निर्णय चादौ तद्विशेषफलाय वै ॥ तन्वादिव्ययभावेषु भाव तत्तत्समुच्चितम् ॥२१॥
तत्तत्कारकमाश्रित्य राश्यारूढ विचितयेत् ॥ द्वारबाह्यादिक सर्व राश्याद्य द्विजसत्तम ॥२२॥
अधुना सप्रवक्ष्यामि पितुर्निधनहेतवे ॥ विशेषक दर्शयति पुनरुक्त च वै द्विज ॥२३॥ रविर्सौच:
क्रियायोगे लग्नाद्विष्कर्षौ स्थितौ ॥ बुधसूर्याश्रयीभूतलग्नभेदे दशान्तरे ॥२४॥

और यदि अष्टमेश बली हो तो उसकी शूलदशा मे निधन होता है॥ अथवा पितृ मातृ कारक की दशा मे (शूलदशा मे) निधन होता है॥१७॥ अथवा बलवान् कारक की शूलदशा मे मृत्यु होती है॥१८॥ इसी रीति से रुद्र ग्रह के समान पूर्वोक्त सभी प्रकारो स इसम भी विचार करना चाहिए॥१९॥ अल्प मध्यादि आयु के विचार मे भी पूर्व के समान आयुयोग स आयु निश्चय करना। पश्चात् दशा की कथितरीति से दशा देखना॥२०॥ तत्तत् भावो के विचार करने के लिए राशि आदि का निर्णय उनके स्वामी आदि का विचार जैसा प्रथम कहा है उनका विषयविशेष का विचार करना, इसी प्रकार १२ भावो का विचार करना॥२१॥ तथा कारक विचार एव आरूढ लग्न विचार तथा द्वार, बाह्य राशि विचार आदि पूर्ववत् इसमे भी करना॥२२॥ अब पिता की मृत्यु का ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ विशेष विचार कहते है॥२३॥ इस कार्य का कर्ता सूर्य है वह सूर्य ... त्रिकोण स्थान मे स्थित हो (यह

विचार मेष लग्न मे करना) तो बुध या सूर्य स्थित राशि की दशा मे मृत्यु होती है॥२४॥

लग्नभूतस्य मेषस्य सिंहस्यापि दशान्तरे ॥ वक्तव्यं पितृनिधनं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२५॥ यदि लग्ने पापखेटा मेषराशौ रविस्तथा ॥ योगे मेषमहापाके चाप्यामन्तर्गते मृतिः ॥२६॥ अधुना सम्प्रवक्ष्यामि तवाग्रे द्विजनंदन ॥ बाल्ये च पित्रोर्मरणं मयोक्तं च विशेषतः ॥२७॥ पित्रो कारकयोर्विप्र प्राण्यप्राणिहीनोऽपि वा ॥ व्यकर्ति पापयोगे च शुभयोगविवर्जिते ॥२८॥ दशाब्दान्त्यूनमित्येव पित्रोर्मृत्युर्यथा क्रमम् ॥ रविवृष्ट्याशुभ दृष्टौ नाय योगो द्विजोत्तम ॥२९॥ रव्यारूढविलग्नेऽस्मिन्पित्रोर्भावं विचारयेत् ॥ तद्दशाया फलं वाच्यं पित्रोर्दुःख सुखादिकम् ॥३०॥

तथा लग्न मेष मे लग्न की राशि मेष की सिंह की दशा म पिता की मृत्यु कहनी चाहिए॥२५॥ यदि लग्न मे पापग्रह और मेषराशि म सूर्य हो इस योग मे मेषराशि की महादशा मे और के द्रराशि के अन्तर मे पिता की मृत्यु कहना॥२६॥ अब हम बाल्यावस्था म जिन योगो से पितृमरण होता है वे योग कहते है॥ मातृकारक तथा पितृकारक का निर्णय करके प्राणीरुद्र तथा अप्राणी-रुद्र का निर्णय करे और योगो का विचार करे यदि सूर्यरहित पापग्रहो का योग हो और शुभग्रहो से योग नही हो॥ प्रथम शून दशा म ही माता तथा पिता की मृत्यु जानना॥२८॥ सूर्य दृष्टि युक्त अशुभ दृष्टि हो तो यह योग नही समझना ॥२९॥ इसी प्रकार सूर्य के आरूढ लग्न मे भी माता पिता की मृत्यु का विचार करे॥ और आरूढ लग्न की दशा तथा आरूढ लग्न म तत्तत भावो म माता पिता के सुख दुःख आदि का भी विचार करे॥३०॥

अथ कलत्रनिधनमाह-कलत्रकारके खेटस्तदा स्त्रीराशिचितलम् ॥ तत्त्रिकोणदशायां च कलत्रनिधनं भवेत् ॥३१॥

भार्यानिधन विचार-प्रथम भार्याकारक ग्रह का निर्णय करे। पश्चात् उसम सप्तमभाव का विचार करे। उस सप्तमभाव या सप्तमभाव से त्रिकोण राशि की दशा म मृत्यु का विचार करना॥३१॥

अमात्यनिधनमाह-तत्तत्कारकाश्रये च त्रिकोणर्क्षदशान्तरे ॥ तेषां च मातुलादीनां निधनं भवति ध्रुवम् ॥३२॥ एवं भावकलत्रादितद्दशारूढपत्रके ॥ चिंतयेदायु सामर्थ्यं सर्व फलसमानकम् ॥३३॥ सप्राज्ञ कारकाद्वापि तृतीये पापखेचरे ॥ युते दृष्टेऽथवा विप्र दुष्ट मरणमुच्यते॥३४॥ तत्तत्कारकतदीशात्तृतीये पापयोगकृत्॥तेषां तेषां प्रवक्तव्यं दुष्टं मरणमेव च॥३५॥ तत्तद्भावात्कारकेशात्तृतीये शुभदृष्टियुक्॥तेषां तेषां शुभैर्योगैर्मरणं भवति द्विज॥३६॥ शुभाशुभद्वये योगे दृष्टो नापि तृतीयगे ॥ शुभाशुभात्मकं विप्र मरणं भवति ध्रुवम् ॥३७॥

मातुल आदि की मृत्यु का विचार-जिसके निधन का विचार करना हो उसके कारक का

राशि अथवा त्रिकोण राशि की दशा या अन्तरसे उनके निधन का निर्देश करे॥३२॥ इसी प्रकार भार्या आदि के भाव से तथा उन भावो के आरूढ लग्न से प्रथम आयु अल्पादि का निर्णय करे। पश्चात् फलाफल तथा निधन का विचार करे॥ लग्न से या कारक (आत्मकारक) से तीसरे भाव मे पापग्रह हो तो कष्ट मे मृत्यु होती है॥३४॥ उस २ सम्बन्धी कारक से या कारकेश से तृतीयभाव मे यदि पापयोग हो तो उन २ सम्बन्धी का कष्टकारी निधन कहे॥३५॥ तथा यदि उस भाव के कारकेश से तृतीय भाव पर यदि शुभदृष्टि हो तो उन २ सम्बन्धियो का मरण शुभयोग से होता है॥३६॥ यदि शुभ या अशुभ कोई भी दृष्टि नही हो तो साधारण रूप से मृत्यु जाने॥३७॥

अथ मरणनिमित्तान्याह

तृतीये भानुना दृष्टे तथा युक्ते बलाढ्यके ॥ राजहेतोश्च मरण निर्विशङ्क द्विजोत्तम ॥३८॥ तृतीयचन्द्रेण युते षष्ठे वा पश्यतो मृतिः ॥ तृतीयशनिराहुभ्या दृष्टे वापि युतेथ वा ॥३९॥ विषार्तिमरण वाच्य जलाद्वा वह्निपीडनात् ॥ गर्तादुच्चात्प्रपतन बन्धनाद् वा मृतिर्भवेत् ॥४०॥ तृतीये चन्द्रमान्दौ च षष्ठे वापि युते द्विज ॥ कृमिकुष्ठादिना तस्य मरण च विनिर्दिशेत् ॥४१॥ तृतीये गुरुणा दृष्टे युक्ते शोकाद्विना मृतिः ॥ तृतीये भृगुपुत्रदृष्टे मेहरोगेण वै मृतिः ॥४२॥ बहुयुक्ते तृतीये च बहुरोगयुता मृतिः ॥ तृतीयके तु सत्खेटयोगे दृष्टियुतेथ वा ॥४३॥ तथैव चन्द्रयोगे च तत्तद्रोगेण वै मृतिः ॥ अनेन योगभावेन तस्य मृत्यु सुनिश्चित ॥४४॥

मरण निमित्त

तृतीयभाव यदि बलवान् सूर्य से दृष्ट हो तो मृत्यु मे कारण राजसम्बन्धी होता है॥३८॥ इसी प्रकार तीसराभाव चन्द्रमा से युत या दृष्ट अथवा षष्ठभाव मे चन्द्रमा हो तो राजनिमित्त ही मृत्यु जानना॥३९॥ तृतीयभाव शनि राहु से युक्त अथवा दृष्ट हो तो विष से या अग्नि, जल से मृत्यु होती है॥ अथवा ऊचे स गिरकर या गढे मे गिरकर या फासी से मृत्यु होती है॥४०॥ तृतीय भाव मे चन्द्रमा तथा मान्दी हो अथवा षष्ठभाव मे हो तो गलितकुष्ठ आदि या व्याघ्र आदि से मृत्यु हो॥४१॥ तृतीयभाव गुरु स युक्त अथवा दृष्ट हो तो चिन्ता आदि से तथा शुक्रयुक्त हो तो प्रमह रोग स मृत्यु होती है॥४२॥ यदि अनक ग्रह युक्त दृष्ट हो तो अनेक रोगो स मृत्यु होती है॥४३॥ तृतीय भाव सौम्यग्रहोसे युक्त दृष्ट हो अथवा चन्द्रमा से युत दृष्ट हो तो उक्त तत् २ रोगो से मृत्यु होती है॥४४॥

अथ निधनदेशभेदमाह

तृतीये शुभयोगेन शुभदेशे मृतिर्भवेत् ॥ पापेन कीकटे देशे मिश्रे मिश्रस्थले मृतिः ॥४५॥ तृतीये गुरुशुक्राभ्या योगे ज्ञानेन वै मृतिः ॥ गुरुशुक्रातिरिक्तान्ययोगे शिथिलता मृतौ ॥४६॥ मिश्रे मिश्रा मृतिरिति एव कर्माणि विप्र भो ॥ कर्मभावे विशेषेण फलदाता द्विजोत्तम ॥४७॥ लग्नद्वादशमध्ये च शन्यादित्रितयर्यदि ॥ स्थित पित्रोर्न सस्कार कुर्वीत निजहस्तत ॥४८॥ लग्नादीना च भावाना पूर्वार्द्धे द्वादशादिकम् ॥ परार्द्धे स्थितमन्यादि बोधितेपि न सशय ॥४९॥

लग्नादि यस्य मध्ये तु शुभग्रहनिरीक्षितम् ॥ नामयोगं विजानीयात्पुरा शंभुप्रणोदितम् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडे निधनकथन नाम त्रयोविंशतितमोऽध्यायः ॥२३॥

निधन देशभेद

तृतीयभाव शुभग्रह युक्त हो तो शुभदेश मे मृत्यु होती है। पापग्रह युक्त हो तो दुष्ट देश में। तथा दोनों प्रकार के ग्रह हों तो मिश्र देश (अच्छे बुरे मिश्रित देश) में मृत्यु होती है॥४५॥ तृतीयभाव में गुरु या शुक्र का योग हो तो ज्ञानावस्था में, इनसे अन्य शुभग्रह योग हो तो शरीर धीरे २ क्षीण होकर मृत्यु होती है॥४६॥ तथा तृतीयभाव में शुभपाप मिश्र योग हो तो मिश्रितभाव से। हे विप्र! इस प्रकार कर्मानुसार मृत्यु होती है॥ कर्म के ही फलदाता से सूर्यादि ग्रह है॥४७॥ लग्न से बारहवें स्थान में यदि शनि, राहु, केतु हो तो जातक को अपने माता पिता का कर्मकाण्ड करने का सुयोग नहीं प्राप्त होता॥४८॥ लग्नादि बारह भावों में पूर्वार्द्ध और पहार्द्ध की छः२ राशियां है। पूर्वार्द्ध में शन्यादि का दृष्टियोग हो तो पूर्वोक्त फल होता है। परार्द्ध में अन्य दृष्टियोग हो तो पूर्वार्द्ध का शन्यादि योग व्यर्थ होता है॥४९॥ लग्न आदि भावों में शुभग्रह की दृष्टि जिस भाव पर हो उसका नाम मृत्यु के बाद प्रसिद्ध होता है॥५०॥

इति श्री० बृ० पा० हो० शा० पू०ख०सा० निधनयोगकथन नाम त्रयोविंशतितमोऽध्याय ॥२३॥

अथ राजयोगाध्यायः

पराशर उवाच–अथातः संप्रवक्ष्यामि राजयोगादिकं परम् ॥ ग्रहाणा स्थानभेदेन राशिदृष्टिव-शात्फलम्॥१॥ तपः स्थानाधिपो मंत्री मंत्राधीशो विशेषतः ॥ उभावन्योन्यसदृष्टौ जातश्चेदिह राज्यभाक् ॥२॥ यत्र कुत्रापि संयुक्तौ तौ वापि समसप्तमौ ॥ राजवंशोद्भवो बालो राजा भवति निश्चितम् ॥३॥ वाहनेशस्तथा माने मानेशो वाहने स्थितः ॥ बुद्धिधर्माधिपाभ्यां तु दृष्टश्चेदिह राज्यभाक् ॥४॥

राजयोगाध्याय

अब श्रेष्ठ राजयोग आदि कहते हैं। उन योगों में ग्रहों के स्थान भेद से राशि और दृष्टि द्वारा फल कहा जायगा॥१॥ सूर्यादिग्रहों में स्थान बल से एकादश स्थान का स्वामी मंत्री होता है। और विशेष करके मंत्राधीश (पंचमाधीश) मन्त्री पद में कहा जाता है। ये दोनों परस्पर दृष्टियुक्त हों तो जातक राजा होता है॥२॥ वे दोनो किसी भी श्रेष्ठस्थान में एक साथ हों, अथवा आपस में सप्तमस्थान में हों तो जातक (राजवंशी हो तो) निश्चय राजा होता है॥३॥ चतुर्थस्थान का स्वामी दशमभाव में, और दशमेश चतुर्थभाव में हो तथा पंचम नवम के स्वामी से दृष्ट हो तो राज्यभोगी होता है॥४॥

सुतेशकर्मेशसुखेशलग्ननाथा यदा धर्मपसंयुताश्चेत् ॥ नृपोत्तरश्चेदिह वारणाढ्यः स्वतेजसा

व्याप्तदिगंतरालः ॥५॥ सुखकर्माधिपौ चैव मन्त्रिनाथेन संयुतौ ॥ धर्मेशेनाथ वा युक्तौ जातश्चेदिह राज्यभाक् ॥६॥ सुतेश्वरौ धर्मपसंयुतश्चेल्लग्नेश्वरेणापि युतो विलग्ने ॥ सुखेऽथ मानगृहेऽथ वा स्वाद्राज्याभिषिक्तो यदि राजवंश्यः ॥७॥ धर्मस्थाने गुरुक्षेत्रे स्वगृहे भृगुसंयुते ॥ पञ्चमाधिपसंयुक्ते जातश्चेदिहराज्यभाक् ॥८॥ निशार्द्धाच्च दिनार्द्धाच्च परं सार्द्धद्वि नाडिका ॥ शुभा तदुद्भवो राजा धनी वा तत्समोपि वा ॥९॥ चंद्रःकविं कविश्चन्द्रं पश्यत्यपि तृतीयगः ॥ शुक्राच्चंद्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान् ॥१०॥

पञ्चमेश, दशमेश, तृतीयेश और लग्नेश ये सब यदि नवमेश से युक्त हो तो जातक यदि राज्यवश मे हो तो तेजस्वी, यशस्वी तथा हाथी आदि युक्त राजा होता है॥५॥ सुख (४) कर्म (१०) के स्वामी यदि पञ्चमेश से युक्त हो अथवा नवमेश से युक्त हो तो जातक राज्यभोगी होता है॥६॥ पञ्चमेश यदि लग्नेश और नवमेश से युक्त हो और लग्न मे स्थित हो या चतुर्थ अथवा दशम मे हो तो राजा होता है॥७॥ नवमभाव मे गुरु की राशि हो और गुरु स्वगृही तथा शुक्रयुक्त हो एवं पञ्चमेश से युक्त हो तो राजा होता है॥८॥ दिनार्द्ध और रात्र्यर्द्ध से २॥ घडी (१ घण्टा) के भीतर जिसका जन्म हो वह राजा या धनी होता है॥९॥ तृतीयभाव मे स्थित चन्द्रमा या शुक्र परस्पर देखते हो। अथवा शुक्र से चन्द्रमा तीसरे या चन्द्रमास से शुक्र तीसरे हो तो जातक धन वाहन युक्त होता है॥१०॥

अथ द्वादशयोगमाह

लग्नवित्तौ स्वदुश्चिक्यौ त्रितुर्यौ तुर्यपंचमौ ॥ द्विषात्मजौ षष्ठमारौ स्त्रीरन्ध्रौ मृतिभाग्यकौ ॥११॥ धर्मकर्मौ खलाभौ च रिष्फलाभौ तनुव्ययौ ॥ पुष्पकला सामयोगाद्य राजमृत्य चमूपकम् ॥१२॥ आमात्यं दारुणं कर्म राजयोग प्रियामृतिम् ॥ भाग्यव्ययं राजयोग भूमिद्रव्यमृणव्ययम् ॥१३॥ वित्तहानिर्द्धादशैते योगा वै सर्वदा स्मृता ॥१४॥

अथ चतुर्विधसंबंधमाह

प्रथमः स्थानसंबंधो दृष्टिजस्तु द्वितीयकः ॥ तृतीयस्त्वेकतो दृष्टिः स्थित्येकत्र चतुर्थकः ॥१५॥ अन्योन्यगौ तथा स्वे स्वे स्युतावन्यथे स्थितौ पूर्वेक्षितौ मिथो वापि चैकवर्गगतौ यदा ॥१६॥

अथाग्रे राजाऽमात्ययोगादिबाधकमाह

तदा योगो भवेत्तत्र विबलो नैव योऽसकृत् ॥ शत्रुयुक्तेक्षितो पापवीक्षितो नैव योगकृत् ॥ व्ययमृत्युपडापस्थावथवा समसयुतौ ॥१७॥ यदाऽधीशौ तदाप्यत्र भवतो नैव योगदौ ॥ राजामात्यादियोगानां वक्रगौ नाशकारकौ ॥१८॥

द्वादश योग

१२ योग-अंको मे लिखे हुए भावो के स्वामी का परस्पर स्थान या दृष्टि सम्बन्ध होने से पुष्कल नाम के १२ योग होते है। १।२-२।३-३।४-४।५-५।६-६।७-७।८-८।९-९।१०-

१०।११–११।१२–१२।१ क्रम से इनका फल यह है–
लाभयोग, राजा की नौकरी, फौज में बड़ा पद, राजा का मंत्री या मंत्री तुल्य, कठिन कर्म करनेवाला, राजा या धनी, स्त्री की मृत्यु धनहीन राजयोग, भूमि और द्रव्य, खर्चा और कर्जा और धन हानि ॥ ये १२ योग है॥११॥१२॥१३॥१४॥

ग्रहों के चार प्रकार के सम्बन्ध

(१) स्थान सम्बन्ध (२) दृष्टि सम्बन्ध (३) एकत्र दृष्टि सम्बन्ध (४) एकत्र स्थिति सम्बन्ध ॥ इनमें विशेष स्थान-सम्बन्ध में परस्पर एक दूसरे के स्थान में होना अथवा अपनी राशियों में किसी राशि का दोनों में होना अथवा मित्र की राशि में एक साथ दोनों का होना अथवा नवमांश आदिक वर्ग में एक वर्ग में होना। इसी प्रकार दृष्टि सम्बन्ध के भी भेद जानना ॥१५॥१६॥

राजा मन्त्री योग के बाधक योग–जहां राजयोग हो किन्तु ग्रह बलहीन हो या शत्रुग्रह से दृष्ट या युक्त हो अथवा पापग्रह देखते हो तो राजयोग का फल नहीं होता॥ अथवा ६।८।११।१२ इन स्थानों में हो तो राजयोग का फल नहीं होता॥१७॥ अथवा राजयोग कारक ग्रह वक्री हो तो नाशकारक होते है॥१८॥

अथ पारिजातादिशुभाशुभविचारमाह्

त्रिषडायाष्टरिष्फेशाः पारिजाते व्यवस्थिताः ॥ दायिकाम्यभये भावे यत्र मे ये विचारिताः ॥१९॥ द्वितीये चोत्तमास्ते ते तृतीये चान्यदा मताः ॥ चतुर्थे ते च राजानः पंचमे गुरवो मताः ॥२०॥ भूदेवाश्च तथा षष्ठे देवा ज्ञेयाश्च सप्तमे ॥ अष्टमे पशवो ज्ञेया दुःखदाश्चात्र जन्मनि ॥२१॥ दुःस्था ६।८।१२ श्चैव भवन्त्येते तवांतेनैव बाधकाः ॥ केन्द्रकोणस्थिताश्चैव बाधकाश्चात्र जन्मनि ॥२२॥ विषमे च भवेत्स्त्रीणां समे वै पुरुषो मतः ॥ षष्ठे वै चोरितं द्रव्यं ह्यष्टमे हननं कृतम् ॥२३॥ हनन हरणं रिष्फे तृतीये कैतवं कृतम् ॥ पौंश्चल्यं बधने प्रोक्तकृतघ्नत्वं भवेत्कृतम् ॥२४॥

पारिजात आदि योग

३।६।११।८।१२ इन स्थानों के स्वामी पारिजात योग में पहले जैसा कहा है वैसे स्थित हो तो पारिजात योग होता है तथा पूर्वोक्त स्थानों के स्वामी द्वितीय स्थान में हो तो उत्तम हो तृतीय स्थान में हो तो मध्यम, चौथे में हो तो राजा के समान पंचम भाव में हो तो गुरु, षष्ठ भाव में हो तो भूदेव, सप्तम में हो तो देव आठवें में पशु छठे–बारहवें में हो तो बाधक दुःखदायी, जन्म में हो तो दुःखद केन्द्र और त्रिकोण में हो तो बाधक। यह योग स्त्रियों के लिये विषम राशि में और पुरुषों के लिये सम राशि में देखना चाहिये। इन योगों का फल–स्त्रीजातक के लिये उपर्युक्त ग्रह छठे घर में हो तो चोरी करनेवाली, आठवें में हो तो हत्यारिणी, बारहवें हो तो हत्या और चोरी करनेवाली तीसरे हो तो धूर्त, सप्तम हो तो व्यभिचारिणी और कृतघ्न होती है॥१९॥२०॥२१॥२२॥२३॥२४॥

सुखाधिपात् ॥ मन्त्रेशोऽमात्यता याति सप्तमाधीशयोगतः ॥३९॥ कर्मेशस्य तु योगेन राजा साचिव्यतामियात् ॥ केन्द्रधर्मेशयोर्योगे राजा वै राजवदितः ॥४०॥ धर्मकर्माधिपौ चैव व्यत्यये तावुभौ स्थितौ ॥ युक्तश्चेद्वै तदा वाच्य सर्वसौख्यसमन्वितः ॥४१॥ पारिजाते स्थितौ तौ तु नृपो लोकानुरंजकः ॥ उत्तमो चोत्तमो भूपो गजवाजिरथादिमान् ॥४२॥ गोपुरे नृपशार्दूलो पूजिताग्निर्नृपैर्भवेत् ॥ सिंहासने चक्रवर्ती सर्वक्षोणीप्रपालकः ॥४३॥ अस्मिन्योगे हरिश्चन्द्रो मानवश्चोत्तमस्तथा ॥ बलिर्वैश्वानरो राजा अन्ये चैव तु चक्रया ॥४४॥ कलौयुगे च भविता तथा राजा युधिष्ठिरः ॥ भविता शालिवाहश्च तथा विजयाभिनंदनः ॥४५॥ नागार्जुनस्तथा भूपस्तदन्ये चैव गोपुरे ॥ पारावताशकेन्ये च जाता मन्वादयस्तथा ॥४६॥ देवलोके तु प्रथमे हरेश्चैवावतारणम् ॥ मत्स्यादिकल्किपर्यन्ता सर्वे वर्गोद्भवा मता ॥४७॥ द्वितीये देवलोके तु ज्ञेयाश्चेन्द्रादयः परे ॥ ऐरावते च प्रथमे जातः स्वायम्भुवो मनुः ॥४८॥ एवं सर्वप्रकारेण ज्ञात्वा चैवविचक्षणः ॥ कोणकेन्द्रादिनाथाना योगः सर्वविधायकः ॥४९॥ चतुःकेन्द्राधिपौ द्वौ च कोणपौ च धनाधिपः ॥ ऐरावताविमस्यास्तेऽकुर्वल्लोकोत्तरोत्तरम् ॥ अनेनैव प्रकारेण वेत्ति सर्वत्र बुद्धिमान् ॥५०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डसारांशे राजयोगादिविचारकथनं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

विशेष योग

अब राजयोग मे विशेष योग कहते है उन्हे यथार्थ रूप से जानना चाहिये। त्रिकोण स्थान लक्ष्मी का स्थान है और केन्द्र विष्णु का स्थान है। इनके सम्बन्ध से ही राजयोग होता है। केन्द्रेश और पचमेश के योग से मत्री योग होता है और यह योग पारिजात योग के नियमानुसार हो तो प्रबल राजयोग और प्रबलमत्री योग होता है। लग्नेश का धनेश से योग हो तो राजयोग नही होता है। लग्नेश का सुखेश से सम्बन्ध हो तो एक योग सुखेश का पचमेश से अथवा सप्तमेश से योग हो तो यह अमात्य योग है अर्थात मत्री योग है। लग्नेश का दशमेश मे योग हो तो राजा अथवा मत्री होता है। नवमेश का केन्द्रेश से योग हो तो राजा होता है। नवम और दशम के स्वामी परस्पर एक दूसरे के स्थान मे अथवा दोनो नवम मे या दशम मे हो तो सम्पूर्ण सम्पत्तिशाली होता है। यदि पारिजात योग भी होता हो तो निश्चय राजा होता है। हाथी घोडे आदि युक्त उत्तम राज्य भाग होता है। गोपुर अश मे हो तो राजाधिराज होता है। सिंहासनाश मे हो तो चक्रवर्ती सम्पूर्ण पृथ्वी का शासक राजा होता है। इस सिंहासनाश योग मे जन्म लेने वाला जातक मानवश्रेष्ठ हरिश्चन्द्र अथवा राजा बलि के समान होता है। कलियुग मे जन्म हो तो युधिष्ठिर शालिवाहन के समान होता है। गोपुर अश मे होने से नागार्जुन के समान राजा होता है। पारावताश मे ऋषि मनु के समान होता है। तथा देवलोक मे ईश्वररूप तथा इस लोक मे ईश्वराश अवताररूप मत्स्यावतार से कल्कि अवतार पर्यन्त के अवतारो का आविर्भाव पारावताश मे होता है। देवलोक मे इन्द्र होता है ऐरावताश मे स्वायम्भुव मनु के समान होता है॥ इस प्रकार सूक्ष्म विचार करके देखने मे प्रतीत होगा कि केन्द्र और कोण स्थान के योग ही सब महान् पुरुषो के जनक है। चार स्थान केन्द्र मे तथा २

स्थान त्रिकोण के और धनस्थान ये ही सात स्थान संसार में उत्तरोत्तर महान् विभूतियों को जन्म देनेवाले हैं ॥ श्लोक ३६ से ५० ॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० स० सा० राजयोगादिविचारकथन नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥

पराशर उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि राजयोगान्द्विजोत्तम ॥ येषां विज्ञानमात्रेण नृपपूज्यो जनो भवेत् ॥१॥ ये ये योगाः पुरा शम्भुभाषिताः शैलजाग्रतः ॥ तेषां सारमहं वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ॥२॥ चिन्तयेत्कारके लग्ने जनुर्लग्नेऽथ वा द्विज ॥ राजयोगप्रदातारौ लग्नौ द्वौ प्रणतोदितौ ॥३॥ आत्मकारकपुत्राभ्यां राजयोगं प्रकल्पयेत् ॥ तनुपञ्चमनाथाभ्यां तथैव द्विजसत्तम ॥४॥ विलग्नात्पंचमाधीशः पुत्रात्माकारको द्वयो ॥ विप्र सम्बन्धयोगेन ज्ञेया वीर्यबलान्विता ॥५॥ लग्नेऽथ सप्तमे वापि लग्नेशे सप्तमाधिपे ॥ पुत्रात्मकारकौ विप्र लग्ने वा सप्तमेऽपि च ॥६॥ सम्बन्धे वीक्षिते तत्र दृष्टैव पञ्चमाधिपे ॥ उच्चता च नवांशस्थे शुभग्रहनिरीक्षिते ॥७॥ महाराजेति योगोऽयं सोऽत्र जातः सुखी नरः ॥ गजवाजिरथैर्युक्तः सेनासंगमनेतथा ॥८॥ भाग्येशात्कारके लग्ने पञ्चमे सप्तमेऽपि वा ॥ राजयोगप्रदातारौ गजवाजिधनैरपि ॥९॥ कारकाद्द्विचतुर्थे च पञ्चमे भावगे द्विज ॥ शुभखेटो न संदेहो राजयोगं ददाति च ॥१०॥

हे द्विजोत्तम ! अब और राजयोग कहते हैं जिनके ज्ञान से मनुष्य राजपूज्य होता है॥१॥ जो योग भगवान् शंकर ने पार्वती के सामने कहे थे, उन योगों में से कुछ सारभूत योग तुमको सुनाते हैं॥२॥ भगवान् ने दो लग्नों से राजयोग का विचार कहा है, अतः उनके कथनानुसार जन्मलग्न तथा कारकलग्न से राजयोग का विचार करना चाहिये॥३॥ आत्मकारक और पंचमेश से राजयोग होता है। इसी प्रकार लग्नेश और पंचमेश से राजयोग का विचार करे॥४॥ लग्न, पञ्चमभाव का सम्बन्ध यदि आत्मकारक और पुत्रकारक से हो और लग्न, पंचम तथा कारक बलवान् हो तो राजयोग होता है॥५॥ लग्न अथवा सप्तमभाव में—लग्नेश या सप्तमेश अथवा आत्मकारक और पुत्र कारक (अपने अपने भाव में या परस्पर भाव में) हो॥६॥ या परस्पर सम्बन्ध हो अथवा दृष्टि हो और इसी प्रकार पूर्वोक्त सम्बन्ध पंचमभाव या भावेश से हो, तथा उच्चराशि में अथवा उच्चांश तथा नवांश में हो एवं शुभग्रहों की दृष्टि हो तो यह 'महाराज' नामक राजयोग होता है। इसमें जन्म लेनेवाला मनुष्य सुखी तथा हाथी, घोड़े युक्त, चतुरंग सेनायुक्त महाराजा होता है॥८॥ भाग्येश तथा आत्मकारक लग्न, पंचम, सप्तम भाव में हों तो भी पूर्ववत् राजा होता है॥९॥ आत्मकारक से २।४।५ इन भावों में शुभग्रह हो तो राजयोग होता है॥१०॥

कारकात्त्रितये षष्ठे त्र्यायेऽशुभपापयुक् ॥ राजयोगोद्भवो विप्र राजयोगस्तथा भवेत् ॥११॥ प्राचीशपूर्णनाथाद्वने तुर्ये च पञ्चमे ॥ शुभखेटयुते विप्र राजा च भवति ध्रुवम् ॥१२॥ कारके

षष्ठभे पापे राजा च भवति ध्रुवम् ॥ योगद्वये शुभे पापे कथ स्यात्फलनिश्चय ॥१३॥ न दरिद्रो भवेज्जीवो न राजा जायते द्विज ॥ समानकुलज प्राज्ञ प्रतिष्ठा गौरवान्विता ॥१४॥ कारके पचमे शुक्र सितेन्दुयुतवीक्षित ॥ तन्वारूढपदे लग्ने राजवर्गो भवेन्नर ॥१५॥ जन्मांगे वापि कालागे लिप्तागे खेचरेक्षिते । रव्याद्यस्त्रयस्थाने राजयोगप्रदायका ॥१६॥ जन्मागे च हि होरागे कुलागे येन केन चित् ॥ रव्यादिदृष्टिमात्रेण स राजा भवति ध्रुवम् ॥१७॥ स्वक्षेत्रे तु नवाशे वा द्रेष्काणे भानुजादय ॥ लग्न च सप्तम विप्र पश्यति राजयोगदा ॥१८॥ पूर्णदृष्टे पूर्णयोगमर्द्धे चार्द्धं विधीयते ॥ पादेन पादयोग च राजयोगमिद क्रमात् ॥१९॥ षट्कुडल्यतरे विप्र पश्यति भास्करादय ॥ राजयोगप्रदातारो निर्विशक द्विजोत्तम ॥२०॥ लग्नस्थाने पूर्णदृष्ट्या सप्तमे स्वल्पवीक्षिते ॥ स्वल्पराज्यप्रदो विप्र षड्लग्नेषु विचिंतयेत् ॥२१॥

आत्मकारक से तीसरे तथा छठे भाव मे पापग्रह हो तो राजवशी के लिये राजयोग होता है॥११॥ लग्नेश और सप्तमेश से २।४।५ वे स्थान मे शुभग्रह हो तो निश्चय राजा होता है॥१२॥ तीसरे छठे भाव मे पापग्रह हो तो राजा होता है। यह कह चुके है। अब कहते है कि यदि ३।६ मे पाप और २।४।५ मे शुभग्रह हो तो फल का निश्चय क्या हो ?॥१३॥ तो उसका निर्णय कहते है कि जातक न तो राजा ही होगा न दरिद्र ही रहेगा। प्रतिष्ठायुक्त गौरवशाली होकर मध्यम श्रेणी का होगा॥१४॥ पुत्रकारक शुक्र हो और शुक्लपक्ष के पूर्णचन्द्र से युक्त या दृष्ट हो। ऐसा शुक्र लग्न के आरूढ राशि मे (भाव) या लग्न मे हो तो जातक राजा श्रेणी मे होता है॥१५॥ जन्मलग्न मे या कालाग=होरालग्न मे एव लिप्ताग=घटीलग्न मे शुभग्रह स्थित हो तथा सूर्यादि क्रूरग्रह तीसरे भाव मे हो तो राजयोग कारक होते है॥१६॥ जन्मलग्न होरालग्न, घटी लग्न मे स्थित ग्रह से सूर्यादि ग्रह की दृष्टिमात्र से 'राजयोग' होता है॥१७॥ शनि, राहु, केतु, स्वक्षेत्र मे, स्वनवाश मे या स्वद्रेष्काण मे स्थित होकर लग्न और सप्तमभाव को देखते हो तो 'राजयोग' कारक होते हैं॥१८॥ यह राजयोग पूर्णदृष्टि से पूर्ण तथा अर्द्धदृष्टि से आधा और पाददृष्टि से चौथाई जानना॥१९॥ इसी प्रकार षड्वर्ग की कुण्डली मे सूर्यादि ग्रहो की दृष्टि हो तो राजयोग कारक होते है॥ (यहा 'षट् कुण्डल्या' मात्र पर ही निर्देश है किन्तु वे छ कुण्डली कौनसी ली जाय यह नही बताया गया । अभी तक जिन कुण्डलियो से 'राजयोग' का विचार हो रहा है वे ये है। जन्मलग्न, आरूढलग्न, कारकलग्न होरालग्न, उपपदलग्न घटीलग्न। क्या यही लेनी अथवा षड्वर्ग कुण्डली लेना। यह विज्ञजन विचार करे) लग्न मे पूर्णदृष्टि हो और सप्तमभाव मे पाददृष्टि हो तो साधारण धनीयोग जानना॥२१॥

एव नवाशकुडल्या द्रेष्काणेऽपि विचिन्तयेत् ॥ लग्नसप्तमयो खेटो राजयोगप्रदायक ॥२२॥ उच्चग्रहे राजयोगो लग्नद्वयमथापि चेत् ॥ राशेर्द्रेष्काणतोंऽशाच्च राशेरशाद्यापि वा ॥२३॥ यद्वा राशिदृकाणाभ्या लग्ने दृष्टे तु योगत ॥ प्रायेणेद जातक तु प्रभूणामेवदृश्यते ॥२४॥ जन्मकालघटीलग्न एकेनैव निरीक्षिते । तच्चारूढे तु सप्राप्ते चद्राक्राते विशेषत ॥२५॥ क्राते वा गुरुशुक्राभ्या केनाप्युच्चग्रहेण वा ॥ दुष्टार्गलापहाभावे राजयोगो न सशय ॥२६॥ शुभारूढे तत्र चद्रे धने देवगुरुस्तथा ॥ उच्चदृष्टे ग्रहे वाथ ह्युच्चखेटे तथा ग्रहे ॥२७॥ राजयोगप्रदाता स निर्विशक द्विजोत्तम ॥ पत्रयेऽपि शुभारूढे चद्रे सति समानकम् ॥२८॥ उच्चग्रहे

राजयोगो लग्नद्वयमथापि वा॥ आरूढमवलम्ब्याथ योगा वाहनदाः स्मृताः ॥२९॥ शुक्राच्चन्द्रे ततः शुक्रे तृतीये वाहनार्थवान् ॥ अन्योन्य पश्यतो विप्र दैत्याचार्यनिशाधिपौ ॥३०॥

इसी प्रकार नवांश लग्न और द्रेष्काण में भी विचार करो लग्न तथा सप्तमभावस्थित ग्रह राजयोग कारक होता है॥२२॥ जन्मलग्न तथा होरालग्न में (द्रेष्काण और नवांश के सहयोग से यहां दूसरा होरालग्न जानना) ग्रह उच्च राशि में हो, राशि के द्रेष्काण में अथवा राशि नवांश में या ग्रह अपने नवांश में उच्चका हो॥२३॥ अथवा जन्म लग्न और द्रेष्काण में लग्न को देखते हों तो ऐसा श्रेष्ठ योग प्राय बड़े आदमियों के ही होता है॥२४॥ जन्मलग्न, होरालग्न तथा घटीलग्न को एक ही ग्रह देखता हो तथा वही ग्रह आरूढलग्न में हो और विशेष करके चन्द्रमा से युक्त हो अथवा गुरु शुक्र से युक्त हो, अथवा किसी उच्चग्रह से युक्त हो तथा अर्गलायोगकारक पापग्रह न हो तो 'राजयोग' होता है॥२५॥२६॥ चन्द्रमा आरूढ लग्न में दूसरे भाव में गुरु हो उच्च ग्रह की दृष्टि हो। चन्द्र तथा गुरु भी उच्च के हो तो राजयोगकारक है॥२७॥२८॥ जन्म लग्न और आरूढ लग्न इनमें उच्च का ग्रह होने से तो राजयोग कारक होता है, आरूढ के अवलम्बन से वाहन (सवारी) होता है॥२९॥ शुक्र से चन्द्रमा तीसरे अथवा चन्द्रमा से शुक्र तीसरे भाव में हो। अथवा चन्द्र शुक्र परस्पर देखते हों तो वाहन तथा सम्पत्तिशाली होता है॥३०॥

आरूढेपि तृतीयस्थे तथा सम्बन्धकारकः ॥ जन्मलग्नेपि सयोगे जायते वाहनार्थवान् ॥३१॥ शुभे लग्ने शुभे त्वर्थे तृतीये पापखेचरः ॥ चतुर्थे तु शुभे प्राप्ते राजा वा तत्समोपि वा॥३२॥ उच्चो वा हरिणाङ्को वा जीवो वा शुक्र एव वा ॥ एको बली धनगतः श्रियं दिशति देहिनः ॥३३॥ लग्नं पश्यति ये खेटास्ते सर्वे शुभदायिनः ॥ नीचखेटोपि लग्ने चेत्पश्येद्राजा प्रकीर्तितः ॥३४॥ षष्ठाष्टमे तृतीये च लाभे सम्बन्धनीचकृत् ॥ यो ग्रहः पश्यते लग्नं राजयोगप्रदायकः ॥३५॥ राजयोगो जन्मलग्नं पश्येदुच्चग्रहो यदि ॥ षष्ठाष्टमगते नीचे लग्ने पश्यति योगकृत् ॥३६॥ षष्ठाष्टमाधिपे नीचे लग्नं पश्यति लाभ वा ॥ तृतीये लाभगे नीचे लग्नं पश्यति राज्यदः ॥३७॥ षष्ठाष्टमाधिपौ खेटौ शुभौ यौ नीचगौ च नाथितौ ॥ पश्यतो जन्मलग्नं च राजयोग उदाहृतः ॥३८॥ चरे तु पञ्चमे षष्ठे स्थिरे तु नवमे द्विज ॥ उभये केन्द्रसंदृष्टे राजयोगप्रदायकः ॥३९॥

इसी प्रकार चन्द्र, शुक्र आरूढ से तृतीयभाव में हों और स्थान सम्बन्ध हो, और यदि यह योग न होकर अन्य राशि में स्थित होकर भी सम्बन्ध करते हों तो पूर्वोक्त योग करते हैं॥३१॥ लग्न, द्वितीय, चतुर्थ भाव में शुभ तथा तृतीयभाव में पापग्रह हो तो राजा या राजा के समान होता है॥३२॥ चन्द्रमा, गुरु या शुक्र अथवा उच्चस्थ ग्रह द्वितीय भाव में हो तो जातक लक्ष्मीवान् होता है॥३३॥ जो कोई भी ग्रह लग्न को देखते है, वे सब शुभफलद हैं (शुभफल दाता हैं) नीचराशिगत ग्रह भी लग्न में हो या लग्न को देखे तो राजा होता है॥३४॥ ६।८।३।११ स्थानों में नीचस्थ ग्रह भी सम्बन्ध कारक हों और लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक होता है॥३५॥ यदि उच्चराशिगत ग्रह जन्म लग्न को देखता हो और ६।८

स्थान मे नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच मे हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान मे नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव मे तथा षष्ठभाव मे स्थिर राशि हो और नवम भाव मे द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थे शुभखेटश्चेद्राजयोग प्रकीर्तित ॥ बलयुक्तचतुर्थोपि राजादिषु यथोत्तरम् ॥४०॥ चरे तुर्ये स्वल्पफल स्थिरे तुर्ये च मध्यमम् ॥ द्विस्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अग्रहात्सग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्तो ग्रह कश्चिल्लाभगो वा चतुर्थग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्पश्येद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनधान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने तत केन्द्रादियोगत ॥ यस्य लग्नांशके सौम्या प्राबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतगश्च हालाशश्च किरीटक ॥विह्वलाशसमायाशमोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्रांशकौ लोलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशीना द्वादशांशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्रांशाश्चेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विषडष्टैकादशांशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुक्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव मे चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ 'अग्रहात् सग्रहो ज्यायान्०' इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) लाभ (११) चतुर्थ भाव मे हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहा द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनधान्य युक्त होता है॥४३॥ लग्न मे शुभ या पापग्रह की दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानो से भी सयोग हो तथा लग्न के नवाश मे सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४४॥ भावराशियो के द्वादशाश मे क्रमश ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतग (सूर्य) हालाश किरीटक विह्वलाश समयाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग इन्द्र कोकिल, ये द्वादश नाम हैं। इनमे ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते है। इनमे केन्द्रस्थ अश शुभ और राजयोग कारक होते है। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अश अधम हैं॥४०—४७॥

अन्याशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणा चैव लग्नानामशगत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नगेष्वशगेष्वेषु जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चद्रो वा युक्त स्वाशेषु सस्थित ॥४९॥ तस्यैते कथिता योगा सफला परिकीर्तिता ॥ पूर्ण न्यूनफल विप्र ग्रहयुक्तानुसारत ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकाश्चतुर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदावत्ते विशेषश्च राजचिह्नेन सयुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुदुभेर्नादास्तिष्ठंति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषा चैव योगानामर्थविद्वान् विचिंतयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अंश के नामानुसार ही फल कहना।।४८।। इन अंश युक्त लग्न मे जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म मे चन्द्रमा अपने अंश मे हो उसी जातक के लिए ये योग सफल हैं।। हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलाबल के अनुसार जानना ४८–५०।।

राजचिह्नयोग–हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव मे हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा।।५१।। उसके महल पर ध्वजा अथवा दुदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते है। उपर्युक्त सभी योगो का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए।।५२।।

अथ धीयोगानाह–कारके वा तथारूढे त्रिषष्ठे चागता ग्रहा ॥ वीक्षते कारकात्लग्न मातृनाथेन दृष्टियुक् ।।५३।। बुद्धिमाञ्जायते बालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ॥ तथा तृतीयेशेटेश कारकलग्नौ वीक्षते ।।५४।। तथापि पूर्ववद्योगात्सुधीमाञ्जायते नरः ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्दक्षो भवत्यत्र न संशयः ।।५५।।

बुद्धियोग–कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ ग्रह हो और कारक लग्न को देखते हो, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो बालक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है।। तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी बालक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम मे चतुर होता है। यह निश्चय है।।५३ – ५५।।

अथ सुखयोगमाह–लग्नाच्च कारकाद्वापि चतुर्थे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टया भवति सुखिनो नराः ।।५६।।

सुखयोग–जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्थ भाव मे ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है।।५६।।

अथ सेनाधीशयोगमाह–कारके वा तथा रूढे लग्नाद्वा सप्तमाद्द्विज ॥ तृतीये षष्ठभे पापाः सेनाधीशो भवेन्नरः ।।५७।।

सेनाधीश योग–कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव मे पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है।।५७।।

अथ प्रधानयोगानाह–राज्येशोपि जनुर्लग्नादमात्येशयुतेक्षिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ।।५८।। लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविवर्जिते ॥ तथा राज्यालये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ।।५९।।

प्रधानमन्त्रीयोग–लग्न (जन्मलग्न) मे दशमेश को अमात्यकारक स्थितराशि देखता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युत दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है।।५८।। अमात्य कारक दशमभाव मे या लाभ मे हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमंत्री होता है और कुल मे भी प्रधान होता है।।५९।।

स्थान मे नीचराशिगत ग्रह लग्न को देखता हो तो राजयोग कारक है॥३६॥ ६।८ का स्वामी नीच मे हो लग्न को देखता हो तो अथवा ३।११ स्थान मे नीच का ग्रह लग्न को देखता हो तो राज योग कारक होता है॥३७॥ ६।८ के स्वामी शुभ या पाप कोई भी हो किन्तु आश्रित = बलहीन, आक्रान्त न हो और जन्मलग्न को देखते हो तो भी राजयोग होता है॥३८॥ चर राशि पञ्चम भाव मे तथा षष्ठभाव मे स्थिर राशि हो और नवम भाव मे द्विस्वभाव राशि हो और इनके स्वामी केन्द्रेश से दृष्टि सम्बन्ध करते हो तो राजयोग होता है॥३९॥

चतुर्थे शुभखेटश्चेद्राजयोग प्रकीर्तित ॥ बलयुक्तचतुर्थोपि राजादिषु मयोत्तरम् ॥४०॥ चरे तुर्ये स्वल्पफल स्थिरे तुर्ये च मध्यमम् ॥ द्विस्वभावे पूर्णफल राजयोगप्रदायक ॥४१॥ अग्रहात्सग्रहो ज्यायानिति रीत्या विचिन्तयेत् ॥ उच्चयुक्तो ग्रह कश्चिल्लाभगो वा चतुर्थग ॥४२॥ धनस्थितो वा लग्न चेत्पश्येद्वाहनकारक ॥ राजयोगाद्यभावे तु धनधान्यविनिर्णय ॥४३॥ शुभपापदृशा लग्ने तत केन्द्रादियोगत ॥ यस्य लग्नांशके सौम्या प्राबल्य तस्य निश्चितम् ॥४४॥ कुबेरश्च पतगश्च हालाशश्च किरीटक ॥विह्वलाशसमायाशमोहन किन्नराशक ॥४५॥ भुजगेन्द्राशकौ लीलाकोकिलाशोत्तम स्मृत ॥ राशीना द्वादशांशेषु ग्रहस्थित्या फल वदेत् ॥४६॥ केन्द्रांशांशेषु शुभदा राजयोगफलप्रदा ॥ द्विषष्ठैकादशांशा मध्यमा परिकीर्तिता ॥४७॥

चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो राजयोग होता है। चतुर्थ भाव भी बलयुत्त हो और ग्रह भी हो तो राजयोग होता है॥४०॥ किन्तु चतुर्थभाव मे चर राशि हो तो स्वल्प फल, और स्थिर राशि हो तो मध्यम फल तथा द्विस्वभावराशि हो तो पूर्ण फल होता है॥४१॥ अग्रहात् सग्रहो ज्यायान्० इसी नियम से विचार करना चाहिए। उच्चराशि स्थित ग्रह यदि धन (२) लाभ (११) चतुर्थ भाव मे हो और लग्न पर दृष्टि हो तो (यहा द्वितीय भावस्थ ग्रह लग्न को किस दृष्टि से देखेगा यह तो भगवान् ही जाने) वाहन कारक योग है। राजयोग न होने पर धनधान्य युक्त होता है॥४३॥ लग्न मे शुभ या पापग्रह की दृष्टि हो तथा केन्द्रस्थानो से भी सयोग हो तथा लग्न के नवाश मे सौम्यग्रह हो तो योग की प्रबलता जानना॥४४॥ भावराशियो के द्वादशाश मे क्रमश ये नाम निर्देश करना। कुबेर पतग (सूर्य) हालाश किरीटक विह्वलाश समयाश उत्तमाश मोहन किन्नर भुजग इन्द्र कोकिल ये द्वादश नाम है। इनमे ग्रहस्थित होने पर फलदायक होते है। इनम केन्द्रस्थ अश शुभ और राजयोग कारक होते है। २।६।८।११ मध्यम और बाकी अश अधम है॥४०—४७॥

अन्याशास्त्वधमा ज्ञेया एवमशविनिर्णय ॥ ग्रहाणा चैव लग्नानामशगत्या फल वदेत् ॥४८॥ लग्नगेष्वशगेष्वेषु जायते यदि मानव ॥ यस्य जन्मनि चद्रो वा युक्त स्वाशेषु सस्थित ॥४९॥ तस्यैते कथिता योगा सफला परिकीर्तिता ॥ पूर्ण न्यूनफल विप्र ग्रहयुक्तानुसारत ॥५०॥ अथ राजचिह्नयोगानाह—कारकात्तुर्यभावस्थौ सितेन्दू द्विजसत्तम ॥ आदावते विशेषश्च राजचिह्नेन सयुत ॥५१॥ ध्वजा वा दुदुभेर्नादास्तिष्ठंति च दिवानिशम् ॥ सर्वेषा चैव योगानामविरुद्धान् विचितयेत् ॥५२॥

ग्रहो तथा लग्नो का अंश के नामानुसार ही फल कहना॥४८॥ इन अंश युक्त लग्न मे जिसका जन्म होता है अथवा जिसके जन्म मे चन्द्रमा अपने अंश मे हो उसी जातक के लिए ये योग सफल है॥ हे विप्र! पूर्ण फल या न्यून फल ग्रह के बलाबल के अनुसार जानना ४८–५०॥

राजचिह्नयोग–हे द्विजोत्तम! आत्मकारक से शुक्र और चन्द्रमा चौथे भाव मे हो, वह जातक राजचिह्न युक्त होगा॥५१॥ उसके महल पर ध्वजा अथवा दुंदभी (नगाडा आदि) वाद्य आदि रहते है। उपर्युक्त सभी योगो का फल देश, काल, परिस्थिति, पात्र आदि का विचार करके जो और जैसा फल सम्भव हो वैसा ही फल का निर्देश करना चाहिए॥५२॥

अथ धीयोगानाह–कारके वा तथारूढे त्रिषष्ठे चागता ग्रहाः ॥ वीक्षते कारकाल्लग्न मातृनाथेन बुध्दियुक् ॥५३॥ बुद्धिमाञ्जायते बालस्तीव्रबुद्धिर्विचक्षणः ॥ तथा तृतीयेशेऽटेशः कारकल्पग्नं वीक्षते ॥५४॥ तथापि पूर्ववद्योगात्सुधीमाञ्जायते नरः ॥ शास्त्रवेत्ता कविर्वक्ता भवत्यत्र न संशयः ॥५५॥

बुद्धियोग–कारक लग्न तथा आरूढ लग्न ३।६ ग्रह हो और कारक लग्न को देखते हो, तथा चतुर्थेश भी देखता हो तो बालक तीव्रबुद्धि और चतुर होता है॥ तथा तृतीयेश भी कारक लग्न तथा आरूढ लग्न को देखते हो तो भी बालक बुद्धिमान्, शास्त्रवेत्ता, कवि और हर काम मे चतुर होता है। यह निश्चय है॥५३ – ५५॥

अथ सुखयोगमाह–लग्नाच्च कारकाद्वापि चतुर्थे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या भवति सुखिनो नराः ॥५६॥

सुखयोग–जन्मलग्न तथा कारकलग्न से चतुर्थ भाव मे ग्रह हो, और लग्न तथा कारक को देखते हो जो जातक सुखी होता है॥५६॥

अथ सेनाधीशयोगमाह–कारके वा तथा रूढे लग्नाद्वा सप्तमाद्द्विज ॥ तृतीये षष्ठभे पापा सेनाधीशो भवेन्नर ॥५७॥

सेनाधीश योग–कारकलग्न या आरूढलग्न से तथा जन्मलग्न या सप्तमभाव से ३।६ भाव मे पापग्रह हो तो जातक सेनापति होता है॥५७॥

अथ प्रधानयोगानाह–राज्येशोपि जनुर्लग्नादमात्येनयुतेक्षिते ॥ अमात्यकारकेणापि प्रधानत्व नृपालये ॥५८॥ लाभे च वीक्षिते लाभे पापदृष्टिविवर्जिते ॥ तथा राज्यालये विप्र प्रधानत्व कुलेपि च ॥५९॥

प्रधानमन्त्रीयोग–लग्न (जन्मलग्न) मे दशमेश को अमात्यकारक स्थितराशि देखता हो या युक्त हो तथा अमात्य कारक से भी युत दृष्ट हो तो प्रधान मन्त्री होता है॥५८॥ अमात्य कारक दशमभाव मे या लाभ मे हो या देखता हो किन्तु पापदृष्टि रहित हो तो प्रधानमन्त्री होता है और कुल मे भी प्रधान होता है॥५९॥

अमात्य कारकेणापि कारकेन्द्रेशसयुते ।। तीव्रबुद्धियुतो बाल सेनाधीशोऽपि जायते ।।६०।। स्वक्षेत्रेऽस्य च मध्ये वा वार्द्धके द्विजसत्तम ।।६१।। क्रमेण भाग्यवृद्धि स्यान्नृपवेशोथ वा भवेत् ।।६२।। पचमात्कारके लग्ने सप्तमे नवमेपि वा ।। राजयोग इति प्रोक्तो विख्यातो विजयी भवेत् ।।६३।। कारकात्केन्द्रकोणेषु तुगर्क्षे चापि सस्थिते ।। भाग्यपेन युतो दृष्टो राजमत्री प्रजायते ।।६४।। कारके यस्य राशीशे लग्नगे सयुतेक्षिते ।। मंत्रित्वमुख्ययोगोऽय वार्द्धके नात्र सशय ।।६५।। कारके शुभसयुक्ते पचमे सप्तमेपि वा ।। यत्कारके पदा प्राप्ते तत्कारकधन लभेत् ।।६६।। नीचेक्षेटबलैर्युक्ते उच्चस्थानगतैर्द्विज ।। तदा शुभफल वाच्य कारकेशेन दृष्टियुक् ।।६७।।

अमात्य कारक से कारकेन्द्र (आत्मकारक) राशिनाथ (राशिस्वामी) युत हो तो बाल अवस्था से ही तीव्र बुद्धि सम्पन्न तथा सेनापति होता है।।६०।। अमात्यकारक स्वगृही हो या दशमभाव में हो तो वृद्धावस्था मे प्रधानमन्त्री होता है।।६१।। इस योग में या तो क्रम से भाग्यवृद्धि हो या केवल नाममात्र का राजा हो।।६२।। पचमभाव से कारकलग्न सप्तमभाव मे या नवमभाव मे हो तो राजयोग होता है। इस योग मे उत्पन्न हुआ विख्यात और विजयी होता है।।६३।। आत्मकारक से भाग्येश केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे हो अथवा उच्चराशि में हो भाग्येशसे युत अथवा दृष्ट हो तो प्रधानमत्री होता है।।६४।। कारकभाव कुण्डली मे अमात्यकारकराशि का स्वामी लग्न मे अथवा अमात्यकारक मे युक्त या दृष्ट हो तो वृद्धावस्था मे प्रधानमत्री होता है।।६५।। अमात्यकारक शुभग्रह युक्त होकर पचमभाव या सप्तमभाव मे हो तो मत्री होता है। यह योग जिस कारक के साथ हो उस जातक को वही पद प्राप्त होता है।।६६।। बलवान् पापीग्रह पचम या सप्तमभाव मे हो और अमात्यकारक से युत या दृष्ट हो तो भी मत्री समान होता है।।६७।।

भाग्यारूढपदे लग्ने कारकान्नवमेपि वा ।। राज्ययोगप्रदातारौ निर्विशक द्विजोत्तम ।।६८।। लाभेशो लाभभवने पापदृष्टिविवर्जित ।। कारके शुभसयुक्ते लाभ तस्य नृपालये ।।६९।। शुभर्क्षे शुभसयुक्ते शुभदृष्टे च राज्यभाक् ।। धनुर्लग्ने तथा रूढे एतस्मिन्राज्यभाग्भवेत् ।।७०।।

भाग्यस्थान का आरूढ पद लग्नगत हो अथवा अमात्यकारक मे नवमभाव मे हो तो राजयोग कारक है।।६८।। लाभेश लाभस्थान मे हो, पापदृष्टिरहित हो तथा आत्मकारक शुभग्रह युक्त हो तो राजा से लाभ होता है।।६९।। आत्मकारक शुभराशि मे या शुभग्रह अथवा शुभदृष्टि हो और यह योग धनु लग्न में अथवा धनुलग्न के आरूढ स्थान मे हो तो राजभोगी होता है।।७०।।

अथ रसायनसिद्धियोगा –स्वांशे वर्गोत्तमे केंद्रे पुण्येशे कारकोऽथवा ।। राज्यारूढपदे वापि तदा सिध्येद्रसायनम् ।।७१।। कारके कारकारूढे धने स्वर्क्षोच्चगे सखे ।। ऋद्धिर्वा सिद्धिसयुक्ते तथा तत्ररसायनम् ।।७२।। धर्मकर्माधिपौ स्वोच्चे तथा वर्गोत्तमे यदि ।। नवमे पचमे लाभे राज्याप्तिर्वा रसायनम् ।।७३।। मूलत्रिकोणगे लग्ने कारकेशो द्विजोत्तम ।। मत्रनाथेन सयुक्त कीर्तियुक्तरसायनम् ।।७४।। धर्मेशो धर्मलाभस्य पचमेशोपि पचमे ।। कारकेद्युते दृष्टे स्वेच्छापूर्णधनानि च ।।७५।।

रसायन सिद्धियोग—आत्मकारक अथवा नवमेश अपने नवांश में हो या वर्गोत्तमी हो तथा ऐसा होकर केन्द्रस्थानों में हो या दशमभाव के आरूढपद में हो तो रसायन सिद्धि प्राप्त होती है॥७१॥ आत्मकारक कारकलग्न में हो, धनेश स्वगृही या उच्च का हो तो रसायनी होता है॥७२॥ नवमेश तथा दशमेश उच्च के होकर या वर्गोत्तमी होकर नवम, पंचम या लाभस्थान में हो तो राज्यप्राप्ति या रसायन सिद्धि होती है॥७३॥ आत्मकारक का स्वामी मूलत्रिकोणी होकर लग्न में हो तथा पंचमेश से युक्त हो तो कीर्ति भी होती है और रसायन भी सिद्ध होती है॥७४॥ नवमेश नवम या लाभस्थ हो तथा पंचमेश भी पंचमभाव में हो और आत्मकारक से युक्त या दृष्ट हो तो इच्छानुसार धन की प्राप्ति होती है॥७५॥

स्वोच्चादि पदसंयुक्ते कारकेशः शुभालये ॥ सततं सुखमाप्नोति धातुभस्मरसायनात् ॥७६॥ सुखेशे मानभावस्थे मानेशे सुखसंयुते ॥ लग्नकारकयोर्दृष्टे भिषग्योगोऽतिसम्मतः ॥७७॥ कर्मेशो नवमे यस्य सुखेशः पंचमेऽपि वा ॥ परस्परं नवांशो वा स्वर्णाप्तिस्तत्र कर्मतः ॥७८॥ वागीशः कारके लग्ने स्वोच्चादिपदसंयुते ॥ भौमांशो मृत्युरादित्यः सौम्येशः कालसंज्ञकः ॥७९॥ सौम्यांशेऽर्द्धप्रहरकः स्पष्टकर्म स्वदेशतः ॥ एवं प्राणपदस्पष्टे पूर्वाध्याये मया कृतम् ॥८०॥ गुलिके कारकांशे च पूर्णेन्दुवीक्षिते द्विज ॥ सत्यं चौर्यधनीतिश्च स चौरो जायतेऽथवा ॥८१॥ सगुलिके कारकांशे ह्यन्यग्रहयुतेक्षिते ॥ बुधदृष्टियुते वापि अण्डवृद्धिः प्रजायते ॥८२॥ कारकांशे स्थिते केतौ रविसोमनिरीक्षिते ॥ बलवीर्येण रहितो जायते सोऽपि मानवः ॥८३॥ सकेतौ कारकांशे तु बुधशुक्रनिरीक्षिते ॥ राजयोनौ जन्म चेत्स्याद्दासीपुत्रोऽथ वा भवेत् ॥८४॥

आत्मकारक का स्वामी स्वोच्च, मूलत्रिकोणी हो और शुभस्थान में स्थित हो तो निरंतर सुखी और पारे की भस्म से रसायन का ज्ञाता हो॥७६॥ सुखेश दशमस्थान में हो एवं दशमेश सुखभाव में हो लग्न और कारक को देखते हों तो राजवैद्य और सम्मानी होता है॥७७॥ जिसके दशमेश नवमभाव में हो और सुखेश पंचमभाव में हो अथवा नवमेश दशम में और पंचमेश चतुर्थ में हो तो उद्योग करने से सुवर्ण सिद्धि होती है॥७८॥ बृहस्पति कारक में या लग्न में उच्चादि राशि का होकर स्थित हो, और मंगल का नवांश अष्टमभाव में हो, सूर्य तथा सुखेश कालांशक में हो॥७९॥ बुध के नवांश 'अर्द्धयाम' हो तो अपने देश में ही सिद्धि प्राप्त होती है। यह हमने पूर्वाध्याय 'प्राणपद' साधन के विषय में स्पष्ट कहा है॥८०॥ गुलिक लग्न में या कारकांश में आत्मकारक स्थित हो और पूर्ण चन्द्र दृष्ट हो तो चोरी आदिक् नीतिमान अथवा चोर होता है॥८१॥ आत्मकारक का नवांश —गुलिक (मन्यश) में हो और किसी से युक्त अथवा दृष्ट हो या बुध की दृष्टि हो तो अण्डवृद्धि होती है॥८२॥ कारकांश में केतु हो सूर्य, चन्द्र से दृष्ट हो तथा बलहीन हो तो अण्डवृद्धि होती है॥८३॥ कारकांश में केतु बुध तथा शुक्र दृष्ट हो तो राजकुल में दासी का पुत्र होता है॥८४॥

सकेतौ कारकांशे वा मृत्युभास्करवीक्षिते ॥ सिद्धं शास्त्रान्तरे ग्राह्यं विशेषं राजयोगकम् ॥८५॥ रुद्रेण यत्पुरा प्रोक्तं तन्मया गदितं द्विज ॥ देयं स्वशिष्यपुत्रेभ्यो न देयं यस्य कस्यचित् ॥८६॥ कुपुत्राय कुशिष्याय प्राणान्ते न प्रकाशयेत् ॥ गुह्याद्गुह्यमिदं शास्त्रं प्राप्तं शम्भुप्रसादतः ॥८७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे राजयोगादिकथनं पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥२५॥

कारकाश मे केतु, शुक्र, सूर्य दृष्ट हो तो भी दासीपुत्र होता है। (इन योगो की प्रशसा) विशेप राजयोग अन्यशास्त्रो से भी ग्रहण करना॥८५॥ प्राचीन काल मे जो महादेवजी ने कहा था, हमने तुमको सुनाया है। यह शास्त्र अपने शिष्य या पुत्र को देना चाहिए। जिस किसी को तथा कुपुत्र और कुशिष्य को भी नही देना चाहिए। यह अतिगुप्त शास्त्र भगवान् शकर की कृपा से प्राप्त हुआ है॥८६॥८७॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० राजयोगादि कथन नाम
पञ्चविशोऽध्याय ॥२५॥

अथ धनयोगाध्यायमाह

पराशर उवाच–अथातः सम्प्रवक्ष्यामि धनयोग विशेषतः ॥ पचमे तु भृगुक्षेत्रे तस्मिन् शुक्रेण संयुते ॥१॥ लाभे शनैश्चरयुते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे सौम्यकक्षेत्रे तस्मिन्सौम्ययुते यदि ॥२॥ लाभे च चन्द्रभौमौ तु बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन्सूर्यसुतो यदि: ॥३॥ लाभे सोमात्मजस्थे वा बहुद्रव्यस्य नायकः।पचमे तु रविक्षेत्रे तस्मिन्रवियुते यदि॥४॥ लाभे रवींदुपूज्यस्थे बहुद्रव्यस्य नायकः ॥ पचमे तु शनिक्षेत्रे तस्मिन् शनियुते यदि ॥ लाभे भौमेन सयुक्ते बहुद्रव्यस्य नायकः ॥५॥ पचमे तु गुरुक्षेत्रे तस्मिन् गुरुयुते यदि ॥ लाभे तु चंद्रभौमौ चेद्बहुद्रव्यस्य नायकः ॥६॥ भानुक्षेत्रगते तस्मिल्लग्ने भानौ स्थिते यदि ॥ भौमेन गुरुणा युक्ते दृष्टौ वास्यायुतो धनी: ॥७॥ चद्रक्षेत्रगते लग्ने तस्मिश्चद्रयुते यदि ॥ जीवभौमयुते यस्तु दृष्टे जातो धनी भवेत् ॥८॥ भौमक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्भौमयुते यदि ॥ सोमशुक्रार्कजैर्युक्ते दृष्टे श्रीमान्नरो भवेत् ॥९॥ गुरुक्षेत्रगते लग्ने तस्मिन्गुरुयुते यदि ॥ सौम्यभौमयुते दृष्टे जातो यस्तु धनीश्वरः ॥१०॥ बुधक्षेत्रयुते तस्मिन् दृष्टे सौम्ययुते यदि ॥ शनिशुक्रयुते दृष्टे जातो यस्तु [illegible]नी भरः ॥११॥

धनयोग विचार

अब विशेप धनयोग कहते है। पचमभाव मे शुक्र की राशि हो और शुक्र युक्त हो। लाभस्थान मे शनि हो तो विशेप धनी होता है।॥१॥ पचमभाव मे बुध स्वगृही हो। लाभस्थान मे चन्द्र, मगल हो तो विशेप धनी होता है॥२॥ पचमभाव मे शनि की राशि मे सूर्य स्थित हो। लाभस्थान मे बुध हो तो महाधनी होता है॥३॥ पचमभाव मे सूर्य स्वगृही हो। लाभ स्थान मे सूर्य, चन्द्र, गुरु हो तो विशेप धनी होता है॥४॥ पचमभाव मे शनि स्वगृही हो। लाभस्थान मे मगल हो तो विशेप धनी होता है॥५॥ पचमभाव मे गुरु स्वगृही हो। लाभस्थान मे चन्द्रमगल हो तो विशेप धनी होता है॥६॥ पचमभाव मे सूर्य स्वगृही हो मगल अथवा गुरु से दृष्ट या युक्त हो तो विशेप धनी होता है॥७॥ पचमभाव मे सूर्य राशि हो और सूर्य लग्न मे हो। मगल गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ पचमभाव मे शनि स्वगृही हो। लाभस्थान मे मगल हो तो विशेप धनी होता है॥८॥ लग्न मे चन्द्रमा स्वगृही हो तथा मगल गुरु युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥ मगल स्वगृही लग्न मे हो चन्द्र, शुक्र, शनि से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥९॥ लग्न मे गुरु स्वगृही हो, बुध, मगल से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥१०॥ लग्न मे बुध स्वगृही हो तथा शुक्र शनि से युक्त या दृष्ट हो तो धनी होता है॥११॥

भृगुक्षेत्रे गते लग्ने तस्मिन् भृगुयुते यदि ॥ शनिसौम्ययुते दृष्टे जातो यस्तु धनी नरः ॥१२॥ ये ये ग्रहा धर्मप बुद्धिपाभ्यांयुक्ताश्च दृष्टाश्च सुखप्रदास्ते ॥ रंध्रेश्वरादिव्ययपैर्युताः स्युः शोकप्रदा मारकनायकेश्च ॥१३॥ क्रूरसौम्यविभागेन स्वस्थानाद्विवसास्तथा ॥ ग्रहाणां स्थानभेदेन राशिदृष्टिवशात्फलम् ॥१४॥

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखंडसारांशे धनयोगविचारकथन नाम षड्विंशोऽध्यायः ॥२६॥

लग्न मे शुक्र स्वगृही हो। बुध शनि युक्त हो तो जातक धनी होता है॥१२॥ जो २ ग्रह ५।९ के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट हो वे सुखदायक होते है। तथा ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तथा २।७ के स्वामी से युक्त हो तो शोक चिन्ताकारक होते है॥१३॥ अन्य ग्रहो का क्रूर तथा सौम्यभाव तथा राशि एव भाव का विचार करके फल कहना चाहिए। और अपने स्थान से समय का निर्देश करना चाहिए॥१४॥

इति बृ० पा० हो० शा० पू० ख० भा० प्र० धनयोगविचारकथन नाम षड्विंशोऽध्याय ॥२६॥

अथ दरिद्रयोगाध्यायमाह

लग्नेशे वै रिष्फगते रिष्फेशे लग्नमागते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनो नरः ॥१॥ लग्नाधिपे शत्रुगृहं गते वा षष्ठेश्वरे लग्नगतेपि वा चेत् ॥ विलग्नपे मारकनाथदृष्टे जातो भवेन्निर्धनकोपि मुख्यः ॥२॥ लग्नेन्दु केतुयुक्तो वा लग्नेशे निधन गते ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातो वै निर्धनो भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टमव्ययगते लग्नेशे पापसंयुते ॥ मारकेशयुते दृष्टे राजवंश्योऽपि निर्धनः ॥४॥ विलग्ननाथेरिविनाशरिष्फनाथेन युक्ते यदि पापदृष्टे ॥ शुभैर्न दृष्टे स भवेद्दरिद्रः ॥५॥ मित्रेशो धर्मनाथश्च षष्ठकर्मस्थितो क्रमात् ॥ दृष्टौ चेन्मारकेशेन जातः स्यान्निर्धनो नरः ॥६॥ पापग्रहे लग्नगते राज्यधर्माधिपौ विना ॥ मारकेशयुते दृष्टे जातः स्यान्निर्धनो नरः ॥७॥ चन्द्रांशेशो रंध्ररिष्फारिसंस्थो चन्द्रावस्था रंध्ररिष्फारिभेशाः॥पापैर्दृष्टो मंददृष्टोऽथ वा चेद्दुःस्थाक्रांतश्चंचलो निर्धनः स्यात् ॥८॥ धेशाक्रांतनवांशेशो मारकेशयुतो यदि ॥ मारकस्थानगो वापि जातोऽसौ निधनो नरः ॥९॥ विलग्नेशनवांशेशो रिष्फषष्ठाष्टगो यदि ॥ मारकेशयुतो दृष्टो जातोऽसौ निर्धनो नरः ॥१०॥

दरिद्रयोग—लग्नेश द्वादशभाव मे हो, द्वादशेश लग्न मे हो, मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१॥ लग्नेश षष्ठभाव मे हो और षष्ठेश लग्न मे हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो तो जातक नामी दरिद्री होता है॥२॥ लग्न या चन्द्रमा केतु युक्त हो और लग्नेश अष्टमभाव मे हो तथा लग्नेश को मारकेश देखता हो या युक्त हो तो जातक निर्धन होता है॥३॥ लग्नेश पापग्रहयुक्त होकर ६।८।१२ भाव मे हो, मारकेश से युत या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥४॥ लग्नेश यदि ६।८।१२ भाव के स्वामी से युक्त हो और पापदृष्ट हो तथा शनि अपने भावेश से युक्त हो तथा शुभग्रह की दृष्टि नही हो तो जातक दरिद्री होता है॥५॥

पंचमेश षष्ठभाव मे और नवमेश दशमभाव मे हो तथा मारकेश से दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥६॥ लग्न मे पापग्रह हो, उनमे ९/१० के स्वामी नही हो तथा मारकेश से युत या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥७॥ जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव मे हो अथवा जिस भाव का स्वामी ६।८।१२ भाव का भी स्वामी हो और पापग्रह तथा शनिदृष्ट हो तो जातक दु खी चचल तथा दरिद्री होता है॥८॥ चन्द्रमा जिस नवाश मे हो उस नवाश का स्वामी मारकेश से युक्त हो या मारक स्थान मे हो तो जातक निर्धन होता है॥९॥ लग्नेश और नवाशपति ६।८।१२ स्थान मे हो तथा मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तो जातक निर्धन होता है॥१०॥

धनसस्थौ च भौमेन्दू कथितौ धननाशकौ ॥ बुधेक्षितौ महावित्तं कुरुतस्तत्रग शनि ॥११॥ निस्स्वता कुरुते तत्र रविर्नित्य यमेक्षित ॥ महाधनयुत ख्यात शन्यदृष्ट करोत्यसौ ॥१२॥ धनभावगता सौम्या कुर्वन्त्येव धन बहु ॥ बुधदृष्टो गुरुस्तत्र निर्धन कुरुते नरम् ॥१३॥ बुधश्चन्द्रे क्षितस्तत्र सर्वस्व हृति निश्चितम् ॥ क्रूरखेटादियोगैश्च दारिद्र्य सभवेन्नृणाम् ॥१४॥ ये ये ग्रहा धर्मपबुद्धिपाभ्या युक्ता न दृष्टा बहुदु खदास्ते ॥ रध्रे चरादिव्ययपै र्युतास्ते व्ययप्रदा मारकनायकेन ॥१५॥ प्रोक्तयोगे यदा भावे दरिद्रो जायते ध्रुवम् ॥ शुभस्थानगता पापा पापस्थाने गता शुभा ॥१६॥ धनार्तिर्जायते बालो भोजनेन प्रपीडित ॥ कदापि लभतेऽन्न च वस्त्रार्थचितयान्वित ॥१७॥ कारकाद्वा विलग्नाद्वा रध्रे रिष्फे द्विजोत्तम ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या दरिद्रार्तियुतो नर ॥१८॥

चन्द्र मगल दूसरे घर म हो तो धननाशक होत है॥ और बुधदृष्टि हो तो धनी होता है यदि शनि धनस्थान मे हो॥११॥ यदि धनस्थान मे सूर्य शनि दृष्ट हो तो दरिद्री और शनि से दृष्ट नही हो तो धनी करता है॥१२॥ धनभाव मे सौम्यग्रह धनवान करते हैं। किन्तु बुधदृष्ट गुरु निर्धन करते है॥१३॥ बुध चन्द्र से दृष्ट गुर तो जातक को सर्वस्वहीन करते है। पापग्रहो के योग से मनुष्य दरिद्री होता है॥१४॥ जो २ ग्रह ५/९ भाव के स्वामी से युक्त अथवा दृष्ट नही होते वे दु खदायी होते हैं। तथा अष्टमभाव म तथा व्ययभावेशयुक्त चरराशि मे स्थित तथा मारकेश दृष्ट हो तो बहुत खर्चकारी होते है॥१५॥ उक्त योग अष्टमभाव म होने से निश्चय दरिद्री होता है। शुभस्थानो मे पापग्रह और अशुभ स्थानो मे सौम्य ग्रह हो तो जातक दरिद्री होता है। भोजन मिले तो वस्त्र की चिन्ता रहे। यह हालत रहती है॥१७॥ आत्मकारक से या लग्न से ८।१२ स्थान म ग्रह हो,लग्न तथा कारकभाव को देखत हो तो जातक दरिद्री होता है॥१८॥

लग्नाद्वा कारकाद्वापि द्वादशे यस्य वै द्विज ॥ लग्नकारकयोर्दृष्ट्या व्ययशीलो भवेन्नर ॥१९॥ लग्नेशो वीक्षते लग्न कारकेशोपि कारकम् ॥ प्राबल्यव्ययशीलोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२०॥

अथ बधनयोगमाह

पञ्चाल्लग्नात्कारकाद्वा यदा वा वित्तद्वादशे ॥ पचमे नवमे वापि तथा षष्ठेपि द्वादशे ॥२१॥

तृतीयैकादशे विप्र चतुर्थे दशमेऽपि वा ॥ ग्रहसाम्ये तथा विप्र एकमेक [redacted] द्वयम् ॥२२॥ तथा त्र्य त्र्य तिष्ठेदिति रीत्या नभश्चरा ॥ वित्ते द्वौ द्वादशे द्वौ च तथा स्यात्त्र त्र्ये त्र्यम् ॥२३॥ इति क्रमेण साम्येन बधकारक उच्यते ॥ शृंखलाबधयोगोऽपि जायते द्विजसत्तम ॥२४॥ राशिना राशिना याना शुभसबधके द्विज ॥ तदा निरोध सजातस्तनुपीडा विधीयते ॥२५॥ द्वादशे द्वितये वापि त्रिकोणे रिष्फषष्ठगे ॥ लाभे त्र्ये व्योमतुर्ये पापा वै बधकारका ॥२६॥

लग्न से या कारक से १२ भाव मे ग्रह हो लग्नकारक को देखते हो तो व्ययशील होता है।।१९।। लग्नेश लग्न को और कारकेश कारक को देखता हो तो जातक बहुत सर्चीला होता है।२०।।

बधन योग

लग्न से या कारक लग्न से २।१२ मे ५।९ मे ६।१२ मे ३।११ मे ४।१० मे बराबर २ ग्रह हो। अर्थात् १–१ या २–२ अथवा ३।३ ग्रह हो। अथवा २।१२ मे २–२ और स्थानो मे ३–३ ग्रह हो तो बन्धन (कैद) होने का योग है।।२१ से २४।। भाव तथा भावेशो का शुभसम्बन्ध हो तो कैद तो नही हो परन्तु शरीरपीडा अवश्य हो।।२५।। तथा २।१२ मे ५।९ मे ६।१२ मे और ३।११ तथा ४।१० मे पापग्रह हो तो बन्धन कारक होते है।।२६।।

तथा तत्तद्दशाना च सबध खलखेटत ॥ प्रहारशृंखलाद्विप्र बधयोगो न सशय ॥२७॥ भार्गवात्कारकाद्वापि लग्नारूढपदाद्द्विज ॥ त्रिकोणस्थो यदा राहु सूर्यदृष्टोऽपि नेत्ररुक् ॥२८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडसारांशे दरिद्रयोगकथन सप्तविंशोऽध्याय ॥२७॥

तथा इन उपर्युक्त भावराशियो की दशा का सम्बन्ध पापग्रह से,हो तो मार तथा कैद दोनो नि सशय होती है।।२७।। शुक्र से या कारक से अथवा लग्नारूढपद से त्रिकोण स्थान मे राहु यदि सूर्य दृष्ट हो तो नेत्ररोगी होता है।।२८।।

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू०ख० भा० प्र० दरिद्रबधनयोग कथन नामसप्तविंशोऽध्याय ॥२७॥

अथ पूर्वजन्मवर्णनाध्यायः

अथ वक्ष्ये विशेषेण पूर्वपापस्य निश्चयम् ॥ नवांशान्मेषमारभ्य मेषादौ हि क्रमाद्वदेत् ॥१॥ निशाकरनवांशाधिपाप निश्चित्य सर्वश ॥२॥ मेषे मेषनवांशकेषु च क्रमान्मेषस्य मूषाद्वध उक्ष्येवमपराधक च सुधियो निश्चित्य गोसनकम् ॥ द्वद्वे चाशवधस्तथा मुनियत गर्भेण वद्वेत्कर्के,सर्पवधस्तथा मुनियत सिहे चतुष्पाद्वध ॥३॥ कन्याना मृगजातीना वधो दाता नसेन हि ॥ सिहे निश्चित्य मतिमान्वदेच्चांशोपरि द्विज ॥४॥

पूर्वजन्मवर्णन

अब विशेषरूप से पूर्वजन्म मे पाप के निश्चय की रीति कहते है। इसका विचार पूर्व कहे

अनुसार १–१ राशि के ९–९ नवाश है। मेष से आरभ होते है। क्रम से गणना करना चाहिए।।१।। जन्मलग्न के नवाश से तथा चन्द्रमा के नवाश से एव चन्द्रनवाशेश से पूर्व जन्म तथा वर्तमान जन्म एव पर जन्म का विचार करना चाहिए।।२।। मेष राशि मे मेष के नवाश मे जन्म हो तो जातक ने पूर्वजन्म मे भेड–बकरी का वध किया है। वृष के नवाश मे बैल की हत्या अथवा गोहत्या की है ऐसा निश्चय करना। मिथुन के नवाश मे गर्भहत्या (भ्रूणहत्या) की है। कर्क के नवाश मे सर्प हत्या तथा सिह के नवाश मे चौपाया पशु की हत्या अर्थात् जगल मे आग लगाकर पशुओ की हत्या। ऐसा सिह के नवाश मे निर्णय करे।

कन्यायां च वदेद्विद्वान्याप स्त्रीत्यागज मुने ॥ धनस्याहरण व्याजात्तुलायां च वदेद्बुध ॥५॥ वृश्चिके ग्रामचटके वध चैवाण्डजस्य हि ॥ मित्रद्रोहकृते ब्रूयाद्धन्विन्यघ विशकित ॥६॥ फलाना वृक्षजातीना मकरे चौर्यभेदनम् ॥ कुभे चैवानुसूयत वाच्य विप्र विपश्चित ॥७॥ ब्रूयाद्विप्रधन मीने पूर्वार्द्धे तु विपश्चित ॥ उत्तरार्धे धनादान तद्वध परिकल्पितम् ॥८॥ एकाशे चैकजन्मस्याद्द्व्यशे चैव द्विजन्मनी ॥ त्र्यशे चैव त्रिजन्म स्याच्छेषे जन्मचतुष्टयम् ॥९॥ एव सर्वत्र निश्चित्य लग्ने चैवेह जन्मनि ॥ कर्काद्या विप्र जन्माद्य वदेत्सर्वत्र निश्चयम् ॥१०॥ अन्यथा जारजो भूयाल्लग्नेन्दु नेक्षते गुरु ॥ एव चाष्टोत्तरशत नवाशा परिकीर्तिता ॥११॥ क्षत्रिये क्षत्रियादीना वैश्ये चैव विडादिकान् ॥ शूद्रे शूद्रादिकान्वाच्य विप्रे वै ब्राह्मणादिकान् ॥१२॥

कन्या मे विवाहित स्त्री का त्याग तथा तुला के नवाश मे ठगी से धनहरण एव वृश्चिक के नवाश मे चिडिया आदि पक्षी के अडो का नाश तथा धनु के नवाश मे मित्रद्रोह एव मकर के नवाश मे चोरी से फल तथा वृक्षो का छेदन कुभ मे परद्रोह तथा मीन के पूर्वार्द्ध मे विप्रधन की चोरी या बरजोरी (जबर्दस्ती से लेना) और उत्तरार्द्ध मे विप्र को मारकर धन लेना।।३ से ८ तक।। (इस प्रकार ९ नवाशो मे जो राशि हो उसी के अनुसार पूर्वजन्म के पाप का निश्चय करे। यह फल नवाशराशि का कहा। लग्न के अशो से नवाश का ज्ञान सहज है) प्रथम नवाश मे एक जन्म का पाप और द्वितीय नवाश मे दो जन्म का, तीसरे मे तीन और शेष नवाशो मे चार जन्म कहना।।९।। इस प्रकार लग्न से इस जन्म मे पूर्वपाप का फल कहना। कर्क आदि नवाश राशि से ब्राह्मण आदि वर्ण का निर्देश करना।।१०।। लग्न और चन्द्रमा पर गुरु दृष्टि न हो तो जारज सतान कहना। इस रीति से १२X८= १०८ नवाशो का फल कहा।।११।। नवाश मे क्षत्रिय राशि हो तो पूर्वजन्म मे क्षत्रिय जाति मे जन्म और वैश्य मे वैश्य तथा शूद्र मे शूद्र कहना चाहिए।।१२।।

परे जन्मनि जन्म स्याद्बुद्ध्या चैवैहिक वदेत् ॥ तदीशे स्वोच्चता प्राप्ते मृते स्वर्गे गतो भवेत् ॥१३॥ तदीशे नीचता प्राप्ते नरकादागत्य जनिवान् ॥ समत्वे च समाल्लोकान्मित्रे तीर्थे तनु त्यजेत् ॥१४॥ तदीशे वारिखेऽस्तस्थे मृत प्रेतत्वमाप्नुयात् ॥ तस्मादागत्य जातोऽसौ पाप पुण्य भुनक्ति हि ॥१५॥ तदीशे पापसयुक्ते नीचे वापि स्थिते सति ॥ वृजिन तामस पूर्वं कृत तामसनिश्चितम् ॥१६॥ कुजकेतुसमायुक्ते समस्थे राजस वदेत् ॥ शुभेष्वुच्चस्थिते वाच्य

सात्त्विक वृजिन बुधै ॥१७॥ अनेनैव प्रकारेण लग्ने निश्चित्य बुद्धिमान् ॥ इह जन्मनि सयोज्य क्रूरसाम्य समत्वकम् ॥१८॥ सर्वस्य मानवस्यापि नक्षत्रत्रयमीरितम् ॥ जन्मनक्षत्रमेक तु द्वितीय मनुजन्म च ॥१९॥ त्रिजन्म च तृतीय स्याद्भ्रातृव्य मुनिसत्तम ॥२०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडसाराशेपूर्वजन्मवर्णन नामाष्टाविंशोऽध्याय ॥२८॥

इसी प्रकार अपनी बुद्धि स उपर्युक्त शास्त्रानुसार विचार करके पूर्व वर्तमान और आगामी जन्म का फल कहना चाहिए। जैस नवाशपति उच्चराशि म हो तो मरन पर स्वर्ग मे गति (गमन)॥१३॥ और नीच का हो तो नरक से आकर जन्म लिया है। समम इस लोक मे इसो लोक मे आना जाना हो रहा है। मिन राशि म हो तो तीर्थ मे मरण होगा॥१४॥ नवाशेश जलराशि म हो तो मरने के बाद प्रेतगति मे था और वह भोगकर अब मृत्यु लोक म जन्म लेकर पाप पुण्य का फल भोगता है॥१५॥ नवाशेश पापग्रह युक्त हो तो पूर्वजन्म मे तामस योनि (पशु-पक्षि) भोग कर आया है। यह निश्चय है॥१६॥ मगल केतु से युक्त (नवाशेश) हो और सम राशि मे हो तो समान राजस योनि मे था। शुभराशि मे उच्चस्थ हो तो सात्विक योनि मे था। इस प्रकार जैसी योनि मे था वैसा ही तामस राजस, सात्विक पाप भी रहना॥१७॥ इसी प्रकार स बुद्धिमान को चाहिए कि-लग्न के नवाश मे निश्चय करके इस जन्म के भी तामस, राजस तथा सात्विक कर्म का कथन करे॥१८॥ सम्पूर्ण मानव समाज के तीन जन्म के तीन नक्षत्र जाने॥१९॥ दूसरा यह मनुष्य जन्म का नक्षत्र तीसरा बन्धु वर्ग का जानो॥२०॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० पूर्वजन्मवर्णन नामाष्टाविंशोऽध्याय ॥२८॥

जीवानां सुखदु:खवर्णनाध्याय

सुजन्मोवाच—आजन्ममृत्युपर्यन्त जगत सुखदु:खकम् ॥ ब्रूहि मे कृपया सौम्य विवाहादि सुतादिकम् ॥१॥ लोमश उवाच—सूर्यारराहुमदानामशान्सयोज्य सस्कृत ॥ तदापु शरघाप्तस्य भाग कृत्वा वदेत्फलम् ॥२॥ तद्भागे दुर्गत वाच्य इषूनाप्ते पीडन क्वचित् ॥ वेदोनाप्ते सुख किचित्पड्नाप्ते स्त्रिया भयम् ॥३॥ दशोनाप्ते हि हृत्पीडा भूपोनाप्ते हि भेषजम् ॥ विशोनाप्ते स्फुटतनु तत्त्वोनाप्ते श्रुतौ व्यथा ॥४॥ त्रिशोनाप्ते शीतलादीन् द्विवेदोनाप्ते भय मृते ॥ पचाशन्न्यूनकेनाप्ते वारिभीतिर्निगद्यते ॥५॥

सुखदु:खवर्णनाध्याय (लोमश सहिता से)

(सुजन्मा, लोमश सवाद) सुजन्मा न कहा-जन्म स मृत्यु तक के सुख, दुख विवाह, सन्तान आदि का विचार कहिए॥१॥ ऋषि लोमशजी ने कहा-सूर्य, मगल, राहु तथा शनि के अश कला, विकला अको को जोडना पश्चात् आगे कहे हुए अको को घटाकर शेष जो रहे उसकी (यहा राशि अक नही रहेगा। केवल अशादि अक रहेगा) अश सख्या ही आयु की

—

लग्नांशे मित्रमृत्यु स्याद्गुरूणा सहचारिणाम्।पचमांशे प्राप्तिकरस्तत्पचांशे धन लभेत् ॥१५॥ पष्ठांशो दु खदस्तस्य तत्पष्ठांश च वा दिशेत् ॥ सप्तांशे तद्दशांशे वा घाता वाच्या शिलादित ॥१६॥ लग्ने वित्ते शिलापातो जलघातस्त्रितुर्ययो ॥ पुत्रे षष्ठे वृक्षघातो मन्दे मृत्यौ चतुष्पदात् ॥१७॥ धर्मे कर्मे कर्कघातो व्यये लाभे सरीसृपात् ॥ एव स्थिति स्याद्ग्रहाणा सप्तांशकफल वदेत् ॥१८॥ आशांशे पुण्यदानादि रुद्रांशे समदु खकम् ॥ अष्टमांशे मित्रयोगो नवमांशे गुरोर्वदेत् ॥१९॥ अर्कांशेतिव्ययो वाच्यो विश्वांशो मानहानिद ॥ शक्रांशे कलह वाच्य तिथ्यंशे चौरकान्वदेत् ॥२०॥ भूपांशे परजायादिसगावाप्तिर्निगद्यते ॥ अत्यष्ट्यंशे हि नोद्वेगो धृत्यंशे शुचमादिशेत् ॥२१॥ अतिधृत्य . शके यात्रा विशांशे बधनादिकान् ॥ अर्को व्यवस्थितो यत्र तत्रैव पितृज सुखम् ॥२२॥

लग्नांश मे गुरु, मित्र आदि की मृत्यु। पचमांश प्राप्तिकारक है। २५ वे भाग मे धनप्राप्ति हो। पष्ठांश दु खदायी है। ३६वा भाग भी दु खदायी है। सप्तांश या दशांश मे शिला आदि से घात हो॥१५॥१६॥ लग्न के तथा धनभाव के भाग मे शिला से घात। ३।४ थे भाग मे जलाघात ५।६मे वृक्षघात। ७।८मे चौपायेसे घात॥१७॥ ९।१० से कर्क (केकडा) जलजन्तु से घात। ११।१२ मे सर्प से घात होता है॥ इस प्रकार १२ भाग करके १२ भावो पर फल समझना। और ७ भाग करके ७ ग्रहो के अनुसार फल समझना॥१८॥ १० म अंश मे पुण्यवान आदि तथा ११वे मे साधारण दु ख। ८ म अंश मे मित्रयोग और नवमांश मे गुरुयोग होता है॥१९॥ १२ वे अंश मे अतिखर्च। १३ वे मे मानहानि। १४ वे मे कलह। १५वे मे चौरभय॥२०॥ १६ वें अंश मे परस्त्रीसग।१७मेश्रेष्ठ। १८ मे चिन्ता होती है॥२१॥ १९ वे मे यात्रा। २० वे मे बधन होता है। सूर्य स्थित जो अंश है उसमे पिता को सुख होता है॥२२॥

यत्र चद्र स्थितस्तत्र विवाह परिकल्पितम् ॥ भ्रातृयोगो भवेत्तत्र यत्रागारकसस्थिति ॥२३॥ स्वसायोगो हि यत्र ज्ञो यत्र वाचस्पति स्थित ॥ तत्र पुत्रो यत्र शुक्रस्तत्र कन्या प्रकीर्तिता ॥२४॥ यत्र मद स्थितस्तत्र मातृज सुखमादिशेत् ॥ एव ग्रहानुसारेण सुखादि परिचितयेत् ॥२५॥ लग्नाधीशमदाधीशौ भागादिवेद सगुणौ॥कृत्वा तदतरमिते वर्षे वाच्यो विवाहक ॥२६॥तत्पौ यत्र स्थितौ भावयोगे चातरके तथा ॥ राशि विवाहद्विगुणौ तद्वर्षे वा विवाहकम् ॥२७॥ तत्पस्योरतर कार्य राशिभागादिकान्हरेत् ॥ लब्धाकतुल्यमुद्वाहमेपाके वा विनिर्दिशेत् ॥२८॥ एव सुतर्क्षलाभाभ्या पुत्रकन्ये विचिन्तयेत् ॥ तथैव भ्रातृभाग्याभ्या भ्रातृभगिनी विचिन्तयेत् ॥२९॥ व्ययलाभातर कार्यतत्पत्योरपि चातरम् ॥ भावातर व्यय ज्ञेय लाभ स्वाम्यतरक्रमात् ॥३०॥

जिस अंश मे चन्द्रमा हो उसमे विवाह हो। मगल के अंश मे भ्रातृयोग होता है॥२३॥ बुधांश मे बहिन और गुरु अंश मे पुत्र तथा शुक्रांश मे कन्या हो॥२४॥ शन्यंश मे मातृ सुख। इस प्रकार ग्रहो से सुख की कल्पना करे॥२५॥ लग्न सप्तमेश के अंशादि को ४ से गुणा करे तो अंशो के वर्ष मे विवाह होता है॥२६॥ लग्न सप्तमेश जिन स्थानो मे हो उन भावो की राशियो

का योग और अन्तर करे तो विवाह का वर्ष होगा। अथवा द्विगुण अंक विवाह का वर्ष होगा॥२६॥ अथवा १।७ के स्वामीके राश्यादि अंकका अंतर करे और भावो के योग मे भाग दे तो लब्धांक तुल्य वर्ष मे विवाह होता है॥२८॥ इसी प्रकार ५।११ भाव से पुत्रकन्या का विचार करे। तथा भ्रातृ भाग्य से भाई बहन का विचार करे॥२९॥ ११।१२ भाव का अन्तर करे तो व्ययवर्ष और भावेशो के अन्तर लाभ वर्ष होते है॥३०॥

सूर्येन्द्वारज्ञेज्यशुक्रमदाना भार्गवादय ॥ तत्तत्सस्थितभावाना राशिभागादिका युति ॥३१॥
तद्योगे द्वादशे तष्टे जन्ममासे मृति वदेत् ॥ त्रिशद्गुण्य दिन ज्ञेयमेव नाडीपलादिकम् ॥३२॥
लग्नचद्रातर कार्यं तत्कला तत्पलादिकम् ॥ जन्मकाले विहीने तु जलप्रसव उच्यते ॥३३॥
सूर्यचद्रातर कार्यं तनुयुक्त तयोत्तरम् ॥ तत्तत्प्रमितिके वर्षे लाभ वै पुष्कल वदेत् ॥३४॥
राशिलग्नपयोर्योगे मृत्युयुक्ते विनिर्दिशे ॥ ऋण वा ऋणमुक्त वा भवेद्वै चद्रयोगके ॥३५॥
सूर्येन्दुलग्नसयोगे राशीशस्पष्टसयुते ॥ तद्वर्षे महती पीडा हीने सौख्य न सशय ॥३६॥
सुतभाग्यातर कार्यं तद्वर्षे शीतलादिकम् ॥ लग्नस्यातरसयोगे पितुर्मृत्युर्न सशय ॥३७॥
राशीशाकर्मसयोगे तदा कर्मोदये वदेत् ॥ धर्मव्ययरामायोगे तद्वर्षे व्ययनिश्चय ॥३८॥
मदनातरभावेषु सर्वत्रैव विलक्षयेत् ॥ भाग्यादिमृत्युपर्यंत ग्रहाणा फलमुच्यते ॥३९॥ यत्त्वया खलु मे पृष्ट तदिद कथित मया ॥ यस्मै कस्मै न दातव्य स्ववाक्यपरिसिद्धये ॥४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखडसाराशे जीवाना सुखदु खवर्णन नामैकोनत्रिशत्तमोऽध्याय ॥२९॥

सू० च० म० बु० बृ० शु० श० इन ग्रहो के ग्रहस्थित भावो का योग कर॥३१॥ इस जोड मे १२ का भाग दे तो उस वर्ष मे जन्म के मास मे मृत्यु कहे। तीस ३० से गुनने पर दिन घटी पल समय होगा॥३२॥ लग्न चन्द्रका अन्तर करे। उसमे इष्ट घटावे तो जलप्रसव (गर्भाधान) का इष्ट होता है॥३३॥ सूर्य चन्द्रान्तर मे लग्न जोडे। आगत वर्ष मे बहुत लाभ हो॥३४॥ लग्न और लग्नेश को जोडकर अष्टमभाव भी जोडे। उस वर्ष मे ऋण होता है। चन्द्रयोग के वर्षमे ऋण मुक्त होता है॥३५॥ लग्न सू० च० योगवर्ष मे पीडा और अन्तरवर्ष मे सुख होता है॥३६॥ ५।९ भावान्तर वर्ष मे शीतला तथा १/२ के अन्तर के योग वर्ष मे पिता की मृत्यु॥ लग्न दशम सयोग वर्ष मे भाग्योदय। ९/१२ योगवर्ष म व्यय होता है॥ सातवे भाव तक के सब भावो मे इसी प्रकार विचारना चाहिए। भाग्य से अष्टम भाव तक के ग्रहो का फल कहा गया॥ जो तुमने हमसे पूछा था सो सब हमने तुमसे कह दिया है। अपनी वाक्सिद्धि की रक्षार्थ यह ज्ञान जिस किसी को नही देना॥३१-४०॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० ख०सा० जीवाना सुखदु खवर्णन नामैकोनत्रिशत्तमोऽध्याय ॥२९॥

उदाहरणार्थ स्पष्टचक्र

सर्व ग्रह अंशादि भाव राश्यादियोग में निम्न अंक घटाकर १२० का भाग दें। शेष आयु के वर्ष हैं।

ऊनांक स्त्री

७

२०	पीडा	६०	चौरभय
४०	सुख	७००	अग्निभय
६०	स्त्रीभय	८०	अल्पपात
१००	हृत्पीडा	९०	" "
१४०	औषधसेवन	१०००	पुत्रलाभ
२००	स्फुटतनु	१०८०	व्याधि
२५०	कर्णव्यथा	११६०	विवाह
३००	शीतलामय	१२०	मृत्यु(१मासबाद)
३२	मृत्युभय	०	
५००	वातिशीति	०	

१

त्रिभागे तत्त्रिभागे— घातात् बध्याति
तुषारि तनुराशौ— मात्रादि मरण
धनांशे— धनहरण
सहभागे— मृत्यु
सुखांशे— मातृमृत्यु
सुतांशे— सुतमृत्यु
रिपुभागे— रिपुमृत्यु
जायांशे— जायामृत्यु
अष्टमांशे— ऋणरमृत्यु
भाग्यांशे— प्रभुमृत्यु
कर्मांशे— पितृमृत्यु
लाभांशे— जीविका हानि
व्ययांशे— पशुवाहन हानि
सप्तांशे— मित्रमृत्यु

९

बाद—सू० म० रा० श० से (भागयोग से) अशुभफल
और च० बुध० गु० शु० से (भागयोग से) शुभफल

१

	पञ्चमांशे—	प्राप्ति
	तत्पञ्चमांशे—	धनप्राप्ति
	षष्ठांशे—	दुःखद
३	तत्षष्ठांशे—	" "
	सप्तांशे—	घात
	दशांशे—	घात
	लग्ने स्थिते—	शिलाघात
	३-४—	जलघात
४	५-६—	वृक्षघात
	७-८—	चतुष्पद घात
	९-१०—	कर्कघात
	११-१२—	सर्पघात
एव स्थिति स्याद् ग्रहाणां सप्तांशकफल भवेत्—		
	आत्मांशे—	पुण्यवान
	रुद्रांशे—	रागदुःख
	अष्टमांशे—	मित्रयोग
	नवमांशे—	गुरो भवेत्
	अर्कांशे—	अतिव्यय
	१३ विश्वांशे—	मानहानि
५	१४ शक्रांशे—	कलह
	१५ तिष्यांशे—	चौरभय
	१६ भूपांशे—	परजायासम
	१७ अत्यष्टयंशे—	उद्वेगशान्ति
	१८ धृत्यंशे—	शोक
	१९ अतिधृत्यंशे—	यात्रा
	विंशे २० अंशे—	शयन
	सूर्यस्थितिवशात्—	पितृसुख
	चन्द्र- " "—	विवाह सुख
	भौम " "—	भ्रातृयोग सुख
	बुध " "—	भगिनी सुख
६	गुरु " "—	पुत्र योग सुख
	शुक्र " "—	कन्यायोग सुख
	शनि " "	मातृ सुख

७— विवाह— १-लग्नेश, सप्तमेश के अंशादि चतुर्गुणित करके अन्तर करे। अंशमित वर्ष मे विवाह हो।
२-लग्नेश, सप्तमेश स्थित भाव योग या अन्तर के वर्ष मे अथवा द्विगुण मे
३-लग्नेश, सप्तमेश का अन्तर करके अंश करे, तत्तुल्य वर्ष मे विवाह हो।

---

१ इसी तरह ५।११ भावेशों से-पुत्र कन्या का विवाह कहना।
२-३।९ भावेशों से भाई बहिन का विवाह देखना।

८— लाभ तथा व्यय भावो के अन्तर से वर्ष,
और ११।१२ के स्वामी के अन्तर से लाभ

९— सूर्य से शनि तक के ग्रहो के भावादि तथा ग्रहस्थित भावों के राश्यादि (सब) जोडकर (अंश करके १२० का भाग दे, शेष तक अल्प, मध्य दीर्घ आयु के अनुसार आयु क वर्ष हैं। तथा उस सख्या मे १२ का भाग दे, शेष मास हैं। ३० से दिन और ६० से घटी एव पल हैं।

(इसीमे न० १ क्रिया का योग है)

ग्रहयोग से विचार

१— आधान— लग्न चन्द्रान्तर से।
२— अधिकलाभ— सूर्य चन्द्रान्तरमे लग्न योग।
३— ऋणमुक्ति— चन्द्र लग्नेश योग से।
४— ऋण— चन्द्र अष्टमेश योग से।
५— महान् कष्ट— सू० च० चन्द्रेश लग्नयोग से
१०. ६— कष्टमुक्ति— सू०च०श० इनका योग राशीशसे अल्प हो।
७— शीतला— ५।९ भावोंके अन्तर मे (भाग वर्ष)
८— पितृमृत्यु— १।२ के अन्तर, या योग से
९— भाग्योदय— चन्द्रेश तथा लग्न के योग में
१०— विशेष व्यय— ९-१२ के योग वर्ष मे

ग्रहों के ध्रुवांक (जातक तत्त्व से)

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०
१९,	४,	१९,	१०,	१३,	८,	३०,	१८

ग्रहाद्यवस्थाफलमाह्

मैत्रेय उवाच—आदित्यादि ग्रहाणां च ह्यवस्था च पृथक्पृथक् ॥ भेदाःकतिविधाःसंति कथय त्वं कृपानिधे ॥१॥

पराशर उवाच—भास्करादिग्रहाणां च ह्यवस्था विविधापि च ॥ षण्णवत्यामितावस्था सारभूतं वदाम्यहम् ॥२॥

ग्रहादिअवस्था फल कथन

मैत्रेयजी ने कहा-सूर्य आदि ग्रहो की अलग अलग अवस्था तथा भेद कितने हैं सो कहिये॥ पराशरजी ने कहा-सूर्य आदि ग्रहो की अनेक अवस्था है, उनमे मुख्य ९६ अवस्था है। उनमे से सारभूत अवस्था कहते हैं॥१-२॥

अथ जाग्रदाद्यवस्थामाह्

स्वराशांशं त्रिभाग च कल्पयित्वा पृथक् पृथक् ॥ विषमादिक्रमेणैव समे वै विपरीतकम् ॥३॥ विज्ञाय प्रथम पुसां जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिका ॥ विशेषत परीक्षा स्यात्जागरः कार्यसाधकः ॥४॥ स्वप्नाऽवस्था मध्यफला उपदेष्टा गुरुर्यथि ॥ निष्फला चरमावस्था ज्ञातव्या मुनिसत्तम ॥५॥

अथ दीप्ताद्यवस्थामाह्

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शांतो दीनोऽतिदुःखित ॥ विकलश्च खल कोपी नवधा खेचरो भवेत् ॥६॥ उच्चस्थः खेचरो दीप्तः स्वस्थ स्वोच्चातिमित्रभे ॥ मुदितो मित्रभे शातः समभे दीन उच्यते ॥७॥ शत्रुभे दुःखितोऽतीव विकल पापसयुतः ॥ खलः खलग्रहे ज्ञेयः कोपी स्यादर्कसंयुतः ॥८॥ पाके प्रदीप्तस्य धराधिपत्यमुत्साहशौर्यं धनवाहने च ॥ स्त्रीपुत्रलाभ शुभबधुपूजो क्षितीश्वरान्मा नमुपैति विद्याम् ॥९॥

जाग्रत आदि अवस्था

राशि के ३० अशो के ३ भाग कल्पना करो। प्रत्येक भाग मे जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ३ अवस्था होती हैं। विषम राशियो मे पहले १० अश तक जाग्रत, बाद २० अश तक स्वप्न, उसके बाद ३० अश तक सुषुप्ति। और सम राशि मे १० अश तक सुषुप्ति और २० अश तक स्वप्न तथा ३० तक जाग्रत अवस्था होती है॥३॥ प्रथम ग्रह की अवस्था जानकर

कथिता ग्रहाणाम् ॥१८॥ फलं तु किंचिद्वितनोति बालश्चार्द्धं कुमारो यतते न पुंसाम् ॥ युवा समग्रं खचरोऽथ वृद्धः फलं च दुष्टं मरणं मृताख्यम् ॥१९॥

अथ प्रवासाद्यवस्थाफलमाह

प्रवासनष्टा च मृता जया हास्या रतिर्मुदा ॥ सुप्ता भुक्ता ज्वरा कंपा सुस्थितिर्नामसन्निभा ॥२०॥
षष्टिघ्नं गतभं भुक्तघटीयुक्तं युगाहतम् ॥ शराब्धिहृल्लब्धतोऽर्काच्छेषावस्थाद्विजोत्तम ॥२१॥

खल ग्रह की दशा मे कलह, वियोग, माता पिता की मृत्यु या वियोग, शत्रु से भय, धन और भूमि का नाश तथा नित्य नई निन्दा होती है॥१६॥ क्रोधी ग्रह की दशा मे अनेक प्रकार के दु ख, धन, स्त्री, सुत, बन्धु इनका नाश, पुत्र आदि को पीडा तथा नेत्र मे बीमारी होती है॥१७॥ बाल आदि अवस्था तथा फल—बाल आदि ५ अवस्था होती हैं। बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत। ६–६ अशो की १–१ अवस्था होती है। विषम राशि मे लिखित क्रम से तथा सम राशि मे उल्टे क्रम से सूर्यादि ग्रहो की ये दशाये होती हैं। फल—ग्रह बाल अवस्था मे हो तो कुछ फल देता है। कुमार अवस्था मे यत्न करने से आधा फल तथा युवा अवस्था मे पूरा फल। वृद्ध अवस्था मे उद्योग हानि। और मृत्यु अवस्था मे मरणकारी है॥१८॥१९॥

प्रवास आदि अवस्था—प्रवास आदि १२ अवस्थाए होती हैं। प्रवास, नष्टा, मृता, जया, हास्या, रति, मुदा, सुप्ता, भुक्ता, ज्वरा, कन्या, सुस्थिति। इन अवस्थाओ का फल इनके नाम के समान है॥२०॥ वर्तमान नक्षत्र की भुक्त घटी (भयात्) मे गत नक्षत्र सख्या को ६० से गुणा करके योग करना। इस योग को पुन ४ से गुणा करना। फिर ४५ से भाग देना। जो शेष बचे वह यदि १२ से अधिक हो तो १२ से भाग देना। शेष बचे उस सख्या की अवस्था जानना॥२१॥

प्रवासःप्रवासोपगे जन्मकालेऽर्थनाशस्तु नष्टोपगे मृत्युभीतिः ॥ मृतावस्थिते स्याज्जयायां जयस्तु विलासस्तु हास्योपगे कामिनीभिः ॥२२॥ रतौ स्याद्रतिः क्रीडिता सौख्यदात्री प्रसुप्तापि निद्रा कलि देहपीडाम् ॥ भय तापहानिः सुख स्यात्तु भुक्त्वा ज्वरा कंपिता सुस्थिता सुक्रमेण ॥२३॥

अथ लज्जिताद्यवस्थामाह

लज्जितो गर्वितश्चैव क्षुधितस्तृषितस्तथा ॥ मुदितः क्षोभितश्चैव ग्रहभावा. प्रकीर्तिताः ॥२४॥
पुत्रगेहगतः खेटोः राहुकेतुयुतो भवेत् ॥ रविमन्दकुजैर्युक्तो लज्जितो ग्रह एव च ॥२५॥

फल—जन्मकाल मे ग्रह की प्रवास अवस्था हो तो मुसाफिरी। नाश अवस्था मे धन का नाश। मृत अवस्था मे मृत्यु से भय। जया अवस्था मे जय। हास्य अवस्था मे स्त्रियों से विलास। रति अवस्था मे रमण। सुप्त अवस्था मे निद्रा। कलि अवस्था मे देह पीडा। कम्पित अवस्था मे ज्वर। भुक्त अवस्था मे सुख और चिन्ता–हानि। सुस्थिर अवस्था मे शान्ति–दायिनी होती है॥२२॥२३॥

लज्जित आदि अवस्था–लज्जित, गर्वित, क्षुधित, तृषित, मुदित क्षुभित ये ६ अवस्थायें भी ग्रहों की होती है॥२४॥ पचम भाव में ग्रह स्थित हो सूर्य, मंगल, शनि से युक्त हो अथवा राहुकेतु से युक्त हो तो 'लज्जित' अवस्था होती है॥२५॥

तुंगस्थानगतो यद्यपि त्रिकोणेऽपि भवेत्पुनः ॥ गर्वितः सोऽपि गदितो निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥२६॥ शत्रुगेही शत्रुयुक्तो रिपुदृष्टो भवेद्यदि ॥ क्षुधितः स च विज्ञेयः शनियुक्तो यथा तथा ॥२७॥ जलराशौ स्थितः खेटः शत्रुणा चावलोकितः ॥ शुभग्रहा न पश्यंति तृषितः स उदाहृतः ॥२८॥ मित्रगेही मित्रयुक्तो मित्रेण चावलोकितः ॥ गुरुणा सहितो यश्च मुदितः स प्रकीर्तितः ॥२९॥ रविणा सहितो यश्च पापाः पश्यंति सर्वथा ॥ क्षोभितं तं विजानीयाच्छत्रुणा यदि वीक्षितः ॥३०॥ येषु येषु च भावेषु ग्रहास्तिष्ठंति सर्वथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरोः दुःखभाजनः ॥३१॥ एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वभावेषु पंडितैः ॥ बलाबलविचारेण वक्तव्यः फलनिर्णयः ॥३२॥

उच्च स्थान मे हो अथवा त्रिकोण मे हो तो 'गर्वित' अवस्था होती है॥२६॥ शत्रु गृह मे शत्रु ग्रह से युक्त या दृष्ट हो अथवा शनियुक्त हो तो 'क्षुधित' अवस्था होती है॥२७॥ ग्रह जलराशि मे शत्रु से दृष्ट हो, शुभग्रह की दृष्टि नही हो तो 'तृषित' अवस्था होती है॥२८॥ ग्रह मित्र के घर मे मित्रग्रह से युक्त तथा दृष्ट तथा गुरु सहित हो तो 'मुदित' होती है॥२९॥ जो ग्रह सूर्य युक्त हो पापग्रह देखते हो तथा शत्रु दृष्ट हो तो 'क्षुभित' है॥३०॥
फल–जिन २ भावो मे 'क्षुधित' और 'क्षुभित' ग्रह हो उन भावो का फल मनुष्य के लिये दुःखदायी होता है॥३१॥ इसी प्रकार भावो मे बलाबल का विचार करके फल का निर्णय करना चाहिए॥३२॥

अन्योन्यं च मुदा युक्तं फलं मिश्रं वदेत्पुनः ॥ बलहीने तदा हानिः सबले च महाफलम् ॥३३॥ कर्मस्थाने स्थितो यस्य लज्जितस्तृषितस्तथा ॥ क्षुधितः क्षोभितो वापि स नरो दुःखभाजनः ॥३४॥ सुतस्थाने भवेद्यस्य लज्जितो ग्रह एव च ॥ सुतनाशो भवेत्तस्य एकस्तिष्ठति सर्वदा ॥३५॥ क्षोभितस्तृषितश्चैव सप्तमे यस्य वा भवेत् ॥ म्रियते तस्य नारी च सत्यमाहुर्द्विजोत्तम ॥३६॥ नवालयारामसुखं नृपत्वं कलापटुत्वं विदधाति पुंसाम् ॥ सदार्थलाभं व्यवहारवृद्धिं फलं विशेषादिह गर्वितस्य ॥३७॥ भवति मुदितयोगे वासशालाविशाला विमलवसनभूषाभूमियोगाप्तु सौख्यम् ॥ स्वजनजनविलासो भूमिपागारवासो रिपुनिवहविनाशो बुद्धिविद्याविकासः ॥३८॥ विशति लज्जितभाववशाद्रतिं विगतराममतिं विमतिक्षयम् ॥ सुतगदागमनं गमनं वृथा कलिकथाभिरुचिं न रुचिं शुभे ॥३९॥

मुदित अवस्था मे ग्रह हो तो मिश्रित फल कहना चाहिए। ग्रह बलहीन हो तो हानि, बलवान् हो तो महाफल होता है॥३३॥ जिस जातक के दशमभाव मे लज्जित, तृषित, क्षुधित, क्षोभित ग्रह हो, वह मनुष्य सदा सुखी रहता है॥३४॥ जिसके पचम भाव मे लज्जित ग्रह हो उसके एक ही पुत्र सतान होती है और सतान का नाश होता है॥३५॥ हे मैत्रेय! जिसके सप्तम स्थान मे क्षोभित या तृषित ग्रह हो उसकी स्त्री की मृत्यु होती है यह निश्चय है॥३६॥ गर्वितग्रह श्रेष्ठ भाव मे होने से नये मकान, बगीचा, धन लाभ, व्यापार वृद्धि, अनेक प्रकार

की विद्या प्राप्त कराता है॥३७॥ मुदित ग्रह के योग से विशाल महल, निर्मल वस्त्र, भूषण, भूमि, सुख, मित्रो मे आनन्द, शत्रुओ का नाश, विद्या और बुद्धि का विकास करता है॥३८॥ लज्जित ग्रह भक्ति हीनता, कुबुद्धि, कलहप्रियता, वृथा यात्रा, संतान की बीमारी और शुभ कार्य मे अरुचि करता है॥३९॥

सक्षोभितस्यापि फलं विशेषाद्दरिद्रजातं कुमतिं च कष्टम्.॥ करोति वित्तक्षयमङ्घ्रिबाधां धनाप्तिबाधामवनीशकोपात् ॥४०॥ क्षुधितग्रहवशाद्वै शोकमोहादिपातः परिजनपरितापादाधिभीत्या कृशत्वम् ॥ कलिरपि रिपुलोकैरर्थबाधा नराणामखिलबलनिरोधो बुद्धिरोधो विवादात् ॥४१॥ तृषितखगभवे स्यादंगनासङ्गमध्ये भवति गदविकारो दुष्टकार्याधिकारः ॥ निजजनपरिवादादर्थहानिः कृशत्वं खलकृतपरितापो मानहानिः सदैव ॥४२॥

क्षोभित ग्रह विशेष दरिद्री, कुमति, रोगी, धन हानि, पैर की बीमारी, राजकोप से व्यापार मे हानि कराता है॥४०॥ क्षुधित ग्रह शोक, मोह, दुःख, चिन्ता, भय, परिताप, कृशता, शत्रुओ से कलह, धन हानि, किंकर्तव्यविमूढता तथा दुर्बलता देता है॥४१॥ तृषित ग्रह स्त्री को बीमारी, बुरे काम मे रति, निन्दा, धन–हानि, मानहानि, कृशता और शत्रु से दुःख पहुँचाता है॥४२॥

अथ शयनाद्यवस्थामाह

शयनं चोपवेशं च नेत्रपाणिप्रकाशनम् ॥ गमनागमनं चापि सभायां वसतिं तथा ॥४३॥ आगमं भोजनं चैव नृत्यं लिप्सां च कौतुकम् ॥ निद्रां ग्रहाणां चेष्टां च कथयामि तवाग्रतः ॥४४॥ यस्मिन्नृक्षे भवेत्खेटस्तेन तं परिपूरयेत् ॥ पुनरंशेन संपूर्य स्वनक्षत्रे नियोजयेत्॥४५॥ यातदंडं तथा लग्नमेकीकृत्य सदा बुधः ॥ रविणा हरते भागं शेषं कार्ये नियोजयेत् ॥४६॥ नाक्षत्रिकदशाक्रमेण पुनः पूरणमाचरेत् ॥ नामाक्षरेण संयुक्तं हर्तव्यं रविणा हतं ॥४७॥ रवौ पंच तथा देयं चन्द्रे दद्याद्द्वयं तथा ॥ कुजे द्वयं च संयुक्ते बुधे त्रीणि नियोजयेत् ॥४८॥ गुरौ बाणाः प्रदेयाश्च त्रयं दद्याच्च भार्गवे ॥ शनौ त्रयमथो देयं राहौ दद्याच्चतुष्टयम् ॥४९॥ शेषं हृतं च रामेण ग्रहाणां त्रिविधं भवेत् ॥ दृष्टिं चेष्टां विचेष्टां च कथयामि तवाग्रतः ॥५०॥

शयन आदि अवस्था–शयन, उपवेशन, नेत्र–हस्त प्रकाशन, गमन, आगमन, सभा स्थिति, आगम, भोजन, नृत्य, लिप्सा, कौतुक और निद्रा। ग्रहो की ये चेष्टाये कहते है॥४३॥४४॥ ग्रह जिस नक्षत्र मे हो उस नक्षत्र संख्या से ग्रह की संख्या को गुणा करना। बाद ग्रह के भुक्तांश संख्या से गुणा करना। पश्चात् वर्तमान नक्षत्र संख्या जन्म की ईष्ट घटी और जन्म का लग्न ये सब जोडना। बाद १२ का भाग देना, जो संख्या शेष रहे उस संख्या की पूर्वोक्त अवस्था जानना। और पूर्वागत संख्या मे ३ का भाग देने से जो शेष बचे वह क्रमशः दृष्टि, चेष्टा और विचेष्टा अवस्था होती है॥४५॥४६॥ नाक्षत्रिक दशा के लिये क्रम से पूर्वागत संख्या मे सूर्य की दशा के लिये ५, चन्द्रमा का २, मंगल का २, बुध का ३, गुरु का ५, शुक्र का ३, शनि का ३, राहु का ४ तथा केतु का ४ होते हैं॥४७ से ५०॥

स्वरांशचक्रमिदम्				
१	२	३	४	५
अ	इ	उ	ए	ओ
क	ख	ग	घ	च
छ	ज	झ	ट	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

सूर्यादिक्षेपकचक्रम्								
सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
५	२	२	३	५	३	३	४	४

दृष्टिभेदमाह

दृष्टौ स्वल्पफलं ज्ञेयं चेष्टायां विपुलं फलम् ॥
विचेष्टायां फलं न स्यादेव दृष्टिफलं विदुः ॥५१॥
शुभाशुभ ग्रहाणां च समीक्ष्याय बलाबलम् ॥
तुंगस्थाने विशेषेण बलं ज्ञेयं यथा बुधैः ॥५२॥

दृष्टिभेद तथा फल

दृष्टि में स्वल्प फल, चेष्टा में पूर्णफल, विचेष्टा में हीन फल ॥५१॥ इस प्रकार ग्रहों का शुभाशुभ फल देखकर और उच्च स्थान में विशेष करके बल जानना चाहिए।॥५२॥

अथ प्रत्येकद्वादशावस्थाफलमाह

मंदाग्निरोगो बहुधा नराणां स्थूलत्वमंघ्रेरपि पित्तकोपः ॥ व्रणं गुदे शूलमुरः प्रदेशे यदोष्णभानौ शयनं प्रयाते ॥५३॥ दरिद्रता भारविहारशाली विवादविद्याभिरतो नरः स्यात् ॥ कठोरचित्तः खलु नष्टवित्तः सूर्यो यदा चेदुपवेशनस्थः ॥५४॥ नरः सदानंदधरो विवेकी परोपकारी बलवित्तयुक्त ॥ महासुखी राजकृपाभिमानी दिवाधिनाथो यदि नेत्रपाणी ॥५५॥ उदारचित्तः परिपूर्णवित्तः सभासु वक्ता बहुपुण्यकर्त्ता ॥ महाबली सुंदररूपशाली प्रकाशने जन्मनि पद्मिनीशे ॥५६॥ प्रवासशाली किल दुःखभाली सदालसी धीधनवर्जितश्च ॥ भयातुरः कोपपरो विशेषद्विवाधिनाथे गमने मनुष्यः ॥५७॥ परदाररतो जनतारहितो बहुधागमने गमनाभिरुचिः कृपणः खलताकुशलो मलिनो दिवसाधिपतौ मनुजः कुमति ॥५८॥

द्वादश अवस्था के फल

सूर्य के फल–सूर्य शयन अवस्था मे हो तो मन्दाग्नि, स्थूलता, नेत्ररोग, पित्तप्रकोप, व्रण, छाती मे शूल आदिरोग होते हैं।।५३।। सूर्य यदि उपवेशन अवस्था मे हो तो दरिद्रता, विहारशाली, (घुमक्कड) विद्या सम्बन्धी विवाद, कठोर चित्त तथा दरिद्र होता है।।५४।। सूर्य नेत्रपाणि प्रकम्पन अवस्था मे हो तो मनुष्य आनन्दी, विवेकी, परोपकारी, धनी तथा बलवान्, महासुखी, तथा राजकृपायुक्त होता है।।५५।।ग्रह यदि प्रकाशन अवस्था मे हो तो उदार, महाधनी,व्याख्याता धर्मात्मा, महाबली तथा सुन्दर होता है।।५६।। सूर्य गमन अवस्था मे हो तो प्रवासशाली, दुःखी, आलसी, निर्धन, भयातुर, क्रोधी होता है।।५७।। आगमन अवस्था में पर स्त्रीगामी, समाज बहिष्कृत, प्रवासी, कृपण खल (दुष्ट) कुमति तथा मलिन होता है।।५८।।

सभागते हिते नरःपरोपकारतत्परःसदार्थरत्नपूरितो दिवाकरे गुणाकरः।। वसुंधरानवांबरालयान्वितो महाबली विचित्रमित्रवत्सलः कृपाकलाधरः परः ।।५९।। क्षोभितो रिपुगणैः सदा नरश्चंचलः खलमतिः कृशस्तथा ।। धर्मकर्मरहितो मदोद्धतश्चागमे दिनपतौ यदा तदा ।।६०।। सर्वांगसंधिवेदनापरांगनाधनक्षयो बलक्षयः पदे पदे यदा तदा हि भोजने ।। असत्यता शिरोव्यथा तथा वृथान्नभोजन रवावसत्कथारतिः कुमार्गगामिनी मतिः ।।६१।। विशालोकैः सदा मंडितः पंडितः काव्यविद्यानवद्यप्रलापान्वितः ।। राजपूज्यो धरामंडले सर्वदा नृत्यलिप्सागते पद्मिनीनायके ।।६२।। सर्वदानंदधर्ता जनो ज्ञानवान्यज्ञकर्ता धराधीशसद्मस्थितः ।। पद्यबंधादरातेर्भयं स्वामिनः काव्यविद्याप्रलापी मुदा कौतुके ।।६३।। निद्राभरारक्तनिभे भवेतां निद्रागते लोचनपद्मयुग्मे ।। रवौ विदेशे वसतिर्जनस्य कलत्रहानिः कृतिधार्थनाशः ।।६४।।

सूर्य सभा मे हो तो मनुष्य परोपकार तत्पर, धनधान्य पूरित, गुणी, भूमि सम्पतियुक्त, महाबली, मित्र–वत्सल और कृपालु होता है।।५९।। सूर्य आगम अवस्था मे हो तो जातक शत्रु पीडित, चचल, दुष्टबुद्धि, दुर्बल, धर्मकर्म रहित तथा घमण्डी होता है।।६०।। सूर्य भोजन अवस्था मे हो तो सधि–वेदना, परागना रत, निर्धन, निर्बल, असत्यभाषी, असत्यारति, (गपाडी) वृथान्नभोजी तथा कुमार्गगामी होता है।।६१।। सूर्य नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो जातक विद्वत्समाज का मान्य पण्डित, मेधावी तथा राजपूज्य होता है।।६२।। सूर्य कौतुक अवस्था मे हो तो जातक सदानदी ज्ञानी, यज्ञकर्ता, राजनिवासी, काव्य विनोदी, तथा सुखी होता है।।६३।। सूर्य निद्रावस्था मे हो तो निद्रालु, प्रवासी, भार्यारहित, दरिद्री होता है।।६४।।

अथ चन्द्रफलम्–जनुःकाले क्षपानाथे शयनं चेदुपागते।।मानी शीतप्रधानश्च कामी वित्तविनाशकः ।।६५।। रोगार्दितो मन्दमतिर्विशेषाद्वित्तेन हीनो मनुजः कठोरः ।। अकार्यकारी परवित्तहारी क्षपाकरे चेदुपवेशनस्थे ।।६६।। नेत्रपाणौ क्षपानाथे महारोगी नरो भवेत् ।। अनल्पजल्पको धूर्तः कुकर्मनिरतः सदा ।।६७।। यदा राकानाथे गतवति विकाशं च जनने विकाशः संसारे विमलगुणराशेरवनिपात् ।। नवाश्वामाला स्यात्करितुरगलक्ष्म्या परिवृता विभूषा योषाभिः सुखमनुदिन तीर्थगमनम् ।।६८।। सितेतरे पापरतो निशाकरे विशेषतः

क्रूरतरो नरो भवेत् ॥ सदाशिरोगैः परिपीड्यमानो वलक्षपक्षे गमने भयातुरः ॥६९॥ विधवागमनो मानी पापरोगी नरो भवेत् ॥ गुप्तपापरतो दीनो मतितोषविवर्जितः ॥७०॥ सकलजनवदान्यो राजराजेन्द्रमान्यो रतिपतिसमकांतिः शांतिकृत्कामिनीनाम् ॥ सपदि सदसि याते चारबिंबे शशांके भवति परमरीतिप्रीतिविज्ञो गुणज्ञः ॥७१॥

चन्द्रफल—जन्मकाल में यदि चन्द्रमा शयनअवस्था मे हो तो अभिमानी, कफप्रकृति, कामी और शांत स्वभाव का होता है॥६५॥ यदि चन्द्रमा उपवेशन में हो तो रोगी, मदमति, दरिद्र, कठोर चोर, अकार्यकारी होता है॥६६॥ चन्द्रमा नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो महारोगी, बकवादी, धूर्त, कुकर्मी होता है॥६७॥ यदि चन्द्रमा विकाश अवस्था मे हो तो जातक विकासबुद्धि राजाश्रयी,ससारप्रसिद्ध महाधनी,भोगी,तीर्थयात्राभिलाषी होता है॥६८॥ यदि चन्द्रमा कृष्णपक्ष में तथा गमनअवस्था में हो तो मनुष्य पापी, अतिक्रूर, शिर रोग से पीडित होता है। और शुक्ल पक्ष मे जन्म हो तो भयातुर होता है॥६९॥ यदि चन्द्रमा आगम अवस्थामे हो तो जातक विधवागामी, अभिमानी, पापरोगी, गुप्तपापी, दीन, बुद्धिहीन तथा असन्तोषी होता है॥७०॥ यदि जन्मसमय मे चन्द्रमा सभा में हो तो जातक समाज मे मान्य, राजमान्य, अतिसुन्दर, कीर्तिमान्, कामिनीभोगी, रीतिनीति का जानने तथा गुणज्ञ होता है॥७१॥

विधवागमनो मर्त्यो वाचालो धर्मपूरितः ॥ कृष्णपक्षे द्विभार्यः स्याद्रोगी दुष्टतरो हठी ॥७२॥ भाजने जनुषि पूर्णचंद्रमा मानयानजनतासुखं नृणाम् ॥ आतनोति वनितासुतामुखं सर्वमेव न सितेतरे शुभम् ॥७३॥ नृत्यलिप्सागते चंद्रे सबले बलवान्नरः ॥ गीतज्ञो हि रसज्ञश्च कृष्णे पापकरो भवेत् ॥७४॥ कौतुकभवनं गतवति चंद्रे भवति नृपत्वं वा धनपत्वम् ॥ कामकलासु सदा कुशलत्वंवारवधूरतिरमणपटुत्वम् ॥७५॥ निद्रागते जन्मनि मानवानां कलाधरे जीवयुते महत्त्वम् ॥ धनांगमासंचितवित्तनाशः शिवालयं रौति विचित्रमुच्चैः ॥७६॥

चन्द्रमा आगम अवस्था मे हो तो जातक विधवासेवी, वाचाल, धर्मात्मा, दो स्त्रीवाला, अतिदुष्ट, रोगी तथा हठी होता है॥७२॥ यदि चद्रमा भाजन अवस्था में हो तो सन्मान, सवारी, स्त्री, धन, सतान का सुख होता है। तथा कृष्णपक्ष मे विपरीत फल होता है॥७३॥ यदि चद्रमा नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो मनुष्य बलवान्, गायन विद्या रसिक होता है। और कृष्णपक्ष मे पापी होता है॥७४॥ यदि चद्रमा कौतुक भवन मे हो तो मनुष्य राजा, धनपति, कुशल, तथा वारवनिता विलासी होता है॥७५॥ यदि चद्रमा निद्रा अवस्था मे हो तो स्त्री, धनहीन, सचित धन का नाश करनेवाला तथा शिवालय मे विचित्र प्रकार से शब्द करनेवाला होता है॥७६॥

अथ कुजफलम्—शयने वसुधापुत्रे क्षतुरंगे क्षतो भवेत् ॥ बहुना कंडुना युक्तो दद्रुणा च विशेषतः ॥७७॥ बली सदा पापरतो नरः स्यादसत्यवादी नितरां प्रगल्भः ॥ धनेन पूर्णो निजधर्महीनो धरासुतश्चेदुपवेशनस्थः ॥७८॥ यदा भूमिसुते लग्ने नेत्रपाणिमुपागते ॥ दरिद्रता सदा पुसामन्यभे नगरेशता ॥७९॥ प्रकाशो गुणस्यापि वासः प्रकाशे धराधीशभर्तुः सदा मानवृद्धिः ॥ सुते भूसुते पुत्रकातावियोगो भवेद्राहुणा दारुणो वा निपातः ॥८०॥ गमनागमने

कुरुतेऽनुदिन व्रणजालभयं वनिताकलहः ॥ बहुदद्रुककण्डुभयं बहुधा वसुधातनयो वसुहानिकरः ॥८१॥ आगमने गुणशाली मणिमाली करालकरवाली ॥ गजगता रिपुहन्ता परिजनसंतापहारको भौमे ॥८२॥ तुंगे युद्धकलाकलापकुशलो धर्मध्वजो वित्तपः कोणे भूमिसुते सभामुपगते विद्याविहीनः पुमान् ॥ अंतेऽपत्यकलत्रमित्ररहितः प्रोक्तेतरस्थानगेऽवश्यं राजसभाबुधो बहुधनी मानी च दानी जनः ॥८३॥

मंगल का फल–यदि मंगल शयन अवस्था में हो तो मनुष्य खाज, खुजली वाला होता है॥७७॥ यदि मंगल उपवेशन अवस्था में हो तो मनुष्य बलवान सदा पापरत असत्यभाषी, बकवादी, धनहीन, धर्महीन होता है॥७८॥ मंगल जब लग्न में नेत्रपाणि अवस्था में हो तो पुरुष को दरिद्र करता है। वह मंगल अन्यराशि में हो तो नगर का स्वामी करता है॥७९॥ जब मंगल प्रकाश अवस्था में हो तो तब जातक के गुणों का प्रकाश करता है। राजा से सदा सन्मान की वृद्धि होती है। और पंचमभाव में हो तो पुत्र स्त्री से वियोग करता है। राहु से युक्त या दृष्ट हो तो दु:खदायी पतन होता है॥८०॥ मंगल गमनागमन अवस्था में हो तो घावों से भय, स्त्री से कलह, वाद, खाज, खुजली तथा धनहानि कारक है॥८१॥ मंगल आगमन अवस्था में हो तो गुणी, मणि–माणिक युक्त, करवाल (शस्त्र) धारी, हाथी की सवारी तथा शत्रुनाश कारी तथा बन्धुओं का दु:खहारी होता है॥८२॥ मंगल तुंग (उच्च) का होकर 'सभा' अवस्था में हो तो युद्धविद्या निपुण, धर्मात्मा, धनी होता है। यदि त्रिकोण स्थान में हो तो विद्याहीन तथा १२ भाव में हो तो स्त्री पुत्ररहित करता है। अन्य स्थान में बहुधनी, मानी तथा दानी होता है॥८३॥

आगमे भवति भूमिजे जनो धर्मकर्मरहितो गदातुरः ॥ कर्णमूलगुरुशूलरोगवानेव कातरमति कुसंगमी ॥८४॥ भोजने मिष्टभोजी च जनने सबले कुजे ॥ नीचकर्मकरो नित्य मनुजो मानवर्जितः ॥८५॥ नृत्यलिप्सागते भूसुते अम्मनामिदिरारराशिरायाति भूमीपतेः ॥ स्वर्णरत्नप्रवालैः सवामडितो वासशाला नराणा भवेत्सर्वदा॥८६॥कौतुकी भवति कौतुके कुजे मित्रपुत्रपरिपूरितो जनः ॥ उच्चगो नृपतिगेहमंडितः पूजितो गुणवरैर्गुणाकरः ॥८७॥ निद्रावस्था गते भौमे क्रोधी धीधनवर्जित ॥ धूर्तो धर्मपरिभ्रष्टो मनुष्यो गदपीडितः ॥८८॥

यदि मंगल आगम अवस्था में हो तो जातक धर्मकर्म रहित, रोगी, कर्णमूल में रोगी, डरपोक तथा कुसंगति वाला होता है॥८४॥ यदि मंगल भोजन अवस्था में हो और बलवान् हो तो मिष्टान्नभोजी, नीचकर्मकारी, तथा मानहीन होता है॥८५॥ मंगल 'नृत्यलिप्सा' अवस्था में हो तो बहुलक्ष्मी की प्राप्ति होती है। सुवर्ण रत्न आदि प्राप्त होता है। रहने की निजी विशाल भवन होता है॥८६॥ मंगल कौतुक अवस्था में हो तो जातक कौतुक में आश्चर्यजनक खेल जाननेवाला, मित्र–पुत्र युक्त हो तथा राशि में हो तो राजमहलों में गुणी गुणियों से पूजित होता है॥८७॥ मंगल निद्रावस्था में हो तो जातक क्रोधी, मूर्ख, दरिद्री, धूर्त, धर्मभ्रष्ट तथा रोगी होता है॥८८॥

अथ बुधफलम्

क्षुधातुरो भवेद्रंगो संजो गुंजानिभेक्षणः ॥ अन्यभे लपटो धूर्तो मनुजः शयने बुधे ॥८९॥ शशाकपुत्रे जनुरगमेहे यदोपवेशे गुणराशिपूर्ण. ॥ पापेक्षिते पापयुते दरिद्रो हिते शुभे वित्तसुखी मनुष्यः ॥९०॥ विद्याविवेकरहितो हिततोषहीनो मानी जनो भवति चद्रसुतेऽक्षपाणौ ॥ पुत्रालये सुतकलत्रसुखेन हीनः कन्याप्रजो नृपतिगेहबुधो वरार्थः ॥९१॥ दाता दयालुः खलु पुण्यकर्ता विकाशने चद्रसुते मनुष्य. ॥ अनेकविद्यार्णवपारगता विवेकपूर्णः खलवर्गहन्ता ॥९२॥ गमनागमने भवतो गमने बहुधा बसुधाधिपतेर्भवने ॥ भवन च विचित्रमल रमया विदि नुभ्र अनुः समये नितराम् ॥९३॥

बुध का फल–बुध शयन अवस्था मे हो तो मनुष्य खजा (लगडा), लाल आसवाला, अन्य राशि मे हो तो लम्पट और धूर्त होता है।।८९।। यदि बुध उपवेश अवस्था मे हो और लग्न मे हो तो अनेक गुणशाली होता है।और यदि पापराशिमे पापग्रह युक्त हो तो दरिद्र तथा मित्र राशि मे शुभग्रह युक्त हो तो धनवान् और सुखी होता है।।९०।। यदि बुध नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो जातक विद्या और विवेक से हीन तथा असन्तोषी और अभिमानी होता है। यदि पचम भाव मे हो तो पुत्र व स्त्री सुख से हीन तथा कन्या सन्तान वाला, राजमान्य तथा धनी होता है।।९१।। यदि बुध विकाश अवस्था मे हो तो जातक दयालु, दानी, धर्मात्मा और अनेक विद्या पारगत, विवेकी तथा दुष्टो का नाश करनेवाला होता है।।९२।। यदि बुध गमनागमन अवस्था मे हो तो मनुष्य यात्रा प्रेमी, राजभवन मे मान्य, बहुलक्ष्मी स्वामी विद्वान् तथा धनी होता है।।९३।।

सपदि विबुधजनानामुच्चगे जन्मकाले सदसि धनसमृद्धिः सर्वदा पुण्यवृद्धिः ॥ धनपतिसमता वा नृपता मन्त्रिता वा हरिहरपदभक्तिः सात्त्विकी मुक्तिलब्धिः ॥९४॥ आगमे जनुषि जन्मिना यदा चन्द्रजे भवति हीनसेवया ॥ अर्थसिद्धिरपि पुत्रयुग्मता बालिका भवति मानदायिका ॥९५॥ भोजने चन्द्रमा जन्म काले सदा जन्मिनामर्थहानि. सदा वादतः ॥ राजभीत्या कृशत्व चलत्व मतेरगसगो न जाया न मायासुखम् ॥९६॥ नृत्यलिप्सागते चद्रजे मानवो मानयानप्रवालव्रजैः सयुत. ॥ मित्रपुत्रप्रतापी सभापण्डित. पापभे वारवामारते सम्पदः ॥९७॥

यदि जन्म समय मे बुध उच्च राशि का होकर सभा स्थान मे हो तो धन समृद्धि तथा धर्मात्मा, कुबेर के समान ऐश्वर्यशाली, राजा का मन्त्री, ईश्वर भक्ति परायण, सात्विक भाववाला होता है तथा अन्त मे मुक्ति प्राप्त होती है।।९४।। जब जन्मलग्न मे बुध आगम अवस्था मे हो तो नीच की सेवा करनेवाला किन्तु धनी और दो पुत्र और एक कन्या होती है।।९५।। जन्म काल मे बुध जब भोजन अवस्था मे हो तो मनुष्य का धन मुकदमे बाजी मे खर्च होता है। राजभय से सदा दुःखी रहता है। चचल बुद्धि तथा भार्यासुख और धन सुख से हीन हो।।९६।। जब बुध नृत्य लिप्सा अवस्था मे हो तो मनुष्य सन्तान, सवारी, रत्नो मे युक्त, मित्र–पुत्रयुक्त, प्रतापी और सभा पण्डित होता है। पाप राशि मे हो तो वार–वनिता–विलासी तथा लम्पट होता है।।९७।।

कौतुके चन्द्रजे जन्मकाले नृणामभे गीतविद्याऽनवद्या भवेत् ॥ सप्तमे नैधने वारवध्वा रति पुण्यभे पुण्ययुक्ता मति सद्गति ॥९८॥ निद्राश्रिते चन्द्रसुते न निद्रासुख सदा व्याधिसमाधियोग ॥ सहोत्थवैकल्यमनल्पतापो निजेन वादो धनमाननाश ॥९९॥

अथ गुरुफलमाह

वचसामधिपे तु जनु समये शयने बलवानपि हीनरव ॥ अतिगौरतनु खलु दीर्घहनु सुतरामरिभीतियुतो मनुज ॥१००॥ उपवेश गतवति यदि जीवे वाचालो बहुगर्वपरीत ॥ क्षोणीपतिरियुजनपरितप्त पदजघास्यकरव्रणयुक्त ॥१०१॥ नेत्रपाणि गते देवराजार्चितेरोग युक्तोवियुक्तोवरार्थश्रिया ॥ गीतनृत्यप्रिय कामुक सर्वदा गौरवर्णो विवर्णोद्भव प्रीतियुक् ॥१०२॥

जब बुध जन्म समय मे कौतुक अवस्था म हो तो निष्पाप गायन विद्यायुक्त होता है। ७ वे और ८ वे स्थान मे हो तो वेश्यागामी होता है। शुभ राशि मे हो तो पवित्र बुद्धिवाला होता है और अन्त मे सद्गति होती है॥९८॥ जब बुध निद्रा अवस्था मे हो तो जातक सदा रोगी विकल दु खी कलहकारी और धन मान से हीन होता है॥९९॥

गुरुफल–जन्म समय मे यदि बृहस्पति बलवान् होकर शयन अवस्था मे हो तो धीमी आवाज वाला गौर वर्ण लम्बी ठोडीवाला तथा शत्रु मे भय माननेवाला होता है॥१००॥ जब बृहस्पति उपवेश अवस्था मे हो तो जातक बकवादी घमण्डी राजा और शत्रु से दु खी तथा पैर जघा हाथ और मुख व्रणयुक्त होता है॥१०१॥ जब बृहस्पति नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो रोगी दरिद्री नाचगानप्रिय कामी गौरवर्ण वर्णशकर तथा प्रेमी होता है॥१०२॥

गुणानामानद विमलसुखकद वितनुते सदा तेज पुज व्रजपतिनिकुजप्रतिगमम् ॥ प्रकाश चेदुच्चे द्रुतभुपगतो वासवगुरुर्गुरुत्व लोकाना धनपतिसमत्व तनुभृताम्॥१०३॥साहसी भवति मानव सदा मित्रवर्गसुखपूरितो मुदा ॥ पडितो विविधवित्तमडितो वेदविद्यदि गुरौ गम गते ॥१०४॥ आगमनेजनता वरजाया यस्य जनुसमये हरिमाया ॥ भुचति नालमिहालयमद्धा देवगुरौ परित परिबद्धा ॥१०५॥ सुरगुरुसमवक्ता शुभ्रमुक्ताफलाढ्य सदसि सपदि पूर्णो वित्तमाणिक्यमाने ॥ गजतुरगरथाढ्यो देवताधीशपूज्यो जनुषि विविधविद्यागर्वितो मानव स्यात् ॥१०६॥ नानावाहनमानयानपटलीसौख्य गुरावागमे भृत्यापत्यकलत्रमित्रजसुख विद्याऽनवद्या भवेत् ॥ क्षोणीपालसमानतानवरत चातीवहृद्या मति काव्यानदरति सदा हितगति सर्वत्र मानोन्नति ॥१०७॥

जब बृहस्पति प्रकाश अवस्था म हो तो गुणी सुखी तजस्वी राजमान्य लोकमान्य महाधनी होता है॥१०३॥ जब बृहस्पति गमन अवस्था मे होता है तो मनुष्य साहसी मित्रवर्गयुक्त पण्डित धनी तथा विद्वान् होता है॥१०४॥ जब बृहस्पति जन्मसमय मे आगम अवस्था म होता है तो श्रेष्ठ भार्या तथा स्थिर लक्ष्मीवाला होता है॥१०५॥ जब बृहस्पति सभा अवस्था म हो तो जातक बृहस्पति के समान वक्ता मणिमाणिक्ययुक्त ऐश्वर्यशाली तथा

अनेक विद्यापारगत होता है॥१०६॥ बृहस्पति यदि आगम अवस्था मे हो तो मनुष्य के अनेक सवारी तथा नौकर-चाकर, भार्या, पुत्र, मित्र का सुख तथा श्रेष्ठ विद्या होती है। और निरन्तर राजा के समान ऐश्वर्य तथा निर्मल बुद्धि और काव्य विनोद तथा कल्याण एवं सन्मान की उन्नति होती है॥१०७॥

भोजने भवति देवपुरोधाः यस्य तस्य सततं सुभोजनम् ॥ नैव मुंचति रमालयं तदा वाजिवारणरथैश्च मंडितम् ॥१०८॥ नृत्यलिप्सागते राजमानी धनी देवताधीशवंद्यः सदा धर्मवित् ॥ तंत्रविज्ञो बुधैर्मंडितः पंडितः शब्द विद्यानवद्यो हि सद्यो जनः ॥१०९॥ कुतूहली सकौतुके महाधनी जनः सदा ॥ निजान्वये च भास्करः कृपाकलाधरः सुखी ॥ निखिलराजपूजिते सुतेन भूनयेन वा युतो महाबली धराधिपेन्द्रसभापंडितः ॥११०॥ गुरौ निद्रागते यस्य मूर्खता सर्वकर्मणि ॥ दरिद्रतरपरिक्रान्तं भवनं पुण्यवर्जितम्॥१११॥

देवगुरु जब भोजन अवस्था मे हो तो निरन्तर अच्छा भोजन, सदा रहनेवाली लक्ष्मी तथा अनेक प्रकार की सवारी वाला होता है॥१०८॥ बृहस्पति नृत्य लिप्सा अवस्था मे हो तो जातक राजमानी, धनी धर्मात्मा, तन्त्र विद्या विशारद, विद्वद्गोष्ठीयुक्त, पण्डित तथा श्रेष्ठ वैयाकरणी होता है॥१०९॥ जब बृहस्पति कौतुक अवस्था मे हो तो कौतुहल प्रिय, महाधनी, कृपालु, अपने कुल का सूर्य, सुखी, भूमि तथा सन्तानयुक्त, महाबली तथा राजाधिराज की सभा का पण्डित होता है॥११०॥ बृहस्पति यदि निद्रा अवस्था मे हो तो कर्मज्ञानहीन, मूर्ख, पुण्यहीन, दरिद्री होता है॥१११॥

अथ भृगुफलमाह

जनो बलीयानपि दंतरोगी भृगौ महारोषसमन्वितः स्यात् ॥ धनेन हीनः शयनं प्रयाते वारांगनासंगमलंपटश्च ॥११२॥ यदि भवेदुशना उपवेशने नवमणिव्रजकांचनभूषणैः ॥ सुखमजस्रमरिक्षय आदराद्वनिपादपि मानसमुन्नतिः ॥११३॥

शुक्र फल–जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र क्रोधी अवस्था मे होता है तो मनुष्य दन्त–रोगी होता है। और यदि शयन अवस्था मे हो तो धनहीन, वेश्यागामी और लम्पट होता है॥११२॥ यदि शुक्र उपवेश अवस्था मे हो तो मणि, काचन, भूषणयुक्त, निरन्तर सुखी, शत्रु क्षय, राजा से सम्मान पानेवाला होता है॥११३॥

नेत्रपाणिं गते लग्नगेहे कवौ सप्तमे मानभे यस्य तस्य ध्रुवम्॥नेत्रपाते निपातो धनालाभलं चान्यभे वासशाला विशाला भवेत्॥११४॥स्वालये तुंगभे मित्रभे भार्गवे सुंग्मतंगलीलाकलापी जनः ॥ भूपतेस्तुल्य एव प्रकाश गते काव्यविद्याकलाकौतुकी गीतवित् ॥११५॥ गमने जनने शुक्रे तस्य माता न जीवति ॥ आधियोगो वियोगश्च जनानामरिभीतितः ॥११६॥ आगमनं भृगुपुत्रे गतवति विलेश्वरे मनुजः ॥ सत्तीर्थभ्रमशाली नित्योत्साही कराङ्घ्रिरोगी च ॥११७॥ अनायासेनालं सपदि महसा याति सहसा प्रगल्भत्व राज्ञः सदसि गुणवितः किल कवौ ॥

सभायामायाते रिपुनिवहहन्ता धनपतेः समत्व वा दाता बलतुरगगता नरवरः ॥११८॥ आगमे भार्गवेनागमो जन्मिनामर्थराशेररातेरतीव क्षतिः ॥ पुत्रपातो निपातो जना नामपि व्याधिभीतिः प्रियाभोगहानिर्भवेत् ॥११९॥

यदि शुक्र नेत्रपाणि अवस्था मे लग्न, सप्तम या दशम भाव मे हो तो हर तरह से धन की प्राप्ति हो। अन्य राशि मे हो तो विशाल भवन हो॥१०४॥ यदि शुक्र प्रकाश अवस्था मे अपनी राशि का या उच्च राशि अथवा मित्र राशि मे हो तो उस मनुष्य के हाथी घोडे हो, राजा के तुल्य ऐश्वर्य हो। काव्य विनोदी एव गायन विद्या रसिक हो॥११५॥ जिस मनुष्य के जन्म लग्न मे शुक्र गमन अवस्था मे हो उसको माता का सुख नही होता तथा सदा रोगी, इष्ट जनो का वियोग एव शत्रुभय होता है॥११६॥ शुक्र यदि आगमन अवस्था मे हो तो धनी, तीर्थ यात्रा प्रेमी, उत्साही तथा हाथ पैर का रोगी होता है॥११७॥ यदि शुक्र सभा अवस्था मे हो तो बिना परिश्रम के सहसा लक्ष्मी आती है। राजा की सभा मे चतुर, विद्वान्, कवि और गुणी होता है, शत्रु नाश करनेवाला, धन कुबेर, सवारीवाला और माननीय होता है॥११८॥ यदि शुक्र आगम अवस्था मे हो तो शत्रु के कारण धन की हानि, पुत्र तथा बन्धुओ की हानि, भार्या हानि एव रोग भय होता है॥११९॥

क्षुधातुरो व्याधिनिपीडितः स्यादनेकधारातिभयार्दितश्च ॥ कवौ यदा भोजनगे युवत्या महाधनीः पण्डितमण्डितश्च ॥१२०॥ काव्यविधानवद्या च हृद्या मतिः सर्वदा नृत्यलिप्सागते भार्गवे ॥ शङ्खवीणामृदंगादिगानध्वनियातनैपुण्यमेतस्य वित्तोन्नतिः ॥१२१॥ कौतुकभवनगतवति शुक्रे शक्रेशस्य सदसि महत्त्वम् ॥ हृद्या विद्या भवति च पुंस पद्मा निवसति सभावरत ॥१२२॥ परसेवारतो नित्य निद्रामुपगते कवौ ॥ परनिंदापरो वीरो वाचालो भ्रमते महीम् ॥१२३॥

जब शुक्र क्षुधित अवस्था मे हो तो रोगी, शत्रुभय तथा दुखी होता है। और शुक्र जब भोजन अवस्था मे हो तो महाधनी भार्यासुख और पण्डितो से मान्य होता है॥१२०॥ जब शुक्र नृत लिप्सा अवस्था मे हो तो निष्पाप कविता बनानेवाला, सुबुद्धि, अनेक प्रकार के वाद्य तथा गान मे निपुण और धनी होता है॥१२१॥ जब शुक्र कौतुक अवस्था मे हो तो सभा मे इन्द्र के समान आदर पानेवाला, विद्वान और सदा लक्ष्मीवाला होता है॥१२२॥ जब शुक्र निद्रा अवस्था मे हो तो दूसरे का नौकर निन्दक वाचाल और घुमक्कड होता है॥१२३॥

अथ शनिफलम्

क्षुत्पिपासापरिक्रांतो विश्रांतः शयने शनौ ॥ वयसि प्रथमे रोगी ततो भाग्यवता धरः ॥१२४॥ भानोः सुते चेदुपवेशनस्थे करालकारातिजनानुतप्तः ॥ अपापशाली खलु दद्रुमारी नरोऽभिमानी नृपदण्डयुक्त ॥१२५॥ नयनपाणिगते रविनन्दने परमया रमयाऽरमयायुत ॥ नृपतितो हितो मतितोषकृद्वहुकलाकलितो विमलोक्तिकृत्॥१२६॥ नानागुणग्रामधनाधिशाली सदा नरो बुद्धिविनोदमाली ॥ प्रकाशने भानुसुते सुभानुः कृपानुरक्तो हरपादभक्त

॥१२७॥ महाधनीनन्दनसंहितः स्यादपायकारी रिपुभूमिहारी ॥ गमे शनौ पण्डितराजमाव धरापतेरायतने प्रयाति ॥१२८॥ आगमने पदगर्दभयुक्तः पुत्रकलत्रसुखेन विमुक्तः ॥ भानुसुते भ्रमते भुवि नित्यं दीनमना विजनाश्रयभावम् ॥१२९॥ रत्नावलीकाञ्चनमौक्तिकानां व्रातेन नित्यं व्रजति प्रमोदम् ॥ सभागते भानुसुते नितांतं नयेन पूर्णो मनुजो महौजाः ॥१३०॥ आगमे गदसमागमो नृणामब्जबन्धुतनये यदा तदा ॥ मन्दमेव गमनं धरापतेर्याचनाविरहिता मतिः सदा ॥१३१॥

शनिफल—यदि शनि शयन अवस्था में हो तो भूख प्यास से व्याकुल तथा प्रथम अवस्था में रोगी और वृद्धावस्था में भाग्यशाली होता है॥१२४॥ शनि यदि उपवेश अवस्था में हो तो समाज से दुःखी, कैदी, विघ्नबाधायुक्त, दाद, खाजका रोगी तथा राजदंडभोगी होता है॥१२५॥ शनि यदि नयन पाणि अवस्था में हो तो परम श्रेष्ठ लक्ष्मीयुक्त राजा तथा बान्धवों का हितैषी और संतोष पानेवाला तथा कलाकुशल एवं मिष्टभाषी होता है॥१२६॥ शनि जब प्रकाश अवस्था में हो तो अनेक गुणयुक्त तथा ऐश्वर्यशाली तथा विनोदी, कृपालु तथा हरिभक्त होता है॥१२७॥ शनि गमन अवस्था में हो तो जातक महाधनी, पुत्रयुक्त, दुष्टबुद्धि तथा शत्रु की भूमि का हरण करनेवाला एवं राजभवन में पण्डितराज तुल्य माननीय होता है॥१२८॥ शनि यदि आगमन अवस्था में हो तो गधे के समान तथा स्त्री–पुत्र सुखहीन, व्यर्थ विचरणशील दीन तथा जनाश्रयहीन होता है॥१२९॥ शनि यदि सभा अवस्था में हो तो रत्न, सुवर्ण, मोती आदि की प्राप्ति का सुख तथा नीतिमान् तेजस्वी होता है॥१३०॥ शनि आगम अवस्था में हो तो जातक रोगी मन्दगामी, मनस्वी एवं कभी याचना नहीं करता॥१३१॥

सगतेजनुषि भानुनन्दने भोजनं भवति भोजनं रसैः ॥ सयुतं नयनमदतांततां मोहतापपरितापिता मतिः ॥१३२॥ नृत्यलिप्सागते मन्दे धर्मात्मा वित्तपूरितः ॥ राजपूज्यो नरो धीरो महावीरो रणाङ्गणे ॥१३३॥ भवति कौतुकभावमुपागते रविसुते वसुधावसुपूरितः ॥ अतिसुखी सुमुखीसुखपूरितः कवितयामलया कलया नरः ॥१३४॥ निद्रागते वासरनाथपुत्रे धनी सदा चारुगुणैरुपेतः ॥ पराक्रमी चण्डविपक्षहंता सुवारकान्तारतिरीतिवित्तः ॥१३५॥

शनि यदि भोजन अवस्था में हो तो जातक को रसयुक्त भोजन प्राप्त होता है, दृष्टि गाढ़, तथा मोह एवं दुःख से दुःखी रहता है॥१३२॥ शनि नृत्यलिप्सा अवस्था में हो तो धर्मात्मा धनी, राजपूज्य, धीर तथा रणशूर होता है॥१३३॥ शनि यदि कौतुकभाव में हो तो जातक धन, भूमियुक्त होता है। अतिसुखी तथा स्त्रीसुखयुक्त श्रेष्ठक वित्वशक्ति युक्त होता है॥१३४॥ शनि निद्रा अवस्था में हो तो जातक सदा धनी, सुन्दर गुणयुक्त पराक्रमी, शत्रुनाशकारी तथा वारविलासिनी रति प्रिय होता है॥१३५॥

अथ राहुफलम्

मदागमो जन्मनि यस्य राहौ क्लेशाधिकत्वं शयनं प्रयाते॥ वृषेऽथ युग्मेऽपि च कन्यकायामजे समाजो धनधान्यराशेः ॥१३६॥ उपवेशनमिह गतवति राहौ दद्रुगदेन जनः परितप्तः ॥ राजसमाजयुतो बहुमानी वित्तसुखेन सदा रहितः स्यात् ॥१३७॥ नेत्रपाणावगो नेत्रे भवतो

रोगपीडिते ॥ दुष्टव्यालारिचौराणां भयं तस्य धनक्षयः ॥१३८॥

राहु फल—जन्म लग्न मे राहु शयन अवस्था मे हो तो अधिक क्लेशकारी होता है। तथा १।२।३।६ राशि मे हो तो धन, धान्य समूहाधिपति होता है॥१३६॥ राहु उपवेश अवस्था मे हो तो जातक दाद रोग से दुःखी रहता है। राजसभा में गति होने पर भी घमण्डी होने से सदा धनहीन रहता है॥१३७॥ राहु नेत्रपाणि अवस्था मे हो तो जातक के नेत्र रोगी ही रहते हैं तथा सर्प, चोर, आदि से भय और धन हानि होती है॥१३८॥

प्रकाशने शुभासने स्थितिः कृतिः शुभा नृणां धनोन्नतिर्गुणोन्नतिः सदा विदामगाविह ॥ धराधिपाधिकारता यशोलता तदा भवेश्वयोमभीरवाकृतिर्विदेशतो महोन्नतिः ॥१३९॥ गमने च यदा राहौ बहुसंतानवान्नरः ॥ पंडितो धनवान्दाता राजपूज्यो नरो भवेत् ॥१४०॥ राहावागमने क्रोधी सदा धीधनवर्जितः ॥ कुटिलः कृपणः कामी नरो भवति सर्वथा ॥१४१॥ सभागतो यदा राहुः पंडितः कृपणो नरः ॥ नानागुणपरिक्रांतो वित्तसौख्यसमन्वितः ॥१४२॥ चेदागावागमं यस्य याते तदा व्याकुलत्वं सदारातिभीत्याभयम् ॥ महद्वन्धुवादो जनानां निपातो भवेद्वित्तहानिः शठत्वं कृशत्वम् ॥१४३॥ भोजने भोजनेनालं विकलो मनुजो भवेत् ॥ मन्दबुद्धिः क्रियाभीरुः स्त्रीपुत्रसुखवर्जितः ॥१४४॥ नृत्यलिप्सागते राहौ महाव्याधिविवर्द्धनम् ॥ नेत्ररोगो रिपोर्भीतिर्द्धनधर्मक्षयो नृणाम् ॥१४५॥

राहु प्रकाशन अवस्था मे हो तो शुभआसन (स्थान) मे स्थिति हो, धनवृद्धि तथा गुणो की उन्नति होती है राजपद का अधिकारी होता है। श्याम वर्ण और बिदेश मे उन्नति होती है॥१३९॥ राहु गमन अवस्था मे हो तो सन्तान बहुत होती है। जातक पडित तथा मेधावी, धनवान्, दानी, राजपूज्य होता है॥१४०॥ राहु आगमन अवस्था मे हो तो जातक निर्बुद्धि, धनहीन, कुटिल, कृपण तथा कामी होता है॥१४१॥ राहु सभा अवस्था मे हो तो पण्डित, कृपण, कामी, नाना गुणयुक्त तथा धनी और सुखी होता है॥१४२॥ यदि राहु आगमन अवस्था मे हो व्याकुल तथा शत्रुभय से पीडित, बन्धुओ से विवादी और धन हानि, शठ, कृश और जनहीन होता है॥१४३॥ राहु भोजन अवस्था मे हो तो जातक को भोजन की ही चिन्ता रहती है। मन्दबुद्धि कामचोर तथा स्त्री पुत्र सुख हीन होता है॥१४४॥ राहु नृत्यलिप्सा अवस्था मे हो तो रोग बढता ही रहता है। नेत्र रोगी ही रहते हैं, शत्रु से भय, धन तथा धर्म का क्षय होता है॥१४५॥

कौतुके च यदा राहौ स्थानहीनो नरो भवेत् ॥परदाररतो नित्य परवित्तापहारकः ॥१४६॥ निद्रावस्थां गते राहौ गुणग्रामयुतो नरः ॥ कांतासन्तानवान्धीरो गर्वितो बहुवित्तवान् ॥१४७॥

अथ केतुफलम्

मेषे वृषेऽथ वा युग्मे कन्यायां शयनं गते ॥ केतौ धनसमृद्धिः स्यादन्यभे रोगवर्धनम् ॥१४८॥

उपवेश गते केतौ दद्रुरोगविवर्द्धनम् ॥ अरिवातनृपव्यालचौरशंका समन्ततः ॥१४९॥ नेत्रपाणि गते केतौ नेत्ररोगः प्रजायते ॥ दुष्टसर्पादिभीतिश्च रिपुराजकुलादपि ॥१५०॥ केतौ प्रकाशने सजे धनवान्धार्मिकः सदा ॥ नित्यं प्रवासी चोत्साही सात्त्विको राजसेवकः ॥१५१॥ गमेच्छाया भवेत्केतुर्बहुपुत्रो महाधनः ॥ पंडितो गुणवान्दाता जायते च नरोत्तमः ॥१५२॥ आगमे च यदा केतुर्नानारोगो धनक्षयः ॥ दंतघाती महारोगी पिशुनः परनिंदकः ॥१५३॥

जब राहु कौतुक अवस्था मे हो तो मनुष्य को रहने का ठिकाना भी नही रहता। परस्त्रीगामी तथा चोर होता है॥१४६॥ राहु निद्रावस्था मे हो तो गुण समूह युक्त, स्त्री पुत्र से सुखी धनी, गर्वीला तथा धीर होता है॥१४७॥

केतु फल—केतु शयनअवस्था मे १।२।३।६ राशि मे हो तो धनसमृद्धि हो, और राशियो मे हो तो रोग की वृद्धि हो॥१४८॥ केतु उपवेश अवस्था मे हो तो दाद–खाज आदि रोग तथा शत्रु, सर्प, चोर तथा राज भय रहता है॥१४९॥ केतु नेत्रपाणि अवस्था मे हो जो जातक को नेत्ररोग तथा सर्पभय एव शत्रु और राजकुल से भय होता है॥१५०॥ केतु प्रकाश अवस्था मे हो तो धनवान्, धार्मिक, प्रवासी, उत्साही सात्विकभाववाला और राजसेवक होता है॥१५१॥ केतु गमन अवस्था मे हो तो पुत्र बहुत हों तथा धनी पण्डित, गुणी और दाता होता है॥१५२॥ जब केतु आगम अवस्था मे हो जो जातक को नाना रोग धनक्षय, दन्तरोग आदि होते है। और चुगलखोर तथा परनिन्दक होता है॥१५३॥

सभावस्था गते केतौ वाचालो बहुगर्वितः ॥ कृपणो लम्पटश्चैव धूर्तविद्याविशारदः ॥१५४॥ यदागमे भवेत्केतुः केतुः स्यात्पापकर्मणाम् ॥ बन्धुवादरतो दुष्टो रिपुरोगनिपीडितः ॥१५५॥ भोजने तु जनो नित्यं क्षुधया परिपीडितः ॥ दरिद्रो रोगसंतप्तः केतौ भ्रमति मेदिनीम् ॥१५६॥ नृत्यलिप्सागते केतौ व्याधिना विकलो भवेत् । बुद्बुदाक्षो दुराधर्षो धूर्तोऽनर्थकरो नरः ॥१५७॥ कौतुकी कौतुके केतौ नटवामारतिप्रियः ॥ स्थानभ्रष्टो दुराचारो दरिद्रो भ्रमते महीम् ॥१५८॥ निद्रावस्था गते केतौ धनधान्यसुखं महत् ॥ नानागुणविनोदेन कालो गच्छति जन्मिनाम् ॥१५९॥

केतु 'सभा' अवस्था मे हो तो वाचाल, अभिमानी, कृपण, लम्पट तथा धूर्त होता है॥१५४॥ केतु यदि 'आगम' अवस्था मे हो तो जातक पापी, बन्धु मे कलह करनेवाला दुष्ट एव शत्रु तथा रोगी होता है॥१५५॥ केतु यदि 'भोजन' अवस्था मे हो तो जातक भिखमगा, दरिद्र, रोगी तथा घुमक्कड होता है॥१५६॥ केतु 'नृत्यलिप्सा' मे हो तो सदा रोगी तथा आंख की बीमारी वाला, धूर्त तथा अनर्थकारी होता है॥१५७॥ केतु 'कौतुक' अवस्था मे हो तो नटजाति की स्त्री का प्रेमी, स्थानभ्रष्ट, दुराचारी, दरिद्र तथा यात्राप्रेमी होता है॥१५८॥ केतु 'निद्रा' अवस्था मे हो तो धनधान्य का विशेष सुख होता है और अनेक गुण विनोद मे समय यापन होता है॥१५९॥

अथ सर्वभावफलम्

शयनाद्येषु भावेषु यस्य तिष्ठति सद्ग्रहा ॥ नित्यं तस्य शुभं ज्ञानं निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥१६०॥ भोजनाद्येकभावेषु पापास्तिष्ठति सर्वथा ॥ तदा सर्वविनाशोऽपि नात्र कार्या विचारणा ॥१६१॥ निद्राया च यदा पापो जायास्थाने शुभं वदेत् ॥ यदि पापग्रहैर्दृष्टो न शुभं च कदाचन ॥१६२॥ सुतस्थाने स्थितः पापो निद्रायां शयनेऽपि वा ॥ तदा शुभं भवेत्तस्य नात्र कार्या विचारणा ॥१६३॥ मृत्युस्थानस्थितः पापो निद्रायां शयनेपि वा ॥ तदा तस्यापमृत्युः स्याद्राजतः परतस्तथा ॥१६४॥ शुभग्रहैर्यदा युक्तः शुभैर्वा यदि वीक्षितः ॥ तदा च मरणं तस्य गंगाया च विशेषतः ॥१६५॥ कर्मस्थाने यदा पापः शयने भोजनेऽपि वा ॥ तदा कर्मविपाकः स्यान्नानादुःखप्रदायकः ॥१६६॥ दशमस्थो निशानाथः कौतुकी च प्रकाशने ॥ तदैव राजयोगः स्यान्निर्विशंकं द्विजोत्तम ॥१६७॥बलाबलविचारेण ज्ञायते च शुभाशुभम् ॥ एवं क्रमेण बोद्धव्यं सर्वं भावेषु बुद्धिमन् ॥१६८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे ग्रहावस्थाफलकथनं नाम त्रिंशोऽध्यायः समाप्तः ॥३०॥

सर्वभावफल—ऊपर कहे गये भावफलो मे यदि शुभग्रहो का योग हो तो समय समय पर सद्बुद्धि होती रहती है॥१६०॥ भोजन अवस्था मे यदि पाप ग्रह हो तो सब प्रकार से विनाश ही होता है॥१६१॥ पापग्रह निद्रावस्था मे सप्तमभाव मे हो तो शुभफल होता है और यदि पापग्रह से दृष्ट हो तो शुभफल नही होता॥१६२॥ पापग्रह निद्रावस्था मे पचमभाव मे हो तो सन्तान के लिए शुभकारी है॥१६३॥ यदि अष्टम भाव मे पापग्रह निद्रावस्था मे हो तो जातक की अकाल मृत्यु राज के कारण या अन्य कारण से होती है॥१६४॥ यदि शुभ ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो तो विशेष करके गगा मे डूबकर मृत्यु होती है॥१६५॥ यदि दशम् भाव मे पापग्रह शयन या भोजन अवस्था मे हो तो जातक को अनेक दुखो का सामना करना पडता है॥१६६॥ यदि चन्द्रमा दशमभाव मे कौतुक अथवा प्रकाश अवस्था मे हो तो निःसन्देह राजयोग कारक होता है॥१६७॥ इस प्रकार ग्रहो का बलाबल विचार करके शुभाशुभ फल का निर्देश करना चाहिये। और इसी क्रम से सभी भावो मे विचार करना चाहिए॥१६८॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० ग्रहावस्था फलकथन नाम त्रिंशोऽध्याय ॥३०॥

मैत्रेय उवाच

दशा कतिविधा सन्ति ह्येतन्मेब्रूहि तत्वतः ॥ महर्षे त्वं समर्थोसि कृपया करुणानिधे ॥१॥

पराशर उवाच

अथातःसंप्रवक्ष्यामि दशाभेदाननेकशः ॥ विंशोत्तरी दशा चोक्ता दशा तु षोडशोत्तरी ॥२॥

द्वादशोत्तरिका ज्ञेया तथैवाष्टोत्तरी दशा ॥ पचोत्तरी दशा तद्वत्‌शा शतसमा स्मृता ॥३॥ दशा हि चतुराशीति प्राह चाय द्विसप्तति ॥ तथा षष्टिसमा चोक्ता दशा षड्विशतिसमा ॥४॥ नवमाशनवदशा राश्यशकदशा स्मृता ॥ दशा कालाभिधा चक्रदशाचक्र मुनीश्वरै ॥५॥ चरपर्या दशा विप्र द्विजोत्तमदशा स्थिरा अथोत्तरदशा विप्र ब्रह्मता चापरा दशा ॥६॥ केन्द्राद्या च दशा ज्ञेया कारकादिग्रहा दशा ॥ माडूकी च दशा प्रोक्ता तथा शूलदशापि वा ॥७॥ योगार्द्धगा दशा विप्र दृग्दशा कथयाम्यहम्‌ ॥ दशा त्रिकोणनाम्ना वै राशीना च दशा तथा ॥८॥ तारादशा तथा ज्ञेया दशा ज्ञेया च वर्णदा ॥ पञ्चस्वरदशा विप्र योगिनी च दशा स्मृता ॥९॥ तत पैण्डयदशा ज्ञेया तथाशी च दशा द्विज ॥ नैसर्गिकदशा विप्र अष्टवर्गदशा स्मृता ॥१०॥ सध्या दशा च शासव्या पाचका च दशा द्विज ॥ द्विचत्वारिशद्भेदा स्यु कथयामि तवाग्रत ॥११॥

अनेक दशाभेद कथन

मैत्रेय जी बोले–हे महर्षि! दशा कितने प्रकार की है यह आप कहिये क्योंकि हे करुणानिधि! इस विषय के कहने मे आप ही समर्थ है॥१॥ महर्षि पराशरजी ने कहा–अब हम अनेक दशा भिन्न भिन्न रूप से कहते हैं। विशोत्तरी दशा तथा षोडशोत्तरी द्वादशोत्तरी अष्टोत्तरी, पचोत्तरी, शताब्दिका, तथा चतुरशीति वर्षा, द्विसप्तति वर्षा षष्ठि समा, तथा षड्विंशति समा, नवमाश दशा, राश्यश दशा तथा कालदशा कालचक्रदशा चरपर्यायदशा स्थिरदशा, ब्रह्मदशा, केन्द्रदशा, कारकदशा माडूकीदशा शूलदशा योगार्द्ध दशा दृग्दशा त्रिकोण दशा, राशि दशा, तारा दशा वर्णद दशा पचस्वर दशा योगिनी दशा, पैण्डी दशा अंशी दशा, नैसर्गिक दशा, अष्टवर्ग दशा सध्या दशा पाचक दशा आदि ४२ प्रकार की दशा है। उनमे से कुछ प्रसिद्ध प्रसिद्ध दशा का विचार कथन करते है॥श्लोक २ से ११ तक॥

अथ विशोत्तरीदशामाह

आयनप्रकार च शृणुष्व द्विजपुगव ॥ जन्मनक्षत्रपर्यंतमाधार कृत्तिकादित ॥१२॥ वहनात्स्वर्क्षपर्यन्त गणयेन्नवभिर्हरेत्‌ ॥१३॥ सूर्येन्दुक्ष्माजतमसो वाक्पतिमंदचन्द्रजौ ॥ केतुशुक्रौ क्रमादेते विज्ञेयाश्च दशाधिपा ॥१४॥ रसाशामुनिधृत्यब्दा भूपतिर्धृतिवत्सरा ॥ सप्तेदवो नगा व्योमबाहवो भास्करादित ॥१५॥

विशोत्तरी दशा प्रकार

विशोत्तरी दशा स्पष्ट करने का प्रकार यह है कि–कृत्तिका नक्षत्र से गणना करनी चाहिये॥१२॥ कृत्तिका स अपने नक्षत्र तक गणना करके अधिक हो तो ९ का भाग देना चाहिये॥१३॥ दशा के क्रम से स्वामी कहते है। सू० च० म० रा० बृ० श० बु० के० शु० । आई हुई सख्या क अनुसार स्वामी होता है॥१४॥ क्रम स वर्ष सख्या ६,१०,७,१८,१६ १९ १७,७ २० जानना॥१५॥

उदाहरण–कल्पना किया किसी का जन्म कृत्तिका नक्षत्र म है, अत भयात १५।१० है भभोग ६०।३० है, पलमय भयात ९१० को सूर्य के वर्ष ६ से गुणा किया तो ५४६० हुए,

इनमे पलमय भभोग ३६३० का भाग दिया तो लब्धि १ वर्ष प्राप्त हुआ। शेष १८३० को १२ से गुणा किया तो २१९६० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ६ मास लब्ध हुए, शेष १८० को ३० से गुणा किया तो ५४० हुए, ३६३० का भाग दिया तो ०० दिन प्राप्त हुआ, पुन ५४० को ६० से गुणा किया तो ३२४०० हुए, इसमे ३६३० का भाग दिया लब्ध ८ घटी प्राप्त हुई, शेष ३३६० को ६० से गुणा करके ३६३० के भाग से लब्ध ५५ पल प्राप्त हुए। इन वर्षादि सूर्य के वर्ष ६ मे घटाया तो ४।५।२९।५१।०५ यह भोग्य वर्षादि हुए।

विशोत्तरीदशा मानचक्रम्									
सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
कृ०	रो०	मृ०	आ०	पुन०	पु०	आ०	म०	पूफा	नक्षत्राणि
उफा	ह०	चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्ये	मू०	पूषा	"
उषा	श्र०	ध०	श०	पूभा	उभा	रे०	अ०	भ०	"

विशोत्तरी दशाचक्रम्									
सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्र०
४	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्ष
५	०	०	०	०	०	०	०	०	मा०
२९	०	०	०	०	०	०	०	०	दि०
५१	०	०	०	०	०	०	०	०	घ०
०५	०	०	०	०	०	०	०	०	प०

विंशोत्तरीदशाचक्रम्

२०१४	२०१८	२०२८	२०३५	२०५३	२०६९	२०८८	संवत्
३	९	९	९	९	९	९	राशि
५	०४	४	४	४	४	४	अंश
८	५९	५९	५९	५९	५९	५९	घटी
१३	१८	१८	१८	१८	१८	१८	पल

अथ षोडशोत्तरीदशामाह

एकः पचयुती यदाघृत्यत बत्सराः क्रमात् ॥ रविभौमोगुरुमन्द केतुश्चन्द्रो बुधो भृगु ॥१६॥ अष्टौ दशाधिपाः प्रोक्ता राहुहीना नवग्रहाः ॥ पुष्यमाज्जन्मभ यावद् गणयेद्वसुभिर्हरेत् ॥१७॥ सूर्यहोरागते शुक्ले चन्द्रस्य कृष्णपक्षके ॥ तदा नृप फलार्थाय चिन्तिया षोडशोत्तरी ॥१८॥

षोडशोत्तरी दशा प्रकार

षोडशोत्तरी दशा मे वर्ष सख्या ११ से १८ तक जानना और दशास्वामी सू० म० गु० श० के० च० बु० शु० होते हैं। ये आठ दशास्वामी ग्रह हैं॥१६॥ इन दशाधिपो मे राहुग्रह की गणना नही है। पुष्य नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गिनकर आठ का भाग देना चाहिये॥१७॥ शुक्लपक्ष मे सूर्य की होरा और कृष्णपक्ष मे चन्द्रमा की होरा से विचार करे। इस प्रकार मनुष्यो का शुभाशुभ विचार षोडशोत्तरी दशा से करे॥१८॥

उदाहरण–पूर्वोदाहरण मे जन्मनक्षत्र कृ० पलमय भयात ९१० तथा भभोग ३६३० है। दशा बुध की है, अतः ९१० को बुध के वर्ष १७ से भयात ९१० को गुणा किया तो १५४७० हुए, इसमे भभोग ३६३० का भाग दिया तो लब्ध ४ वर्ष प्राप्त हुए, शेष ९५० को १२ से गुणा किया और ३६३० का भाग दिया तो ३ मास प्राप्त हुए और आगे भी क्रमश ३०।६०।६० से गुण कर भभोग ३६३० के भाग से प्राप्त अक दिन, घटी, पल प्राप्त ४।१४।१८ हुए, इस प्रकार ४।३।४।१४।१८ वर्षादि दशा का भुक्तमान प्राप्त हुवा, इसको बुध के मान १७ वर्ष मे घटाया तो १२।८।२५।४५।४२ यह बुध की भोग्य वर्षादि दशा हुई।

षोडशोत्तरी दशामानम्

सू०	म०	बृ०	श०	के०	च०	बु०	शु०	ग्र०
११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	व०
पु०	श्ले०	म०	पूफा	उफा	ह०	चि०	स्वा०	न०
वि०	अनु०	ज्ये०	मू०	पूषा	उषा	श्र०	ध०	न०
श०	पूभा	उभा	रे०	अ०	भ०	कृ०	रो०	न०
मृ०	आ०	पुन०	X	X	X	X	X	न०

षोडशोत्तरी दशा चक्रम्

बु०	शु०	सू०	म०	बृ०	शं०	के०	च०	ग्र०
१२	१८	११	१२	१३	१४	१५	१६	व०
८	०	०	०	०	०	०	०	मा०
२५	०	०	०	०	०	०	०	दि०
४५	०	०	०	०	०	०	०	घ०
४२	०	०	०	०	०	०	०	प०
२०३४	२०४६	२०५७	२०६९	२०८२	२०९६			संवत्
३	००	०	०	०	०			
५	००	०	०	०	०			
८	५३	५३	५३	५३	५३			
१३	५५	५५	५५	५५	५५			

अथ द्वादशोत्तरीदशामाह

सूर्यो गुरुः शिखी ज्ञोऽसुः कुजो मदो निशाकरः ॥ शुक्रहीना दशा ह्येतद्वि वयात्सप्तमात्समाः ॥१९॥ जन्मभात्पौष्णपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्भजेत् ॥ नवमांशे यदा जाता शुक्रस्य द्वादशोत्तरी ॥२०॥

द्वादशोत्तरी दशा

स्वामी ग्रह सू०७ गु०९ के०११ बु०१३ रा०१५ म०१७ श०१९ च०२१ इनमे शुक्र ग्रह को छोड कर बाकी ग्रहो को सात से २-२ बढाकर वर्ष सख्या की दशा जानना॥१९॥ जन्म नक्षत्र से रेवती नक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष सख्या की दशा जाने, शुक्र के नवाश मे जन्म हो तो द्वादशोत्तरी का विचार करे॥१९॥२०॥

द्वादशोत्तरी दशा क्रम चक्रम्								
सू०	गु०	के०	बु०	रा०	म०	श०	च०	ग्रह
७	९	११	१३	१५	१७	१९	२१	वर्षाणि

उदाहरण–भयात भभोग से पूर्ववत् दशा स्पष्ट करना।

अथाष्टोत्तरीदशामाह

सूर्यश्चन्द्रः कुजः सौम्यः शनिर्जीवस्तमो भृगुः ॥ एते दशाधिपाः प्रोक्ता विना केतु नवग्रहा ॥२१॥ रसाः पञ्चेन्दवो नागाः शैलचंद्रा नभेन्दवः ॥ गोऽब्जाः सूर्यकुनेत्राश्च समाः प्रद्योतनादयः ॥२२॥ लग्नेशात्केन्द्रकोणस्थे राहौ लग्ने स्थित विना ॥ अष्टोत्तरी द्विधा प्रोक्ता शिवाद्या कृत्तिकादितः ॥२३॥ चतुष्कं त्रितयं तस्माच्चतुष्कं त्रितयं पुनः ॥ यावत्स्वजन्मभं तावद्गणयेच्च यथाक्रमम् ॥२४॥

अष्टोत्तरी दशा

सूर्य, चन्द्र, मगल, बुध, शनि, गुरु, राहु, शुक्र ये ग्रह केतु के विना दशास्वामी है॥२१॥ तथा इनके वर्ष–सू०६ च०१५ म०८ बु०१७ शनि १० गुरु १९ राहु १२ शुक्र २१ क्रम से है॥२२॥ लग्नेश से राहु लग्न को छोडकर केन्द्र या त्रिकोण स्थान मे हो तो अष्टोत्तरी दशा ग्रहण करना॥ अष्टोत्तरी की गणना दो प्रकार की होती है, एक आर्द्रा से दूसरी कृत्तिका से॥२३॥ कथित नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करो प्रथम पर्याय मे ४ नक्षत्र, दूसरे मे तीन, पुनः ४ और पश्चात् ३, इसी प्रकार जन्म नक्षत्र तक गणना करनी चाहिये॥२४॥ (चक्र मे स्पष्ट समझना)

विशेष-**"दशामानं चतुर्धा च त्रिधा चैव पुनःपुनः । अशुभानां शुभानाञ्च ग्रहाणां साधयेद्द्विज!"** अर्थात् पापग्रहोके दशा वर्षोंके ४ भाग करके प्रति नक्षत्र १ भाग तथा शुभग्रहो के ३ भाग करके प्रतिनक्षत्र १ भाग दशामान ग्रहण करना। इस प्रकार जन्म नक्षत्र का जो मान प्राप्त हो उससे पूर्ववत् भयात भभोग से दशास्पष्ट करना चाहिए। तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण का १५ वाँ भाग 'अभिजित्' नक्षत्र माना गया है, अतः उत्तराषाढ के ३ चरण को ही भभोग मानना और श्रवण के आदि के १५वें भाग रहित को भभोग मानना तथा उत्तराषाढ का चतुर्थ चरण और श्रवण के १५वे भाग को मिलाकर अभिजित नक्षत्र का भभोग मानना। और इस भभोग के अनुसार ही भयात स्पष्ट करके दशा का साधन करना चाहिये।।२४।।

अथाष्टोत्तरीदशायन्त्रम्			
सू० म० ७२	चं० भा० म० १८०	मं० ९५	बुध २५४
६	१५	८	१७
आ० १८ पु० १८ पु० १८ आ० १८	म० ६० पू० ६० उ० ६० ० ०	ह० २४ चि० २४ स्वा० २४ वि० २४	अ० ५८ ज्ये० ५८ मू० ५८ ० ०
श० १२०	बृ० २१८	रा० १४४	शु० २५२
१०	१९	१२	२१
पू० ३० उ० ३० अभि० ३० श्र० ३०	ध० ७६ श० ७६ पू०भा० ७६ ० ०	उ० ३६ रे० ३६ अ० ३६ भ० ३६	कृ० ८४ रो० ८४ मृ० ८४ ० ०

उदाहरण–कल्पना किया कि–किसी जातक का जन्म उत्तराषाढ के द्वितीय चरण मे है, और भयात ३०।५ है, तथा भभोग ६०।४० है तो यहा पर अभिजित् के भाग के नाम का चतुर्थांश १५।१० घटाया तो शेष ४५।३० यह उत्तराषाढ का भभोग हुआ और भयात वही ३०।५ है। इसके पलात्मक १८०५ को शनिदशा के द्वितीय नक्षत्र (ऊपर चक्र मे देखिये) के मान ३०

(मास) से गुणा किया तो ५४१५० हुए, इससे १४।५२।३६ मासादि प्राप्त हुए। यह उत्तराषाढ का भुक्तमान हुआ। इसको ३० (मास) में घटाया तो १५।७।२४ यह उत्तराषाढ का भोग्य मान हुआ, इसमें अभिजित् और श्रवण के मान ३०–३० मास का योग किया तो ७५।७।२४।०० हुआ मास संख्या में १२ का भाग दिया तो ६।३।७।२४।०० यह शनि की भोग्य दशा हुई।

विशेष सूचना–केवल अष्टोतरी और षष्ठयब्दिका दशामें अभिजित् की गणना है। अतः उषा अभि और श्रवण का भभोग मान पूर्वोक्त रीति से ग्रहण करना। अन्य नक्षत्रों में नक्षत्र के पूर्ण भभोग तथा भयात से विंशोत्तरी के समान ही दशा साधन करना किन्तु दशा मान ऊपर चक्र में लिखे अनुसार पापग्रह का १/४ और शुभग्रह का १/३ पूर्ण भभोग के लिये ग्रहण करना चाहिए,भुक्त नक्षत्र के मान को छोडकर भोग्यनक्षत्रके मानका योग करके भोग्यदशा साधन करना।

अष्टोत्तरी दशा चक्रम्								
श०	गु०	रा०	शु०	सू०	च०	मं०	बु०	
६ ३ ७ २४ ००	१९ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	२१ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१५ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	१७ ० ० ० ०	व० मा० दि० घ० प०
२०१४	२०२०	२०३९	२०५१	२०७२	२०७८			सम्वत्
३ ५ ८ १५ श	६ १२ ३१ १५	६ १२ ३२ १५	६ १२ ३२ १५	६ ११ ३२ १५	६ १२ ३२ १५			रा अ क वि

अथ पचोत्तरीदशामाह

तमो विनानुराधादि विज्ञेय जन्मभावधि ॥ गणयेत्सप्तभिर्भक्ते शेषे कल्प्या दशाः शुभा ॥२५॥ रविर्ज्ञार्किभुतौ भौमो भार्गवो रजनीकरः ॥ वाचस्पतिश्च कर्कगे तस्यैव द्वादशांगके ॥२६॥ पचोत्तरी दशा चित्या द्वाकशाद्याः क्रमात्तथा ॥ बलाबलविवेकेन यथान्यायेन योजयेत् ॥२७॥

पचोत्तरी दशा

जिस जातक के बृहस्पति कर्कराशि में तथा कर्क के द्वादशांश में हो उसके लिए इस पचोत्तरी दशा का विचार करना चाहिए। अनुराधा नक्षत्र से जन्म नक्षत्र तक गणना करना।

अथ द्विसप्ततिकां दशामाह

लग्नेशे सप्तमे यत्र लग्ने वै मदनाधिपे ॥ चिंतनीया दशा तत्र द्व्यधिकाः सप्ततिः समाः ॥३३॥ नव वर्षाणि सर्वेषां विकेतूनां महात्मनाम् ॥ मूलाज्जन्मर्क्षपर्यन्तं गणयेदष्टभिर्हरेत् ॥ शेषा दशा विचिंत्या च वदेच्चैव महामुने ॥३४॥

अथ द्विसप्ततिकादशायन्त्रम्								
र०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	ग्रहा.
९	९	९	९	९	९	९	९	वर्षाणि
मूल०	पूर्वाषा०	उत्तरा०	श्रवण०	धनिष्ठा०	शत०	पूर्वाभा०	उ०भा०	न-
रेवती	अश्वि०	भरणी	कृत्ति०	रोहिणी	मृग	आर्द्रा	पुनर्वसु	क्ष-
पुष्य	आश्ले०	मघा	पूर्वा	उत्तरा	हस्त	चित्रा	स्वाती	त्रा-
विशा०	अनुरा०	ज्येष्ठा	०	०	०	०	०	णि

द्विसप्ततिका दशा

जिस जातक के लग्नेश सप्तमभाव में अथवा सप्तमेश लग्न में हो उसके लिए ७२ वर्ष की दशा का विचार करना चाहिए।।३३।। केतु को छोड़कर क्रम से सूर्यादि ग्रह दशास्वामी हैं। सबके ९-९ वर्ष हैं। मूलनक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग देना। शेष संख्या से दशा जानना।।३४।।

उदाहरण—किसी का जन्म श्रवण नक्षत्र में है तो बुध की दशा हुई, अतः श्रवण का भयात भभोग स्पष्ट करके विंशोत्तरी दशा के समान ही दशा स्पष्ट करनी चाहिए।

अथ षष्टिहायनीदशामाह

गुर्वर्कभूसुतानां च वर्षाणि दशकानि च ॥ ततः शशिज्ञशुक्रार्कपुत्रागूनां समाश्च षट् ॥३५॥ दास्रात्त्रयं चतुष्कं च त्रयं वेदं पुनः पुनः ॥ यदैको लग्नराशीशश्चिन्त्या षष्टिसमा तदा ॥३६॥

षष्ठिहायनी दशा

गुरु, सूर्य, मंगल, चंद्रमा, बुध, शुक्र, शनि, राहु ये दशा स्वामी तथा वर्षसंख्या क्रम से १०-१०-१०-६-६-६-६-६ जानना।।३५।। अश्विनी नक्षत्र से ३-४-३-४ आदि क्रम से पुनः

पुन. दशा की गणना करना। लग्न की राशि तथा चन्द्र राशि एक ही हो उस जातक के लिए इस दशा का उपयोग है॥३६॥

सूचना–इस दशा की वर्षसंख्या भी अष्टोतरी दशा के समान तीन या चार नक्षत्रों पर विभाग करके १-१ भाग १-१ नक्षत्र का जानना। जिस ग्रह के तीन नक्षत्र हों, उसकी दशा के तीन करना, जैसे–बुध के तीन नक्षत्र है तो उसके ६ वर्षो के ३ भाग २–२ वर्ष के १-१ नक्षत्र के जानना। और ४ नक्षत्र हो तो ४ भाग करना, जैसे सूर्य के ४ नक्षत्र हैं तो दशा वर्ष १० के भाग २॥-२॥ वर्ष १-१ नक्षत्र के समझना।

उदाहरण–जैसे किसी का जन्म नक्षत्र स्वाती है तो बुध की दशा हुई, और स्वाती नक्षत्र का भयात भभोग क्रमशः२०।००और ६०।०० है, तो स्वामी के २ वर्ष सख्या से भयात के पलाक को गुणा कर भभोग के पलाक का भाग देने से लब्ध भुक्त ०।८।०।०।० को २वर्षमें घटाया तो १।४।०।०।० हुआ, इसमे विशाखा के २ औरअनुराधा के २वर्ष युक्त किये तो ५।४।०।०।० हुए।

अथ षष्टिहायनीदशायंत्रम्								
सू०	र०	मं०	चं०	बु०	शु०	श०	रा०	ग्रहाः
१०	१०	१०	६	६	६	६	६	वर्षाणि:
अश्वि भरणी कृत्ति	रोहिणी मृग आर्द्रा पुनर्वसु	पुष्य आश्ले० मघा	पूर्वा उ०फा० हस्त चित्रा	स्वाती विशा० अनुरा	ज्येष्ठा मूल पूर्वाषा उत्तरा	अभिजि श्रवण धनि	शत पूर्वाभा उत्तरा रेवती	न क्ष- त्रा- णि

अथ षट्त्रिंशत्कांदशामाह

श्रवणाज्जन्मभं यावद्गणयेदष्टभिर्भजेत् ॥ शशांकार्कसुरेज्यारज्ञार्कजौ शुक्रराहवः ॥३७॥ एकोयं च मतश्चैकाद्वर्षाण्येषां क्रमात्स्मृताः ॥ दिवसे सूर्यहोरायां चिंत्या वै षड्गुणाब्दिका ॥३८॥ रात्रौ चांद्रादष्टतष्टाद्रेकात्स नृपजन्मभात् । सूर्येन्दुभूमिजनिशाधीशपुत्रसुरेज्यकाः ॥३९॥ भृगुमंदागुशिखिनो सप्तस्याच्चिन्तिता दशा ॥४०॥ खेटक्रमाद्दशा चिंत्या यदा लग्ने शनिः स्थितः ॥ क्वचिद्ग्रहस्तदानीं च न चिंत्या बहुतो बलात् ॥४१॥

३६ षट्त्रिंशद् वर्षा दशा

श्रवण नक्षत्र से जन्मनक्षत्र तक गणना करके ८ का भाग दे, शेष अंक मे क्रम से च०, सू०, बृ०, मं०, बु०, श०, शु०, रा०॥३७॥ वर्ष सख्या क्रम से १,२,३,४,५,६,७,८, जानना। दिन मे जन्म हो तो सूर्य की होरा से विचार करे और इस ३६ वर्षवाली दशा का उपयोग करे॥३८॥

रात्रि मे जन्म हो तो उपर्युक्त प्रकार से दशा नक्षत्र लेकर दशास्वामी सूर्य, चन्द्र मगल बुध गुरु, शुक्र, शनि, राहु, इस क्रम से ग्रहण करना॥३९॥ लग्न मे स्थित ग्रह से दशा का आरभ करे॥४०॥ तथा सूर्यादि क्रम से जो वर्ष ऊपर कहे है वे ही देना। यदि लग्न मे शनि हो तो इस दशा का विचार करना। और यदि लग्न मे दूसरा बलवान ग्रह स्थित भी हो तो भी शनि को ही ३६ वर्षो दशा लेने मे कारण माना जाता है। दूसरे ग्रह के कारण दशा का त्याग नही होता है॥४१॥

इसका उदाहरण विशोत्तरी दशा के समान ही जानना।

अथ षट्त्रिशत्यब्दिकादशायत्रम्

च०	सू०	बृ०	म०	बु०	श०	शु०	रा०	ग्रहा
१	२	३	४	५	६	७	८	वर्षाणि
अ०	ध०	श०	पू०भा०	उ०भा०	रे०	अश्वि०	भर०	न
कृ०	रो०	मृ०	आ०	पुन०	पुष्य	आश्ले०	मघा	क्ष
पू०	उ०	ह०	चि०	स्वा०	वि०	अनु०	ज्येष्ठा	त्रा
मू०	पू०षा०	उ०षा०	०	०	०	०	०	णि

अथ नवमाशनवदशामाह

अथ राशिक्रम वक्ष्ये शृणुष्व द्विजपुगव ॥ ग्रहे राश्यादिके चाल्पे दशा तस्यादिमा भवेत् ॥४२॥ ततस्तदधिकस्यैव तुल्ये नैसर्गिकाद्बलात् ॥ राशीशात्सप्तमागेशार्च्चित्या राशिक्रमाद्दशा ॥४३॥ यस्मिन्नवाशकस्येके दशा तस्यादिमा मता ॥ अप्रादब्जाच्च ये खेटा केन्द्रता सस्थिता क्रमात् ॥४४॥ दशामान प्रवक्ष्यामि यथोक्त ब्रह्मणा पुरा ॥ लिप्तीकृत्वा ग्रह सोमलाब्धिभिर्भाजिते फलम् ॥४५॥ पुन सूर्ये हृते लब्ध समाद्याशकला दशा ॥ सर्वेषा मानवाना च दशास्त्वेता विचितयेत् ॥४६॥

नवाश नवदशा

हे द्विजश्रेष्ठ! अब हम नवाश दशा का राशिक्रम कहते है आप श्रवण करे। प्रथम ग्रहदशा कहते है। ग्रहो मे–सबसे कम राशि अश वाले की दशा प्रथम होती है इन दशाओ का विस्पष्ट विवरण इस प्रकार जानना–

दशा सख्या	विवरण

प्रथम–जो ग्रह राशि अंश, कला, विकला मे सबसे कम हो उसकी दशा प्रथम होगी तथा बाद उससे अधिक वाले की और बाद उससे अधिक राश्यादिवाले की। इसी प्रकार ९ ग्रहो मे दशा जानना। यदि दो ग्रहो मे राश्यादि समान हो तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना।

द्वितीय–जो ग्रह सबसे अधिक राश्यादि हो, उसकी सर्वप्रथम तथा उसके बाद उससे कम और उसके बाद उससे कम, इसी प्रकार ९ ग्रहो की दशा होगी। राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से निर्णय करे।

तृतीय–नैसर्गिक बल से जिसका बल सबसे कम हो उसकी दशा सबसे प्रथम होगी। बाद उससे अधिक बल की, उसके बाद उससे अधिक बल की। इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहा "तुल्ये नैसर्गिकाद् बलात्' इस पद की आवृत्ति होती है। जिससे पिछली दो दशाओ मे तो राश्यादि समान होने पर नैसर्गिक बल से यह अर्थ प्राप्त होता है। और तीसरे पर्याय मे स्वतन्त्ररूप से दशाक्रम का बोधक होता है।) यह तीन ग्रह दशा है। इनमे वर्ष सख्या प्रत्येक दशा मे १२ वर्ष जानना।

चतुर्थ–जन्मराशि के स्वामी से प्रथम दशा। अर्थात् जन्मराशि की प्रथम दशा बाद राशिक्रम से दशा जानना। जैसे जन्म राशि मेष है तो मेष, वृष, मिथुन इसी प्रकार से आगे भी। इसमे प्रति राशि दशा मे वर्ष सख्या ९ लेना। यह सब दशाए १०८ वर्ष की होने से।

पचम भेद–लग्न से सप्तमेश की राशि से दशा जानना। क्रमराशि से ही जानना। यथा सप्तमेश राशि तुला है तो तुला, वृश्चिक, धनु, मकर आदि।

षष्ठ भेद–लग्नेश की प्रथमदशा, बाद द्वितीयेश की, तब तृतीयेश की, बाद चतुर्थेश की, पश्चात् पचमेश की, इसी प्रकार आगे भी जानना। (यहा ग्रहो मे ७ ग्रह ही लेना। राहु केतु की राशीशिता नही है अत उनका ग्रहण नही है। वर्ष सख्या ९–९ लेना।)

सप्तम भेद–लग्न मे जो नवाश हो उसके स्वामी से आरभ करके राहु केतु सहित सूर्यादि ग्रहो के नैसर्गिक क्रम से ९ ग्रहो की दशा जानना। वर्ष सख्या १२–१२ लेना।

अष्टम भेद–सप्तम भेद मे जो नवाशेश से दशा ली है उससे नवम नवाश के स्वामी से यथाक्रम दशा जानना, ग्रहो मे गणना नैसर्गिक क्रम से। वर्ष सख्या १२–१२।

नवम भेद–चन्द्रमा से दशा जानना। शेष पूर्ववत् ॥३२–४४॥

स्पष्ट आयु निकालना–जैसा कि पहले ब्रह्माजी ने कहा है सो कहते है। चन्द्रमा के स्पष्ट राश्यादि को लेकर कलात्मक करे। (राशिको ३० से गुणा कर अश जोडना, पश्चात् अशाक को ६० से गुणा करके कला युत करना तो कलात्मक चन्द्र होगा) फिर २० का भाग देकर लब्ध अक मे १२ का भाग देने से जो अक वर्ष, मास, दिन आदि प्राप्त हो उनको १०८ परमायु मे घटाना जो शेष रहे वह स्पष्ट वर्ष, मास आदि जातक की आयु जानना। सभी मनुष्यो मे यह प्रयोग आयुमान के लिये करना चाहिए॥४५॥४६॥

उदाहरण–कल्पना की कि किसी जातक के जन्मसमय मे चन्द्रस्पष्ट ८।२५।२१।३८। है तो

इसकी कलात्मक सख्या १५९२९।३८ हुई। इसमे २० का भाग दिया तो लब्ध ७९६।९ पुन १२ का भाग दिया तो ६६।४१।८ प्राप्त हुआ। इसको १०८ वर्ष मे घटाया तो ४१।७।२८।५२ यह आयु का वर्षादि मान स्पष्ट हुआ।।

अथ राश्यंशकदशामाह

तन्वादिभावाः संस्पष्टाः प्रोक्तमार्गेण चानयेत् ॥ लग्नेशांशस्थितो यत्र दशास्तस्य इमाः स्मृताः ॥४७॥ द्वितीयेशादितश्चापि ज्ञेया राश्यंशका दशा ॥ चिन्त्या लग्ने बलवति लग्नेशे वा बलान्विते ॥४८॥

अथ कालदशामाह

संध्या पंचघटी प्रोक्ता दिनषष्ठघंशनाडिका ॥ सूर्यबिंबार्द्धतःपूर्वं परस्तादुदयादपि ॥४९॥ संध्याद्वयं च विंशत्या घटिकाभिः प्रकीर्तितम् ॥ दिनस्य विंशतिर्घट्यः पूर्णसंज्ञा उदाहृताः ॥५०॥ निशाया मुग्धसंज्ञाश्च घटिका विंशतिश्च याः ॥ सूर्योदयस्य या सध्या खण्डाख्या दशनाडिकाः ॥५१॥ अस्तकालस्य या सध्या सुधाख्या दश नाडिकाः ॥ पूर्णमुग्धे गतघटी षड्गुणे नवधा लिखेत् ॥५२॥ तथा खण्डसुधाख्ये हते तु नवधा लिखेत् ॥ विभक्तार्नोद्वियुगैर्माना्यानफलानि च ॥५३॥ क्रमात्सूर्यादिकाना वै मानमुक्तं मुनीश्वरैः ॥ स्वस्वमानं स्वसख्याभिर्गुणिते स्युः समादयः ॥५४॥

राश्यशक दशा

पहले कही हुई रीति से लग्न आदि १२ भाव स्पष्ट करे। लग्नेश का नवांश जिस भाव मे हो वहा से दशा का आरभ करना।।४७।। इसी प्रकार आगे भी द्वितीयादि भावो के अधिपति से दशा रखना। यह दशा जहा लग्न या लग्नेश बलवान हो वहा प्रयुक्त करना।।४८।।

काल (होरा) दशा

यहा दिन शब्द से अहोरात्र का ग्रहण है। अहोरात्र मान ६० घटी का होता है। उसमे सूर्य के अर्द्धोदय काल से ५ घटी तक सध्या (औदयिकी सध्या) होती है और इसकी 'खण्डा' सज्ञा है। इसी प्रकार सूर्यास्त से पूर्व की भी ५ घटी सध्या काल है और उसकी 'मुग्धा' संज्ञा है। इस प्रकार सूर्यास्त (अर्द्धास्त) से पहिले की ५ घटी और बाद की ५ घटी सध्या काल है। इस तरह प्रात की १० घटी पूर्वापर की 'खण्डा' और अस्तकाल की पूर्वापर की १० घटी 'सुधा' नाम की सध्या है। और दिन की बाकी २० घटी की 'पूर्णा' सज्ञा है। तथा रात्रि की बाकी २० घटी की 'मुग्धा सज्ञा है। यदि 'पूर्णा' नामक दिन की २० घटी मे जन्म हो तो (अर्थात् सूर्योदय से इष्टकाल यदि ५ घटी से अधिक हो तो प्रात सध्या (खण्डा) की ५ घटी इष्ट मे से घटा कर बाकी) ६ से गुणा करना। इसी प्रकार रात्रि की 'मुग्धा' नाम की मध्य घटी मे जन्म हो तो सध्याकाल की घटी घटाकर बाकी को ६ से गुणा करना। यदि 'खण्डा या 'सुधा' नाम की सध्या मे जन्म हो तो इष्ट घटी को १२ से गुणा करना। गुणित अक को ९ स्थान मे रखना।

और सब जगह अलग ४५ का भाग देना तो लब्ध दशा मान का ध्रुवाक होगा। इसको सूर्यादि ग्रहो की संख्या (सू०१, च०२, म०३, बु०४, गु०५, शु०६, श०७, रा०८, के०९) से गुणा करने से सूर्यादि ग्रहो की वर्ष, मास आदि दशा स्पष्ट होगी॥४९-५४॥

उदाहरण-इष्ट ८।१६ मे प्रात संध्या की ५ घटी कम करने से शेष ३।१६ को ६ से गुणा किया तो १९।३६ हुआ, इसमे ४५ का भाग दिया तो ००।२६।०८।०।०, इस सूर्यादि ग्रहो की क्रम संख्या से गुणा करके दिनो मे ३० और मास संख्या मे १२ का भाग देने से नीचे चक्र मे दिखाई हुई सूर्यादि दशा प्राप्त होगी।

अथ कालचक्रमहादशायन्त्रम्

सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	रा०	के०
२ २ ८ ० १०	४ ४ १६ ० ०	६ ६ २४ ० ०	८ ९ २ ० ०	१० ११ १० ० ०	१३ १ १८ ० ०	१५ ३ २४ ० ०	१७ ६ ४ ० ०	१९ ८ १२ ० ०
११ ००	१९ ०३	१९ ०७	१९ १३	१९ २२	१९ ३२	१९ ४५	१९ ६१	१९ ७८
१७ ६५	१७ ६८	१७ ७२	१७ ७८	१७ ८७	१७ ९८	१८ ११	१८ २७	१८ ४४
१० ४ १४ २२	० १२ १४ २२	४ ३८ १४ २२	११ ३२ १४ २२	८ ३४ १४ २२	८ ४ १४ २२	१ ३३ १४ २२	२ १८ १४ २२	७ ३२ १४ २२

अथ कालचक्रदशामाह

कालचक्र प्रवक्ष्यामि नराणा हितकाम्यया ॥ यावद्देहादिजीवान्तमिति चक्रस्य निर्णय ॥५५॥
सप्तविंशतिऋक्षाणि अनुलोमविलोमत ॥ वक्ष्येऽहं वै तवाग्रे च अश्विन्यादि यथाक्रमम् ॥५६॥
द्वे द्वे रेखात्मके चक्रे चतुष्कोण लिखेत् क्रमात् ॥ द्वादशग्रहनिर्माणं मेषादिद्वादश न्यसेत् ॥५७॥
ईशान्यादिक्रमेणैव मीनान्त द्वादश न्यसेत् ॥ एव क्रमेण चक्र तद्विलिखेद्द्विजनदन ॥५८॥

द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वं समानकम् ॥ गृहाणि द्वादशैवं स्युस्तत्र्यंशेषु च यथाक्रमम् ॥५९॥ द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकान्यसेत्॥ एवं द्वादशराश्याख्यं कालचक्रमुदीरितम् ॥६०॥ अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे प्रतिष्ठितम् ॥ तिस्रोऽपसव्यास्स्युस्तारा रोहिण्याद्या यथाक्रमम् ॥६१॥ कालचक्रदशासव्यापसव्यमार्गमग्रे स्फुट वक्ष्यति ॥

कालचक्रदशा

कालचक्र नामक दशा का पूर्ण विवरण आगे कहेंगे जिससे मनुष्यों का बड़ा हित होता है। देहग्रह से जीवग्रह पर्यन्त उसका भोग (दशा) होता है, यह इस चक्र में निर्णय किया गया है॥५५॥ २७ नक्षत्र क्रम से तथा व्युत्क्रम से (सीधे और उलटे क्रम से गणना होना) अश्विनी आदि नक्षत्र उसमें रखे गये है॥५६॥ दो दो रेखा सीधी और तिरछी बनाकर उनके कोणों में १–१ रेखा करके बारह घर का निर्माण करें, इन घरों में १२ राशियां रखें॥५७॥ अश्विनी आदि नक्षत्र और मीन पर्यन्त राशि लिखें। हे द्विजनन्दन! इस प्रकार लिखें॥५८॥ अथवा बारह कोठों का गोल चक्र लिखें, पूर्वोक्त रीति से तिरछी और सीधी रेखा करने से १२ कोष्ठक होंगे॥५९॥ दूसरे ऊपर के कोष्ठक में १२ मेषादि राशि लिखें। इस प्रकार १२ राशियों का कालचक्र नामक चक्र कहा है॥६०॥ अश्विनी आदि ३ नक्षत्र सीधे क्रम से, उसी क्रम से रोहिणी आदि तीन नक्षत्र उलटे क्रम से रखें॥६१॥ इसका विशेष विवरण आगे कहेंगे।

कालचक्रम्



अथ चक्रदशामाह

राशीश्वरादृशा ज्ञेया सूर्यादीना क्रमात्पुनः ॥ दिवा रात्रिस्तथा सन्ध्या त्रिकाले त्रिविधा दशा॥६२॥ चक्राख्या च दशा प्रोक्ता तथाग्रे द्विजनन्दन ॥ लग्नस्थस्य दशा चादौ ततो वित्तस्थितादयः ॥६३॥ त्रिधादयो यदैकस्थास्तदा भागादयोऽधिकात् ॥ तत्रापि तुल्यौ नैसर्गाद्बलात्सूर्योऽधिकस्य च ॥६४॥ राशिप्रमितवर्षाणि भागाद्यान्यपथाततः ॥ भावानामपि लग्नाच्च वर्षाणि दिङ्मितानि च ॥६५॥

चक्रदशा

यह चक्रदशा दिन, रात्रि, सन्ध्या इन ३ समयों में भिन्न भिन्न प्रकार से होती है। दिन में जन्म हो तो जातक की राशि के स्वामी की राशि से दशा आरम्भ होती है॥६२॥ यह दशा 'चक्रदशा' नाम की है और रात्रि में जन्म हो तो जन्मलग्न से दशा आरम्भ होती है तथा सन्ध्याकाल में जन्म हो तो द्वितीयभाव से आरम्भ होती है॥६३॥ तीनों प्रकार के स्वामी तथा राशि एक ही स्थान में हो या दो प्रकार एक स्थान में हो तो अंशाधिक्य से निर्णय करना। और अंशादिक भी समान हो तो नैसर्गिक बल से निर्णय करना। वह भी समान होने पर सूर्य

से लेना॥६४॥ अशादि का त्याग करके चक्र मे राशि के समस्थान मे वर्ष सख्या रखना। सभी भावो की वर्ष सख्या १०–१० होती है॥६५॥

उदाहरण–कल्पना किया कि, किसी का दिन मे जन्म है और राशि का स्वामी गुरु है और वह एकादश भाव मे स्थित है, अत एकादश भाव से चक्र मे दशा आरभ की गई और प्रत्येक भाव की १०–१० वर्ष सख्या रखी गई। चक्र मे देखे।

अथ चक्रदशामाह												
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	भावा
१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	१० ० ० ० ० ०	वर्षाणि मासा दय
१९००	१० १९	२० १९	३० १९	४० १९	५० १९	६० १९	७० १९	८० १९	९० १९	२०००	२०१०	सवत्
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	रवि

अथ चरपर्यादशामाह

मैत्रेय सुमहाप्राज्ञ परोपहितकारक ॥ आयुर्दायविचारो हि गहन सर्वदा द्विज ॥६६॥ आयुर्बहुप्रकारेण भाषित ब्रह्मणा पुरा ॥ लग्नर्क्षग्रहयोगेन आयुर्दाय वदामि ते ॥६७॥ नक्षत्रायुर्पुरा विप्र तवाग्रे कथित मया ॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि राश्यायुर्द्विजसत्तम ॥६८॥ लग्नादिव्ययपर्यंत राशयो द्वादश द्विज ॥ आयुर्वर्षे प्रदातव्या एभिश्चरपर्या दशा ॥६९॥ ओजराशिणा क्रमाद्विप्र समाना व्युत्क्रमात्पुन ॥ नाम्नातेन समा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥७०॥ मेषो वृषोऽथ मिथुनस्तुलालिश्च धनुर्धर ॥ एतेषामोजसज्ञा स्याद्वदाना गणनाक्रमात् ॥७१॥ कर्क सिंहश्च कन्या च नक्रकुम्भझषा द्विज ॥ एतेषा समसज्ञा स्याद्वर्षाणि व्युत्क्रमाद्द्विज ॥७२॥ स्वर्क्षसस्थितखेटस्य वर्षाणि द्वादशैव हि ॥ धनस्थे चैकवर्षं तु तृतीये ह्यब्दद्वयम् ॥७३॥

हे परहितकारक महाप्राज्ञ मैत्रेय! आयु का विचार बड़ा गहन है॥६६॥ पहिले ब्रह्माजी ने अनेक प्रकार से आयु का वर्णन किया है॥ लग्न आदि राशियो मे ग्रहो के योग से आयु का निर्णय करना कहेगे॥६७॥ हमने पहले नक्षत्र से आयु का विचार कहा है। अब राशि से आयु का विचार कहते है॥६८॥ लग्न से व्ययभाव तक १२ राशि है। इन राशियो से आयु के सम्बन्ध मे वर्ष ग्रहण करना और इन वर्षो से 'चरपर्या' नाम की (चरपर्याय) दशा होती है॥६९॥ इन राशियो से वर्ष लेने की रीति यह है कि विषम नाम की राशियो से वर्ष गणना क्रम से होती है, तथा सम राशियो से विपरीत क्रम से वर्ष गणना होती है। यह गणना राशि के भाव से उस राशि का स्वामी जहा स्थित हो वहा तक गिन कर जो सख्या हो वह वर्ष सख्या लेना॥७०॥ मेष, वृष, मिथुन तथा तुला, वृश्चिक, धनु इनकी ओज (विषम) सज्ञा है। इनके वर्षो की गणना क्रम से होती है॥७१॥ कर्क, सिह, कन्या तथा मकर कुभ, मीन इनकी समसज्ञा है। इनकी वर्ष गणना उलटे क्रम से होती है॥७२॥ (स्पष्ट विवरण) स्वराशि मे स्थित ग्रह की वर्ष सख्या १२ होती है। दूसरे भाव मे स्थित ग्रह से १ वर्ष होता है। और तीसरे भाव मे ग्रह हो तो २ वर्ष लेना॥७३॥

**तुर्ये वर्षत्रय विप्र पचमे तुर्यहायनम् ॥ रिपुस्थे पच वर्षाणि षड्वर्षाणि च सप्तमे ॥७४॥
रन्ध्रस्थे नगवर्षाणि चाष्टवर्षाणि पुण्यगे ॥ नभःस्थे चाकवर्षाणि दिग्वर्षाणि तु लाभगे ॥७५॥
व्ययस्थे रुद्रवर्षाणि राशब्दाश्च मयानघ ॥ पूर्वोक्तेन प्रकारेण कथिता वै द्विजोत्तम ॥७६॥
वृश्चिकाधिपती द्वौ च कुजकेतू द्विजोत्तम ॥ स्वर्भानुमनू कुभस्य पती द्वौ चिंतयेद्द्विज ॥७७॥
स्वर्क्षे यदि स्थितौ द्वौ च भानुवर्षप्रदायकौ ॥ परर्क्षे समतौ द्वौ च नाथाते न विचिंतयेत् ॥७८॥
परर्क्षे भिन्नभिन्नस्थौ द्वयोर्मध्ये तु यो बली ॥ तस्य नाथांतरीत्या च वर्षाणि संलिखेद्द्विज
॥७९॥ अग्रहात्सग्रह प्राणी सग्रहादधिकग्रह ॥ साम्ये चरस्थिरद्वद्वा क्रमात्स्युर्बलिनो द्विज ॥८०॥**

चौथेभाव मे स्वामी होने से ३ वर्ष, पचम भाव मे स्वामी हो तो ४ वर्ष। षष्ठभावस्थित मे ५ वर्ष, सप्तम मे हो तो ६ वर्ष॥७४॥ अष्टमभाव मे ७ वर्ष। नवमभाव मे ८ वर्ष। दशमभाव मे ९ वर्ष। एकादशभाव मे स्वामी हो तो १० वर्ष॥७५॥ व्ययभाव मे हो तो ११ वर्ष, इस प्रकार राशियो से वर्ष सख्या लेना, इस प्रकार वर्ष सख्या लेने की रीति तुमसे कही गई है॥७६॥ वृश्चिक राशि के दो ग्रह स्वामी है– मगल और केतु। इसी तरह कुभ राशि के भी दो स्वामी है– शनि और राहु ॥७७॥ यदि ये स्वराशि मे हो तो १२ वर्ष लेना। यदि परराशि मे हो तो वहा तक की सख्या लेना॥७८॥ यदि परराशि मे भिन्न २ राशि मे हो, इनमे से जो बलवान् हो उस तक की सख्या लेना॥७९॥ बलवत्ता विचार मे नैसर्गिकरूप से ग्रहहीन से तो ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है तथा ग्रहयुक्त राशि से अधिक ग्रहवाली बलवान् होती है। अधिक ग्रहो मे भी समान हो तो चर, स्थिर, और द्विस्वभाव राशिया उत्तरोत्तर बलवान् होती है॥८०॥

राशिसाम्ये यदा विप्र बहुवर्षप्रदो बली ॥ तद्वाद्युच्चग खेटो बलवान्सौबलो द्विज॥८१॥

यद्यल्पवर्षदो विप्र तदापि तुंगगो बली ॥ नाथांतेन समा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण हि ॥८२॥ उच्चखेटस्य सद्भावे वर्षमेकं तु निक्षिपेत् ॥ तथैव नीचखेटस्य वर्षमेकं त्यजेद्द्विज ॥८३॥ एकः स्वक्षेत्रगोऽन्यस्तु परत्र यदि संस्थितः ॥ तदान्यत्र स्थितं नाथं परिगृह्य दशां नयेत् ॥८४॥ एकः स्वोच्चगतस्त्वन्यः परत्र यदि संस्थितः ॥ ग्राह्यस्तूच्चखेटस्य राशिमन्यं विहाय वै ॥८५॥ एवं सर्व समालोच्य दशायां निधनं वदेत् ॥ पापयोगे पापदृष्ट्या यस्य पापात्त्रिकोणगाः ॥८६॥ निधनं तद्दशायां वै भाषितं ब्रह्मणा यथा ॥ चरपर्यादशायास्ते कथयिष्याम्यहं फलम् ॥८७॥

राशि भी समान हो तो वर्ष संख्या अधिक जिस राशि से प्राप्त हो उसको बली समझना। इसके भी अपवाद में उच्चस्थ ग्रह की राशि बली होती है।।८१।। उच्चस्थ राशि से वर्ष संख्या कम भी प्राप्त हो तो भी उच्चस्थ राशि ही बलवान् होती है। इस प्रकार से भाव से भावेश तक गिन कर वर्ष लेना चाहिए।।८२।। जिस राशि में उच्चस्थ ग्रह हो तो उसकी वर्ष संख्या में १ और जोड़ना। इसी प्रकार नीचग्रह हो तो १ वर्ष घटाना।।८३।। जिन राशियों के दो स्वामी हैं उन ग्रहों में से एक तो उस राशि में हो और दूसरा अन्यराशि में हो तो अन्य राशिस्थित स्वामी तक की संख्या लेना।।८४।। और दो में से एक ग्रह उच्चस्थ हो तथा दूसरा अन्यराशि में हो तो उच्चस्थ ग्रह तक की संख्या ग्रहण करना (और पूर्वोक्त नियमानुसार १ और मिलाना) ।।८५।। इस प्रकार सब तरह से विचार करके मारक राशि में मृत्यु का निर्देश करना। जो राशि पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो अथवा त्रिकोणभाव में पापग्रह हो।।८६।। उस दशा में निधन कहना, ऐसा पहिले ब्रह्माजी ने कहा है। इस चरपर्या दशा के फल आगे कहेंगे।।८७।।

अथ चरदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योग
११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	८९ ० ० ० ०
१९ ००	११ १९	२२ १९	२९ १९	३६ १९	४२ १९	५० १९	५६ १९	६२ १९	६४ १९	७६ १९	८८ १९	८९ १९
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण—कल्पना किया कि—प्रथम भाव का स्वामी मगल द्वादश भाव म है अत ११ वर्ष प्राप्त हुए। इसी प्रकार पूर्वोक्त रीति से तत् २ भाव के स्वामी से भावस्थिति पर्यन्त सख्या गिन कर वर्ष लिखना।

ये दशाएँ अप्रचलित है अत अनुपयुक्त है। अत काल्पनिक उदाहरण ही दिखाये गय है।

अथ नवमांशस्थिरदशामाह

अधुना सप्रवक्ष्यामि दशास्थिरविशेषत ॥ नवांशकदशामान तवाग्रे कथयाम्यहम् ॥८८॥ प्रतिराशिप्रविष्टैवमङ्काङ्काब्दा दशा स्थिरा ॥ तन्वादिव्ययभावाना स्पष्टीकृत्वा द्विजोत्तम ॥८९॥ ग्रहनवांशायुरीत्या दशा तुल्या नवांशका ॥ अस्थिरा इति विज्ञेया परपक्षमिद क्रमम् ॥९०॥ पक्षद्वय प्रवक्ष्यामि चरस्थिरद्वय द्विज ॥ पूर्वं चरदशा वक्ष्ये तवाग्रे द्विजनन्दन ॥९१॥ ओजलग्ने जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज ॥ लग्नादिक समारभ्य या जन्मप्रभृतिदशा ॥९२॥ समराशौ जनुर्यस्य नवांशकदशा द्विज ॥ राश्यादिक समारभ्य पुरा शम्भुप्रणोदितम् ॥९३॥ ओजराशिगते खेटे क्रमात्तत्तद्दशा नयेत् ॥ तत्तद्राशिमवांशाद्या समे तु विपरीतत ॥९४॥ दशाप्रवर्तक खेटो विषमर्क्षगतो द्विज ॥ राशिप्रतिनवाब्दानां सर्वेषा गणयेत्क्रमात् ॥९५॥ अष्टोत्तरशताब्दाना सख्यापूर्वं नवांशका ॥ ख्याता स्थिरदशा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥९६॥ दशाप्रवर्तक खेट समराशि गतो द्विज ॥ तत्तद्राशि समारभ्य गणयेद्व्युत्क्रमेण च ॥९७॥

नवांश स्थिरदशा

अब हम नवांशदशा स्थिरस्वरूप वाली कहते है॥८८॥ इस दशा मे प्रतिराशि मे ९–९ वर्ष होते है। प्रथम १२ भाव स्पष्ट करना चाहिए। तब भावो पर विचार करना॥८९॥ ग्रह के नवांश की आयु की रीति से नवांश के बराबर वर्ष सख्या ग्रहण करना ऐसा दूसरा पक्ष भी है और इसका नाम नवांश अस्थिर दशा है॥९०॥ हम तुमको स्थिरदशा और चर–(अस्थिर) दशा दोनो ही पक्ष कहेगे। पहिले नवांश चरदशा ही कहते है॥९१॥ जिसका जन्म विषम राशि मे हो तो जन्मलग्न से ही दशा का आरभ करना चाहिए॥९२॥ यदि समराशि मे जन्म हो तो जातक की राशि से नवांशदशा का आरभ होता है॥९३॥ (अब स्थिरदशा की रीति कहते है) ग्रह विषमराशि म हो तो क्रम से राशियो की दशा लगाना चाहिए वह विषम नवांशदशा है। ग्रह समराशि म हो तो विपरीत गणना करना॥९४॥ दशादाता स्थान विषम म होने से प्रतिराशि ९–९ वर्ष रखकर १२ राशियो के १०८ वर्ष रखना॥९५॥ हे द्विजवर! यह स्थिर दशा का क्रम कहा॥९६॥ दशादाता ग्रह यदि समराशि मे हो तो राशिगणना विपरीत क्रम स करना चाहिए॥९७॥

तत्तद्राशिगताना च नवांशास्ते द्विजोत्तम ॥ अष्टोत्तरशत सख्या ह्यब्दाना च दशा स्थिरा ॥९८॥ विषमर्क्षे दशाप्राप्ते मेषे मेषादिक गणेत् ॥ वृषे वृषादिक गण्य क्रमेण द्विजसत्तम ॥९९॥ समराशिदशाप्राप्ते नवांशकक्रमेण च ॥ सप्तम राशिमारभ्य गणयेद्द्विजसत्तम

॥१००॥ एवं तत्तद्दशाकाले विषमे पूर्ववत्क्रमात् ॥ समे समुखमारभ्य नवांशकक्रमेण च
॥१०१॥ मेषे मेषादिकं गण्यं वृषे च मकरादिकम् ॥ मिथुने च तुलाद्यं च कर्के कर्कादिकं द्विज
॥१०२॥ एवं क्रमेण गणयेद्विषमर्क्षदशांतरे ॥ समर्क्षान्तर्दशाप्राप्ते गणना समुखेन च ॥१०३॥
मेषे च धनुराद्यं च वृषे कन्यामृगं गणेत् ॥ मिथुने च तुलाद्यं च कर्के मीनादिकं च यत् ॥१०४॥
एवं क्रमेण गणयेत्तमे समुखराशितः ॥ द्वयोः क्रममहं वक्ष्ये त्रिशूल्यभिहितं यथा ॥१०५॥

१२हों भावों के ९–९ वर्ष रखने से १०८ वर्ष की पूरी दशा होगी॥९८॥ विषमराशि में दशा हो तो मेष में मेष से ही तथा वृष में वृष में ही इसी क्रम से आरंभ करना॥९९॥ इसी रीति से विषम राशि में अपने नवांश के आरंभ में क्रम से गणना करना और समराशि में अपने नवांश के नौवें नवांश से आरंभ करके विपरीत उलटा गिनते हुए क्रम से दशा रखना॥१००॥१०१॥ मेष राशि में नवांश मेष से तथा वृष में मकर से मिथुन में तुला से कर्क में कर्क राशि से गणना करे॥१०२॥ विषम राशि की नवांश दशा में उपर्युक्त क्रम से गणना करे। समराशि की गणना सम्मुखीन (नौवीं) राशि से करे॥१०३॥ यथा मेष में धनु से उलटी रीति से वृष में मकर से कन्या तक उलटी रीति से मिथुन में मिथुन से उलटा तुला तक तथा कर्क में मीन से उलटा कर्क तक॥१०४॥ (सूचना–विषम राशि से वर्ष गणना क्रम से तथा सम राशि में वर्ष गणना विपरीत क्रम में करना चाहिए) इस उलटे क्रम से सम राशि में नौवें नवांश से प्रथम नवांश तक उलटा गिना जाता है॥१०५॥

अथ नवांशस्थिरदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	भावा
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०९	१९ १८	१९ २७	१९ ३६	१९ ४५	१९ ५४	१९ ६३	१९ ७२	१९ ८१	१९ ९०	१९ ९९	२० १०८
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ स्थिरदशामाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि स्थिरदशां द्विजोत्तम ॥ प्रकारद्वितयं वक्ष्ये यथा शंभुप्रणोदितम् ॥१०६॥
चरस्थिरद्विस्वभावा राशयस्त्रिविधाः क्रमात् ॥ सप्ताष्टमनवाब्दां च आनयीत दशां स्थिराम्
॥१०७॥ मेषे सप्ताब्दविज्ञेया वृषे वसु समा द्विज ॥ मिथुने नव वर्षाणि कर्कात्यावि
यथाक्रमम् ॥१०८॥ द्वादशराशिपर्यन्तं ज्ञायतेऽब्दादिद्विजोत्तम ॥ षण्णवतिसमा संख्या
तामारभ्य वदाम्यहम् ॥१०९॥ एषा स्थिरा सिद्धदशा तस्या यदिप्रवर्तकम् ॥
ब्रह्मग्रहाश्रितारंभस्तदग्रे पूर्ववत्क्रमः ॥११०॥

नवांश स्थिरदशा

हे द्विजोत्तम! अब हम 'स्थिरदशा' कहते हैं। भगवान् शंभु के कथनानुसार दो रीति कही जाती है॥१०६॥ चर, स्थिर, द्विस्वभाव तीन प्रकार की राशि हैं। इनमें क्रम से ७।८।९ वर्ष ग्रहण करना॥१०७॥ जैसे मेष में ७ वर्ष तथा वृष में ८ वर्ष एवं मिथुन में ९ वर्ष ग्रहण करना॥१०८॥ इसी प्रकार आगे भी बारह राशियों तक ९६ वर्ष होंगे यह ९६ वर्ष की सिद्ध वर्षों की स्थिर दशा कहाती है॥१०९॥ इस दशा में जो ग्रह ब्रह्मासंज्ञक हो उससे आरंभ करना। यदि ब्रह्मा ग्रह विषम राशि में हो तो क्रम से दशा चलेगी और यदि सम राशि में ब्रह्मा ग्रह हो तो पूर्वोक्तानुसार विपरीत क्रम से आगे की दशा जानना॥११०॥
चक्र तथा उदाहरण-यहां कल्पना किया कि-ब्रह्मग्रह मकरस्थ है, अतः उसीसे दशा आरंभ है, वर्ष संख्या चरादि रीति से ग्रहण की गई है।

अथ स्थिरदशायन्त्रमिदम्												
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	भावा
७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	वर्षा० ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०७	१९ १५	१९ २४	१९ ३१	१९ ३९	१९ ४८	१९ ५५	१९ ६३	१९ ७२	१९ ७९	१९ ८७	१९ ९६
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथोत्तरदशाचतुर्विधप्राणमाह

अथोत्तरदशाविप्रो[1] निरूपणमिहोच्यते। प्राणबलेन सयुक्तो तत्रादौ राशिरुच्यते ॥१११॥ आद्य प्राणिबलं वाच्य कारके योग समतात् ॥ स्वस्वकारकसंबधे तत्तद्राशिर्बलप्रद. ॥११२॥ कारकयोगेबलसाम्यग्रहयोगाच्च साम्यता ॥ भूयसा ग्रहयोगेन बल वाच्य द्विजोत्तम ॥११३॥ ग्रहाधीन ग्रहबलमिति न्यायेन चिंतयेत् ॥ तदापि साम्यता विप्र यदापि निर्णय वदेत् ॥११४॥ राश्यधिपे स्वतुगस्थे मित्रक्षेत्रादिकेऽपिवा ॥ एव राशिबल ज्ञेय निर्विशक द्विजोत्तम ॥११५॥ ततो बलविशेषोर्थो नैसर्गिकमत पुरा ॥ तस्मान्निसर्गकबल सप्राह्य द्विजसत्तम ॥११६॥ अग्रहात्सग्रहो स्यादल्पग्रहादधिकग्रहा ॥ साम्ये चरस्थिरद्विर्या क्रमात्स्युर्बलशालिन ॥११७॥ एव चरस्थिरप्राणिस्थिरोद्द्वबलोद्विज ॥ ध्यायेद्विलबनैसर्गिकितयित्वा न सशय ॥११८॥ पूर्वोक्तकारकाध्यायेचितयेद्द्विजसत्तम । कारकयोगादि बल तस्मात्प्राणवतो भवेत् ॥११९॥ राशौ कारकयोगेषु निजनाथेन सयुते ॥ स राशिर्बलवान् विप्र कारकैयोगकेमते ॥१२०॥ स्वामियुक्त कारकेषु यस्तद्राशिर्बली द्विज ॥ तत्तद्राशौ चिंतनीयमग्रमपे विशेषत ॥१२१॥

चतुर्विधप्राणदशा

हे मैत्रेय! अब उत्तरदशा या चतुर्विध प्राणदशा का निरूपण करते हैं। उस निरूपण में प्रथम प्राणबल से युक्त राशि कहते हैं॥१११॥ प्राणबल चार प्रकार के हैं, उनमें पहला प्राणबल कारक ग्रह का योग होने से होता है। अर्थात् अपने २ कारक से (जो राशि जिस भाव में है उस भाव का कारक जो ग्रह है उससे) सम्बन्ध होने से वह राशि बलवान् होती है॥११२॥ कारकयोग में भी बल की समानता हो (दो राशियों का बल समान हो) तथा ग्रह योग से भी बल की समानता हो तो अधिक ग्रहयोग से बल का निर्णय करे॥११३॥ ग्रहयोग से होनेवाला बल ग्रह के आधीन है इस नियम से विचार करे। जब बल में समानता हो तब निर्णय (विचार) करना चाहिए॥११४॥ (ग्रहबल कहते हैं) राशि का स्वामी उच्च राशि में हो या मित्रराशि में (अथवा स्वगृही हो) तो वह राशि बलवान् होती है॥११५॥ और इसके अभाव में पहिले जैसा कहा है, वैसा नैसर्गिक बल देखना। उस नैसर्गिक बल से राशि का बलवान् जानना॥११६॥ ग्रहहीन राशि से ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। ग्रहयुक्त में अधिक ग्रहयुक्त राशि बलवान् होती है। दोनों प्रकार समान होने से चर, स्थिर द्विस्वभाव राशि उत्तरोत्तर निसर्गत (स्वभावत:) बलवान् है। इस प्रकार चर से स्थिर और स्थिर से द्विस्वभाव राशि बलवान् होती है। इस नैसर्गिक बल का विचार करे॥११८॥ पूर्वोक्त कारकाध्याय में कहे हुए कारकयोग का बल विचार कर उस बल से राशि का बल जानें॥११९॥ राशि में कारक ग्रह स्थित हो, या स्वस्वामी हो तो वह राशि कारकयोग से अथवा योग (स्वामी योग से) बलवान् होती है॥१२०॥ यदि स्वामी हो कारक भी हो तो वह राशि बलवान् होती है। यह विचार हर एक राशि में करना चाहिए॥१२१॥

एकराशौ बहुग्रहा सयुक्ता द्विजसत्तम ॥ राशिद्वारा बली ज्ञेयो यदि अप्राप्यतेऽधिक ॥१२२॥ स्वस्थानात्पबली ज्ञेयो मध्यमात्मध्यवीर्यक ॥ अत्राधिकबली ज्ञेयो प्रायबलवितरणात्

॥१२३॥ ओजराशौ वैशिके च पुरतः पार्श्वसंस्थिताः ॥ पृष्ठतो वा प्राण इति बलदत्वेन कथ्यते॥१२४॥इति प्रथमभेदः ॥ यस्मिन्राशेः स्वामियोगे गुरुचांद्रिनिरीक्षिते ॥ स राशिर्बलवान्प्रोक्तो द्वितीयेपि च प्राणिनि ॥१२५॥ राशीनां द्वादशानां च बलमेव द्वितीयकम् ॥ इति प्रोक्तप्रकारेण द्वितीयं ज्ञायते बलम् ॥१२६॥ इति द्वितीयप्राणभेदः ॥ स्वामिनां तृतीय प्राणि तवाग्रे गदितं मया ॥ स्वात्मकारककुण्डल्यां चिन्तयेद्द्विजसत्तम ॥१२७॥ केंद्रे पणफरे प्रोक्तं स्वामिदौर्बल्यमेव हि ॥ केंद्रदुर्बलवांश्चैवं पणफरे चैकसंज्ञकः ॥१२८॥

एक राशि मे यदि अनेक ग्रह हो तो वह राशि राशिबल से बली है। यदि अगले भाव मे अन्यबल हो तो इस राशि को बलवान् समझे॥१२२॥ इसी प्रकार कम अंश वाली राशि अल्पबली है और मध्य अंशवाली मध्यबली और अधिक अंशवाली अधिकबली होती है॥ जैसे ग्राम्य शूकर से वन्य शूकर बलवान् होता है॥१२३॥ राशि यदि विषम या 'वेशि' संज्ञावाली हो, या २।१२ मे शुभग्रह हो अथवा किसी पृष्ठभाव स्थित ग्रह बल प्रदान करता हो तो वह राशि 'बलद' अर्थात् बलवान् है॥१२४॥ यह प्रथम भेद है॥ जो राशि अपने स्वामी से युक्त होकर गुरु या बुध से दृष्ट हो वह राशि भी (द्वितीय प्रकार से) बलवती है॥१२५॥ १२ राशियो का यह द्वितीय बल है। इस प्रकार से दूसरा बल जाना जाता है॥१२६॥ द्वितीय प्राणभेद॥ तीसरा प्राण बल हमने आत्मकारक लग्न में कहा है। उक्त प्रकार से विचार करना॥१२७॥ तथा इस भेद मे स्थान बल से भी विचारना कि-केन्द्र से पणफर मे एक विश्वा दुर्बलता है। अर्थात् पणफरभाव स्थित ग्रह केन्द्र से १ दुर्बल है॥१२८॥

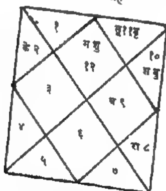
आपोक्लिमे द्विगुणितमेव दौर्बल्यमेव च ॥ तृतीय प्राणि इत्येव जानीयाद्द्विजनंदन॥१२९॥ इति तृतीयप्राणभेदः ॥ चतुर्थप्राणि विज्ञेय तवाग्रे च वदाम्यहम् ॥ पापयोगेन रहितः पापक्रांतो न पश्यति ॥ स राशिर्बलवान् विप्र प्राणधारे चतुर्थकः ॥१३०॥ चतुर्विधे प्राणसंज्ञे एतेषां बलवीर्ययुक् ॥ स राशिरत्र भागे च अतः पाके द्विजोत्तम ॥१३१॥ इति चतुर्थभेदः ॥

पणफर से आपोक्लिम भावस्थ राशि दुर्बलतर २ बल से न्यून है। इस प्रकार यह तीसरा प्राणबल जानना॥१२९॥ यह तृतीय प्राणबल है॥ चतुर्थ प्राणबल तुम्हारे सामने कहते है। जो राशि पापग्रह युक्त न हो तथा पापदृष्ट भी न हो वह राशि चौथी श्रेणी की बली है॥१३०॥ यह हमने चार प्रकार का प्राणबल कहा। इनमे जो राशि प्राणबल से बली हो उसकी प्रथमदशा तथा द्वितीय प्राणबल से युक्त राशि की चौथी दशा, त० से, स० च० से दशमभाव की दशा जानना॥१३१॥ चतुर्थ भेद समाप्त ॥

उदाहरण तथा चक्र इस कल्पित उदाहरण मे आत्मकारक मंगल ही प्रथम प्राण है, द्वितीय शनि प्राण है, तृतीय प्राण शुक्र और चतुर्थप्राण चन्द्रमा है।

अथ चतुर्विधप्राणदशायंत्रम्												
१२ म०	१	२	१० श०	११	१२	१२ शु०	१	२	९ च०	१०	११	मा
१ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	वर्ष ० ० ० ०
१९००	१९०१	१९१२	१९२३	१९३५	१९४७	१९४८	१९४९	१९६०	१९७१	१९७३	१९८५	१९९७
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

कारकलग्नमाह



अस्या दशाया वर्षाणि
चरदशावदानीतानि

अथ ब्रह्मग्रहाश्रितषष्ठांत्याब्दिकां दशामाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामि ब्रह्मतामपरां दशाम् ॥ तस्याः प्रकारो वै विप्र तवाग्रे गदितो मया ॥३२॥
पूर्वोक्तलक्षणाक्रान्ते यत्र ब्रह्मग्रहे स्थिते ॥ तमारभ्य दशा ज्ञेया षष्ठात्यब्दा समानयेत् ॥३३॥

ओजलग्ने रविश्चंद्रो मंगलादिक्रमेण च ॥ यस्य राशिस्थिते ब्रह्मा तद्ग्रहात्षष्ठखेचरः ॥३४॥
रवेर्भृगुं विजानीयाच्छिखिनोगुरिति क्रमः ॥ षष्ठांतिमसमा विप्र गणनीया यथोक्तकम् ॥३५॥
समलग्नयदा प्राज्ञ ब्रह्मखेटःसमाश्रितः ॥ तत्तद्राशितमोराशिपर्यंताब्दसम नयेत् ॥३६॥

ब्रह्मग्रहाश्रित दशा

अब हम ब्रह्मा नाम के ग्रह के आश्रित दशा कहते है। इसका कुछ विवरण प्रथम भी कर चुके है॥३२॥ प्रथम कहे हुए लक्षणों से युक्त ब्रह्माग्रह जिस राशि मे हो उस राशि से यह दशा आरभ की जाती है॥३३॥ राशि यदि विपम हो तो क्रम गणना से सूर्य, चन्द्रादि के समान दशाराशि की गणना करो। ब्रह्मा जिस ग्रह की राशि मे हो (फलविचार) उससे छठे ग्रह की राशि से करना चाहिए॥३४॥ छठी राशि स्वामी का गणनाक्रम इस प्रकार जाने, जैसे सूर्य का छठा शुक्र है और आगे शनि राहु आदि। और वर्षसख्या भी सब राशियों मे ६-६ वर्ष लेना॥३५॥ हे विप्र! जब ब्रह्मग्रह समराशि मे हो तो उस लग्नराशि से तमोराशि (सूर्यास्त राशि = सप्तमराशि) सप्तमभाव से दशा आरभ करना॥३६॥

यद्वा ब्रह्मसमां राशिमारम्य क्रियते द्विज ॥ षष्ठराश्यतमब्दांश्च सप्रह्यपरलकः ॥३७॥ वशा ब्रह्मग्रहपरा राशिमारम्य कीर्त्यते ॥ षट्खेटा यत्र पूर्णाश्च भवति द्विजसत्तम ॥३८॥ तावद्धि राशिपर्यन्त समा ग्राह्याः प्रयत्नतः ॥ यत्तत्समायु. सज्ञेय निर्विशंक द्विजोत्तम ॥३९॥ ओजक्रमेण गणना समेषु खितयेत्क्रमः ॥ समोपि सप्तमाद्व्येत्तत्तद्राशिर्ब्रह्मणाश्रितः ॥ ४०॥ ओजब्रह्मग्रहाश्रित्यैतद्ग्रहात्षष्ठमातकः ॥ समाना गणना विप्र पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥४१॥ समे ब्रह्मग्रहाश्रिते सप्तमः षष्ठमान्तकः ॥ गणनीया समा ज्ञेया निर्विशक द्विजोत्तम ॥४२॥

और दूसरा यह भी पक्ष है कि ब्रह्मग्रहाश्रित राशि से ही दशा आरभ करना और ६-६ वर्ष ग्रहण करना॥३७॥ यह दशा ब्रह्मग्रहाश्रित है, अत यही से आरभ की जाती है। जिसमें कि ६ वर्ष ही ग्रहराशि के पूर्ण वर्ष होते है॥३८॥ उस राशि तक राशियो की वर्ष सख्या लेना, जहा तक स्वल्प, मध्य, दीर्घ आयु की अवधि हो॥३९॥ ओज=विपम राशि मे क्रम से गणना करना और समराशि मे ब्रह्माश्रित राशि से सप्तमभाव से (व्युत्क्रम) गणना करना॥१४०॥ विपम राशि मे ब्रह्माश्रित राशि से अन्तिम राशि पर्यन्त ६ वर्ष के हिसाब से गणना होती है, यह शम्भु कथित है॥१४१॥ ब्रह्मग्रह के आश्रित यदि समराशि हो तो सप्तम राशि ही गणना मे प्रधान है और सप्तम राशि से ही षष्ठान्तक दशा की गणना करनी चाहिए॥१४२॥

अथ बलविशेषं दर्शयति

लग्नेशाल्लाभभावेशौ लग्न इत्यादितो द्विज ॥ स्यातव्य च पितुः प्राण इत्येव ब्रह्मणोदितम् ॥४३॥ षड्वर्गादिस्तु सबलः स्यानव्यतिकरो द्विज ॥ तथा पूर्वोक्तमबौ तस्याः स्पष्ट वदाम्यहम् ॥४४॥ ओजलग्नाश्रिते लग्ने तद्राशिगणनाक्रमात् ॥ षष्ठस्वाम्यंतरीत्या च समानीया द्विजोत्तम ॥४५॥ ब्रह्माश्रितसमे लग्ने सप्तमाद्व्युत्क्रमेणच ॥ गणयेत्षष्टिसख्याहि

ह्यब्दानिह द्विजोत्तम ॥४६॥ एकमेकादशे पापे दृष्टियोगे भवत्यपि ॥ ग्रहयोग तथा विप्र प्रबले च व्यतीकर ॥४७॥ रुद्रशूलदशादौ च क्वचित्प्राणो भवत्यपि ॥ तदग्रे तुंगादिबल व्यतिकरार्यचतुर्थक ॥४८॥ तुंगमूलत्रिकोणेषु स्वर्क्षमित्रादिवर्गके।ग्रहयोगबलप्राप्ताश्चत्वारो द्विजसत्तम ॥४९॥ इत्यास्थानव्यतिकरो भेदार्या च चतुर्विधा ॥ अथ कारकयोगाना चतुर्दा भेद उच्यते ॥१५०॥

ग्रह तथा राशि का बल

लग्न तथा लग्नेश से लाभ राशि और लाभेश के बलाबल विचार से पिता का विचार किया जाता है॥१४३॥ ग्रह का बल व्यतिकर षड्वर्गादि सम्बन्ध और पूर्वोक्त सम्बन्ध जानना। इसको स्पष्ट कहते है॥१४४॥ लग्न यदि विषम राशि मे हो तो दशा राशि की गणना क्रम से होती है। और छठे भाव के स्वामी के स्थान तक दशा रखना चाहिए॥४५॥ यदि ब्रह्माश्रित राशि सम हो तो लग्न के सप्तम भाव से दशा रखना चाहिए और वर्ष सख्या सब राशियो की ६–६ वर्ष होगी। ग्यारहवे भाव मे पापग्रह की दृष्टि या पापग्रह का योग हो तो विघ्न की सभावना होती है॥४७॥ रुद्र शूल दशा मे किसी भाव मे बलवान ग्रह हो तो उसके बल का विचार चार प्रकार से किया जाता है॥४८॥ हे मैत्रेय! वे चार प्रकार ये है। उच्च मे, मूल त्रिकोण मे, स्व राशि मे, मित्रवर्ग मे, इस प्रकार ग्रह योग के चार प्रकार होते है॥४९॥ इस प्रकार स्थान बल के ४ भेद हुए। चार ही प्रकार कारक योग के भी कहे जाते है॥१५०॥

चतुर्धा प्राणतश्चैव पूर्ववद्द्विजसत्तम ॥ प्राण इत्युपसहार पुरा शम्भुप्रणोदित ॥५१॥ पचम इत्युपपद केतुपचमक शुभम् ॥ ओजे क्रमेण गणना समे वा व्युत्क्रमेण च ॥५२॥ दशाऽब्दनेयाऽब्दसख्या च पर्यायाष्टक्रमेण च ॥ नाथातेम समासोया पूर्ववद्द्विजसत्तम ॥५३॥ त्रिक त्रिक राशिपदमोजे चतु क्रमेण च॥ समे व्युत्क्रमरीत्या च राशे पदत्रिक त्रिकम् ॥५४॥ क्रमेण पचमे केतुर्नवमे व्युत्क्रमेण च ॥ शुभ फल न दत्वैन पचमे शिखि-सौम्यवत् ॥५५॥

इस प्रकार से ग्रह बल जो कि प्राण सज्ञक और जिसका उल्लेख हम पहले कर चुके है, उसी को यहा समझना॥५१॥ पाचवा एक बल और होता है जिसको 'उपपद' या केतु पचम कहा जाता है। जिस जातक के पचम भाव मे केतु हो उसके लिये यह चर–दशा नाम की दशा कही जाती है। इस दशा मे भी विषम राशि हो तो क्रमश गणना करना और सम राशि मे विपरीत क्रम से गणना करनी चाहिए॥५२॥ और इस दशा मे वर्ष सख्या चरपर्या पहले वह अनुसार राशि के स्वामी तक जो प्राप्त हो वही जानना, इसका विवरण पहले कह चुके है॥५३॥ विषम राशि मे ३–३ राशियो के ४ विभाग क्रम से होते है। और सम राशि मे ३–३ राशि के ४ विभाग विपरीत क्रम से होते है॥५४॥ क्रम गणना और व्युत्क्रम गणना मे इस प्रकार समझना चाहिए। जैसे–क्रम गणना से लग्न से पचम भाव मे यदि केतु हो तो व्युत्क्रम गणना मे वह केतु नवम भाव मे समझा जायेगा। विपरीत गणना अशुभ फल कारक और क्रम गणना शुभ फल कारक होती है॥५५॥

पंचम इत्युपपदं पदारूढे विचिंतयेत् ॥ ओजक्रमेण गणना समे लग्ने च व्युत्क्रमः ॥५६॥ नवमे संस्थिते केतावारूढ-राशितो द्विज ॥ विषमे पूर्ववत्तर्हि क्रमेण पचमे स्थिते ॥५७॥ शुभे फलप्रदातारः पचमे चरसज्ञकाः ॥ केतोर्दशायां वै पापा ददत्येवं शुभ फलम् ॥५८॥ ग्रहनवांशकरीत्या च समानीत द्विजोत्तम॥ चरनवांशाब्दसज्ञेयं भावे बलद्वितीयकम् ॥५९॥

पचम भाव जैसे लग्न से होता है, इसी प्रकार लग्न के आरूढ पद से जो पचम राशि हो उससे भी पूर्वोक्त प्रकार के अनुसार विचार किया जाता है। उस भाव की दशा मे भी विषम राशि मे क्रम गणना और सम राशि मे विपरीत गणना होती है॥५६॥ यदि लग्न से नवम भाव मे केतु हो अथवा आरूढ राशि से नवम भाव मे केतु हो तो भी विषम राशि मे पूर्ववत् क्रम से गणना और सम राशि मे विपरीत गणना होती है॥५७॥ पचम भाव मे चर राशि हो तो शुभ फल देती है। तथा केतु की दशा मे भी पचम भाव मे पापग्रह होने पर भी शुभ फल होता है॥५८॥ ग्रह के नवांश की रीति से तथा राशि की नवांश रीति से दशा मे अन्तर्दशा का विचार करना चाहिए। और इस दशा का नाम 'चर–नवांश' वर्ष दशा है॥५९॥

स्वस्वाम्यादि दशा ग्राह्या फलादेशाय हेतवे। स्थिरनवांशे वर्षाणि राशि प्रति नवैव हि ॥१६०॥ चरराशिनवांशाब्दे मासान्येव चरस्थिरा ॥ विधेयेद्द्विफलार्थाय बले ग्राह्या द्विजोत्तम ॥६१॥ यस्मिन्काले यस्य राशेर्यदा सा च चरस्थिरा ॥ पर्यायस्तद्दशाया च स राशिर्द्वारमुच्यते ॥६२॥ लग्नाद्यावद्दूर स्याद्द्वारराशिर्द्विजोत्तम ॥ तस्माच्च तावद्दूरो हि बाह्यराशिर्भवत्यपि ॥६३॥ चरानुक्तिमार्गः स्यादष्टपष्ठादिका स्थिरे ॥ उभये कटका ज्ञेया लग्नपचमभागतः ॥६४॥ चरस्थिरद्विःस्वभावे ओजेषु प्राक्क्रमोत्क्रमः तेषु च त्रिषु युग्मेषु ग्राह्या व्युत्क्रमतोऽखिला ॥६५॥ एवमुल्लिखितो राशि पाकराशिरिति स्मृत ॥ स एव भोगराशिश्च पर्याये प्रथमे स्थिरः ॥६६॥ लग्नाद्यावत्तिथ.पाक. पर्याय इव दृश्यते ॥ तावन्मात्र ततोभोग पर्याये तत्र गृह्यताम् ॥६७॥ तद्वि चरपर्यायस्थिरपर्याययोद्वयो ॥ त्रिकोणाख्यदशाया च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६८॥

इस नवांश दशा मे भी राशि के स्वामी से दशा आरम्भ होती है। और महादशा के वर्ष प्रति राशि ९ जानने चाहिए॥१६०॥ हे मैत्रेय! चर राशि महादशा के नवांश के अन्तर मे विशेष फल जानने के लिये आधा भाग चर राशि और आधा भाग स्थिर राशि का जानना चाहिए॥६१॥ जिस समय मे जो आयु (अल्प मध्य दीर्घ) प्राप्त हुई हो, उस दशा की उस आयु के लिये वह 'द्वार राशि' है॥६२॥ लग्न से जितने स्थान सख्या पर द्वार राशि हो, उतनी ही सख्या और आगे 'बाह्य राशि' होती है॥६३॥ राशि दशा मे चर राशि के लिये कोई विशेष स्थान वर्णित नही है। स्थिर राशि के लिये षष्ठ और अष्टम स्थान वर्णित है। और द्विस्वभाव राशि मे केन्द्र तथा त्रिकोण भाव कहे गये है॥६४॥ ओज राशियो के चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशि मे पहले कहे अनुसार पहले क्रम से, पीछे व्युत्क्रम से गणना होती है। और शेष की ३–३ राशियो मे विपरीत गणना होती है॥६५॥ इस प्रकार बनाई हुई राशि दशा की राशि है और अपने पर्याय मे पहली नवांश की भी राशि है॥६६॥ लग्न से जितनी सख्या पर द्वार राशि हो भोग मे उन तिथि की उतनी ही सख्या पर बाह्य दशा जानना॥६७॥ यह

करना॥७९॥ चर दशा मे पूर्व प्रकार से दशा लगाना। स्थिर दशा मे षष्ठादि क्रम से दशा लगाना। इस प्रकार बारहवो भाव की दशा लगाना॥८०॥ चर राशि मे एक ही प्रकार है और स्थिर राशि मे षष्ठादि प्रकार है॥८१॥ हे द्विजोत्तम! इस प्रकार यह चरपर्या दशा कही गई और ७।८।९ वर्ष के प्रमाण से स्थिरपर्या दशा कही गई॥८२॥

उदाहरण तथा चक्र–

कल्पना किया कि–बुध ब्रह्मग्रह है अत उपर्युक्त नियमानुसार बुध के स्थान से दशा आरभ की और सब भावो के ६–६ वर्ष योग करके चक्र का निर्माण किया गया।

अथ ब्रह्मदशायंत्रम्

१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	भावा
बु०		के०		सू०		गु०		शु०		च०		
६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ०	७२ वर्षा दि
१९००	१९०६	१९१२	१९१८	१९२४	१९३०	१९३६	१९४२	१९४८	१९५४	१९६०	१९६६	१९७२
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ १२

अथ केद्रादिदशामाह

अथ केद्रदशारीत्या भेदानाह द्विजोत्तम ॥८३॥ प्रथमे चरराशौ च लग्ने वा सप्तमेऽपि वा ॥ बलवद्राशिमारभ्य उत्क्रमार्गे दशाक्रम ॥८४॥ विषमे समभेदाच्च प्रथमे प्राक्क्रमोत्क्रम ॥ प्रथमादि द्वितीयादि द्वादशाना क्रमेण च ॥८५॥ सप्राक्क्रमोत्क्रमपदमप्यनुज्झितक्रमोपरि ॥ दशा द्वादशराशीनां क्रमव्युत्क्रमभेदत ॥८६॥ स्थिरराशौ द्वितीयेऽपि लग्ने वा सप्तमे द्विज ॥ षट्षष्ठादि च रीत्या च दशारम्भं प्रकाशयेत् ॥८७॥पदाच्च पूर्वमुक्तेन क्रमव्युत्क्रमभेदत ॥ क्रमाद्वृषे वृश्चिके च व्युत्क्रमात्कुम्भसिंहयो ॥८८॥ पृथक्क्रमेण तृतीयद्विस्वभावदशा द्विज ॥ लग्ने वा सप्तमे चापि बलवाश्च विलोकयेत् ॥८९॥ चतुष्केन्द्रादिदशा लग्नपञ्चमभाग्यत ॥ केद्रे लग्ने ततो नेयात्पणफरे पचमादित ॥९०॥ आपोक्लिमे भाग्यतश्च दशारम्भो द्विजोत्तम ॥ नव नव समा ग्राह्या मैत्रेयस्पष्ट भाषिते ॥९१॥

केन्द्रादिदशा

अब केन्द्रदशा की रीति से दशा के चर, स्थिर, तथा द्विस्वभावराशिदशा के भेद कहते हैं (महादेवजी ने) उनमे प्रथम चरराशि दशा मे लग्न मे चर राशि हो तो लग्न और सप्तम मे जो बलवान् राशि हो, उससे दशा का आरम्भ करे॥८३॥८४॥ (लग्न या सप्तम भाव की चरराशि जो बलवान् हो वह) यदि विषम हो तो क्रम गणना से और सम हो तो विपरीत क्रम से दूसरी, तीसरी आदि १२ राशियो तक दशा होती है॥८५॥ प्रथम कहे हुए क्रम का उल्लघन नही करना॥१२॥ राशियो की दशा क्रम तथा विपरीतक्रम से ही जानना॥८६॥ (अब स्थिरराशि की दशा कहते है) द्वितीय पर्याय मे लग्न मे स्थिर राशि हो तो लग्न या सप्तम मे जो बलवान् हो, लग्न से दशा का आरभ होकर उसके बाद उससे छठे भाव की दशा, बाद उससे छठे भाव की दशा होती है॥८७॥ पहिले कही हुई रीति से सीधे और उलटे क्रम से दशा रखना। वृष और वृश्चिक लग्न हो तो क्रम से और सिह कुभ हो तो उलटे क्रम से दशा की गणना करना॥८८॥ (द्विस्वभावराशि की दशा) द्विस्वभावराशि यदि लग्न मे हो तो लग्न सप्तम मे जो बलवान् हो उससे देखना॥८९॥ केद्र के चार भावो की दशा इस प्रकार रखना कि—प्रथम लग्न आदि चारो केद्र भावो की बाद पणफर स्थानो मे से केवल एक पचमभाव की उसके बाद पडनेवाले तीन केन्द्र स्थानो की॥१९०॥ और बाद आपोक्लिम स्थानो मे से प्रथम नवमभाव की और बाद मे पडनेवाले तीन केन्द्र के भावो की दशा होती है। और सब राशियो की दशा मे वर्ष सख्या ९-९ ही होती है॥९१॥

अथ कारककेन्द्रदशामाह

सूर्यादिनवखेटाश्च आयुर्दायनवांशकान् ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षैः कारककेन्द्रादिका दशा॥९२॥ या नवांशकाना च ह्यब्दाना द्विजसत्तम ॥ कारकेन्द्रादि संस्थाप्य क्रमात्पूर्वं समालयेत् ॥९३॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तत्स्याधिपक्रमेण च ॥ नवभिर्नवभिर्वर्षैः कारककेन्द्रादिसंस्थिता॥९४॥ आदौ केन्द्रस्थराशिश्च तत्स्याधिपक्रमेण च ॥ बलाधिक्येन प्रथमस्ततो दुर्बलसंज्ञक ॥९५॥ प्रतिभे नव वर्षाणि कारकाश्रितराशित ॥ जन्मसपद्विपत्क्षेमप्रत्यरीसाधको वध ॥९६॥ मैत्रातिमैत्रमित्ये-व तत्तदन्तर्दशा नयेत् ॥ स्वकेन्द्रस्थाधिपाना च सूर्यादीना ग्रहाद्द्विज ॥९७॥ कारकलग्ने समालोक्य लग्नसप्तमयो र्बली ॥ तदारम्य क्रमेणैव क्रमव्युत्क्रमभेदत ॥९८॥ गृहकारकपर्यंत राशिसख्या दशाब्दका ॥ तत कारककेन्द्रादिविभागेन बली भवेत् ॥९९॥

कारककेन्द्रदशा

सूर्यादि नवग्रह इस कारककेन्द्रदशामे ९-९ वर्ष की आयुरूप दशा तथा नवांशरूप मे अन्तरदशा देने वाले है॥९२॥ उन ग्रहो तथा नवांशो की वर्ष दशा पहिले स्थापित करनी चाहिए॥९३॥ प्रथम केन्द्रस्थ राशि अपने स्वामी ग्रह के क्रम से ९-९ कारककेन्द्रदशामे लगानी चाहिए॥९४॥ केन्द्रराशियों मे अपने स्वामी के क्रम से जो राशि बलवान् होगी उसकी दशा प्रथम रखी जायगी, उसके बाद उससे दुर्बल की (और उसके बाद उससे दुर्बल की) ॥९५॥ प्रति राशि के ९-९ वर्ष होते है, उन नौ वर्षों की अन्तरदशा मे जन्म, सम्पत् विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक वध॥९६॥ मैत्र, अतिमैत्र इन तारानामो से अन्तर्दशा रखना,

यह अन्तरदशा अपने केन्द्रस्वामी सूर्य आदि ग्रह की कही जाती है।।९७।। इस दशा के आरभ करने मे भी लग्न और सप्तमभाव मे जो बलवान् हो उससे विषम तथा सम राशि के अनुसार क्रम और व्युत्क्रम भेद से दशा रखनी होती है।।९८।। अपने स्वामी तक यह दशा केन्द्र के स्थानो मे बलवान् ग्रह के विभाग से रखी जाती है।।९९।।

आदौ केन्द्रस्थिताना च स्थिताना पणफरे तत ॥ आपोक्लिमे स्थिताना च ततोपि बलवद्द्विज ।।२००।। बलाढ्य प्रथमे विप्र क्रमेण सर्वदुर्बला ॥ केन्द्रादिस्थग्रहाणा च दशाब्दानयन क्रमम् ।।१।। खेटात्कारकपर्यन्त राशिसस्थाप्रमाणत ॥ एव दूर महाप्राज्ञ नवत्यब्दाश्रयेत्क्रमात् ।।२।। यथा कारकग्रहस्याब्दास्तथा कारकयुक्तका ॥ तत्तद्ग्रहाणामब्दानामानेय द्विजसत्तम ।।३।। एव स्थिरदशारम्भात्स्थान दर्शयति द्विज ॥ अतर्दशाब्दमानेय ह्यर्क भाना क्रमेण च ।।४।। लग्नादिचतु केन्द्रेषु वैषम्याधिके वै द्विज ॥ तद्राशे स्थितिमारम्य ह्येकाब्देन क्रमेण च ।।५।। चतु केन्द्रेषु विप्रेन्द्र विषमातिबलाधिका ॥ दशाप्रदत्वात्तराशि कारक पर्यवस्थित ।।६।। अतर्दशा तदारम्य द्वादशराशिषु द्विज ॥ प्रतिराश्येक मब्द च सर्वे स्पष्टाधिपा क्रमात् ।।७।।

प्रथम केन्द्रस्थित राशियो की अपने बलाबल के अनुसार बाद पणफर राशियो की, पश्चात् आपोक्लिम राशियो की दशा रखनी चाहिए।।२००।। हे विप्र! सबसे बली राशि की प्रथम इसी तरह उससे दुर्बल और उससे दुर्बल ग्रह की अर्थात् केन्द्र के चारो भावो मे ग्रहो के बलाबल से अन्त मे (चौथी) सबसे दुर्बल ग्रह की दशा होगी।।१।। पूर्वोक्त प्रकार से ग्रहो से बलका विचार करते हुए शेष तक १२ भावो की दशा रखना।।२।। जिस कारक ग्रह के वर्ष दशा मे रखे गये है वे वर्ष उसी दशा मे उसी ग्रह के रख कर (समझकर) राशि के वर्ष अपने स्वामी (कारक) के भी समझना।।३।। इस प्रकार अपने २ भाव की दशा स्थिर होने पर अन्तर्दशा भी १२ हों भावो की रखना।।१४।। लग्न आदि ४ केन्द्र स्थानो मे जो बलाधिक राशि है प्रथम उसीसे अन्तर्दशा भी आरभ होगी। भोग प्रमाण १-१ वर्ष का होगा।।५।। हे विप्रेन्द्र! चारो केन्द्रस्थानो मे विषम राशि भी बल मे अधिक है अत प्रथम दशादात्री होनेसे कारककेन्द्र दशा मे स्थित है। अर्थात् अपने विषमत्व बल से ही उसका इस दशा मे महत्व है।।६।। १२ राशियो मे अपने २ स्पष्टक्रम से प्रतिराशि १-१ वर्ष देकर अन्तर्दशा रखनी चाहिए।।७।।

एव महादशाब्दाना द्वादशराशिषु भ्रमेत् ॥ तदनतर्दशा जेया भानू राश्योपरिभ्रमन् ।।८।। नवाशाख्या दशाब्दानामित्यनुवृत्यमेव च ॥ आदिराशिर्नवाब्दाना सप्राह्यो द्विजसत्तम ।।९।। एव केन्द्रबलाधिक्यमारम्य प्रथमा दशा ॥ दुर्बलाना च सर्वेषामब्दानामानयेत्क्रमात् ॥ १०।।

इस प्रकार महादशा के १२ राशियो मे तत्तद् ग्रह की अन्तर्दशा भी भ्रमण करती है (होती है)।।८।। राशि के ९ वर्षो मे अन्तर की अनुवृत्ति से आदि राशि ही अपने २ नवाश वर्षो की स्वामिनी होती है।।९।। पूर्वोक्त प्रकार से इस प्रकार बलाबल विचार म केन्द्र मे बलाधिक प्रथम होती हुई अन्त तक १२ राशियो की दशा होती है ।।८-१०।।

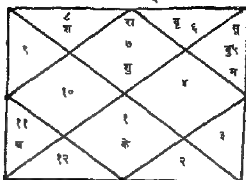
उलटे क्रम से आत्मकारक ग्रह जिस स्थान मे हो वहा तक गिन कर वर्षसख्या रखना चाहिए ॥११॥ हे विप्र! इस कारक ग्रह की दशा मे अन्य दशाओ से भेद है। ग्रह या राशि की दशा के वर्ष विषम और सम राशि मे परस्पर विपरीत क्रम से वर्ष सख्या ग्रहण की जाती है ॥१२॥ ऐसा ही पहिले भगवान शम्भु ने कहा है कि–विषम, सम राशियो मे क्रम तथा व्युत्क्रम भेद से वर्षो की सख्या लेना चाहिए॥१३॥ और आत्मकारक के साथ जो ग्रह हो उनकी दशा के वर्ष भी आत्मकारक के बराबर ही होते है॥१४॥ लग्न से आत्मकारक ग्रह तक गिनकर (विषम, सम मे क्रम–व्युत्क्रमभेद से) जो सख्या हो वह आत्मकारक की दशा होती है ॥१५॥ आत्मकारक युक्त ग्रह की आत्मकारक के तुल्य ही जानना। दोनो की सख्या अधिक हो तो अधिक और न्यून हो तो न्यून दशा जानना ॥१६॥ आत्मकारक से युक्त होकर केन्द्रादि शुभस्थान मे होने से शुभफल एव इसके विपरीत अशुभ फल होता है ॥१७॥ हे द्विजोत्तम! इस दशा का फल हमने पहिले कहा है। जिस दशा का स्वामी शुभ और बलवान् होता है उस दशा का अधिक शुभ फल होता है ॥१८॥

कारकचक्रम्						
म	च	बु	बु	श	बृ	शु
आत्म–कारक	अमात्य–कारक	भ्रातृ–कारक	मातृ–कारक	पुत्र–कारक	ज्ञाति–कारक	दारा–कारक

उदाहरण–उपर्युक्त चक्र मे अशानुक्रम से कारक दिखाये गये है। इसी क्रम से दशा चक्र मे दशा रखी गई है। लग्न से आरभ करके जितनी सख्या पर ग्रह हो उतने वर्ष समझना चक्र मे स्पष्ट है।

कारकदशाचक्रम्							
म०	च०	सू०	बु०	श०	बृ०	शु०	ग्रहा
११ ० ० ०	५ ० ० ०	११ ० ० ०	११ ० ० ०	२ ० ० ०	१२ ० ० ०	१ ० ० ०	वर्षाणि
२०१४	२०२५	२०३०	२०४१	२०५२	२०५४	२०६६	सम्वत् २०६७
४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	४ २३ २८ १८	सूर्य

जन्मलग्नम्



अथ मडूकदशामाह

मडूक इति विख्याता त्रिकूटाख्या दशा द्विज ॥ सप्ताष्टनवसंख्याश्च क्रमाब्दा स्थिरदशा इति ॥१९॥ चरस्थिरद्विस्वभावे सप्ताष्टनवसंख्यया। अब्दास्तु पूर्वरीत्या च ह्यानीय च दशा स्थिरा ॥२०॥ तद्राशेश्चाब्दकूटश्च घटितत्वाद्द्विजोत्तम ॥ चरस्थिरद्विस्वभावाना त्रिकोणर्क्ष प्रवर्तते ॥२१॥ क्रमेण प्रोक्तरीत्या च प्रवृत्तत्वात्त्रिकूटका ॥ मडूकेति समाख्याता पुरा शम्भुप्रणोदिता ॥२२॥ केन्द्रात्पणफराच्चैवापोक्लिमतप्रपचत ॥ क्रमेणभाग्यादिति च त्रिकोणाख्या च पूर्ववत् ॥२३॥ त्रिकूटघटितत्वाच्च केन्द्रादिति द्विजोत्तम समुश्च घटितत्वाच्च दशा स्थूला त्रिकूटका ॥२४॥ वैषम्याद् यदि विप्रेन्द्र लग्नसप्तमयोस्तथा ॥ मध्ये बलवती राशिस्तमारभ्य प्रवर्तते ॥२५॥

मडूक दशा

मडूकदशा नाम से प्रसिद्ध, तीन समूहवाली (अर्थात् प्रथम केन्द्र से, द्वितीय पर्याय मे पणफर से, तृतीय पर्याय मे आपोक्लिम से होने वाली है) अत त्रिकूट नामवाली दशा है। इसमे ७,८,९ वर्ष क्रम से होने से स्थिर दशाओ की श्रेणी की है।।१९।। चर, स्थिर, द्विस्वभाव राशियो मे ७,८,९ वर्ष सख्यायुक्त पूर्व रीत्यनुसार रखना चाहिए ।।२०।। तत् तत् राशि के वर्ष निश्चित होने से प्रथम केन्द्र से पश्चात् त्रिकोण ५।९ से यह दशा प्रवृत्त होती है।।२१।। क्रम से केन्द्र से त्रिकोण मे प्रवृत्त होने से 'त्रिकूटदशा' अथवा मडूक दशा कही गई है।।२२।। अथवा दूसरे शब्दो मे प्रथम केन्द्र से और बाद फणफर से पश्चात् आपोक्लिम से लग्न, पञ्चम, नवम भावो से प्रवृत्त होने से भी 'त्रिकूट' सज्ञा सार्थक है।।२३।। तीन समूह– घटित (युक्त) होने से तथा हे द्विजोत्तम! यह दशा ४–४ स्थानो के तीन कूट (समूह) युक्त होने से भी 'त्रिकूटा' है।।२४।। हे विप्रेन्द्र! यदि लग्न तथा सप्तम भाव मे विषमराशि हो तो उनमे जो बलवती राशि हो उसी से यह दशा आरभ होती है।।२५।।

पुंसो जातकवान् विप्र लग्नसप्तमयोर्द्वयो ॥ बलाढ्येन दशा ज्ञेया पूर्वोक्तेन क्रमेण च ॥२६॥ स्त्रीजातकवती विप्र बलवत्सप्तमा दशा ॥ आनीय पूर्वरीत्या च पुनरुक्त प्रणोदितम् ॥२७॥

बलिनौ शुक्रशशिनौ ज्ञेया मंडूकका दशा ॥ पुरुषश्च ततो नेयात्स्त्री चेद्दर्पणतो नयेत् ॥२८॥ केंद्रे पणफराच्चापोक्लिमक्रमेण बलवान्द्विज ॥ आदौ रीत्या दशाऽऽनेया प्रतिराशि नवाब्दिका ॥२९॥

हे विप्र[1] यदि जातक पुरुष हो तो लग्न और सप्तम भाव मे से जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरभ करना चाहिए॥२६॥ यदि जातक स्त्री हो तो सप्तमभाव से ही दशा का आरभ होगा। पूर्व कहे गये विषम, सम राशियो मे क्रम, व्युतक्रम का भेद पुन याद दिलाते है॥२७॥ जिस जातक की कुण्डली मे शुक्र और चन्द्रमा बलवान् हो, उनके लिए यह मडूक दशा कही गई है। पुरुष हो तो लग्न से या सप्तम से,जो बलवान् हो और स्त्री जातक हो तो दर्पण (सप्तमभाव) से ग्रहण करना॥२८॥ हे द्विज[1] केन्द्र,पणफर , आपोक्लिम क्रम से प्रथम कही रीति से प्रतिराशि समूह के नव (नये २ वर्ष) अर्थात् ७।८।९ वर्ष सख्यारूप भिन्न भिन्न सख्यावाली यह दशा है। (यहा 'प्रतिराशि नवाब्दिका'' इस पद का 'हर एक राशि के ९-९ वर्ष' यह अर्थ नही करना, क्योकि पूर्वापर विरोध होगा। प्रथम के २१९।२२० सख्यक श्लोको मे दो बार ७,८,९ की वर्ष सख्या कह चुके है, तब अकस्मात् विरुद्ध कैसे कहते। अत 'नवाब्दिका' पदको 'नवनवाब्दिका' पूर्व पदलोपी मानकर अर्थ करना ही सगत है। प्रति राशि नव = नवीन २ अर्थात् विभिन्न वर्ष लेना)।

अथ मण्डूकदशाचक्रम्

१	५	९	२	६	१०	३	७	११	४	८	१२	भावा
७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	० ० ० ० ०
१९ ००	१९ ०७	१९ १५	१९ २४	१९ ३२	१९ ४१	१९ ४८	१९ ५७	१९ ६४	१९ ७२	१९ ७९	१९ ८७	००
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	० ० ० ०

अथ नक्षत्रदशामाह

नक्षत्रायुर्महाप्राज्ञ पूर्णमत्रे प्रभाषितम् ॥ विंशोत्तरी पञ्चधा च द्विधा चाष्टोत्तरी मता ॥३५॥ मनुवर्गोपरि दशा सर्वेषां चिंतयेद्‌द्विज ॥ ततो निर्याणमालेख्य निर्विशक भविष्यति ॥३६॥

अथ योगार्द्धदशामाह

चरस्थिरदशा विप्र य च योग समाचरेत् ॥ तस्यार्धं च समायुर्दा योगार्द्धाख्या तु सा दशा ॥३७॥ लग्नसप्तमयोर्मध्ये चिंतयेत्तु बलाश्रयम् ॥ लग्ने बलयुते लग्नाद्दशारम्भ प्रकारयेत् ॥३८॥ तस्मात्सप्तमवीर्याढ्य ॥ दशारम्भ प्रकल्पयेत् ॥ पुंसा स्त्रीजातक यस्मे क्रमव्युत्क्रमभेदत ॥३९॥ बलिनस्तु दशाऽज्ञेया राशेर्हि शशिशुक्रयो ॥ स्त्रीचेद्दर्पणतो मेया पुरुषश्च ततो नयेत् ॥४०॥

नक्षत्र दशा

हे महाभाग! नक्षत्र द्वारा प्राप्त होनेवाली ५ प्रकार की विंशोत्तरी दशा–अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, सूक्ष्मदशा प्राणदशा भेद से तथा अष्टोत्तरी के २ प्रकार (आर्द्रा तथा कृत्तिका से आरम्भ) सम्पूर्ण रूप से कही गई हैं। उन सब नक्षत्र दशाओं के फल का विचार मनुष्य वर्गों पर विचार करना तथा फलरूप भोग के समाप्त होने पर मृत्यु का निश्चय करना॥३५–३६॥

योगार्द्ध दशा

चरराशि के दशावर्ष तथा स्थिर राशि के दशा वर्ष जोड कर आधे करने से (अर्थात् प्रत्येक राशि के चरदशा के वर्ष लेना और स्थिरदशा के वर्ष लेना योग कर आधा करने से) योगार्द्ध दशा होती है॥३७॥ लग्न और सप्तमभाव मे से जो बलवान् हो उससे दशारम्भ करना। जैसे लग्न बलवान् हो तो लग्न से दशारम्भ करना॥३८॥ सप्तमराशि बलवान् हो तो सप्तमभाव से दशा का आरम्भ करना। तथा विषम सम भेद से क्रम व्युत्क्रम गणना का भी ध्यान रखना॥३९॥ जो राशि बलवान् हो उससे दशा का आरम्भ करना। जिस जातक के चन्द्र शुक्र बलवान् हो उसके लिए यह दशा देखना। स्त्री जातक हो तो लग्न तथा सप्तमभाव मे जो राशि बलवान् हो उससे जो सप्तमभाव है, उससे दशा लेना। और पुरुष जातक हो तो लग्न सप्तम मे जो बलवान् हो उसी से दशारम्भ किया जाता है ॥४०॥

उदाहरण–इस 'योगार्द्धदशा' मे वर्षादि इस रीति से लेना कि–प्रथम 'चरदशा' के तथा 'स्थिर दशा' की वर्षसंख्या का योग करके आधा करना (२ का भाग देना) लब्ध वर्ष मास उसी भाव के 'योगार्द्धदशा' के वर्ष मास होंगे। चक्र से स्पष्ट समझना।

अथ योगार्द्धदशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योग
९	९	८	७	७	८	६	७	५	९	१०	५	९२
०	६	०	०	०	६	६	०	६	६	०	०	६
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
१९००	१९०९	१९१९	१९२७	१९३४	१९४१	१९४९	१९५६	१९६३	१९६९	१९७८	१९८८	१९९३
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४	१४
२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२	२२

अथ दृग्दशामाह

कुजादिति च ज्ञेया सा मित्रलग्नवमादितः क्रमत्रये कूटपद भाक्षा वै दृग्दशा द्विज ॥४१॥
दृष्टिचक्रे समुखस्थ राश्यादौ नवमस्य च ॥ कुत्रचित्क्रमरीत्या च कुत्रचिद्व्युत्क्रमेण वा॥४२॥
ततोपि पचमस्यैव क्रमेण कुत्रचिद्द्विज ॥ कुत्रचिद्व्युत्क्रमेणैव राश्येकादश सम्मुखम्॥४३॥

दृग्दशा

दृग्दशा के लिए शास्त्र मे 'कुजात्' कहा है। अत लग्न से (कुज=नवम) नवमभाव तथा दशम और एकादश इन तीन भावो से दशा का सकलन होता है। इन तीन भाव के समूह को त्रिकूट नाम से कहा है॥४१॥ (यहा कुज शब्द का अर्थ नवम होता है क्योकि–"कटपयादि अक्षा ग्राह्या।" इस नियम से क–१ ज–८ इन अको को 'अकाना वामतो गति' नियम के अनुसार रखा तो ८१ हुआ। १२ का भाग दिया तो शेष ९ यह राशि या भाव सख्या हुई। इस रीति के अनुसार 'कुजात्' का अर्थ 'नवमात्' किया है।) प्रथम दशारभ नवम के सम्मुखस्थ राशि की दशा होती है। कही क्रम से और कही विपरीतक्रम से दशा जानना॥४२॥ (यहा दृष्टिचक्रकी दृष्टि का कथन है। दृष्टिचक्र चतुर्थ अध्यायके आरभमे देखे।) इसमे भी राशि, क्रम के अनुरोध से अपने से पञ्चमभाव को देखती है और व्युत्क्रमानुरोध से एकादश भाव को देखती है॥४३॥

तस्याभावप्रमाण हि न ग्राह्य द्विजसत्तम ॥ सग्राह्य पञ्चमस्यैव दृष्टिचक्रे विशेषत ॥४४॥
अभिपश्यति ऋक्षाणि पार्श्वभे द्विजसत्तम ॥ पूर्वोक्तयैव रीत्या तत्रिकूटपदमुच्यते ॥४५॥

त्रिराश्यात्मकूटपदं ततोपि दशमस्य च ॥ दृग्दशैकादशे ज्ञेया नवमस्यापि दृग्दशा ॥४६॥
फलार्थे दृग्दशा विप्र संगृह्य कादशेपि च ॥ तस्याः प्रकारं वक्ष्येहं पुनरुक्तं विशेषतः ॥४७॥
अथौजयुग्मभेदेन गणनाक्रम उच्यते ॥ यथा सामान्यं संज्ञेयं युग्मेषु पञ्चमाययोः ॥४८॥ गणनायां च
सामान्यं पंचमैकादशे द्विज ॥ क्वचिदित्यात्मकं ज्ञेयं सामान्यत्रयकूटके ॥४९॥ अथौजपदयोर्विप्र
संज्ञेयं विपरीततः ॥ युग्मे च युग्मपदयोर्यथा सामान्ययोजनम् ॥२५०॥

हे द्विजसत्तम! चतुर्थाध्याय में यह दृष्टिक्रम कहा है कि—राशियां अपनी संमुख राशि को तथा पार्श्वराशि को देखती है। उस पूर्वोक्त रीति से ही 'त्रिकूट' स्थान कहा जाता है॥४५॥ तीन राशियों के मेल का नाम 'त्रिकूट' है अत ९।१०।११ भाव की राशियों से यह 'दृग्दशा' होती है॥४६॥ फलनिर्देश के लिए यह 'दृग्दशा' कही गई है। इसका प्रकार पुनः स्पष्ट करके कहते है॥४७॥ अब विषम, समभेद से गणना का क्रम कहते है। युग्मराशि में सामान्य रीति से ही ५।११ भाव की दशा जानना॥४८॥ तीनो राशियो ९।१०।११ मे पचम एकादश राशि की गणना सामान्यरूप से जैसे चतुर्थाध्याय मे कही है उसी प्रकार करना॥४९॥ विषमराशि हो तो विपरीत क्रम से और समराशि हो तो क्रमगणना से ५।११ भाव की दशा रखना॥२५०॥

क्रमो वृषे वृश्चिके च हीत्युक्तेन द्विजोत्तम ॥ अत्रापि ह्योजकूटस्थे पंचमैकादशात्क्रमात् ॥५१॥
दृग्योगं च भवेद्विप्र दृग्दशा बलदायिका ॥ युग्मकूटस्यसामान्यं व्युत्क्रमात्सिंहकुंभयोः ॥५२॥
पंचमैकादशौ विप्र दृग्योगौ भवतस्तथा ॥ राशीनां द्विस्वभावानां पंचमैकादशे स्थिते ॥५३॥
दृग्योगस्याप्यभावश्च दृष्टिचक्रे विचिंतयेत् ॥ यत्रभावे भवेद्दृष्टिस्तत्र तस्याश्रयादिके
॥५४॥ नवमेशानंतरं च विज्ञेया गणिताग्रणीः ॥ सप्तमस्य ततो ज्ञेया नवमादि
त्रिकोणगे ॥५५॥

वृष और वृश्चिक राशि विषम वर्ग मे होने के कारण प्रथम पचम पश्चात् एकादशभाव राशि की दशा लेना॥५१॥ इसी तरह सिह और कुम्भराशि के समवर्ग मे होने के कारण विपरीत क्रम से दृग्दशा ग्रहण करना॥५२॥ द्विस्वभाव राशि पचम एकादश मे हो तो उनसे भी दशा वर्ष लेना॥५३॥ दृष्टियोग पूर्वोक्त 'दृष्टिचक्र' से देखना। जिस भाव में दृष्टि हो उस भाव से दशा ग्रहण करना॥५४॥ नवमभाव के बाद दशम आदि राशि की दशा लेना। सप्तमभाव में सप्तमभाव बलवान् हो तो सप्तमभाव से नवमादि राशि लेना॥५५॥

द्विधा राशिर्दृग्दशायां पार्श्वराशिद्वयं दशा ॥ पुंराशिर्द्विस्वभावस्य ज्ञेया तस्य क्रमेण ॥ ॥५६॥
स्त्रीराशिर्द्विस्वभावेपि व्युत्क्रमेण द्विजोत्तम ॥ चतुर्थदशमौ ग्राह्यौ पार्श्वभं तु न संशयः ॥५७॥
चरराशिक्रमेणैव संस्थिते व्युत्क्रमेण च ॥ पंचमैकादशौ विप्र दृग्योगं च भवत्यपि ॥५८॥
पार्श्वराशेर्महाप्राज्ञ दशा नेया क्रमोत्क्रमात् ॥ द्विस्वभावनवमादौ संज्ञेयाः सप्तमस्य च ॥५९॥
ओजसंज्ञा द्विस्वभावे क्रमेण तुर्य व्योमके ॥ समे व्युतक्रमतो ज्ञेया सा ग्राह्या व्योमतुर्ययोः
॥६०॥ राशीनां द्वादशानान्तु संख्या नवनयाब्दकैः ॥ संग्राह्यं दृग्दशानां च फलं
पूर्वप्रकारतः ॥६१॥

यदि जातक पुरुष हो और लग्न मे द्विस्वभाव राशि हो तो पार्श्व राशि पचम एकादश नही होती, द्विस्वभावराशि की दृष्टि 'दृष्टिचक्र' मे चतुर्थ, दशम पर होती है, अत वही लेना॥५६॥ इसी प्रकार जातक स्त्री हो तो भी विपरीत क्रम से चतुर्थ, दशम राशि ग्रहण करना॥२७॥चरराशि हो तो नियमानुसार क्रमसे या व्युत्क्रमसे पचम तथा एकादश भाव की दशा ग्रहण करना॥५८॥ हे महाप्राज्ञ! पार्श्वराशि की दशा क्रम और व्युत्क्रम से लेना। द्विस्वभाव राशि के नवमादि भावो मे तथा सप्तमभावसे दशारभ हो तो पूर्वोक्तानुसार दशा लेना॥५९॥ द्विस्वभावराशि यदि विषम हो तो प्रथम चतुर्थ भाव की बाद दशम भाव की दशा लेना। सम राशि हो तो प्रथम दशम भाव की, बाद चतुर्थ की दशा लेना ॥६०॥ बारह राशियो की वर्ष सख्या ९–९ वर्ष की ही जानो। यह हमने दृग्दशा कही। इसका फल पूर्वोक्त प्रकार से ही जानना ॥६१॥

अथ दृग्दशाचक्रम्

१	५	११	५	१	७	३	६	१२	१२	९	३	भोग.
९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	९ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९००	१९०९	१९१८	१९२७	१९३६	१९४५	१९५४	१९६३	१९७२	१९८१	१९९०	१९९९	२००८
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण–उपर्युक्त कल्पित उदाहरण मे लग्न से नवम चरराशि है अत चरराशि मेष की दशा पश्चात् इसकी दृष्ट राशियो की दशा रखी गई है, पश्चात् दशम और उसकी दृष्टराशियो की, इसके बाद एकादश और उसकी दृष्ट राशियो की दशा रखी गई है। दृष्टिविचार मूल मे पूर्णरूप से कहा ही गया है। वर्ग सख्या ९–९ स्पष्टरूप से मूल मे कही ही है।

अथ त्रिकोणदशामाह

दशा त्रिकोणनाम्नी या यथान्यायप्रकल्पना ॥चरपर्यायरीत्यादिश्लोकोक्तेन प्रदर्शित ॥६२॥
लग्नादित्रिकोणेयो राशिर्बलवानुक्तहेतुभिः । तदारम्भानयेच्छ्रीमॅश्चरपर्यायवद्दशा ॥६३॥

युग्मराशिभवां पुंसामोजे गृह्णीत सम्मुखः ॥ ओजराशिभुवां स्त्रीणां युग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेषु राशिषु ॥ संप्रश्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारबाह्याख्या फलमेव विचिंतयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तदिदं चरपर्यायस्थिरपर्यायकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यादशा की रीति से कही गई है।।६२।। लग्न से तथा त्रिकोण राशियो से यह दशा आरभ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओ से बलवान् हो उसी से दशा आरभ करना।।६३।। (समराशि मे उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विषम राशि मे दशा कल्पना होती है। तथैव विषमराशि मे उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि मे होती है।।६४।) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विषम, समराशियो मे चरपर्यादशा के समान ही दशा की कल्पना करे।।६५।। इस दशा से द्वारराशि तथा बाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है।।६६।। इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है।।६७।।

पाकभोगे च पापाढ्ये देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्भीति भय क्लेशमहारुग्भ्यो प्रपीडित ॥६८॥ अधुना सप्रवक्ष्यामि कारकाणां फल द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्पा विज्ञेया पितृसौख्य विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चिन्तयेत्प्रथमाद्द्विज ॥७०॥

राशि की दशा मे पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है।।६८।। अब यह विचार कहा जाता है कि–प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए।।६९।। नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करे।।२७०।।

उदाहरण–लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों मे जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरभ करना, जैसे–कल्पित उदाहरण मे प्रथम बलवान् होने से लग्न की, पश्चात् ५–९ की, एव बाद मे २।६।१० की इसी प्रकार ३।७।११ और ४।८।१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

अथ त्रिकोणदशाचक्रम्

१	५	९	२	६	१०	३	७	११	४	८	१२	योगाः
११ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	८९ ० ० ० ०
१९००	१९११	१९१७	१९१९	१९३०	१९३८	१९५०	१९५७	१९६३	१९७०	१९८२	१९८८	१९८९
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ नक्षत्राद्राशिदशाक्रममाह

जन्मादौ चंद्रनक्षत्रे सर्वत्र घटिकौघके ॥ भानुना दीयते भागंशेषनाडीः प्रकल्पयेत् ॥७१॥ प्रथमं खण्डमारभ्य द्वादशे खंडके द्विज ॥ लग्नाद्द्वादशराशीनां गणनीयं क्रमेण च ॥७२॥ या यदी कर्मवत्खण्डे जन्मखण्डश्च आदितः ॥ आरभ्य गणनायां च जन्मलग्नादितो द्विज ॥७३॥ लग्नाद्द्वादशराशीशमारभ्य द्विजसत्तम । क्रमव्युत्क्रमभेदेन द्वादशर्क्षदशा मता ॥७४॥

नक्षत्र से राशिदशा

नक्षत्र के भभोग में १२ का भाग देकर बारहवाँ भाग प्राप्त करके जन्मकाल का कौनसा भाग है यह निश्चय करें।।७१।। प्रथम खण्ड से बारह खंडों में से जिस खंड में जन्म हो उस खण्ड तक जन्मलग्न से गणना करके जो राशि प्राप्त हो उसीसे १२ राशियों की दशा विषम तथा समराशि में क्रम तथा व्युत्क्रम से दशा का आनयन करें ।।७४।।

उदाहरण—कल्पना किया कि किसीका जन्म पूर्वाषाढा नक्षत्र में है, उसका भभोग ५७।४८ है। १२ का भाग दिया तो लब्ध ४ तथा शेष ९।४८ है, अत. कल्पित लग्न ५ से पञ्चम धनु राशि प्राप्त हुई, इसी से दशा आरंभ की, और प्रतिराशि ९–९ वर्ष रखे गये। चक्र में देखिये –

युग्मराशिभवां पुसामोजे गृह्णीत संमुखः ॥ ओजराशिभुवां स्त्रीणां युग्मे चैव समाश्रयेत् ॥६४॥ क्रमोत्क्रमेण गणयेदोजयुग्मेषु राशिषु ॥ संपन्नचरपर्यायदशामिति प्रकल्पयेत् ॥६५॥ ततोपि द्वारबाह्याभ्यां फलमेवं विचिंतयेत् ॥ पाकभोगद्वयं विप्र पापयोगेन सौख्यदाम् ॥६६॥ तद्विदं चरपर्यायस्थिरपर्यायकं द्विज ॥ त्रिकोणाख्यदशायां च पापभोगप्रकल्पनम् ॥६७॥

त्रिकोणदशा

त्रिकोण दशा नाम की यह दशा चरपर्यादशा की रीति से कही गई है॥६२॥ लग्न से तथा त्रिकोण राशियों से यह दशा आरम्भ होती है। जो राशि पूर्वोक्त हेतुओं से बलवान् हो उसी से दशा आरम्भ करना॥६३॥ (समराशि में उत्पन्न पुरुष जातक की दशा राशि सम्मुखीन विषम राशि में दशा कल्पना होती है। तथैव विषमराशि में उत्पन्न स्त्री जातक की दशा की परिकल्पना समराशि में होती है॥६४॥) यथाक्रम और विपरीतक्रम से विषम, समराशियों में चरपर्यादशा के समान ही दशा की कल्पना करे॥६५॥ इस दशा से द्वारराशि तथा बाह्यराशि से दशा और अन्तरदशा का विचार करे, द्वार राशि का दूसरा नाम 'पाकराशि' और बालराशि का 'भोगराशि' नाम है॥६६॥ इस प्रकार चरदशा और स्थिरदशा दोनों से इस त्रिकोणदशा के फलभोग का विचार किया जाता है॥६७॥

पाकभोगे च पापाढ्ये देहपीडा मनोव्यथा ॥ नृपाद्भीति भयं क्लेशमहारुग्भ्यां प्रपीडितः ॥६८॥ अधुना सम्प्रवक्ष्यामि कारकाणां फलं द्विज ॥ सप्तमश्च तृतीयश्च प्रथमो नवमोऽपि च ॥६९॥ नवमात्स्वल्पा विज्ञेया पितृसौख्यं विचिन्तयेत् ॥ शरीरारोग्यमैश्वर्यं चिंतयेत्प्रथमाद्द्विज ॥७०॥

राशि की दशा में पापग्रह योग होने पर देहपीडा, मनश्चिन्ता राजभय, क्लेश तथा रोगभय होता है॥६८॥ अब यह विचार कहा जाता है कि–प्रथमकारक (आत्मकारक) से इसी प्रकार तृतीय, सप्तम, नवम कारक से तत् २ कारकोक्त फल का विचार करना चाहिए॥६९॥ नवमकारक से पितृसौख्य का विचार तथा प्रथमकारक से अपनी आरोग्यता आदि का विचार करे॥२७०॥

उदाहरण–लग्न से त्रिकोण अर्थात् लग्न, पञ्चम, नवम भाव राशियों में जो बलवान् राशि हो उससे दशा का आरंभ करना, जैसे–कल्पित उदाहरण में प्रथम बलवान् होने से लग्न की, पश्चात् ५–९ की, एवं बाद में २।६।१० की इसी प्रकार ३।७।११ और ४।८।१२ की दशा ही है। इनके पूर्व चर पर्याय के तथा स्थिर पर्याय के समान रखना चाहिए।

अथ नक्षत्रराशिदशाचक्रमिदम्

९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	योगा
१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	१०८ ० ० ० ०
१९००	१९०९	१९१८	१९२७	१९३६	१९४५	१९५४	१९६३	१९७२	१९८१	१९९०	१९९९	सम्वत्
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ तारादशामाह

जन्मसम्पद्विपत्क्षेमप्रत्यरीसाधको वध ॥ मैत्रातिमैत्रमित्येव दशा ज्ञेया द्विजोत्तम ॥
विंशोत्तरीक्रमेणैवमब्दानिह विजानत ॥ आदौ केंद्रग्रहा यस्य विज्ञेया तारका दशा ॥७५॥

तारादशा

जन्म सम्पत विपत् क्षेम प्रत्यरि, साधक वध, मैत्र अतिमैत्र य नौ तारे है। विंशोत्तरी दशा के अनुसार ही इनकी दशा है। जातक की जन्मकुंडली मे जो ग्रह केन्द्र मे हो उनमे जो ग्रह बलवान हो सूर्यादि क्रम से उस ग्रह की तारा से दशा आरम्भ होगी और आगे की दशाएं उपर्युक्त ताराक्रम से होगी। प्रथम की दशा का भोग्य वर्षादिमान गणित द्वारा स्पष्ट निकाल कर रखना तथा आगे के वर्षमान विंशोत्तरी दशा के वर्ष ही जानना॥७५॥

उदाहरण–इस दशा मे सूर्य चन्द्र आदि ग्रहो के स्थान मे जन्म, सम्पत् आदि नाम रखना और सूर्यादि ग्रहो के विंशोत्तरी मे कथित वर्ष ही इनके वर्ष हैं, और साधन रीति भी वही है।

अथ तारादशाचक्रमाह

साधक	बुध	मैत्र	अतिमैत्र	जन्म	सपत	विपत्	क्षेम	प्रत्यरी	इमादशा
१ ८ १ ३८ ६	१७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	२० ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	१० ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	१८ ० ० ० ०	१६ ० ० ० ०	१०२ ८ १ ३८ ६
१९००	१९०२	१९१९	१९२६	१९४६	१९५२	१९६२	१९६९	१९८७	२००३
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	६ ५ १४ २२	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६	६ ५ ५२ २६

अथ वर्णदशामाह

जन्महोरर्क्षलग्नर्क्षसख्या ग्राह्या पृथक् पृथक् ॥ ओजलग्ने च युग्मे तु चक्रशुद्धैकसयुता ॥७६॥
युग्मौजसाम्ये सयोज्य वियोज्यान्योन्यमन्यथा ॥ मेषादित क्रमादोजे मीनादेरुत्क्रमात्समे
॥७७॥ एव यल्लग्नमायात वर्णद तत्प्रकीर्तितम् ॥ एव द्वादशभावाना वर्णद तत्प्रकीर्तितम्
॥७८॥ एव द्वादशभावाना वर्णद लग्नमानयेत् ॥ ग्रहाणा वर्णदा नैव राशीना वर्णदा दशा
॥७९॥ वर्षसख्या विजानीयाच्चरपर्याप्रमाणत ॥८०॥

वर्णद दशा

जन्मकाल के होरालग्न और जन्मलग्न से (अध्याय १० मे कथनानुसार) अलग अलग
सख्या ग्रहण करना, दोनो राशि विषम सम मे हो तो पूर्वोक्तानुसार आगत सख्या १२ मे
अधिक हो तो १२ से शोधित करके १ जोडे॥७६॥ और दोनो राशि एक ही जाति की हो तो
सयोजन, अन्यथा वियोजन करने पर जो सख्या प्राप्त हो वह विषम हो तो मेषादि क्रम से
और सम हो तो मीनादि विपरीत क्रम मे जो लग्न प्राप्त हो वह 'वर्णद' लग्न है॥७७॥ इसी
रीति से बारहो भावो का 'वर्णद' निकालना। यह वर्णदा दशा ग्रहो की नही होती, केवल
राशियो की होती है॥७९॥ चरपर्या दशा के अनुसार राशि के स्वामी तक विषम सम मे क्रम,
व्युत्क्रम भेद से वर्ष सख्या प्राप्त करे ॥८०॥

उदाहरण—कल्पना किया कि किसी का जन्म मेष लग्न मे है, अत जन्मलग्न विषम है तो सख्या १ प्राप्त हुई और होरा लग्न वृषभ है तो सम होने से विपरीत गणना से सख्या १० प्राप्त हुई दोनो विषम सख्या होने से योग किया तो '११' यह वर्णद दशा राशि प्राप्त हुई, इसी प्रकार प्रत्येक भाव से वर्णद राशि का अक प्राप्त करना चाहिए।

अथ वर्णददशाचक्रम्

११	५	८	६	६	४	४	२	२	८	१२	९	योग
१२ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	८ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	७ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	११ ० ० ० ०	४ ० ० ० ०	३ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	८५ ० ० ० ०
१९००	१९१२	१९१८	१९२४	१९३२	१९४०	१९४७	१९५४	१९६५	१९७६	१९८०	१९८३	१९८५
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

अथ पचस्वरदशामाह

पचाकान्प्रथमे बत्वा स्वरान्वर्णांश्च विन्यसेत् ॥ आदावकछडाधाश्च अत ओषठ्दवाबप ॥८१॥ कादिहान्तांल्लिखेद्वर्णान्स्वराधोङञणोज्झितान् । तिर्यक्पक्तिक्रमेणैव पच पच विभागत ॥८२॥ न प्रोक्ता ङञणा वर्णा नामादौ सति तेन हि ॥ चेद्भवति तदा ज्ञेया गजडास्ते यथाक्रमम् ॥८३॥ यदि नास्ति स्युस्तद्वर्णा सयोगाक्षरलक्षणा ॥ ग्राह्यस्तदादिमो वर्ण इत्युक्त ब्रह्मणा पुरा ॥८४॥

पचस्वरदशा

(छ लाइन सीधी और १० लाइन तिरछी लिखने से, खडे ५ कोष्टक और तिरछे ९ कोष्टक होते है। यह चक्र हुआ, अब इसमे वर्ण विन्यास कहते हैं।) ऊपर की तिरछी लाइन मे १ से ५ तक के अक लिखे। उनके साथ ५ स्वरो आ, ई, ऊ, ए, ओ, लिखे (यह दो लाईन हुई)। प्रथम की खडी पक्ति मे अ, क छ ड, ध आदि अक लिखे और अत की पचम खडी पक्ति मे

ओ, च, ठ, द, व आदि अक लिखे॥८१॥ पश्चात् आदि की खडी पक्ति के वर्णो से मिलान करते हुए 'क' से 'ह' तक के अक लिखे, प्रत्येक स्वर के नीचे पक्तिवार अक लिखे। ङ, ञ, ण इनको नही लिखे। तिरछी पक्ति मे क्रम से ५–५ अक लिखे॥८२॥ ङ, ञ, ण ये वर्ण नही कहे गए क्योकि–नाम के आदि मे ये वर्ण नही होते। यदि हो तो उनके स्थान मे क्रमश ग ज, ड इन अको को मानना चाहिए॥८३॥ यदि नाम के आदि मे सयुक्त अक्षर हो तो उसके आदि का एक अक्षर लेना, यह कहा है॥८४॥

अकाराद्या स्वरा पच ब्रह्माद्या पच देवता ॥ निवृत्याद्या कला पच इच्छाद्य शक्तिपचकम् ॥८५॥ मायाद्याश्चभेदाश्च धराद्या भूतपचकम् ॥ शब्दादिविषयास्ते च कामबाणा इतीरिता ॥८६॥ प्रभवादिक्रमेणैषा स्वराणामस्वरादिक ॥ उदयो द्वादशाब्दाना प्रत्येक द्वादशाब्दिक ॥८७॥ अस्यातरोदयो वर्षमेको मासो दिनद्वयम् ॥ सोकाब्धिनाडिका प्रोक्ता अष्ट त्रिशत्पलानि च ॥८८॥ द्वादशाब्दादिनाडयता स्वस्यानाच्च स्वकालत ॥ उदयाते पुनस्तत्रातरैकादशोदये ॥८९॥ जन्मकर्माधानपिण्ड छिद्रा सज्ञा स्वरादिषु ॥ यत्र नामाक्षर प्राप्त तत्रैव उदित स्वर ॥९०॥ तस्माद्वर्षाण्वजानीयाद्वर्षान्मासो भवेत्पुन । मासद्वय च विज्ञेय दिनद्वादशकाधिकम् ॥९१॥ एव क्रमेण जानीयाद्वर्षान् मासाश्च पचसु ॥९२॥

आकार आदि ५ स्वरो के ब्रह्मा आदि ५ देवता हैं। निवृत्ति आदि ५ कला इच्छा आदि ५ शक्ति है॥८५॥ माया आदि ५ भेद और पृथ्वी आदि ५ भूत तथा शब्द आदि ५ विषय हैं इच्छा आदि ५ शक्ति हैं॥८६॥ प्रभव आदि ६० वर्षो मे से १२-१२ वर्ष एक एक स्वरमे है॥८७॥ इसके अन्तरोदय मे १ वर्ष १ मास २ दिन ४७ घटी ३८ पल (अतरदशा)॥८८॥ १२ वर्ष की दशा मे तथा अन्तरोदय अपने पर्याय तथा अपने काल मे ११ अन्तर होते हैं॥८९॥ प्रत्येक स्वर की सज्ञा जन्म कर्म आधान पिण्ड, छिद्र ये हैं। जिस स्वर के नीचे नाम का आद्यक्षर होगा, उस जातक का वही उदित स्वर है ॥९०॥ उस उदित स्वर से दशा का आरभ होता है। वह दशा १२ वर्ष की और उसके अन्तरोदय के ११ अन्तर है। और उनमे प्रत्येक अन्तरोदय मे पाचो स्वरो का भोगकाल होता है। जिसमे प्रत्येक स्वर का भोगकाल २ मास १२ दिन होते हैं॥९१॥ इस क्रम से ५ स्वरो के वर्ष और मास जानना॥

मार्गपौषमासौ तु आद्यास्यादिदिनव्ययम् ॥ एव विभागश्चाब्दे सप्रदायानुसारत ॥९३॥ तियम प्रतिपत्पूर्वा कुजादेर्वारनिर्णय ॥ नदा भद्रा जया रिक्ता पूर्णा चापि यथाक्रमम् ॥९४॥ क्रमेणाका प्रदातव्या प्राह्याश्चाकसमुच्चया ॥ चद्राष्टावस्वरे ज्ञेया ईश्वरे नागकुजरा ॥९५॥ उस्वरे रामरकाणि एस्वरे चद्रखेचरा ॥ ओस्वरे पचदशभि स्यितियोगसमुद्भव ॥९६॥ अस्वरे कौर्प्यसिंहाजा ईस्वरे जेंद्धराशय ॥ उस्वरे चापजलजावेस्वरे तु तुलावृषौ ॥९७॥ ओस्वरे मृगकुम्भौ च राशोशाद्वारजा स्वरा ॥ स्वराद्य स्थापयेत्खेटान् राशेर्यो यस्य नायक ॥९८॥

इन पाच स्वरो मे क्रम से २–२ मास और १२–१२ दिन के विभाग मे एक वर्ष का

भोगमान कहा है। अस्वर मे मार्गशीर्ष और पौष मास तथा माघ के १२ दिन हैं। आगे इसी प्रकार ७२–७२ दिन ईकार आदि के हैं॥९३॥ तथा प्रतिपदा आदि ३–३ तिथि क्रम से, एव मगल आदि वार जानना। तिथियो मे नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता, पूर्णा ये अकारादि स्वरो की जानना॥९४॥ आगे कहे जाने वाले अक अकारादि स्वरो के नीचे देना और जिस स्वर के अक की आवश्यकता हो उसको ग्रहण करना। 'अ' स्वर के नीचे ८१ और 'ई' स्वर के नीचे ८७ देना॥९५॥ 'ऊ' स्वर मे ९३ तथा 'ए' स्वर मे ९९ एव 'ओ' स्वर मे १०५ स्थापन करना॥९६॥ इसी प्रकार 'अ' स्वर मे वृश्चिक सिह तथा मेष और 'ई' स्वर मे ३।४।६ तथा 'उ' स्वर मे ९।१२ एव 'ए' स्वर मे २।७ एव ओ' स्वर मे १०।११ तथा इन राशियो के स्वामी भी राशि के समान जानना, अर्थात् जिस राशि का जो स्वामी है वह राशि स्वर के नीचे ही रखना॥९८॥

अथ पंचस्वरचक्रम्				
अ	ई	उ	ए	ओ
१२	१२	१२	१२	१२
क	ख	ग	घ	ध
छ	ज	झ	ड	ठ
ड	ढ	त	थ	द
ध	न	प	फ	ब
भ	म	य	र	ल
व	श	ष	स	ह

अथ पचस्वरदशाचक्रमाह					
ई	उ	ए	ओ	अ	योगा
१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	१२ ० ० ० ०	६० ० ० ० ०
१९००	१९१२	१९२४	१९३६	१९४८	१९६०
१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२	१० ४ १४ २२

उदाहरण—कल्पना किया कि 'ईकार' स्वर मे किसी का जन्म है, तो ईकार से ही दशा आरम्भ की गई। इसका विशेष विवरण दशा अन्तर्दशा आदि 'नरपतिजयचर्या' नामक ग्रन्थ मे है जिज्ञासु को वही देखना चाहिए।

अथ योगिनीदशामाह

मगला पिगला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा ॥ योगिन्योऽष्टौसमाख्याता उल्का सिद्धा च सकटा ॥९९॥ पिगलातो भवेत्सूर्यो मगलातो निशाकर ॥ भ्रामरीतो भवेद्भौमो भद्रिकातो

बुधस्तथा ॥३००॥ धान्यकातो गुरुर्मूतिसिद्धातः कविसंभवः ॥ उल्कातो भानुतनय. संकटातस्तमोऽभवत् ॥१॥ स्वर्क्षं पिनाकिनयनयुक्तं च वसुभिर्हरेत् ॥ शेषेण योगिनी ज्ञेया शून्यपातेन सकटा ॥२॥ एकाभिवृद्धया वर्षाणि मगलाप्रमुखासु च ॥३॥ गताभिर्भस्य नाडीभिर्गुणयित्वा तु तैर्दिनैः ॥ विहीना सा प्रकर्तव्या स्फुटा चैव भवेद् ध्रुवम् ॥४॥

योगिनी दशा

मगला, पिगला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, सकटा ये आठ नामकी योगिनी दशा है॥९९॥ पिगला से सूर्य की उत्पत्ति है और मगला से चन्द्रमा, भ्रामरी से मगल तथा भद्रिका से बुध की उत्पत्ति है॥३००॥ धान्या से गुरु, सिद्धा से शुक्र, उल्का से शनि, सकटा से राहु की उत्पत्ति है॥१॥ जन्म नक्षत्र सख्या मे ३ जोडकर ८ का भाग देना, शेष रहे सो एकादि क्रम से मगला आदि दशा जानना। ०, शेष रहे तो सकटा दशा जानना॥२॥ एकोत्तर वृद्धि १,२,३,४,५,६,७,८ इनकी वर्ष सख्या है॥३॥ नक्षत्र की गतघटी= भयात से दशावर्ष सख्या को गुणा कर ३६ का भाग देने से दशा भुक्त प्राप्त होगी॥४॥ (भुक्त को दशामान मे घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी)

उदाहरण-कल्पना किया कि-किसीका जन्म पूर्वाषाढामे है अत नक्षत्र सख्या २० मे ३ युक्त किया तो २३ हुए। इसमे ८ का भाग दिया तो शेष ७ रहे, अत सिद्धा मे जन्म हुआ विशोत्तरी के समान ही युक्त भोग्य दशा प्राप्त करने पर ००।०७।११।३९।१८ भोग्य वर्षादि प्राप्त हुए।

अथ योगिनीदशाचक्रम्

सि.	स	म	पि	ध	भ्रा	भ	उ	योगिन्य
० ७ ११ ३९ १८	८ ० ० ० ०	१ ० ० ० ०	२ ० ० ० ०	३ ० ० ० ०	४ ० ० ० ०	५ ० ० ० ०	६ ० ० ० ०	२९ ० ० ० ०
१९००	१९०१	१९०६	१९१०	१९१२	१९१५	१९१९	१९२४	१९३०
१० ४ १४ २२	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०	५ १५ ५३ ४०

अथ पिंडांशनैसर्गिकाष्टकवर्गचतुर्णामायुः परिदशामाह

पैड्यांशनैसर्गिदशामायु परिविचिंतयेत् ॥ तथा ह्यष्टकवर्गे च विजानीहि द्विजोत्तम ॥५॥

पिंडादि चतुर्विध दशा

पिंडायु, अंशायु, नैसर्गिकायु तथा अष्टकवर्गायु इन चार प्रकार की दशाओं से आयु का विचार करे॥५॥ इनके उदाहरण आगे कहेंगे।

अथ संध्यादशामाह

परायुर्द्वादशोभाग स्फुट संध्या भवेत्तत ॥ स्वलग्नस्यदशाचादौ ततोऽन्येषु गृहेषु च ॥६॥

सध्यादशा

परमायु (१२०) वर्ष का जो बारहवा भाग है वह सध्या दशा का भोगकाल है और प्रथम लग्न की दशा उसके बाद क्रमश दशा जानना॥६॥

सन्ध्यादशाचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०	१० ०
२०००	२०१०	२०२०	२०३०	२०४०	२०५०	२०६०	२०७०	२०८०			
३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४	३ ४			

अथ पाचकदशामाह

सध्या रसगुणा कार्या चद्रवह्निहृता फलम् ॥ सस्थाप्य प्रथमे कोष्ठे ह्यर्द्धमर्द्धत्रिकोष्ठके ॥७॥
त्रिभाग वसुकोष्ठेषु लिखेद्विद्वान्प्रयत्नत ॥ एव द्वादशभावेषु पाचकानि प्रकल्पयेत् ॥८॥

पाचकदशा

साध्यादशा के वर्षादि मान को ६ से गुणा करके ३१ का भाग देने पर जो फल प्राप्त हो वह प्रथम कोष्टक मे रखे। बाद उसका आधा २ भाग आगे मे ३ कोष्ठो मे और तीसरा भाग बाकी के ८ कोष्ठो मे रखने से पाचकदशा होती है॥७॥८॥

महादशा फलकथनाध्याय

श्रीपराशरजी ने कहा–सूर्यनारायण को नमस्कार करके तथा सब चराचर जगत के स्वामी, सबके हृदयदेश मे (साक्षी रूप से) रहनेवाले तेज स्वरूप पार्वती पति श्री पशुपति तथा कल्याणकारी शम्भु को प्रणाम करके तीनो लोको की उत्पत्ति स्थिति तथा नाश करनेवाले भगवान् विष्णु को नमस्कार करके महेश्वर की कृपा से दाय (दशा) के फलप्रकाश प्रकरण कहते है॥१॥

अथ विंशोत्तरीपञ्चविधांतरमाह्

अथ वक्ष्ये खगेशाना भुक्ति पचविधामहम् ॥ दशा चान्तर्दशाचैव तत्तदन्तर्दशा तथा ॥२॥ सूक्ष्मभुक्तिप्राणदशाप्येव पच दशा स्मृता ॥३॥ मार्तण्डेन्दुकुजाहिजीवशनिविल्केतु सितोते क्रमात्षट्शक्तिर्मुनयो धृतिर्धरणिपा एकोनिता विशति ॥ अत्यष्टिर्मुनयो नखा इति विदुर्नाथा इमे खेचरा सप्ताक्ष्यर्यमविश्वमादिनवकर्क्षाणा विनेशाश्च ॥४॥

विंशोत्तरी दशा के पांच प्रकार–

अब हम सूर्यादि ग्रहो के पांच प्रकार भोगकाल कहते है। महादशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा सूक्ष्मदशा, प्राणदशा॥२॥३॥ क्रम से सूर्य, चन्द्र, मगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्र ये विंशोत्तरी दशा के स्वामी है। तथा दशा के वर्ष सूर्यादि ग्रहो के क्रम से ६,१०,७,१८,१६,१९,१७ ७,२०। ये दशा वर्ष है। कृतिका रोहिणी, मृगशिरा आदि नक्षत्रो पर तीन बार आवृत्ति करने से उपर्युक्त दशापति ग्रह ज्ञात होगा॥४॥

अथ विंशोत्तरीमहादशावर्षनक्षत्राणि									
सू	च	म	रा	बृ	श	बु	के	शु	ग्रहा
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२०	वर्षाणि
कृ	रो	मृ	आ	पु	पुष्य	आश्ले	म	पू	इमानि-
उ	ह	चि	स्वा	वि	अनु	ज्ये	मू	पूर्वाषा	नक्षत्राणि
उ षा	श्र	ध	श	पू भा	उ भा	रेवती	अश्वि	भरणी	

अथ भुक्तभोग्यानयनमाह्

स्फुटतरो हिमगु कलिकात्मक खखगजैर्विभजेद्गतभुक्तकम् ॥ तदुडुवर्षगुण च समादिक खखगजैर्विभजेत्फलमत्र च ॥५॥

दशाभुक्त भोग्य साधन

जन्मकालीन स्पष्ट चन्द्रमा को घटयात्मक करके ८०० का भाग देने से लब्ध गतनक्षत्र प्राप्त होगा। शेषांक से दशावर्ष गुणा कर पुनः ८०० का भाग देने से वर्ष, मास, दिन, घटी, पलस्य भुक्त दशा प्राप्त होगी। उसको दशा के वर्ष मे घटाने से भोग्यदशा प्राप्त होगी॥५॥

अथ सूर्यस्य दशावर्षाणि ६ तत्फलम्

सूर्योत्कृष्टदशा करोति सुतधीप्रज्ञाधिकारोच्छ्रयप्रामार्थागमकीर्तिपौरुषसुखप्राप्तीश्वरानुग्रहान् ॥भानोःपापदशा करोति विफलोद्योगार्थहान्यामयाद्राजक्षोभमहीशकोपजनकारिष्टाग्निबाधोद्भवान् ॥६॥ मूलत्रिकोणे स्वक्षेत्रे स्वोच्चे वा परमोच्चगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे भाग्यकर्माधिपैर्युते ॥ बल सूर्ये समायुक्ते रवौ वर्गे बलैर्युते ॥ तस्मिन्दाये महासौख्य धनलाभादिक शुभम् ॥७॥ अत्यन्त राजसम्मानमश्वादोल्यादिक शुभम् ॥ सुताधिपसमायुक्ते पुत्रलाभ च विदति ॥८॥ धनेशस्य च सबधे गजान्तैश्वर्यमादिशेत् ॥ वाहनाधिपसबधे वाहनत्रयलाभकृत ॥९॥

सूर्य दशाफल वर्ष ६

सूर्य की श्रेष्ठ दशा हो तो पुत्र प्राप्ति, श्रेष्ठ बुद्धि, अच्छे अधिकारो की प्राप्ति ग्राम का उदय, धनप्राप्ति यश विस्तार, पौरुष वृद्धि, सुख प्राप्ति और ईश्वरानुग्रह होता है। और यदि सूर्य की पापदशा हो तो मनोरथ की विफलता उद्योग और धन की हानि अनेक रोगो की उत्पत्ति, राजक्षोभ, परिवार कलह, पिता को अरिष्ट अग्नि बाधा आदि उपद्रव होते हैं॥६॥ सूर्य अपने मूल त्रिकोण मे अपनी राशि मे उच्च मे अथवा परमोच्च मे केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे स्थित हो और भाग्येश अथवा दशमेश स युक्त हो तथा बलवान् हो एव अपने वर्गो मे हो तो उसकी दशा मे महान् सुख और पूर्वोक्त धन लाभ आदिक होते है॥७॥ और विशेष करके राजकुल मे सम्मान, घोडा मोटर आदि की सवारी प्राप्त होती है। यदि सूर्य पञ्चमेश से युक्त हो तो पुत्रोत्सव होता है॥८॥ यदि धनेश से सम्बन्ध हो तो विशेष ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। यदि वाहनेश से सम्बन्ध हो तो कम से कम ३ सवारी होती है॥९॥

नृपालतुष्टिर्वित्ताढ्य सेनाधीशः सुखी नर ॥ वस्त्रवाहनलाभश्च इति दाये रवौ बली ॥१०॥
नीचे षडष्टके रिष्फे दुर्बले पापसयुते ॥ राहुकेतुसमायुक्ते दुःस्थानाधिपसयुते ॥११॥
तस्मिन्दाये महापीडा धनधान्यविनाशकृत् ॥ राजकोप प्रवास च राजदड धनक्षयम् ॥१२॥
ज्वरपीडा यशोहानिर्बन्धुमित्रविरोधकृत् ॥ प्रवास रोगविद्वेषो ह्यपमृत्युभय भवेत् ॥१३॥
चौराद्विवणभीतिश्च ज्वरबाधा भविष्यति ॥ पितृक्षयभय चैव गृहे त्वशुभमेव च ॥१४॥
पितृवर्गे मनस्ताप जनद्वेष च विदति ॥ शुभदृष्टियुते सूर्ये मध्ये तस्मिन्क्वचित्सुखम् ॥
पापग्रहेण सदृष्टे वदेत्पापफल नरः ॥१५॥

और राजा की प्रसन्नता विशेष धन लाभ या सेना पतित्व, उत्तम वस्त्र आदि लाभ होना है

और मनुष्य सुखी रहता है। (यह तो उत्तम फल कहा अब अधम फल कहते हैं)॥१०॥ सूर्य नीच का हो, ६।८।१२ वे स्थानों मे हो, बलहीन और पापग्रहयुक्त हो अथवा राहु–केतु से युक्त हो या त्रिषडाय के स्वामी से युक्त हो॥११॥ तो उस दशा मे महान् पीडा, धनधान्य का नाश, राजकोप और प्रवास, राजदण्ड, ज्वरपीडा, अपकीर्ति, बन्धु और मित्रो से विरोध तथा अपमृत्यु का भय होता है॥१२॥१३॥ चौर, सर्प, घाव का भय, पिता के मरने का भय, घर मे अशुभ कार्य, पितृवर्ग मे चिन्ता तथा परिवार मे कलह होती है॥१४॥ सूर्य पर यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो कुछ सुख। पापग्रहो की दृष्टि हो तो अधिक दु ख होता है॥१५॥

अथ चंद्रस्य महादशावर्षाणि १० तत्फलम्

चंद्रोत्कृष्टदशा करोति जननीश्रेयस्तडागादिक क्षेत्रारामगृहासनद्विजवरश्रीशोभनदोलिका॥ इन्दो पापदशासहीनकृपणानतार्थनाशामयप्रज्ञाहीनजुगुप्समातृमरणक्षोभातिशीतज्वरान् ॥१६॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ शुभग्रहेण सयुक्ते वृद्धिचंद्रबलैर्युते ॥१७॥ कर्मभाग्याधिपे चंद्रे वाहनीये बलैर्युते ॥ आद्यतेश्चोरुभाग्येशधनधान्यादिलाभकृत् ॥१८॥ गृहे तु शुभकार्याणि वाहन राजदर्शनम् ॥ यत्नकार्यार्थसिद्धि स्याद्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥१९॥ मित्रप्रभुवशाद्भाग्य राज्यलाभ महत्सुखम्॥ अश्वादोल्यादिलाभ च श्वेतवस्त्रादिलाभकृत्॥२०॥ पुत्रलाभादिसतोष गृहेगोधनसकुलम् ॥ धनस्थानगते चंद्रे तुगे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥२१॥ अनेकधनलाभ च भाग्यवृद्धिर्महत्सुखम् ॥ निक्षेपराजसम्मान विद्यालाभ च विवति ॥२२॥

चन्द्रदशा फल वर्ष १०

चन्द्रमा की श्रेष्ठ दशा हो तो माता को सुख मकान बाग–बगीचा, तलाब आदि, समाज मे श्रेष्ठता, उत्तम सवारी आदि प्राप्त होती है। चन्द्रमा की पापदशा हो तो धन हीनता, कृपणता, बहुधननाश, रोग किंकर्तव्यविमूढता निन्दा मातृ मरण, दु ख, शीतज्वर आदि होता है॥१६॥ (विशेष रूप से फल) चन्द्रमा यदि उच्च मे अपनी राशि मे, मूल त्रिकोण आदि मे, केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो और शुभ ग्रह से युक्त हो, बलवान तथा शुक्ल पक्ष का हो, अथवा ९वें दशवें का मालिक हो अथवा बलवान् शुभग्रह से युक्त हो तो उसकी दशा मे भाग्य की बहुत वृद्धि होती है, धन–धान्य का लाभ होता है॥१७॥१८॥ और घर मे विवाह आदि शुभ कार्य होते है। वाहन का लाभ होता है। राज दर्शन, उद्योग की सिद्धि, मनोरथ सिद्धि, घर मे लक्ष्मी की चकाचौंध रहती है। मित्र या स्वामी की कृपा से भाग्य वृद्धि राज्य मे लाभ तथा महान् सुख होता है। घोडा, मोटर आदि सवारी प्राप्त होती है॥१९॥२०॥ पुत्र लाभ होता है। और यदि चन्द्रमा उच्च राशि का या स्वक्षेत्री होकर धन स्थान मे हो॥२१॥ तो अनेक धन का लाभ, भाग्य वृद्धि, महान् सुख विद्या लाभ, अकस्मात् विशेष धन की प्राप्ति तथा राज सम्मान होता है॥२२॥

नीचे वा क्षीणचंद्रे वा धनहानिर्भविष्यति ॥ दुश्चिक्ये बलसयुते क्वचित्सौख्य क्वचिद्धनम् ॥२३॥ दुर्बले पापसयुक्ते देहजाड्य मनोरुजम् ॥ भृत्यपीडा वित्तहानिर्मातृवर्गजनाद्य

॥२४॥षष्ठाष्टमव्यये चन्द्रे दुर्बले पापसयुते। राजद्वेषो मनोदुःख धनधान्यादिनाशनम् ॥२५॥ मातृक्लेश मनस्ताप देहजाड्य मनोरुजम् ॥ दुःस्थे चन्द्रबलैर्युक्ते क्वचिल्लाभ क्वचित्सुखम् ॥ देहजाड्य क्वचिच्चैव शान्त्यर्थेन विनाशनम् ॥२६॥

चन्द्रमा नीच राशि का या क्षीण हो तो धन हानि होती है। तीसरे भाव मे यदि बलवान् होकर स्थित हो तो कभी सुख कभी धन होता है।॥२३॥ चन्द्रमा बल रहित, पापग्रह से युक्त हो तो शरीर मे वात व्याधि, मन मे चिन्ता, नौकर द्वारा धन हानि मातृ वर्ग की मृत्यु होती है।॥२४॥ चन्द्रमा ६।८।१२ वे स्थान मे बलरहित तथा पापग्रह युक्त हो तो राजद्वेश, मन मे दुःख, धनधान्य का नाश॥२५॥ माता को क्लेश, देह मे जडता आदि फल होता है। बलवान् चन्द्रमा यदि तीसरे भाव मे हो तो कभी २ लाभ तथा तथा देह मे जडता होती है। शान्ति करने से सुख होता है॥२६॥

अथ कुजदशावर्णिण ७ तत्फलम्

भौमोत्कृष्टदशा करोति वसुधाप्राप्ति धनस्यागमान्प्रज्ञास्वच्छमन पराक्रमबधत्वारिक्षयान्वा-नुजान् ॥ पापो भौमरुजार्तिदं च कलह चौराग्निबधव्रणमक्षिक्षीणमहीशपीडनरुज क्रोधक्षति दास्यति ॥२७॥ परमोच्चगते भौमे स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ॥ स्वर्क्षे केन्द्रत्रिकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥२८॥ सपूर्णबलसयुक्ते शुभदृष्टे शुभांशके ॥राज्यलाभ भूमिलाभ धनधान्या-दिलाभकृत् ॥२९॥ आधिक्य राजसम्मान वाहनाबरभूषणम् ॥ विदेशे स्थानलाभ च सोदराणा सुख लभेत् ॥३०॥ केन्द्र गते सदा भौमे दुश्चिक्ये बलसयुते ॥ पराक्रमाद्वित्तलाभो युद्धे शत्रुजयो भवेत् ॥३१॥ कलत्रपुत्रविभव राजसम्मानमेव च ॥ दशादौ सुखमाप्नोति दशाते कष्टमादिशेत् ॥३२॥ नीचादिदुःस्थे भौमे बलाबलविवर्जिते ॥ पापयुक्ते पापदृष्टे सा दशा नेष्टदायिका ॥३३॥

भौम दशाफल वर्ग ७

मगल की श्रेष्ठ दशा हो तो भूमि की प्राप्ति, धन का आगमन, सुबुद्धि चिन्तारहित मन, पराक्रम का उदय, भाइयो से लाभ आदि फल होते है। यदि मगल पापी हो तो रोग और कष्ट देनेवाला तथा कलह, चोरी, अग्नि, कैद, घाव, दृष्टि मन्दता, राजा मे पीडा क्रोध आदि होते है।॥२७॥ मगल उच्च का या परमोच्च का अथवा मूल त्रिकोण मे, स्वगृही केन्द्र त्रिकोण, लाभ या धन स्थान मे हो॥२८॥ सम्पूर्ण बलयुक्त हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, शुभ नवाश मे हो तो बहुत भूमि लाभ, राजा से लाभ, धन लाभ, ऐश्वर्य वृद्धि॥२९॥ अधिक राज सम्मान, सवारी, वस्त्र, भूषण, तालाव विदेश मे भूमि, मकान का लाभ, भाइयो का सुख होता है।॥३०॥ मगल बलवान् होकर केन्द्र या तीसरे भाव मे हो तो अपने उद्योग से धन का लाभ, युद्ध मे शत्रु मे जय होती है।॥३१॥ स्त्रीपुत्र म सुख तथा राज मे सम्मान होना है। दशा के आदि म सुख परन्तु अन्त मे कष्ट होता है। मगल यदि नीच का, ६।८।१२ वे हो, बलरहित हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो नेष्ट फल होता है॥३२॥३३॥

अथ राहुदशावर्षाणि १८ तत्फलम्

राहूत्कृष्टदशा करोति सकलश्रेयो महद्राज्यकृद्धर्मार्थागमपुण्यतीर्थचलनज्ञानप्रभावोच्छ्रयान् ॥ राहो पापदशा हि भीतिविषभी सर्वांगरोगार्तिकृच्छस्त्राघातविरोधवृक्षपतन नारातिपीडोदयान् ॥३४॥ राहोस्तु वृषभ केतोर्वृश्चिक तुगसज्ञकम् ॥ मूलत्रिकोणकर्कं च युग्मचाप तथैव च ॥३५॥ कन्या च स्वगृह प्रोक्त मीन च स्वगृह स्मृतम् ॥ तद्दाये बहुसौख्य च धनधान्यादिसपदाम् ॥३६॥

राहु दशाफल वर्ष १८

राहु की श्रेष्ठ दशा महान् कल्याणकारी राज्यवृद्धि धनप्राप्ति धर्म वृद्धि, तीर्थयात्रा ज्ञान और प्रभाव की उन्नति करता है। राहु की पापदशा भय तथा सर्वांग रोग कष्ट शस्त्र से घात, विष से भय स्वजन विरोध वृक्ष स गिरना शत्रु स पीडा आदि नेष्ट फल कारक है।।३४।। (विशेष फल) राहु का वृष राशि उच्च तथा कर्क राशि मूल त्रिकोण है। केतु का वृश्चिक राशि उच्च और मिथुन राशि मूल त्रिकोण है। और राहु का कन्या राशि और केतु का मीन राशि स्वगृहि है। राहु की श्रेष्ठ दशा म बहुत सुख धन–धान्य का लाभ होता है।।३५।।३६।।

मित्रप्रभुवशादिष्ट वाहन पुत्रसभव ॥ नूतनगृहनिर्माण धर्मचितामहोत्सव ॥३७॥ विदेशराजसन्मान वस्त्रालकारभूषणम् ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे योगकारकसयुते ॥३८॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा वृश्चिक्ये शुभराशिगे ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसपत्सुखावहम् ॥३९॥ यवनप्रभुसन्मान गृहे कल्याणसभवम् ॥ रन्ध्रे वा व्ययगे राहौ तद्दाये कष्टदो भवेत् ॥४०॥ पापग्रहेण सबधे मारकग्रहसयुते ॥ नीचराशिगते वापि स्थानभ्रंश मनोरुजम् ॥४१॥ विनश्येद्दारपुत्राणा कुत्सितान्ना च भोजनम् ॥ दशादौ देहपीडा च धनधान्यपरिच्युति ॥४२॥ दशामध्ये तु सौख्य स्यात्स्वदेशे धनलाभकृत् ॥ दशाते कष्टमाप्नोति स्थानभ्रंशो मनोव्यथा ॥४३॥

राहु की श्रेष्ठ दशा म मित्र या स्वामी के द्वारा मनोरथ सिद्धि वाहन का लाभ पुत्रोत्पत्ति नये मकान का बनाना धार्मिक कार्य करना विवाहादि उत्सव होते है।।३७।। विदेश यात्रा राज सम्मान, अलकार भूषणादि की प्राप्ति और यदि शुभ ग्रह युक्त अथवा दृष्ट हो राजयोग कारक ग्रह स युक्त हो।।३८।। केन्द्र त्रिकोण या लाभ म हो, तीसरे स्थान में या शुभग्रह की राशि म हो तो राजा अथवा बडे आदमी के सम्पर्क स बहुत लाभ हो। यवन जाति स लाभ हो घर म कल्याण हो।।३९।। आठवे या बारहवे स्थान मे हो तो कष्टदायी होता है।।४०।। पापग्रह स सम्बन्ध हो या मारक ग्रह स युक्त हो, नीच राशि मे हो तो स्थान हानि सम्पत्ति हानि, मन म घोर चिन्ता स्त्री पुत्र का नाश, हीन भोजन प्राप्त होता है। तथा दशा की आदि मे देह पीडा धन धान्य का नाश होता है।।४१।।४२।। दशा के मध्य में सुख अपने देश मे ही धन लाभ होता है। अन्त में कष्ट स्थान हानि, चिन्ता होती है।।४३।।

अथ गुरुमहादशावर्षाणि १६ तत्फलम्

जीवोत्कृष्टदशा करोति विपुलग्रामाधिकारात्मजश्रीसौभाग्यगुणाकराश्रितजनाद्यांदोलिकावैभवान् ॥ जैव्या पापदशा महीश्वरभयाद्व्याधि च धैर्यच्युतिं धान्यानर्थमहीसुतार्तिजनकक्षोभाशनार्तिक्षयान् ॥४४॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ॥४५॥ राज्यलाभं महत्सौख्य राजसन्मानकीर्तनम् ॥ गजवाजिसमायुक्तं देवब्राह्मणपूजनम् ॥४६॥ दारपुत्रादिसौख्य च वाहनांबरलाभगम् ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिः स्याद्वेदांतश्रवणादिकम् ॥४७॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ आंदोलिकादिलाभश्च कल्याणं च महत्सुखम् ॥४८॥ पुत्रदारादिलाभश्च अन्नदानं महत्प्रियम् ॥ नीचास्तपापसंयुक्ते जीवे रिष्फाष्टसंयुते ॥४९॥ स्थानभ्रंश मनस्तापं पुत्रपीडामहद्भयम् ॥ पश्वादिधनहानिश्च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥५०॥ आदौ कष्टफलं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ मध्यांते सुखमाप्नोति राजसन्मानवैभवम् ॥५१॥

गुरु महादशा फल वर्ष १६

बृहस्पति की श्रेष्ठ दशा मे विपुल धन लाभ, अधिकार प्राप्ति, पुत्रप्राप्ति, सौभाग्य वृद्धि, गुणो का उदय, अनेक नौकर, मोटर आदि सवारी बहुत विभव होता है। और पाप दशा में राजभय, व्याधि, धैर्य, हानि, धन हानि, पृथ्वी और पुत्र की हानि, पिता को कष्ट, चोरी आदि का भय होता है।।४४।। (विशेष फल) बृहस्पति उच्च का या स्वगृहि होकर केन्द्र, लाभ या त्रिकोण मे हो, मूल त्रिकोण मे या उससे लाभ मे हो अथवा परमोच्च हो या अपने नवमांश मे हो तो।।४५।। राज्य से लाभ, महान् सुख, सम्मान और कीर्ति, हाथी, घोडे आदि सवारी, देव–ब्राह्मण की पूजा, स्त्री–पुत्र का सुख, यज्ञ आदिक श्रेष्ठ कर्म, वेदान्त ज्ञान का श्रवण होता है।।४६।।४७।। महाराज की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मोटर आदि सवारी का लाभ। घर में कल्याण और सुख होता है। स्त्री पुत्र का लाभ होता है। अन्न आदिक का दान होता है।।४८।। बृहस्पति नीच का, अस्त या पापग्रह युक्त हो, ८।१२ वे स्थान मे हो तो स्थान हानि, चिन्ता, पुत्र–पीडा, महान् भय, धन–हानि, तीर्थ यात्रा आदि होती है।।४९।।५०।। गुरुदशा में पहले कुछ कष्ट, मध्य और अन्त मे लाभ, सुख, राज सम्मान और वैभव होता है।।५१।।

अथ शनिमहादशावर्षाणि १९ तत्फलम्

मन्दोत्कृष्टदशा करोति विभवप्रज्ञानयज्ञादिकक्षेत्रग्रामपुरादिनायकबहुव्यापारदसोत्सुकान् ॥ मन्दः पापविपप्रयोगधनहृद्देहार्तिव्यर्थोदयान् राजक्रोधविरुद्धकार्यविचलोद्योगागपीडोदयान् ॥५२॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे मित्रक्षेत्रेऽथ वा यदि ॥ मूलत्रिकोणभाग्ये वा तुङ्गांशे स्वांशगेऽपि वा ॥५३॥ दुश्चिक्ये लाभगे चैव राजसन्मानवैभवम् ॥ सत्कीर्तिर्धनलाभश्च विद्यावादविनोदकृत ॥५४॥

शनिदशाफल वर्ष १९

शनि की श्रेष्ठ दशा मे सम्पत्ति, ज्ञान यज्ञादि, ग्राम नगर आदि का नायक होना, व्यापार

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते हैं। शनि की पापदशा मे विष प्रयोग, धन की चोरी, देह मे कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीडा होती है।।५२।। (विशेष फल) शनि यदि उच्च का, स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान मे हो, परमोच्च या अपने नवमाश मे हो, ३।११ वे स्थान मे हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोडा भूषण का लाभ हो।।५३।।५४।।

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ।। राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।५५।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ।। गृहे कल्याणसपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्।।५६।। षष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतेऽपि वा ।। विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्भयम् ।।५७।। पितृमातृवियोग च दारपुत्रादिपीडनम् ।। राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा ।।५८।। शुभयुक्तेक्षिते मदे योगकारकसयुते ।। केद्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।५९।। राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वाबरसकुलम् ।।६०।।

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर मे खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण, सम्पत्ति, स्त्री-पुत्र लाभ आदिक होते है।।५५।।५६।। शनि ६।८।१२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विष और शस्त्र से पीडा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है।।५७।। माता-पिता का वियोग, स्त्री-पुत्र को पीडा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है।।५८।। शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से सयुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण मे हो, मीन अथवा धनराशि मे हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बडा लाभ हो।।६०।।

अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसनानतादिधान्योच्चयाञ्छ्रेय सौख्यसुहृत्स्वबधुविजयप्राप्तीष्टव-स्त्यागमान् ।। बौध्या पापदशाविदेशगमन क्षोभ स्वबधुक्षय प्रज्ञाहीनमतिर्धनार्तिकलह-क्षेत्रार्थनाशपद ।।६१।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुक्ते केद्रलाभत्रिकोणगे ।। मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये दाये महत्सुखम् ।।६२।।

बुधमहादशाफल वर्ष-१७

बुध की श्रेष्ठ दशा मे सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, कल्याण सुख स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है।। तथा नेष्ट दशा मे विदेश यात्रा, दुःख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धनक्षय कष्ट आपत्ति, कलह भूमि तथा धन का नाश होता है।।६१।। बुध उच्चराशि मे या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण मे अथवा लाभस्थान मे हो, मित्रक्षेत्र मे स्थित या युक्त हो तो दशा मे महान् सुख।।६२।।

धनधान्यादिलाभं च सत्कीर्तिधनसंपदाम् ॥ ज्ञानाधिक्यं नृपप्रीतिं सत्कर्मगुणवर्द्धनम् ॥६३॥ पुत्रदारादि सौख्यं च देहारोग्यं महत्सुखम् ॥ क्षीरेण भोजनं सौख्यं व्यापारेण धनागमम् ॥६४॥ शुभदृष्टियुते सौम्ये भाग्ये कर्माधिपे यदा ॥ आधिपत्ये बलवती संपूर्णफलदायिका ॥६५॥ पापग्रहयुते दृष्टे राजद्वेषं मनोरुजम् ॥ बन्धुजन विरोधं च विदेशगमनं तथा ॥६६॥ परप्रेष्यं च कलहं मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये लाभभोगार्थनाशनम् ॥६७॥ वातपीडा धनं चैव पाडुरोगं तथैव च ॥ नृपचौराग्निभीतिं च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥६८॥ दशादौ धनधान्यं च विद्यालाभं महत्सुखम् ॥ पुत्रकल्याणसंपत्ति सन्मार्गे धनलाभकृत् ॥६९॥ मध्ये नरेंद्रसन्मानमंते दुःखं भविष्यति ॥७०॥

धनधान्यलाभ, सत्कीर्ति, धन, सम्पत्ति की प्राप्ति, ज्ञानवृद्धि, राजप्रीति, सत् कर्म तथा गुण की वृद्धि होती है।।६३।। स्त्री पुत्र का सुख, देह की आरोग्यता, क्षीरभोजन, सौख्य तथा व्यापार से लाभ होता है।।६४।। बुध शुभ ग्रह की दृष्टि से युक्त होकर भाग्यस्थान में या दशमेश से युक्त हो। अथवा नवम–दशम का स्वामी हो तो फल पूर्ण होता है।।६५।। यदि बुध पापयुक्त अथवा दृष्ट हो तो राजद्वेष, मन में चिन्ता बन्धुओं से विरोध विदेश यात्रा होती है।।६६।। दूसरे की नौकरी, कलह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है ६।८।१२ भाव में हो तो लाभ, सुख तथा धन का नाश करता है।।६७।। वातरोग, पाण्डुरोग, राजा चोर अग्नि से भय, खेती गौ भूमि का नाश होता है।।६८।। दशा के आदि में–धन विद्या का लाभ, महान् सुख, पुत्र–प्राप्ति तथा घर में कल्याण, सम्पत्ति, सन्मार्ग प्रवृत्ति, धन का लाभ होता है।।६९।। दशामध्य में राजसन्मान प्राप्त होता है और अन्त में दुःख होता है।।७०।।

अथ केतुभुक्तिमहादशावर्षाणि ७ तत्फलम्

केतूत्कृष्टदशा करोति विजयक्रूरक्रियार्थागमं म्लेच्छक्ष्मापतिलब्धभाग्यकबलप्रारम्भशत्रुक्षयान् ॥ केतोः पापदशातिकष्टविफलानर्थक्रियायोगहृच्छूलास्थिज्वरकम्पनद्विजजनद्वेषातिमूर्खक्रियान् ॥७१॥ केंद्रलाभत्रिकोणे वा शुभराशौ शुभेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभवर्गे वा राजप्रीतिं मनोरुजम् ॥७२॥ देशग्रामाधिपत्यं च वाहनं पुत्रसंभवम् ॥ देशांतरप्रयाणं च अन्यदेशे सुखावहम् ॥ ७३॥ पुत्रदारसुखं चैव चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ दुश्चिक्ये षष्ठलाभे वा केतुदाये सुखं भवेत् ॥७४॥ राज्यं करोति मित्राशं गजवाजिसमन्वितम् ॥ दशादौ राजपीडाश्च दशामध्ये महद्भयम् ॥७५॥ अंते दूराटनं चैव देहविश्रमणं तथा ॥ धने रंध्रे व्यये केतौ पापदृष्टियुतेक्षिते ॥७६॥ निगडं बंधुनाशं च स्थानभ्रंशं मनोरुजम् ॥ शूद्रसंगादिलाभं च नानारोगाकुलं भवेत् ॥७७॥

केतुदशा फल वर्ष७

केतु की श्रेष्ठदशा में विजय, क्रूर कर्म से धनप्राप्ति यवन या म्लेच्छराज से भाग्यवृद्धि और शत्रुनाश होता है। केतु की पापदशा में अतिकष्ट विफल मनोरथ धनप्राप्ति के योग की हानि, शूलरोग, अस्थिज्वर कम्पनरोग, ब्राह्मणद्वेष, तथा अति मूर्खता होती है।।७१।। केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ में शुभराशि में शुभग्रह दृष्ट हो और स्वउच्च में या शुभवर्ग में हो तो राज में

वृद्धि आदि तथा उत्सव होते है। शनि की पापदशा मे विष प्रयोग, धन की चोरी, देह मे कष्ट, रोग, राजकोप, कार्य की विरुद्धता, उद्योग की हानि और शरीर पीडा होती है।।५२।। (विशेष फल) शनि यदि उच्च का,स्वगृही, मित्र क्षेत्री, मूल त्रिकोणी अथवा भाग्य स्थान मे हो, परमोच्च या अपने नवमाश मे हो, ३।११ वे स्थान मे हो तो राज से सम्मान और विभूति की प्राप्ति हो। अच्छी कीर्ति या धन का लाभ हो। महाराज की कृपा से हाथी, घोडा भूषण का लाभ हो।।५३।।५४।।

महाराजप्रसादेन गजवाहनभूषणम् ॥ राजयोग प्रकुर्वीत सेनाधीशान्महत्सुखम् ।।५५।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि राज्यलाभ करोति च ॥ गृहे कल्याणसपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत्।।५६।। षष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वास्तगतेऽपि वा ॥ विषशस्त्रादिपीडा च स्थानभ्रश महद्भयम् ।।५७।। पितृमातृवियोग च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ राजवैषम्यकार्याणि ह्यनिष्ट बधन तथा ।।५८।। शुभयुक्तेक्षिते मदे योगकारकसयुते ॥ केद्रत्रिकोणलाभे वा मीनगे कार्मुके शनौ ।।५९।। राज्यलाभ महोत्साह गजाश्वाबरसकुलम् ।।६०।।

यदि शनि राजयोग करता हो तो सेनापति से सुख हो। घर मे खूब लक्ष्मी हो तथा कल्याण सम्पत्ति, स्त्री–पुत्र लाभ आदिक होते है।।५५।।५६।। शनि ६।८।१२ वे हो, नीच अथवा अस्त हो तो विष और शस्त्र से पीडा होती है। स्थान हानि और महान् भय होता है।।५७।। माता–पिता का वियोग, स्त्री–पुत्र को पीडा होती है। राजकोप से अनिष्ट और बन्धन होता है।।५८।। शनि शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होकर तथा राजयोग कारक ग्रह से सयुक्त होकर केन्द्र या त्रिकोण मे हो मीन अथवा धनराशि मे हो तो महान् उत्साहयुक्त हो और राज्य से बहुत बडा लाभ हो।।६०।।

अथ बुधमहादशावर्षाणि १७ तत्फलम्

सौम्योत्कृष्टदशा करोति वसनानतादिधान्योच्चयान्श्रेय सौख्यगृहस्वबधुविजयप्राप्तीष्टव-स्त्वागमान् ॥ बोध्या पापदशाविदेशगमन क्षोभ स्वबधुक्षय प्रज्ञाहीनमतिर्धनार्तिकलह-क्षेत्रार्थनाशप्रद ।।६१।। स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुक्ते केद्रलाभत्रिकोणगे ॥ मित्रक्षेत्रसमायुक्ते सौम्ये दाये महत्सुखम् ।।६२।।

बुधमहादशाफल वर्ष–१७

बुध की श्रेष्ठ दशा मे सुन्दर वस्त्र, अनन्त धान्यराशि प्राप्ति, कल्याण सुख, स्वजन परिवार सुख, विजय प्राप्ति, इष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि फल होता है।। तथा नेष्ट दशा मे विदेश यात्रा, दु.ख, बन्धुक्षय, बुद्धिहीनता धननाश, कष्ट आपत्ति, कलह भूमि तथा धन का नाश होता है।।६१।। बुध उच्चराशि मे या स्वगृही होकर केन्द्र या त्रिकोण मे अथवा लाभस्थान मे हो, मित्रक्षेत्र मे स्थित या युक्त हो तो दशा मे महान् सुख।।६२।।

तो आत्मीय स्वजनों से द्वेष स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि गौ–भैंस आदि का नाश॥८४॥ स्त्री–पुत्र को पीडा, आत्मीय–बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लग्न तथा तृतीय भाव मे हो॥८५॥ तो शुक्र की दशा मे महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य मे रुचि॥८६॥ अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री–पुत्र धन सम्पत्ति हो॥८७॥ अपने अन्तर मे तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते हैं। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है॥८८॥ उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥८९॥

अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वित्तेशितु पचता कष्ट वेति सहोदरालयपते पाप फल प्रायश ॥ सुर्यस्वामिन आलय किल सुताधीशस्य विद्यासुख रोगागारपतेररातिजभय जायापते शोकताम् ॥९०॥ मृत्यु मृत्युपते करोति नियत धर्मेशितु सत्क्रिया चित्त राजपतेर्नृपाश्रयमथो लाभ हि लाभेशितु ॥ रोग द्रव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरगमृतामुदीरितमिद सत्वार्विभावेशजम्॥९१॥ भावाधिपो बलयुतो निजगेहगामी तुङ्गत्रिकोणशुभवर्गगतोपि पूर्णम् ॥ जतो फल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफल विबलो विशेषात् ॥९२॥ आहु शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ॥ एतद्धृत विनिर्णीतमायुषा निश्चयो नृणाम् ॥९३॥ पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ॥ अतीव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरै ॥९४॥ समत्रभायस्य तपोधिपस्य दशा शुभा राज्यसुतप्रदा स्यात् ॥ सत्कीर्तिनाथस्य सुखेश्वरस्य दशा तथा प्राहुरुदार चित्ता ॥९५॥ पचमेशेन युक्तस्य यहस्य शुभदा दशा ॥ नाथे धर्मपयुक्तस्य दशा परमशोभना ॥९६॥

द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा शारीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्राय नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा म भूमि और मकान का विचार। पचमेश की दशा मे विद्या सम्बन्धी और सतान सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा म शत्रु का भय तथा सप्तमेश की दशा म रोग और कष्ट का विचार होता है॥ अष्टमेशकी दशामे मृत्यु का विचार। नवमेशमे सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश स लाभ तथा व्ययेश की दशा मे रोग धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यो के लिय इस प्रकार कुण्डली मे १२ भावो के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है॥९१॥ किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण मे अथवा शुभ वर्ग मे हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि मे, नीच राशि मे तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है॥९२॥ और प्राचीन आचार्यो ने कहा है कि शुभग्रह प्राय शुभ फल देते है। और आयु का भी निर्णय किया है॥९३॥ पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, ऐसा प्राचीन आचार्यों ने कहा है॥९४॥ पचमेश

प्रीति, मन मे चिंता॥७२॥ देश या ग्राम का आधिपत्य, सवारी, पुत्रोत्पत्ति, देशान्तर यात्रा, तथा अन्य देश मे सुख ॥७३॥ स्त्री पुत्र का सुख, गौ आदि का लाभ होता है। ३।६।११ भाव मे हो तो केतुदशा मे सुख होता है॥७४॥ राज्य समान वैभव, मित्र प्राप्ति, सवारी आदि प्राप्त होती है। दशा के आदि मे राजयोग और मध्य मे महान् भय, अन्त मे दूर की यात्रा तथा देहकष्ट या मृत्यु होती है॥७५॥ केतु यदि २।८।१२ मे हो और पापयुक्त तथा दृष्ट हो तो कैद, बन्धुनाश, स्थानहानि, चिन्ता, रोग और नीच जाति से लाभ होता है॥७६॥७७॥

अथ शुक्रमहादशावर्षाणि २० तत्फलम्

शौक्री श्रेष्ठदशा करोति सुखसौभाग्योच्छ्रयान्दोलिकाऽष्टैश्वर्ययुतधर्मबुद्धिकनकारामाश्वगीतोत्सवान्॥शौक्री पापदशा कलत्रभयकृन्नीचार्यहानिप्रदा तिर्यग्जन्तुसमुत्थदोषविपुलस्त्रीवर्गरोगोद्भवान् ॥७८॥ परमोच्चगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ नृपाभिषेकसम्प्राप्तिर्वाहनाम्बरभूषणम् ॥७९॥ गजाश्वपशुलाभ च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ अखण्डमण्डलाधीशराजसन्मानवैभवम् ॥८०॥ मृदङ्गवाद्यघोष च गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ त्रिकोणस्थे मीनशुक्रे राज्यार्थगृहसपद ॥८१॥ विवाहोत्सवकार्याणि पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ सेनाधिपत्य कुरुते इष्टबन्धुसमागमम् ॥८२॥ नष्टराज्याद्धनप्राप्तिर्गृहे गोधनसग्रहम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे वा व्ययराशिगे ॥८३॥

शुक्रमहादशा फल वर्ष २०

शुक्र की श्रेष्ठ दशा मे सुख सौभाग्य की उन्नति मोटर आदि सवारी तथा अष्टविध ऐश्वर्य धर्मबुद्धि सुन्दर बागीचा घोडा आदियुक्त सवारी गीतोत्सव आदि श्रेष्ठ फल होता है। शुक्र की पापदशा मे स्त्री–पुत्र से भय नीचसग से धनहानि पशु आदि से भय तथा स्त्रीवर्ग को रोग आदि नेष्ट फल होता है॥७८॥ शुक्र उच्च या परमोच्च मे या स्वक्षेत्र मे होकर केन्द्र मे हो तो राजकुलोत्पन्न को राज्यप्राप्ति होती है। वाहन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते है॥७९॥ हाथी-घोडे आदि पशुओ का लाभ होता है। नित्य सुन्दर भोजन और अखण्ड मण्डल (जिला) का अधीशत्व तथा राजा से सन्मान और वैभव प्राप्त होता है॥८०॥ मृदग आदि बाजो का शब्द (गाना बजाना) होता रहता है। घर मे लक्ष्मी की कृपा रहती है। यदि शुक्र मीनराशि का त्रिकोण मे हो तो राजा के समान धनसम्पत्ति होती है॥८१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य, पुत्रोत्पत्ति तथा सेनापतित्व, इष्ट–मित्र सम्मिलन॥८२॥ नष्ट हुआ राज्य भी प्राप्त होता है। घर म गोधन होता है। यदि शुक्र ६।८।१२ स्थान मे हो अथवा नीच या व्ययेशराशि म हो॥८३॥

आत्मबन्धुजनद्वेष दारवर्गादिपीडनम् ॥ व्यवसायात्फल नष्ट गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥८४॥ दारपुत्रादिपीडा वा आत्मबन्धुवियोगकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपत्येन लग्नवाहनराशिगे ॥८५॥ तद्दशाया महत्सौख्य देशग्रामाधिपत्यताम् ॥ देवालयतडागादिपुण्यकर्मसु सग्रहम् ॥८६॥ अन्नदाने महत्सौख्य नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ उत्साह कीर्तिसपत्तौ स्त्रीपुत्रधनसपद ॥८७॥ स्वभुक्तौ फलमेव स्याद्फलान्यन्यानि भुक्तिषु ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥८८॥ तद्दोषपरिहारार्थं रुद्र वा त्र्यम्बक जपेत् ॥ श्वेता गा महिषीं दद्यादारोग्य च भविष्यति ॥८९॥

तो आत्मीय स्वजनो से द्वेष, स्त्री आदि को पीडा हो, व्यापार से होनेवाले फल की हानि गौ–भैंस आदि का नाश।।८४।। स्त्री–पुत्र को पीडा, आत्मीय–बन्धु से वियोग होता है। ९।१० का स्वामी होकर लग्न तथा तृतीय भाव मे हो।।८५।। तो शुक्र की दशा मे महान् सुख एव देश या नगर का आधिपत्य, देवालय (देवमन्दिर) तालाब आदि धर्म कार्य मे रुचि।।८६।। अन्नदान हो तथा महान् सुख हो, नित्य मिष्टान्न भोजन हो। उत्साह की वृद्धि, कीर्ति, सम्पत्ति, स्त्री–पुत्र धन सम्पत्ति हो।।८७।। अपने अन्तर मे तो उपर्युक्त फल होता है। अन्यान्य अन्तर अपना २ विशेष फल देते है। द्वितीय तथा सप्तम भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है।।८८।। उस दोष के नाश के लिए रुद्रपाठ या त्र्यम्बक मन्त्र का जप करे। तथा श्वेत वर्ण की गौ दूधवाली का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है।।८९।।

अथ द्वादशभावाधीशदशाफलमाह

लग्नेशस्य दशा बल बहुधन वित्तेशितु पचता कष्ट वेति सहोदरालयपते पाप फल प्रायश ।। तुर्यस्वामिन आलय किल सुताधीशस्य विद्यासुख रोगागारपतेररातिजभय जायापते शोकताम् ।।९०।। मृत्यु मृत्युपते करोति नियत धर्मेशितु सत्क्रिया वित्त राजपतेर्नृपाश्रयमयो लाभ हि लाभेशितु ।। रोग द्रव्यविनाशन च बहुधा कष्ट व्ययेशस्य वै पूर्वैरगमृतामुदीरितमिव लग्नादिभावेशजम्।।९१।। भावाधिपो बलयुतो निजगेहगामी तुङ्गत्रिकोणशुभवर्गगतोऽपि पूर्णम् ।। जतो फल खलु करोति यदारिनीचस्थानस्थितोऽशुभफल विबलो विशेषात् ।।९२।। आहु शुभा-शुभफल नृणा कालविदो जना ।। एतद्धृत विनिर्णीतमायुषा निश्चयो नृणाम् ।।९३।। पचमेशदशाया तु धर्मपस्य दशा तु या ।। अतीव शुभदा प्रोक्ताकालविद्भिर्मुनीश्वरै. ।।९४।। समन्ननाथस्य तपोऽधिपस्य दशा शुभा राज्यसुतप्रदा स्यात् ।। सत्कीर्तिनाथस्य सुखेश्वरस्य दशा तथा भाग्यदार चिन्ता ।।९५।। पचमेशेन युक्तस्य ग्रहस्य शुभदा दशा ।। नाथे धर्मपयुक्तस्य दशा परमशोभना ।।९६।।

द्वादशभावाधीश दशाफल

लग्नेश की दशा शारीरिक बल देती है। धनेश की दशा शुभ हो तो धनदाता, अशुभ हो तो कष्ट और मृत्यु। तृतीयेश की दशा प्राय नेष्ट फल दायक होती है। सुखेश की दशा मे भूमि और मकान का विचार। पचमेश की दशा मे विद्या सम्बन्धी और सतान सम्बन्धी विचार किया जाता है। षष्ठेश की दशा मे शत्रु का भय तथा सप्तमेश की दशा म रोग और कष्ट का विचार होता है।। अष्टमेशकी दशामे मृत्यु का विचार। नवमेशमे सत्कार्य का विचार। दशमेश से राज्य से लाभ का विचार। लाभेश से लाभ तथा व्ययेश की दशा मे रोग, धन हानि और कष्ट का विचार होता है। मनुष्यो के लिये इस प्रकार कुण्डली से १२ भावो के विचार करने योग्य पदार्थों का निर्णय किया है।।९१।। किसी भी भाव का स्वामी बलवान् हो, स्वगृही हो उच्च तथा त्रिकोण मे अथवा शुभ वर्ग मे हो तो सम्पूर्ण शुभ फल करता है। और यदि शत्रु राशि मे, नीच राशि मे तथा निर्बल हो तो अशुभ फलकारक है।।९२।। और प्राचीन आचार्यो ने कहा है कि शुभग्रह प्राय शुभ फल देते है। और आयु का भी निर्णय किया है।।९३।। पचमेश और नवमेश की दशा बहुत श्रेष्ठ होती है, ऐसा प्राचीन आचार्यो ने कहा है।।९४।। पचमेश

और दशमेश की दशा सन्तान और ऐश्वर्य देनेवाली होती है। सुखेश तथा नवमेश की दशा सुख तथा कीर्तिदायक होती है॥९५॥ कोई भी दशा पचमेश से युक्त हो तो शुभदायक होती है। नवमेश से युक्त हो तो अति सुखदायक होती है॥९६॥

पापदृष्टस्य खेटस्य दशा राजप्रदायिनी ॥ शुभयुक्तस्य खेटस्य दशा द्रव्यप्रदायिनी ॥ सपचमेशलग्ने वा दशा राज्यप्रदायिनी॥९७॥सपचमेशस्य तपोधिपस्य दशा भवेद्राज्यसुखार्थलाभदा ॥ तथैव मानाधिपसयुतस्य सुतेश्वरस्यापि दशा शुभा स्यात् ॥९८॥ पचमेशेन युक्तस्य मानेशस्य दशा शुभा ॥ सुखेशसहितस्यापि धर्मेशस्य दशा शुभा ॥ पञ्चमस्थानगस्यापि मानेशस्य दशा शुभा ॥९९॥ शुभाशुभस्थानगता न यस्य तथैव मानार्थसुखान्विता स्यात् ॥ सदा नृणा सौख्यकरी भवेद्धि सुखेशयुक्तस्य च मानवस्य ॥१००॥

पचमेश से दृष्ट या युक्त हो तो ऐश्वर्य देनेवाली तथा द्रव्यदाता होती है। पचमेश लग्न में हो तो राज्य देनेवाली होती है॥९७॥ पचमेश और दशमेश की दशा राज्य, सुख और धन लाभ देती है। पचमेश, दशमेश से युक्त हो तो बहुत श्रेष्ठ होती है॥९८॥ पचमेश से युक्त दशमेश की दशा शुभ होती है। सुखेश से युक्त नवमेश की दशा शुभ होती है। दशमेश पचमभाव में हो तो भी उसकी दशा शुभ होती है॥९९॥ ऊपर कही हुई दशाये अशुभ स्थान में न हों तो मान, धन, सुख देनेवाली होती हैं। तब ये दशाये सुख भाव के स्वामी से युक्त हो तो विशेष सुखकारी होती है॥१००॥

षष्ठस्य सप्तमस्यैको नायको मानराशिग ॥ दशा तस्य शुभा ज्ञेया तथा तेन युतस्य च ॥१॥ एको द्विसप्तमस्थाननायको यदि सौख्यग ॥ तेन युक्ता दशा ज्ञेया शुभा प्राहुर्मनीषिण ॥२॥ षष्ठाष्टमव्ययाधीशा पञ्चमाधिपसयुता ॥ तेषा दशा च शुभदा प्रोच्यते कालविसमै ॥३॥ सुखेशो मानभावस्थो मानेशसुखराशिग ॥ तयोर्दशा शुभा प्राहुर्ज्योति शास्त्रविदो जना ॥४॥ सुतेशमानेशसुखेशधर्मपा एकत्र युक्ता यदि यत्र कुत्र ॥ तेषा दशा राज्यफलप्रदा तैर्युक्तग्रहाणामपि वै वदेद्वा ॥५॥ वाहनस्थानसयुक्तमत्रनाथदशा शुभा ॥ सुखराशिस्थकर्मेशदशा राज्यप्रदायिनी ॥६॥

छठे, सातवे स्थान का यदि एक ही स्वामी होकर दशम भाव में हो तो उसकी दशा शुभ होती है। यदि सुखेश से युक्त हो तो अधिक शुभ होती है॥१०१॥ (यह योग केवल सिह लग्न में ६–७ का स्वामी शनि होने से प्राप्त होता है।) एक ही ग्रह दूसरे सातवे घर का मालिक होकर चतुर्थ भाव में हो और चतुर्थेश से युक्त हो तो उनकी दशा शुभ होती है॥१०२॥ (यह योग मेष लग्न में शुक्र तथा तुला लग्न में मगल से होता है।) ६।८।१२ के स्वामी पचमेश से युक्त हो तो उनकी दशा शुभ होती है॥१०३॥ सुखेश दशम में दशमेश सुखभाव में हो तो दोनों दशाये शुभ होती हैं, ऐसा ज्योतिषशास्त्र के जाननेवाले कहते हैं॥१०४॥ ४।५।९।१० वा के स्वामी यदि किसी भी भाव में मिलकर स्थित हो तो उनकी दशा राज्य देनेवाली होती है। और इनमें सम्बन्धित दशा भी शुभ होती है॥१०५॥ तृतीयेश पचमेश के साथ युक्त हो तो शुभ तथा दशमेश चतुर्थ भाव में हो तो ऐश्वर्य दात्री होती है॥१०६॥

ताभ्यां युक्तस्य खेटस्य दृष्टियुक्तस्य चैतयोः ॥ राज्यप्रदां दशां प्राहुर्विद्वांसो दैवचिंतकाः ॥७॥ कर्मस्थानस्य बुद्धीशदशा संपत्करी भवेत् ॥ मानस्थितपोधीशदशा राज्यप्रदायिनी ॥८॥ यस्मिन्भावे शुभस्वामिसंबंधस्तुङ्गखेचरः ॥ स्यात्तद्भावदशायां तु अत्यैश्वर्यमखंडितम् ॥९॥ यद्भावेशः स्वार्थराशिमधितिष्ठति पश्यति ॥ स्यात्तद्भावदशाकाले धनलाभो महत्तरः ॥११०॥ यस्माद्व्ययगतो यस्तु तद्दशायां धनक्षयम् ॥ यस्मात्त्रिकोणगाः पापास्तत्रात्मशम-नाशनम् ॥११॥ पुत्रहानिः पितुः पीडा मनस्तापो महान् भवेत् ॥ यस्मात्त्रिकोणगा रिःफरंध्रेशार्केन्दुसूर्यजाः ॥१२॥

पचमेश दशमेश से युक्त तथा दृष्ट ग्रह की दशा ज्योतिषियो ने शुभ कही है॥१०७॥ इसी प्रकार पचमेश दशमभाव मे हो तो उसकी दशा सम्पत्ति देनेवाली और नवमेश दशम भाव मे हो तो राज्य दायिनी होती है॥१०८॥ जिस भाव मे शुभग्रह युक्त उच्च राशि का ग्रह हो उस भाव की राशि की दशा अखण्डित महान् ऐश्वर्य देनेवाली होती है॥१०९॥ जिस भाव का स्वामी अपने राशि मे स्थित है उस भाव की दशा के समय महान् धन लाभ होता है॥११०॥ जिस भाव से उस भाव का स्वामी १२ वे भाव मे हो उस भाव की दशा मे धन हानि होती है। और जिस भाव से पापग्रह त्रिकोण भाव मे हो तो चित्त चिन्तित और दुखित रहता है॥१११॥ जिस भाव मे सूर्य, चन्द्रमा, शनि तथा व्ययेश और अष्टमेश त्रिकोण भाव मे हो तो उस भाव राशिकी दशामे पुत्र हानि, पिताको पीडा तथा महान् दुख होता है॥११२॥

पुत्रपीडा द्रव्यहानिस्तत्र केत्वहिसंगमे ॥ विदेशभ्रमणं क्लेशो भयं चैव पदे पदे ॥१३॥ यस्मात्षष्ठाष्टमे क्रूरनीचखेटादयः स्थिताः ॥ रोगशत्रुनृपाद्रा स्यान्मुहुः पीडा मुहुर्महा ॥१४॥ यस्माच्चतुर्थः क्रूरः स्याद्भूगृहक्षेत्रनाशनम् ॥ पशुहानिस्तत्र भौमे गृहदाहप्रमातृधृक् ॥१५॥ शनौ हृदयशूलं स्यात्सूर्ये राजप्रकोपनम् ॥ सर्वस्वहरणं राहौ विषचौरादिजं भयम् ॥१६॥ यस्माद्दशमभे राहुः पुण्यतीर्थाटनं भवेत् ॥ तस्मात्कर्मायभाग्यर्क्षगताः शोभनखेचराः॥१७॥

जिस भाव मे राहु या केतु हो, उस भाव की दशा मे पुत्र पीडा, धनहानि, विदेशभ्रमण, भय तथा क्लेश होता है॥११३॥ जिस भाव से ६।८ वे पापग्रह तथा नीचस्थग्रह हो तो रोग, शत्रु, राजा से अत्यन्त पीडा होती है और बार बार होती है॥११४॥ जिस भाव से पापग्रह चौथे स्थान मे हो तो उसकी दशा मे भूमि, मकान, खेत का नाश और पशु हानि होती है। यदि मगल चौथे हो तो गृह स्वामीयुक्त मकान अग्नि से नष्ट होता है॥११५॥ शनि चौथे हो तो हृदयशूल, सूर्य से राजभय, राहु से सर्वस्व हानि तथा विष, चोर आदि का भय होता है॥११६॥ जिस भाव मे दशम भाव मे राहु हो और राहु से ९।१०।११ मे शुभ ग्रह हो तो शुभ मगलकारी, तीर्थयात्रा होती है॥११७॥

विद्यार्थधर्मसत्कर्मस्थातिपौरुषसिद्धयः ॥ यतः पचमकामारिगताः स्वोच्चशुभग्रहाः ॥१८॥

पुत्रदारादिसम्प्राप्तिर्नृपपूजा महत्तरा ॥ यस्मिन् ज्ञानाय कर्माबुनवलग्नाधिपा स्थिता ॥१९॥ तत्तद्भावार्थसिद्धि स्याच्छ्रेयो योगानुसारत ॥ यस्मिन् गुरुर्वा शुक्रो वा शुभेशो वापि सस्थित ॥ २०॥ कल्याणोत्सवसपत्तिर्देवब्राह्मणतर्पणम् ॥ यच्चतुर्थे तुगखेटा शुभस्वामी ग्रहश्च वा ॥२१॥

जिस भाव से पाचवे छठवे, सातवे उच्च राशि स्थित शुभ ग्रह हो तो विद्या धन धर्म सत्कर्म ख्याति और पौरुष की सिद्धि होती है॥११८॥ जिस भाव म ४।५।९।१०।११ भावो के स्वामी हो उस दशा म पुत्र स्त्री आदि प्राप्ति तथा राजकुल मे महान आदर होता है॥११९॥ जिस भाव मे बृहस्पति अथवा शुक्र या शुभभाव का स्वामी हो उस भाव की सिद्धि तथा योगानुसार कल्याण होता है॥१२०॥ जिस भाव के चौथे स्थान के उच्चराशिगत ग्रह हो या शुभ ग्रह हो तो उसकी दशा मे कल्याण उत्सव सम्पत्ति तथा देव–ब्राह्मण की पूजा होती है॥१२१॥

वाहनग्रामलाभश्च पशुवृद्धिश्च भूयसी ॥ तत्र चद्रेशलाभ स्याद्बहुधान्यरसान्युत ॥२२॥ पूर्णे विधौ निधिप्राप्तिर्लभेद्वा मणिसचयम् ॥ तत्र शुक्रे मृदगरविवाद्यगानपुरस्कृत ॥२३॥ आदोलिकाप्तिर्जीवे तु कनकादोलिका ध्रुवम् ॥ लग्नकर्मेशभाग्येशतुगस्थशुभयोगत ॥२४॥ सर्वोत्कर्षमहैश्वर्यसाम्राज्यादिमहत्फलम् ॥ एव तत्तद्भाववशायफल यत्स्याद्विचितयेत् ॥२५॥ एकैकोडुदशा स्वीया गुणैरष्टादशात्मना ॥ भिन्ना फलविपाकस्तु कुर्याद्वै चित्रसयुतम ॥२६॥ परमोच्चे तुगमात्रे तदर्वाक्तदुपर्यपि ॥ मूल त्रिकोणभे स्वर्क्षे स्वाधिमित्रग्रहस्य भे ॥२७॥

तथा वाहन और भूमि का लाभ होता है पशुओ की वृद्धि होती है। चन्द्र या चन्द्रेश युक्त हो तो बहु धान्य रस (घी चीनी) प्राप्त होती है॥१२२॥ जिस भाव स चतुर्थ स्थान म पूर्ण चन्द्रमा हो और उच्चराशि का हो तो भूमिगत द्रव्य अथवा मणि आदि की प्राप्ति होती है। और यदि शुक्र हो तो नाच गान का आनन्द रहता है॥१२३॥ बृहस्पति हो तो मोटर आदि की सवारी। लग्नेश कर्मेश भाग्येश और उच्चस्थ शुभग्रह का योग हो तो सुवर्ण रत्न–युक्त सिहासन प्राप्त होता है॥१२४॥ और उच्चस्थ बृहस्पति का योग हो तो सर्वोत्कर्ष युक्त महान् ऐश्वर्यशाली साम्राज्य प्राप्त होता है। इस प्रकार भाव की दशा का फल अच्छी तरह विचार कर कहना चाहिए॥१२५॥ एक २ ही राशि की दशा अपने शुभग्रह और पापग्रहों के १८ प्रकार के योगो से भिन्न २ विचित्र फलदायक होती है॥१२६॥ (अब अठारह प्रकार के योग दिखाते है) प्रथम शुभयोग–परमोच्च ग्रह का सम्बन्ध केवल उच्च का सम्बन्ध अथवा उस भाव स सम्बधित प्रथम अथवा द्वितीय भाव म उच्च ग्रह का सम्बन्ध या मूल त्रिकोण स्वगृही अधिमित्रगृही या मित्र गृही अथवा दृष्टियुक्त समगृही हो॥१२७॥

तत्कालसुहृदो गेहे उदासीनस्य भे तथा ॥ शत्रोर्भेऽधि रिपोर्भे च नीचातादूर्ध्वदेशभे ॥२८॥ तस्मादर्वाङ् नीचमात्रे नीचाते परमाशके ॥ नीचारिवर्गे शकले स्ववर्गे केद्रकोणभे ॥२९॥ अथास्थितस्य खेटस्य समरे पीडितस्य च ॥ गाढमूढस्य च दशापचिति स्वगुणै फलम् ॥ ३०॥ परमोच्चगतो यस्तु योऽतिवीर्यपरत्रवान् ॥ सपूर्णाख्या तद्दशा तु राज्यभोग्यशुभप्रदा ॥३१॥

लक्ष्मीकटाक्षचिह्नाना चिदावासगृहप्रदा ॥ तुगमात्रगतस्यापि तथा वीर्याधिकस्य च ॥३२॥ पूर्णाख्या बहुधैश्वर्यदायिन्यपि रुजप्रदा ॥ अतिनीचगतस्यापि दुर्बलस्य ग्रहस्य तु ॥३३॥ रिक्तासानिष्टफलदा व्याध्यनर्थमृतिप्रदा ॥ अत्युच्चादतिनीचाश्च मध्यगस्य च रोहिणी ॥३४॥

अब अशुभ सम्बन्ध दिखाते हैं–शत्रु की राशि मे, अधिशत्रु की राशि मे, नीच और परम नीच मे अथवा पिछली अगली राशि मे पापग्रह का योग, नीच अश मे, नीच वर्ग मे और बलहीन होना ये पाप योग-के ९ भेद हुए ॥ शुभयोग मे विशेष कहते हैं। अपने वर्ग में, केन्द्र या त्रिकोण में शुभ होता है। ऐसे ही पापग्रहो से पीडित और पराजित ग्रह सुषुप्ति अवस्था मे अथवा मूढ अवस्था मे होने से अशुभ होता है और उसकी दशा नेष्ट होती है ॥ जो ग्रह परमोच्च राशिगत तथा पूर्ण बलवान् हो उसकी दशा सम्पूर्ण राज्यभोग और शुभफल दायक होती है॥१३१॥ उस दशा मे घर मे लक्ष्मी का भण्डार भरा रहता है। श्रेष्ठ भवन आदि का सुख होता है। उच्च राशि गत होने पर भी यदि पूर्ण बलवान् हो॥१३२॥ तो उस दशा मे अनेक प्रकार के ऐश्वर्य रहते हुए भी कुछ रोगो की चिन्ता रहती है। अति नीचगत दुर्बल ग्रह की दशा मे॥१३३॥ जो अपने उच्च से नीच राशि की तरफ आता हुआ ग्रह मध्य मे हो, उस ग्रह की दशा अवरोहिणी कहलाती है। (अवरोहण= नीचे उतरना) फल–व्याधि, अर्थहानि, क्लेश आदि तथा मृत्युदायक है॥१३४॥

मित्रोच्चभावप्राप्तस्य मध्याख्या ह्यर्थदा दशा ॥ नीचातादुच्चमागान्त भपट्के मध्यगस्य च ॥३५॥ दशा चाऽऽरोहिणी नीचरिपुभावागतस्य च ॥ अधमाख्या भयक्लेशव्याधिदु खविवर्द्धिनी ॥३६॥ नामानुरूपफलदा पाककाले दशा इमा ॥ भाग्येशगुरुसबधा योगवृक्केंद्रभाविमि ॥३७॥ परेषामपि दायेषु भाग्योपक्रममुन्नयेत् ॥ जातको यस्तु फलदो भाग्ययोगप्रदोऽपि य ॥३८॥ सफलो वक्रिमाद्धूर्ध्वमन्यानपि च खेचरान् ॥ दुर्बलानसमर्थांश्च फलदानेषु योगत ॥३९॥ तारतम्यात्सुसबधा दशा होता फलप्रदा ॥ स्वकेंद्रादिबुधा तेषा पूर्णार्द्धाल्पव्यवस्थया ॥१४०॥

अपनी नीच राशि म उच्च राशि की तरफ जाता हुआ मध्य म जो ग्रह है अथवा जो मित्र की उच्च राशि मे हो। तो वह मध्या नाम की दशा है और धनदातृ है। और इस दशा का नाम आरोहिणी है॥१३५॥ (आरोहण=ऊपर चढना) जो ग्रह नीच राशि मे या शत्रु के नवाश मे हो उसकी दशा अधमा नाम की है। यह दशा भय, क्लेश, व्याधि और दुःख बढानेवाली होती है॥१३६॥ अपने दशाकाल मे नाम के अनुसार फल देनेवाली ये दशाएँ है॥१३७॥ यदि ग्रह भाग्येश अथवा बृहस्पति स युक्त अथवा दृष्टि सम्बन्ध रखता हो तो इस ग्रहो की दशा मे भी अपने अन्तर मे भाग्य वृद्धि कारक होता है॥१३८॥ जो ग्रह भाग्य योग देनेवाला है, वह मार्गी हो अथवा होन पर और जो बलहीन ग्रह है उनम दृष्टि आदि सम्बन्ध करता हो तो उनको भी श्रेष्ठ फलदान मे समर्थ कर देता है॥१३९॥ बलाबल के अनुसार ययासम्बन्ध मे उन ग्रहो की दशा शुभफल दन म समर्थ होती है॥१४०॥

प्रसह्याकार इत्येतत्सतत सपदा बलात् ॥ शीर्षोदयस्थगा स्वस्वदशादौ स्वफलप्रदा ॥४१॥ उदयोदयराशिस्थदशा मध्यफलप्रदा ॥ पृष्ठोदयर्क्षगा खेटा स्वदशाते फलप्रदा ॥४२॥ जन्मकाले दशानायस्वेष्टगाना विचारणे ॥ निसर्गतश्च तत्काले सुहृदा हरणे शुभम् ॥४३॥ सपादयेत्तदा कष्ट तद्विपर्ययगामिनाम् ॥ दशेशाकालभावाना दारस्य द्वादशार्क्षमम् ॥४४॥ भुक्त्वा द्वादशराशीना दशाभुक्ति प्रकल्पयेत् ॥ एकैकराशेर्या तत्र सुहृत्स्वक्षेत्रगामिनी ॥४५॥ तस्या राज्यादिसपत्तिपूर्वक शुभमीरयेत् ॥ दु स्थानरिपुनीचस्थनीचक्रूरयुता च या ॥४६॥ तस्यामनर्थकलह रोगमृत्युभयादिकम् ॥ विदुभूयस्त्वशून्यत्वयशत्वीयाष्टवर्गके ॥४७॥ वृद्धि हानि च तद्राशि भावस्य स्वग्रहात्क्रमात् ॥ भावयोजनया विद्यासुताद्यादि शुभाशुभम्॥४८॥

यदि ग्रह स्वगृही अथवा केन्द्र आदि शुभस्थान मे हो तो अपने विश्वाबल के अनुसार पूरा, आधा या चौथाई जितना फल देने मे समर्थ हो तथा शीर्षोदयी राशि मे हो तो निरन्तर ही सम्पत्तियो को जबर्दस्ती खीचकर लानेवाला तथा अपनी दशा के आदि मे पूरा फल देनेवाला होता है।॥४१॥ सूर्योदयी राशि मे जो दशा हो वह मध्यम काल मे फल तथा पृष्ठोदयी राशि की दशा मध्यम फल देनेवाली होती है। वह फल भी दशा के अन्त मे ही देती है।॥४२॥ मनुष्य के जन्म समय मे दशा के स्वामी ग्रह तथा अन्य ग्रहो के विचार करने मे नैसर्गिक बल तथा तात्कालिक बल और मैत्रीबल का विचार करे।॥४३॥ इस बल के अनुसार शुभ और अशुभ फल का निर्णय करे। और ग्रह के शत्रु सम ग्रहो का भी निरीक्षण करे। दशा के स्वामी से विपरीत भाववाले ग्रहो वा सम्बन्ध तथा दशास्वामी से सम्बन्धित भावो का विचार बारहो राशियो मे करे।॥४४॥ बारह राशियो की दशा तथा अन्तर–दशा की कल्पना करे। जिस भाव की राशि अपने मित्र या स्वगृही ग्रह से युक्त हो।॥४५॥ उस दशा म राजा के समान सम्पत्ति और सुख होता है और जो राशि शत्रु नीचत्व, अथवा नीच तथा पापग्रह युक्त हो उसकी दशा मे अनर्थ कलह रोग और मृत्युभय होता है। इसी प्रकार उस राशि के अष्टक वर्ग के विचार मे यदि बिन्दु अधिक हो अथवा केवल शून्य हो अथवा रेखा अधिक हो।॥४७॥ तो हानि या वृद्धि भाव के ग्रह के अनुसार जाने। भावराशि की दशा मे सन्तान आदि पदार्थों का भी शुभाशुभ विचार करे।॥४८॥

धात्वादिराशिभेदाच्च धात्वादिग्रहयोगत ॥ शुभपापदशाभेदाच्छुभपापयुतेरपि ॥४९॥ इष्टानिष्टस्थानभेदात्फलभेदात्समुन्नयेत् ॥ एव सर्वग्रहाणा च स्वा स्वामतर्दशामपि ॥५०॥ स्वराशितो राशिभुक्ति प्रकल्प्य फलमीरयेत् ॥ अन्तरतर्दशा स्वीया विभज्यैव पुन पुन ॥५१॥ कालसक्षेपत सूक्ष्मफल ब्रूयाद्दिन प्रति ॥ स्वाध्यारभकृतो होराग्रथेऽयमपि वाऽमुना ॥५२॥ केन्द्रे कोणे कारका भावनाथा भावप्राप्तिर्दु स्थिता भावहत्यै ॥ अर्थे लाभे विक्रमा वा यदा ते भावात्सार्येभातृपित्रादितुल्या ॥५३॥ भाव पश्यति भावेशो भावस्थे लग्नगोऽपि वा ॥ बलिन स्वोच्चगे वाऽपि तद्भावात्तिष्टपुष्टया ॥५४॥

राशि के बलाबल भेद म तथा बलवान ग्रहो के योग आदि मे शुभ या अशुभ ग्रहो के योग

अथान्तर्दशाकरणमाह

दशा दशाहता कार्या दशभिर्भागमाहरेत् ॥ लब्धाकाश्च भवेन्मासास्त्रिशन्ने च दिनानि च ॥१॥

अथ सूर्यविंशोत्तरीवर्षाणि ६ तन्मध्येंतरमाह									
सू	च	म	रा	बृ	श	बु	के	शु	ग्रह
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०
३	६	४	१०	९	११	१०	४	०	०
१८	०	६	२४	१८	१२	६	६	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चन्द्रविंशोत्तरीवर्षाणि १० तन्मध्येन्तरम्									
च	म	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	प्र
०	०	१	१	१	१	०	१	०	०
१०	७	६	४	७	५	७	८	६	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ भौमविंशोत्तरीवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्									
म	रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	च	प्र
०	१	०	१	०	०	१	०	०	०
४	०	११	१	११	४	२	४	७	०
२७	१८	६	९	७	२७	०	६	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ राहुविंशोत्तरीवर्षाणि १८ तन्मध्येन्तरम्									
रा	बृ	श	बु	के	शु	सू	च	म	प्र
२	२	२	२	१	३	०	१	१	०
८	४	१०	६	०	०	१०	६	०	०
१२	२४	६	१८	१८	०	२४	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अन्तर्दशाकरण

जिसकी दशा में जिसका अन्तर साधन करना हो उन दोनों ग्रहों की दशाओं को परस्पर गुणा करना। गुणितांक में १० का भाग देने पर माससंख्या प्राप्त होगी। शेष को ३० से गुणा कर १० का भाग देने पर दिन संख्या प्राप्त होगी॥१॥

(सरल रीति–जिस ग्रह में जिस ग्रह का अन्तर जानना हो उन दोनों ग्रहों की दशा परस्पर गुणा करना तो गुणित अंक की दहाई के अंक मास होते हैं। और इकाई का अंक त्रिगुणित दिन होते हैं।)

उदाहरण–सूर्यदशा में सूर्य का अन्तर जानना है सूर्य दशा की वर्ष संख्या ६–६ को परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, १० का भाग दिया तो ३ मास लब्ध हुए, शेष ६ को ३० से गुणा किया तो १८० हुए, १० का भाग दिया तो लब्ध १८ दिन हुए।

अथवा–सूर्यदशावर्ष परस्पर गुणा किया तो ३६ हुए, इस संख्या में दहाई का अंक ३ मास है, और इकाई का अंक ६ त्रिगुणित १८ दिन है।

अथ विंशोत्तरीगुरुवर्षाणि १६ तन्मध्येन्तरम्

बृ	श	बु	के	शु	सू	च	म	रा	य
२	२	२	०	२	०	१	०	२	०
१	६	३	११	८	९	४	११	४	०
१८	१२	६	६	०	१८	०	६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीशनिवर्षाणि १९ तन्मध्येन्तरम्

श	बु	के	शु	सू	च	म	रा	बृ	य
३	२	१	३	०	१	१	२	२	०
०	८	१	२	११	७	१	१०	६	०
३	९	९	०	१२	०	९	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीबुधवर्षाणि १७ तन्मध्येन्तरम्

बु	के	शु	सू	च	म	रा	बृ	श	य
२	०	२	०	१	०	२	२	२	०
४	११	१०	१०	५	११	६	३	८	०
२७	२७	०	६	०	२७	१८	६	९	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीकेतुवर्षाणि ७ तन्मध्येन्तरम्

के	शु	सू	च	म	रा	बृ	श	बु	य
०	१	०	०	०	१	०	१	०	०
४	२	४	७	४	०	११	१	११	०
२७	०	६	०	२७	१८	६	९	२७	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ विंशोत्तरीभृगुवर्षाणि २० तन्मध्येन्तरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०
३	१	१	१	३	२	३	२	१
४	०	८	२	०	८	२	१०	२
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०

भावयोगफलमाह

स्वद्वादशांशके लग्नाथे वा स्वद्रुकाणके ॥ तस्य भुक्ति शुभामाहुर्मुनयः कालचिन्तकाः ॥२॥ स्वत्रिंशांशेऽथ वा मित्रत्रिंशांशे वा स्थितो यदि ॥ तस्य भुक्ति शुभा प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥३॥ मित्रक्षेत्रे नवांशस्थे मित्रस्य द्विरसांशके ॥ तस्य भुक्ति शुभा प्रोक्ता कालविद्भिर्मनीषिभिः ॥४॥ बुद्धिक्षेत्रनवांशस्थे पुत्रस्य द्विरसांशके ॥ मित्रद्रेष्काणगे वापि तस्य भुक्तिःशुभावहा ॥५॥ तयो राशिनवांशस्थे धर्मस्य द्विरसांशके ॥ गुरुद्रेष्काणगे वापि तस्य भुक्तिःशुभावहा ॥६॥ सुखराशिनवांशस्थे वाहनद्विरसांशके ॥ सुखद्रेष्काणगे वापि

तस्य भुक्ति शुभावहा ॥७॥ विलग्ननाथस्थितभाशनाथे मित्राशगे मित्रखगेन दृष्टे ॥ सुहृद्दृक्काणस्थनवाशके वा तदास्य भुक्ति शुभदा वदन्ति ॥८॥

भावयोगफल

लग्नेश अपने द्वादशाश मे अथवा द्रेष्काण मे हो तो उसकी अन्तर्दशा शुभ होती है, ऐसा त्रिकालज्ञ मुनि कहते है॥२॥ अथवा अपने त्रिशाश या मित्र के त्रिशाश मे हो तो उसका भी अन्तर शुभ होता है॥३॥ अथवा मित्र के घर में या मित्र के नवाश मे या मित्र के द्वादशाश मे हो तो उस ग्रह का अन्तर शुभ होता है॥४॥ अथवा लग्नेश पचमभाव मे या नवाश मे अथवा पचम भाव के १२ अश मे या मित्र द्रेष्काण मे हो तो भी अन्तर शुभ होता है॥५॥ लग्नेश पचमेश की राशि या नवाश मे अथवा नवमभाव के द्वादशाश मे हो तो अन्तर शुभ होता है॥६॥ लग्नेश चतुर्थभाव मे या चतुर्थ के नवाश मे अथवा चतुर्थ के द्वादशाशमे या चतुर्थके द्रेष्काण मे हो तो उसका अन्तर शुभ होता है॥७॥ लग्नेश जिस राशि मे हो उस राशि के नवाश का स्वामी अपने मित्रग्रह के नवाश मे हो तथा मित्रदृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है। अथवा मित्र के द्रेष्काण मे स्थित नवाशेश के मित्राश मे हो और मित्र दृष्ट हो तो अन्तर शुभ होता है॥८॥

अथ वक्ष्ये विशेषेण दशा कष्टप्रदा नृणाम् ॥ षष्ठाष्टमव्ययेशाना दशा कष्टप्रदायिनी ॥९॥ एषा भुक्तिर्हि कष्टा स्यान्मारकस्य दशा यदि ॥ मारकेशेन षष्ठेशे युक्ते लग्नाधिपे यदि ॥१०॥ तस्य भुक्तौ ज्वरप्राप्ति प्राहु कालविदो जना ॥ सरोगे सशरीरेशश्चन्द्रषड्वर्गगो यदि ॥११॥ जलदोषस्तस्य भुक्तौ स्यादजीर्णो न सशय ॥ षष्ठेशयुतलग्नेशो बुधषड्वर्गगो यदि ॥१२॥ तस्य भुक्तौ भवेद्वायुर्वातो वा देहजाड्यकृत् ॥ सारिनाथविलग्नेशो गुरु षड्वर्गगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ भवेद्रोग पीडा वा ब्राह्मणेन तु ॥१३॥ नक्षत्रेशो विलग्नेशो भृगुषड्वर्गगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ भवेत्पीडा रोगस्त्री सगमेन च ॥१४॥ सरोगे सविलग्नेशे शनिषड्वर्गगो यदि ॥ तस्य भुक्तौ भवेद्वात सन्निपातोऽथ वा नृणाम् ॥ लग्नेशरोगेशपयोर्भवेन्मारकभुक्तिषु ॥१५॥ मृत्यौ स्थिते सैंहिकमवकेतुभिर्मनोहिकाश्वासविषूचिकाभि ॥ रोगो नराणामथ तस्य भुक्तौ भवेद्यदा मारकसयुतिश्च ॥१६॥ एव भ्रात्रादिभावाना नायकौ यत्र सस्थित ॥ तत्तत्षड्वर्गयोगेन तत्तद्भावफल वदेत् ॥१७॥

अब कष्टकारी दशा कहते है। ६।८।१२ भाव के स्वामी की दशा कष्टदायक होती है॥९॥ यदि लग्नेश, मारकेश से युक्त अथवा षष्ठेश से युक्त या दृष्ट हो तो अन्तर कष्टकारी होता है॥१०॥ उसके अन्तर मे ज्वर होता है। लग्नेश रोगेश युक्त होकर चन्द्रमा के षड्वर्ग मे हो तो ज्वर होता है॥११॥ अथवा जलदोषयुक्त बीमारी या अजीर्ण की बीमारी होती है। यदि बुध के षड्वर्ग मे हो तो॥१२॥ उसके अन्तर मे वातव्याधि या देहजाड्य की बीमारी होती है। वही यदि गुरु के षड्वर्ग मे हो तो उसके अन्तर मे ब्राह्मण द्वारा पीडा प्राप्त हो॥१३॥ चन्द्रमा और लग्नेश यदि शुक्र षड्वर्ग मे हो तो अन्तर मे स्त्रीसग से रोग या कष्ट होता है॥१४॥ षष्ठेश युत लग्नेश यदि शनि षड्वर्ग मे हो तो उसके अन्तर मे वातव्याधि या सन्निपात होता

है॥१५॥ मारकेश ग्रह की दशा में रोगेशयुत लग्नेश का अन्तर हो तथा अष्टमभाव में राहु, शनि, केतु हो तो हिचकी, खासी, दमा या हैजा की बीमारी होती है॥१६॥ जिस प्रकार ये योग लग्नेश के साथ बताये गये है, उसी प्रकार अन्य सभी भावों से भी विचारने चाहिए॥१७॥

अथाग्रे फलमाह

केन्द्राधीश्वरकोणनायकदशाश्चान्तर्दशा शोभना सामान्याश्च धनत्रिलाभभवनाधीशग्रहाणां दशा ॥ षष्ठाष्टव्ययभावनाथकदशा कष्टा भवेयुःसदा नेतुर्लग्नमवेक्ष्य तत्तदधिपात्तत्तद्दशा-भुक्तिषु ॥१८॥

रविमहादशायां रवेरंतर्दशा मास ३ दिन १८ तत्फलम्

उच्चक्षेत्रे गते सूर्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ रविदाये स्वभुक्तौ च धनधान्यादिलाभकृत् ॥१९॥
देहरोग वित्तलाभ राजप्रीतिकर शुभम् ॥ सर्वकार्यार्थसिद्धि स्याद्विवाह राजदर्शनम् ॥२०॥
द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजप चरेत् ॥२१॥
सूर्यप्रीतिकरीं शांति कुर्यादारोग्यमादिशेत् ॥२२॥

केन्द्रेश तथा त्रिकोणेश की दशा और अन्तर्दशा शुभ होती है। धनेश, तृतीयेश, लाभेश की दशा, अन्तर्दशा मध्यम होती है। ६।८।१२ भावो के स्वामी की दशा कष्टकारी होती हैं। इस प्रकार से उपर्युक्त सभी योगो से फल विचार करना चाहिये॥१८॥

सूर्यदशा में सूर्यान्तर मास ३ दिन १८ फल

सूर्य उच्च राशि का हो स्वगृही हो। केन्द्र त्रिकोण या लाभ में हो तो धन, धान्य आदि का लाभ होता है॥१९॥ शरीर में निरोगता, धन का लाभ, राजा से प्रीति, सम्पूर्ण कार्य और अर्थ की सिद्धि तथा विवाह आदि शुभ कार्य होता है॥२०॥ द्वितीय तथा सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होनेका भय होता है। इस दोष को दूर करने के लिये महामृत्युंजय का जप करना या कराना चाहिए॥२१॥ सूर्य की शांति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥२२॥

रविदशायां चंद्रभुक्तिमासाः ६ दिना० तत्फलम्

सूर्यस्यांतर्गते चंद्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ विवाह शुभकार्यं च धनधान्यसमृद्धिकृत् ॥२३॥
गृहक्षेत्राभिवृद्धि च पशुवाहनसंपदाम् ॥ तुंगे वा स्वर्क्षगे वाऽपि दारसौख्य धनागमम् ॥२४॥
पुत्रलाभसुख चैव सौख्य राजसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखावहम् ॥२५॥ क्षीणे
वा पापसंयुक्ते दारपुत्रादिपीडनम् ॥ वैषम्यजनसवादभृत्यवर्गविनाशनम् ॥२६॥ विरोध
राजकलह धनधान्यपशुक्षयम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये चंद्रे जलभीति मनोरुजम् ॥२७॥

सूर्य दशा मे चन्द्रान्तर ६ मास फल

सूर्य के अन्तर मे चन्द्रमा हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो विवाह आदि शुभकार्य होते है। धन–धान्य की वृद्धि होती है॥२३॥ भूमि और मकान मे वृद्धि, पशु और वाहन आदि सम्पत्ति प्राप्त होती है। चन्द्रमा यदि उच्च का या स्वगृही हो तो स्त्री का सुख,और धन की प्राप्ति होती है॥२४॥ पुन सन्तान की प्राप्ति और सुख तथा राज–समाज मे आना–जाना होता है। महाराज या बडे आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और सुख होता है॥२५॥ चन्द्रमा यदि क्षीण या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री–पुत्र को कष्ट होता है। परिवार मे विषमता, बन्धुओ से विरोध तथा नौकर चले जाते है॥२६॥ राज से मुकदमा, धन और पशु की हानि होती है। चन्द्रमा ६।८।१२ मे हो तो जल मे डूबने का भय अशान्ति होती है॥२७॥

बधन रोगपीडा च स्थानविच्युतिकारकम् ॥ दुस्थान चापि चित्तेन दायादजनविग्रहम् ॥२८॥ निर्धन कुत्सितान्न च चौरादिनृपपीडनम् ॥ मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च देहपीडाक्षयो भवेत् ॥२९॥ दायेशाल्लाभभाग्ये च केंद्रे वा शुभसयुते ॥ भोगभोग्यादिसतोषदारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥३०॥ राज्यप्राप्ति महत्सौख्य स्थानप्राप्ति च शाश्वतीम् ॥ विवाह यज्ञदीक्षा च सुधाधान्याम्बरभूषणम् ॥३१॥ वाहन पुत्रपौत्रादि लभते सुखवर्द्धनम् ॥ दायेशाद्रिपुरध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ॥३२॥ अकाले भोजन चैव देशाद्देश गमिष्यति ॥ द्वितीयद्यूननाथेन अपमृत्युर्भविष्यति ॥ श्वेता गा महिषीं दद्याच्छाति कुर्यात्सुख लभेत् ॥३३॥

बन्धन रोग और पीडा तथा स्थान भ्रश होता है। नेष्ट स्थान का रहना तथा परिवार मे विग्रह होता है॥२८॥ धनहीन, कुभोजन, चोर, शत्रु, राजा आदि से पीडा होती है। मूत्र–कृच्छ्र की बिमारी तथा दर्द की बिमारी होती है॥२९॥ चन्द्रमा सूर्य से यदि लाभ अथवा भाग्यस्थान मे हो, केन्द्र या त्रिकोण मे तथा शुभग्रह युक्त हो तो उत्तम भोग प्राप्त होते है। भाग्य की वृद्धि होती है। मन मे सन्तोष,घर म स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है॥३०॥ राज्य से प्राप्ति, महान सुख, स्थान या भूमि की प्राप्ति स्थायी रूप से होती है। घर मे विवाह आदि मगल कार्य तथा यज्ञ आदि धर्म कार्य, दीक्षा भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है। वाहन की प्राप्ति, पुत्र पौत्र आदि का उत्सव होने से सुख वृद्धि होती है। सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो और बल रहित हो॥३२॥ तो कुसमय भोजन देश–विदेश की यात्रा आदि होती है। चन्द्रमा यदि द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है।
उपाय – दूध देनेवाली सफेद गाय का दान करने मे सुख होता है॥३३॥

रविदशायां कुजभुक्तिमासाः ४ दिना ०६ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते भौमे स्वोच्चे स्वक्षेत्रलाभगे ॥ लग्नात्केंद्रत्रिकोणे वा शुभकार्यं शुभादिकम् ॥३४॥ भूलाभ कृषिलाभ च धनधान्यादिवृद्धिदम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभ च रक्तवस्त्रादिलाभकृत् ॥३५॥ लग्नाधिपेन सयुक्ते सौख्य राजप्रिय सुखम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते लाभश्चैवभविष्यति ॥३६॥ बहुसेनाधिपत्य च शत्रुनाश मनोवृढम् ॥ आत्मबधुसुख चैव भ्रातृवर्द्धनक तथा ॥३७॥

दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे पापयुक्ते च वीक्षिते ॥ आधिपत्यबलैर्हीने क्रूरबुद्धि मनोरुजम् ॥३८॥ कारागृहे प्रवेश च निर्गल बधुनाशनम् ॥ भ्रातृवर्गविरोध च कर्मनाशमथापि वा ॥३९॥ नीचे या बहुले भौमे राजमूलाद्धनक्षय ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहे जाड्य मनोरुजम् ॥४०॥ सुब्रह्मजपदान च अनड्वाह तथैव च ॥ शांति कुर्वीत विधिवदायुरारोग्यसिद्धिदाम् ॥४१॥

सूर्य दशा मे भौमान्तर ४ मास ६ दिन फल

सूर्य मे मगल का अन्तर हो और मगल उच्च का स्वगृही केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो तो घर मे मगल कार्य होते है॥३४॥ पृथ्वी का लाभ खेती का लाभ धन–धान्य का लाभ मकान खेत आदि का लाभ होता है। व्यापार मे लाल वस्त्र से अधिक लाभ होता है॥३५॥ लग्नेश से युक्त हो तो सुखकारी, राजप्रिय होता है। भाग्येश तथा लाभेश से युक्त हो तो विशेष लाभकारी होता है॥३६॥ सेनापति की पदवी मिलती है शत्रु का नाश होता है। मन मे दृढता तथा बल वृद्धि होती है। परिवार मे सुख तथा वृद्धि होती है॥३७॥ सूर्य स ६।८ वे स्थान मे हो पापग्रह से युक्त दृष्ट हो तो अधिकार से हीन क्रूर वृद्धि मन मे अशान्ति होती है॥३८॥ कारागृह मे वास बेडी तथा हथकडी बन्धु का नाश, भ्रातृ वर्ग से विरोध तथा इच्छा का नाश होता है॥३९॥ मगल नीच का या बलहीन हो तो राजवर्ग से धन की हानि होती है और द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह मे जडता, मन मे दुख होता है॥४०॥ मगलका दान तथा जप और बैल का दान करने से आयु और आरोग्य प्राप्त होता है॥४१॥

अथ रविदशाया राहुभुक्तिमासा. १० दि० २४ तत्फलम्

सूर्यस्यान्तर्गते राहौ लग्नात्केद्रत्रिकोणगे ॥ आदौ द्विमासपर्यन्त धननाश महद्भयम् ॥४२॥ चौराहिव्रणभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥ तत्पर सुखमाप्नोति शुभयुक्ते शुभांशके ॥४३॥ नैरोग्य मनस्तुष्टी राजप्रीतिकर सुखम् ॥ लग्नादुपचये राहौ योगकारकसयुते ॥४४॥ दारेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानकीर्तिदम् ॥ भाग्यवृद्धि यशोलाभ दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥ पुत्रोत्सवादिसतोष गृहे कल्याणशोभनम् ॥ दायेशात्षष्ठरिष्फस्थे रध्रे वा बलवर्जिते ॥४६॥ बधन स्थाननाशश्च कारागृहनिवेशनम् ॥ चौराहिव्रणभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४७॥ चतुष्पाज्जीवनाशश्च गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥ गुल्मक्षयादिरोगश्च अतिसारादिपीडनम् ॥४८॥ द्विसप्तस्थे तथा राहौ तत्स्थानाधिपसयुते॥अपमृत्युभय चैव सर्वभीतिश्च सभवेत्॥४९॥दुर्गाजप च कुर्वीत छागदान समाचरेत् ॥ कृष्णा गा महिषीं दद्याच्छान्तिमारोग्यसंपदम् ॥५०॥

सूर्य दशा मे राहु अन्तर १० मास २४ दिन फल

सूर्य के अन्तर मे राहु हो, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो पहले २ मास मे धन का नाश, महान भय॥४२॥ चोर, सर्प घाव आदि का भय, स्त्रीपुत्र को पीडा होती है। २ मास के बाद सुख होता है। मगल आदि शुभग्रह युक्त शुभ नवाश मे हो तो॥४३॥ नीरोगता, सन्तोष, राजप्रीति और सुख होता है। यदि लग्न से केन्द्र स्थान मे हो, योग कारक ग्रह से युक्त हो॥४४॥ सप्तमेश से शुभ स्थान मे हो तो राजसम्मान, कीर्ति, भाग्यवृद्धि, लाभ होता है तथा स्त्री–पुत्र को कुछ पीडा भी होती है॥४५॥ और पुत्रोत्सव आदि मगल कार्य, घर मे सुख

शान्ति होती है। मगल यदि बलहीन होकर सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो तो॥४६॥ बन्धन, स्थान-नाश, कैद, चोर, सर्प, घाव से भय, स्त्री पुत्र को पीडा होती है॥४७॥ पशु की हानि मकान और खेत की हानि, गुल्म का रोग तथा क्षय रोग तथा अतिसार आदि रोग होते है॥४८॥ राहु यदि २ या ७वे स्थान मे स्थानेश से युक्त हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है तथा अन्य प्रकार के भी भय होने सम्भव है॥४९॥

उपाय –दुर्गामित्र का जप एव छाग (बकरा) दान करे तथा काली गाय का दान करे तो निश्चय शान्ति रहती है॥५०॥

अथ रविमध्ये गुरुभुक्तिमा० १९ दि० १८ तत्फलम्

सूर्यस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे मित्रस्य वर्गस्थे विवाह राजदर्शनम् ॥५१॥ धनधान्यादिलाभ च पुत्रलाभ महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ॥५२॥ ब्राह्मणप्रियसन्मान प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ॥ भाग्यकर्माधिपवशाद्राज्यलाभ महोत्सवम् ॥५३॥ नरवाहनयोगाश्च स्थानाधिक्य महत्सुखम् ॥ दायेशाच्छुभराशिस्थे भाग्यवृद्धि सुखावहा ॥५४॥ दानधर्मक्रियायुक्तो देवताराधना प्रिय ॥ गुरुभक्तिर्मन सिद्धि पुण्यकर्मादिसग्रह ॥५५॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे नीचे वा पापसयुते ॥ दारपुत्रादिपीडा च देहपीडा महद्भयम् ॥५६॥ राजकोप प्रकुरुते इष्टवस्तुविनाशनम् ॥ पापमूलाद्द्रव्यनाश देहभ्रष्ट मनोरुजम् ॥५७॥ स्वर्णदान प्रकुर्वीत इष्टजाप्य च कारयेत् ॥ गवा कपिलवर्णाना दानेनारोग्यमा-विशेत् ॥५८॥

सूर्य मे गुरु का अन्तर मास १९ दिन १८ फल

सूर्य मे गुरु का अन्तर हो तथा गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, उच्चराशि मे हो या मित्र वर्ग मे हो तो विवाह, राजदर्शन होता है॥५१॥ धन–धान्य का लाभ, महान सुख होता है। राजा या बडे आदमी की कृपा से इच्छित कार्य की सिद्धि और विशेष लाभ होता है॥५२॥ देव ब्राह्मण की पूजा और सम्मान, प्रियबन्धु का मिलन वस्त्र–भूषण का लाभ होता है। नवम्, दशम् स्वामी से युक्त हो या दृष्ट हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है॥५३॥ नौकर, चाकर तथा मोटर आदि सवारी होती है, बडा मकान होता है महान सुख होता है। सूर्य मे शुभस्थान और शुभराशि मे हो तो भाग्य वृद्धि और मगल होता है॥५४॥ दान, धर्म, क्रिया से युक्त, देवता की आराधना मे प्रीति, गुरुभक्ति मन मे सन्तोष, दान धर्म आदि पुण्य कार्य का सग्रह होता है॥५५॥ सूर्य से ६।८ स्थान मे हो, नीच का हो या पापग्रह युक्त हो तो स्त्री पुत्र को पीडा, देह को पीडा तथा महान भय होता है॥५६॥ राजकोप होता है, इष्ट वस्तु का नाश होता है, पाप के कारण द्रव्य का नाश, देह मे रोग, मन मे अशान्ति होती है॥५७॥

उपाय –गुरु का जप और दान, सुवर्ण का दान तथा कपिला गऊ का दान करने से आरोग्यता होती है॥५८॥

अथ रविदशायां शनिभुक्तिमा० ११ दि० १२ तत्फलम्

सूर्यस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ शत्रुनाशं महत्सौख्यं स्वल्पधान्यार्थलाभकृत्॥५९॥
विवाहोत्सवकार्याणि शुभकार्यं शुभावहम् ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे मन्दे सुहृद्ग्रहसमन्विते ॥६०॥
गृहे कल्याणसम्पत्तिर्विवाहादिषु सत्क्रियाम् ॥ राजसन्मानकीर्तिश्च नानावस्त्रधनागम ॥६१॥
दायेशात्षष्ठरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ वातशूलमहाव्याधिज्वरातीसारपीडनम् ॥६२॥
बन्धन कार्यहानिश्च वित्तनाशं महद्भयम् ॥ अकस्मात्कलहश्चैव दायादजनविग्रहम् ॥६३॥
भुक्त्यादौ मित्रहानिः स्यान्मध्ये किंचित्सुखावहम् ॥ अंते क्लेशकरं चैव नीचं तेषां तथैव च ॥६४॥
पितृमातृवियोगं च गमनागमनं तथा ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ॥६५॥कृष्णां गां महिषीं दद्यान्मृत्युञ्जयजपं चरेत् ॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ॥६६॥

सूर्य दशा मे शनि का अन्तर ११ मास १२ दिन फल

सूर्य की दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से, त्रिकोण स्थान मे हो तो शत्रु का नाश, सुख धन-धान्य का साधारण लाभ करता है॥५९॥ विवाह आदि उत्सव शुभ कार्य होते है। शनि उच्चराशि का या स्वगृही हो, अपने मित्रग्रह से युक्त हो॥६०॥ तो घर मे कल्याण सुख, सम्पत्ति, विवाह आदि उत्सव, राज से सम्मान, कीर्ति, नानाप्रकार वस्त्रभूषण आदि की प्राप्ति होती है॥६१॥ सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे हो, पापग्रह युक्त हो तो वायु, शूल, तपेदिक, ज्वर, अतिसार आदि बीमारियां होती है॥६२॥ बन्धन, कार्य-हानि, धननाश तथा महान भय होता है। परिवार मे अकस्मात् कलह तथा लड़ाई होती है॥६३॥ अन्तर के आदि मे मित्र की हानि हो, मध्य मे कुछ सुख हो तथा अन्त मे क्लेश हो। यदि शनि नीच राशि का तथा पाप संयुक्त हो॥६४॥ तो माता-पिता का वियोग, यात्रा होती है। शनि यदि द्वितीयसप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है॥६५॥
उपाय –दूधवाली कालीगऊका दान करे, मृत्युंजय का जप करावे तथा छाग (बकरा) का दान करे तो यही दशा सभी सम्पत्ति की देनेवाली होती है॥६६॥

अथ रविदशायां बुधभुक्तिमा० १० दि० ६ तत्फलम्

सूर्यस्यान्तर्गते सौम्ये स्वोच्चे वा स्वर्क्षगेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभस्थे बुधे वर्गबलैर्युते ॥६७॥
राज्यलाभं महोत्साहं दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम् ॥६८॥
पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्गृहेगोधनसंकुलम् ॥ भाग्ये लाभाधिपैर्युक्ते लाभवृद्धिकरो भवेत् ॥६९॥
भाग्यपंचमकर्मस्थे सन्मानो भवति ध्रुवम् ॥ स्वकर्मधर्मबुद्धिश्च गुरुधर्मद्विजार्चनम् ॥७०॥
धनधान्यादिसंयुक्तं विवाहं पुत्रसम्भवम् ॥ दायेशाच्छुभराशिस्थे सौम्यभुक्तौ महत्सुखम् ॥७१॥
वैवाहिकं यज्ञकर्म दानधर्मजपादिकम् ॥ स्वनामाङ्कितपद्यानि ग्रामद्वयमथापि वा ॥७२॥
भोजनाम्बरभूषाप्तिरभ्रेशो भवेन्नरः ॥ दायेशाद्दुष्टस्थाने रिष्फगे नीचगेऽपि वा ॥७३॥
देहपीडा मनस्तापो दारपुत्रादिपीडनम् ॥ भुक्त्यादौ दुःखमाप्नोति मध्ये किंचित्सुखावहम् ॥७४॥
अंते तु राजभीतिश्च गमनागमनं तथा ॥ द्वितीये द्यूननाथे तु देहजाड्यं ज्वरादिकम् ॥
विष्णुनामसहस्रं च ह्यन्नदानं च कारयेत् ॥ रजतप्रतिमादानं कुर्यादारोग्यमादिशेत् ॥७५॥

सूर्य दशा मे बुध का अन्तर १० मास ६ दिन

सूर्य की दशा मे बुध का अन्तर हो और बुध उच्च का या स्वगृही हो, लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान मे हो, शुभ वर्ग मे हो॥६७॥ तो राज्य लाभ, महान् उत्साह, स्त्री पुत्र आदि का सुखकारक होता है। राजा या बडे आदमी की कृपा से वाहन, भूषण आदि की प्राप्ति होती है॥६८॥पुण्य और तीर्थ फल की प्राप्ति, घर मे गौ आदि पशु होते है। भाग्य स्थान मे बुध लाभेश से युक्त हो तो बहुत लाभदायक होता है॥६९॥ पचम, नवम, दशम स्थान मे बुध हो तो अपने व्यापार और धर्म की वृद्धि होती है तथा धर्म–कर्म मे निष्ठा होती है एव गुरु, ब्राह्मण की पूजा होती है॥७०॥ धनधान्य सयुक्त सुख होता है, विवाह तथा पुत्रोत्पत्ति होती है। सूर्य से शुभ राशि मे हो, सौम्य ग्रह युक्त हो तो महान् सुख होता है॥७१॥ विवाह सम्बन्धी मगल कार्य, यज्ञ कर्म, दान, धर्म, जप आदिक होते हैं तथा अभिनन्दन होता है॥७२॥ उत्तम भोजन, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते हैं। देवोपम सुख होता है। सूर्य से बुध १२ वे स्थान में हो अथवा नीच राशि का हो॥७३॥ तो देह पीडा मन मे चिन्ता जलन और स्त्री पुत्र को पीडा होती है। अन्तर के आदि मे दु ख होता है। मध्य मे कुछ सुख प्राप्ति होती है॥७४॥ बुधान्तर के अन्त मे राजभय, यात्रा होती है। बुध यदि द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो वात, व्याधि, ज्वर आदि की बीमारी होती है।

उपाय –विष्णुसहस्रनाम स्तोत्र पाठ अन्नदान तथा बुधकी चादी की प्रतिमा का दान करना चाहिए। उससे आरोग्यता और सुख होगा॥७५॥

रविमध्ये केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

सूर्यस्यातर्गते केतौ देहपीडा मनोव्यथा ॥ अर्थव्यय राजकोप स्वजनादेरुपद्रवम् ॥७६॥
लग्नाधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्य धनागमम् ॥ मध्ये तत्क्लेशमाप्नोति मृतवार्तागम वदेत् ॥७७॥
षष्ठाष्टमव्यये चैव दायेशात्पापसयुते ॥ कपोलदतरोगश्च मूत्रकृच्छ्रस्य सभवम् ॥७८॥
स्थानविच्युतिरर्थस्य मित्रहानि पितुर्मृति ॥ विदेशगमन चैव शत्रुपीडा महद्भयम् ॥७९॥
लग्नाद्बुपचये केतौ योगकारकसयुते ॥ शुभांशे शुभवर्गेश्च शुभकर्मफलप्रदम् ॥८०॥
पुत्रदारादिसौख्य च सतोष प्रियवर्द्धनम् ॥ विचित्रवस्त्रलाभ च यशोवृद्धि सुखावहा ॥८१॥
द्वितीयद्यून नाथे वा ह्यपमृत्युभय वदेत् ॥ दुर्गाजप च कुर्वीत छागदान तथैव च ॥८२॥
महामृत्युजयजप कुर्याच्छातिमवाप्नुयात् ॥८३॥

सूर्य दशा मे केतु अन्तर मास ४ दिन ६ फल

सूर्य की दशा मे केतु का अन्तर हो तो देह मे पीडा, मन मे व्यथा, धन का नाश, राज का कोप तथा उपद्रव होते है॥७६॥ केतु यदि लग्नेश मे युक्त हो तो आरम्भ मे सुख और धन की प्राप्ति होती है। मध्य पूर्वोक्त क्लेश होते हैं। तथा अन्त मे मृत व्यक्ति (स्वसम्बन्धी) की खबर मिलती है॥७७॥ किन्तु ६।८।१२ स्थान मे हो अथवा सूर्य से ६।८।१२ स्थान मे एव पापग्रह युक्त हो तो कपोल और दात की बिमारी होती है। तथा मूत्र कृच्छ्र की बीमारी भी सभव है॥७८॥ स्थान हानि, धन हानि, मित्र हानि, पिता की मृत्यु, विदेश गमन, शत्रु पीडा तथा महान् भय होता है॥७९॥ लग्न से केन्द्र मे कारक ग्रह मे युक्त केतु हो, शुभ नवमाश मे और

शुभ वर्ग में हो तो किये हुए शुभ कर्म का फल होता है॥८०॥ और पुत्र, स्त्री का सुख, सन्तोष, विचित्र वस्त्र का लाभ, यश और सुख होते हैं॥८१॥ केतु द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अकाल मृत्यु का भय होता है।
उपाय-दुर्गामन्त्र जप तथा छाग दान॥८२॥ अथवा महामृत्युञ्जय का जप करने से शान्ति होती है॥८३॥

रविदशायां शुक्रान्तर्दशा मा० १२ दि० तत्फलम्

सूर्यस्यान्तर्गते शुक्रे त्रिकोणे चन्द्रगेऽपि वा ॥ स्वोच्चे मित्रस्ववर्गस्थे इष्टस्त्रीभोग्यसम्पदाम् ॥८४॥ ग्रामान्तरप्रयाणं च ब्राह्मणप्रभुदर्शनम् ॥ राज्यलाभं महोत्साहं छत्रचामरवैभवम् ॥८५॥ गृहे कल्याणसम्पत्तिर्नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ विद्रुमादिरत्नलाभं मुक्तावस्त्रादिलाभकृत् ॥८६॥ चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्बहुधान्यधनादिकम्॥उत्साहं कीर्तिसम्पत्तिर्नरवाहनसम्पदाम्॥८७॥ लग्नात् षष्ठाष्टमव्यये, शुक्रे वा बलवर्जिते ॥ राजकोपं मनःक्लेशं पुत्रस्त्रीधननाशनम् ॥८८॥ भुक्त्यादौ वाहनं मध्ये लाभः शुभकरो भवेत् ॥ अन्ते यशोनाशनं च स्थानभ्रंशमथापि वा ॥८९॥ बन्धुद्वेषमनन्तं च स्वकुलाद्भोगनाशनम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहे जाड्यं मनोरुजम् ॥९०॥ रन्ध्ररिष्फसमायुक्तेऽपमृत्युर्भविष्यति ॥तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युञ्जयजपं चरेत् ॥९१॥ श्वेतां गां महिषीं दद्याद्रुद्रजाप्यं च कारयेत् ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे सूर्यांतर्दशाफलकथन
नाम त्रयास्त्रिंशोऽध्याय ॥३३॥

सूर्य दशा से शुक्र का अन्तर मास १२ फल

सूर्य की दशा में शुक्रका अन्तर हो,शुक्र लग्नसे त्रिकोणमें या चन्द्रमाकी राशिमें हो, उच्चका अथवा मित्रकी राशिमें अथवा मित्रके या अपने वर्गमें हो तो इच्छित स्त्री,धन आदि प्राप्त होते हैं,ग्रामान्तरकी यात्रा होती है,राजदर्शन होता है,अधिकारका लाभ,महान् उत्साह तथा पदवृद्धि होती है॥८५॥ घर में कल्याण, सम्पत्ति और नित्य मिष्टान्न भोजन प्राप्त होता है। हीरा, पन्ना आदि रत्न का लाभ, कीमती वस्त्र का लाभ होता है॥८६॥ चौपाया जीव का लाभ, बहुत धनधान्य का लाभ होता है। उत्साह, कीर्ति, सम्पत्ति, मोटर आदि सवारी का लाभ होता है॥८७॥ लग्न से ६।८।१२ वे स्थान में शुक्र हो। (पाठक यह जान लें कि-बुध और शुक्र सूर्य से छठे आठवें अथवा केन्द्र, कोण ४।५।७।९।१० भावों में कभी भी नहीं होते) और बलहीन हो तो राजकोप, क्लेश, स्त्री, पुत्र धन की हानि॥८८॥ शुक्रान्तर के आदि में सवारी का लाभ और मध्य में शुभ, लाभ तथा अन्तर के अन्त में अपयश (निन्दा) अथवा स्थान हानि हो॥८९॥ तथा बन्धुओं से द्वेष, परिवार से कलह हो और २।७ का स्वामी शुक्र हो तो देहजाड्य की बीमारी होती है। मन में अशान्ति भी होती है॥९०॥ २।७ का स्वामी होते हुए भी ८।१२ के स्वामी से भी युक्त हो तो अकालमृत्यु होती है। इस दोष के लिये उपाय-महामृत्युञ्जय जप या रुद्रमन्त्र जप तथा श्वेत गौ का दान करे॥९१॥९२॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० सूर्यान्तरदशाफलकथन
नाम त्रयास्त्रिंशोऽध्याय ॥३३॥

१ टिप्पणी :—सूर्य, बुध, शुक्र के अन्तरो मे यह ध्यान रखना चाहिए कि—सूर्य के बाद बुध की तथा बुध के बाद शुक्र की कक्षा है, अत. सूर्य से बुध का अन्तर अधिक से अधिक २८ अंश (दोनो तरफ) और शुक्र का ४८ अंश, इससे अधिक अन्तर नही होता,तब सूर्यसे बुध २–१२ से अधिक दूर नही होता और शुक्र ॥११।१२।२।३। से अधिक दूर नही होता। इसलिये सूर्यसे बुध,३।४।५।६।७।८।९।१०।११भावोमे कभी नही होता और शुक्र ४।५।६।७।८।९।१० भावो मे कभी नही होता।

बुध और शुक्र परस्पर १०।११।१२।१।२।३।४ मे होते है, परन्तु ये भी परस्पर ५।६।७।८।९ भावो मे नही होते।

अथ चन्द्रदशायां चन्द्रभुक्तिमासाः १० दि०तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चंद्रे त्रिकोणेलाभगेऽपि वा ॥ भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते गजाश्वांबरसंकुलम् ॥१॥
देवतागुरुभक्तिश्च पुण्यश्लोकादिकीर्तितम् ॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं यशोवृद्धिः सुखावहा ॥२॥
पूर्णचंद्रे पूर्णबलं सेनाधिपमहत्सुखम् ॥ पापयुक्तेऽथवा चंद्रे नीचे वा रिष्फषष्ठगे ॥३॥ तत्काले
धननाशः स्यात्स्थानच्युतिरथापि वा ॥ देहालस्यं मनस्तापं राजमंत्रिविरोधकृत् ॥४॥
मातृक्लेशंमनोदुःखं निगडं बन्धुनाशनम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु रंध्ररिष्फसमन्विते ॥५॥
देहजाड्यं महाभंगमपमृत्योर्भयं भवेत् ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥६॥

चन्द्रदशा मे चन्द्रान्तर मास १० फल

चन्द्रमा स्वगृही, उच्च का तथा त्रिकोण या लाभस्थान मे हो और ९।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो जातक का घर हाथी घोडे आदि से युक्त हो॥१॥ देवता गुरु की भक्ति तथा पवित्र वेद आदि का पाठ, राज्यलाभ, महान् सुख, यशोवृद्धि तथा सुख होता है॥२॥ चन्द्रमा यदि पूर्णबली हो तो सेनाधिपति हो और महान् सुख हो। चन्द्रमा पापयुक्त या नीच का हो और ६।१२ भाव मे हो॥३॥ तो चन्द्रान्तर मे धननाश हो या स्थान हानि हो। देह मे आलस्य, मन अशान्त, राजा या मन्त्री से विरोध होता है॥४॥ माता को क्लेश, मन मे दु ख, कैद तथा बन्धु की हानि होती है। यदि २।७ का स्वामी हो और ८।१२ के स्वामी से युक्त हो तो देह मे जड़ता, हानि तथा अपमृत्यु का भय होता है। उपाय-दूधवाली श्वेत गौ का दान करे तो शान्ति आरोग्यता होती है॥५॥६॥

अथ चन्द्रदशायां कुजभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ सौभाग्यं राजसन्मानं वस्त्राभरणभूषणम् ॥७॥ यत्न-
कार्यार्थसिद्धिस्तु भविष्यति न संशयः ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च व्यवहारे जयो भवेत् ॥८॥
कार्यलाभं महत्सौख्यं स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे फलम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापयुक्तेऽथवा यदि ॥९॥
दायेशादशुभस्थाने देहार्तिपरवीक्षिते ॥ गृहक्षेत्रादिहानिश्च व्यवहारे तथैव च ॥१०॥
भृत्यवर्गेषु कलहं भूपालस्य विरोधनम् ॥ आत्मबंधुवियोगं च नित्यं निष्ठुरभाषणम् ॥११॥
द्वितीय द्यूननाथे तु रंध्रे रं प्राधिपो यदा ॥तद्दोषपरिहारार्थं ब्राह्मणस्यार्चनं चरेत् ॥१२॥

चन्द्रदशा में मंगल का अन्तर ७ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो ऐश्वर्य, राजा से सम्मान प्राप्ति, वस्त्र आभूषण की प्राप्ति होती है॥७॥ यत्न करने से कार्यसिद्धि, धनलाभ निःसंदेह होता है। मकान तथा भूमि की वृद्धि होती है तथा व्यवहार मे जय होती है॥८॥ मंगल उच्चराशि मे या स्वगृही हो तो कार्य की सिद्धि तथा अधिक सुख होता है। यदि मंगल ६।८।१२ भाव मे हो॥९॥ अथवा चन्द्रमा से अशुभ स्थान मे हो तो और षष्ठेश मे दृष्ट हो तो गृह (मकान), क्षेत्र (भूमि) की हानि तथा व्यापार मे भी हानि होती है॥१०॥ परिवार मे कलह(अथवा नौकरोंसे कलह)राजसे विरोध अपने बन्धु का वियोग तथा नित्य बकवाद रूपी कलह॥११॥ सप्तमेश द्वितीय भाव मे तथा अष्टमेश अष्टमभाव मे हो तो विशेष अनिष्ट की सम्भावना है। इस दोष की निवृत्ति के लिए ब्राह्मणो की पूजा तथा दान देना चाहिए॥१२॥

अथ राहुभुक्तिमासाः १८ तत्फलमाह

चन्द्रस्यान्तर्गते राहौ लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ आदौ स्वल्पफलं ज्ञेयं शत्रुपीडा महद्भयम् ॥१३॥ चौराहिराजभीतिश्च चतुष्पाज्जीवपीडनम् ॥ बन्धुनाशं मित्रहानिं मानहानिं मनोव्यथाम् ॥१४॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नादुपचयेऽपि वा ॥ योगकारकसंबन्धे यत्र कार्यार्थसिद्धिकृत् ॥१५॥ नैर्ऋत्ये पश्चिमे भागे कश्चित्प्रभुसमागमम् ॥ वाहनाम्बरलाभं च इष्टकार्यार्थसिद्धिकृत् ॥१६॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ॥ स्थानभ्रंशं मनोदुःखं पुत्रक्लेशं महद्भयम् ॥१७॥ राजकार्यकलापं च दारपीडा महद्भयम् ॥ वृश्चिकादिविषाद्भीतिश्चौराहिनृपपीडनम् ॥१८॥ दायेशात्केंद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥ पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्देवतादर्शनं महत् ॥१९॥ परोपकारधर्मादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ॥ द्वितीयद्यूनराशिस्थे देहबाधा भविष्यति ॥२०॥ छागदानं प्रकुर्वीत देहारोग्यं प्रजायते ॥२१॥

चन्द्रदशा में राहु अन्तर १८ मास फल

चन्द्रमा की दशा में राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र या त्रिकोणस्थान में हो तो दशारम्भ मे कुछ श्रेष्ठ, पश्चात् शत्रुपीडा तथा महान् भय हो॥१३॥ चोर, सर्प तथा राज से भय, गौ आदि पशु को पीडा, बन्धु नाश, मानहानि, मित्रहानि तथा मन मे अशान्ति होती है॥१४॥ *शुभग्रहसे युक्त या दृष्ट हो अथवा लग्नसे उपचय स्थान मे (३।६।१०।११वे) कारकग्रह से* सम्बन्ध हो तो उद्योग की सिद्धि तथा धनलाभ होता है॥१५॥ नैर्ऋत्य दिशा या पश्चिम दिशा में किसी बडे आदमी से मेल हो और उससे इच्छित कार्य की सिद्धि तथा सवारी आदि का लाभ हो॥१६॥ दायेश - चन्द्रमासे ६।८वे हो या १२ वे मे हो और बलरहित हो तो स्थान हानि, मन क्लेश, सन्तान से दुःख, महान् भय॥१७॥ राजकार्य हानि, स्त्री को पीडा, भय, सर्पादि से भय, चोरभय तथा राजा से भी पीडा होती है॥१८॥ चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण मे तीसरे या लाभस्थान मे हो तो पवित्र तीर्थ यात्रा देवदर्शन होता है॥१९॥ परोपकारी कार्य, पुण्य, दान, आदि श्रेष्ठ कार्य होते है। राहु दूसरे या सातवे भाव में हो तो शरीर कष्ट होता है॥२०॥ इसकी शान्ति छाग (बकरा) के दान से होती है और दान के फल से आरोग्यता होती है॥२१॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः १६ तत्फलम्

चन्द्रस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्र त्रिकोणगे ॥ स्वगेहे लाभस्वोच्चे वा राज्यलाभ महोत्सवम् ॥२२॥ वस्त्रालंकारभूषाप्ति राजप्रीतिं धनागमम् ॥ इष्टदेवप्रसादेन गर्भाधानादिकं फलम् ॥२३॥ शुभशोभनकार्याणि गृहेलक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ राजाश्रय धनं भूमिगजवाजिसमन्वितम् ॥२४॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वाऽस्तगते यदि ॥२५॥ पापयुक्तेऽशुभं कर्म गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ स्थानभ्रंशं मनोदुःखमकस्मात्कलहं ध्रुवम् ॥२६॥ गृहक्षेत्रादिनाशं च वाहनाम्बरनाशनम् ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥२७॥ भोजनाम्बरपश्वादि महोत्साहं करोति च ॥ भ्रात्रादि सुखसंपत्तिर्धैर्यं वीर्यपराक्रमम् ॥२८॥ यज्ञवीर्यविवाहश्च राज्यश्रीधनसंपदः ॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा बलवर्जिते ॥२९॥ करोति कुत्सितान्नं च विदेशगमनं तथा ॥ भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तमन्ते क्लेशकरं भवेत् ॥३०॥ द्वितीय-द्यून-नाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥ स्वर्णदानमिति प्रोक्तं सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥३१॥

चन्द्रदशा में गुरु का अन्तर १६ मास फल

चन्द्रदशा में बृहस्पति का अन्तर हो, लग्न से गुरु केन्द्र या त्रिकोण में हो या स्वगृही, उच्च का, लाभ भाव में हो तो राज्यलाभ तथा महोत्सव होता है॥२२॥ वस्त्र, अलंकार, आभूषण की प्राप्ति, राजप्रीति, धनलाभ होता है। इष्टदेव की कृपा से सन्तान सुख होता है॥२३॥ मंगल कार्य सम्पन्न होते हैं। घर में लक्ष्मी की कृपा रहती है। राजा के आश्रय से धन, भूमि तथा सवारी का लाभ होता है॥२४॥ इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं। गुरु यदि लग्न से ६।८।१२ में हो या नीचराशि में अस्त हो॥२५॥ पापग्रह युक्त हो तो अशुभ कार्य होते,है। गुरु-पुत्र या गुरु तथा पुत्र आदि की हानि होती है। स्थानहानि चिन्ता तथा अचानक ही कलह होती है॥२६॥ मकान, भूमि आदि की हानि,सवारी आदि का नाश होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण में तीसरे या लाभ स्थान में हो तो॥२७॥ उत्तम भोजन वस्त्र पशु आदि की प्राप्ति होती है। उत्साह बढता है। भाई आदि से और सम्पत्ति धैर्य बल प्राप्त होता है॥२८॥ यज्ञ आदि पुण्य कार्य, विवाह आदि मंगलकार्य, राजा के समान ऐश्वर्य, धनसम्पत्ति होती है। चन्द्रमा से ६।८।१२ स्थान में तथा बलहीन हो॥२९॥ तो कुभोजन और विदेशयात्रा होती है। अंतर्दशा के आरंभ में शुभ हो और अन्त में क्लेश हो॥३०॥ २।७ का स्वामी यदि गुरु हो तो अपमृत्यु होती है॥ इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनामका पाठ करे या करावे। सुवर्ण का दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है॥३१॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १९ तत्फलम्

चन्द्रस्यान्तर्गते मन्दे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वक्षेत्रस्वांशगे चैव मन्दे तुङ्गांशसंयुते ॥३२॥ शुभदृष्टियुते वाऽपि लाभे वा बलसंयुते ॥ पुत्रमित्रार्थसंपत्तिः शूद्रप्रभुसमागमम् ॥३३॥ व्यवसायात्फलाधिक्यं गृहक्षेत्रादिवृद्धिदम् ॥ पुत्रलाभं च कल्याणं राजानुग्रहवैभवम् ॥३४॥ षष्ठाष्टमव्यये मन्दे नीचे वा धनगेऽपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थे स्नानं चैव तु दर्शनम्

॥३५॥ अनेकजनत्रासश्च शस्त्रपीडा भविष्यति ॥ दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे बलगेऽपि वा ॥३६॥ क्वचित्सौख्य धनाप्तिश्च दारपुत्रविरोधकृत् ॥ द्वितीयद्यूनरन्ध्रस्थे देहबाधा भविष्यति ॥३७॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥ कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥३८॥

चन्द्रदशा मे शनि का अन्तर १९ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे शनि का अन्तर हो और शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे अथवा स्वक्षेत्र या उच्च मे हो एव परमोच्च का हो॥२३॥ तथा शुभ दृष्टि या युक्त हो अथवा बलवान होकर लाभस्थान मे हो तो पुत्र, मित्र, धन, सम्पत्ति प्राप्त होती है। तथा धनी शूद्र (या यवन आदि) से मेल होता है॥३३॥ व्यापार से अधिक लाभ होता है। मकान भूमि आदि की वृद्धि होती है। पुत्रलाभ तथा कल्याण एव राजकृपा से ऐश्वर्य प्राप्त होता है॥३४॥ शनि ६।८।१२ स्थान मे नीचराशि मे, द्वितीय भाव मे हो तो इसके अन्तर मे प्रथम तो पवित्र तीर्थ मे स्नान, देवदर्शन होता है॥३५॥ अनेक शत्रुओ से भय तथा शस्त्राघात होता है। चन्द्रमा से केन्द्र या त्रिकोण राशि मे बलवान् हो॥३६॥ कुछ सुख, धनलाभ होकर स्त्री पुत्र से विरोध होता है। २।७।८ इन स्थानो मे हो तो देहकष्ट होता है॥३७॥ इसकी शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप करे। काली गौ का दान देने से शान्ति और आरोग्यता होती है॥३८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः १७ तत्फलम्

चन्द्रस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वर्क्षे नवांशके सौम्ये तुङ्गे वा बलसंयुते ॥३९॥ धनागमं राजमानं प्रियवस्त्रादि लाभकृत् ॥ विद्याविनोदसद्गोष्ठी ज्ञानवृद्धिः सुखावहा ॥४०॥ सन्तानप्राप्तिः सन्तोषः वाणिज्याद्धनलाभकृत् ॥ वाहनच्छत्रसंयुक्तं नानालंकारभूषितम् ॥४१॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥ विवाहं यज्ञदीक्षां च दानधर्मशुभादिकम् ॥४२॥ राजप्रीतिकरं चैव विद्वज्जनसमागमम् ॥ मुक्तामणिप्रवालानि वाहनाम्बरभूषणम् ॥४३॥ आरोग्यप्रीतिसौख्यं च सोमपानादिकं सुखम् ॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा नीचगेऽपि वा ॥४४॥ तद्भुक्तिर्देहबाधा च कृषिगोभूमिनाशनम् ॥ कारागृहप्रवेशं च दारपुत्रादिपीडनम् ॥४५॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा महद्भयम् ॥ छागदानं प्रकुर्वीत विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥४६॥

चन्द्रदशा मे बुधान्तर १७ मास फल

चन्द्रदशा मे बुधान्तर हो, बुध लग्न मे केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे हो, स्वगृही स्वनवांश, उच्च का शुभराशि मे तथा बली हो॥३९॥ तो धनप्राप्ति,राजमान,सुन्दर वस्त्रादि प्राप्ति विद्या, काव्य विनोद, मित्रगोष्ठी, ज्ञान की वृद्धि, सुख॥४०॥ सन्तानप्राप्ति सन्तोष, व्यापार मे लाभ, सवारी, छत्र, नाना अलंकार की प्राप्ति होती है॥४१॥ दायेश, चन्द्रमा से केन्द्र मे, त्रिकोण मे, लाभस्थान मे या धनभाव मे हो तो विवाह यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म तथा शुभकर्म॥४२॥ राजा से प्रीति, विद्वज्जन का समागम, हीरा मोती की प्राप्ति सवारी, आभूषण, आरोग्यता प्रीति, सुख तथा आनन्दकर पेय आदि की प्राप्ति होती है॥४३॥

चन्द्रमा से ६।८।१२ में या नीचराशि में हो॥४४॥ तो बुधान्तर में देहकष्ट, खेती, पशु, भूमि का नाश होता है। कैदखाने में वास, स्त्रीपुत्र को पीडा होती है॥४५॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वरपीडा तथा महान् भय होता है। उपाय-छाग दान करे या विष्णुसहस्र नाम स्तोत्र का पाठ करे या करावे॥४६॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

चन्द्रस्यान्तर्गते केतौ केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ दुश्चिक्ये बलसंयुक्ते धनलाभं महत्सुखम् ॥४७॥ पुत्रदारादिसौख्यं च विघ्नकर्म करोति च ॥ भुक्त्यादौ धनहानिः स्यान्मध्यगे सुखमाप्नुयात् ॥४८॥ दायेशात्केन्द्रलाभे वा त्रिकोणे बलसंयुते ॥ क्वचित्फलं दशादौ तु ह्यल्पसौख्यं धनागमम् ॥४९॥ गोमहिष्यादिलाभं च भुक्त्यन्तेऽर्थनाशनम् ॥ पापयुक्तेऽथ वा दृष्टे दायेशाद्रन्ध्ररिःफगौ ॥५०॥ हीनशत्रुत्वकार्याणि अकस्मात्कलहं ध्रुवम् ॥ द्वितीयद्यूनराशिस्थे अनारोग्यं महद्भयम् ॥५१॥ मृत्युंजयं प्रकुर्वीत सर्वसम्पत्प्रदायकम् ॥५२॥

चन्द्र दशा में केत्वन्तर ७ मास फल

चन्द्रदशा में केतु का अन्तर हो केतु केन्द्र,लाभ त्रिकोण में तीसरे भाव में, बलवान् हो तो धनलाभ, महान् सुख॥४७॥ स्त्रीपुत्र का सुख तथा कुछ विघ्नकारक भी होता है।अन्तरके आदि में धनहानि मध्य में सुख प्राप्त होता है॥४८॥ चन्द्रमा से केन्द्र में, त्रिकोण में, लाभस्थान में तथा बलवान हो तो दशा के आदि में कुछ कम रूप में सुख, धन की भी साधारण प्राप्ति होती है॥४९॥ गौ, भैंस आदि का लाभ तथा अन्तर के अन्त में धन की हानि होती है। यदि केतु पापग्रह से युक्त अथवा दृष्ट हो तथा चन्द्रमा से ८।१२ में हो तो ॥५०॥ हीन कार्य, शत्रु कार्य, अकस्मात् कलह होती है। द्वितीय सप्तम की राशि में हो तो नीरोगता तथा महान् भय होता है॥५१॥ उपाय-महामृत्युञ्जय जप करने से सब प्रकार शुभ होता है॥५२॥

अथ शुक्रभुक्तिवर्षः १ मासाः ८ तत्फलम्

चन्द्रस्यान्तर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि राज्यलाभं करोति च ॥५३॥ महाराजप्रसादेन वाहनाम्बरभूषणम् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभः स्याद्दारपुत्रादिवर्धनम् ॥५४॥ नूतनागारनिर्माणं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ सुगन्धपुष्पशय्यादिरम्यस्त्र्यारोग्यसम्पदाम् ॥५५॥ दशाधिपेन संयुक्ते देहसौख्यं महत्सुखम् ॥ सत्कीर्तिसुखसम्पत्तिगृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥५६॥ नीचे चास्तगते शुक्रे पापग्रहयुतेक्षिते ॥ भूनाशं पुत्रमित्रादिनाशनं पत्निनाशनम् ॥५७॥ चतुष्पाज्जीवहानिः स्याद्राजद्वारे विरोधकृत् ॥ धनस्थानगते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ॥५८॥ निधिलाभं महत्सौख्यं भूलाभं पुत्रसम्भवम् ॥ भाग्यलाभाधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिकरो भवेत् ॥५९॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च मुक्ताविद्रुमलाभकृत् ॥६०॥ दायेशाल्लाभगे शुक्रे त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च वित्तलाभं महत्सुखम् ॥६१॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ विदेशवासदुःखार्तिर्मृत्युचौरादिपीडनम् ॥६२॥

द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युभयं भवेत् ॥ तद्दोषविनिवृत्त्यर्थं रुद्रजापं च कारयेत्॥६३॥ श्वेतां गां रजतं दद्याच्छांतिमाप्नोत्यसंशयः ॥६४॥

चन्द्रदशा में शुक्रान्तर १ वर्ष ८ मास फल

चन्द्रमा की दशा मे शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र मे त्रिकोण मे, लाभ मे, स्वगृही, उच्च का हो तो राज्यलाभ कारक होता है।।५३।। राजा की कृपा से वस्त्र, भूषण, घोडा आदि की प्राप्ति, स्त्री पुत्र परिवार की वृद्धि।।५४।। नया मकान बनाना, नित्य मिष्टान्न भोजन, बाग की सैर, सुन्दर स्त्री, आरोग्यता आदि की प्राप्ति होती है।।५५।। दशास्वामी चन्द्रमायुक्त हो तो, देहसौख्य, धनप्राप्ति, कीर्ति, सुख, सम्पत्ति, मकान, भूमि आदि की वृद्धि होती है।।५६।। शुक्र नीचराशि मे, अस्त, पापग्रह से दृष्ट या युक्त हो तो भूमिनाश, पुत्र मित्रनाश, भार्यानाश हो।।५७।। पशुहानि, राज मे विरोध हो। शुक्र यदि स्वगृही, उच्च का होकर धनभाव में हो।।५८।। तो धरोहर की प्राप्ति, महान सुख, भूमिलाभ, पुत्रोत्पत्ति होती है। ९।११ के स्वामी से युक्त हो तो भाग्य वृद्धि होती है।।५९।। राजा की कृपा से इष्टसिद्धि, सुख, देवब्राह्मण भक्ति, हीरा मोती आदि की प्राप्ति होती है।।६०।। शुक्र चन्द्रमा से त्रिकोण मे, केन्द्र मे,लाभभाव मे हो तो भूमि, मकान की वृद्धि, धनलाभ, अधिक सुख होता है।।६१।। चन्द्रमा से ६।८।१२ मे पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो विदेशवास, दुःख क्लेश, मृत्यु, चोर तथा सर्पादि से पीडा होती है।।६२।। द्वितीय सप्तमभाव का स्वामी शुक्र हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिए रुद्रमन्त्रजप या रुद्री पाठ तथा श्वेत गौ का दान करे तो निश्चय शान्ति होती है।।६४।।

अथ रविभुक्तिमासाः ६ तत्फलम्

चंद्रस्यांतर्गते भानौ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुते ॥ केंद्रत्रिकोणलाभे वा धने वा सोदरे बले ॥६५॥
नष्टराज्य धनप्राप्तिं गृहे कल्याणशोभनम् ॥ मित्रराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥६६॥
गर्भाधानफलप्राप्तिर्गृहे लक्ष्मीः कटाक्षकृत् ॥ भुक्त्यंते देहआलस्यं ज्वरपीडा भविष्यति ॥६७॥
दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ नृपचौरादिभीतिश्च ज्वररोगादिसम्भवम् ॥६८॥
विदेशगमनं वार्तिं लभते फलवैभवम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ज्वरपीडा भविष्यति ॥
तद्दोषपरिहारार्थं शिवपूजां च कारयेत् ॥६९॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखडे चंद्रांतर्दशाफलकथनं
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥३४॥

चन्द्रदशा में सूर्यान्तर ६ मास फल

चन्द्रदशा मे सूर्य का अन्तर हो, सूर्य उच्च का, स्वगृही केन्द्र मे, त्रिकोण में, लाभ मे, दूसरे या तीसरे भाव में हो।।६५।। तो नष्टराज्य की प्राप्ति, धनलाभ, घर मे सुखशान्ति, मित्र तथा राजा की कृपा से ग्राम लाभ, भूमिलाभ ॥६६।। सन्तान की आशा, घर में लक्ष्मी की स्थिति हो, अन्तर के अन्त मे आलस्य, कर्महीनता, ज्वर, पीडा होती है।।६७।। यदि चन्द्रमा मे

पापयुक्त होकर ६।८।१२ मे हो तो राजा चौर आदि का भय, ज्वर आदि पीडा।।६८।। विदेशयात्रा तथा दुःख होता है। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो ज्वरपीडा होती है। इसकी शान्ति के लिए शिवपूजा करनी चाहिए।।६९।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्र० चन्द्रान्तर्दशाफलकथन
नाम चतुस्त्रिंशोऽध्याय ।।३४।।

अथ कुजदशायां कुजांतरंमा० ४ दि० २७ तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ।। लाभे वा धनसंयुक्ते दुश्चिक्ये धनसंयुते ।।१।।
लग्नाधिपेन संयुक्ते राजाऽनुग्रहवैभवम् ।। लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ।।२।।
पुत्रोत्सवादिसंतोष गृहे गोक्षीरसंकुलम् ।। स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे स्वांशे वा बलसंयुते ।।३।।
गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गोमहिष्यादिलाभकृत् ।। महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिं सुखावहाम् ।।४।।
षष्ठाष्टमव्यये भौमे पापदृग्योगसंयुते ।। मूत्रकृच्छ्रादिरोगश्च प्रेष्ठाधिक्य व्रणाद्भयम् ।।५।।
चौरादिराजपीडा च धनधान्यपशुक्षयम् ।। द्वितीये द्यूननाथे तु देहजाड्य मनोरुजम् ।।६।।
तद्दोषपरिहारार्थं रुद्रजाप्यं च कारयेत् ।। अनड्वाहं प्रदद्याच्च कुजदोषनिवृत्तये ।।७।। आरोग्य कुरुते तस्य सर्वसंपत्तिदायकम् ।।८।।

मगल की दशा मे मगल का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मगल दशा मे मगल का अन्तर हो और मगल लग्न मे केन्द्र मे त्रिकोण मे लाभ मे, दूसरे, तीसरे भाव मे।।१।। लग्नेश से युक्त हो तो राजा की कृपा से सम्पत्ति की वृद्धि हो और घर मे लक्ष्मी स्थिर रहे। नष्ट हुआ ऐश्वर्य और धन का लाभ हो।।२।। पुत्र जन्म का उत्सव हो। घर मे कल्याण, संतोष, गौ आदि हो। मगल उच्च का स्वगृही, अपने नवांश मे तथा बलवान् हो।।३।। तो मकान, भूमि की वृद्धि, गौ, पशु आदि की वृद्धि हो। राजा या बडे आदमी की कृपा से मनोरथ सिद्ध हो।।४।। मगल यदि ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह की दृष्टि या योग हो तो मूत्रकृच्छ्र की बीमारी, घाव से भय हो।।५।। चोर आदि का भय राज से भय, धनधान्य, पशु का क्षय हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो देह जाड्य तथा मन मे अशान्ति हो।।६।। इसकी शान्ति के लिये रुद्र जप करे। लाल बैल का दान करे।।७।। तो मगल का दोष दूर होता है। आरोग्यता होती है तथा सम्पत्ति प्राप्त होती है।।८।।

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना० १८ तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते राहौ स्वोच्चे मूलत्रिकोणगे ।। शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ।।९।।
तत्काले राजसन्मान गृहभूम्यादिलाभकृत् ।। कलत्रपुत्रलाभः स्याद्व्यवसायात्फलाधिकम् ।।१०।।
गंगास्नानफलावाप्ति विदेशगमन तथा ।। षष्ठाष्टमव्यये राहौ पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ।।११।।
चौराहिव्रणभीतिश्च चतुष्पाज्जीवनाशनम् ।। वातपित्तक्षयं चैव कारागृहनिवेशनम् ।।१२।।
धनस्थानगते राहौ धननाशो महद्भयम् ।। द्वितीये सप्तमे वापि ह्यपमृत्युभयं महत् ।।१३।। नागदान

प्रकुर्वीत देवब्राह्मणभोजनम् ॥ मृत्युंजयजपं कुर्यादायुरारोग्यमादिशेत् ॥१४॥

राहु का अन्तर मास १२ दिन १८ फल

मगल की दशा मे राहु का अन्तर हो तथा राहु लग्न से उच्च राशि मे, मूलत्रिकोण मे हो॥९॥ तो दशाकाल मे राजकुल मे सन्मान, मकान, भूमि आदि का लाभ, स्त्रीपुत्र का लाभ तथा व्यापार से अधिक लाभ होता है॥१०॥ गंगा स्नान का फल मिलता है। विदेश की यात्रा होती है। ६।८।१२ मे राहु पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो॥११॥ चोर, सर्प, घाव आदि से भय होता है। चौपाया की हानि, वात पित्त व्याधि तथा कैद होती है॥१२॥ राहु धन स्थान मे हो तो धन का नाश और महान् भय हो। राहु २।७ वे स्थान मे हो तो अकाल मृत्यु का भय हो॥१३॥ उपाय-सुवर्ण सर्प का दान, देवपूजा, ब्राह्मणभोजन, मृत्युञ्जय जप करने से आयु और आरोग्यता होती है॥१४॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

कुजस्यांतर्गते जीवे त्रिकोणे केन्द्रगेपि वा ॥ लाभे वा धनसंयुक्ते तुंगांशे स्वांशगेपि वा ॥१५॥ सत्कीर्ति राजसम्मानं धनधान्यस्य वृद्धिकृत् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिलाभकृत् ॥१६॥ दायेशात्केन्द्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥ भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते वाहनाधिपसंयुते ॥१७॥ लग्नाधिपसमायुक्ते शुभांशे शुभवर्गगे ॥ गृहक्षेत्राभिवृद्धिश्च गृहे कल्याणसंपदः ॥१८॥ देहारोग्यं महत्कीर्तिर्गृहे गोकुलसंग्रहः ॥ चतुष्पाज्जीवलाभःस्याद्व्यवसायात्फलाधिकम् ॥१९॥ कलत्रपुत्रविभवं राजसन्मानवैभवम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वास्तगते यदि ॥२०॥ पापग्रहेणसंयुक्ते दृष्टे वा दुर्बले यदि ॥ चौराहिनृपभीतिश्च पित्तरोगादिसम्भवम् ॥२१॥ प्रेतबाधां भृत्यनाशं सोदराणां विनाशनम् ॥ द्वितीयद्यूनताथे तु अपमृत्युज्वरादिकम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥२२॥

गुरु अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

मगलकी दशामे गुरुका अन्तर हो,गुरु केन्द्र,त्रिकोण या लाभमे अथवा धनस्थानमे हो अपने उच्चांशमे, अपने अंश मे हो॥१५॥तो सत्कीर्ति,राजसम्मान,धनधान्यकी वृद्धि, सुख, सम्पत्ति, स्त्रीपुत्रका लाभ होता है॥मंगलसे गुरु केन्द्रमे,त्रिकोण या लाभमे हो,नवमेश,दशमेश तथा चतुर्थेशसे युक्त हो॥१७॥ लग्नेश से युक्त, अपने अंश मे, शुभ वर्ग मे हो तो मकान, भूमि की वृद्धि होती है तथा कल्याण और सम्पत्ति की वृद्धि होती है॥१८॥ शरीर निरोग, महान् कीर्ति, गौ आदि चौपाया का लाभ, व्यापार से विपुल धन लाभ होता है॥१९॥ स्त्री और पुत्र, वैभव, राज सन्मान होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान मे या नीच का अथवा अस्त हो॥२०॥ पापग्रह से युक्त या दृष्ट हो, बलहीन हो तो चोर, सर्पादि, राजभय होता है। पित्त जनित रोग होता है॥२१॥ प्रेत बाधा, नौकर की हानि, भाइयो का नाश होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर आदि रोग तथा अकाल मृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति के लिये 'शिवसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करना चाहिए॥२२॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १३ दिना० ९ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते मदे स्वर्क्षे केंद्रत्रिकोणगे ॥ मूलत्रिकोणकेन्द्रे वा तुगाशे स्वांशगे यदि ॥२३॥ लग्नाधिपतिना वापि शुभदृष्टियुतेबले ॥ राज्यसौख्य यशोवृद्धि स्वग्रामे धान्यवृद्धिकृत् ॥२४॥ पुत्रपौत्रसमायुक्ते गृहे गोधनसग्रह ॥ स्ववारे राजसन्मान स्वमासे पुत्रवृद्धिकृत् ॥२५॥ नीचादिक्षेत्रगे मन्दे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ म्लेच्छवर्गप्रभुभय धनधान्यादिनाशनम् ॥२६॥ निगड बधन रोगमते क्षेत्रनिवासकृत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु पापयुक्ते महद्भयम् ॥२७॥ धननाश च सचार राजद्वेष मनोरुजम् ॥ चौराग्निनृपपीडा च सहोदरविनाशनम् ॥२८॥ बधुद्वेषकर चैव जीवहानिश्च जायते ॥ अकस्माच्च मृतेर्भीति पुत्रदारादिपीडनम् ॥२९॥ कारागृहादिभीतिश्च राजदण्डो महद्भयम् ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे लाभस्थे वा त्रिकोणगे ॥३०॥ विदेशयान लभते दुष्कीर्तिर्विविधा तथा ॥ पापकर्मरतो नित्य बहुजीवादिहिसक ॥३१॥ विक्रय क्षेत्रहानिश्च स्थानभ्रशो मनोव्यथा ॥ मृधेष्वपजय चैव मूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥३२॥दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा पापसयुते ॥ तद्भुक्तौ मरण ज्ञेय नृपचौरादिपीडनम् ॥३३॥ वातपीडा च शूलाविजातिशत्रुभय भवेत् ॥३४॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥३५॥

शनि का अन्तर मा० १३ दि० ९ फल

मगल की दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि अपनी राशि मे, लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे, मूल त्रिकोण अथवा मूलत्रिकोण से केन्द्र मे, परमोच्च या नवमाश म हो॥२३॥ लग्नेश से युक्त, शुभ, दृष्टियुक्त बलवान् हो तो राजा के समान ऐश्वर्य यश की वृद्धि अपने देश मे ही धन की वृद्धि हो॥२४॥ पुत्र, पौत्र से युक्त, घर मे गौ और धन का सग्रह हो। शनिवार को राज सन्मान हो। माघ, फाल्गुन मे पुत्र हो॥२५॥ शनि यदि ६।८।१२ स्थान म नीच या शत्रु गृह मे हो तो म्लेच्छ वर्ग के अधिकारी से भय हो धनधान्य का नाश हो॥२६॥ कैद या हवालात हो। दशा के अन्त मे रोग हो जिसके कारण अपने घर मे ही रहना हो। द्वितीय सप्तम का स्वामी पापयुक्त हो तो महान् भय हो॥२७॥ धन का नाश राजद्वेष मन मे व्यथा चोर अग्नि, राजपीडा, सहोदर भाई का नाश॥२८॥ बन्धुओ मे द्वेष जीव की हानि अकस्मात् किसी की मृत्यु का भय, स्त्री पुत्र को पीडा हो॥२९॥ कैद होने का भय हो, राजदण्ड का भय हो। मगल से शनि केन्द्र मे, लाभ या त्रिकोण मे हो॥३०॥ तो विदेश यात्रा हो और इस यात्रा मे अनेक प्रकार की बुराइया हो। पाप कर्मरत तथा जीव हिंसक होता है॥३१॥ मकान, भूमि आदि का विक्रय, स्थान हानि, मन मे व्यथा, मुकदमे मे पराजय, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी होती है॥३२॥ मगल से शनि ६।८।१२ स्थान मे, पापग्रह युक्त हो तो राज, चोर से पीडा होती है॥३३॥ वात व्याधि, शूल रोग, शत्रुभय या मृत्यु होती है॥३४॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप होना चाहिए॥३५॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दिना०२७ तत्फलम्

कुजस्यातर्गते सौम्ये लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ सत्कथाश्रवणदान धर्मबुद्धिर्महद्यश ॥३६॥ नीतिमार्गप्रसगश्च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ वाहनाबरपश्वादिराजकर्म सुखानि च ॥३७॥ कृषिकर्मफल सिद्धिर्वारणाबरभूषणम् ॥ नीचे वास्तगते वापि षष्ठाष्टव्ययगेपि वा ॥३८॥

हृद्रोगं मानहानिश्च निगडं बंधुनाशनम् ॥ दारपुत्रार्थनाशं स्याच्चतुष्पाज्जीवनाशनम् ॥३९॥ दशाधिपेन संयुक्ते शत्रुवृद्धिर्महद्भयम् ॥ विदेशगमनं चैव नानारोगास्तथैव च ॥४०॥ राजद्वारे विरोधश्च कलहः सौम्यभुक्तिषु ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा स्वोच्चे युक्तार्थलाभकृत् ॥४१॥ अनेकधननाथत्वं राजसन्मानमेव च ॥ भूपालयोगं कुरुते धनाम्बरविभूषणम् ॥४२॥

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

मंगलकी दशा मे बुध का अन्तर हो, बुध लग्नसे केन्द्र या त्रिकोण मे हो तो सत्कथा श्रवण, अजपा मन्त्र का ग्रहण, धर्म वृद्धि तथा महान् यश होता है॥३६॥ नीति मार्ग मे प्रवृत्ति, मिष्टान्न भोजन, वाहन वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, राजकर्म का सुयोग और सुख होता है॥३७॥ खेती से अच्छा लाभ, सवारी, वस्त्र-भूषण प्राप्त होता है। बुध यदि मगल से ६।८।१२ भावो मे, नीच राशि मे, अस्त हो॥३८॥ तो हृदय रोग, मानहानि, बन्धुनाश, कैद, स्त्रीपुत्र का नाश, चौपाया का नाश होता है॥३९॥ मगल से युक्त हो तो शत्रु वृद्धि, महान् भय, विदेश यात्रा तथा अनेक रोग होते है॥४०॥ राज द्वार मे विरोध, कलह होती है। मगल से बुध केन्द्र, त्रिकोण मे हो, उच्च का हो तो उचित धन का लाभ होता है॥४१॥ अनेक सम्पत्ति का ट्रस्टी, राज सम्मान और धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥४२॥

सूरिवाद्यमृदंगादि सेनापत्यं महत्सुखम् ॥ विद्याविनोदविमला वस्त्रवाहनभूषणम् ॥४३॥ दारपुत्रादिविभवं गृहे लक्ष्मी कटाक्षकृत् ॥ दायेशात्षष्ठरिःफस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते ॥४४॥ तद्दाये मानहानिः स्यात्क्रूरबुद्धिस्तु क्रूरवाक् ॥ चौराग्निनृपपीडा च मार्गे चौरभयादिकम् ॥४५॥ अकस्मात्कलहश्चैव बुधभुक्तौ न संशयः ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु महाव्याधिर्भयंकरा ॥४६॥ अन्नदानं प्रकुर्वीत विष्णोर्नामसहस्रकम् ॥ सर्वसंपत्प्रदं सौख्यं सर्वारिष्टप्रशान्तये ॥४७॥

अनेक प्रकार के वाद्य यन्त्र तथा गान विद्या से सुख तथा सेनापति होता है। स्त्रियो का सुख, वस्त्र भूषण प्राप्ति होती है॥४३॥ स्त्री पुत्र का सुख लक्ष्मी की स्थिरता होती है। मगल से बुध ६।८।१२ स्थान मे, पापग्रह युक्त हो॥४४॥ तो मानहानि क्रूर बुद्धि तथा झगडालू होता है। चोर, अग्नि, राजा से पीडा और मार्ग मे चोर का भय होता है॥४५॥ अकस्मात् कलह होती है। द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो भयकर व्याधि होती है॥४६॥ इसकी शान्ति के लिये अन्नदान, विष्णुसहस्रनाम जप करने से सुख, सम्पत्ति और अरिष्ट शान्ति होती है॥४७॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते केतौ त्रिकोणे केन्द्रगेऽपि वा ॥ दुश्चिक्ये लाभगेवापि शुभयुक्ते शुभेक्षिते ॥४८॥ राजानुग्रहशान्तिश्च बहुसौख्यं धनागमम् ॥ किंचित्फलं दशादौ तु भूलाभं पुत्रलाभकृत् ॥४९॥ राजसलाभकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ योगकारकसस्थाने बलवीर्यसमन्विते ॥५०॥ पुत्रलाभो यशोवृद्धिर्गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥ भृत्यवर्गधनप्राप्तिः सेनापत्यं महत्सुखम् ॥५१॥ भूपालमित्रं कुरुते धनाम्बरविभूषणम् ॥ दायेशात्षष्ठरिःफस्थे रन्ध्रे वा पापसंयुते ॥५२॥

कलहो दन्तरोगश्च चौरव्याघ्रादिपीडनम् ॥ ज्वरातीसारकुष्ठादिदारपुत्रादिपीडनम् ॥५३॥ द्वितीयसप्तमस्थाने देहे व्याधिर्भविष्यति ॥ सम्मान जनसताप धनधान्यस्य प्रच्युतिम् ॥५४॥

केतु का अन्तर मा० ४ दि० २७ फल

मगल की दशा मे केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से त्रिकोण या केन्द्र मे, तीसरे अथवा लाभ स्थान मे हो, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो॥४८॥ तो राजा का अनुग्रह हो, बहुत सुख और धन की प्राप्ति हो। दशा के आदि मे साधारण फल हो। भूमि और पुत्र का लाभ हो॥४९॥ राजा से मैत्री हो। चौपायों का लाभ होता है। यदि केतु कारक स्थान मे बलवान् होकर स्थित हो॥५०॥ तो पुत्र लाभ यश वृद्धि लक्ष्मी की स्थिरता मुनीम आदि नौकर के द्वारा धन की प्राप्ति, राजकुल मे अधिकार तथा महान् सुख होता है॥५१॥ राजा से मैत्री यज्ञ आदि धर्म कार्य होते है। मगल से युक्त ६।८।१२ स्थान म पापग्रह युक्त हो॥५२॥ तो कलह दन्तरोग, चोर, व्याघ्र आदि से पीडा ज्वर अतिसार कुष्ठ आदि की बीमारी तथा स्त्री पुत्र को पीडा होती है॥५३॥ द्वितीय सप्तम स्थान मे हो तो अपने शरीर मे व्याधि परिवार मे सन्ताप, धनधान्य की हानि तथा सन्मान होता है॥५४॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिना० तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते शुक्रे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि शुभस्थानाधिपेऽथ वा ॥५५॥ राज्यलाभं महत्सौख्यं गजाश्वाम्बरभूषणम् ॥ लग्नाधिपेन सबधे पुत्रदाराविवर्धनम् ॥५६॥ आयुषो वृद्धिरैश्वर्यं भाग्यवृद्धिसुखं भवेत् ॥ दायेशात्केन्द्रलाभस्थे लाभे वा धनगेऽपि वा ॥५७॥तत्काले श्रियमाप्नोति पुत्रलाभं महत्सुखम् ॥स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं श्वेतवस्त्रादिलाभकृत् ॥५८॥ महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभदम् ॥ भुक्त्यन्तेफलमाप्नोति गीतनृत्यादिलाभकृत् ॥५९॥ पुण्यतीर्थस्नानलाभं कर्माधिपसमन्विते ॥ पापधर्मदयापुण्य तडाग कारयिष्यति ॥६०॥दायेशाद्रन्ध्ररिष्फस्थे षष्ठे वा पापसयुते॥करोति दु खबाहुल्यं देहपीडा धनक्षयम् ॥६१॥ राजचौरादिभीतिश्च गृहे कलहमेव च ॥ दारपुत्रादिपीडा च गोमहिष्यादिनाशकृत् ॥६२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥ श्वेता गा महिषीं दद्यादायुरारोग्यमादिशेत् ॥६३॥

शुक्र का अन्तर मा० १४ फल

मगल की दशा मे शुक्र का अन्तर हो शुक्र लग्न मे केन्द्र त्रिकोण या लाभ मे हो, उच्च या स्वराशि मे या शुभ स्थानाधिपति हो॥५५॥ तो राज्य लाभ महान् सुख हाथी, घोडा, वस्त्र आभूषण का लाभ होता है। लग्नेश से सम्बन्ध हो तो स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है॥५६॥ आयु वृद्धि, ऐश्वर्य, भाग्य वृद्धि और सुख होता है। मगल से शुक्र केन्द्र, लाभ, केन्द्र म लाभ स्थान या धन स्थान मे हो॥५७॥ तो दशाकाल मे लक्ष्मी की प्राप्ति, पुत्र लाभ, महान् सुख होता है। श्वेत वस्त्र से लाभ होता है। वेतन वृद्धि होती है॥५८॥ राजा की कृपा से ग्राम, भूमि का लाभ होता है। अन्तर दशा के अन्त मे विशेष फल होता है। गाना, बजाना आदि आनन्द के कार्य

होते हैं॥५९॥ पुण्य तीर्थ में स्नान का लाभ होता है। दशमेश से युक्त हो तो दया धर्म आदि पुण्य कार्य होते है॥ जलाशय बनाता है॥६०॥ मंगल से शुक्र ६।८।१२ स्थानों में पापग्रह युक्त हो तो,बहुत क्लेश दायक देह पीडा, धन क्षय॥६१॥ राज-चौर का भय, परिवार में कलह, स्त्री-पुत्र को पीडा, चौपाया की हानि होती है॥६२॥ द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से देह बाधा (बीमारी) होती है। दूध वाली सफेद गौ का दान करने से आरोग्य होता है॥६३॥

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिन ६ तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ मूलत्रिकोणलाभे वा भाग्यकर्मेशसंयुते ॥६४॥
तद्भुक्तौ वाहनं कीर्तिं पुत्रलाभं च विंदति ॥ धनधान्यसमृद्धिः स्याद्गृहे कल्याणसंपदः ॥६५॥
क्षेमारोग्यं महद्धैर्यं राजपूज्यं महत्सुखम् ॥ व्यवसायात्फलाधिक्यं विदेशे राजदर्शनम् ॥६६॥
दायेशात्षष्ठरिःफे वा व्यये वा पापसंयुते ॥ देहपीडा मनस्तापः कार्यहानिर्महद्भयम् ॥६७॥
शिरोरोगं ज्वरादिश्च अतीसारमथापि वा ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु सर्पज्वरविषाद्भयम् ॥६८॥
सुतपीडाकरं चैव शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ॥ देहारोग्यं प्रकुरुते धनधान्यसमृद्धिदम् ॥६९॥

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

मंगल में सूर्य का अन्तर हो सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण लाभ स्थान में, अपने उच्च राशि में स्वगृही, भाग्येश, कर्मेश से युक्त हो॥६४॥ तो वाहन प्राप्ति, कीर्ति, पुत्र लाभ, धनधान्य वृद्धि, घर में कल्याण, सम्पत्ति ॥६५॥ आरोग्यता हिम्मत, सुख, राज पूजा प्राप्त होती है। व्यापार से अधिक लाभ, विदेश यात्रा, राज दर्शन होता है॥६६॥ मंगल से सूर्य ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो तो देह पीडा, मन में चिन्ता, कार्य हानि, महान् भय होता है॥६७॥ सिर में दर्द, ज्वर, अतिसार की बीमारी होती है। यदि सूर्य द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो ज्वर और सर्प के विष से भय होता है॥६८॥ सन्तान को भी पीडा होती है। इसकी यथा विधि शान्ति करने से आरोग्यता धनधान्य की वृद्धि होती है॥६९॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः ७ तत्फलम्

कुजस्यान्तर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ भाग्यवाहनकर्मेशलग्नाधिपसमन्विते ॥७०॥ करोति
विपुलं राज्यं गंधमाल्याम्बरादिकम् ॥ तडागं गोपुरादीनां पुण्यधर्मादिसंग्रहम् ॥७१॥
विवाहोत्सवकर्माणि दारपुत्रादिसौख्यकृत् ॥ पितृमातृसुखावाप्तिं गृहे लक्ष्मीकटाक्षकृत् ॥७२॥
महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिसुखादिकम् ॥ पूर्णचन्द्रे पूर्णफलं क्षीणे स्वल्पफलं भवेत् ॥७३॥
नीचारिस्थेऽष्टमे षष्ठे दायेशाद्व्ययराशिके ॥ मरणं दारपुत्राणां कष्टं भूपतिनाशनम् ॥७४॥
पशुधान्यक्षयं चैव चोरादिरणभीतिकृत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥७५॥
देहजाड्यं मनोदुःखं दुर्गालक्ष्मीजपं चरेत् ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥७६॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भौममहादशान्तरफलकथननाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० ७ फल

मंगल की दशा में चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा स्वराशि में उच्च का या केन्द्र में हो, ४।९।१० के स्वामी से युक्त तथा लग्नेश युक्त हो॥७०॥ तो विपुल ऐश्वर्य, सुन्दर वस्त्रादि की प्राप्ति, तालाब मकान आदि का बनाना, धर्म व्रतादि का संग्रह होता है॥७१॥ विवाहादि उत्सव कार्य, स्त्री-पुत्र का सुख, माता पिता का सुख तथा घर में लक्ष्मी की स्थिरता होती है॥७२॥ राजा की कृपा से मनोरथ की सिद्धि तथा सुख होता है। चन्द्रमा पूर्ण हो तो फल पूर्ण होता है। क्षीण हो तो फल साधारण होता है॥७३॥ चन्द्रमा नीच का, शत्रु गृह में, लग्न से या मंगल से ६।८ स्थान में हो तो स्त्री-पुत्र की मृत्यु, कष्ट, राजकोप, पशु, धान्य का क्षय, चोर, भय, लड़ाई, झगड़ा आदि होते हैं। चन्द्रमा द्वितीय, सप्तम का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७५॥ अथवा देह जाड्य, चिन्ता, दुःख होता है।
उपाय-दुर्गा-लक्ष्मी मन्त्र का जप, श्वेत गौ का दान करने से आरोग्य होता है॥७६॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्रका० भौमदशान्तरफलकथनं नाम पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ॥३५॥

अथ राहुदशायां राहुभुक्तिमासाः ३२ दिना० १२ तत्फलम्

कुलीरे वृश्चिके चैव कन्यायां चापगेऽपि वा ॥ तद्भुक्तौ राजसन्मानं वस्त्रवाहनभूषणम् ॥१॥ व्यवसायात्फलाधिक्यं चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाणं पश्चिमे भागे वाहनाम्बरलाभकृत् ॥२॥ लग्नाद्युपचये राहौ शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥ मित्रांशे तुङ्गलाभेशे योगकारकसंयुते ॥३॥ राज्यलाभं महोत्साहं राजप्रीतिं शुभावहाम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥४॥ षष्ठाष्टमे व्यये राहौ पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥ चौरादिव्रणपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥५॥ राजद्वारजनद्वेष-इष्टबन्धुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥६॥ द्वितीयद्यूननाथे तु सप्तम-स्थानमाश्रिते ॥ सदा रोगं महाकष्टं शान्तिं कुर्याद्यथाविधि ॥ आरोग्यं संपदश्चैव भविष्यन्ति न संशयः ॥७॥

राहुदशा में राहु का अन्तर २ व ८ मा १२ दिन फल

राहु की महादशा में राहु का अन्तर हो, राहु ४।६।९।८ राशियों में हो तो अन्तर्दशा में राजसम्मान, सवारी, भूषण वस्त्र आदि की प्राप्ति होती है॥१॥ व्यापार में लाभ अधिक हो। चौपाया का लाभ हो। पश्चिम दिशा की यात्रा हो। यात्रा से विशेष लाभ हो॥२॥ लग्न आदि केन्द्रस्थान में शुभदृष्टियुक्त या दृष्ट राहु हो। मित्रनवांश में, उच्च राशि में, लाभेश हो, कारकग्रहयुक्त हो॥३॥ तो राज्य से लाभ, महान् उत्साह, राजप्रीति, तथा सुख होता है। घर में सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि॥४॥ राहु यदि ६।८।१२ स्थान में पापग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो चोर आदि द्वारा आघात का भय तथा सर्वत्र अशान्ति होती है॥५॥ राज भय, बन्धु द्वेष, इष्टबन्धु की हानि, स्त्री पुत्र को पीड़ा तथा जनमात्र से पीड़ा होती है॥६॥ राहु २।७ भाव का स्वामी होकर सप्तमभाव में स्थित हो तो सदा रोगी तथा महाकष्ट होता है। इसकी यथाविधि शान्ति करना चाहिए। शान्ति करने से आरोग्यता और संपत्ति होती है॥७॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः २८ दिना० २४ तत्फलम्

राहोरंतर्गते जीवे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि तुंगे स्वांशेगगेपि वा ॥८॥ स्थानलाभं मनोधैर्यं शत्रुनाशं महत्सुखम् ॥ राजप्रीतिकरं सौख्यं महतीव समश्नुते ॥९॥ दिने दिने वृद्धिरपि सितपक्षे शशी यथा ॥ वाहनादिधनं भूरि गृहे गोधनसंकुलम् ॥१०॥ नैर्ऋत्याः पश्चिमे भागे प्रयाणं राजदर्शनम् ॥ युक्तकार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥११॥ उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्रादिकर्मणाम् ॥ वाहनं ग्रामलाभं च देवब्राह्मणपूजनम् ॥१२॥ पुत्रोत्सवादिसंतोषं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥ नीचे वास्तंगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥१३॥ शत्रुक्षेत्रे पापयुक्ते धनहानिर्भविष्यति ॥ कर्मविघ्नो मनोहानिः सा पतिघ्नी भविष्यति ॥१४॥ कलत्रपुत्रपीडा च हृद्रोगं राजकार्यकृत् ॥ दायेशात्केंद्रकोणे वा लाभे वा धनगेपि वा ॥१५॥ दुश्चिक्ये बलसंपूर्णे गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥ भोजनांबरपश्वादिदानधर्मजपादिकम् ॥१६॥ भुक्त्यंते राजकोपश्च द्विमासं देहपीडनम् ॥ ज्येष्ठभ्रातुर्विनाशं च भ्रातृपित्रादिपीडनम् ॥१७॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा रिःफे वा पापसंयुते ॥ तद्भुक्तौ धनहानिः स्याद्देहपीडा भविष्यति ॥१८॥ द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ स्वर्णस्य प्रतिमादानं शिवपूजां च कारयेत् ॥१९॥ देहारोग्यं प्रकुरुते शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ॥२०॥

गुरु का अन्तर व० २ मा० ४ दि० २४ फल

राहु की दशा में गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र में, त्रिकोण में, स्वगृही, उच्चराशि में, अपने नवांश में हो ॥८॥ तो मकान का लाभ, मन में धैर्य, शत्रुनाश, महान् सुख, राज से प्रीति तथा आनन्द होता है॥९॥ शुक्लपक्ष के चन्द्रमा के समान सम्पत्ति की प्रतिदिन वृद्धि होती है। सवारी, धन तथा गौ आदि से घर भरा रहता है॥१०॥ नैर्ऋत्य या पश्चिम दिशा में यात्रा, राजदर्शन, उचित कार्य की सिद्धि होकर पुन स्वदेश में आना होता है॥११॥ ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा, वाहन, ग्रामलाभ तथा देव, ब्राह्मणपूजा॥१२॥ पुत्रोत्सव में आनन्द, नित्य उत्तम भोजन होता है। यदि गुरु नीच राशि में, अस्तगत, ६।८।१२ भाव में हो॥१३॥ शत्रु राशि में, पापग्रह युक्त हो तो धनहानि होती है। काम में बाधा, मन में अशान्ति, यह अन्तर्दशा जातक की नाशकारक होती है॥१४॥ स्त्री, पुत्र को पीड़ा, हृदय रोग तथा राजकार्यकारी होता है। दशास्वामी से केन्द्र, त्रिकोण में, लाभ तथा धनस्थान में॥१५॥ तीसरे स्थान में बलयुक्त हो तो गृह, भूमि की वृद्धि, वस्त्र, भूषण, पशु आदि का लाभ, दान, धर्म, जप आदि पुण्यकार्य होते हैं॥१६॥ अन्तर के अन्त में राजकोप तथा दो मास तक देहपीडा ज्येष्ठभ्राता की मृत्यु, भ्राता, पिता आदि को पीडा होती है॥१७॥ दशास्वामी राहु से ६।८।१२ स्थान में पापयुक्त हो तो धनहानि, देहपीडा होती है॥१८॥ द्वितीय, सप्तम का स्वामी गुरु हो तो अपमृत्यु होती है। उपाय-सुवर्ण मूर्ति (गुरु की) का दान तथा शिव की पूजा-अभिषेक करावे॥१९॥ तो शरीर की आरोग्यता प्राप्त होती है॥२०॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३४ दिना० ६ तत्फलम्

राहोरंतर्गते मंदे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे मूलत्रिकोणे वा दुश्चिक्ये लाभराशिगे ॥२१॥

तद्भुक्तिवाहन सेवा राजप्रीतिकर शुभम् ॥ विवाहोत्सवकार्याणि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः ॥२२॥ आरामकरणे युक्त तडाग कारयिष्यति ॥ शूद्रप्रभुवशादिष्ट लाभ गोधनसग्रहम् ॥२३॥ प्रयाण पश्चिमे भागे प्रभुमूलाद्धनक्षय ॥ देहायास फलाल्पत्व स्वदेशे पुनरेष्यति ॥२४॥ नीचारिक्षेत्रगे मन्दे रध्रे वा व्ययगेपि वा ॥ नीचारौ राजभीतिश्च दारपुत्रादिपीडनम् ॥२५॥ आत्मबधुमनस्ताप दायादजनविग्रहम् ॥ व्यवहारे च कलहमकस्माद्भूषण लभेत् ॥२६॥ दायेशात्षष्ठरिःफे वा व्यये वा पापसयुते ॥ हृद्रोग मानहानि च विवाहे शत्रुपीडनम् ॥२७॥ अन्यदेशादिसार च गुल्मवद्व्याधिभाग्भवेत् ॥ कुभोजन कोद्रवादि जातिदु खाद्भय भवेत् ॥२८॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ कृष्णां गा महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥२९॥

राहुदशा मे शनि का अन्तर व० २ मा० १० दि० ६ फल

राहु की दशा मे शनि का अन्तर हो, लग्न से शनि केन्द्र, त्रिकोण मे, उच्चराशि मे, मूलत्रिकोण मे, तीसरे भाव या लाभराशि मे।।२१।। शनि के अन्तर मे सवारी तथा नौकर चाकरो का सुख होता है। राजा से मैत्री तथा शुभकार्य होता है। विवाह आदि उत्सव के कार्य तथा अनेक पुण्यकार्य होते है।।२२।। बगीचा तथा तालाब करता है। शूद्र स्वामी द्वारा विशेष लाभ तथा गोधन का सग्रह होता है।।२३।। पश्चिम दिशा की यात्रा तथा स्वामी के कारण धनक्षय होता है। देहकष्ट, अधिक फल कम तथा पुन स्वदेश मे वापस आता है।।२४।। शनि यदि नीचराशि मे, शत्रुराशि मे ६।८।१२ भाव म हो तो राजभय तथा स्त्री, पुत्र को पीडा होती है।।२५।। अपने बन्धु तथा मन को असतोष, परिवार मे विग्रह व्यापार में कलह तथा अकस्मात् भूषण का लाभ होता है।।२६।। राहु से शनि ६।८।१२ मे पापयुक्त हो तो हृदय का रोग, मानहानि तथा विवाह मे शत्रुकृत बाधा हो।।२७।। अन्य देश यात्रा तथा उदर आदि मे गुल्मव्याधि होती है। खराब कोद्रव (कोदो) आदि अन्न का भोजन तथा जाति म अपमान का भय होता है।।२८।। २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। काली गौ के दान स आरोग्यता प्राप्त होती है।।२९।।

अथ बुधभुक्तिमासाः ३० दिना० १८ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते सौम्ये भाग्ये वा स्वर्क्षगेपि वा ॥ तुगे वा केद्रराशिस्थे पुत्रे वा बलगेपि वा ॥३०॥
राजयोग प्रकुरुते गृहे कल्याणवर्धनम् ॥ व्यापारेण धनप्राप्तिर्विद्यावाहनमुत्तमम् ॥३१॥
विवाहोत्सवकार्याणि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ सौम्यमासे महत्सौख्य स्ववारे राजदर्शनम् ॥३२॥
सुगधपुष्पशय्यादि स्त्रीसौख्य चातिशोभनम् ॥ महाराजप्रसादेन धनलाभो महद्यश ॥३३॥
दायेशात्केद्रलाभे वा दुश्चिक्ये भाग्यकर्मगे ॥ देहारोग्य हृदुत्साह इष्टसिद्धि सुखावहा ॥३४॥
पुण्यश्लोकयशकीर्तिश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ विवाहो यज्ञदीक्षा च दानधर्मदयादिकम् ॥३५॥
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मदे राशियुतेक्षिते ॥ दायेशात्षष्ठरिःफे वा रध्रे वा पापसयुते ॥३६॥
देवब्राह्मणनिदा च भोगभाग्यविहीनभाक् ॥ सत्यहीनश्च दुर्बुद्धिश्चौराहिनृपपीडनम् ॥३७॥
अकस्मात्कलहश्चैव गुरुपुत्रादिनाशनम् ॥ अर्थव्ययो राजकोपो दारपुत्रादिपीडनम् ॥३८॥
द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्यु तथाऽश्रियम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥
स्वगृह्योक्तविधानेन शातिं कुर्याद्विचक्षण ॥३९॥

राहुदशा में बुधान्तर मा० ३० दि० १८ फल

राहु की दशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से भाग्यस्थान में, स्वराशि में, उच्च में, केन्द्र में, पंचम में, बलवान् होकर स्थित हो॥३०॥ तो राजयोगकारक होता है। घर में कल्याण की वृद्धि तथा व्यापार से धनप्राप्ति एवं विद्या प्राप्ति तथा सवारी प्राप्ति होती है॥३१॥ विवाह आदि उत्सव के कार्य चौपाया (गौ आदि) पशु की प्राप्ति तथा बुध की राशि ३।६ के सौरमास में महान् सुख और बुधवार को राजा या बड़े आदमी से मेल होता है॥३२॥ सुगन्धित पुष्पयुक्त शय्या तथा सुन्दर स्त्री-सुख प्राप्त होता है। राजकृपा से धनलाभ तथा यश प्राप्त होता है॥३३॥ राहु से बुध केन्द्र में, लाभ में, तीसरे ९।१० भाव में हो तो देह में आरोग्यता, हृदय में उत्साह तथा इच्छित कार्य की सुख कर सिद्धि होती है॥३४॥ उसकी कीर्ति तथा यशगान होता है। पुराण आदि सदुपदेशों का श्रवण, विवाह, यज्ञ, दीक्षा, दान, धर्म, दया आदि शुभगुण प्राप्त होते हैं॥३५॥ बुध यदि ६।७।८।१२ स्थान में हो या इनके स्वामी से युक्त या दृष्ट हो अथवा राहु से ६।८।१२ स्थान में पापग्रह युक्त हो॥३६॥ तो देवब्राह्मण की निन्दा,उत्तमभोग तथा भाग्य से हीन होता है। सत्यहीन, दुर्बुद्धि तथा चोर, सर्प, राजा से पीड़ा होती है॥३७॥ अकस्मात् कलह तथा गुरु और पुत्र आदि का नाश होता है॥३८॥ द्वितीयेश तथा सप्तमेश हो तो धनहीन और अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ तथा गृह्यसूत्रोक्त विधान से शान्ति करना चाहिए॥३९॥

अथ केतुभुक्तिमा० १२ दिनानि १८ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते केतौ भ्रमणं राज्यकृद्धनम् ॥ वातज्वरादिरोगश्च चतुष्पाज्जीवहानिकृत् ॥४०॥
अष्टमाधिपसंयुक्ते देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे देहसौख्यं धनागमं ॥
राजसम्मानभूषाप्तिर्गृहे शुभकरो भवेत् ॥४१॥ लग्नाधिपेन संबंधे इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥
लाभाधिपसमायुक्ते लाभो वा भवति ध्रुवम् ॥४२॥ चतुष्पाज्जीवलाभःस्यात्केन्द्रे वाथ त्रिकोणगे
॥ रन्ध्रस्थानगते केतौ व्यये वा बलवर्जिते ॥४३॥ तद्भुक्तौ बहुरोगः स्याच्चोराहिव्रणपीडनम् ॥
पितृमातृवियोगश्च भ्रातृद्वेषं मनोरुजम् ॥४४॥ स्वप्रभोश्च महत्कष्टं वैषम्यं चित्तहिंसकम् ॥
द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं छागदानं च कारयेत् ॥४५॥

राहुदशा में केतु अन्तर १२ मा० १८ दिन फल

राहुकी दशामें केतुका अन्तर हो तो भ्रमण,राजसाहाय्यसे धनप्राप्ति,वातज्वर आदि रोग तथा चौपाया पशु आदि की हानि होती है॥४०॥अष्टमेश युक्त हो तो देहजाड्य तथा क्लेश हो।शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो देहसौख्य, धनप्राप्ति, राजमान्यता, आभूषण प्राप्ति तथा घर में शुभकारी होता है॥४१॥ लग्नेश से युक्त हो तो सुखकर, इष्टसिद्धि होती है। लाभेशयुक्त हो तो निश्चय लाभ होता है॥४२॥ चौपाया जीव का लाभ होता है। यह शुभ फल केतु के केन्द्र या त्रिकोण में होने से होते हैं। केतु ८।१२ में बलहीन होकर स्थित हो॥४३॥ तो अन्तर में अनेक रोग, चोर, सर्प, घाव से कष्ट हो। माता पिता का वियोग हो। भ्रातृद्वेष, चिन्ता हो॥४४॥ अपने स्वामी से कष्ट, विषमता, हिंसावृत्ति होती है। २।७ का स्वामी हो तो देहकष्ट होता है। इसकी शान्ति के लिये छाग (बकरा) का दान करना चाहिए॥४५॥

अथशुक्रभुक्तिमासाः ३६ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते शुक्रे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥४६॥
विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिसंतोष गृहे कल्याणसंभवम् ॥४७॥
सन्मान राजसन्मान राज्यलाभ महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुगांशे स्वांशगेऽपि वा
॥४८॥ नूतन गृहनिर्माण नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसयुक्तभोजनम् ॥४९॥
अन्नदानप्रिय नित्य दानधर्मादिसंग्रहम् ॥ महाराजप्रसादेन वाहनांबरभूषणम् ॥५०॥
व्यवसायात्फलाधिक्य विवाहो मौंजिबंधनम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे नीचे शत्रुगृहे स्थिते ॥५१॥
मंदारफणिसयुक्ते तद्भुक्तौ रोगमादिशेत् ॥ अकस्मात्कलह चैव पितृपुत्रवियोगकृत् ॥५२॥
स्वबंधुजनहानिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥ दायादिकलह चैव स्वप्रभो स्वस्य मृत्युकृत् ॥५३॥
कलत्रपुत्रपीडा च शूलरोगादि संभवम् ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे वा समन्विते ॥५४॥ लाभे
वा धर्मराशिस्थे क्षेत्रपालमहत्सुखम् ॥ सुगंध-वस्त्रशय्यादि गानविद्यापरिश्रमम् ॥५५॥
छत्रचामरवाद्यादिगन्धपद्मसमन्वितम् ॥ दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥५६॥
विषाहिनृपचौरादिमूत्रकृच्छ्रान्महद्भयम् ॥ प्रमेहाद्रुधिर रोग कुत्सितान्न शिरोरुजम् ॥५७॥
कारागृहप्रवेश च राजदंडाद्धनक्षयम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे वा दारपुत्रादिनाशनम् ॥५८॥ आत्मपीडा
भय चैव ह्यपमृत्युस्तथा भवेत् ॥ दुर्गालक्ष्मीजप कुर्यान्मृत्युनाशकरो भवेत् ॥५९॥

राहु मे शुक्र का अन्तर वर्ष ३ मास = फल

राहु की महादशा मे शुक्र का अन्तर हो तथा शुक्रलग्न से केन्द्र त्रिकोण, लाभस्थान मे बलमयुक्त हो तो प्रबल शुभ योग होता है।।४६।। किसी ब्राह्मण के कारण धन की प्राप्ति तथा गाय-भैंस आदि की प्राप्ति होती है। पुत्रजन्म आदि उत्सव घर मे सुख शान्ति हो।।४७।। समाज मे तथा राज मे प्रतिष्ठा, राजा के समान ऐश्वर्य तथा महान् सुख होता है। शुक्र यदि उच्च मे, स्वगृही, परमोच्च मे या अपने नवांश मे हो।।४८।। तो नये मकान बने तथा नित्य मिष्टान्न भोजन, स्त्री, पुत्र का सुख एव मित्रगोष्ठी का सुख होता है।।४९।। नित्य अन्नदान, धर्म होता है। राजा की कृपा से वाहन वस्त्र, भूषण होते है।।५०।। व्यापार से अधिक लाभ तथा विवाह आदि मंगलकार्य, दीक्षा, आदि शुभकार्य होते है।। यदि शुक्र ६।८।१२ मे हो, शत्रुराशि मे हो।।५१।। मंगल, शनि, राहु युक्त हो तो उसके अन्तर मे रोग होता है। अकस्मात् कलह होता है। पिता पुत्र का वियोग होता है।।५२।। अपने बन्धुजन की हानि होती है। स्वजाति से पीडा, परिवार मे कलह तथा गृहस्वामी की मृत्यु होती है।।५३।। स्त्री पुत्र को पीडा, शूलरोग होता है। राहु से शुक्र केन्द्र या त्रिकोण मे हो।।५४।। लाभ मे या नवम मे हो तो बडे अधिकारी के समान सुख हो, सुगंधित वस्त्रयुक्त शय्या तथा गान विद्या का रसिक होता है।।५५।। छत्र-चमर युक्त सिंहासन एव सुगन्ध पुष्पयुक्त रहता है। राहु से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे पापग्रह युक्त हो तो।।५६।। विष, सर्प, राज, चोर से भय तथा मूत्र कृच्छ्र आदि बीमारी मे महान् भय होता है। प्रमेह मे रक्तस्राव तथा निकृष्ट अन्न का भोजन, सिरदर्द।।५७।। कैदखानो मे वास, राजदंड से धनक्षय होता है। द्वितीय सप्तम का स्वामी हो तो स्त्री पुत्र का नाश होता है।।५८।। अपने शरीर मे पीडा, भय, तथा अपमृत्यु होती है। 'दुर्गालक्ष्मी' मन्त्र के जप से रक्षा होती है।।५९।।

अथ रविमुक्तमासाः १० दिनानि २२ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेंद्रगे।। त्रिकोणे लाभगे वापि तुगांशे स्वांशगेऽपि वा ॥६०॥

शुभग्रहेण सदृष्टे राजप्रीतिकरं शुभम् ॥ धनधान्यसमृद्धिश्च ह्यल्पसौख्यं सुखावहम् ॥६१॥
अल्पग्रामाधिपत्यं च स्वल्पलाभो भविष्यति ॥ भाग्यलग्नेशसंयुक्ते कर्मेशेन निरीक्षिते ॥६२॥
राजाश्रयो महाकीर्तिर्विदेशगमनं महत् ॥ देशाधिपत्यभोगं च गजाश्वाम्बरभूषणम् ॥६३॥
मनोऽभीष्टप्रदानं च पुत्रकल्याणसम्भवम् ॥ दायेशादिष्फरन्ध्रस्थे षष्ठे वा नीचगेऽपि वा ॥६४॥
ज्वरातिसाररोगं च कलहं राजविद्विषम् ॥ प्रयाणं शत्रुवृद्धिं च नृपचौराग्निपीडनम् ॥६५॥
दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥ विदेशे राजसन्मानं कल्याणं च शुभावहम् ॥६६॥
द्वितीयद्यूननाथे तु महारोगो भविष्यति ॥ सूर्यप्रमाणशान्तिं च कुर्यादारोग्यसम्भवाम् ॥६७॥

राहुदशा मे सूर्यान्तर मास १० दिन २२ फल

राहु की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो और सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ, स्थानो मे, उच्चराशि, स्वराशि या परमोच्च अथवा अपने नवांश मे हो॥६०॥ शुभग्रह से दृष्ट हो तो राजप्रीति प्राप्त होती है। धनधान्य की वृद्धि, साधारण सुख होता है॥६१॥ साधारण अधिकार, मध्यम लाभ होता है। भाग्येश तथा लग्नेश से युक्त हो, दशमेश से दृष्ट हो॥६२॥ तो राजा का आश्रय, महान् कीर्ति, विदेश यात्रा होती है। देशाधिपति का संयोग होता है तथा हाथी, घोड़ा, आदि आदि ऐश्वर्य होता है॥६३॥ मनोरथ सिद्ध होते हैं, पुत्र का सुख प्राप्त होता है। राहु से सूर्य ६।८।१२ मे नीच राशिगत हो तो॥६४॥ ज्वर, अतिसार रोग, कलह, राजद्वेष, यात्रा, शत्रुवृद्धि, राजा, चोर तथा अग्नि से हानि होती है॥६५॥ राहु से सूर्य केन्द्र, त्रिकोण मे या तीसरे तथा लाभस्थान मे हो तो विदेश मे राजा से सन्मान, कल्याण तथा शुभ होता है॥६६॥ दूसरे सातवे का स्वामी हो तो महारोग होता है। सूर्य की यथायोग्य शान्ति करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥६७॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १८ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते चंद्रे स्वक्षेत्रे स्वोच्चगेऽपि वा ॥ केंद्रत्रिकोणलाभे वा मित्रर्क्षे शुभसंयुते ॥६८॥ राजत्वं राजपूज्यत्वं धनार्थं धनलाभकृत् ॥ आरोग्यभूषणं चैव मित्रस्त्रीपुत्रसम्पदः ॥६९॥ पूर्णचंद्रे पूर्णफलं राजप्रीत्या शुभावहम् ॥ अश्ववाहनलाभं स्याद्गृहक्षेत्रादिवृद्धिकृत् ॥७०॥ दायेशात्सुखभाग्यस्थे केन्द्रे वा लाभगेऽपि वा ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि गृहे कल्याणसम्भवम् ॥७१॥ यद्यत्कार्यार्थसिद्धि स्याद्धनधान्यसुखावहम् ॥ सत्कीर्तिलाभसन्मानं देव्याराधनमाचरेत् ॥७२॥ दायेशाद्व्ययरन्ध्रस्थे व्यये वा बलसंयुते ॥ पिशाचक्षुद्रव्याघ्रादिगृहक्षेत्रार्थनाशनम् ॥७३॥ मार्गे चौरभयं चैव व्रणाधिक्यं महोदरम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु अपमृत्युस्तदा भवेत् ॥७४॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादन्नमारोग्यमाहरेत् ॥७५॥

राहुदशा मे चन्द्रांतर १८ मास फल

राहु की दशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण तथा लाभस्थान मे उच्चराशि का या स्वगृही, मित्रगृही अथवा शुभग्रहयुक्त हो तो॥६८॥ राजा के समान या राजपूज्य तथा धन लाभकारी होता है। आरोग्यता तथा आभूषण की प्राप्ति, मित्र, स्त्री, पुत्र, सम्पत्ति प्राप्त होती है॥६९॥ चन्द्रमा पूर्ण हो तो पूर्णसुख तथा राजा की कृपा से शुभ होता है। घोड़े की सवारी तथा मकान, भूमि की वृद्धि होती है॥७०॥ राहु से चन्द्रमा ४।९ मे केन्द्र मे या लाभ मे हो तो घर मे लक्ष्मी का वास होता है तथा सुख शान्ति रहती है॥७१॥ मनोरथ सिद्ध होते है। धनधान्य का सुख होता है। सत्कीर्ति लाभ सन्मान तथा देवी या देवता का आराधन होता है॥७२॥ राहु से चन्द्रमा ६।८।१२ में बलयुक्त हो तो पिशाच आदि क्षुद्रव्याघ्रादि तथा गृह,

भूमि, धन की हानि होती है॥७३॥ मार्ग मे चोरी तथा फोड़ा-फुन्सी एव उदरवृद्धि होती है। द्वितीय सप्तमाधीश हो तो अपमृत्यु होती है॥७४॥ श्वेत गौ का दान करने से आरोग्यता प्राप्त होती है॥७५॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १२ दिना० १९ तत्फलम्

राहोरन्तर्गते भौमे लग्नाल्लाभत्रिकोणगे ॥ केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ॥७६॥ नष्टराज्यधनप्राप्तिर्गृहक्षेत्राभिवृद्धिकृत् ॥ इष्टदेवप्रसादेन सतानसुखभोजनम् ॥७७॥ क्षिप्रभोज्यान्महत्सौख्यं भूषणाश्वाम्बरादिकृत् ॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥७८॥ रक्तवस्त्रादिलाभः स्यात्प्रयाणं राजदर्शनम् ॥ पुत्रवर्गेषु कल्याणं स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥७९॥ सेनापत्यं महोत्साहं भ्रातृवर्गधनागमम् ॥ दायेशाद्रन्ध्ररिष्फे वा षष्ठे पापसमन्विते ॥८०॥ पुत्रदारादिहानिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ स्थानभ्रंश बधुवर्गदारपुत्रविरोधनम् ॥८१॥ चौराहिव्रणभीतिश्च सोदराणां च पीडनम् ॥ आदौ क्लेशकरं चैव मध्याते सौख्यमाप्नुयात् ॥८२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहालस्यं महद्भयम् ॥ अनड्वाहं च गां दद्यादारोग्यं च भविष्यति ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेपूर्वखण्डे विशोत्तर्यां राहोरन्तर्दशाफलकथनं नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

राहुदशा मे भौमान्तर मास १२ दिन १८ फल

राहु की महादशा मे मगल का अन्तर हो और मगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण मे शुभग्रह युक्त उच्च का या स्वगृही हो॥७६॥ तो नष्टराज्य तथा धनप्राप्ति हो। मवान भूमि की वृद्धि हो। इष्टदेव की कृपा से पुत्र सन्तान का सुख तथा सुन्दर भोजन हो॥७७॥ भोग सामग्री से महान् सुख, भूषण घोडा आदि की सवारी हो। राहु से मगल केन्द्र त्रिकोण लाभ तथा तृतीयभाव मे हो॥७८॥ तो लाल वस्त्र से लाभ हो यात्रा तथा राजदर्शन एव पुत्रवर्ग मे कल्याण तथा अपने स्वामी से महान् सुख होता है॥७९॥ सेनापतित्व महान उत्साह हो भ्रातृवर्ग से धनप्राप्ति हो। राहु से मगल ६।८।१२ मे पापग्रह युक्त हो॥८०॥ तो स्त्री पुत्र की हानि भ्राता से पीडा स्थानहानि तथा बधुवर्ग स्त्रीपुत्र से विरोध होता है॥८१॥ चोर सर्प फोडा-फुन्सी का भय, भ्राताओ को पीडा होती है। अन्तर के आदि मे क्लेश तथा मध्य और अन्त मे सुख होता है॥८२॥ द्वितीय सप्तम का स्वामी होने से आलस्य तथा भय होता है। बैल का दान करने से आरोग्यता होती है॥८३॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भाषप्रका० विशोत्तरीदशायां राहोरन्तर्दशा कथन नाम षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥३६॥

अथ गुरुदशायां गुरुभुक्तिमासाः २५ दिना० १८ तत्फलम्

स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ अनेकराजाधीशश्च सपत्नो राजपूजितः ॥१॥ गोमहिष्यादिलाभश्च वस्त्रवाहनभूषणम् ॥ नूतनस्थाननिर्माणं हर्म्यप्राकारसयुतम् ॥२॥ गजाश्वैश्वर्यसपत्तिर्भाग्यकर्माणि सयुते ॥ ब्राह्मणप्रभुसन्मानं समानप्रभुदर्शनम् ॥३॥ स्वप्रभोः स्वफलाधिक्यं दारपुत्रादिलाभकृत् ॥ नीचांशे नीचराशिस्थे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥४॥

नीचसंग महादुःखं दायादजनविग्रहम् ॥ कलहं न विचारोऽस्य स्वप्रभुश्चापमृत्युकृत् ॥५॥
पुत्रदारवियोगं च धनधान्यार्थहानिकृत् ॥ सप्तमाधिपदोषेण देहबाधा भविष्यति ॥६॥
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥ रुद्रजाप्यं च गोदानं कुर्यादिष्टं समाप्नुयात् ॥७॥

गुरुमहादशा मे गुरु का अन्तर मा० २५ दि० १८ फल

गुरुमहादशा मे गुरु का ही अन्तर हो और गुरु लग्न से केन्द्र त्रिकोण मे उच्चराशि मे, स्वराशि मे हो तो अनेक राजाओ का राजा ऐश्वर्यवान् राजपूज्य होता है॥१॥ गौ, भैंस आदि का लाभ, वस्त्र, वाहन, भूषण का लाभ नये महल तथा अन्य स्थानो का निर्माण होता है॥२॥ हाथी, घोडे रहे, इतना ऐश्वर्य, महान् सम्पत्ति सम्पन्न होता है। ब्राह्मण, साधु का सम्मान, राजाओ से मित्रता होती है॥३॥ अपने स्वामी से अधिक फल होता है। स्त्री, पुत्र का लाभ होता है। बृहस्पति यदि नीचग्रह के साथ हो नीच नवमाश मे हो ६।८।१२ राशि मे हो॥४॥ तो नीच जाति के मनुष्यो से संग महान् दुःख परिवार मे विग्रह तथा कलह और इतने नीच विचार हो जाते है कि अपने स्वामी को मारने मे भी नही हिचकते॥५॥ स्त्री, पुत्र से वियोग, धनधान्य की हानि होती है। गुरु यदि सप्तमेश हो तो देह बाधा होती है॥६॥ इसकी शान्ति के लिये 'शिवसहस्रनाम' का पाठ, रुद्र जप तथा गोदान करे तो इच्छित मनोरथ सिद्ध हो॥७॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३० दिना० १२ तत्फलम्

जीवस्यान्तर्गते मंदे स्वोच्चे स्वक्षेत्रमित्रगे ॥ लग्नात्केंद्रत्रिकोणस्थे लाभे वा बलसंयुते ॥८॥
राज्यलाभं महत्सौख्यं वस्त्राभरणसंयुतम् ॥ धनधान्यादिलाभं च स्त्रीलाभं बहुसौख्यकृत् ॥९॥
वाहनाबरपश्वादिभूलाभं स्थानलाभगम् ॥ पुत्रमित्रादिसौख्यं च नरवाहनयोगकृत् ॥१०॥
नीलवस्त्रादिलाभश्च नीलाश्वं लभते च सः ॥ पश्चिमां दिशमाश्रित्य प्रयाणं राजदर्शनम् ॥११॥
अनेकजनलाभं च निर्दिश्यं मन्दभुक्तिषु ॥ लग्नात्षष्ठाष्टमे मन्दे व्यये नीचेऽस्तगेऽप्यरौ ॥१२॥
धनधान्यादिनाशश्च ज्वरपीडा मनोरुजम् ॥ स्त्रीपुत्रादिषु पीडा वा व्रणान्यधिकमुद्भवेत् ॥१३॥
गृहे त्वशुभकार्याणि भृत्यवर्गादि पीडनम् ॥ गोमहिष्यादिहानिश्च बंधुद्वेषो भविष्यति ॥१४॥
दायेशात्केन्द्रकोणस्थे लाभे वा धनगेऽपि वा ॥ भूलाभमर्थलाभश्च पुत्रलाभसुखं भवेत् ॥१५॥
गोमहिष्यादिलाभश्च शूद्रमूलाद्धनप्रदम् ॥ दायेशाद्रिपुरंध्रस्थे व्यये वा पाप संयुते ॥१६॥
धनधान्यादिनाशं च बंधुमित्रविरोधकृत् ॥ उद्योगभंगो देहार्ति स्वजनानां महद्भयम् ॥१७॥
द्विसप्तमाधिपे मंदे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥१८॥ कृष्णां गां महिषीं दद्याद्दानेनारोग्यमादिशेत् ॥१९॥

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर मा० ३० दि० १२ फल

बृहस्पति की दशा मे शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे हो तथा उच्च का स्वक्षेत्री या मित्र राशि मे हो एवं बलवान् हो॥८॥ तो राज्य लाभ, महान् सौख्य, वस्त्र आभरण की प्राप्ति, धन धान्य का लाभ, स्त्रीलाभ तथा बहुत सुख होता है॥९॥ वाहन, वस्त्र, पशु भूमि, स्थान, मकान का लाभ होता है॥ पुत्र, मित्र का सुख होता है॥ नर

वाहन (पालकी, रिक्सा) का योग होता है॥१०॥ नीले रग के उत्तम वस्त्र की प्राप्ति तथा नीले रग का घोडा प्राप्त होता है॥ पश्चिम दिशा की यात्रा तथा गजदर्शन होता है॥११॥ अनेक सवारी भी प्राप्त होती है। यदि शनि लग्न से ६।८।१२ स्थान मे नीचराशि का अथवा शत्रु राशि मे तथा अस्त हो॥१२॥ तो धनधान्य का नाश, ज्वर पीडा, मन मे चिन्ता, स्त्री पुत्र को रोग, फोडा, फुन्सी, दर्द आदि की बिमारी होती है॥१३॥ घर मे अशुभ कार्य, नौकरो मे बीमारी, गौ आदि की हानि तथा बन्धुओ से द्वेष होता है॥१४॥ वृहस्पति से यदि शनि केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनभाव मे हो तो भूमि और धन का लाभ तथा पुत्र का लाभ होता है॥१५॥ गौ भैंस आदि चौपाया का लाभ होता है। किसी शूद्र जाति के पुरुष द्वारा लाभ होता है॥ गुरु से शनि ६।८।१२ मे पापग्रहयुक्त हो॥१६॥ तो धनधान्य का नाश, भाई और मित्र से विरोध, व्यापार भग देह मे पीडा स्वजनो से महान् भय होता है॥१७॥ शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये विष्णुसहस्रनाम का पाठ॥१८॥ तथा काली गौ का दान करे॥१९॥

अथ बुधभुक्तिमासा २७ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि दशाधिपसमन्विते ॥२०॥
अर्थलाभं देहसौख्यं राज्यलाभं महत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन इष्टसिद्धिः सुखावहा ॥२१॥
वाहनाम्बरपश्वादिगोधनैस्सकुलं गृहम् ॥ महीसुतेन संदृष्टे शत्रुवृद्धिः सुखक्षयम् ॥२२॥
व्यवसायात्फलं नेष्टं ज्वरातीसारपीडनम् ॥ दायेशाद्भाग्यकोणे वा केन्द्रे वा तृगनायके ॥२३॥
स्वदेशे धनलाभश्च पितृमातृसुखावहम् ॥ गजवाजिसमायुक्तो राजमित्रप्रसादकः ॥२४॥

गुरु दशा मे बुधान्तर मा० २७ दि० ६ फल

गुरु दशा मे बुध का अन्तर हो बुध लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभ म उच्च राशि का या स्वगृही तथा गुरु युक्त हो॥२०॥ तो धन लाभ देह सौख्य राज्यलाभ महान् सुख राजा की कृपा से मनोरथ पूर्ण होता है॥२१॥ सवारी गौ आदि पशु होते है। मगल की दृष्टि हो तो शत्रु वृद्धि तथा सुख हानि होती है॥२२॥ व्यापार म धन हानि ज्वर अतिसार की बीमारी होती है। गुरु से बुध केन्द्र त्रिकोण तथा भाग्य स्थान म हो॥२३॥ तो अपने देश म ही धन लाभ माता पिता का सुख, हाथी घोडा युक्त सवारी राजा की मित्रता प्राप्त होती है॥२४॥

दायेशात्षष्ठरन्ध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ शुभदृष्टिविहीनश्चेद्धनधान्यपरिच्युतिः ॥२५॥
विदेशगमनं चैव मार्गे चौरभयं तथा ॥ व्रणदाहाक्षिरोगश्च नानादेशपरिच्युतम् ॥२६॥
लग्नात्षष्ठाष्टरिःफे वा व्यये वा पापसंयुते ॥ अकस्मात्कलहश्चैव गृहे निष्ठुरभाषणम् ॥२७॥
चतुष्पाज्जीवहानिश्च व्यवहारस्तथैव च ॥ अपमृत्युभयं चैव शत्रुणा कलहो भवेत् ॥२८॥
शुभदृष्टौ शुभैर्युक्ते दारसौख्यं धनागमम् ॥ आदौ शुभं देहसौख्यं वाहनाम्बरलाभगम् ॥२९॥
अंते तु धनहानिश्च स्वात्मसौख्यं च जायते ॥ द्वितीयद्यूननाथे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥३०॥
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसहस्रकं जपेत् ॥ बुधप्रीतिकरं चैव दानं शांतिं च कारयेत् ॥
आयुर्वृद्धिकरं चैव सर्वसौभाग्यसंपदम् ॥३१॥

गुरु से बुध ६।८।१२ मे पापयुक्त शुभ दृष्टि रहित हो तो धनधान्य की हानि होती है॥२५॥ विदेश यात्रा, मार्ग मे चोरी, घात, अग्नि से भय, आख मे रोग, अनेक देशो मे परिभ्रमण होता है॥२६॥ बुध यदि लग्न से ६।८।१२ में पापग्रह युक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा रोषपूर्ण व्यवहार होता है॥२७॥ चौपाया जीव की हानि, व्यापार मे हानि, अपमृत्यु का भय, शत्रु से कलह होती है॥२८॥ यदि बुध शुभग्रह से युक्त और दृष्ट भी हो तो दशा के आरभ मे स्त्री को सुख, धनलाभ आरोग्यता, वाहन आदि का लाभ होता है॥२९॥ दशा के अन्त मे धन हानि होती है। यदि बुध २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिये 'विष्णु सहस्रनाम' का जप तथा दान करे तो आयु की वृद्धि तथा सुख-सम्पत्ति प्राप्त होती है॥३०॥३१॥

अथ केतुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

जीवस्यान्तर्गते केतौ शुभग्रहसमन्विते ॥ अन्यसौख्यधनावाप्ति कुत्सितान्नस्य भोजनम् ॥३२॥
परान्नं चैव श्राद्धान्नं पापमूलाद्धनानि च ॥ लाभेशाद्रिपुरन्ध्रस्ते व्यये वा पापसंयुते ॥३३॥
राजकोप धनच्छेद बन्धन रोगपीडनम् ॥ कलहानि पितृद्वेषो भ्रातृद्वेषो मनोरुज ॥३४॥
दायेशात्सुतभाग्यस्थे वाहने कर्मगेऽपि वा॥ नरवाहनयोगश्च गजाश्वाम्बरसंकुलम् ॥३५॥
महाराजप्रसादेन इष्टकार्यार्थलाभकृत् ॥ व्यवसायात्फलाधिक्य गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥३६॥
यवनप्रभुमूलाद्वा वस्त्रभूषादिलाभकृत् ॥ द्वितीयद्यूनरन्ध्रे तु देहबाधा भविष्यति ॥३७॥
छागदान प्रकुर्वीत मृत्युंजयजप चरेत् ॥ सर्वदोषोपशमनीं शांति कुर्याद्विधानतः ॥३८॥

गुरुदशा मे केतु का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

गुरुदशा मे केतु का अन्तर हो और केतु शुभग्रहयुक्त हो तो अन्य व्यक्ति के साहाय्य से सुख और धन की प्राप्ति होती है तथा निकृष्टभोजन प्राप्त होता है॥३२॥ धर्म में प्राप्त अथवा श्राद्धीय-भोजन प्राप्त होता है। पापदोष से धन हानि होती है। गुरु से केतु ६।८।१२ मे पापयुक्त हो तो॥३३॥ राजकोप, धनहानि, बधन, रोग तथा पीडा, बलहानि, पिता तथा भाई से द्वेष, मन मे अशान्ति होती है॥३४॥ गुरु से केतु ५।९।४।१० स्थान मे हो तो हाथी, घोडे, पालकी (मोटर) युक्त होता है॥३५॥ राज साहाय्य से इच्छित लाभ व्यापार म अधिक लाभ, गौ भैस आदि का लाभ॥३६॥ यवन जाति के अधिकारी द्वारा लाभ, वस्त्रभूषण आदि का लाभ होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥३७॥ शान्ति के लिए छाग (बकरा) का दान, मृत्युञ्जय मन्त्र जप कर और सर्वदोष नाशक शान्ति करें॥३८॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३० दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यान्तर्गते शुक्रे भाग्यकेन्द्रेशसंयुते ॥ लाभे वा तुङ्गराशिस्थे स्वक्षेत्रे शुभसंयुते ॥३९॥
नरवाहनयोगश्च गजाश्वाम्बरसंयुते ॥ महाराजप्रसादेन देशाधिक्य महत्सुखम् ॥ नीलाम्बराणि
शस्त्राणि लाभश्चैव भविष्यति ॥४०॥ पूर्वस्या दिशि आश्रित्य प्रयाणं धनलाभगम् ॥ कल्याण
च महाप्रीति पितृमातृसुखावहा॥४१॥ देवतागुरुभक्तिश्च अन्नदान महत्तया ॥
तडागगोपुरादीनि कृत्वा पुण्यानि भूरिशः ॥४२॥ षष्ठाष्टमव्यये नीचे दायेशाद्वा तथैव च ॥

कलहो बंधुवैषम्यं दारपुत्रादिपीडनम् ॥४३॥ मंदारराहुसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम् ॥ स्त्रीमूलात्कलहं चैव श्वशुरात्कलह तथा ॥४४॥ सोदरेण विवादः स्याद्धनधान्यपरिच्युतिः ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे धने वा भाग्यगेऽपि वा ॥४५॥ धनधान्यादिलाभश्च स्त्रीलाभं राजदर्शनम् ॥४६॥

गुरुदशा मे शुक्र का अन्तर मास ३० दि. ० फल

गुरुमहादशा मे शुक्र का अन्तर हो, शुक्र भाग्येश तथा केन्द्रेश से युक्त हो, लाभभाव मे या पश्चमभाव मे हो तथा स्वगृही, शुभग्रह युक्त हो तो॥३९॥ नरवाहन (पालकी या रिक्सा) का योग तथा हाथी, घोडा, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है। राजकृपा से अधिकार भूमि महान् सुख, नीलवर्ण पोशाक, तथा हथियार प्राप्त होते है॥४०॥ पूर्वदिशा मे यात्रा, धनलाभ, कल्याण तथा समाज मे प्रेम एव मातापिता को सुख होता है॥४१॥ देवता, गुरु मे भक्ति तथा अन्नदान, तालाब, महल, मन्दिर आदि का पुण्य प्राप्त होता है॥४२॥ बृहस्पति से शुक्र ६।८।१२ मे नीच राशि का हो अथवा लग्न से हो तो कलह, बन्धुओ मे वैमनस्य, स्त्री पुत्र को पीडा होती है।॥४३॥ मगल, शनि राहु युक्त हो तो घर मे कलह तथा राजवर्ग से विग्रह होता है। विशेष करके स्त्री के कारण कलह और श्वशुर से भी कलह होता है॥४४॥ भाई से विवाद, धन सम्पत्ति की हानि होती है। यदि शुक्र, गुरु से केन्द्र, धनस्थान, भाग्यस्थान मे हो॥४५॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, स्त्री लाभ तथा राजदर्शन होता है॥४६॥

वाहनं पुत्रलाभ च पशुवृद्धिमहत्सुखम् ॥ गीतवाद्यप्रसंगाद्विविद्वज्जनसमागमम् ॥४७॥ दिव्यान्न भोजन सौख्यं स्वबंधुजनपोषकम् ॥ द्विसप्तमाधिपे शुक्रे तद्दशायां युतेक्षिते ॥४८॥ अपमृत्युभय तस्य स्त्रीमूलादौषधादिभिः ॥ तस्य रोगस्य शात्यर्थं शातिकर्म समाचरेत् ॥४९॥ श्वेतां गा महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५०॥

सवारी, पुत्र लाभ, पशु वृद्धि, महान् सुख होता है। कवि, गायक, वादक, पण्डित गोष्ठी एव मित्र गोष्ठी होती रहती है॥४७॥ उत्तम भोजन सुख, परिवार सुख होता है। शुक्र २।७ का स्वामी हो, पापयुक्त तथा दृष्ट हो॥४८॥ अपमृत्यु का भय और यह अपमृत्यु भी किसी स्त्री द्वारा औषधि मे विष देने से होती है। इसकी शान्ति के लिये ग्रह शान्ति करना चाहिए तथा सफेद गौ का दान करे तो आयु वृद्धि और आरोग्यता होती है॥४९॥५०॥

अथ रविभुक्तिमासाः ९ दिना० १८ तत्फलम्

जीवस्यातर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ॥ केन्द्रेवाथ त्रिकोणे च दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥५१॥ भाग्ये वा बलसंयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ॥ तत्काले धनलाभः स्याद्राजसन्मानवैभवम् ॥५२॥ वाहनाबरपश्वादिभूषणं पुत्रसंभवम् ॥ मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वकार्ये शुभावहम् ॥५३॥ षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ॥शिरोरोगादिपीडा च ज्वरपीडा तथैव च ॥५४॥ सत्कर्मणि विहीनत्व पापकर्म तथैव च ॥ सर्वत्रजनविद्वेषो ह्याप्तबंधुवियोगकृत् ॥५५॥ अकस्मात्कलह चैव जीवस्यांतर्गते रवौ ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहपीडा भविष्यति ॥५६॥

तद्दोषपरिहारार्थमादित्यहृदयं जपेत् ॥ सर्वपीडोपशमनं सूर्यप्रीतिं च कारयेत् ॥५७॥

गुरु दशा में सूर्य का अन्तर मा० ९ दि. १८ फल

बृहस्पति की दशा मे सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र या त्रिकोण मे, तीसरे या लाभ मे, उच्च का या स्वगृही हो अथवा बलवान् होकर भाग्य स्थान मे हो अथवा पूर्वोक्त प्रकार से बृहस्पति से ऐसा योग हो तो इस अन्तर मे धन का लाभ, ऐश्वर्य, राज सम्मान होता है॥५१॥५२॥ सवारी, गौ आदि पशु, सम्पत्ति तथा पुत्र होता है। किसी मित्र के कारण उन्नति, मनोरथ पूर्ति तथा समस्त कार्य सिद्ध होते हैं॥५३॥ सूर्य लग्न से या बृहस्पति से ६।८।१२ मे हो तो सिर दर्द, ज्वर पीडा होती है॥५४॥ धार्मिक कार्य की हानि, पापकर्म की वृद्धि, समाज विरोध, परिवार मे कलह होता है। तथा अकस्मात् विशेष कलह होता है॥५५॥ सूर्य यदि २।७ का स्वामी हो तो देह पीडा होती है॥५६॥ इसकी शान्ति के लिये 'आदित्य हृदय' का पाठ तथा हवनादि करे॥५७॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १६ दिनानि० तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते चंद्रे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वक्षेत्रराशिस्थे पूर्णचंद्रबलैर्युते ॥५८॥
दायेशाच्छुभराशिस्थे राजसन्मानवैभवम् ॥ दारपुत्रादिसौख्यं च क्षीराणां भोजनं तथा ॥५९॥
सत्कर्म च तथा कीर्तिः पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ महाराजप्रसादेन सर्वसौख्य धनागमम् ॥६०॥
अनेकजनसौख्यं च दानधर्मादिसंग्रहः ॥ षष्ठांष्टमव्यये चंद्रे त्रिकोणे पापसंयुते ॥६१॥
दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ मानार्थबंधुहानिश्च विदेश परिविच्युतिः ॥६२॥
नृपचौराग्निपीडा च दायादिजनविड्वरम् ॥ मातुलादिवियोगश्च मातृपीडा तथैव च ॥६३॥
द्वितीयषष्ठयोरीशे देहपीडा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गापाठं च कारयेत्॥६४॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० १६ फल

गुरु महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा लग्न से या बृहस्पति से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान में हो, स्वगृही या उच्च का अथवा शुभ राशि मे हो॥५८॥ तो राजा के समान वैभव, स्त्रीपुत्र का सुख, प्रतिदिन दूध का भोजन प्राप्त होता है॥५९॥ सत्कर्म तथा कीर्ति, पुत्र पौत्र की वृद्धि, राजा की कृपा से धन लाभ और सर्वसुख होता है॥६०॥ दान आदिक धर्म के कार्य होते है, जिससे समाज का कल्याण होता है। यदि चन्द्रमा लग्न से ६।८।१२ मे या त्रिकोण में पापग्रह युक्त हो॥६१॥ अथवा बृहस्पति से ६।८।१२ मे बलहीन हो तो प्रतिष्ठा, धन और बन्धु की हानि होती है। विदेश यात्रा होती है॥६२॥ राज, चौर मे पीडा होती है। परिवार मे विग्रह, मामा पक्ष का वियोग तथा माता को पीडा होती है॥६३॥ चन्द्रमा यदि २।७ का स्वामी हो तो देह, पीडा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गा पाठ करना चाहिए॥६४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि ६ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुङ्गांशे स्वांशगेऽपिवा

॥६५॥ विद्याविवाहकार्याणि ग्राम भूम्यादिलाभकृत् ॥ जनसामर्थ्यमाप्नोति सर्वकार्यार्थसिद्धिद म् ॥६६॥ दायेशात्केन्द्रलाभस्थे लाभे वा धनगेऽपि वा ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे धनधान्यादिसंपदम् ॥६७॥ मिष्टान्नदानविभवं राजप्रीतिकरं शुभम् ॥ स्त्रीसौख्यं च सुताप्तिः पुण्यतीर्थफलप्रदम् ॥ ६८॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा नीचगेऽपि वा ॥ पापयुतेक्षिते वापि धान्यार्थगृहनाशनम् ॥६९॥ नानारोगभयं दुःखं नेत्ररोगादिसंभवम् ॥ पूर्वार्द्धे क्लेशमधिकमपरार्द्धे महत्सुखम् ॥७०॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्यं मनोरुजम् ॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्प्रदायकम् ॥७१॥

मंगल का अन्तर मा० ११ दि० ६ फल

बृहस्पति की दशा मे मगल का अन्तर हो, मगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण मे उच्च राशि का, स्वगृही या परमोच्च हो अथवा अपने नवाश मे हो॥६५॥ तो विद्या प्राप्ति, विवाह कार्य, ग्राम भूमि का लाभ तथा जनबल प्राप्त होता है जिससे सब कार्य सिद्ध होते है॥६६॥ बृहस्पति से केन्द्र तथा लाभ स्थान मे, धन स्थान मे, शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है॥६७॥ मिष्टान्न, दान, वैभव, राजप्रीति, स्त्री सौख्य, पुत्र प्राप्ति तथा तीर्थयात्रा होती है॥६८॥ बृहस्पति से मगल ६।८।१२ स्थान मे नीच राशि गत हो, पापयुक्त या दृष्ट हो तो धन सम्पत्ति और मकान का नाश होता है॥६९॥ अनेक रोग से भय, दु ख, नेत्र रोग भी सभव है। अन्तर के पूर्वार्ध मे अधिक क्लेश हो। उत्तरार्ध मे सुख हो॥७०॥ मगल यदि २।७ का स्वामी हो तो वात व्याधि, क्लेश होता है। वैल का दान करने से सुख सम्पत्ति होती है॥७१॥

अथ राहुभुक्तिमासाः २८ दिनानि २४ तत्फलम्

जीवस्यांतर्गते राहौ स्वोच्चे वा केंद्रगेऽपि वा ॥ मूलत्रिकोणभाग्ये च केंद्राधिपसमन्विते ॥७२॥ शुभयुक्तेक्षिते वापि योगप्रीति समादिशेत् ॥ भुक्त्यादौ शरमासांश्च धनधान्यपरिभ्रमम् ॥७३॥ देशग्रामाधिकारं च यवनप्रभुदर्शनम् ॥ गृहे कल्याणसंपत्तिर्बहुसेनाधिपत्यताम् ॥७४॥ दूरयात्राधिगमनं पुण्यधर्मादिसंग्रहः ॥ सेतुस्नानफलावाप्तिरिष्टसिद्धिसुखावहम् ॥७५॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा पापसंयुते ॥ चौराहिव्रणभीतिश्च राजवैषम्यमेव च ॥७६॥ गृहे कर्मकलापेन व्याकुले भवति ध्रुवम् ॥ सोदरेण विरोधः स्याद्दायादिजनविग्रहम् ॥७७॥ गृहे त्वशुभकार्याणि दुःस्वप्नादिभयं ध्रुवम् ॥ अकस्मात्कलहश्चैव क्षुद्रशून्यादिरोगकृत् ॥७८॥ द्विसप्तमस्थिते राहौ देहबाधां विनिर्दिशेत् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥७९॥ छागदानं प्रकुर्वीत सर्वसौख्यादिमादिशेत् ॥८०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखडे विंशोत्तर्यां गुरोरंतर्दशाफलकथनं नाम सप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥

समझना। अन्तर के आरम्भ के ६ महीने मे धन सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७३॥ नगर या देश मे अधिकार प्राप्ति, यवन जातीय स्वामी का दर्शन, घर मे सुख सम्पत्ति अथवा सेनापति होता है॥७४॥ दूर देश की यात्रा, पुण्य धर्म के कार्य, रामेश्वर की यात्रा तथा मनोरथ सिद्धि होती है॥७५॥ बृहस्पति से मगल ६।८।१२ मे पापयुक्त हो तो सर्प, चोर, आदि से आघात का भय, राज से विषमता॥७६॥ घर के झझट से व्याकुलता, सहोदर भाई से विरोध, परिवार मे विग्रह होता है॥७७॥ घर मे अशुभ कार्य, अकस्मात् कलह, दुःस्वप्न, फोडा-फुन्सी अथवा शून्य रोग होता है॥७८॥ राहु यदि २।७ स्थान मे हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप कराये॥७९॥ तथा छाग (बकरा) का दान करे तो सर्वप्रकार सुख होता है॥८०॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० विशोतर्यां गुरोरन्तर्दशा फलकथन नाम सप्तत्रिंशोऽध्याय ॥३७॥

अथ शनिदशायां शनिभुक्तिमासाः ३६ दिनानि० तत्फलम्

मूलत्रिकोणस्वर्क्षे वा तुलायामुच्चगोऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा राजयोगादिसयुते ॥१॥ राज्यलाभ महत्सौख्य दारपुत्रादिवर्धनम् ॥ वाहनत्रयसयुक्त गजाश्वाबरसकुलम् ॥२॥ महाराजप्रसादेन अश्वदौत्यादिलाभकृत् ॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥३॥ षष्ठाष्टमव्यये मदे नीचे वा पापसयुते ॥ तद्भुक्त्यादौ राजभीतिर्विषशस्त्रादिपीडनम् ॥४॥ रक्तस्राव गुल्मरोगमतिसारादिपीडनम् ॥ मध्ये चौरादिभीतिश्च देशत्याग मनोरुजम् ॥५॥ अते शुभकर चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥६॥ सद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥७॥

शनिमहादशा मे शनि की अन्तर्दशा मास ३६ दि० फल

अन्तर्दशा मे शनि जन्म लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ (११) मे या तुलाराशि मे, परमोच्च मे, मूलत्रिकोण मे, स्वराशि में एव योग कारक ग्रहयुक्त हो तो ॥१॥ राजा से लाभ या राज्य का लाभ, महान् सुख, स्त्रीपुत्र की वृद्धि, तीन मोटर की सवारी, हाथी घोडे तक ऐश्वर्य ॥२॥ राजानुग्रह से घुडसवार दूत हो, गौ आदि चौपाया पशु की स्थिति, ग्राम या विपुल भूमिलाभ होता है॥३॥ यदि शनि ६।८।१२ स्थान मे नीच का हो पापग्रहयुक्त हो तो राज मे भय, विष शस्त्र द्वारा पीडा॥४॥ रक्तस्राव, गुल्मरोग, अतिसार आदि रोग, चोर आदि से भय, स्वदेश का त्याग, मन मे अशान्ति हो॥५॥ दशा के अन्त मे शुभफल हो, ग्राम भूमि का लाभ हो। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥६॥ इसकी शान्ति के लिए महामृत्युञ्जय मन्त्र का जप करना चाहिए॥७॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३२ दिनानि ९ तत्फलम्

मदस्यांतर्गते सौम्ये त्रिकोणे केंद्रगेपि वा ॥ सन्मान च यशःकीर्तिर्विद्यालाभ धनागमम् ॥८॥
स्वदेशे सुखमाप्नोति वाहनादिफलैर्युतें ॥ यज्ञादिकर्मसिद्धिश्च राजयोगादिसभवम् ॥९॥
देहसौख्य हृदुत्साह गृहे कल्याणसभवम्॥सेतुस्नानफलावाप्तिस्तीर्थयात्रादिकर्मणा ॥१०॥
वाणिज्याद्धनलाभश्च पुराणश्रवणादिकम् ॥ अन्नदानफल चैव नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥११॥
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये नीचे वास्तगते सति ॥ रव्यारफणिसयुक्ते दायेशाद्वा तथैव च ॥१२॥
नृपाभिषेकमर्याप्तिर्देशग्रामाधिपत्यता ॥ फलमीदृशमादौ तु मध्यान्ते रोगपीडनम् ॥१३॥
मध्दानि सर्वकार्याणि व्याकुलत्व महद्भयम् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ॥१४॥
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रक जपेत् ॥ अन्नदान प्रकुर्वीत सर्वसपत्प्रदायकम् ॥१५॥

बुध का अन्तर मास ३२ दिन ९ फल

शनि की महादशा मे बुध का अन्तर हो। बुध केन्द्र, त्रिकोण मे हो तो सन्मान, यश, विद्यालाभ, धनलाभ।।८।। तथा स्वदेश मे सुखप्राप्ति, सवारी आदि का सुख, यज्ञ आदि धर्मकार्य, राजयोग के समान ऐश्वर्य होता है।।९।। देहसौख्य, परिवार मे सुख, रामेश्वरजी की यात्रा, तीर्थाटन होता है।।१०।। व्यापार से धनलाभ पुराण आदि का श्रवण, अन्नदान तथा नित्य उत्तम भोजन।।११।। यदि बुध ६।८।१२ भाव मे हो, नीच राशि मे, तथा अस्त हो या सूर्य, मगल, राहुयुक्त हो। ये सब योग लग्न से या शनि से किसी से भी हो।।१२।। तो अन्तर्दशा के आदि मे तो राज्याभिषेक मे प्राप्ति, देश या नगर मे पदाधिकार आदि शुभ फल होकर मध्य मे तथा अन्त मे रोग पीडा (दर्द)।।१३।। सम्पूर्ण कार्य मे हानि, व्याकुलता, महान् भय होता है। द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी हो तो देह मे बीमारी होती है।।१४।। इसकी शान्ति के लिए, 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ होना चाहिए। तथा अन्नदान करने से सर्वसम्पत्ति प्राप्त होती है।।१५।।

अथ केतुभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मन्दस्यान्तर्गते केतौ शुभग्रहयुतेक्षिते ॥ स्वोच्चे वा शुभराशिस्थे योगकारक सयुते ॥१६॥
लग्नाधिपेन सयुक्ते आदौ सौख्य धनागम ॥ गगादि सर्वतीर्थेषु स्थानदैवत दर्शनम्॥१७॥
दायेशात् केन्द्रकोणे वा शुभयोग-समन्विते ॥ समर्थो धर्म बुद्धिश्च सौख्य नृप समागम ॥१८॥
षष्ठाष्टमव्यये केतौ दायेशाद्वा तथैव च ॥ दारिद्रय बधन भीति पुत्रदारविनाशनम् ॥१९॥
स्थानभ्रश महद्भीति कुत्सितान्नस्य भोजनम् ॥ शीतज्वरातिसारश्च व्रणचौरादिपीडनम्
॥२०॥ पुत्रदार-वियोगश्च ससारे भवति ध्रुवम् ॥ स्वप्रमोश्च महाक्लेश विदेश गमन तथा
॥२१॥ द्वितीयद्यून राशिस्थे अपमृत्युर्भविष्यति ॥२२॥ छागदान प्रकुर्वीत ह्यपमृत्युभय
हरेत्॥२३॥

केतु का अन्तर मास १३ दिन ९ फल

शनि की महादशा मे केतु का अन्तर हो तथा केतु स्वोच्चराशि मे शुभदृष्टि या शुभयुत हो अथवा शुभराशि मे योगकारक से युक्त हो।।१६।। लग्नेश से सयुक्त हो तो प्रथमार्द्धदशामें

हो।।१७।। शनि से केन्द्र या
सुख तथा धनलाभ हो। गंगा आदि तीर्थों में स्नान, देवदर्शन
त्रिकोण स्थान में शुभयोग युक्त हो तो सामर्थ्य की प्राप्ति तथा धर्मवृद्धि हो, सुखवृद्धि तथा
राजा से मेल हो।।१८।। लग्न से या शनि से ६।८।१२ स्थान में केतु हो तो दरिद्रता, बंधन,
भय, स्त्री पुत्र का नाश होता है।।१९।। स्थान हानि महत् भय निकृष्ट भोजन, शीतज्वर,
अतिसार, घाव, चोर आदि से पीडा होती है।।२०।। स्त्रीपुत्र का वियोग होता है। स्वामी से
कष्ट होता है। विदेश यात्रा होती है।।२१।। यदि केतु द्वितीय तथा सप्तम राशि में हो तो
अपमृत्यु होती है।।२२।। इसकी शान्ति के लिए छाग (बकरा) या दान करना चाहिए। यह
दान करने से अपमृत्यु का भय दूर होता है।।२३।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः २६ दिनानि० तत्फलम्

केन्द्रे वा शुभसंयुक्ते त्रिकोणे लाभगेऽपि वा ।।२४।।
मन्दस्यान्तर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ।। राज्यलाभं महत्सुखम् ।।२५।।
दारपुत्रधनप्राप्तिर्देहारोग्यं महोत्सवम् ।। गृहे कल्याणसंपत्ती प्रियवस्त्रादिलाभकृत् ।।२६।।
महाराजप्रसादेन ह्यीष्टसिद्धिः सुखावहा ।। सन्मानं प्रभुसन्मानं च धनसंपदः ।।२७।।
द्वीपान्तराद्वस्त्रलाभः श्वेताश्वो महिषी तथा ।। गुरुचारवशाद्भाग्यं सौख्यं षष्ठाष्टव्ययराशिगे ।।२८।।
शनिचारान्मनुष्योऽसौ योगमाप्नोत्यसंशयम् ।। शत्रुनीचास्तगे शुक्रे जनविग्रहम् ।।२९।।
दारनाशं मनःक्लेशं स्थाननाशं मनोरुजम् ।। दाराणां स्वजनक्लेशः सतापो मनोऽभीष्टप्रदायकम् ।।३०।।
दायेशाद्भाग्यगेनैव केन्द्रे वा लाभसंयुते ।। राजप्रीतिकरं चैव वेदान्तश्रवणादिकम् ।।३१।।
दानधर्मदयायुक्तस्तीर्थयात्रादिकं फलम् ।। शास्त्रार्थकाव्यरचना ह्यष्टमेऽपि वा ।।३२।।
दारपुत्रादिसौख्यं च वाहनच्छत्रलाभकम् ।। दायेशाद्व्ययगे शुक्रे षष्ठे वा गुह्ये च पीडनम् ।।३३।।
नेत्रपीडा ज्वरभयं स्वकुलाचारवर्जितम् ।। कपोले दन्तशूलादि हृदि विरोधनम् ।।३४।।
जलभीतिर्मनस्तापो वृक्षात्पतनसंभवम् ।। राजद्वारे जनद्वेषः सोदरेण दुर्गादेवीजपं चरेत् ।।३५।।
द्वितीयसप्तमाधीशे आत्मक्लेशो भविष्यति ।। तद्दोषपरिहारार्थं
श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ।।३६।।

शनिदशा में शुक्रान्तर मास २६ दिन ० फल

त्रिकोण या लाभ में हो। उच्चराशि
शनि की दशा में शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र
में हो या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो तो।।२४।। स्त्री पुत्र, धन की प्राप्ति हो, देह की
आरोग्यता, महोत्सव, घर में सुख सम्पत्ति, राज से लाभ तथा महान् सुख होता है।।२५।। तथा
राजकृपा से सुखदायक इच्छित फल होता है। प्रतिष्ठा तथा स्वामी से घर में आदर, तथा प्रिय
वस्त्रादि का लाभ हो।।२६।। और द्वीपान्तरसे वस्त्र (या वस्त्र व्यापार से) लाभ हो तथा
श्वेतरंग का अश्व (घोडा) एवं भैंस हो। (गुरुसचार से भाग्योदय, सुख, धन संपत्ति होती
है।।२७।। शनिसचार से जातक अवश्य योग प्राप्त करता है।।२७।।
(सूचना-यह दो अर्द्धश्लोक वास्तव में एक ही श्लोक है और यह प्रकरण भी दूसरा ही है।
इसका तात्पर्य यह है कि आत्मादि कारकों के
लेखकों के प्रमाद से सम्मिलित हो गया है। इसका तात्पर्य यह है कि आत्मादि कारकों के
अंशादि पर से जब गुरु सचार करता है तो उक्त फल तथा शनि सचार करता है तो शनि के
लिए कहे हुए दुष्फल होते हैं। यह विषय स्पष्टरूप से देवकेरल आदि ग्रन्थों में देखना
चाहिए।)

शुक्र यदि शत्रु राशि मे, नीचराशि मे अथवा अस्त होकर ६।८।१२ वे स्थान मे हो॥२८॥ तो स्त्री की मृत्यु मन मे क्लेश, स्थानहानि, मन मे अशान्ति, स्त्रियो को क्लेश, बन्धुदुःख, सताप, परिवारिक कलह होती है॥२७॥ यदि शुक्र शनि से भाग्य, लाभ या केन्द्र मे हो तो राजप्रीति हो, इच्छित कार्य सिद्ध होता है॥३०॥ दान, धर्म, दया, तीर्थयात्रा आदि फल होता है। शास्त्रविचार, काव्यरचना, वेदान्तश्रवण॥३१॥ स्त्री पुत्र का सुख, वाहन (मोटर आदि सवारी) छत्र का लाभ होता है। शनि से शुक्र ६।८।१२ स्थान मे हो तो॥३२॥ नेत्रपीडा, ज्वरभय, कुलाचारहीनता, कपोल या दात मे शूल, हृदय तथा गुह्यदेश मे (पेट के नीचे का भाग) पीडा होती है॥३३॥ जल से भय, मन मे सन्ताप तथा वृक्ष से गिरना भी सभव है। राजकीय अधिकारी तथा सहोदर भाई से विरोध होता है॥३४॥ द्वितीय सप्तम भाव का स्वामी यदि शुक्र हो तो आत्मक्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए दुर्गादेवी का जप करना चाहिए॥३५॥ श्वेत रग की गाय का दान करने से आयु और आरोग्यता की वृद्धि होती है॥३६॥

अथ रविभुक्तिमासाः ११ दिनानि १२ तत्फलम्

मदस्यातर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥ भाग्याधिपेन सयुक्ते केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥३७॥
शुभदृष्टियुते चापि स्वप्रभोश्च महत्सुखम् ॥ गृहे कल्याणसपत्ति पुत्रादिसुखवर्द्धनम् ॥३८॥
वाहनाबरपश्वादिगोक्षीरसफुल गृहम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्वा तथैव च ॥३९॥ हृद्रोगो
मानहानिश्च स्थानभ्रशो मनोरुजा ॥ इष्टबधु वियोगश्च उद्योगस्य विनाशनम् ॥४०॥
तापज्वरादिपीडा च व्याकुलत्व भय तथा ॥ आत्मसबधमरणमिष्टबधुवियोगकृत् ॥४१॥
द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यपूजा च कारयेत् ॥४२॥

शनिदशा मे सूर्यान्तर मास ११ दिन १२ फल

शनि की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य उच्चराशि मे स्वगृही, तथा भाग्येशयुक्त हो। केन्द्र, लाभ या त्रिकोण मे हो॥३७॥ शुभदृष्टियुत हो तो अपने स्वामी से महान् सुख हो। घर मे कल्याण, सुख तथा सम्पत्ति हो तथा पुत्र आदि सुख की वृद्धि हो॥३८॥ सवारी सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशुओ से गृह सम्पन्न हो। शनि से सूर्य ६।८।१२ मे, अथवा लग्न से ६।८।१२ मे हो॥३९॥ तो हृदयरोग, मानहानि, स्थानविच्युति, मन मे दुःख, इष्टबन्धु का वियोग तथा उद्योग का नाश होता है॥४०॥ ज्वर आदि पीडा, भय और व्याकुलता, अपने सम्बन्धी का मरण तथा इष्ट बन्धु से वियोग होता है॥४१॥ यदि सूर्य २।७ का स्वामी हो तो देहबाधा होती है। इसकी शान्ति के लिए सूर्य की आराधना करनी चाहिए॥४२॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १९ दिनानि ० तत्फलम्

मदस्यातर्गते चद्रे जीवदृष्टिसमन्विते ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेद्रस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥४३॥
पूर्णचद्रे सौम्ययुक्ते राजप्रीतिसमागमम् ॥ महाराजप्रसादेन वाहनाबरभूषणम् ॥४४॥ सौभाग्य
सुखवृद्धि च भृत्यानां परिपालनम् ॥ पितृमातृकुले सौख्य पशुवृद्धि सुखावहम् ॥४५॥ क्षीणे वा

पापसंयुक्ते पापदृष्टौ विलोचगे ॥ क्रूरांशकगते वापि क्रूरक्षेत्रगतेपि वा ॥४६॥ जातकस्य महत्कष्टं राजकोपो धनक्षयः ॥ पितृमातृवियोगश्च पुत्रीपुत्रादिरोगकृत् ॥४७॥ व्यवसायात्फलं नेष्टं नानामार्गे धनव्ययम् ॥ अकाले भोजन चैवमौषधस्य च भक्षणम् ॥४८॥ कलाभिदृष्टचमावौ तु आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ दायेशात्केंद्रराशिस्थे त्रिकोणे लाभगेपि वा ॥४९॥ वाहनांबरपश्वादि भ्रातृवृद्धिः सुखावहा ॥ पितृमातृसुखावाप्तिः स्त्रीसौख्यं च धनागमम् ॥५०॥ शयनं मित्रप्रभुवशादिष्टं सर्वसौख्य शुभावहम् ॥ दायेशात्षष्ठरिष्फे वा रन्ध्रे वा बलवर्जिते ॥५१॥ रोगमालस्यं स्थानभ्रष्टं सुखावहम् ॥ शत्रुवृद्धिविरोधं च इष्टबंधुवियोगकृत् ॥५२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहालस्यो भविष्यति ॥ तद्दोषशमनार्थं च तिलहोमादिकं चरेत् ॥५३॥ गुडं घृतं च दध्नाक्तं तडुलं च यथाविधि ॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिकृत् ॥५४॥

शनिदशा में चन्द्रान्तर मास १९ दिन ०फल

शनि की दशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण तथा लाभस्थान मे गुरुदृष्टियुक्त, स्वोच्च राशि मे या स्वगृही तथा गुरुयुक्त या दृष्ट हो॥४३॥ यदि पूर्णचन्द्र सौम्यग्रहयुक्त हो तो राजासे प्रीति तथा मैत्री और आना जाना होता है। और उसकी कृपा से सवारी, वस्त्र, आभूषण॥४४॥ सौभाग्य, सुख वृद्धि और आश्रित का पालन, मातृकुल तथा पितृकुल मे सौख्य तथा सुखदायक पशुवृद्धि होती है॥४५॥ यदि चन्द्रमा क्षीण हो, पापग्रहयुक्त, पापदृष्ट, नीच राशिगत, पापग्रह के नवांश मे हो या पापराशि मे हो॥४६॥ तो जातक को महान् कष्ट, राजकोप और धन का क्षय होता है। माता पिता का वियोग होता है। पुत्र,कन्या को बीमारी होती है॥४७॥ व्यापार मे हानि तथा अनेक प्रकार से धनव्यय, कुसमय भोजन, औषधसेवन होता रहता है॥४८॥ इस नेष्ट योगयुक्त मे भी यदि चन्द्रमा एक कलारूप (सुदी द्वितीया का) हो तो अंतर के आदिकाल मे सुख और धनलाभ होता है। यदि चन्द्रमा शनि मे केन्द्र, त्रिकोण, या लाभस्थान मे हो॥४९॥ तो सवारी, वस्त्र, पशु आदि की प्राप्ति, भ्राता की वृद्धि, माता पिता का सुख, स्त्री का सुख, धनलाभ॥५०॥ मित्र या स्वामी द्वारा इष्टपूर्ति, सर्वसौख्य, शुभ होता है। शनि से चन्द्रमा ६।८।१२ स्थान मे॥५१॥ हो तो अतिनिद्रा, रोग, आलस्य, स्थानहानि, सुख,'शत्रुवृद्धि, विरोध तथा बन्धुवियोग होता है॥५२॥ २।७ का स्वामी हो तो आलसी करता है, रोगी होता है। इसकी शान्ति के लिए तिलहोम, गुड, घी, दही-भात, चावल का दान करे। श्वेत गौ का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है॥५४॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १३ दिनानि ९ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते भौमे केंद्रलाभत्रिकोणगे ॥ तुंगे स्वक्षेत्रगे वापि दशाधिपसमन्विते ॥५५॥ लग्नाधिपेन संयुक्ते आदौ सौख्यं धनागमम् ॥ राजप्रीतिकरं सौख्यं वाहनांबरभूषणम् ॥५६॥ सेनाधिपत्यं नृपप्रीतिः कृषिगोधान्यसंपदः ॥ नूतनस्थाननिर्माण भ्रातृवर्गेष्टसौख्यकृत् ॥५७॥ नीचे वास्तगते भौमे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ पापदृष्टियुते वापि धनहानिर्भविष्यति ॥५८॥ चौराहिव्रणशस्त्रादिपित्तरोगादिपीडनम् ॥ भ्रातृपित्रादिपीडा च दायादजनविग्रहम् ॥५९॥ चतुष्पाज्जीवहानिश्च कुत्सितान्नस्य भोजनम् ॥ विदेशगमन चैव नानामार्गे धनव्ययः ॥६०॥ अष्टमद्यूननाथे तु द्वितीयस्थेऽथ वा यदि॥ अपमृत्युभयं चैव नानाकष्टपराभवम् ॥६१॥

तद्दोषपरिहारार्थं शांतिहोमं च कारयेत् ॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वारिष्टनिवारणम् ॥६२॥

मंगल का अंतर मा० १३ दि० ९ फल

शनिदशामें मंगल का अन्तर हो। मंगल केन्द्र, लाभ, त्रिकोण में, उच्चराशि में, स्वगृही, तथा शनि से युक्त हो तो॥५५॥ और लग्नेश से युक्त हो तो प्रथम सुख और धनप्राप्ति, राजप्रीति, सुख, वाहन, वस्त्र, भूषण की प्राप्ति होती है॥५६॥ सेनापतित्वं, राजा से प्रीति, कृषि, गौ, संपत्ति, तथा नूतन स्थान का निर्माण, भ्रातृवर्ग को सुख देनेवाला होता है॥५७॥ यदि अस्त हो और ६।८।१२ स्थान में पापदृष्टियुक्त हो तो धनहानि होती है॥५८॥ चोर आदि का उपद्रव, शस्त्राघात, ग्रंथिरोग, पीडा, तथा भ्राता, पिता आदि को पीडा, परिवार में विग्रह होता है॥५९॥ गौ आदि पशु की हानि निकृष्ट भोजन विदेशयात्रा, विशेष खर्च होता है॥६०॥ यदि मंगल ७।८ का स्वामी होकर द्वितीय भाव में स्थित हो तो अपमृत्यु का भय होता है, अनेक कष्ट तथा हार होती है॥६१॥ इसकी शान्ति के लिए होम करे, बैल का दान करे तो सर्वथा अरिष्ट का निवारण होता है॥६२॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३४ दिनानि ६ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते राहौ कलहश्च मनोव्यथा ॥ देहपीडा मनस्तापं पुत्रद्वेषो मनोरुजः ॥६३॥ अर्थव्ययं राजभयं स्वजनादिह्युपद्रवम् ॥ विदेशगमनं चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥६४॥ लग्नाधिपेन संयुक्ते योगकारकसंयुते ॥स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे केंद्रे दायेशाल्लाभराशिगे ॥६५॥आदौ सौख्यं धनावाप्तिं गृहं क्षेत्रादिसंपदम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिं च तीर्थयात्रादिकं लभेत् ॥६६॥ चतुष्पाज्जीवलाभं स्याद्गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥ मध्ये तु राजभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥६७॥ मेषादिकन्यका चैव कुलीरे वृषभे तथा ॥ मीनकोदंडसिंहेषु गजातैश्वर्यमादिशेत् ॥६८॥ राजसन्मानभूषाप्तिं मृदुलाम्बरसौख्यकृत् ॥ द्विसप्तमाधिपैर्युक्ते देहबाधा भविष्यति ॥६९॥ मृत्युंजयं प्रकुर्वीत च्छागदानं च कारयेत् ॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत सर्वसंपत्सुखावहम् ॥७०॥

राहु का अन्तर मास ३४ दिन फल

शनिदशा में राहु का अन्तर हो तो (यदि शुभयोग युक्त न हो तो) कलह, मनोव्यथा, देहपीडा, सन्ताप, पुत्र से द्वेष, मन में अशान्ति॥६३॥ धन का अधिक खर्च, राजभय, स्वजनों से उपद्रव, विदेश यात्रा तथा गृह भूमि का नाश होता है॥६४॥ और यदि राहु लग्नेश से युक्त और योगकारक युक्त हो और उच्च राशि में, स्वगृही, केन्द्र या लाभसे (शनि से)॥६५॥ हो तो प्रथम धनप्राप्ति, सुख, भूमि मकान आदि सम्पत्ति, देवब्राह्मणभक्ति तथा तीर्थयात्रा होती है॥६६॥ गौ आदि चौपाया की प्राप्ति, घर में सुख शान्ति होती है। मध्य में राजभय, पुत्र मित्र से विरोध होता है॥६७॥ यदि राहु, मेष कन्या, कर्क, वृष, मीन, धन और सिंह में हो तो हाथी होने योग्य ऐश्वर्य होता है॥६८॥ राज सम्मान, भूषण प्राप्ति, सुन्दर वस्त्र का सुख होता है। २।७ के स्वामी से युक्त हो तो देहबाधा होती है॥६९॥ मृत्युञ्जय मन्त्र जप और छागदान या बैलदान करने से सर्वसम्पत्ति का सुख होता है॥७०॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३० दिनानि १४ तत्फलम्

मंदस्यांतर्गते जीवे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥७१॥ लग्नाधिपेन संयुक्ते स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेपि वा ॥

सर्वकार्यार्थसिद्धिः स्याच्छोभनं भवति ध्रुवम् ॥७२॥ महाराजप्रसादेन धनवाहनभूषणम् ॥
सन्मानं प्रभुसन्मानं प्रियवस्त्रार्थलाभकृत् ॥७३॥ देवतागुरुभक्तिश्च विद्वज्जनसमागमः ॥
दारपुत्रादिलाभश्च पुत्रकल्याणवैभवम् ॥७४॥ षष्ठाष्टमव्यये जीवे नीचे वा पापसंयुते ॥
देहसंबन्धमरणं धनधान्यविनाशनम् ॥७५॥ राजद्वेषं स्थानहानिं कार्यहानिर्भविष्यति ॥
विदेशगमनं चैव कुष्ठरोगादिसंभवः ॥७६॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा धने वा लाभगेऽपि वा ॥
विभवं दारसौभाग्यं राजश्रीधनसंपदः ॥७७॥ भोजनाम्बरसौख्यं च दानधर्मादिकं भवेत् ॥
ब्रह्मप्रतिष्ठासिद्धिश्च क्रतुकर्मफलप्रदम् ॥७८॥ अन्नदानं महाकीर्तिर्वेदान्तश्रवणादिकम् ॥
दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥७९॥ बन्धुद्वेषं मनोदुःखं ब्राह्मणं पदविच्युतम् ॥
कुभोजनं कर्महानी राजदण्डाद्धनव्ययम् ॥८०॥ कारागृहप्रवेशं च पुत्रदारादिपीडनम् ॥
द्वितीयद्यूनमाथे तु देहबाधा मनोरुजम् ॥८१॥ आत्मसंबन्धमरणं भविष्यति न संशयः ॥
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥८२॥ स्वर्णदानं प्रकुर्वीत ह्यारोग्यं भवति
ध्रुवम् ॥८३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे विंशोत्तरीशान्यन्तर्दशाफलकथनं
नाम अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥३८॥

शनिदशा मे गुरु अंतर मा० ३० दि० १४ फल

शनि की महादशा मे गुरु का अन्तर हो गुरु लग्न से केन्द्र त्रिकोण लाभस्थान मे हो। लग्नेश युक्त उच्च राशि मे स्वगृही हो तो सर्वकार्य सिद्धि धनलाभ तथा शुभ होता है।।७२।। राजकृपा से धन वाहन, भूषण, सन्मान, स्वामी से मान, इच्छित धन प्राप्त होता है।।७३।। देव गुरु मे भक्ति तथा विद्वानो मे आदर, स्त्री पुत्रादि का लाभ तथा परिवार मे उत्सव होता है।।७४।। यदि गुरु ६।८।१२ स्थान मे हो नीचराशि मे पापयुक्त हो तो मृत्यु तथा धनधान्य का नाश होता है।।७५।। राजकोप, स्थान हानि, कार्य हानि होती है, विदेशयात्रा तथा कुष्ठ आदि की बीमारी होती है।।७६।। यदि गुरु शनि से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव या लाभभाव मे हो तो वैभव, स्त्रीसुख राजसमान लक्ष्मी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।।७७।। भोजन, वस्त्र का सुख तथा दान धर्म आदि होता है, ब्राह्मणो का सन्मान करने मे सिद्धि होती है यज्ञ का फल होता है।।७८।। अन्नदान, महान् यश वेदान्तज्ञान श्रवण मे प्रवृत्ति होती है। शनि मे गुरु ६।८।१२ मे बलरहित हो।।७९।। तो बन्धुद्वेष, मन मे अशान्ति ब्राह्मणाचार हानि, पदहानि कुभोजन, कर्महानि राजदण्ड मे धनहानि।।८०।। कैद, स्त्री-पुत्र को पीडा होती है। यदि गुरु २।७ भाव का स्वामी हो तो देहपीडा होती है।।८१।। इसकी शान्ति के लिए शिवसहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे।।८२।। सुवर्ण का दान करे तो आरोग्यता प्राप्त होती है।।८३।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रपूर्वखण्ड भावप्रकाशिकाया विशदव्याख्या
शन्यन्तर्दशा फल कथन नाम अष्टत्रिंशोऽध्याय ।।३८।।

अथ बुधदशायांबुधभुक्तिमासाः २२ दिन २७ तत्फलम्

मुक्ताविद्रुमलाभश्च ज्ञानकर्मसुखादिकम् ॥ विद्यामहत्त्वं कीर्तिश्च नूतनप्रभुदर्शनम् ॥१॥ विभव दारपुत्रादिपितृमातृसुखावहम् ॥ नीचोग्रखेटसंयुक्ते षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥२॥ पापयुतेऽथवा दृष्टे धनधान्यपशुक्षयम् ॥ आत्मबंधुविरोधं च शूलरोगादिसंभवम् ॥३॥ राजकार्यकलापेन व्याकुलो भवति ध्रुवम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु दारक्लेशो भविष्यति ॥४॥ आत्मसंबंधमरण वातशूलादिसंभवम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥५॥

बुध दशा मे बुधान्तर
मास २२ दिन २७ फल

बुध की महादशा मे बुध का अन्तर हो तथा शुभग्रह योग युक्त हो तो रत्नो का लाभ, ज्ञान तथा सुख प्राप्ति कर्मसिद्धि विद्यावृद्धि कीर्ति तथा नये स्वामी का योग होता है।।१।। अनेक वैभव तथा स्त्री पुत्र, माता पिता को सुख होता है। नीचराशि मे पापग्रह युक्त हो। ६।८।१२ भाव मे हो।।२।। पापदृष्ट हो तो धन-सम्पत्ति की हानि अपने बन्धुओ से विरोध, शूलरोग आदि होते है।।३।। राजकार्य समूह से व्याकुल रहता है। २।७ का स्वामी हो तो स्त्री को दु ख होता है।।४।। अपने सम्बन्धी का मरण होता है। वातव्याधि होती है। इसकी शान्ति के लिए विष्णुसहस्रनाम का पाठ होना चाहिए।।५।।

केतुभुक्तिमासा. ११ दिनानि २७ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते केतौ लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ शुभयुक्ते शुभैर्दृष्टे लग्नाधिपसमन्विते ॥६॥ योगकारकसंबंधे दायेशात्केंद्रलाभगे ॥ देहसौख्यं धनाल्पत्वं बंधुस्नेहसहायकृत् ॥७॥ चतुष्पाज्जीवलाभ स्यात्संसारे देहतापनम् ॥ विद्याकीर्तिप्रसंगश्च समानप्रभुदर्शनम् ॥८॥ भोजनाबरसौख्य च ह्यादौ मध्ये सुखावहम् ॥ दायेशाद्रिपुरन्ध्रस्थे अष्टमे पापसंयुते ॥९॥ वाहनात्पतनं चैव पुत्रक्लेशसमाकुलम् ॥ चौरादिराजभीतिश्च पापकर्मरत सदा ॥१०॥ वृश्चिकादिविषाद्भीतिर्नीचै कलह संयुत ॥ शोकरोगादिदु ख च संसारादिचल भवेत् ॥११॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहजाड्य भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहाराय च्छागदान तु कारयेत् ॥१२॥

केतु अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध दशा मे केतु का अन्तर हो, केतु लग्न से केन्द्र त्रिकोण भाव मे शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो और लग्नेश से युक्त हो।।६।। योगकारक ग्रह से सम्बन्ध हो तथा बुध से भी केन्द्र या लाभ में हो तो देहसौख्य, सामान्य धन, बन्धु का स्नेह तथा साहाय्य।।७।। चौपाया पशु का लाभ तथा ससार से विरक्ति, विद्या की प्रसिद्धि कीर्ति समान आयुवाले प्रभु का दर्शन।।८।। उत्तम भोजन आदि प्रथम और मध्य अवधि मे प्राप्त होत हैं। बुध से केतु ६।८।१२ स्थान मे पापयुक्त हो तो।।९।। सवारी से गिरना तथा पुत्र को क्लेश चोर तथा राजभय, पाप बुद्धि।।१०।। सर्प, बिच्छू आदि से भय, नीचो से कलह, शोक रोग आदि दु ख तथा जनसमाज मे क्लेश होता है।।११।। केतु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो देह जाड्य रोग होता है। इसकी शान्ति के लिए छागदान करना चाहिए।।१२।।

अथ शुक्रभुक्तिमासाः ३४ दिनानि० तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते शुक्रे केंद्रे लाभत्रिकोणगे ॥ सत्कथापुण्यधर्मादिसंग्रहः पुण्यकर्मकृत् ॥१३॥
मित्रप्रभुवशादिष्टं क्षेत्रलाभः सुखं भवेत् ॥ दशाधिपात्केंद्रगतेऽथवासल्लाभगेऽपि वा ॥१४॥
तत्काले श्रियमाप्नोति राजश्रीधनसंपदः ॥ वापीकूपतडागादिदानधर्मादिसंग्रहः ॥१५॥
व्यवसायात्फलाधिक्यं धनधान्यसमृद्धिदम् ॥ दायेशादशुभस्थाने व्यये वा बलवर्जिते ॥१६॥
हृद्रोगो मानहानिश्च ज्वरातीसारपीडनम् ॥ आत्मबंधुवियोगश्च संसारो देहनिःशमम् ॥१७॥
आत्मदुःखं मनस्तापमायदायादिकं तथा ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥१८॥
तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥१९॥

बुध दशा में शुक्र का अन्तर मास ३४ दिन ०फल

बुधमहादशा में शुक्र का अन्तर हो, शुक्र लग्न से केन्द्र, लाभ त्रिकोणभाव में हो तो सत्कथा श्रवण, धर्मकार्य आदि होते हैं॥१३॥ मित्र या प्रभु के कारण इच्छित कार्यसिद्धि, भूमिलाभ तथा सुख होता है। यदि शुक्र, बुध से चतुर्थ दशम या लाभ में हो तो अन्तरकाल में लक्ष्मी की प्राप्ति, राजा के समान ऐश्वर्य, कूप, वापी (बावडी), तडाग (तालाब) दान, धर्म आदि पुण्य कार्य होते हैं॥१५॥ व्यापार से अधिक लाभ, धन सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। बुध से शुक्र अशुभस्थान या १२ में बलहीन हो तो॥१६॥ हृदयरोग, मानहानि, ज्वर, अतिसार आदि पीडा, आत्मबन्धु का वियोग, तथा अशान्ति रहती है॥१७॥ आत्मक्लेश, मन में कष्ट, आमदनी तथा परिवार की स्थिति भी असन्तोष पूर्ण रहती है। शुक्र यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥१८॥ इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा देवी' का जप करना चाहिए॥१९॥

अथ रविभुक्तिमासाः १० दिनानि ६ तत्फलम्

सौम्यस्यांतर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ त्रिकोणे धनलाभे तु तुंगांशे स्वांशगेऽपि वा ॥२०॥
राजप्रसादसौभाग्यं मित्रप्रभुवशात्सुखम् ॥ भूम्यात्मजेन सदृष्टे आदौ भूलाभमेव च ॥२१॥
लग्नाधिपेन संदृष्टे बहुसौख्यं धनागमम् ॥ ग्रामभूम्यादिलाभं च भोजनाम्बरसौख्यकृत् ॥२२॥
षष्ठाष्टमव्यये चापि शन्यारफणिसंयुते ॥२३॥ चौराग्निशस्त्रपीडा च पित्ताधिक्यं भविष्यति ॥
शिरोरुङ्मनसस्ताप दुष्टबंधुवियोगकृत् ॥२४॥ द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥
तद्दोषपरिहारार्थं शांतिं कुर्याद्यथाविधि ॥ सूर्यप्रीतिकरीं चैव दद्याद्धेनुं हिरण्यकम् ॥२५॥

सूर्य का अन्तर मास १० दिन ६ फल

बुध की दशा में सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव, लाभस्थान में स्वगृही, उच्चराशि में, स्वनवांश में या उच्चांश में हो तो ॥२०॥ राजा के समान महल में रहने या बनाने का सौभाग्य हो। मित्र या प्रभु के सहयोग से इच्छित कार्य की सिद्धि होती है। मंगल की दृष्टि हो तो प्रथम भूमि का लाभ होता है॥२१॥ लग्नेश भी देखता हो तो बहुसौख्य, धनलाभ। ग्रामभूमिलाभ तथा उत्तम भोजन,वस्त्र, भूषण लाभ होता है॥२२॥ यदि सूर्य लग्न से ६।८।१२ स्थान में शनि, मंगल, राहु युक्त हो तो चोर, अग्नि, शस्त्र से पीडा होती है।

पित्ताधिक्य, शिरोवेदना, सताप, प्रियबन्धु का वियोग होता है॥२४॥ यदि सूर्य २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए सुवर्ण तथा गौ का दान और सूर्य की शान्ति करनी चाहिए॥२५॥

अथ चंद्रभुक्तिमासाः १७ दिनानि ० तत्फलम्

सौम्यस्यान्तर्गते चन्द्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि गुरुदृष्टिसमन्विते ॥२६॥
योगस्थानाधिपत्येन योगप्राबल्यमादिशेत् ॥ स्त्रीलाभ पुत्रलाभ च वस्त्रवाहनभूषणम् ॥२७॥
नूतनालयलाभ च नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ गीतवाद्यप्रसग च शास्त्रविद्यापरिश्रमम् ॥२८॥
दक्षिणा दिशमाश्रित्य प्रयाण च भविष्यति ॥ द्वीपान्तरादिवस्त्राणा लाभश्चैव भविष्यति ॥२९॥
मुक्ताविद्रुमरत्नानि धौतवस्त्रादिलाभगम् ॥ नीचारिक्षेत्रसयुक्ते देहबाधा भविष्यति ॥३०॥
दायेशात्केन्द्रकोणस्थे दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥ तद्भुक्त्यादौ पुण्यतीर्थस्थानदैवतदर्शनम् ॥३१॥
मनोधैर्यं हृदुत्साह विदेशधनलाभकृत् ॥ दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा पापसयुते ॥३२॥
चौराग्निनृपभीतिश्च स्त्रीसगे गमन भवेत् ॥ दुष्कृतिर्धनहानिश्च कृषिगोश्वादिनाशकृत् ॥३३॥
द्वितीयद्यूनमाधेतु देहबाधाभविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजप चरेत् ॥३४॥ वस्त्रदान प्रकुर्वीत आयुर्वृद्धिसुखावहम् ॥३५॥

चन्द्रमा का अन्तर मास १७ दिन ० फल

बुध की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण मे, स्वगृही, उच्च राशि मे, गुरुयुक्त या दृष्ट हो॥२६॥ चन्द्रमा यदि कारकेश हो तो बलवान् शुभयोग होता है। इसमे स्त्री पुत्र का लाभ, सवारी वस्त्रभूषण प्राप्त होते है॥२७॥ नया मकान बनाना उत्तम भोजन, गानवाद्य का प्रसग शास्त्रीय विद्या मे परिश्रम होता है॥२८॥ दक्षिण दिशा की यात्रा तथा द्वीपान्तर से व्यापार और उसमे लाभ होता है। मोती, मूगा आदि रत्न से तथा कपडे के व्यवसाय से लाभ होता है॥२९॥ यदि चन्द्रमा नीचराशि या शत्रुराशि मे हो तो शरीर मे अरिष्ट होता है॥३०॥ यदि चन्द्रमा बुध से केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय, लाभ स्थान मे हो तो उसके अन्तर मे पवित्र तीर्थ तथा देवदर्शन होते है॥३१॥ मन मे धैर्य हृदय मे उत्साह एव विदेश मे धन की प्राप्ति होती है। बुध से चन्द्रमा ६।८।१२मे पापग्रह युक्त हो तो चोर, अग्नि, राज से भय, स्त्रीसग मे प्रवृत्ति, दुश्चरित्रता, धन हानि, खेती, गौ आदि पशु का नाश होता है॥३३॥ चन्द्रमा २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये दुर्गामन्त्र जप करना चाहिए॥३४॥ श्वेत वस्त्र का दान करने से आयु वृद्धि और सुख होता है॥३५॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ११ दिनानि २७ तत्फलम्

सौम्यस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे लग्नाधिपसमन्विते ॥३६॥
राजानुग्रहशान्ति च गृहे कल्याणसम्भवम् ॥ लक्ष्मीकटाक्षचिह्नानि नष्टराज्यार्थलाभकृत् ॥३७॥
पुत्रोत्सवादिसतोष गृहे गोधनसकुलम् ॥ गृहक्षेत्रादिलाभश्च गजवाजिसमन्वितम् ॥३८॥

राजप्रीतिकरं चैव स्त्रीसौख्यं चातिशोभनम् ॥ नीचक्षेत्रसमायुक्ते ह्यष्टमे वा व्ययेऽपि वा ॥३९॥ पापदृष्टियुते वापि देहपीडा मनोव्यथा ॥ उद्योगभङ्गो देहादौ स्वग्रामे धान्यनाशनम् ॥४०॥ ग्रंथिशस्त्रव्रणादीनां भयं तापज्वरादिकम् ॥ दायेशात्केंद्रगे भौमे त्रिकोणे लाभगेऽपि वा ॥४१॥ शुभदृष्टेश्च सम्प्राप्तिर्देहसौख्यं धनागमम् ॥ पुत्रलाभं यशोवृद्धि भ्रातृवर्गो महाप्रियं ॥४२॥ दायेशाद्रिपुरध्रस्थे व्यये वा पापसंयुते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशं भातृवर्गे महद्भयम् ॥४३॥ नृपाग्निचौरभीतिश्च पुत्रमित्रविरोधनम् ॥ स्थानभ्रंशो महद्धैर्यं मध्ये सौख्यं धनागमम् ॥४४॥ अंते तु राजभीतिः स्यात्स्थानभ्रंशो ह्यथापि वा ॥ द्वितीयद्यूननाथे च ह्यपमृत्युभयं भवेत् ॥४५॥ अनड्वाहं प्रकुर्वीत मृत्युंजयजपं चरेत् ॥४६॥

मंगल का अन्तर मास ११ दिन २७ फल

बुध की महादशा मे मगल का अन्तर हो। मगल लग्न से केन्द्र त्रिकोण मे स्वगृही या उच्चराशि का हो और लग्नेश से युक्त हो॥३६॥ तो राजा का अनुग्रह, घर मे सुख शान्ति लक्ष्मी की स्थिरता, नष्ट सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥३७॥ पुत्रोत्सव, घर, गौ आदि की स्थिति, मकान, भूमि का लाभ होता है। हाथी-घोडे आदि सवारी तथा राजमैत्री, स्त्री से सुख होता है॥३८॥ यदि मगल नीच राशि मे स्थित ८।१२ स्थानो मे हो तो॥३९॥ तथा पाप दृष्टियुक्त हो तो देह पीडा, मनोव्यथा, उद्योग भग, अपने देश मे धनहानि होती है॥४०॥ शस्त्र से घाव, ग्रन्थी आदि रोग, भय, ज्वर आदि होते है। बुध से मगल केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे॥४१॥ शुभ दृष्टि युक्त हो तो धन लाभ देह सौख्य पुत्र लाभ यश वृद्धि तथा भ्राताओ से प्रेम होता है॥४२॥ बुध से मगल ६।८।१२ भाव मे पापग्रहयुक्त हो तो अन्तर के आदि मे महान् क्लेश, परिवार मे महान भय होता है॥४३॥ राज, अग्नि, चोर का भय, पुत्र और मित्र से विरोध, स्थान हानि तथा धैर्य होता है। अन्तर के मध्य भाग मे धनप्राप्ति होती है॥४४॥ अन्त मे राजभय, स्थानहानि होती है। मगल २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है। शान्ति के लिए मृत्युञ्जय जप तथा बैल का दान करे॥४५-४६॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३० दिना १८ तत्फलम्

बुधस्यातर्गते राहौ केंद्रलाभत्रिकोणगे ॥ कुलीरकुंभगे वापि कन्यायां वृषभेऽपि वा ॥४७॥ राजसम्मानकीर्तिं च तस्मै राजागमिष्यति ॥ पुण्यतीर्थस्याफलस्य देवतादर्शनं तथा ॥४८॥ इष्टापूर्ते च महतो मानश्रावरलाभकृत् ॥ भुक्त्यादौ देहपीडा च अंते सौख्यं विनिर्दिशेत ॥४९॥ षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे तद्भुक्तौ धननाशनम् ॥ भुक्त्यादौ देहनाशं च वातज्वरमजीर्णकृत् ॥५०॥ लग्नाद्युपचये राहौ शुभग्रहसमन्विते ॥ राजसंतापसंतोषं नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५१॥ दायेशात्षष्ठरिफे वा ह्यष्टमे पापसंयुते ॥ निष्ठुरं राजकार्याणि स्थानभ्रंशो महद्भयम् ॥५२॥ बंधनं रोगपीडा च आत्मबंधुमनोव्यथा ॥ हृद्रोगो मानहानिश्च धनहानिर्भविष्यति ॥५३॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गालक्ष्मीजपं चरेत् ॥५४॥ श्वेतां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ॥५५॥

राहु का अन्तर मा० ३० दि० १८ फल

बुध की महादशा मे राहु का अन्तर हो, राहु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे हो, वृष,

कर्क, कन्या तथा कुम्भ राशि मे हो॥४७॥ तो राज सम्मान, कीर्ति तथा राजा के समान ऐश्वर्य, तीर्थयात्रा, देवता दर्शन, स्थान लाभ॥४८॥ चान्द्रायण आदि व्रत, यज्ञ, दान आदि शुभ कर्म होते है। समाज में प्रतिष्ठा, वस्त्र से लाभ, अन्तर के आदि में देह पीडा, अन्त मे सुख होता है॥४९॥ राहु ६।८।१२ भाव मे हो तो उसके अन्तर मे धननाश, वातज्वर, अजीर्ण रोग होता है॥५०॥ लग्न आदि केन्द्र स्थान में शुभग्रह युक्त राहु हो तो राजा से मेलजोल, सन्तोष, किसी बडे आदमी से मिलाप हो॥५१॥ बुध से राहु ६।८।१२ स्थान मे पापयुक्त हो तो राजकार्य मे त्रुटि, अतएव राजा का निष्ठुर व्यवहार, स्थानभ्रंश, महान् भय हो॥५२॥ बंधन, रोग और पीडा, परिवार मे चिन्ता, हृदय मे रोग, मानहानि, धनहानि हो॥५३॥ राहु २।७ स्थान में हो तो अपमृत्यु होती है। इसका उपाय दुर्गालक्ष्मी मंत्र का जप है॥५४॥ सफेद गौ का दान करने से आयु वृद्धि तथा आरोग्यता होती है॥५५॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः २७ दिना० ६ तत्फलम्

बुधस्यान्तर्गते जीवे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि लाभे वा धनराशिगे ॥५६॥
देहसौख्यं धनप्राप्तिं राजप्रीतिं तथैवच ॥ विवाहोत्सवकार्याणि नित्यमिष्टान्नभोजनम् ॥५७॥
गोमहिष्यादिलाभं च पुराणश्रवणादिकम् ॥ देवतागुरुभक्तिं च दानधर्ममखादिकम् ॥५८॥
यज्ञकर्मप्रवृद्धिं च शिवपूजाफलं तथा ॥ नीचे वास्तगते वापि रिःफाष्टव्ययगेऽपि वा ॥५९॥
शन्यारभतिसंयुक्ते कलहो राजविग्रहम्॥ चौरादिदेहपीडा च पितृमातृविनाशनम् ॥६०॥

गुरु का अन्तर मा० २७ दि० ६ फल

बुध की महादशा मे गुरु का अन्तर हो, गुरु लग्न से केन्द्र, त्रिकोण मे हो, उच्च अथवा स्वगृही हो, लाभ या धनराशि मे हो॥५६॥ तो देह सौख्य, धन प्राप्ति, राजप्रीति, विवाहादि उत्सव, उत्तम भोजन॥५७॥ गौ आदि का लाभ, पुराण श्रवण, देवता-गुरु की भक्ति, दान, धर्म, यज्ञ आदि होते है॥५८॥ उपासना तथा पूजा का फल प्राप्त होता है। गुरु यदि ६।८।१२ स्थान मे नीच राशि अथवा अस्तगत हो,॥५९॥ शनि, मंगल युक्त हो अथवा शनि, मंगल की राशि के स्वामी से युक्त हो तो कलह, राज विग्रह, चोरी, रोग, देह पीडा, माता-पिता की मृत्यु,॥६०॥

मानहानी राजदंडो धनहानिर्भविष्यति ॥ विषाहिज्वरपीडा च कृषिगो भूमिनाशनम् ॥६१॥
दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा बलसंयुते ॥ बंधुपुत्रह्रदुत्साह शुभ शोभनसंयुतम् ॥६२॥
पशुवृद्धियशोलाभमन्नदानादिक फलम् ॥ दायेशात्षष्ठरंध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥६३॥
अंगतापश्च वैकल्य देहबाधा भविष्यति ॥ कलत्रबंधुवैषम्य राजकोपो धनक्षयः ॥६४॥
अकस्मात्कलहाद्भीतिः प्रमोहो राजविग्रहम् ॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा देहबाधा भविष्यति ॥६५॥
तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रक जपेत् ॥ गोभूहिरण्यदानेन सर्वारिष्ट व्यपोहति ॥६६॥

मानहानि, राजदण्ड, धनहानि, विष, सर्प, ज्वर, पीडा, कृषि हानि, भूमि नाश होता है॥६१॥ बुध से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभ स्थान मे बलवान् हो तो पुत्र, भ्राता के उत्साह की

वृद्धि, शुभ कार्य होता है॥६२॥ पशु वृद्धि, यश विस्तार, अन्नदान आदि शुभ कर्म होते हैं। बुध से गुरु ६।८।१२ भाव में बलहीन हो तो॥६३॥ ज्वर, विकलता, देह बाधा, परिवार में विषमता, राजकोप, भय, मोह, राज विग्रह होता है। २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥६५॥ इसकी शान्ति के लिये शिव सहस्र जप, गौ भूमि सुवर्ण का दान करने से सब अरिष्ट की शान्ति होती है॥६६॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३२ दि० ९ तत्फलम्

सौम्यस्यान्तर्गते मन्दे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ त्रिकोणलाभगे वापि गृहे कल्याणवर्द्धनम् ॥६७॥ राज्यलाभं महोत्साहं गृहे गोधनसंकुलम् ॥६८॥ शत्रुस्थानफलावाप्तिं भुक्त्या तीर्थविनाशनम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये मन्दे दायेशाद्वा तथैव च ॥६९॥ अरातिदुःखबाहुल्यं दारपुत्रादिपीडनम् ॥ बुद्धिभ्रंशं बन्धुनाशं कर्मनाशं मनोरुजम् ॥७०॥ विदेशगमनं चैव स्वस्थ दूराभिसर्पणम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥७१॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युंजयजपं चरेत् ॥ कृष्णां गां महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥७२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे विंशोत्तरीबुधान्तर्दशाफलकथनं नामोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥३९॥

शनि का अन्तर मा० ३२ दि० ९ फल

बुध की महादशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या लाभ स्थान में, स्वगृही या उच्च राशि का हो॥६७॥ तो राज्य लाभ, महान् उत्साह होता है। घर में गौ आदि पशु रहते हैं॥६८॥ शत्रु की सम्पत्ति प्राप्त होती है। तीर्थ यात्रा होती है। यदि बुध से शनि ६।८।१२ स्थान में अथवा लग्न से हो तो शत्रु द्वारा अति दुःख प्राप्त हो॥६९॥ स्त्री-पुत्र को पीडा हो। ज्ञान हानि, बन्धुनाश, कर्मनाश, अशान्ति॥७०॥ विदेश यात्रा घर से दूर रहना होता है। शनि यदि २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥७१॥ इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप तथा काली गौ दान करे तो आरोग्यता और वृद्धि होती है॥७२॥

इति श्री बृ० पा० हो० शा० पू० ख० प्र० विंशोत्तरी बुधान्तर दशाफलकथन
नाम ऊनचत्वारिंशोऽध्याय ॥३९॥

अथ केतुभुक्तिदशायामंतर्दशामासाः ४ दि० ६ तत्फलम्

केंद्रे त्रिकोणलाभे वा लग्नाधिपसमन्विते ॥ भाग्यकर्मसुसंबंधे वाहनेशसमन्विते॥१॥ तद्भुक्तौ धनधान्यादि चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च राजप्रीतिमनोरथम् ॥ ग्रामभूम्यादिलाभश्च गृहे गोधनसंकुलम् ॥ नीचास्तखेटसंयुक्ते ह्यष्टमेव्ययगेऽपि वा ॥३॥ हृद्रोगं मानहानिं च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च मनश्चाञ्चल्यमेव च ॥४॥ द्वितीयद्यूननाथेन सयुते तत्रसंस्थिते ॥ अनारोग्यं महत्कष्टमात्मबंधुवियोगकृत् ॥५॥ दुर्गादेवीजपं कुर्यान्मृत्युंजयजपं चरेत् ॥६॥

केतु महादशा में केतु की अन्तर्दशा मास ४ दिन ६ फल

केतु यदि केन्द्र, त्रिकोण, लाभस्थान मे लग्नेश युक्त तथा ९।१० भावो से सम्बन्ध रखता हो तथा चतुर्थेशयुक्त हो॥१॥ तो इसके अन्तर मे धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होती है। स्त्री पुत्र का सुख तथा राजा से प्रीति, इच्छापूर्ति॥२॥ ग्राम, भूमि का लाभ तथा घर मे गोधन होता है। यदि केतु नीच राशि मे, अस्तका स्वय हो या ऐसे ग्रह से युक्त हो अथवा ८।१२ भाव मे हो॥३॥ तो हृदयरोग, मान हानि, तथा धन सम्पत्ति का नाश, स्त्री पुत्र को पीडा,मन की चचलता होती है॥४॥ यदि केतु २।७ के स्वामी से सम्बन्ध करता हो या २।७ मे स्थित हो तो रोग, कष्ट, तथा बन्धुवियोग करता है॥५॥ उपाय—दुर्गादेवीमत्र जप या 'मृत्युञ्जय मन्त्र जप॥६॥

अथ शुक्रभुक्तिमासाः १४ दिनानि० तत्फलम्

केतोरन्तर्गते शुक्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रसयुते ॥ केद्रत्रिकोणलाभे वा राज्यनाथेन सयुते ॥७॥
राजप्रीति च सौभाग्य राजत्स्वायरसकुलम् ॥ तत्काले श्रियमाप्नोति भाग्यकर्मेशसयुते ॥८॥
नष्टराज्यधनप्राप्ति सुखवाहनमुत्तमम् ॥ सेतुस्नानादिक चैव देवतादर्शन महत् ॥९॥
महाराजप्रसादेन ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ दायेशात्केद्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेपि वा ॥१०॥
देहारोग्य शुभ चैव गृहे कल्याणशोभनम् ॥ भोजनाबरभूषाप्तिमश्वदोलादिलाभकृत् ॥११॥
दायेशाद्रिपुर ध्रस्थे व्यये वा पापसयुते ॥ अकस्मात्कलह चैव पशुधान्यादिपीडनम् ॥१२॥
नीचस्थे खेटसयुक्ते लग्नात्षष्ठाष्टराशिगे ॥ स्वबधुजनवैषम्य शिरोक्षिव्रणपीडनम् ॥१३॥
हृद्रोग मानहानि च धनधान्यपशुक्षयम् ॥ कलत्रपुत्रपीडायास्सचार देहविह्वलम् ॥१४॥
द्वितीयद्यूनराभे तुदेहजाड्यमनोरुजम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजप चरेत ॥ श्वेता गा महिषीं दद्यादायुरारोग्यदायिनीम् ॥१५॥

शुक्र का अन्तर मास १४ दि ०फल

केतु महादशा मे शुक्र का अन्तर हो। शुक्र केन्द्र, त्रिकोण लाभ मे दशमेश युक्त हो॥७॥ तो राजप्रीति, ऐश्वर्य राजसी पोशाक लक्ष्मी प्राप्त होती है॥८॥ यदि ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो नष्ट ऐश्वर्य की प्राप्ति, उत्तम वाहन सुख, रामेश्वरयात्रा देवदर्शन प्राप्त होता है॥९॥ राजा की कृपा से ग्राम भूमि का लाभ होता है। केतु यदि केन्द्र त्रिकोण, लाभ तथा तृतीयभाव में हो॥१०॥ तो देहारोग्य, शुभ तथा घर मे सुखशान्ति, उत्तम भोग्य पदार्थ तथा घोडा गाडी आदि का लाभ करता है॥११॥ केतु यदि ६।८।१२ भाव मे पापयुक्त हो तो अकस्मात् कलह तथा अन्न, पशु की हानि होती है॥१२॥ यदि केतु लग्न से ६।८ भाव मे नीचग्रह से युक्त हो तो परिवार मे वैमनस्य, सिर आख मे व्रण से पीडा॥१३॥ हृदयरोग, मानहानि, धन ऐश्वर्य पशु का क्षय, स्त्री-पुत्र को पीडा, देह विह्वल रहे॥१४॥ यदि केतु २।७ का स्वामी हो तो देहजाड्य तथा मन मे अशान्ति होती है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करना चाहिए तथा श्वेत् गौ का दान करना चाहिए॥१५॥ (यहा केतु की दशा मे ही केतु का अन्तर है। अत 'दायेशात्' पद व्यर्थ है।)

अथ रविभुक्तिमासाः ४ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते सूर्ये स्वोच्चे स्वक्षेत्रगेऽपि वा ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा शुभयोगनिरीक्षिते ॥१६॥ धनधान्यादिलाभश्च राजानुग्रहवैभवम् ॥ अनेकशुभकार्याणि चेष्टसिद्धिं सुखावहा॥१७॥ षष्ठाष्टव्ययराशिस्थे पापग्रहसमन्विते ॥ तद्भुक्तौ राजभीतिश्च पितृमातृवियोगकृत् ॥१८॥ विदेशगमनं चैव चौराहिविषपीडनम् ॥ राजमित्रविरोधश्च राजदण्डाद्धनक्षयः ॥१९॥ शोकरोगभयं चैव उष्णाधिक्यं ज्वरो भवेत् ॥यातु कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य ॥२०॥ देहसौख्यं चार्थलाभ पुत्रलाभ मनोदृढम् ॥ यातु कार्यार्थसिद्धि स्यात्स्वल्पग्रामाधिपत्य मुक् ॥२१॥ दायेशाद्व्ष्टरिःफे वा षष्ठे वा पापसयुते ॥ अन्नविघ्नो मनोभीतिर्धनधान्यपशुक्षयः ॥२२॥ आदौ मध्ये महाक्लेशानन्ते सौख्यं विनिर्दिशेत् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥२३॥ दर्शशान्ति प्रकुर्वीत स्वर्णधेनुं प्रदापयेत् ॥२४॥

सूर्य का अन्तर मा० ४ दि० ६ फल

केतु महादशा मे सूर्य का अन्तर हो। सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ मे स्वगृही, उच्चराशि का हो शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो॥१६॥ तो धन सम्पत्ति का लाभ, राज कृपा प्राप्त वैभव, अनेक शुभ कार्य तथा सुखकर इष्टसिद्धि हो॥१७॥ यदि सूर्य पापग्रह युक्त होकर ६।८।१२ भाव मे हो तो अन्तर मे राजभय, माता पिता से वियोग॥१८॥ विदेश यात्रा, चोर, सर्प, विष से पीडा तथा राजमित्र से विरोध और राजदण्ड से धनहानि होती है॥१९॥ शोक, रोग का भय तथा ज्वर की तीव्रता होती है। केतु से सूर्य केन्द्र त्रिकोण या २।११ भाव मे हो॥२०॥ तो देहसौख्य, धनलाभ, पुत्रलाभ मन की दृढता तथा यात्रा का साफल्य एवं ग्राम का साधारण अधिकार प्राप्त होता है॥२१॥ यदि सूर्य केतु से ६।८।१२ भाव मे पापयुक्त हो तो भोजन मे भी त्रुटि, धन, सम्पत्ति, पशु की हानि होती है॥२२॥ प्रथम और मध्य मे महान् दुःख और अन्त मे सुख हो। २।७ का स्वामी यदि सूर्य हो तो अपमृत्यु होती है॥२३॥ उपाय-"दर्श यज्ञ" तथा "सुवर्ण धेनु" का दान करना चाहिए॥२४॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः ७ दिना० ० तत्फलम्

केतोरन्तर्गते चन्द्रे स्वोच्चे स्वक्षेत्रराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा धने शुभसमन्विते ॥२५॥ राजप्रीतिर्महोत्साहः कल्याणञ्चमहत्सुखम् ॥ महाराजप्रसादेन गृहभूम्यादिलाभकृत् ॥२६॥ भोजनाम्बरपश्वादिव्यवसायेऽधिक फलम् ॥ अश्ववाहनलाभश्च वस्त्राभरणभूषणम् ॥२७॥ देवालयतडागादिपुण्यधर्मादिसंग्रहम् ॥ पुत्रदारादिसौख्यं च पूर्णचन्द्रस्तथैव च ॥२८॥ नीचे वा क्षीणगे चन्द्रे षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥ आत्मसौख्यं मनस्ताप कार्यविघ्नं महद्भयम् ॥२९॥ पितृमातृवियोग च देहजाड्य मनोव्यथाम् ॥ व्यवसायात्फल नष्टगोमहिष्यादिनाशकृत् ॥३०॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा लाभे वा बलसयुते ॥ कृषिगोभूमिलाभ च इष्टबन्धुसमागमम् ॥३१॥ ताम सात्कार्यसिद्धि च गृहे गोक्षीरमेव च ॥ भुक्त्यादौ शुभमारोग्यं मध्ये राजप्रियं शुभम् ॥३२॥ अंते तु राजभीति च विदेशगमन तथा ॥ दूरयात्राविसञ्चार सर्वाधिजनपूजनम् ॥३३॥ दायेशात्षष्ठरिःफे वा रन्ध्रे वा बलवर्जिते ॥ धनधान्यादिहानिश्च मनोव्याकुलमेव च ॥३४॥ स्वबन्धुजनदासत्व भ्रातृपीडा तथैव च ॥ निधनाधिपदोषेण द्विसप्तमाधिपे पुनः ॥३५॥ अपमृत्युभयं तस्य शान्ति कुर्याद्यथाविधि ॥ चन्द्रप्रतिकरं चैव ह्यायुरारोग्यसम्भवम् ॥३६॥

केतु दशा में चन्द्रान्तर मास ■ दि.० फल

केतु की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो। चन्द्रमा लग्न से केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या धनस्थान मे स्वोच्च या स्वगृही और शुभ ग्रहयुक्त हो॥२५॥ तो राजप्रीति, महान् उत्साह, कल्याण, महान् सुख एवं राजकृपा से गृह भूमिका लाभ होता है॥२६॥ उत्तम भोजन, सुन्दर वस्त्र, गौ आदि पशु, व्यापार से अधिक लाभ, घोडे की सवारी, श्रेष्ठ आभूषण,॥२७॥ देवमन्दिर, तालाब, पुण्य, धर्म आदि का संग्रह, स्त्री-पुत्र का सुख यह सुलभ होते है, यदि चन्द्रमा पूर्ण हो तो॥२८॥ चन्द्रमा नीच तथा क्षीण और ६।८।१२ राशि मे हो तो कि कर्तव्यविमूढता, मन मे असन्तोष, कार्य मे विघ्न, महान् भय,॥२९॥ पिता-माता का वियोग, देह की जडता, मन मे व्यथा, व्यापार मे हानि, गौ आदि पशुनाश होता है॥३०॥ केतु से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव मे बलवान हो तो कृषि गौ, भूमि का लाभ, प्रेमी बन्धु का दर्शन॥३१॥ कार्यसिद्धि, गोरस भोज्य, भूमि से सुन्दर खेती आरोग्यता, तथा अन्तर के मध्यकाल मे राजानुग्रह प्राप्त होता है॥३२॥ अन्तर के अन्त मे राजा से भय विदेशयात्रा, तथा दूर की यात्रा, सबन्धियो मे आदर॥३३॥ होता है। केतु से चन्द्रमा बलहीन तथा ६।८।१२ भाव मे हो तो धन सम्पत्ति की हानि मन मे व्याकुलता॥३४॥ स्वीयबन्धुओसे साहाय्य भ्राताओ से पीडा होती है। चन्द्रमा अष्टमाधिपति हो और २।७ भावाधीश से युक्त हो तो ॥३५॥ अकालमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति करना चाहिए। चन्द्रमा की प्रसन्नता के लिए दानादि करे तो आयु और आरोग्यता होती है॥३६॥

अथ कुजभुक्तिमासाः ४ दिना० २७ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते भौमे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे भौमे शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥३७॥ आदौ शुभफलं चैव ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ धनधान्यादिलाभश्च चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥३८॥ गृहारामक्षेत्रलाभं राजानुग्रहवैभवम् ॥ भाग्य कर्मेशसंबंधे भूलाभं सौख्यमेव च ॥३९॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा वृश्चिकये लाभगेपि वा ॥ राजप्रीतियशोलाभं पुत्रमित्रादिसौख्यकृत् ॥४०॥ षष्ठाष्टमव्यये भौमे दायेशाद्धनगेपि वा॥ द्रुतं करोति मरणं विदेशं चापदं भ्रमम् ॥४१॥ प्रमेहमूत्रकृच्छ्रादिचौरादिनृपपीडनम् ॥ कलहादौ व्यथायुक्तं किंचित्सुखविवर्द्धनम् ॥४२॥ द्वितीयद्यूननाथे तु तापज्वरविषाद्भयम् ॥ दारपीडा मनःक्लेशमपमृत्युभयं भवेत् ॥४३॥ अनड्वाहं प्रदद्यात्तु सर्वसंपत्सुखावहम् ॥४४॥

मंगल का अंतर मास ४ दि० २७ फल

केतु की महादशा मे मंगल का अन्तर हो। मंगल लग्न मे केन्द्र, त्रिकोण, अपने उच्च में या स्वगृही हो शुभग्रहदृष्टि युक्त या दृष्ट हो॥३७॥ तो अन्तर मे पूर्वार्द्ध मे शुभफल होता है। ग्रामभूमि का लाभ होता है, धन सम्पत्ति तथा गौ आदि प्राप्त होते है॥३८॥ मकान, बागीचा, खेत की भूमि आदि सब राजकृपा से प्राप्त होती है। ९।१० से सम्बन्ध हो तो पृथ्वी का लाभ और सुख होता है॥३९॥ केतु से मंगल केन्द्र, त्रिकोण, तृतीय तथा लाभभाव मे हो तो राजप्रीति, यशोविस्तार, पुत्र मित्र आदि का सुख हो॥४०॥ मंगल ६।८।१२।२ भावमें तो विदेश मे भ्रमण, आपत्ति तथा मृत्यु कारक होता है॥४१॥ प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र की बीमारी,

चोर तथा राजा से पीड़ा कलह, दुःख तथा कभी कुछ सुख होता है॥४२॥ २।७ का स्वामी हो तो ज्वर और विष से भय हो, स्त्री को पीड़ा, मन में क्लेश तथा अपमृत्यु का भय होता है॥४३॥ बैल का दान करने से सब सुख होता है॥४४॥

अथ राहुभुक्तिमासाः १२ दिना. १८ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते राहौ स्वोच्चे मित्रस्वराशिगे ॥ केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये धनसञ्ज्ञके ॥४५॥ तत्काले धनलाभं स्यात्संसारो भवति ध्रुवम् ॥ म्लेच्छप्रभुवशात्सौख्यं धनधान्यफलादिकम् ॥४६॥ चतुष्पाज्जीवलाभं स्याद्ग्रामभूम्यादिलाभकृत् ॥ भुक्त्यादौ क्लेशमाप्नोति मध्यान्ते सौख्यमाप्नुयात् ॥४७॥ रन्ध्रे वा व्यये राहौ पापसदृष्टिसंयुते ॥ बहुपुत्र कृशा देह शीतज्वरविषाद्भयम् ॥४८॥ चातुर्थिकज्वरं चैव ह्युपद्रवपीडनम् ॥ अकस्मात्कलहं चैव प्रमेहं शूलमेव च ॥४९॥ द्वितीयसप्तमस्थे वा तदा क्लेशमहद्भयम् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं दुर्गादेवीजपं चरेत् ॥ अयुतहोमं कर्त्तव्यं सर्वसौख्यप्रदायकं ॥५०॥

केतु की दशा में राहु का अन्तर मा० १२ दि० १८ फल

केतु की महादशा में राहु का अन्तर हो। राहु स्वोच्च या मित्रराशि में केन्द्र त्रिकोण, लाभ, तथा २।३ भाव में हो तो॥४५॥ अन्तर में धन लाभ संसार सुखमय होता है। यवन आदि अधिकारी द्वारा सुख तथा धन संपत्ति होती है॥४६॥ चौपाया पशु का लाभ, तथा ग्राम भूमि का लाभ होता है। अन्तर के आदि में क्लेश तथा मध्य और अन्त में सुख होता है॥४७॥ ८।१२ में पापग्रह से युक्त राहु हो तो बहुत सन्तान के भरण पोषण में असमर्थता, शीतज्वर, विषभय,॥४८॥ चौथैया ज्वर तथा उपद्रवों से पीड़ा, अकस्मात् कलह, प्रमेह तथा शूल॥४९॥ होता है और यदि राहु २।७ की राशि में हो तो महान् भय और क्लेश होता है। इसकी शान्ति के लिए 'दुर्गा' मन्त्र का जप करे और दश हजार आहुति से होम करे तो सब प्रकार का सुख होता है॥५०॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ११ दिना० ६ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते जीवे केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे वापि लग्नाधिपसमन्विते ॥५१॥ कर्मभाग्याधिपैर्युक्ते धनधान्यार्थसंपदम् ॥ राजप्रीति मनोत्साहमश्वांदोल्यादिलाभकृत् ॥५२॥ गृहे कल्याणसंपत्ति पुत्रलाभं महोत्सवम् ॥ पुण्यतीर्थं तपोत्साहं सत्कर्म च सुखावहम् ॥५३॥ इष्टदेवप्रसादेन विजयं कार्यलाभकृत् ॥ राजसंल्लापकार्याणि नूतनप्रभुदर्शनम् ॥५४॥ षष्ठाष्टमव्यये जीवे दायेशान्नीचगेऽपि वा ॥ चौराहिव्रणभीतिं च धनधान्यादिनाशनम् ॥५५॥ पुत्रदारवियोगं च अतीवक्लेशसंभवम् ॥ आदौ शुभफलं चैव अंते क्लेशकरं भवेत् ॥५६॥ दायेशात्केन्द्रकोणे वा दुश्चिक्ये लाभगेऽपि वा ॥ शुभयुक्ते नृपाद्भूतिर्विविचित्राम्बरभूषणम् ॥५७॥ दूरदेशप्रयाणं च स्वबंधुजनपोषणम् ॥ भोजनाम्बरपश्वादिभुक्त्यादौ देहपीडनम् ॥५८॥ अंते तु स्यान्नचलनमकस्मात्कलहो भवेत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥५९॥ तद्दोषपरिहारार्थं शिवसाहस्रकं जपेत् ॥ महामृत्युंजयं जाप्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥६०॥

गुरु का अन्तर मास ११ दि० ६ फल

केतु महादशा में गुरु का अन्तर हो। गुरु केन्द्र त्रिकोण तथा लाभ में उच्च राशि का या

स्वगृही या लग्नेश युक्त हो॥५१॥ गुरु ९।१० भाव के स्वामी से युक्त हो तो धनसम्पत्ति होती है। राजप्रीति, मन मे उत्साह तथा घोडा गाडी या मोटर की सवारी होती है॥५२॥ घर मे कल्याण, सम्पत्ति, पुत्रलाभ से महोत्सव तथा पवित्र तीर्थ यात्रा, उत्साह और सुख होता है॥५३॥ इष्ट देव कृपा से विजय और कार्य से लाभ होता है। राजा से मेलमिलाप, नये प्रभु का दर्शन॥५४॥यदि गुरु ६।८।१२ मे (लग्न से या केतु से) नीचस्थित हो तो चोर,सर्प,घाव से भय और धन-सम्पत्ति का नाश होता है॥५५॥ स्त्री-पुत्र से वियोग और बहुत क्लेश होता है। आदि मे शुभ फल और अन्त मे क्लेशकारी होता है॥५६॥ यदि केतु से गुरु केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव तथा तृतीयभाव मे शुभयुक्त हो तो राजभय, सुन्दर विचित्र भूषण॥५७॥ दूरदेश की यात्रा, परिवार का भरण-पोषण, उत्तम भोजन, सुन्दर गौ आदि पशु की प्राप्ति हो। अन्तर के आदि मे कुछ देहपीडा हो॥५८॥ अन्त मे स्थानविच्युति हो, अचानक कलह हो। गुरु यदि २।७ भाव का स्वामी हो तो अपमृत्यु होती है॥५९॥ इसकी शान्ति के लिए 'शिवसहस्रनाम' का पाठ और 'महामृत्युञ्जय' का जप करे तो सब उपद्रवो का नाश होता है॥६०॥

अथ शनिभुक्तिमासाः १६ दिना० ९ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते मन्दे स्वदशाया तु पीडनम् ॥ बधो क्लेशो मनस्तापश्चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥६१॥
राजकार्यकलापेन धननाश महद्भयम् ॥ स्थानाच्च्युति प्रवासश्च मार्गे चौरभय भवेत् ॥६२॥
आलस्य मनसो हानिश्चाष्टमे व्ययराशिगे ॥ मीनत्रिकोणगे मन्दे तुलाया स्वर्क्षगेपि वा ॥६३॥
केन्द्रत्रिकोणलाभे वा दुश्चिक्ये वा शुभाशके ॥ शुभदृष्टिसमाप्तौ च सर्वकार्यार्थसाधनम् ॥६४॥
स्वप्रभोश्च महत्सौख्य भ्रमण रणलाभकम् ॥ स्वग्रामे सुखसपत्ति स्ववर्गे राजदर्शनम् ॥६५॥
दायेशात्षष्ठरिःफे वा अष्टमे पापसयुते । देहतापो मनस्ताप कार्ये विघ्नो महद्भयम् ॥६६॥
आलस्य मानहानिश्च पितृमात्रोर्विनाशनम् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युभय भवेत् ॥६७॥
तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोम च कारयेत् ॥ कृष्णा गा महिषीं दद्यादायुरारोग्यवृद्धिदाम् ॥६८॥

शनि का अन्तर मास १६ तथा दिन ९ फल

केतु की दशा म शनि का अन्तर हो तो पीडा, बधन, क्लेश, सताप, पशुहानि होती है॥६१॥ राज कार्य के कारण धन हानि, महान् भय, स्थानभ्रश, परदेश मे वास, यात्रा मे चोरो का भय॥६२॥ आलस्य, चिन्ता हो। यदि शनि ८।१२ भाव मे मीन राशि मे त्रिकोणभाव मे या तुलाराशि मे अथवा स्वराशि मे हो॥६३॥ केन्द्र, त्रिकोण, लाभभाव मे या तीसरे भाव मे शुभग्रह के नवाश मे हो, शुभदृष्टि हो तो सम्पूर्ण कार्य तथा मनोरथ सिद्ध होते है॥६४॥ अपने स्वामी द्वारा महान् सुख भ्रमण तथा रण मे लाभ होता है, अपने ग्राम मे सुख सम्पत्ति प्राप्त हो और यदि शनि अपने वर्ग मे हो तो राजदर्शन हो॥६५॥ केतु से यदि शनि ६।८।१२ भाव मे पापग्रह युक्त हो तो देह मे ज्वर, मन मे अशान्ति, कार्य मे विघ्न तथा महान् भय होता है॥६६॥ आलस्य, मानहानि, माता पिता का निधन होता है। और २।७ का स्वामी हो तो अपमृत्यु का भय होता है॥६७॥ इसकी शान्ति के लिए 'तिल-होम' तथा काली गौ का दान करे तो आयु तथा आरोग्यता होती है॥६८॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ११ दि० २७ तत्फलम्

केतोरन्तर्गते सौम्ये केन्द्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रसंयुक्ते राज्यलाभो महत्सुखम् ॥६९॥
सत्कथाश्रवणं दानं धर्मसिद्धिः सुखावहा ॥ भूलाभः पुत्रलाभश्च शुभगोष्ठीधनागमः ॥७०॥
अयत्नाद्धर्मलब्धिश्च विवाहश्च भविष्यति ॥ गृहे शुभकरं चैव वस्त्राभरणभूषणम् ॥७१॥
भाग्यकर्माधिपैर्युक्ते भाग्यवृद्धिः सुखावहा ॥ विद्वद्गोष्ठीकलापेन संलापो भूषणादिकम् ॥७२॥
षष्ठाष्टमव्यये सौम्ये मन्दाराहियुतेक्षिते ॥ विरोधराजकार्याणि परगेहनिवासनम् ॥७३॥
वाहनाम्बरपश्वादिधनधान्यादिनाशकृत्॥ भुक्त्यादौ शोभनं प्रोक्तं मध्ये सौख्यं धनागमम् ॥७४॥

बुध का अन्तर मा० ११ दि० २७ फल

केतु की महादशा में बुध का अन्तर हो। बुध लग्न से केन्द्र, लाभ त्रिकोण में उच्चराशि का या स्वगृही हो तो राजा से लाभ और महान् सुख होता है॥६९॥ इसके अन्तर में सत्कथा श्रवण, दान, धर्म, तथा सुख और भूमिलाभ पुत्र लाभ, मित्रगोष्ठी तथा धन प्राप्ति होती है॥७०॥ प्राय बिना परिश्रम ही धर्मलब्धि विवाह तथा घर में वस्त्राभरण, मंगल होता है॥७१॥ ९।१० भाव का स्वामी भी युक्त हो तो भाग्य की वृद्धि हो, विद्वद्गोष्ठी का आनन्द रहे, भूषण आदि की प्राप्ति हो॥७२॥ यदि बुध ६।८।१२ भाव में मंगल शनि राहु युक्त हो तो राजकार्य में विरोध परगृह में निवास होता है॥७३॥ वाहन वस्त्र पशु, धन, सम्पत्ति आदि का नाश होता है। अन्तरके आदिमें शुभ तथा मध्यमें सुख और धनप्राप्ति हो॥७४॥

अन्ते क्लेशकरं चैव दारपुत्रादिपीडनम् ॥ दायेशात्केन्द्रगे सौम्ये त्रिकोणे लाभगेऽपि वा ॥७५॥
देहारोग्यं महांलाभं पुत्रकल्याणवैभवम् ॥ भोजनाम्बरपश्वादिव्यवसायेऽधिकं फलम् ॥७६॥
दायेशात्षष्ठरन्ध्रे वा व्यये वा बलवर्जिते ॥ तद्भुक्त्यादौ महाक्लेशो दारपुत्रादिपीडनम्
॥७७॥ राजभीतिकरं चैव मध्ये तीर्थकरं भवेत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु ह्यपमृत्युर्भविष्यति ॥
तद्दोषपरिहारार्थं विष्णुसाहस्रकं जपेत् ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे वि० केत्वन्तर्दशाफलकथनं नाम
चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अन्तर के अन्त में दुःख, स्त्री पुत्र को पीडा हो। केतु से बुध केन्द्र में त्रिकोण में या लाभभाव में हो तो॥७५॥ आरोग्यता, महान् लाभ पुत्र कल्याण वैभव, उत्तम भोजन, वस्त्रादि गौ आदि पशु तथा लाभकारी व्यापार होता है॥७६॥ केतु से बुध ६।८।१२ में बलहीन हो तो उसके अन्तर के आदि में महाक्लेश, स्त्री, पुत्र को पीडा॥७७॥ राजभय होता है, मध्य में तीर्थयात्रा होती है। २।७ का स्वामी बुध हो तो अपमृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिए 'विष्णुसहस्रनाम' स्तोत्र का पाठ करे॥७८॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० केत्वन्तर्दशाफलकथननाम
चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४०॥

अथ शुक्रदशायां शुक्रभुक्ति मासाः ४० दिना०० तत्फलम्

भृगोरन्तर्गते शुक्रे लग्नात्केन्द्रत्रिकोणगे ॥ लाभे वा बलसयुक्ते योगप्राबल्यमादिशेत् ॥१॥ विप्रमूलाद्धनप्राप्तिर्गोमहिष्यादिलाभकृत् ॥ पुत्रोत्सवादिसतोष गृहे कल्याणसभवम् ॥२॥ सन्मान राजसन्मान राज्यलाभो महत्सुखम् ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि तुगाशे स्वाशगेपि वा ॥३॥ नूतनालयनिर्माण नित्य मिष्टान्नभोजनम् ॥ कलत्रपुत्रविभव मित्रसयुक्तभोजनम् ॥४॥ अन्नदान प्रिय नित्य दानधर्मादिसग्रह ॥ महाराजप्रसादेन वाहनाबरभूषणम् ॥५॥ व्यवसायात्फलाधिक्य चतुष्पाज्जीवलाभकृत् ॥ प्रयाण पश्चिमे भागे वाहनाबरलाभकृत् ॥६॥ लग्नाद्युपचये शुक्रे शुभदृष्टियुतेक्षिते ॥ मित्राशे तुगलाभेशयोगकारकसयुते ॥७॥ राज्यलाभो महोत्साहो राजप्रीति शुभावहा ॥ गृहे कल्याणसपत्तिर्दारपुत्रादिवर्द्धनम् ॥८॥ षष्ठाष्टमव्यये शुक्रे पापयुक्तेऽथ वीक्षिते ॥ चौराहिव्रणभीतिश्च सर्वत्र जनपीडनम् ॥९॥ राजद्वारे जनद्वेष इष्टबन्धुविनाशनम् ॥ दारपुत्रादिपीडा च सर्वत्र जनपीडनम् ॥१०॥ द्वितीयद्यूननाथे तु स्थिते चेन्मरण भवेत् ॥ शुक्रे दुर्गाजप कुर्याद्धेनुदान च कारयेत् ॥११॥

शुक्रदशा मे शुक्रान्तर वर्ष ३ मा० ४ दि ० फल

शुक्र की महादशा मे शुक्र का अन्तर हो। शुक्र लग्न से केन्द्र त्रिकोण मे या लाभ मे बलवान् होकर स्थित हो तो प्रबल योग होता है॥१॥ ब्राह्मण के द्वारा धन प्राप्ति हो, गौ आदि पशु का लाभ तथा पुत्रोत्सव आदि सन्तोष हो घर मे सुख शान्ति हो॥२॥ समाज मे सम्मान राजा से मान तथा लाभ एव महान् सुख होता है। यदि शुक्र अपने उच्चस्थान मे स्वराशि का, उच्चाश मे अपने नवाश मे हो॥३॥ तो नया मकान बने तथा नित्य उत्तम भोजन, स्त्री पुत्र का वैभव इष्टमित्रो सहित भोजन (मित्रगोष्ठी)॥४॥ अन्नदान, दान-धर्म आदि का सग्रह होता है। राजकृपा से वाहनादि प्राप्त होता है॥५॥ व्यापार से अधिक लाभ, चौपाया जीव का लाभ तथा पश्चिम दिशा की यात्रा मे भी वाहनादि का लाभ होता है॥६॥ लग्नादि केन्द्र मे शुभदृष्टियुक्त शुक्र हो या मित्र नवाश मे उच्च मे तथा लाभश योग हो या कारकेश का योग हो तो॥७॥ राजा से लाभ महान् उत्साह, राजप्रीति, घर मे सुख शान्ति, स्त्री पुत्र की वृद्धि होती है॥८॥ शुक्र यदि ६।८।१२ भाव मे पापयुक्त या दृष्ट हो तो चोर सर्प घाव आदि मे भय तथा जनपीडा होती है॥९॥ राजद्वार मे पराजय इष्ट बन्धुओ से द्वेष तथा हानि, स्त्री पुत्र आदि को पीडा प्राय समाज मे निन्दा होती है॥१०॥ शुक्र २।७ का स्वामी हो तो मृत्यु होती है। इसकी शान्ति के लिय दुर्गा मन्त्र जप तथा गौदान करना चाहिए॥११॥

अथ रविभुक्तिमासाः १२ दिना . ० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते सूर्ये सताप राजविड्वरम् ॥ दायादिकलह चैव व्यवहारभयापि वा ॥१२॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे सूर्ये मित्रर्क्षे केन्द्रकोणगे ॥ दायेशाच्छुभभावे वा लाभे वा धनगेऽपि वा ॥१३॥ तद्भुक्तौ धनलाभ स्याद्राज्यस्त्रीधनसपद ॥ स्वप्रभोश्च महत्सौख्यमिष्टबधो समागम ॥१४॥ पितृमात्रो सुखप्राप्ति भ्रातृलाभ सुखावहम् ॥ सत्कीर्तिं सुखसौभाग्य पुत्रलाभ च

विदति ॥१५॥ षष्ठाष्टमव्यये सूर्ये दायेशाद्द्वादशे तथा ॥ नीचे बा पापवर्गस्थे देहताप मनोरुजम् ॥१६॥

शुक्र दशा मे सूर्यान्तर मा० १२ फल

शुक्र की महादशा मे सूर्य का अन्तर हो, सूर्य लग्न से केन्द्र, त्रिकोण मे अथवा शुक्र से शुभस्थान मे लाभ, धन भावो मे हो, उच्च राशि, स्वगृही या मित्र राशि मे हो तो धनलाभ, ऐश्वर्य, स्त्री, धन सम्पत्ति, स्वामी से सुख प्राप्ति, इष्ट बन्धु का समागम, माता पिता को सुख प्राप्ति, भ्राता का लाभ, सत्कीर्ति, सुख, सौभाग्य तथा पुत्र लाभ होता है॥१२॥१३॥१४॥ शुभ योग तथा पापयोग रहित सूर्य की दशा सताप, राजविग्रह, रोग, परिवार मे कलह, व्यापार मे साधारण लाभ करती है॥१५॥ सूर्य लग्न से ६।८।१२ मे या शुक्र से १२ वे नीच अथवा पापवर्ग मे हो तो ज्वर, चिन्ता होती है॥१६॥

स्वजनात्परिसक्लेशो नित्य निष्ठुरभाषणम् ॥ पितृपीडा बधुहानी राजद्वारे विरोधकृत् ॥१७॥ व्रणपीडाहिबाधा च स्वर्क्षेगे च भय तथा ॥ नानारोगभय चैव गृहक्षेत्रादिनाशनम् ॥१८॥ सप्तमाधिपदोषेण ग्रहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं सूर्यप्रीति च कारयेत्॥१९॥

स्वजनो से क्लेश, नित्य लडाई झगडा, पिता को पीडा, बन्धु की हानि, राजद्वार मे विरोध होता है॥१७॥ घाव जनित पीडा, सर्प बाधा तथा भय होता है। नानारोग से भय, मकान, भूमि का नाश होता है॥१८॥ सूर्य यदि सप्तमेश हो तो ग्रह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये सूर्य का दान, जप आदि करना चाहिए॥१९॥

अथ चन्द्रभुक्तिमासाः २० दिना ०० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते चद्रे केद्रलाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे स्वक्षेत्रगे चैव भाग्यकर्मेशसयुते ॥२०॥ शुभयुक्ते पूर्णचद्रे राज्यनाथेन सयुते ॥ तद्भुक्तौ वाहनाधिक्येनापत्येन महत्सुखम् ॥२१॥ महाराजप्रसादेन गजान्तैश्वर्यमादिशेत् ॥ महानदीस्नानपुण्य देवब्राह्मणपूजनम् ॥२२॥ गीतवाद्यप्रसगादिविद्वज्जनविभूषणम् ॥ गोमहिष्यादिवृद्धिश्च व्यवसायेऽधिक फलम् ॥२३॥ भोजनाबरसौख्य च बधुसयुक्तभोजनम् ॥ नीचे वास्तगते वापि षष्ठाष्टव्ययराशिगे ॥२४॥

चन्द्रमा का अन्तर मा० २० फल

शुक्र की महादशा मे चन्द्रमा का अन्तर हो, चन्द्रमा केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे उच्च राशि या स्वगृही अथवा ९।१० के स्वामी से युक्त हो॥२०॥ शुभग्रह युक्त पूर्ण चन्द्र हो अथवा दशम ग्रह से युक्त हो तो बहुत सवारियाँ तथा सतानो से बहुत सुख होता है॥२१॥ राजकृपा से हाथी पर्यन्त ऐश्वर्य हो। गगा आदि नदी का स्नान, देव ब्राह्मण पूजा॥२२॥ गानवाद्य का प्रसग, विद्वद्जन गोष्ठी होती है। गौ आदि पशु की वृद्धि, व्यापार मे लाभ अधिक होना है॥२३॥ उत्तम भोग पदार्थ, मित्र गोष्ठी होती रहती है। चन्द्रमा यदि नीच का अस्त होकर ६।८।१२ भाव मे हो॥२४॥

दायेशात्षष्ठगे वापि रंध्रे वा व्ययराशिगे ॥ तत्काले धननाशः स्यात्संचरेत् महद्भयम् ॥२५॥
देहायासो मनस्तापो राजद्वारे विरोधकृत् ॥ विदेशगमनं चैव तीर्थयात्रादिकं फलम् ॥२६॥
दारपुत्रादिपीडा च आत्मबधुवियोगकृत् ॥ दायेशात्केंद्रलाभस्थे त्रिकोणे व्ययगेपि वा ॥२७॥
राजप्रीतिकरं चैव देशग्रामाधिपत्यता ॥ धैर्यं यशः सुखं कीर्तिर्वाहनांबरभूषणम् ॥२८॥
कूपारामतडागादिनिर्माणं धनसंग्रहः ॥ भुक्त्यादौ देहसौख्यं स्यादंते क्लेशकरं भवेत् ॥२९॥

शुक्र से ६।८।१२ मे हो तो अन्तर मे धन नाश, भ्रमण, महान् भय होता है॥२५॥ देह, दु खी, मन चिन्तित, राजद्वार मे विरोध, विदेश यात्रा तथा तीर्थ यात्रा होती है॥२६॥ स्त्री पुत्र आदि को पीडा, बन्धु वियोग होता है। शुक्र से चन्द्रमा केन्द्र, त्रिकोण, लाभ या व्यय भाव मे हो॥२७॥ तो राजा की प्रसन्नता, देश या ग्राम का अधिकार, धैर्य, कीर्ति, सुख, वाहन आदि प्राप्त होते है॥२८॥ कूप, तडाग, बागीचा आदि निर्माण होता है। धन का संग्रह होता है। अन्तर के आदि मे सुख, अन्त मे क्लेश होता है॥२९॥

अथ कुजभुक्तिमासाः १४ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते भौमे लग्नात्केंद्रत्रिकोणगे स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे भौमे लाभे वा बलसयुते ॥३०॥
लग्नाधिपेन संयुक्ते कर्मभाग्येन संयुते ॥ तद्भुक्तौ राजयोगादिसंपद शुभशोभनम् ॥३१॥
वस्त्राभरणभूम्यादेरिष्टसिद्धिः सुखावहा ॥ षष्ठाष्टमव्यये वापि दायेशाद्वा तथैव च ॥३२॥
शीतज्वरादिपीडा च पितृमातृभयावहा ॥ ज्वराद्यधिकरोगाश्च स्थानभ्रंशो मनोरुजा ॥३३॥
स्वबंधुजनहानिश्च कलहो राजविग्रहम् ॥ राजद्वारजनद्वेषो धनधान्यव्ययोधिकम् ॥३४॥
व्यवसायात्फलं नेष्टं ग्रामभूम्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयद्यूननाथे तु देहबाधा भविष्यति ॥३५॥

मगल का अतर मा० १४ दि० ० फल

शुक्र की महादशा मे मगल का अन्तर हो। मगल लग्न से केन्द्र, त्रिकोण मे स्वोच्च या स्वराशि का हो या बलवान होकर लाभ मे हो॥३०॥ अथवा लग्नेश युक्त हो या ९।१० के स्वामी से युक्त हो तो अन्तर मे राजयोग के समान सम्पत्ति और शुभ है॥३१॥ उत्तम वस्त्रादि से इष्ट सिद्धि और शुभ होता है। लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ भाव मे॥३२॥ हो तो शीत ज्वर आदि पीडा, माता पिता को भय तथा ज्वर आदि रोग, स्थानभ्रंश, मन मे चिन्ता, बन्धु हानि॥३३॥ कलहादि, राज से विरोध, राजद्वार के जन से विरोध, अधिक खर्च॥३४॥ व्यापार मे हानि, ग्राम भूमि की हानि होती है। यदि मगल २।७ का स्वामी हो तो देहबाधा होती है॥३५॥

अथ राहुभुक्तिमासाः ३६ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते राहौ केंद्रलाभत्रिकोणगे॥ स्वोच्चे वा शुभसंदृष्टे योगकारकसंयुते॥३६॥ तद्भुक्तौ बहुसौख्यं च धनधान्यादिलाभकृत् ॥ इष्टबंधुसमाकीर्णं भोजनांबरलाभगम् ॥३७॥ यातु कार्यार्थसिद्धिः स्यात्पशुक्षेत्रादिसंभवः ॥ लग्नादुपचये राहौ तद्भुक्तिः सुखदा भवेत् ॥३८॥

राहु का अन्तर मास ३६ दिन ० फल

शुक्र की महादशा मे राहु का अन्तर हो। राहु लग्न मे केन्द्र, लाभ, त्रिकोण मे हो, उच्चराशि मे,

शुभ दृष्ट अथवा कारकग्रह से युक्त हो॥३६॥ तो अंतर में बहुत सुख, धन सम्पत्ति का लाभ, इष्ट मित्रों से युक्त, उत्तम भोगों का लाभ हो॥३७॥ यदि यात्रा करे तो कार्य तथा धन की सिद्धि हो, पशु तथा भूमि की प्राप्ति होती है। यदि राहु केन्द्र में हो तो अन्तर शुभ होता है॥३८॥

शत्रुनाशो महोत्साहो राजप्रीतिकरी शुभा ॥ भुक्त्यादौ शरमासाश्च अंते ज्वरमजीर्णकृत् ॥३९॥ कार्ये विघ्नमवाप्नोति सचर च मनोव्यथाम् ॥ पर सुख च सौभाग्य महानिव समश्नुते ॥४०॥ नैर्ऋत्यां दिशमाश्रित्य प्रयाण प्रभुदर्शनम् ॥ यातु कार्यार्थसिद्धिः स्यात्स्वदेशे पुनरेष्यति ॥४१॥ उपकारो ब्राह्मणानां तीर्थयात्राफल भवेत् ॥ दायेशाद्रिपुरध्रस्थे व्ययेवापापसयुते ॥४२॥ अशुभ लभते कर्म पितृमातृजनावधि ॥ सर्वत्र जनविद्वेष नानाकृपादिसभवम् ॥४३॥ द्वितीये सप्तमे वापि देहालस्य विनिर्दिशेत् ॥ तद्दोषपरिहारार्थं मृत्युजयजप चरेत् ॥४४॥

शत्रु का नाश, महान् उत्साह, राजा से प्रीति होती है। आरम्भ में ६ महीने तक शुभ है। अन्त में ६ मास ज्वर और अजीर्ण की विमारी हो॥३९॥ कार्य में विघ्न, व्यर्थ की यात्रा, मन में चिन्ता होती है। शुभ योग में परम सुख और सौभाग्य होता है॥४०॥ नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा, बड़े आदमी से मिलाप तथा मनोरथ सिद्ध करके पुन देश में आना होता है॥४१॥ ब्राह्मणों का उपकार, तीर्थयात्रा होती है। शुक्र से राहु ६।८।१२ स्थानों में पापयुक्त हो॥४२॥ तो अशुभ होता है। संपूर्ण परिवार तथा समाज में नेष्ट फल होता है॥४३॥ राहु यदि २।७ में हो तो आलस्य और कार्य हानि होती है। इसकी शान्ति के लिये 'मृत्युञ्जय' जप होना चाहिए॥४४॥

अथ गुरुभुक्तिमासाः ३२ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यांतर्गते जीवे स्वोच्चे स्वक्षेत्रकेन्द्रगे ॥ दायेशात्कुमराशिस्थे भाग्ये वा कर्मराशिगे ॥४५॥ नष्टराज्याद्धनप्राप्तिमिष्टार्थाम्बरसपदम् ॥ मित्रप्रभोश्चसन्मानधनधान्यपरा गतिम् ॥४६॥ राजसन्मानकीर्तिं च अश्वादोलाविलासकृत् ॥ विद्वत्प्रभुसमाकीर्ण शास्त्रापार परिश्रमम् ॥४७॥ पुत्रोत्सवादिसतोषमिष्टबंधुसमागमम् ॥ पितृमातृसुखप्राप्ति भ्रातृपुत्रादि-सौख्यकृत् ॥४८॥ दायेशात्षष्ठराशिस्थे व्यये वा पापसयुते ॥ राजचौरादिपीडा च देहपीडा भविष्यति ॥४९॥ आत्मबंधुकष्ट स्यात्कलहेन मनोव्यथा ॥ स्थानच्युति प्रवासश्च नानारोग समाप्नुयात् ॥५०॥ द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ॥ तद्दोषपरिहारार्थं महामृत्युजय चरेत् ॥५१॥

गुरु का अन्तर मा० ३२ दि० ० फल

शुक्र की महादशा में वृहस्पति का अन्तर हो वृहस्पति मन में या शुक्र से उच्चराशि में या स्वगृही होकर केन्द्र में, त्रिकोण में, भाग्य या दशम में हो॥४५॥ तो नष्ट हुआ ऐश्वर्य प्राप्त होता है। मनोरथ पूर्ति तथा सम्पत्ति, मित्र तथा प्रभु से सम्मान, धन सम्पत्ति प्राप्त होती है॥४६॥ राजा से सम्मान और कीर्ति तथा सवारी प्राप्त होती है। विद्वद्जन-गोष्ठी होती रहती है। शास्त्र में अपार परिश्रम होता है॥४७॥ पुत्रोत्सव आदि सन्तोष, इष्ट बन्धु वा

समागम होता है। माता पिता को सुख तथा भ्राता को पुत्र का सुख होता है॥४८॥ शुक्र से गुरु ६।१२ भाव में पापयुक्त हो तो राज, चोर आदि से पीडा तथा देह पीडा होती है॥४९॥ अपने पास रहनेवाले बन्धु को कष्ट होता है। पारिवारिक कलह से मन मे चिन्ता रहती है। स्थान हानि, प्रवास तथा अनेक रोग होते हैं॥५०॥ गुरु यदि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये 'महामृत्युञ्जय' का जप करना चाहिए॥५१॥

अथ शनिभुक्तिमासाः ३८ दिना० ० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते मन्दे स्वोच्चे तु परमोच्चगे ॥ स्वर्क्षकेन्द्रत्रिकोणस्थे तुङ्गांशे स्वांशगेऽपि वा ॥५२॥ तद्भुक्तौ बहुसौख्यं स्यादिष्टबन्धुसमन्विते ॥ सन्मानं बहुसन्मानं पुत्रिकागमनं शुभम् ॥५३॥ पुण्यतीर्थफलावाप्तिर्दानधर्मादिपुण्यकृत् ॥ स्वप्रभोश्च विशेषं स्यादति वा क्लेशभाग्भवेत् ॥५४॥ देहालस्यमवाप्नोति आदायादधिकव्ययम् ॥ षष्ठाष्टमव्यये मन्दे दायेशाद्वा तथैव च ॥५५॥ भुक्त्यादौ देहआरोग्यं पितृमातृजनावधि ॥ दारपुत्रादिपीडा च सहारे देहविभ्रमम् ॥५६॥ व्यवसायात्फलं नष्टं गोमहिष्यादिहानिकृत् ॥ द्वितीयसप्तमाधीशे देहबाधा भविष्यति ॥५७॥ तद्दोषपरिहारार्थं तिलहोमं च कारयेत् ॥५८॥ यो गां ददाति भृगुजस्य दशाविपाके सौख्यं सदा नृपतितुल्यमुपैति लक्ष्मीम् ॥ श्रेयो यशः सुविजयो बहुराज्यलाभः श्रीसूर्यभास्करज-निर्बहुभाग्यभाक् स्यात् ॥५९॥

शनि का अन्तर मा० ३८ दि ० फल

शुक्र की दशा में शनि का अन्तर हो, शनि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में, स्वराशि, उच्चराशि, परमोच्च में या अपने अंश में हो तो॥५२॥ अन्तर में बहुत सुख, इष्ट बन्धु से मिलाप, सम्मान, समाज में प्रतिष्ठा, परिवार में कन्या का जन्म होता है॥५३॥ पवित्र तीर्थ यात्रा, दान धर्म आदि पुण्य कार्य आदि शुभ फल के बाद दशा के उत्तरार्ध में अपने स्वामी से वैमनस्य अथवा क्लेश हो॥५४॥ देह में आलस्य, आमदनी से अधिक खर्च होता है। शनि लग्न से या शुक्र से ६।८।१२ में हो॥५५॥ तो अन्तर के आदि में परिवार में आरोग्यता, उत्तरार्ध में स्त्रीपुत्र को पीडा और अपने शरीर में विभ्रम (चक्कर आना) होता है॥५६॥ व्यापार में लाभ नष्ट, पशु आदि की हानि होती है। यदि शनि २।७ का स्वामी हो तो देह बाधा होती है॥५७॥ इसकी शान्ति के लिये तिल का हवन करना चाहिए॥५८॥ जो मनुष्य शुक्र दशा में शनि के अन्तर में गौ का दान करता है वह राजा के समान सुख और लक्ष्मी प्राप्त करता है। कल्याण, यश, विजय तथा राज्य लाभ होता है॥५९॥

अथ बुधभुक्तिमासाः ३४ दिना ० तत्फलम्

शुक्रस्यान्तर्गते सौम्ये केन्द्रे लाभत्रिकोणगे ॥ स्वोच्चे वा स्वर्क्षगे वापि राजप्रीतिकरं शुभम् ॥६०॥ सौभाग्यं पुत्रलाभं च सन्मार्गे धनलाभकृत् ॥ पुराणधर्मश्रवणं पण्डितजनसङ्गमम् ॥६१॥ इष्टबन्धुजनाकीर्णं विप्रप्रभुसमागमम् ॥ स्वप्रभोश्च महत्सौख्यं नित्यं मिष्टान्नभोजनम् ॥६२॥ लग्नेशात्षष्ठरन्ध्रे व्यये वा बलवर्जिते ॥ पापदृष्टे तथा युक्ते नृपराज्यापहारकृत् ॥६३॥अन्यालयनिवासश्च मनोवैकल्यसम्भव ॥ वातातिसारभुक्त्या च ऋणग्रस्तोऽस्त्येव च

शिरोवेदना, चिन्ता, कलह तथा बेकारी होती है॥७१॥ प्रमेह आदि बीमारी, धन का अपव्यय, भार्या पुत्र से विरोध, यात्रा, कार्य हानि होती है॥७२॥ केतु यदि २।७ स्थान में हो तो देह बाधा होती है। इसकी शान्ति के लिये मृत्युञ्जय जप ॥७३॥ तथा छाग दान करे तो सब सम्पत्ति प्राप्त होती है॥७४॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भा० प्र० विशो० भृगोरन्तर्दशाफल कथनं नाम एकचत्वारिंशोऽध्याय ॥४१॥

अथोपदशाप्रकरणमाह

स्वांतर्दशाब्दवृंदं च हन्यात्स्वाब्दैर्ग्रहस्य च ॥विंशोत्तरशतेनाप्त घस्राः शेषं कलादिकम्॥१॥

प्रत्यन्तरदशाध्याय

ग्रह के अन्तरदशा के वर्ष, मास, दिन के एकरम (अर्थात् दिनसंख्या) करके जिस ग्रह का अन्तर निकालना हो उसको वर्ष सख्या से गुणा करके १२० का भाग देकर दिन, घटी, पल अंक लेकर दिन में ३० का भाग देकर भाग प्राप्त करें॥१॥

उदाहरण-यथा, सूर्य महादशा में सूर्य का अन्तर मा० ३ दि० १८ है। इसके दिन किये तो १०८ हुए। अब इसमें सूर्य का प्रत्यन्तर निकालना है, इसलिये सूर्य के वर्ष ६ की संख्या से गुणा किया तो ६४८ हुए। इसमें १२० का भाग किया तो लब्धि ५ तथा शेष ४८ रहे। घटी अब लेना है, इसलिये ६० से गुणा किया तो २८८० हुआ। पुन १२० का भाग किया तो लब्धि २४ तथा शेष कुछ भी नहीं रहा। अत सूर्य प्रत्यन्तर दशा ५ दिन २४ घटी हुई। इसमें चन्द्रमा का प्रत्यन्तर निकालने के लिये चन्द्रमा के वर्ष १० से १०८ को गुणा किया जायेगा और १२० का भाग करने से दिन आदि दशा होगी। इसी प्रकार मंगल आदि का प्रत्यन्तर निकालने के लिये सूर्य की अन्तर दशा के दिन १०८ को तत्तत् ग्रह के वर्ष संख्या से गुणा करना और १२० का भाग देना। तो तत्तत् ग्रह की प्रत्यन्तर दशा प्राप्त होगी।

प्रत्यन्तरदशा के चक्र

अथ सूर्यमध्येसूर्यान्तरम्

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
५	९	६	१६	१४	१७	१५	६	१८	दिनानि
२४	०	१८	१२	२४	६	१८	१८	०	घटय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्येचन्द्रान्तरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	मासा
१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	९	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घटय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये भौमान्तरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
७	१८	१६	१९	१७	७	२१	६	१०	दिनानि
२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	१८	३०	घटय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्येराह्वन्तरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहा
१	१	१	१	०	१	०	०	०	मासा
१८	१३	२१	१५	१८	२४	१६	२७	१८	दिनानि
३६	१२	१८	५४	५४	०	१२	०	५४	घटय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासा
८	१५	१०	१६	१८	१४	२४	१६	१३	दिनानि
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्रहा
१	१	०	१	०	०	०	१	१	मासा
२४	१८	१९	२७	१७	२८	१९	२१	१५	दिनानि
९	२७	५७	०	६	३०	५७	१८	३६	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्य बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासा
१३	१७	२१	१५	२५	१७	१५	१०	१८	दिनानि
२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	२७	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
७	२१	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	दिनानि
११	०	१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ सूर्यमध्ये भृगुप्यन्तरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
२	०	१	०	१	१	१	१	०	मासाः
०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये चन्द्रप्यन्तरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	१	१	१	१	०	१	०	मासाः
१५	१७	१५	१०	१७	१२	१७	२०	१५	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये भौमप्यन्तरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहाः
०	१	०	१	०	०	१	०	०	मासाः
१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	१७	दिनानि
१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये राहुप्यन्तरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहाः
२	२	२	२	१	३	०	१	१	मासाः
२१	१२	२५	१६	१	०	२७	१५	१	दिनानि
०	०	३०	३०	३०	०	०	०	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये गुरुव्यन्तरम्

गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
२	२	२	०	२	०	१	०	२	मासा
४	१६	८	२८	२०	२४	१०	२८	१२	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये शनिव्यन्तरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ	ग्रहा
३	२	१	३	०	१	१	२	२	मासा
०	२०	३	५	२८	१७	३	२५	१६	दिनानि
१५	४५	१५	०	३०	३०	१५	३०	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये बुधव्यन्तरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
२	०	२	०	१	०	२	२	२	मासा
१२	२९	२५	२५	१२	२९	१६	८	२०	दिनानि
१५	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये केतुव्यन्तरम्

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	१	०	०	०	१	०	१	०	मासा
१२	५	१०	१७	१२	२	२८	३	२९	दिनानि
१५	०	३०	३०	१५	३०	०	१५	४५	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये भृगुव्यन्तरम्

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहा
३	१	१	१	३	२	३	२	१	मासाः
१०	०	२०	५	०	२०	५	२५	५	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ चन्द्रमध्ये सूर्यव्यन्तरम्

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	१	मासाः
९	१५	१०	२७	२४	२८	२५	१०	०	दिनानि
०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये भौमव्यन्तरम्

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	र०	च०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासाः
८	१२	११	२३	२०	८	२४	७	१२	दिनानि
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घट्यः
३०	०	०	३०	२०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये राहुव्यन्तरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	चं०	म०	ग्रहा
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मासाः
२१	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दिनानि
४२	२४	५१	३३	२	०	५४	३०	३	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासा
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्रहा
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मासा
३	२६	२१	६	१९	३	२३	२९	२३	दिनानि
१०	११	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घट्य
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासा
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	१९	दिनानि
१४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घट्य
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दिनानि
३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घट्य
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहा
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मासा
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दिनानि
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भौममध्ये चन्द्रव्यंतरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहा
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मासा
१७	१२	१	२८	३	२९	१३	५	१०	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहा
४	४	५	४	१	५	१	२	१	मासा
२५	१	३	१७	२६	१२	१८	२१	२६	दिनानि
४८	३६	५४	४२	४२	०	३६	०	४२	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये गुरुव्यतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
३	४	४	१	४	१	२	१	४	मासा
२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	९	दिनानि
१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	३६	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये शनिव्यतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्रहा
५	४	१	५	१	२	१	५	४	मासा
१२	२५	२१	२१	२१	२५	२१	३	१६	दिनानि
२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	५४	४८	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये बुधव्यतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
४	१	५	१	२	१	४	४	४	मासा
१०	२३	६	१५	१६	२३	१७	२	२५	दिनानि
३	३३	०	५४	३०	३३	४२	२४	२१	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये केतुव्यतरम्

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मासा
२२	३	१८	१	[illegible]	२६	२०	२१	२३	दिनानि
३	०	५४	३०	३	४२	२४	५१	३३	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये भृग्वन्तरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
६	१	३	२	५	४	५	५	२	मासाः
०	२४	०	३	१२	२४	२१	३	३	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये सूर्यान्तरम्

सू०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासाः
१६	२७	१८	१८	१३	२१	१५	१८	२४	दिनानि
१२	०	५४	३६	१२	१८	५४	५४	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये चन्द्रान्तरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	१	२	२	२	२	१	३	०	मासाः
१५	१	२१	१२	२५	१६	१	०	२७	दिनानि
०	३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये भौमान्तरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहाः
०	१	१	१	१	०	२	०	१	मासाः
२२	२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	दिनानि
३	४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये गुरुव्यंतरम्									
गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
३	४	३	१	४	१	२	१	३	मासा
१२	१	१८	१४	८	८	४	१४	२५	दिनानि
२४	३६	४८	४८	०	२४	०	४८	१२	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ राहुमध्ये शनिव्यंतरम्									
श०	बु०	के०	गु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	ग्रहा
४	४	१	५	१	२	१	४	४	मासा
१४	९	२३	२	१५	१६	२३	१६	१	दिनानि
२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	३६	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये बुधव्यंतरम्									
बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०	ग्रहा
३	१	४	१	२	१	४	३	४	मासा
२५	१७	१६	१०	८	१७	२	१८	९	दिनानि
३६	३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये केतुव्यंतरम्									
के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	गु०	श०	बु०	ग्रहा
०	१	०	०	०	१	१	१	१	मासा
१९	२६	१६	२८	१९	२०	१४	२३	१७	दिनानि
३६	०	४८	०	३६	२४	४८	१२	३६	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये भृगुव्यंतरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहा
५	१	२	१	४	४	५	४	१	मासा
१०	१८	२०	२६	२४	८	२	१६	२६	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये सूर्यव्यंतरम्

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहा
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासा
१४	२४	१६	१३	८	१५	१०	१६	१८	दिनानि
२४	०	४८	१२	२४	३६	४८	४८	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	६	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये चन्द्रव्यंतरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहा
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मासा
१०	२८	१२	४	१६	८	२८	२०	२४	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये भौमव्यंतरम्

मं०	रा	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहा
०	१	१	१	१	०	१	०	०	मासा
१९	२०	१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	दिनानि
३६	२४	४८	१२	३६	३६	०	४८	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ गुरुमध्ये राहुव्यतरम्									
रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहा
४	३	४	४	१	४	१	२	१	मासा
९	२५	१६	२	२०	२४	१३	१२	२०	दिनानि
३६	१२	४८	२४	२४	०	१२	०	२४	घटय
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये शनिव्यत्तरम्									
श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहा
५	५	२	६	१	३	२	५	४	मासा
२१	३	३	०	२४	०	३	१२	२४	दिनानि
२८	२५	१०	३०	९	१५	१०	२७	२४	घटय
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये बुधव्यतरम्									
बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
४	१	५	१	२	१	४	४	५	मासा
१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	३	दिनानि
१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	२५	घटय
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये केतुव्यतरम्									
के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	२	०	१	०	१	१	२	१	मासा
२३	६	१९	३	२३	२९	२३	३	२८	दिनानि
१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	१०	३१	घटय
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये भृगुव्यन्तरम्

शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहा
६	१	३	२	५	५	६	५	२	मासा
१०	२७	५	६	२१	२	०	११	६	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये सूर्यव्यन्तरम्

सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहा
०	०	०	१	१	१	१	०	१	मासा
१७	२८	१९	२१	१५	२४	१८	१९	२७	दिनानि
६	३०	५७	१८	३६	९	२७	५७	०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये चन्द्रव्यन्तरम्

च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहा
१	१	२	२	३	२	१	३	०	मासा
१७	३	२५	१६	०	२०	३	५	२८	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये भौमव्यन्तरम्

म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहा
०	१	१	२	१	०	२	०	१	मासा
२३	२९	२३	३	२६	२३	६	१९	३	दिनानि
१६	५१	१२	१०	३१	१६	३०	५७	१५	घट्य
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये राह्वन्तरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहा
५	४	५	४	१	५	१	२	१	मासा
३	१६	१२	२५	२९	२१	२१	२५	२९	दिनानि
५४	४८	२७	२१	५१	०	१८	३०	५१	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ शनिमध्ये गुरुव्यन्तरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्रहा
४	४	४	१	५	१	२	१	४	मासा
१	२४	९	२३	२	१५	१६	२१	१६	दिनानि
३६	२४	१२	१२	०	३६	०	१२	४८	घट्य
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये बुधव्यन्तरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहा
४	१	४	१	२	१	४	३	४	मासा
२	२०	२४	२३	१२	२०	१०	२५	१७	दिनानि
४९	३४	३०	२१	१५	३४	३	३६	१६	घट्य
३०	०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये केतुव्यन्तरम्

के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
२	१	०	०	०	१	१	१	१	मासा
२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	२०	दिनानि
४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	३४	घट्य
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये शुक्रान्तरम्									
शु०	सू०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
५	१	२	१	५	४	५	४	१	मासाः
२०	२१	२५	२९	३	१६	११	२४	२९	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये सूर्यान्तरम्									
सू०	चं०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	१	१	१	१	१	१	मासाः
१५	२५	१७	१५	१०	१८	१३	१७	२१	दिनानि
१८	३०	५१	५४	४८	२७	२१	५१	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये चन्द्रान्तरम्									
च०	मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	०	२	२	२	२	०	२	०	मासाः
१२	२९	१६	८	२०	१२	२९	२५	२५	दिनानि
३०	४५	३०	०	४५	१५	४५	०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये भौमान्तरम्									
मं०	रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहाः
०	१	१	०	१	०	१	०	०	मासाः
२०	२३	१७	२६	२०	२०	२९	१७	२९	दिनानि
४९	३३	३६	३१	३४	४९	३०	५१	४५	घटयः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	ग्रहा
४	४	४	४	१	५	१	२	१	मासा
१७	२	२५	१०	२३	३	१५	१६	२३	दिनानि
४२	२४	२१	३	३३	०	५४	३०	३३	घटप
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	ग्रहा
३	४	३	१	४	१	२	१	४	मासा
१८	९	२५	१७	२६	१०	८	१७	२	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घटप
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ बुधमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	ग्रहा
५	४	१	५	१	२	१	४	४	मासा
३	१७	२६	११	१८	२०	२६	२५	९	दिनानि
२५	१६	३१	३०	२७	४५	३१	२१	१२	घटप
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये केतुव्यंतरम्

के०	शु०	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
८	२४	७	१२	८	२२	१९	२३	२०	दिनानि
१४	१०	२१	१५	३४	३	३६	१६	४९	घटप
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये भृग्वन्तरम्

शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
२	०	१	०	२	१	२	१	०	मासा
१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	२४	दिनानि
०	०	०	३०	०	०	३०	३०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये सूर्यान्तरम्

सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	मासा
६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७	२१	दिनानि
१८	३०	२१	५४	४८	५७	५१	२१	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये चन्द्रान्तरम्

च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	मासा
१७	१२	१	२८	३	२९	१२	५	१०	दिनानि
३०	१५	३०	०	१५	४५	१५	०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये भौमान्तरम्

मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	मासा
८	२२	१९	२३	२०	८	२४	७	१२	दिनानि
३४	३	३६	१६	४९	३४	३०	२१	१५	घटयः
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये राहुव्यंतरम्

रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहाः
१	१	१	१	०	२	०	१	०	मासाः
२६	२०	२९	२३	२२	३	१८	१	२२	दिनानि
४२	२४	५१	३३	३	०	५४	३०	३	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये गुरुव्यंतरम्

बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्रहाः
१	१	१	०	१	०	०	०	१	मासाः
१४	२३	१७	१९	२६	१६	२८	१९	२०	दिनानि
४८	१२	३६	३६	०	४८	०	३६	२४	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये शनिव्यंतरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	ग्रहाः
२	१	०	२	०	१	०	१	१	मासाः
३	२६	२३	६	१९	३	२३	२०	२३	दिनानि
१०	३१	१६	३०	५७	१५	१६	५१	१२	घट्यः
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ केतुमध्ये बुधव्यंतरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	ग्रहाः
१	०	१	०	०	०	१	१	१	मासाः
२०	२०	२९	१७	२९	२०	२३	१७	२६	दिनानि
३४	४९	३०	५१	४५	४९	३३	३६	३१	घट्यः
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये भृगुव्यन्तरम्									
शु०	सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	ग्रहाः
६	२	३	२	३-६	५	६	५	२	मासाः
२०	०	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये सूर्यव्यन्तरम्									
सू०	च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	ग्रहाः
०	१	०	१	१	१	१	०	२	मासाः
१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	२१	०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये चन्द्रव्यन्तरम्									
च०	मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	ग्रहाः
१	१	३	२	३	२	१	३	१	मासाः
२०	५	०	२०	५	२५	५	१०	०	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये भौमव्यन्तरम्									
मं०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	ग्रहाः
०	२	१	२	१	०	२	०	१	मासाः
२४	३	२६	६	२९	२४	१०	२१	५	दिनानि
३०	०	०	३०	३०	३०	०	०	०	घट्यः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये राह्वन्तरम्

रा०	गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	ग्रहाः
५	४	५	५	२	६	१	३	२	मासाः
१२	२४	२१	३	३	०	२४	०	३	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये गुर्वन्तरम्

गु०	श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	ग्रहाः
४	५	४	१	५	१	२	१	४	मासाः
८	२	१६	२६	१०	१८	२०	२६	२४	दिनानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये शन्यन्तरम्

श०	बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	गु०	ग्रहाः
६	५	२	६	१	३	२	५	५	मासाः
०	११	६	१०	२७	५	६	२१	२	दिनानि
३०	३०	३०	०	०	०	३०	०	०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये बुधान्तरम्

बु०	के०	शु०	सू०	च०	मं०	रा०	गु०	श०	ग्रहाः
४	१	५	१	२	१	५	४	५	मासाः
२४	२९	२०	२१	२५	२९	३	१६	११	दिनानि
३०	३०	०	०	०	३०	०	०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ भृगुमध्ये केत्वन्तरम्									
के०	गु०	शु०	चं०	म०	रा०	वृ०	श०	बु०	ग्रहा
०	२	०	१	०	२	१	२	१	मासाः
२४	१०	२१	५	२४	३	२६	६	२९	दिनानि
३०	०	०	०	३०	०	०	३०	३०	घटयः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	पलानि
०	०	०	०	०	०	०	०	०	विपलानि

अथ विदशाफलं प्रारभ्यते

लग्नेशरोगनाथौ च निधनेशेन संयुतौ ॥ मारकेशयुतौ दृष्टौ रोग नाथांशगौ यदि ॥२॥ तस्य भुक्तौ विजानीयाच्छस्त्रेण वैनृणाम् ॥ शुभयोगेन बाधः स्यात्पापयोगेन मृत्युकृत् ॥३॥ जीवांशे जीववर्गेण मूलांशे मूलवर्गतः ॥ रोगादिप्रवदेत्तत्र तेषां भुक्तिवशात्फलम् ॥४॥ विलग्ननाथस्य नवांशनाथो रन्ध्रांशकस्याधिपतिश्च युक्तौ ॥ मेषस्य षड्वर्गगतौ यदा तौ भुक्तौ तयोर्जंबुकभीतिसो बुधः ॥५॥ वृषवर्गगतौ तौ चेद्वृश्चिकाद्भयमादिशेत् ॥ युग्मवर्गगतौ भीतिः कपिजा नात्र संशयः ॥६॥ कुलीरवर्गगौ तौ चेद्रासभाद्भीतिमादिशेत् ॥ सिंहवर्गगतौ तौ चेद्भुक्तौ स्याद्व्याघ्रजं भयम् ॥७॥ कन्यावर्गगतौ तौ चेद्भल्लूकाद्भयमञ्जसा ॥ वणिग्वर्गगतौ तौ चेत्तद्भुक्तौ स्याद्गजाद्भयम् ॥८॥ अलिवर्गगतौ येषां तेषां स्याद्गजतो भयम् ॥ यदि कार्मुकवर्गस्थौ भुक्तौ स्याद्रथजं भयम् ॥९॥ मृगवर्गगतौ तौ चेद्भुक्तौ करभजं भयम् ॥ कुम्भवर्गगतौ तौ चेद्गोलांगूलाद्भयं भवेत् ॥१०॥ मीनवर्गगतौ भुक्तौ तेषां स्याद्ग्राहजं भयम् ॥ एवं देहादिभावानां षड्वर्गगतिभिः फलम् ॥ सम्यग्विचार्य मतिमान्प्रवदेत्कालवित्तमः ॥११॥

विदशाफल

लग्नेश और षष्ठेश अष्टमेश युक्त हो और मारकेश से युक्त या दृष्ट हो तथा षष्ठेश के नवांश में हो तो॥२॥ उसके प्रत्यंतर में शस्त्र के आघात से कष्ट होता है। शुभग्रह के दृष्टि अथवा योग से बाध (आघात नहीं होता या सामान्य होता है) और पापयोग से मृत्यु होती है॥३॥ जीवांश में होने से जीव वर्ग से तथा मूलांश में होने से मूलवर्ग से रोग, आघात या मृत्यु होती है। सो प्रत्यन्तर में योगानुसार कहना चाहिए॥४॥ लग्नेश जिस नवांश में हो उस राशि का स्वामी, अष्टमेश के या अष्टमभाव के नवांशपति से युक्त यदि मेषराशि के षड्वर्ग युक्त (एक साथ) हो तो जंबुक (सियार) का भय होता है॥५॥ पूर्वोक्त दोनों वृश्चिक राशि के षड्वर्ग में हो तो बिच्छू से भय होता है। मिथुन के वर्ग में बंदर से भय होता है॥६॥ कर्क के वर्ग में गर्दभ (गधे) से भय और सिंह वर्ग में व्याघ्र (बाघ) से भय होता है॥७॥ कन्यावर्ग में भालू से भय एवं तुला राशि के वर्ग में हाथी से भय होता है॥८॥ वृश्चिक के वर्ग में हाथी से भय तथा धनुराशि के वर्ग में रथ से भय होता है॥९॥ मकर वर्ग में हाथी के सूंड से भय एवं

कुंभ वर्ग मे हो तो बैल या गौ की पूँछ से भय होता है॥१०॥ मीन वर्ग मे हो तो ग्राह (मगर) से भय होता है। इस प्रकार लग्न से बारहो भावो का फल षड्वर्ग के विचार से कहा जाता है, ज्योतिर्विद् को चाहिए की भली प्रकार से विचार करके फल का निर्देश करे॥११॥

अथ सूर्यादिसर्वग्रहाणां विदशाफलमाह

(सू० सू०) उद्वेगोय बल वित्तदारार्ति शिरसि व्यथा ॥ ब्राह्मणेन विवादश्च सूर्य स्वविदशा गतः ॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग कलह चित्तपीडाँ स्वहृतिमद्भुताम् ॥ मणिमुक्तादिनाशश्च विदशासु रवे शशी ॥१३॥ (सू० म०) राजभीति शस्त्रभीति बधन बहुसकटम् ॥ शत्रुवह्निकृता पीडा स्वदशासु रवे कुजः ॥१४॥ (सू० रा०) श्लेष्मव्याधि शस्त्रभीति धनहानि महद्भयम् ॥ राजभगस्तथा त्रासो विदशासु रवेस्तम ॥१५॥ (सू० गु०)

सूर्यादिग्रहो का प्रत्यन्तर्दशाफल

(सू० सू० सू०) सूर्य अपनी विदशा (प्रत्यन्तर्दशा) मे उद्वेग, बल, स्त्री धन कष्ट, सिरदर्द, ब्राह्मण से विवाद करता है॥१२॥ (सू० च०) उद्वेग, कलह, पीडा, विक्षेप, रत्ननाश यह फल सूर्य की विदशा मे चन्द्रमा का है॥१३॥ (सू० म०) सूर्य मे भौम की विदशा मे, राजभय, शस्त्रभय, बधन, बहुसकट, शत्रु तथा अग्नि से पीडा होती है॥१४॥ (सू० रा०) सूर्य की विदशा मे राहु कफरोग, शस्त्रभय, धनहानि, महाभय, ऐश्वर्यनाश तथा त्रास करता है॥१५॥ (सू० गु०)

शत्रुनाश जय वृद्धि वस्त्रहेमादिभूषणम् ॥ अश्वयानादि ददते गोधन च रवेर्गुरु ॥१६॥ (सू० श०) धनहानि पशो पीडा महोद्वेगो महारुज ॥ अशुभ सर्वमाप्नोति विदशासु रवे शनि ॥१७॥ (सू० बु०) विद्यालाभो बधुसगो भोज्यप्राप्तिर्धनागम ॥ धर्मलाभो नृपात्पूजा विदशासु रवेर्बुध ॥१८॥ (सू० के०) प्राणभीतिर्महाहानी राजभीतिश्च विग्रह ॥ शत्रुणा च महावादो विदशासु रवे शिखी ॥१९॥ (सू० शु०) दिनानि समरूपाणि लाभोऽप्यल्पो भवेदिह ॥ स्वल्पा च सुखसपत्तिर्विदशासु रवेर्भृगु ॥२०॥

सूर्य की विदशा मे गुरु शत्रुनाश, जय, वृद्धि, वस्त्रभूषणप्राप्ति, घुडसवारी देता है॥१६॥ (सू० श०) सूर्य विदशा मे शनि धनहानि, पशुपीडा, उद्वेग, महररोग आदि सर्वप्रकार से अशुभ करता है॥१७॥ (सू० बु०) सूर्य की विदशा मे बुध विद्यालाभ, बधुसग, भोगलाभ, धनलाभ, धर्मलाभ, राजपूजा, फल देता है॥१८॥ (सू० के०) सूर्य की विदशा मे केतु प्राणभय, महाहानि राजभय, लडाई, विवाद करता है॥१९॥ (सू० शु०) सूर्य की विदशा मे शुक्र समान है, साधारण लाभ, सम समय, साधारण सुख सम्पत्ति करता है॥२०॥

अथ चंद्रविदशाफलमाह

(च० च०) भूमोऽन्यधनसप्राप्ती राजपूजाप्तसुखम् ॥ महालाभ स्त्रियो भोगो विदशासु स्वय शशी ॥२१॥ (च० म०) मतिवृद्धिर्महापूज्य सुख बधुजनै सह ॥ धनागम शत्रुभय

भवस्थानगतः कुजः ॥२२॥ (च० रा०) भवेत्कल्याणसम्पत्ती राजवित्तसमागमः ॥ अशुभैरल्पमृत्युश्च चन्द्रचन्द्रान्तरे तमः ॥२३॥ (च० बृ०) वस्त्रलाभो महातेजो ब्रह्मज्ञानं च सद्गुरोः ॥ राज्यालंकरणावाप्तिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे गुरुः ॥२४॥ (च० श०) दुर्दिने लभते पीडा वातपित्ताद्विशेषतः ॥ धनधान्ययशोहानिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शनिः ॥२५॥ (च० बु०) पुत्रजन्महर्षप्राप्तिर्विद्यालाभो महोन्नतिः ॥ शुक्लवस्त्रान्नलाभश्च चन्द्रचन्द्रान्तरे बुधः ॥२६॥ (च० के०) ब्राह्मणेन समं युद्धमपमृत्युः सुखक्षयः ॥ सर्वत्र जायते क्लेशश्चन्द्रचन्द्रान्तरे शिखी ॥२७॥ (च० शु०) धनलाभो महत्सौख्यं कन्याजन्म सुभोजनम् ॥ प्रीतिश्च सर्वलोकेभ्यश्चन्द्रचन्द्रान्तरे भृगुः ॥२८॥ (च० सू०) अन्नागमो वस्त्रलाभः शत्रुहानिः सुखागमः ॥ सर्वत्र विजयप्राप्तिश्चन्द्रचन्द्रान्तरे रविः ॥२९॥

चन्द्रविदशाफल.

(च० च०) चन्द्रमा की विदशा मे चन्द्रमा भूमि, भोग, धन की प्राप्ति, राजपूजा महान् सुख, महालाभ, ललना भोग प्राप्त करता है॥२१॥ (च० म०) चन्द्रमा की विदशा मे मगल मतिवृद्धि महापूज्यता, बन्धुओ के साथ सुख धनलाभ, तथा शत्रुभय करता है॥२२॥ (च० रा०) चन्द्र विदशा मे राहु, कल्याण, सम्पति, राजा से धन प्राप्ति, दुःख तथा अल्प मृत्यु करता है॥२३॥ (च० बृ०) चन्द्र विदशा मे गुरु वस्त्र लाभ, तेजोवृद्धि गुरु से ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति, राजा से अलङ्कार प्राप्ति करता है॥२४॥ (च० श०) चन्द्रमा की विदशा मे शनि कष्ट, पीडा, वात पित्त जनित रोग, धन सम्पति यश की हानि करता है॥२५॥ (च० बु०) चन्द्रमा की विदशा मे बुध पुत्र जन्म का हर्ष प्राप्त करता है। विद्या लाभ, महान् सम्पत्ति, श्वेत वस्त्र तथा अन्न का लाभ करता है॥२६॥ (च० के०) चन्द्र विदशा मे केतु ब्राह्मण से विवाद, अपमृत्यु, सुख हानि तथा सर्वत्र क्लेश करता है॥२७॥ (च० शु०) चन्द्र विदशा मे शुक्र धन लाभ, महान् सौख्य, कन्या जन्म सुभोजन तथा सब से प्रीति करता है॥२८॥ (च० सू०) चन्द्र विदशा मे सूर्य अन्न लाभ, वस्त्र लाभ, शत्रु हानि, सुख प्राप्ति तथा सर्वत्र विजय प्राप्ति करता है॥२९॥

अथ भौमविदशाफलमाह

(भ० भ०) शत्रुभीतिः कलिर्घोरमकस्माज्जायते भयम् ॥ रक्तस्रावोऽपमृत्युश्च विदशासु स्वयं कुजः ॥३०॥ *(भ० रा०) बन्धनं राजभयं च धनहानिः कुभोजनम् ॥ कलहः शत्रुभिर्नित्यं* भौमभौमान्तरे तमः ॥३१॥ (भ० गु०) मतिनाशस्तथा दुःखं संतापः कलहो भवेत् ॥ विफलं चिंतितं सर्वं भौमभौमान्तरे गुरुः ॥३२॥ (भ० श०) स्वामिनाशस्तथा पीडा धनहानिर्महाभयम् ॥वैकल्यं कलहस्त्रासो भौमभौमान्तरे शनिः ॥३३॥ (भ० बु०) सर्वथा बुद्धिनाशश्च धनहानिर्ज्वरस्तनौ ॥ वस्त्रान्नसुहृदां नाशो भौमभौमान्तरे बुधः ॥३४॥ (भ० के०) आलस्यं च शिरःपीडा पापरोगापमृत्युकृत् ॥ राजभीतिः शस्त्रघातो भौमभौमान्तरे शिखी ॥३५॥ (भ० शु०) चाण्डालात्संकटस्त्रासो राजशस्त्रभयं भवेत् ॥ अतिसारोऽथ वमनं भौमभौमान्तरे भृगुः॥३६॥ (भ० सू०) भूमिलाभोऽर्थसंपत्तिः संतोषो मित्रसंगतिः ॥ सर्वत्र सुखमाप्नोति भौमभौमान्तरे रविः ॥३७॥ (भ० च०) याम्यां दिशि भवेल्लाभः सितवस्त्रविभूषणम् ॥ संसिद्धिः सर्वकार्याणां भौमभौमान्तरे शशी ॥३८॥

मगल विदशा फल

(म० म०) मगल अपनी विदशा मे शत्रुभय, घोर कलह, अकस्मात् भय, रक्तस्राव तथा अपमृत्यु करता है।।३०।। (म० रा०) मगल विदशा मे राहु बन्धन, राजभग, धन हानि, निकृष्ट भोजन तथा शत्रु से नित्य कलह करता है।।३१।। (म० बृ०) मगल विदशा में गुरु, मति-नाश तथा दु:ख, सताप, कलह, चिन्तित कार्य की हानि करता है।।३२।। (म० श०) मगल की विदशा मे शनि स्वामी नाश, पीडा, धन हानि, महाभय, विकलता, कलह तथा कष्ट करता है।।३३।। (म० बु०) मगल विदशा मे बुध बुद्धिनाश, धनहानि, ज्वर, अन्नधन, वस्त्र का नाश करता है।।३४।। (म० के०) मगल की विदशा मे केतु आलस्य, सिरदर्द, रोग, अपमृत्यु, राजभय तथा शस्त्र से घात करता है।।३५।। (म० शु०) मगल विदशा में शुक्र चाण्डाल से सकट की उत्पत्ति, भय राज से भय शस्त्र से भय, अतिसार और वमन की बिमारी करता है।।३६।। (म० सू०) मगल विदशा मे सूर्य भूमि लाभ, धन लाभ, सन्तोष, मित्र से सगति सर्वत्र सुख की प्राप्ति करता है।।३७।। (म० च०) मगल विदशा मे चन्द्रमा दक्षिण दिशा मे लाभ, श्वेत वस्त्र प्राप्ति भूषण प्राप्ति तथा सर्व कार्य सिद्ध करता है।।३८।।

अथ राहुविदशाफलमाह

(रा० रा०) बधन बहुधा रोगो बहुघात सुहृद्भयम् ॥ अकस्मादापदो यान्ति भय राहोर्जलाग्नित ।।३९।। (रा० बृ०) सर्वत्र लभते लाभ गजाश्व च धनागमम् ॥ राजसन्मानव राज्य भवेद्राह्वन्तरे गुरु ।।४०।। (रा० श०) बधन जायते घोर सुखहानिर्महद्भयम् ॥ प्रत्यह वातपीडा च राहो राह्वतरे शनि ।।४१।। (रा० बु०) सर्वत्र बहुधा लाभ स्त्रीसमश्च विशेषत ।। परदेशगत सिद्धि राहो राह्वतरे बुध ।।४२।। (रा० के०) बुद्धिनाशो भय विघ्न धनहानिर्महद्भयम् ॥ सर्वत्र कलहोद्वेगो राहो राह्वतरे शिखी ।।४३।। (रा० शु०) योगिनीभ्यो भय भूयादश्वहानि कुभोजनम् ॥ स्त्रीनाश कुलज शोक राहो राह्वतरे सित ।।४४।। (रा० सू०) ज्वररोगो महाभीति पुत्रपौत्रादिपीडनम् ॥ अल्पमृत्यु प्रमादश्च राहो राह्वतरे रवि ।।४५।। (रा० च०) उद्वेगकलही चिता मानहानिर्महद्भयम् ॥ पितुर्विकलता देहे राहो राह्वतरे शशी ।।४६।। (रा० म०) भगदरकृता पीडा रक्तपित्तप्रपीडनम् ॥ अर्थहानिर्महोद्वेगो राहो राह्वतरे कुज ।।४७।।

राहु विदशा फल

(रा० रा०) राहुविदशा मे राहु बधन, रोग, घात, मित्र मे भी भय, तथा अचानक आपत्ति और जल तथा अग्नि से भय करता है।।३९।। (रा० बृ०) राहु विदशा मे गुरु सर्वत्र लाभकारी, हाथी, घोडा, धन सम्पत्तियुक्त राजा के समान प्रतिष्ठा करता है।।४०।। (रा० श०) राहु विदशा मे शनि, घोर बधनप्रदाता सुखहानिकारक, भयदाता, प्रतिदिन वात वेदना कारक है।।४१।। (रा० बु०) राहु विदशा मे बुध-प्राय सर्वत्र लाभकारक, स्त्री के समान भीरू प्रकृति तथा परदेश मे सिद्धि देता है।।४२।। (रा० के०) राहुविदशा मे केतु-बुद्धिनाश, भय, विघ्न, धनहानि, महान् भय, सर्वत्र कलह तथा उद्वेग करता है।।४३।।

॥५७॥ (श० बु०) बुद्धिनाशः कलेर्भीतिरन्नपानादिहानिकृत् ॥ धनहानिर्भयं शत्रोः शनेः शन्यंतरे बुधः ॥५८॥ (श० के०) बंधुशत्रुगृहे जातो धर्महानिर्बुभुक्षया ॥ चित्ते चिन्ता भयं त्रासः शनेः सौरांतरे शिखी ॥५९॥ (श० शु०) चिंतिते फलितं वस्तु कल्याणं स्वजने जने ॥ मनुष्यकृतितो लाभः शनेः शन्यंतरे भृगुः ॥६०॥ (श० सू०) राजतेजोऽधिकारित्वं स्वगृहे जायते कलिः ॥ ज्वराविव्याधिपीडा च कोणे कोणांतरे रविः ॥६१॥ (श० चं०) स्फीतबुद्धिर्महारंभो मंदतेजा बहुव्ययः ॥ बहुस्त्रीभिः समं भोगं कोणे कोणांतरे शशी ॥६२॥ (श० मं०) तेजोहानिः पुत्रघातो वह्निभीतो रिपोर्भयम् ॥ वातपित्तकृता पीडा कोणे कोणांतरे कुजः ॥६३॥ (श० रा०) धननाशो वस्त्रहानिर्भूमिनाशो भयं भवेत् ॥ विदेशगमनं मृत्युः कोणे कोणांतरे कुजः ॥६४॥ (श० बृ०) गृहेषु स्त्रीकृतं छिद्रंद्रष्टुमसमर्थो निरीक्षणे ॥ अथ वा कलिमुद्वेगं शनेः सौरांतरे गुरुः ॥६५॥

शनि विदशा फल

(श० श०) शनि विदशा मे शनि-देहपीडा, कलह तथा शूद्र से भय, विदेश की यात्रा तथा दुःख कारक होता है।॥५७॥ (श० बु०) शनि विदशा मे बुध- बुद्धिनाश, कलह का भय, अन्नपान आदि मे हानि, धन हानि तथा शत्रु से भय करता है।॥५८॥ (श० के०) शनि विदशा मे केतु-बन्धु तथा शत्रु के घर मे आवागमन आचार धर्म की हानि, भूख से व्याकुलता, चिन्ता, भय, त्रास कारक है।॥५९॥ (श० शु०) शनि विदशा मे शुक्र-विचार मात्र से वस्तु की प्राप्ति, स्वजन से कल्याण, मानवनिर्मित वस्तु से लाभ कारक होता है।॥६०॥ (श० सू०) शनि विदशा मे सूर्य-राजा के समान तेजस्वी, परिवार मे कलह, ज्वर आदि व्याधि तथा पीडा कारक होता है।॥६१॥ (श० च०) शनिविदशा मे चन्द्र-शुद्ध बुद्धि, बडे कार्यों का आरभ, मन्द तेज, विशेष खर्च, अनेक स्त्रियो से प्रेम कारक है।॥६२॥ (श० म०) शनि विदशा मे मगल-तेज की हानि, पुत्र द्वारा घात, अग्नि से भय, शत्रु से भय, वात, पित्त से पीडा करता है।॥६३॥ (श० रा०) शनि विदशा मे राहु-धननाश, वस्त्रहानि, भूमिनाश भय, तथा विदेश यात्रा और मृत्यु कारक है।॥६४॥ (श० बृ०) शनि विदशा मे गुरु-घर मे स्त्री के दुश्चरित्र को जानता हुआ भी देखने मे असमर्थ, यदि देखे तो कलह, उद्वेग कारक होता है।॥६५॥

अथ बुधविदशाफलमाह

(बु० बु०) बुद्धिर्विद्यार्थलाभो वा वस्त्रलाभो महत्सुखम् ॥ स्वर्णादिधनलाभः स्यात्सौम्यसौम्यांतरे बुधः ॥६६॥ (श० के०) कठिनात्रस्य संप्राप्तिरुदरे रोगसंभवः ॥ कामलं रक्तपित्तं च सौम्यसौम्यांतरे शिखी ॥६७॥ (बु० शु०) उत्तरस्यां भवेल्लाभो हानिः स्यात्तु चतुष्पदात् ॥ अधिकारान्महाप्रीतिः सौम्ये सौम्यांतरे भृगुः ॥६८॥ (बु० सू०) तेजोहानिर्भवेद्रोगस्तनुपीडा तु मांदची ॥ जायते चित्तवैकल्यं सौम्यसौम्यांतरे रविः ॥६९॥ (बु० चं०) स्त्रीलाभश्चार्थसंपत्तिः कन्यालाभो महद्धनम् ॥ लभते सर्वतः सौख्यं सौम्यसौम्यांतरे शशी ॥७०॥ (बु० मं०) धर्मधीर्धनसंप्राप्तिश्चौराग्न्यादिप्रपीडनम् ॥ रक्तवस्त्रं शस्त्रघातः सौम्यसौम्यांतरे कुजः ॥७१॥ (बु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भयसंभवः ॥ राजशस्त्रकृता भीतिः सौम्यसौम्यांतरे तमः ॥७२॥ (बु० बृ०)

राज्यं राज्याधिकारी वा पूजा राजसमुद्भवा ॥ विद्याधराश्चगुल्मश्च सौम्यसौम्यांतरे गुरुः ॥७३॥ (बु० श०) वातपित्तमहापीडा देहघातसमुद्भवा ॥ धननाशमवाप्नोति सौम्यसौम्यांतरे शनिः ॥७४॥

बुध विदशा में फल

(बु० बु०) बुध विदशा मे बुध-वृद्धि, विद्या, धन का लाभ, वस्त्रलाभ, महान् सुख, सुवर्ण आदि धन का लाभ करता है॥६६॥ (बु० के०) बुध विदशा मे केतु-कठिन अन्नभक्षण से पेट में रोग होता है। पीलिया रोग तथा रक्तपित्त रोग होता है॥६७॥ (बु० शु०) बुध विदशा मे शुक्र-उत्तरदिशा मे लाभ हो और चौपाया पशु से हानि, अधिकार से प्रीति उत्पन्न करता है॥६८॥ (बु० सू०) बुध विदशा मे सूर्य-तेजो हानि, रोग, शरीरपीडा, अग्निमाद्य तथा चित्त मे विकलता करता है॥६९॥ (बु० चं०) बुध विदशा मे चन्द्रमा-स्त्रीलाभ, धनलाभ, कन्यालाभ तथा बहुत धन का लाभ और सुख करता है॥७०॥ (बु० मं०) बुध विदशा मे मगल-धर्मवृद्धि, धन लाभ, चोर तथा अग्नि-जन्य हानि, रक्तवस्त्र से लाभ तथा शस्त्र चाकू आदि से घात करता है॥७१॥ (बु० रा०) बुध विदशा मे राहु-स्त्री जाति से कलह तथा अकस्मात् भय होता है। राजा तथा शस्त्र से भय कारक है॥७२॥ (बु० बृ०) बुध विदशा मे गुरु-राज्य देता है या राज्याधिकारी करता है। तथा राजा से पूजा होती है। विद्याधारण मे समर्पता तथा गुल्मरोगकारक है॥७३॥ (बु० श०) बुध विदशा मे शनि-वात,पित्त जनित पीडा या घात जनित पीडा हो। तथा धननाश कारक होता है॥७४॥

अथ केतोर्विदशाफलमाह

(के० के०) अपरे समुद्भवोऽकस्माद्देशांतरसमागमः ॥ धननाशोऽल्पमृत्युश्च केतोः केत्वंतरे शिखी ॥७५॥ (के० शु०) म्लेच्छभीत्यर्थनाशो वा नेत्ररोगः शिरोव्यथा ॥ हानिश्चतुष्पदानां च केतोः केत्वंतरे भृगुः ॥७६॥ (के० सू०) मित्रैः सह विरोधश्च स्वल्पमृत्युः पराजयः ॥ मतिभ्रंशो विवादश्च केतोः केत्वंतरे रविः ॥७७॥ (के० चं०) अन्ननाशो यशोहानिर्देहपीडा मतिभ्रमः ॥ आमवातादिवृद्धिश्च केतोः केत्वतरे शशी ॥७८॥ (के० म०) शस्त्रघातेनपातेन पीडितो वह्निपीडया ॥ नीचाद्भीती रिपोः शंका केतोः केत्वंतरे कुजः ॥७९॥ (के० रा०) कामिनीभ्यो भय भूयात्तथा वैरिसमुद्भवः॥क्षुद्रादपि भवेद्भीतिःकेतोःकेत्वंतरे तमः ॥८०॥ (के० गु०) धनहानिर्महोत्पातो वस्त्रमित्रविनाशनम् ॥ सर्वत्र लभते क्लेश केतोः केत्वतरे गुरुः ॥८१॥ (के० श०) गोमहिष्यादिमरणं देहपीडा सुहृद्भयः ॥ स्वल्पाल्पलाभकरणं केतोः केत्वंतरे शनिः ॥८२॥ (के० बु०) बुद्धिनाशो महोद्वेगो विद्याहानिर्महाभयम् ॥ कार्यसिद्धिर्न जायेत केतोः केत्वंतरे बुधः ॥८३॥

केतु विदशा फल

(के० के०) केतु विदशा मे केतु-अकस्मात् जलोदर आदि बीमारी, देशान्तरयात्रा, धननाश, अल्पमृत्यु कारक है॥७५॥ (के० शु०) केतु विदशा मे शुक्र-म्लेच्छ जाति से भय, धननाश, नेत्ररोग, सिरदर्द, चौपाये पशुओं को हानि कारक होता है॥७६॥ (के० सू०) केतु

विदशा में सूर्य-मित्रों के साथ विरोध, स्वल्पमृत्यु, पराजय, बुद्धिनाश, विवाद कारक होता है॥७७॥ (के० च०) केतु विदशा में चन्द्रमा-अन्ननाश, यशोहानि, देहपीडा, मतिभ्रम, आमवात रोग की वृद्धि करता है॥७८॥ (के० म०) केतु विदशा में मंगल-शस्त्र घात से या गिरने से पीडित हो तथा अग्निभय, नीच जाति से भय, शत्रु से भय करता है॥७९॥ (के० रा०) केतु विदशा में राहु स्त्रियों से भय, तथा शत्रु से भय, एवं मामूली आदमी से भी डरता है॥८०॥ (के० बृ०) केतु विदशा में गुरु-धन हानि, महान् उत्पात, वस्त्रनाश, मित्रता की हानि, सर्वत्र क्लेश कारक है॥८१॥ (के० श०) केतु विदशा में शनि-गाय भैंस आदि की मृत्यु, देह पीडा, मित्र की हत्या साधारण लाभकारक है॥८२॥ (के० बु०) केतु विदशा में बुध-बुद्धिनाश, महान् उद्वेग, विद्याहानि महाभय कार्यहानि कारक है॥८३॥

अथ शुक्रविदशाफलमाह

(शु० शु०) श्वेताश्ववस्त्रमुक्ताद्या स्वर्णमाणिक्यसम्भव ॥ लभते सुन्दरीं नारीं शुक्रे शुक्रान्तरे सित ॥८४॥ (शु० सू०) वातज्वर शिरःपीडा राज पीडा रिपोरपि ॥ जायते स्वल्पलाभोऽपि शुक्रे शुक्रान्तरे रवि ॥८५॥ (शु० च०) कन्याजन्म नृपाल्लाभो वस्त्राभरणसंयुत ॥ राज्याधिकारसम्प्राप्ति शुक्रे शुक्रान्तरे शशी ॥८६॥ (शु० म०) रक्तपित्तादिरोगाश्च कलहस्ताडन भवेत् ॥ महान्क्लेशो भवेदत्र शुक्रे शुक्रान्तरे कुज ॥८७॥ (शु० बृ०) महद्द्रव्य महद्राज्य वस्त्रमुक्तादिभूषणम् ॥ गजाश्वादिपदप्राप्ति शुक्रे शुक्रान्तरे गुरु ॥८८॥ (शु० रा०) कलहो जायते स्त्रीभिरकस्माद्भूपसम्भव राजत शत्रुत पीडा शुक्रे शुक्रान्तरे तम ॥८९॥ (शु० श०) खरोष्ट्रछागसम्प्राप्तिर्लौहमाषतिलादिकम ॥ लभते स्वल्पपीडादि शुक्रे शुक्रान्तरे शनि ॥९०॥ (शु० बु०) धनज्ञानमहीलाभो राजराज्याधिकारता ॥ निक्षेपाढ्नलाभोऽपि शुक्रे शुक्रान्तरे बुध ॥९१॥ (शु० के०) अल्पमृत्युर्महाघोराद्देशाद्देशान्तरागम लाभोऽपि जायते मध्ये शुक्रे शुक्रान्तरे शिखी ॥९२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे सूर्यादिसूक्ष्मदशाफलवर्णनं नाम द्विचत्वारिंशोऽध्याय ॥४२॥

अथ सूक्ष्मदशाफलमाह

लग्नेश्वरो रंध्रपतिश्च युक्तौ वृषे वृषांशे वृषभे वृकाणे ॥ स्थितौ भवेतां यदि तौ वृषे
यातान्निमित्तो मरणस्य वेद्यो ॥२॥ वृषे युग्मांशगौ तौ चेद्भल्लूकेन मृतिर्नृणाम् ॥ वृ
कर्कांशगौ तौ चेन्नक्रादथ जले मृतिः ॥३॥ वृषे सिंहांशगौ तौ चेद्व्याघ्राद्याघाततो मृतिः वृ
कन्यांशगौ तौ चेत्कपिना नाऽत्र संशयः ॥४॥ वृषे तुलांशगौ तौ चेद्व्याघ्राद्भीतिं वदेत्तदा ॥ वृ
कौर्प्यांशगौ तौ चेद्युक्तौ चिंता व्ययो भवेत् ॥५॥ वृषे चापांशगौ तौ चेदश्वेन च मृतिं वदेत्
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्दंतव्यापारतो भयम् ॥६॥ वृषे मृगांशगौ तौ चेन्महिषेण मृतिं वदेत्
वृषे कुम्भांशगौ तौ चेद्गोलांगूलान्मृतिं वदेत् ॥७॥ वृषे मषांशगौ तौ चेदजवस्ताद्भयं भवेत्
एवं संचिंत्य मतिमान्भ्रात्रादीनां मृतिं वदेत् ॥८॥

सूक्ष्म दशा फल

लग्नेश तथा अष्टमेश दोनो वृषराशि मे वृष नवांश मे या वृष द्रेस्काण हो तो वृषभ के घा
से मरण होता है। तथा लग्नेशाष्टमेश वृषराशि मे मिथुन नवांश मे हो तो भालू से मृत्यु होत
है, वृष के कर्कांश मे हो तो जल मे मगर से मृत्यु हो॥३॥ वृष के सिंहांश मे हो तो व्या
आदि के आघात से (आगे इसी प्रकार) कन्यांश मे हो तो वानर से मृत्यु हो॥४॥ तुलांश
व्याघ्र से, वृश्चिकांश मे हो तो अन्तर मे चिन्ता, खर्च हो॥५॥ धनांश मे हो तो घोडे के कार
मृत्यु हो। कुम्भांश मे हो तो हाथीदांत के व्यापार के कारण मृत्यु हो॥६॥ मकरांश मे हो त
महिष (भैंसे) से मृत्यु हो तथा कुम्भांश मे गौ की पूछ की आघात से भी मृत्यु सम्भव है॥७
मीनांश मे बकरे से भय हो॥ इसी प्रकार भ्राता आदि के लिये भी भावेश और उसके अष्टमे
के उपर्युक्त नवमांश की स्थिति से विचार करना॥८॥

अथ सूर्यादिग्रहाणां सूक्ष्मदशाफलमाह

(सू० सू०) नृणां भूमिपरित्यागो विरामं प्राणनाशनम् ॥ स्याननाशो महाहानि
सूर्यसूक्ष्मदशाफलम् ॥९॥ (सू० चं०) देवब्राह्मणभक्तिश्च नित्यकर्मरतस्तथा ॥ शुभेति
सर्वमित्रैश्च रवेः सूक्ष्मगते विधौ ॥१०॥ (सू० म०) क्रूरकर्मरतिस्तिग्मशत्रुभिः परिपीडनम्
रक्तस्रावादिरोगश्च रवेः सूक्ष्मगते कुजे ॥११॥ (सू० रा०) चौरादिभयभीतिश्च रणे भंग
पराजयः ॥ दानधर्मविहीनश्च रवेः सूक्ष्मगते ह्यगौ ॥१२॥ (सू० बृ०) नृपसत्काररराजार्ह
सेवकैः परिपूजितः ॥ राजवश्चुर्गतः शांतः सूर्यसूक्ष्मगते गुरौ ॥१३॥ (सू० श०)
चौर्यसाहसकर्मार्थं देवब्राह्मणपीडनम् ॥ स्यानच्युतिं मनोदुःखं रवेः सूक्ष्मगते शनौ ॥१४
(सू० बु०) दिव्यांबराविलब्धिश्च दिव्यस्त्रीपरिभोगता ॥ अचिंतितार्थसिद्धिश्च रवेः सूक्ष्म ग
बुधे ॥१५॥

रत रहता है, दुष्ट शत्रुओ से पीड़ित होता है तथा रक्त स्राव आदि रोग होता है॥११॥ (सू० सू० सू० रा०) चौर अग्नि तथा विष से पीडा हो, रण मे भग तथा पराजय हो, दान धर्म से हीन हो॥१२॥ (सू० ३ बृ०) राजयोग्य सत्कार सेवकरो से पूजा तथा राजसभा मे प्रवेश और आत्म सतोष प्राप्त हो॥१३॥ (सू० ३ श०) चौरी आदि मे उत्साह, देव ब्राह्मण को पीडा, स्थान हानि तथा मन मे दुःख होता है॥१४॥ (सू० ३ बु०) सुन्दर वस्त्राभूषण प्राप्ति, सुन्दरनारी भोग तथा अचिन्तित कार्य सिद्ध होता है॥१५॥

(सू० के०) गुरुतरार्तिविनाशश्च भृत्यचारभयस्तथा ॥ क्वचित्सेवकसम्बघो रवे सूक्ष्मगते ध्वजे ॥१६॥ (सू० शु०)पुत्रमित्रकलत्रादिसौख्यसंपद एव च ॥ नानाविधा च सपत्ती रवे सूक्ष्मगते भृगौ ॥१७॥

(सू० ३ के०) अधिक बीमारी, हानि स्त्री तथा नोकर से भय तथा सेवक से कभी २ मेल भी रहे॥१६॥ (सू० ३ शु०) स्त्री, पुत्र, मित्र आदि से सुख हो तथा अनेक प्रकार की सम्पत्ति प्राप्त हो॥१७॥

अथ चंद्रसूक्ष्मदशाफलमाह

(च० च०) भूषण भूमिलाभश्च सन्मान नृपपूजनम् ॥ तामसत्व गुरुत्व च चन्द्रसूक्ष्मदशाफलम् ॥१८॥ (च० म०) दुःख शत्रुविरोधश्च कुक्षिरोग पितुर्मृति ॥ वातपित्तकफोद्रेक शशिसूक्ष्मगते कुजे ॥१९॥ (च० रा०) क्रोधन मित्रबधूना देशत्यागो धनक्षय ॥ विदेशान्निगडप्राप्तिरिन्दुसूक्ष्मगतेऽप्यहौ॥२०॥ (च० बृ०) छत्रचामरसयुक्त वैभव पुत्रसपद ॥ सर्वत्र सुखमाप्नोति चद्रसूक्ष्मगते गुरौ ॥२१॥ (च० श०) राजोपद्रवनाश स्याद्व्यवहारे धनक्षय ॥ चौरत्व विप्रभीतिश्च चद्रसूक्ष्मगते शनौ ॥२२॥

चन्द्रसूक्ष्मदशाफल

(च० ३ च०) आभूषण तथा भूमिका लाभ, सन्मान, राजपूजा, तामसी बुद्धि तथा अभिमान होता है॥१८॥ (च० ३ म०) दुःख शत्रु से विरोध, कुक्षिरोग तथा पिता की मृत्यु एव सन्निपात आदि बीमारी होती है॥१९॥ (च० ३ रा०) मित्र बन्धुओ पर क्रोध, देशत्याग, धनहानि, विदेश मे कैद होना आदि होता है॥२०॥ (च० ३ बृ०) छत्र चामर से युक्त विभव, पुत्र आदि सम्पत्ति, तथा सर्वत्र सुख प्राप्त होता है॥२१॥ (च० ३ श०) राज से भय धन का नाश हो व्यापार मे हानि हो चोरी तथा ब्राह्मण से भी भय हो॥२२॥

(च० बु०) राजमान वस्तुलाभो विदेशाद्वाहनादिकम् ॥ पुत्रपौत्रसमृद्धिश्च चद्रसूक्ष्मगते बुधे ॥२३॥ (च० के०) आत्मनो वृत्ति हनन सस्यभूतृषादिभि ॥ अग्निचौर्यादिभीति स्याच्चन्द्रसूक्ष्मगते ध्वजे ॥२४॥ (च० शु०) विवाहो भूमिलाभश्च वस्त्राभरणवैभवम् ॥ राज्यलाभश्च कीर्तिश्च चन्द्रसूक्ष्मगते भृगौ॥२५॥ (च०सू०) क्लेशात्क्लेशकार्यनाश पशुधान्यधनक्षय ॥ गात्रवैषम्यभूमिश्च चद्रसूक्ष्मगते रवौ ॥२६॥

(च० ३ बु०) राज से सन्मान, वस्तु लाभ, विदेश के वाहन का लाभ, पुत्र पौत्र समृद्धि प्राप्त होती है॥२३॥ (च० ३ के०) अपनी वृत्तिका नाश, सस्य (वनस्पति) मृग आदि से हानि, अग्नि चोर आदि से भय हो॥२४॥ (च० ३ शु०) विवाह, भूमिलाभ, वस्त्र आभूषण सम्पत्ति की प्राप्ति, राज्यलाभ और यशलाभ होता है॥२५॥ (च० ३ सू०) दुःख के बाद दुःख तथा कार्यहानि, पशुधान्य और धन का क्षय, शारीरिक स्वास्थ्य की विषमता होती है॥२६॥

अथ भौमसूक्ष्मदशाफलमाह

(म० म०) भूमिहानिर्मनः खेदो ह्यपस्मारी च बधुयुक् ॥ पुरक्षोभमनस्तापो भौमसूक्ष्मदशाफलम् ॥२७॥ (म० रा०) अगदोषो जनाद्भीति प्रमदावशनाशनम् ॥ वह्निसर्पभयं घोरं भौमसूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥२८॥ (म० बृ०) देवपूजारतिश्चात्र मन्त्राम्युत्थानतत्परः ॥ लोकपूज्यं प्रमोदं च भौमसूक्ष्मगते गुरौ ॥२९॥

भौमसूक्ष्मदशाफल

(म० ३ म०) भूमि की हानि, मन मे खेद अपस्मार (मृगी) की बीमारी बधुसाहाय्यलाभ, मन मे क्षोभ और दुःख होता है॥२७॥ (म० ३ रा०) किसी अग मे दोष, भय, स्त्रीहानि, अग्नि सर्प से भय होता है॥२८॥ (म० ३ बृ०) देवताओ की पूजा, भक्ति मन्त्र पुरश्चरणरति, लोक पूजा तथा सुख होता है॥२९॥

(म० श०) बधनान्मुच्यते बद्धो धनधान्यपरिच्छदः ॥ भृत्यार्थबहुलः श्रीमान्भौमे सूक्ष्मगते शनौ ॥३०॥ (म० बु०) वाहनं छत्रसयुक्तं राज्यभोगपरं सुखम् ॥ कासश्वासादिका पीडा भौमसूक्ष्मगते बुधे ॥३१॥ (म० के०) परप्रेरितबुद्धिश्च सर्वत्रापि च गर्हिता ॥ अशुचिः सर्वकालेषु भौमसूक्ष्मगते ध्वजे ॥३२॥ (म० शु०) इष्टस्त्रीभोगसपत्तिरिष्टभोजनसग्रहः ॥ इष्टार्थश्चैव लाभश्च भौमसूक्ष्मगते भृगौ ॥३३॥ (म० सू०) राजद्वेषो द्विजात्क्लेशः कार्याभिप्रायवचकः ॥ लोकेऽपि निद्यतामेति भौमसूक्ष्मगते रवौ ॥३४॥ (म० च०) शुद्धत्वं धनसप्राप्तिर्देवब्राह्मणवत्सलः ॥ व्याधिना परिभूयेत् भौमसूक्ष्मगते विधौ ॥३५॥

(म० ३ श०) कैदी कैद से छूटता है, धन, धान्य वस्त्र प्राप्त होते हैं, नौकर मित्र आदि तथा सम्पत्तिशाली होता है॥३०॥ (म० ३ बु०) छत्रयुक्त वाहन, राजासमान, सुख के साथ श्वास खासी आदि बीमारी भी होती है॥३१॥ (म० ३ के०) दूसरे की सम्मति से रहना, सर्वत्र निन्दा होना, सदा मलीन रहना होता है॥३२॥ (म० ३ शु०) इच्छानुसार स्त्री, सम्पत्ति,भोग,भोजन,वस्त्र, धन,लाभ आदि होते है॥३३॥(म०३सू०) राजासे द्वेष,ब्राह्मणसे क्लेश, कार्य की हानि, ठगी तथा लोक मे निन्दा होती है॥३४॥ (म० ३ च०) शुद्धता, धनलाभ, देवब्राह्मण पूजा तथा रोगी रहता है॥३५॥

अथ राहोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(रा० रा०) लोकोपद्रवबुद्धिश्च स्वकार्ये मतिविभ्रमः ॥ शून्यता चित्तदोषः स्याद्राहो

सूक्ष्मदशाफलम् ॥३६॥ (रा० बृ०) दीर्घरोगी दरिद्रश्च सर्वेषां प्रियदर्शनः ॥ दानधर्मरतः शस्तो राहो सूक्ष्मगते गुरौ ॥३७॥ (रा० श०) कुमार्गात्कुत्सितोग्रश्च दुष्टश्च परसेवकः ॥ असत्सङ्गमतिर्मूढो राहो सूक्ष्मगते शनौ ॥३८॥ (रा० बु०) स्त्रीसम्भोगमतिर्वाग्मी लोकसंभावनावृतः ॥ अन्नमिच्छस्तनुग्लानी राहो सूक्ष्मगते बुधे ॥३९॥ (रा० के०) माधुर्यं मानहानिश्च बंधनं चापमारकम् ॥ पारुष्यं जीवहानिश्च राहो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४०॥ (रा० शु०) बंधनान्मुच्यते बद्धः स्थानमानार्थसंचयः ॥ कारणाद्द्रव्यलाभश्च राहो सूक्ष्मगते भृगौ ॥४१॥ (रा० सू०) व्यक्तार्शो गुल्मरोगश्च क्रोधहानिस्तथैव च ॥ वाहनादिसुखं सर्वं राहो सूक्ष्मगते रवौ ॥४२॥ (रा० च०) मणि रत्नधनावाप्तिर्विद्योपासनशीलवान् ॥ देवार्चनपरो भक्त्या राहो सूक्ष्मगते विधौ ॥४३॥ (रा० म०) निर्जितं जनविद्रावो जने क्रोधश्च बंधनात् ॥ चौर्यशीलरतिर्नित्यं राहो सूक्ष्मगते कुजे ॥४४॥

राहुसूक्ष्मदशाफल

(रा० ३ रा०) जनसमाज में उपद्रवकारी अपने कार्य में अस्थिरता तथा किंकर्तव्य विमूढ़ता होती है।।३६।। (रा० ३ बृ०) दीर्घरोगी, दरिद्री तथा जनप्रिय एवं दान धर्म में रुचि होती है।।३७।। (रा० ३ श०) कुमार्गी, दुष्टबुद्धि, उग्रस्वभाव, दुष्ट, परसेवी, असत्संगी तथा मूढ होता है।।३८।। (रा० ३ बु०) अतिकामी, वाचाल लोक निन्दायुक्त बहुभोजी तथा मलिन रहता है।।३९।। (रा० ३ के०) माधुर्य, मानहानि, बन्धन उपद्रव, कठोरता एवं जीव हानि भी होती है।।४०।। (रा० ३ शु०) बन्धन से मुक्ति स्थान मान धन का सञ्चय तथा कारण से द्रव्य का लाभ होता है।।४१।। (रा० ३ सू०) बवासीर तथा गुल्मरोग क्रोधरहितता एवं वाहन आदि का सुख होता है।।४२।। (रा० ३ च०) मणि रत्न धन की प्राप्ति, विद्याव्यसन तथा उपासनाशीलता एवं भक्ति से देव पूजनकारी होता है।।४३।। (रा० ३ म०) पराजय, जनसमूह से निरादर तथा बन्धुओं पर क्रोध होता है एवं सदा चोरी में चित्त रहता है।।४४।।

अथ गुरोः सूक्ष्मदशाफलमाह

(बृ० बृ०) शोकनाशो धनाधिक्यमग्निहोत्रं शिवार्चनम् ॥ वाहनं छत्रसंयुक्तं जीवसूक्ष्मदशाफलम् ॥४५॥ (बृ० श०) कलहा सूर्य वर्तो च विदेशे पशुनाशनम् ॥ विरोधो धननाशश्च गुरो सूक्ष्मगते शनौ ॥४६॥ (बृ० के०) ज्ञानं विभवपाण्डित्ये शास्त्रश्रोता शिवार्चनम् ॥ अग्निहोत्रं गुरोर्भक्तिर्गुरो सूक्ष्मगते ध्वजे ॥४७॥ (बृ० शु०) रोगान्मुक्तिः सुखं भोगं धनधान्यसमागमम् ॥ पुत्रदारादिकं सौख्यं गुरो सूक्ष्मगते भृगौ ॥४८॥ (बृ० सू०) वातपित्त प्रकोपश्च श्लेष्मोद्रेकस्तु दारुणः ॥ रसव्याधिकृतं शूलं गुरो सूक्ष्मगते रवौ ॥४९॥ (बृ० च०) छत्रचामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसंपदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः सूक्ष्मगते विधौ ॥५०॥ (बृ० म०) स्त्रीजनाच्च वियोत्पत्तिर्बंधनं चातिनिग्रहम् ॥ देशान्तरगमो भ्रान्तिर्गुरो सूक्ष्मगते कुजे ॥५१॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतः स्याच्चौरैरपहृतं महत् ॥ सर्ववृश्चिकदष्टत्वं गुरो सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥५२॥

सत्यहानिः केतोः सूक्ष्मगते शनौ ॥७८॥ (के० बु०) नानाविधजनाप्तिश्च विप्रयोगोऽरि-पीडनम् ॥ अर्थसंपत्समृद्धिश्च केतोः सूक्ष्मगते बुधे ॥७९॥

केतु सूक्ष्मदशा फल

(के०३के०) पुत्र स्त्री जन्य दुःख तथा शारीरिक अस्वस्थता एवं दरिद्रता के कारण भिक्षुवृत्ति से जीवनयापन होता है।७१॥ (के० ३ शु०) रोग का नाश तथा धनलाभ एवं गुरु तथा ब्राह्मण का भक्त, शत्रुओं से मेल रहता है।७२॥ (के० ३ सू०) युद्ध में विनाश तथा अन्य देश में प्रवास, मित्रों से विपत्ति, तथा क्लेश हो।७३॥ (के० ३ च०) दास और दासियाँ तथा सम्पत्ति हो, युद्ध से लाभ और जय हो एवं शुभ कीर्ति हो॥७४॥ (के० ३ म०) रहने के स्थान में भय, घोड़े आदि चौपाया तथा चोर दुष्ट आदि से पीड़ा और गुल्मपीड़ा तथा सिरदर्द होता है॥७५॥ (के० ३ रा०) सास ससुर की मृत्यु तथा दुष्ट स्त्री के सहयोग से लघुता तथा रुधिर का वमन होता है॥७६॥ (के० ३ बृ०) वैर विरोध तथा अकस्मात् राजभय एवं पशु तथा खेत का नाश और अरिष्ट होता है॥७७॥ (के० ३ श०) व्यर्थ की पीड़ा तथा अत्यन्त कमजोर सन्तान की उत्पत्ति, लघन, स्त्री से विरोध, सत्य की हानि होती है॥७८॥ (के०३बु) अनेक अतिथि का आगमन, शत्रुपीड़ा, धन, सम्पत्ति की वृद्धि होती है॥७९॥

अथ शुक्र सूक्ष्मदशा फलमाह

(शु० शु०) शत्रुहानिर्महत्सौख्यं शंकरालयसंभवम् ॥ तडागकूपनिर्माणं शुक्रसूक्ष्मदशाफलम् ॥८०॥ (शु० सू०) उरस्तापो भ्रमश्चैव गतागतविचेष्टितम् ॥ क्वचिल्लाभः क्वचिद्धानिर्भृगोः सूक्ष्म गते रवौ ॥८१॥ (शु० च०) आरोग्यं धनसंपत्तिः कार्यलाभो गतागतैः ॥ विद्याबुद्धिविवृद्धिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते विधौ ॥८२॥ (शु० म०) जडत्वं रिपुवैषम्यं देशाश्रयो महद्भयम् ॥ व्याधिदुःखसमुत्पत्तिर्भृगो सूक्ष्मगते कुजे ॥८३॥ (शु० रा०) राज्याग्निसर्पजा भीतिर्बंधुनाशो गुरव्यथा ॥ स्थानच्युतिर्महाभीतिर्भृगोः सूक्ष्मगतेऽप्यहौ ॥८४॥ (शु० बृ०) सर्वत्र कार्यलाभश्च क्षेत्रार्थविभवोन्नतिः ॥ वणिग्वृत्तेर्महालब्धिर्भृगोः सूक्ष्मगते गुरौ ॥८५॥ (शु० श०) शत्रुपीड़ा महद्दुःखं चतुष्पादविनाशनम् ॥ स्थानोग्रगुरुहानिः स्याद्भृगोः सूक्ष्मगते शनौ ॥८६॥ (शु० बु०) वाद्यादिषु संपत्तिर्व्यवहारो धनोन्नतिः पुत्रदारा दितः सौख्य भृगोः सूक्ष्मगते बुधे ॥८७॥ (शु० के०) अग्निरोगो महापीडा मुखनेत्रशिरोव्यथा ॥ सञ्चितार्थात्मनः पीडा भृगोः सूक्ष्मगते ध्वजे ॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे सूर्यादिसूक्ष्मदशाफलकथनं नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४३॥

शुक्र सूक्ष्मदशा फल

(शु० ३ शु०) शत्रु की हानि तथा महान् सुख, शिवमन्दिर निर्माण, कूप तालाब निर्माण होता है॥८०॥ (शु० ३ सू०) छाती में जलन, बुद्धि में भ्रम, निश्चेष्ट पड़े रहना, कभी लाभ कभी हानि होती है॥८१॥ (शु० ३ च०) आरोग्यता, धन सम्पत्ति की प्राप्ति, व्यापार में लाभ, यात्रा में लाभ, विद्या बुद्धि की वृद्धि होती है॥८२॥ (शु० ३ म०) देह में जड़ता, शत्रु से

विषमता, देशत्याग, महान् भय, व्याधि और दुःख की उत्पत्ति होती है॥८३॥ (शु० ३ रा०) मे राज्य, अग्नि, सर्प से भय, बन्धु का नाश, माता पिता को व्यथा, स्थान से हटना तथा महान भय होता है॥८४॥ (शु० ३ बृ०) सर्वत्र कार्य की सिद्धि तथा लाभ, खेत व्यापार और विभव की उन्नति तथा व्यापार से विपुल लाभ हो॥८५॥ (शु० ३ श०) शत्रु से पीडा, महान् दुःख, पशु का नाश, बन्धु तथा माता पिता की हानि होती है॥८६॥ (शु० ३ बु०) बन्धु में सम्पन्नता तथा मेल, व्यापार से बहुलाभ, स्त्रीपुत्र से सुख होता है॥८७॥ (शु० ३ के०) मन्दाग्नि की बीमारी, मुख, नेत्र और सिर मे व्यथा, सञ्चित धन की हानि, शरीर में पीडा, होती है॥८८॥

इति श्रीबृहत्पाराशर हो० शास्त्रे पू० भावप्रका० सूक्ष्मदशाफलकथन नाम त्रिचत्वारिंशोऽध्याय॥४३॥

अथ प्राणदशानयनमाह

स्वसूक्ष्माख्यदशायाश्च पिंडे विघटिकात्मके॥ स्वाब्दैस्तष्टे पुनस्तष्टे विंशोत्तरशतेन च॥ लब्ध विघटिका ज्ञेया विपलानि ततः परम्॥१॥

प्राणदशानयन

सूक्ष्मदशा की घटी, पल सख्या को पलात्मक पिण्ड (एकरस) करके जिस ग्रह की प्राणदशा देखना है उसके दशा वर्ष से गुणा करके १२० का भाग देने से लब्ध पल, विपल प्राप्त होगी। पलाक ६० से अधिक होने पर ६० का भाग देने पर घटी पल, विपल ये तीन अक प्राप्त होते हैं॥१॥

अथ सूर्यसूक्ष्मदशा तन्मध्ये प्राणदशाचक्रम्

ग्रहा	सू०	च०	म०	रा०	बृ०	श०	बु०	के०	शु०	यो०
घट्य०	०	१	०	२	२	२	२	०	२	१६
पला०	४८	२१	५६	२५	९	३३	१७	५९	४२	१२
विपला०	३६	०	४२	४८	३६	५४	४२	४२	०	०

अथ प्राणदशामाह

शरीरनाथो मरणाधिपेन युक्तो मूर्तेश्च मृणाधिपारो॥ तयोर्विनाशे भयमाशुनो मृति सर्पास्तदा

प्राहुरवारचिता: ॥२॥ सिंहे कन्यांशगौ तौ चेत्कफकंपादितो मृतिः ॥ मृगराजे तुलासंस्थे तयोर्भुक्तौ मृतिं वदेत् ॥३॥ अल्यांशगो मृगेंद्रे वा तयोदयि सरीसृपात् ॥ चापांशगो मृगेंद्रे तु तद्वर्गाच्च मृतिं वदेत् ॥४॥ मृगांशगौ तौ सिंहे च तयोदयि खरान्मृतिः ॥ कुंभांशगो यदा तौ च मृगराजनृपाद्भयम् ॥५॥ मीनांशकगतौ सिंहे सारंगाद्भयमादिशेत् ॥ सिंहे मेषांशगौ तौ चेद्गोमायोर्भयमादिशेत् ॥६॥ वृषांशगौ तौ सूर्यर्क्षे तयोदयि शुनो मृतिः ॥ युग्मांशगौ तौ सूर्यर्क्षे गोलांगूलाद्भयं भवेत् ॥७॥

प्राणदशा का निर्याण में उपयोग

लग्नेश अष्टमेश युक्त सिह राशि नवांश मे अथवा सूर्य नवांश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे मूषक या सर्प के काटने से मृत्यु होती है॥२॥ यदि लग्नेशाष्टमेश दोनो सिह राशि मे कन्या के नवमांश मे हो तो कफवृद्धि या कफरोग से मृत्यु होती है। सिहराशि के तुलांश मे हो तो॥३॥ उनकी 'प्राणदशामे' सर्प से मृत्यु होती है। सिह राशि मे धनुरंश मे हो तो भी सर्पवर्ग से ही मृत्यु होती है॥४॥ सिह राशि मे मकर नवांश मे हो तो उनकी 'प्राणदशा' मे गधे से मृत्यु होती है। इसी प्रकार कुंभांश मे होने से सिह से मृत्यु होती है॥५॥ और सिह राशि मे मीन नवांश मे हो तो सारंग (पक्षी) से मृत्यु होती है। सिह मे मेष नवांश मे हो तो 'गोमायु' गीदड (सियार) से मृत्यु होती है॥६॥ सिह मे वृष नवांश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे कुत्ते के काटने से मृत्यु होती है। इसी तरह सूर्यराशि मे मिथुनांश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे 'गोलांगूल' (गौ या बैल की पूंछ) से मृत्यु हो॥७॥

कर्कांशगौ तु सिंहे तु ह्यग्निबाधाद्गृहान्मृतिः ॥ एवं भ्रात्रादिभावानां तत्तद्भुक्तौ फलं वदेत् ॥८॥ देहाधिपो मृत्युपतिश्च युक्तश्चापांशगौ कार्मुकराशिगौ चेत् ॥ वाये तयोर्वाजिकृतं च मृत्यु वदंति तत्कालविदो महांतः ॥९॥ चापे मृगांशगौ तौ चेत्सारंगाद्भयमादिशेत् ॥ हये कुम्भांशगौ तौ चेद्राहाद्भयमादिशेत् ॥१०॥ हये मीनांशगौ तौ चेत्पाके नक्राद्भयं तयोः ॥ मेषांशगौ तौ चापे तु तयोर्दाये चतुष्पदात् ॥११॥ हये वृषांशगौ तौ चेद्रासभाद्भयमादिशेत् ॥१२॥ युग्मांशगौ हयांगेषु वानराद्भयमादिशेत् ॥ कर्कांशगौ हयांगे तु आखुना भयमेतयो. ॥१३॥ सिंहांशगौ हयांगेषु जंबुकाद्भयमेतयोः ॥ कन्यांशगौ हयांगे तु लांगूलान्मृतिरुच्यते ॥१४॥तुलांशगौ हयांगे तु सोष्ट्रान्मरणमेतयोः ॥ अल्यंशगा हयांगेषु तयोः पाके सरीसृपात् ॥ एव भ्रात्रादिभावानां फलमाहुर्मनीषिणः ॥१५॥

सिह मे कर्कांशमे हो तो घर मे आग लगने से जलकर मृत्यु हो। यह निर्देश मात्र है। जैसे अष्टमेश लग्नेश से जातक का निधनकारण कहा है, इसी प्रकार भ्राता, पिता, माता आदि के लिए भी उनके भावेश और अष्टमेश से पूर्वोक्त योग होने पर उपर्युक्त कारणानुसार मृत्यु होती है॥८॥ (अब तक सिहराशिगत का फल कहा। अन्य राशि का फल कहते हैं) लग्नेश और अष्टमेश धनुराशि मे धनु नवांश मे ही हो तो उनकी प्राणदशा मे घुडसवारी से मृत्यु होती है॥९॥ तथा ये दोनो धनुराशि मे मीनांश मे हो तो उनकी प्राणदशा मे मगरमच्छ से मृत्युभय है। मेष के नवांश मे चौपाये पशु से भय॥११॥ धनुराशि के वृषांश मे गधे से भय। मिथुनांश मे वानर से भय हो॥१२॥ कर्कांश मे हो तो मूषक से भय हो॥१३॥ धनु राशि मे

सिहाश मे हो तो सियार से भय हो। कन्याश मे हो तो गोलाधूल से भय हो।।१४।। इसी प्रकार
धनुराशि मे तुलाश मे हो तो पत्थर की चोट से मृत्यु हो। धनुराशि के अश अत्यल्प हो तो सर्प
से मृत्यु। इसी तरह भ्राता आदि के लिए भी विचार करना।।१५।।

वित्तप्रयोनेर्धननायकश्च मृगे मृगांशे च गतेऽथ युक्ते ॥ भुक्तोऽथ प्रीतिश्च भवेन्नराणां विवाहहेतुः
प्रवदंति संतः ॥१६॥ कुम्भांशगौ मृगांगे च भल्लूकाद्भयमेतयोः ॥ झषांशगौ मृगांशे च
सारंगाद्भयमेतयोः ॥१७॥ युग्मांशगौ मृगास्ये तौ हरिणान्मृतिरेतयोः।कर्कांशगौ मृगास्ये तौ
तयोरपि मृतिर्गजात् ॥१८॥ कौर्प्यांशगौ मृगांशे तौ नकुलान्मृतिरेतयोः ॥ चापांशगौ मृगांशे
तौ मार्जारान्मृतिरेतयोः ॥१९॥ एवं निश्चित्य मतिमान्भ्रात्रादीनां फलं वदेत् ॥२०॥

तथा लग्नेश और धनेश,मकर राशिके मकरनवांशमे हो तो मनुष्योमे प्रीति और विवाहका
कारण होता है।।१६।। तथा लग्नेश अष्टमेश मकरराशि के कुंभांश मे हो तो भालू से भय हो।
मकर और मीनांश मे हो तो सारग से भय होता है।।१७।। मकरराशि मे मिथुनांश मे हो तो
हरिण से भय होता है। कर्कांश मे हो तो हाथी से मृत्यु होती है।।१८।। मकरराशि मे
वृश्चिकांश मे हो तो नेवले से मृत्यु ।। और धनुरांश मे हो तो बिडाल से मृत्यु होती है।।१९।।
इसी प्रकार से भ्राता आदि के लिए भी फल निश्चय करे।।२०।।

नोट—यहा सिह, धन, मकर राशियो मे नवांशो का फल निर्देश किया है। इसी ढग से अन्य
राशि तथा अन्य नवांश मे भी एव अन्यान्य भावो के लिए भी समझना चाहिए। 'प्राणदशा'
का उपयोग ऊपर दिखाये गये 'मृत्यु' विचार मे ही मुख्य है।।

अथ सूर्यप्राणदशाफलमाह

(सू० सू०) पौंश्चल्यविषजा बाधा मोषणं विषमेक्षणम् ॥ सूर्यप्राणदशायां तु मरणं
कृच्छ्रमादिशेत् ॥२१॥ (सू० च०) सुखं भोजनसंपत्तिः संस्कारो नृपवैभवम् ॥
उदाराधिकृताभिश्च रवेः प्राणगते विधौ ॥२२॥ (सू० मं०) भूपोपद्रवमन्यार्थं द्रव्यनाशो
महद्भयम् ॥ महत्पुण्यचयप्राप्ती रवेः प्राणगते कुजे ॥२३॥ (सू० रा०) अग्न्योद्भवा महापीडा
विषोत्पत्तिर्विशेषतः ॥ अर्थापिराजभिः क्लेशो रवेः प्राणगतेऽप्यहौ ॥२४॥ (सू० बृ०)
नानाविद्यार्थसंपत्तिः कार्यलाभो गतापदः ॥ तीर्थस्नानाश्रमे वासो रवेः प्राणगते गुरौ ॥२५॥
(सू० श०) बंधनं प्राणनाशश्च चित्तोद्वेगस्तथैव च ॥ बहुबाधा महाहानी रवेः प्राणगते शनौ
॥२६॥ (सू० बु०) राजाश्रमोगः सततं राजलांछनतत्पदम् ॥ आत्मा सतर्पयेदेव रवेः प्राणगते
बुधे ॥२७॥ (सू० के०) अन्योन्यं कलहश्चैव वसुहानिः पराजयः ॥ गुरुस्त्रीबंधुहानिश्च
सूर्यप्राणगते ध्वजे ॥२८॥ (सू० शु०) राजपूजा धनाधिक्यं स्त्रीपुत्रादिभवं सुखम् ॥
अन्नपानादिभोगादि सूर्यप्राणगते भृगौ ॥२९॥

सूक्ष्मसूर्य में प्राणदशा फल

(सू०४सू०) सूर्य प्राणदशा मे व्यभिचारिणी स्त्री द्वारा विषप्रयोग, नेत्रपीडा तथा कष्ट
से मृत्यु होती है।।२१।। (सू० ४ च०) चन्द्र प्राणदशा में सुख, भोजन मे श्रेष्ठता, शुभ
सस्कार, राजसमान वैभव तथा उदारभाव होते है।।२२।। (सू० ४ मं०) राज से भय, अन्य

के निमित्त से धनहानि, महान् भय, उन्नति तथा प्राप्ति होती है॥२३॥ (सू० ४ रा०) राहु की प्राणदशा मे अन्नजात पीडा, विशेषरूप से विष की उत्पत्ति, अग्नि तथा राजभय होता है॥२४॥ (सू० ४ बृ०) गुरुप्राणदशा मे नाना विद्या तथा धन सम्पत्ति व्यापार तथा यात्रा से लाभ तथा निज देश मे वास होता है॥२५॥ (सू० ४ श०) सूर्य मे शनि की प्राणदशा हो तो बधन, प्राणहानि, चित्तोद्वेग, बहुबाधा, महान् हानि होती है॥२६॥ (सू० ४ बु०) सूक्ष्मसूर्य मे बुध प्रा० द० हो तो राजा से निरन्तर प्राप्ति तथा राजचिह्नयुक्त पद एव आत्मसन्तोष होता है॥२७॥ (सू० ४ के०) सूक्ष्म सूर्य मे केतु की प्रा० द० हो तो परिवार मे कलह, धनहानि, पराजय, स्त्री बधु माता पिता की हानि होती है॥२८॥ (सू० ४ शु०) सूर्य सूक्ष्ममे शुक्र की प्रा० द० हो तो राज पूजा, अधिक धन, स्त्री पुत्र से सुख तथा उत्तम खान पान प्राप्त होता है॥२९॥

अथ चंद्रप्राणदशाफलमाह

(च० च०) योगाभ्यास समाधि च देशिकत्व च पश्यति ॥ इति सर्व समासेन चंद्रप्राणदशाफलम् ॥३०॥ (च० म०) क्षय कुष्ठ बधुनाश रक्तस्रावान्महद्भयम् ॥ भूतावेशादि जायेत चंद्रप्राणगते कुजे ॥३१॥ (च० रा०) सर्पभीतिर्विशेषेण भूतोपद्रववान्सदा ॥ दृष्टिक्षोभो मतिभ्रंशश्चंद्रप्राणगतेऽप्यहौ ॥३२॥ (च० बृ०) धर्मवृद्धि क्षमाप्राप्तिर्देवब्राह्मण पूजनम् ॥ सौभाग्य प्रियदृष्टिश्च चन्द्रप्राणगते गुरौ ॥३३॥ (च० श०) सहसा देहपतन शत्रूपद्रववेदना ॥ अधत्व च धनक्षतिश्चंद्रप्राणगते शनौ ॥३४॥ (च० बु०) चामरच्छत्रसप्राप्ती राज्यलाभो नृपात्तत. ॥ समत्व सर्वभूतेषु चन्द्रप्राणगते बुधे ॥३५॥ (च० के०) शस्त्राग्निरिपुजा पीडा विषाग्नि कुक्षिरोगता ॥ पुत्रदारवियोगश्च चंद्रप्राणगते शिखी ॥३६॥ (च० शु०) पुत्रमित्रकलत्राप्तिर्विदेशाच्च धनागम ॥ सुखसपत्तिरर्थश्च चन्द्रप्राणगते भृगौ ॥३७॥ (च० सू०) तीव्रदोषी प्रदोषी च प्राणहानिर्मनोविषम् ॥ देशत्यागी महाभीतिश्चंद्रप्राणगते रवौ ॥३८॥

सूक्ष्म चन्द्र मे प्राणदशा फल

(च० ४ च०) सूक्ष्म चन्द्र मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो योगाभ्यास से समाधि प्राप्त हो, गुरु का साक्षात्कार हो। यह सब सक्षेप मे हो॥३०॥ (च० ४ म०) सूक्ष्म च० मे मगल की प्रा० द० हो तो क्षय, कुष्ठ, बन्धुनाश तथा रक्तस्राव से महान् भय एव भूतावेश आदि होता है॥३१॥ (च० ४ रा०) सूक्ष्म च० मे राहु प्रा० द० हो तो विशेष करके सर्पभय तथा भूतो का उपद्रव नेत्र मे विकार बुद्धि मे विषमता होती है॥३२॥ (च० ४ बृ०) सूक्ष्म चन्द्र मे गुरु की प्रा० द० हो तो धर्म की वृद्धि, क्षमा प्राप्ति, देव ब्राह्मण की पूजा, सौभाग्य और प्रिय दृष्टि होती है॥३३॥ (च० ४ श०) सूक्ष्म चन्द्र मे शनि की प्राणदशा हो तो देह मे जडता, शत्रुओ का उपद्रव तथा शरीर मे पीडा, नेत्र विकार तथा धनहानि होती है॥३४॥ (च० ४बु०) सूक्ष्म च० मे बुध की प्रा० द० हो तो छत्र चामर की प्राप्ति, राज्य लाभ तथा सबमें समान भाव होता है॥३५॥ (च० ४ के०) सूक्ष्म चन्द्र मे केतु की प्रा० द० हो तो शस्त्र अग्नि शत्रु से पीडा विष से भय, कुक्षिरोग तथा स्त्री पुत्र से वियोग होता है॥३६॥ (च० ४ शु०) सूक्ष्म च० मे

शुक्र की प्रा० द० हो तो स्त्री पुत्र मित्र की प्राप्ति तथा विदेश से धनलाभ एव सुख सम्पत्ति होती है॥३७॥ (च० ४ सू०) सूक्ष्म चन्द्र मे सूर्य प्रा० द० हो तो तीव्ररोगी तथा वातादि दोषवान्, प्राणहानि, मन मे विकार, देशत्याग एव महान् भय होता है॥३८॥

अथ भौमप्राणदशाफलमाह

(म० मं०) क्षेत्रहानिर्मनोदुःखम् ह्यपस्मारादिरोगकृत् ॥ परिवारकृता पीडा भौमे प्राणदशाफलम् ॥३९॥ (म० रा०) विच्युत सुतदारादिबन्धूपद्रवपीडित ॥ प्राणत्यागी विषेणैव भौमप्राणगतेऽप्यहौ ॥४०॥ (म० वृ०) देवार्चनपर श्रीमान्मन्त्रानुष्ठानतत्पर ॥ पुत्रपौत्रसुखावाप्तिर्भौमप्राणगते गुरौ ॥४१॥ (म० श०) अग्निबाधा भवेन्मृत्युरर्थनाश पदच्युति ॥ बन्धुभिर्बन्धुताहानिर्भौमप्राणगते शनौ ॥४२॥ (म० बु०) दिव्याम्बरसमुत्पत्तिर्दिव्याभरणभूषित ॥ दिव्यांगनाया सम्प्राप्तिर्भौमप्राणगते बुधे ॥४३॥ (म० के०) पतनोत्पातपीडा च नेत्रक्षोभो महद्भयम् ॥ भुजगाद्द्रव्यहानिश्च भौमप्राणगते ध्वजे ॥४४॥ (म० शु०) धनधान्यादिसम्पत्तिर्लोकपूजा सुखागमा ॥ नानाभोगैर्भवेद्भोगी भौमप्राणगते भृगौ ॥४५॥ (म० सू०) ज्वरोन्माद क्षयोर्थश्च राजविद्वेहसम्भव ॥ दीर्घरोगी दरिद्र स्याद्भौमप्राणगते रवौ ॥४६॥ (म० च०) भोजनादिसुखप्रीतिर्वस्त्राभरणवाञ्छितम् ॥ शीतोष्णव्याधिपीडा च भौमप्राणगते विधौ ॥४७॥

सूक्ष्म भौम मे प्राणदशा फल

(म० ४ म०) मगल अपनी प्राणदशा मे खेत की हानि, मन मे चिन्ता तथा मृगी आदि रोग एव परिवार के कलह से क्लेश होता है॥३९॥ (म० ४ रा०) सूक्ष्म मगल मे राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री पुत्र बन्धु आदि के उपद्रव से दुःखित होकर विष के द्वारा प्राणहानि करता है॥४०॥ (म० ४ वृ०) सूक्ष्म भौम मे गुरु की प्रा० द० हो तो देवपूजा निरत, श्रीमान् तथा मन्त्रानुष्ठान मे तत्पर एव पुत्र पौत्र सुख की प्राप्ति होती है॥४१॥ (म० ४ श०) सूक्ष्म भौम मे शनि की प्राणदशा हो तो मृत्यु या धननाश एव पदच्युति, तथा बन्धुओ से बन्धुता की हानि होती है॥४२॥ (म० ४ बु०) सूक्ष्म भौम मे बुध की प्राणदशा हो तो सुन्दर वस्त्र प्राप्ति तथा सुन्दर आभरण युक्तता एव सुन्दरी स्त्री प्राप्त होती है॥४३॥ (म० ४ के०) सूक्ष्म भौमदशा मे केतु की प्राणदशा हो तो ऊपर से गिरने की पीडा, नेत्र मे विकार, महान् भय तथा सर्प निमित्त से हानि होती है॥४४॥ (म० ४ शु०) सूक्ष्म म० म शुक्र की प्रा० द० हो तो धनधान्य आदि सपत्ति लोक मे पूजा सुख की प्राप्ति तथा नाना भोगो की प्राप्ति होती है॥४५॥ (म० ४ सू०) सूक्ष्म भौ० दशामे सूर्य का प्राणान्तर हो तो ज्वर जन्य उन्माद, धनक्षय, राजद्वेष, दीर्घरोगी और दरिद्र होता है॥४६॥ (म० ४ च०) सूक्ष्म भौ० दशामे चन्द्र की प्राणदशा हो, तो इच्छित भोजन वस्त्र आभरण की प्राप्ति तथा सर्द गरम विकार होता है॥४७॥

अथ राहो. प्राणदशाफलमाह

(रा० रा०) अज्ञाने विरक्तश्च विषभीतिस्तथैव च ॥ साहसाद्धननाशश्च राहो

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्त वैभवं पुत्रसम्भवः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ॥६३॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगमो भ्रान्ति गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहृ धनम् ॥ सर्पवृश्चिक-दंशाश्च गुरोः प्राणगते ह्यहौ ॥६५॥

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा में शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है॥५७॥ (बृ० ४ श०) गुरु में शनि की प्राणदशा हो तो व्रतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है॥५८॥ (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या में अनुराग लोक में यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है॥५९॥ (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा में केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है॥६०॥ (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु में शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है॥६१॥ (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्य शूल होता है॥६२॥ (बृ० ४ च०) सूक्ष्म गुरु में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि में विकार होता है॥६३॥ (बृ० ४ म०) सूक्ष्म गुरु में भौम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बंधन, क्लेशकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है॥६४॥ (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर में राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगों से दुखी, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दशन होता है॥६५॥

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिरुक् ॥ जलाग्निकृतमृत्युः स्यान्मंदप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धन धान्यं च मांगल्यं व्यवहाराभिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युवेदनदुःखं च भूतोपद्रवसंभवः ॥ परदाराभिभूतत्वं शनेः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० शु०) पुत्रार्थविभवैः सौख्यं क्षितिमानादिना सुखम् ॥ अग्निहोत्रं विवाहश्च शनेः प्राणगते भृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्पतानुभयं भवेत् ॥ अर्थहानिर्महाक्लेशः शनेः प्राणगते रवौ॥७०॥ (श० चं०) आरोग्यं पुत्रलाभश्च शांतिपौष्टिकवर्धनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते विधौ ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्वाग्निरागतो भीतिः शनेः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो नृपाद्भीतिर्मोहनं विषभक्षणम् ॥ वातपित्तकृता पीडा शनेः प्राणगतेऽप्यहौ ॥७३॥ (श० बृ०) सेनापत्यं भूमिलाभं संगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं नृपसम्मानं शनेः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा में ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जलोदर रोग एवं जल ...ग्नि से ग्रस्त करता है॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि में बुध की प्रा० द० हो तो धन,

(बृ० चं०) छत्र चामरसंयुक्तं वैभवं पुत्रसम्पदः ॥ नेत्रकुक्षिगता पीडा गुरोः प्राणगते विधौ ॥६३॥ (बृ० मं०) स्त्रीजनाच्च विषोत्पत्तिः बंधनं चातिनिग्रहः ॥ देशान्तरगमो भ्रान्ति र्गुरोः प्राणगते कुजे ॥६४॥ (बृ० रा०) व्याधिभिः परिभूतश्च चौरैरपहृ धनम् ॥ सर्पवृश्चिक-दंशाश्च गुरोः प्राणगते त्वहौ ॥६५॥

सूक्ष्म गुर्वन्तर प्राणदशा फल

(बृ० ४ बृ०) गुरु की प्राणदशा मे शोकनाश, धनवृद्धि, हवन, शिवपूजा तथा छत्रयुक्त सवारी होती है॥५७॥ (बृ० ४ श०) गुरु मे शनि की प्राणदशा हो तो व्रतहानि, धर्मलोप, विदेशगमन, धनहानि, बन्धुविरोध होता है॥५८॥ (बृ० ४ बु०) सूक्ष्मगुरु मे बुध की प्राणदशा हो तो विद्या मे अनुराग लोक मे यश, धन की प्राप्ति, स्त्री पुत्र से सुख होता है॥५९॥ (बृ० ४ के०) सूक्ष्म गु० दशा मे केतु की प्रा० द० हो तो ज्ञान प्राप्ति, ऐश्वर्य, शास्त्रज्ञान, शिवपूजा, अग्निहोत्र तथा गुरुभक्ति होती है॥६०॥ (बृ० ४ शु०) सूक्ष्म गुरु मे शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनधान्यवृद्धि, पुत्रस्त्री से सुख होता है॥६१॥ (बृ० ४ सू०) सूक्ष्म गु० दशा मे सूर्य की प्राणदशा हो तो त्रिदोष जनित व्याधि तथा आमरस जन्य शूल होता है॥६२॥ (बृ० ४ च०) सूक्ष्म गुरु मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामरयुक्त वैभव, पुत्र तथा सम्पत्ति, नेत्र और कुक्षि मे विकार होता है॥६३॥ (बृ० ४ म०) सूक्ष्म गुरु मे भौम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विष प्रयोग, बधन, क्लेशकरनिग्रह, देशान्तर यात्रा तथा भ्रान्ति होती है॥६४॥ (बृ० ४ रा०) सूक्ष्म गुर्वन्तर मे राहु की प्रा० द० हो तो जातक, रोगो से दुःखी, चोरी से धन की हानि, सर्प बिच्छू से दशन होता है॥६५॥

अथ शनिप्राणदशाफलमाह

(श० श०) ज्वरेण ज्वलिता कांतिः कुष्ठरोगोदरादिरुक् ॥ जलाग्निकृतमृत्युः स्यात्स्वप्राणदशाफलम् ॥६६॥ (श० बु०) धनं धान्यं च मांगल्यं व्यवहारामिपूजनम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते बुधे ॥६७॥ (श० के०) मृत्युर्वेदलदुःखं च भूतोपद्रवसंभवः ॥ परदाराभिभूतत्वं शनेः प्राणगते ध्वजे ॥६८॥ (श० शु०) पुत्रार्थविभवैः सौख्यं क्षितिमानादिना सुखम् ॥ अग्निहोत्र विवाहश्च शनेः प्राणगते भृगौ ॥६९॥ (श० सू०) अक्षिपीडा शिरोव्याधिः सर्पशत्रुभयं भवेत् ॥ अर्थहानिर्महाक्लेशः शनेः प्राणगते रवौ॥७०॥ (श० चं०) आरोग्यं पुत्रलाभश्च शांतिपौष्टिककर्मणम् ॥ देवब्राह्मणभक्तिश्च शनेः प्राणगते विधौ ॥७१॥ (श० मं०) गुल्मरोगः शत्रुभीतिर्मृगया प्राणनाशनम् ॥ सर्पाग्निशत्रुतो भीतिः शनेः प्राणगते कुजे ॥७२॥ (श० रा०) देशत्यागो नृपाद्भीतिर्मोहनं विषभक्षणम् ॥ वातपित्तकृता पीडा शनेः प्राणगतेऽप्यहौ ॥७३॥ (श० बृ०) नैरुजत्वं भूमिलाभं सगमं स्वजनैः सह ॥ गौरवं नृपसम्मानं शनेः प्राणगते गुरौ ॥७४॥

शनि प्राणदशा फल

(श० ४ श०) शनि अपनी प्राणदशा मे ज्वर की तीव्रता कुष्ठ तथा जलोदर रोग एव जल या अग्नि से मृत्यु करता है॥६६॥ (श० ४ बु०) सूक्ष्म शनि मे बुध की प्रा० द० हो तो धन,

धान्य तथा मगल कार्य हो, व्यापार वृद्धि से यश और देव ब्राह्मण की पूजाभक्ति होती है॥६७॥ (श० ४ के०) सूक्ष्मशनि मे के० की प्रा० द० हो तो मृत्यु के समान कष्ट तथा भूतबाधा एवं परस्त्री में आसक्ति होती है॥६८॥ (श० ४ शु०) सूक्ष्म शनि मे शुक्र का अन्तर हो तो धन पुत्रो से सुख, ऐश्वर्यवृद्धि भूमि तथा सम्मान प्राप्ति, अग्निहोत्र एव विवाह आदि मगल कार्य होते है॥६९॥ (श० ४ सू०) सूक्ष्म शनिदशा मे सूर्य प्राणदशा हो तो नेत्र पीडा, सिर मे दर्द, सर्प तथा शत्रु से भय, धन हानि तथा क्लेश होता है॥७०॥ (श० ४ च०) सूक्ष्म श० मे चन्द्र की प्रा० द० हो तो आरोग्य, पुत्रलाभ, शान्ति तथा पुष्टि की वृद्धि, देव ब्राह्मण भक्ति होती है॥७१॥ (श० ४ म०) सूक्ष्म शनि मे भौम की प्राणदशा हो तो गुल्मरोग तथा शत्रु से भय, शिकार खेलने मे प्राणहानि अथवा सर्प, अग्नि और शत्रुकृत् पीडा होती है॥७२॥ (श० ४ रा०) सूक्ष्म श० दशा मे राहु की प्राणदशा हो तो देशत्याग, राजभय, मोह, विषभक्षण, तथा वात पित्त जनित पीडा होती है॥७३॥ (श० ४। बृ०) सूक्ष्म श० दशा मे गुरु की प्रा० द० हो तो सेनापतित्व, भूमिलाभ, स्वजनो से मेल तथा राजमान्यता का गौरव होता है॥७४॥

अथ बुधप्राणदशाफलमाह

(बु० बु०) आरोग्यं सुखसंपत्तिर्धर्मकर्मादिसाधनम् ॥ समत्वं सर्वभूतेषु बुधप्राणदशाफलम् ॥७५॥ (बु० के०) वहनं चौर विद्धांग परमाधिं विषोद्भवम् ॥ देहांतकरणे दु.खं बुधप्राणगते ध्वजे ॥७६॥ (बु० शु०) प्रभुत्व धनसपत्तिः कीर्तिर्धर्मः शिवार्चनम् ॥ पुत्रदारादिक सौख्य बुधप्राणगते भृगौ ॥७७॥ (बु० सू०) अतर्दाहो ज्वरोन्मादौ बांधवानांरति स्त्रिया ॥ पापनिस्तेयसपत्तिर्बुधप्राणगते रवौ ॥७८॥ (बु० च०) स्त्रीलाभश्चार्थसपत्तिः कन्यालाभो धनागमः ॥ लभते सर्वतः सौख्य बुधप्राणगते विधौ ॥७९॥ (बु० म०) पतितः कुक्षिरोगी च दतनेत्रादिजा व्यथा ॥ अर्शांसि प्राणसंदेहो बुधप्राणगते कुजे ॥८०॥ (बु० रा०) वस्त्राभरणसपत्तिर्वियोगो विप्रवैरिता ॥ सन्निपातोद्भव दुःख बुधप्राणगतेऽप्यहौ ॥८१॥ (बु० गु०) गुरुत्व धनसपत्तिर्विद्या सद्गुणसग्रहः॥ व्यवसायेन सल्लाभो बुधप्राणगते गुरौ॥८२॥ (बु० श०) चौर्येण निधनप्राप्तिर्विधनत्व दरिद्रता ॥ याचकत्वं विशेषेण बुधप्राणगते शनौ ॥८३॥

बुध प्राणदशा फल

(बु० ४ बु०) बुध अपनी प्राणदशा मे आरोग्यता, सुख, सम्पत्ति, धर्मकार्य की सम्पन्नता तथा सबसे प्रेमभाव होता है॥७५॥ (बु० ४ के०) सूक्ष्म बु० मे केतु की प्रा० द० हो तो अग्नि से हानि चोरो से घाव, विष जनित पीडा, मृत्युसम दु ख होता है॥७६॥ (बु० ४ शु०) सूक्ष्म बुध मे शुक्र की प्रा० द० हो तो सन्मान, धन सम्पत्ति, यश, धर्मवृद्धि, शिवाराधन, स्त्री पुत्र से सुख होता है॥७७॥ (बु० ४ सू०) कलेजे मे जलन, ज्वर तथा उन्माद, बान्धव तथा स्त्री मे प्रीति, पाप तथा चोरी से सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥७८॥ (बु० ४ च०) सूक्ष्म बु० मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो धन तथा स्त्री की प्राप्ति, कन्यालाभ, धनलाभ तथा सर्वप्रकार सुख होता है॥७९॥ (बु० ४ म०) सूक्ष्म बु० दशा मे मगल की प्रा० द० हो तो समाज से पतित हो, कुक्षिरोगी, दात तथा नेत्र मे पीडा हो, बवासीर तथा प्राणघातक कष्ट हो॥८०॥ (बु० ४

॥९३॥ (शु० सू०) लोकप्रकाशकीर्तिश्च सुतसौख्यविवर्जितः ॥ उष्णादिरोगजं दुःखं शुक्रप्राणगते रवौ ॥९४॥ (शु० चं०) देवार्चने कर्मरतिर्मित्रतोषणतत्परः ॥ धनसौभाग्यसंपत्तिः शुक्रप्राणगते विधौ ॥९५॥ (शु० मं०) ज्वरो मसूरिकास्फोटकंडूपिचिपिटकादिका. ॥ देवब्राह्मणपूजा च शुक्रप्राणगते कुजे ॥९६॥ (शु० रा०) नित्यं शत्रुकृता पीडा नेत्रकुक्षिरुजादयः ॥ विरोधः सुहृदां पीडा शुक्रप्राणगतेऽप्यहौ ॥९७॥ (शु० बृ०) आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रस्त्रीधनवैभवम् ॥ छत्रवाहनसंप्राप्तिः शुक्रप्राणगते गुरौ ॥९८॥ (शु० श०) राजोपद्रवजाभीतिः सुखहानिर्महारुजः ॥ नीचैः सह विवादं च शुक्रप्राणगते शनौ ॥९९॥ (शु० बु०) संतोषं राजसन्मानं नानादिग्भूमिसंपदः ॥ नित्यमुत्साहवृद्धिः स्याच्छुक्रप्राणगते बुधे ॥१००॥ (शु० के०) जीवितात्मयशोहानिर्धनधान्यपरिच्छदः ॥ त्यागभोगधनानि स्युः शुक्रप्राणगते ध्वजे ॥१०१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखंडे सूर्यादिप्राणदशा फलकथनं नामचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥

शुक्र प्राणदशा फल

(शु० ४ शु०) अपनी प्राणदशा मे शुक्र ज्ञान और ईश्वर भक्ति, सन्तोष एवं कर्म की सफलता तथा पुत्र पौत्र की समृद्धि कारक होता है॥९३॥ (शु० ४ सू०) सूक्ष्म शु० की दशा मे सूर्य की प्राणदशा हो तो लोक मे प्रकाश, कीर्ति तथा पुत्रहीनता एवं पित्तज व्याधि होती है॥९४॥ (शु० ४ च०) सूक्ष्म शु० मे चन्द्र की प्राणदशा हो तो देवार्चन मे भक्ति तथा मित्रो मे प्रेम, धन और सौभाग्य सम्पत्ति की प्राप्ति होती है॥९५॥ (शु० ४ म०) सू० शु० मे भौम की प्राणदशा हो तो ज्वर, शीतला, खुजली, फोड़ा-फुन्सी आदि होती है। देव ब्राह्मण पूजा भी होती है॥९६॥ (शु० ४ रा०) सूक्ष्म शुक्र मे राहु की प्रा० द० हो तो नित्य शत्रुबाधा, नेत्र तथा कुक्षिरोग, मित्रो मे विरोध तथा पीडा होती है॥९७॥ (शु० ४ बृ०) सूक्ष्म शुक्र मे गुरु की प्राणदशा हो तो आयु वृद्धि, आरोग्यता, ऐश्वर्य, स्त्री पुत्र आदि ऐश्वर्य, छत्र तथा वाहन की प्राप्ति होती है॥९८॥ (शु० ४ श०) शुक्र की सूक्ष्म दशा मे शनि का प्राणान्तर हो तो राजा के उपद्रव से भय होता है। सुख की हानि तथा बीमारी एवं नीच मनुष्यो से विवाद होता है॥९९॥ (शु० ४ बु०) सूक्ष्म शुक्र मे बुध की प्राणदशा हो तो सन्तोष, राजसन्मान, नाना प्रकार की सम्पत्ति तथा नित्य उत्साह की वृद्धि होती है॥१००॥ (शु० ४ के०) सूक्ष्म शुक्र मे केतु की प्रा० द० हो तो स्वास्थ्य तथा यश की हानि, धनादि वस्तु का नाश एवं भोग्य पदार्थ अप्राप्त होते हैं॥१०१॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे भावप्रकाशिकाया सूर्यादिप्राणदशा फलकथन नाम चतुश्चत्वारिंशोऽध्याय ॥४४॥

अथ कालचक्रदशाप्रकरणमाह

वन्देऽहं गोपिकानाथं भारतीं गणनायकम् ॥ पार्वत्यै कथितं पूर्वं कालचक्रं पिनाकिना ॥१॥

तच्चक्रसारमुद्धृत्य लघुमार्गेण कथ्यते ॥ शुभाशुभं मनुष्याणां भूतं भव्यं च भावि सत् ॥२॥ भूतै ५ कविंश २१ गिरयो ७ नव ९ दिक् १० षोडशा १६ ब्धयः ४ ॥ सूर्यादीनां क्रमाद्वायूराशीनां स्वामिनो वशात् ॥३॥ नरस्य जन्मकाले वा प्रश्नकाले यदंशकः ॥ तदादि नवपर्यन्तमायुष परिपक्षते ॥४॥ अश्विन्यदितिहस्तर्क्षमूलप्रोष्ठपदाभिधाः ॥ अंशकाद्गणयेन्मेषात्प्रादक्षिण्य-क्रमेण तु ॥५॥ प्राजापत्यमघेंद्राग्निश्रवणं च यथाक्रमम् ॥ अप्रदक्षिणधिष्ण्यानि भवंत्येतानि पार्वति ॥६॥ अश्विन्यादित्रयं चैव सव्यमार्गे व्यवस्थितम् ॥ रोहिण्यादित्रयं चैव अपसव्ये व्यवस्थितम् ॥७॥ एवमुक्तं चतुर्भागं कृत्वा चक्रे समुद्धरेत् ॥ अंशावसाने जातस्य आयुर्द्धायोऽस्य कस्यचित् ॥८॥ सम्पूर्णायुर्भवेदादावथमाद्यस्य मध्यमम् ॥ अपमृत्युसमं कष्टमन्ते चापरे जगुः ॥९॥ ज्ञात्वैव स्फुटसिद्धांतो राश्यंशं गणयेद्बुधः ॥ अनुपातेन वक्ष्यामि तदुपायमतः परम् ॥१०॥

कालचक्र दशा प्रकरण

प्रथम गणेश तथा शारदा एवं भगवान् श्रीकृष्ण की वन्दना करते हैं। भगवान् शंकर ने जो श्रीपार्वतीजी को कहा था, उस 'कालचक्रदशा'॥१॥ का सारांश लेकर संक्षिप्त रीति से मनुष्यों का भूत, वर्तमान तथा भविष्य शुभ और अशुभ का ज्ञापक यह 'कालचक्र' (समयचक्र) कहा जाता है॥२॥ सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ५,२१,७,९,१०,१६,४ ये दशा वर्ष हैं। १२ राशियों की दशा में ये वर्ष अपने अपने स्वामी ग्रह के वर्ष जानना॥३॥ मनुष्य के जन्मकाल या प्रश्नकाल में जो अंश (नवांश) हो उससे आरम्भ करके नौवें अंश तक ही परमायु जानना॥४॥ अश्विनी, पुनर्वसु, हस्त, मूल, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में प्रथमादि पाद में मेषादि क्रम से (सव्यः सीधे क्रम से) प्रति अंश आगे कही जानेवाली रीति से गणना करे॥५॥ तथा रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण ये अपसव्य (उलटे मार्ग के) मार्ग के नक्षत्र हैं॥६॥ (और स्पष्ट कहते हैं) अश्विनी आदि तीन नक्षत्र (अश्विनी, भरणी, कृत्तिका) सव्यमार्ग के नक्षत्र हैं। और रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा ये अपसव्य मार्ग के नक्षत्र हैं॥७॥ इस उक्त प्रकार के नक्षत्रों के चार भाग करके स्पष्ट समझने के लिए चक्र में लिखे नौवें नवांश की दशा में या अंश के शेष में जन्म लेने वाले बालकों में कोई ही जीवन लाभ कर सकता है॥८॥ अंश के आदि में जन्मने वाले की आयु पूर्ण और मध्य भाग में मध्य और अंत में जन्मने वाले की आयु अल्प होती है। या अपमृत्यु के समान कष्ट होता है॥९॥ इस प्रकार प्रथम जानकर निश्चित् स्पष्ट आयु जानने के लिए अनुपात (गणित) का उपाय कहते हैं॥१०॥

गततारा त्रिभिर्भक्ता शेषं चत्वारिंशद्गुणम् ॥ वर्तमान-पदेनाढ्य राशीनामंशको भवेत् ॥११॥ ये च जीवांशके जाता गतनाडिविनांशकाः ॥ स्वस्वदशाब्दगुणिताः पंचभूमि १५ विभाजिताः ॥१२॥ एवं महादशा ज्ञेयाः सूर्यादीनां यथाक्रमम् ॥ गणयेज्जीवपर्यन्तमायुष्यं परिचिंतयेत् ॥१३॥

गत नक्षत्र संख्या में तीन (३) का भाग दे, शेष संख्या को ४ से गुणा करे। वर्तमान नक्षत्र को चरण संख्या का योग करे तो राशि का 'नवांश' होता है॥११॥ जिनका जन्म जीवांश में है उनकी अंशरहित केवल घटिकासंख्या को ग्रह के अपने अपने वर्ष संख्या से गुणा करके १५

का भाग देकर॥१२॥ जो लब्ध वर्षादि अंक प्राप्त हो वह सूर्यादि ग्रहों की महादशा जीवपर्यन्त जानना चाहिए॥१३॥

सव्ये मेषादिरपसव्ये वृश्चिकादिरंशो ज्ञातव्यः

ये जीवा अंशके जाता गतनाडीपलेन तु ॥ तदंशोनहृताब्दस्तु पंचभूमिविभाजिता ॥१४॥ एवं महादशारम्भो भवेदशाद्ययाक्रमात् ॥ गणयेन्नवपर्यन्तमायुष्यं तत्प्रकीर्तितम् ॥१५॥ सूर्यादीनां क्रमादेतद्दशा सर्वदशासु च ॥१६॥ मेषगोयमकुलीरराशिषु स्वांशकेषु परमायुरुच्यते ॥ ज्ञानक १०० मद ८५ गज ८३ स्तव ८६ क्रमात्तत्त्रिकोणभवनेषु तद्भवेत् ॥१७॥ द्वादशारं लिखेच्चक्रं तिर्यगूर्ध्वसमानकम् ॥ गृहा द्वादश जायन्ते सव्यचक्रे यथाक्रमम् ॥१८॥ द्वितीयादिषु कोष्ठेषु राशीन्मेषादिकाँल्लिखेत् ॥ एवं द्वादशराश्याख्यकालचक्रमुदीरितम् ॥१९॥ विश्वर्क्षपूर्वाभाद्रं च रेवती सव्यतारकं ॥ एतद्दशोडुपादीनामश्विन्यादौ च वीक्षयेत् ॥ विशदस्तत्प्रकारस्तु कथ्यते शृणु पार्वति ॥२०॥ देहजीवौ मेषचापौ दस्राद्यचरणस्य च ॥ मेषादिचापपर्यंत राशिपाश्च दशाधिपा ॥२१॥ देहजीवौ मकरयुग्मौ दिगीशार्काष्टभूधरा ॥ षड्वेदशरलोकाश्च राशिपाश्च दशाधिपा ॥२२॥ दस्रादिदशताराणां तृतीयचरणेषु च ॥ गौर्देहो मिथुनं जीवो द्विकार्केशदशाशका ॥२३॥ अक्षिरामाख्यनायास्ते दशाधिपतयः क्रमात् ॥ अश्विन्यादि-दशोडूनां चतुर्थचरणेषु च ॥२४॥

जिनका जन्म जीवांश में है। उनके अंश की गत नाडी पर दशावर्ष से गुणा करके १५ से भाग देने पर भुक्त महादशा प्राप्त होगी। इसी प्रकार तत् अंश से जानना और नौवे अंश तक आयु जानना॥१४॥१५॥ सर्व राशियों की दशा में स्वामी सूर्यादि ग्रहों के कहे हुए वर्षों के अनुसार ॥१६॥ मेष, वृष, मिथुन कर्क इन राशियों के अंश की परमायु क्रमशः १००।८५।८३।८६ जानना और इनसे त्रिकोण स्थान में (राशि में) भी यही संख्या जानना॥१७॥ (यहां पर ज्ञानक, मद, गज तव ये संख्यासूचक शब्दकल्प है। इनमें संख्या इस प्रकार ग्रहण की जाती है। 'क ट प या दि अंकाग्राह्या तथा 'अंकानां वामतो गतिः' अर्थात् क, ट, प, य से गिनकर अंक लेना और उत्तरोत्तर बायें अर्थात् इकाई, दहाई, सैकड़ा, क्रम से रखना। और अ, ङ, न ञ की शून्य संख्या लेना यथा ज्ञानक -ञ-० न-० क-१ वामतो गति १०० इसी प्रकार म में ५, द से ८ = ८५ आगे भी इसी प्रकार समझें) १२ घर का चक्र बनाना जो चारों तरफ से समान हो, यह चक्र सव्यमार्ग का होता है॥१८॥ दूसरे कोष्ठक में मेष आदि १२ राशियां लिखें। इस प्रकार यह १२ राशियों का 'कालचक्र' तैयार होता है॥१९॥ उत्तराषाढ़ा पूर्वाभाद्रपद, रेवती ये सव्यमार्ग के नक्षत्र है। इनकी दशा के नक्षत्रों की दशा की गणना अश्विनी में देखना॥२०॥ मेष और धनु राशि देह और जीव राशि है, इनकी दशा अश्विनी के प्रथम चरण से आरंभ होती है। और मेष से धन राशि तक के स्वामी ग्रह ही दशा के स्वामी होते हैं॥२१॥ (अश्विनी के द्वितीय चरण में) देह और जीव क्रमशः मकर और मिथुन हैं और १०।११।१२।८।७।६।४।५।३ ये दशा राशि और राशियोंके स्वामीग्रह ही दशापति होते है॥२२॥ अश्विनी आदि दस नक्षत्रों के तृतीय चरण में वृष राशि देह और

उत्तराभाद्रपद, अनुराधा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, शतभिषा इन ८ नक्षत्रो के देह जीव और दशाराशि मृगशिर के समान जानना॥३७॥

देहजीवो कर्किमीनौ मृगाद्यचरणस्य च ॥ व्यस्तमीनादिकर्कान्तं राशिपाश्च दशाधिपाः ॥३८॥ गौर्देही मिथुनं जीव इन्दुभस्य द्वितीयके ॥ त्रिद्व्येकार्कदिगीशार्कचन्द्रर्क्षभवनाधिपाः ॥३९॥ देहजीवौ नक्रयुग्मौ मृगपादे तृतीयके ॥त्रिबाणाब्धिरसांगाष्टसूर्येशदशराशिपाः॥४०॥ मेषचापौ देहजीवाविंदुभस्य चतुर्थके ॥ व्यस्तं चापादि मेषांतं राशिपाश्च दशाधिपाः ॥४१॥ एवं व्यस्ततरे ज्ञेयं देहजीवदशादिकम् ॥ स्पष्टं तवाग्रे कथितं पार्वति प्राणवल्लभे ॥४२॥

मृगशिर के प्रथम चरण के देह-कर्क। जीव मीन मीन से उलटी कर्क तक विपरीत क्रम की राशि दशाधिप है॥३८॥ मृगशिर नक्षत्र के द्वितीय पाद मे देह-वृष। जीव-मिथुन। दशाराशि ३।२।१।९।१०।११।१२।१।२ इनके स्वामी दशापति होते हैं॥३९॥ मृगशिर के तीसरे चरण मे देह-मकर। जीव-मिथुन। दशाराशि ३।५।४।६।७।८।१२।११।१० तथा इनके स्वामी ग्रह राशिपति=दशापति हैं॥४०॥ मृगशिर के चौथे चरण मे देह-मेष। जीव-धनु। धनु राशि से मेष तक विपरीत क्रम से गणना करना चाहिए। राशियो के स्वामी ही दशास्वामी होते हैं॥४१॥ हे प्राणेश्वरि पार्वति! हमने यह अपसव्यमार्ग के देह, जीव, दशाधिप तुम्हारे सामने स्पष्ट रूप से कहे है॥४२॥

कालचक्र दशा का उदाहरण

स्पष्ट चन्द्रमा १०।२६।३०।३३ इन राश्यादि की घटी की, तो १९५९०।३३ हुआ, ८०० का भाग दिया तो लब्ध २४ (गत नक्षत्र शतभिषा) यह व्यर्थ है। शेष संख्या ३९० हुई, अत पूर्वाभाद्रपद का गतकालमान है। इसको ६० से गुणा किया तो २३४०० हुआ, इसमे ८०० का भाग दिया तो २९।१५ यह स्पष्ट 'भयात काल' हुआ। यह १५ घटी से अधिक है अत १५ का भाग दिया तो शेष १४।१५ रहा, "विश्वर्क्षं पूर्वाभाद्र च रेवती सव्यतारक. ॥" इत्यादि नियमानुसार सव्यमार्ग मे पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय चरण मे जन्म होने से देहाधिप-'शनि' तथा 'जीवाधिप-'बुध' हुआ, एव वृष नवांश मे ८५ वर्ष की 'परमदशा' प्राप्त हुई। अब दशाकाल स्पष्ट करने के लिए पूर्वाभाद्रपद के द्वितीय पाद की भुक्त घटी १४।१५ को एकरस किया तो ८५५ हुआ, अब दशा वर्ष ८५ से गुणा किया तो ७२६७५ हुए। इसमे ९०० का भाग दिया तो लब्ध भुक्त वर्षादि ८०।१०।१५ हुआ, इसको ८५ मे कम किया तो ४।१।१५ वर्षादि बुध के भोग्य वर्षादि हुए। अत. कालचक्र दशा में जन्म समय मे जीवाधिप बुध की यह अन्तिमभोग्य दशा प्राप्त हुई।

अथ कालचक्रसव्यमार्गविभागकरणचक्रम्

दशानां नक्षत्रनामानि तथा नक्षत्रपदानि	देहाधिप	अथ सव्यनक्षत्रदशा १।२।३।७।८।९।१३।१४।१९।१९।२०।२१ २५।२६।२७ सव्य	जीवाधिपति	अंशा	परमायुर्वर्षाणि
अ १च १मू १९च १पु ७ च [illegible] २५च १ह १३च १	भौ	भौ १ र २ गा ३ बो ४ मा ५ ता ६ म ७ हो ८ धि ९ म ७बगु१६बबु९ब [illegible] २१ र५ब बु९बगु१६बम ७बगु१०ब	गुरु	मेषांश	दशा १०० वर्षाणि
अ १च २मू १९च २पु ७ च २पू २५च २ह १३च २	श	न १०अ ११च १२ [illegible] ८ सि [illegible] च ६ व ४ च ५ गा ३ श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९ च २१ पू ५ बु ९	बुध	वृषांश	दशा ८५ वर्षाणि
अ १च ३मू १९च ३पु ७ च ३पू २५च ३ह १३च ३	बु	क २ मा १ अ १२बु ११मि १०धा ९ ध १ र २ ग ३ शु १६ म ७ गु १० श ४ [illegible] ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९	बुध	मिथुनांश	दशा ८३ वर्षाणि
अ १च ४मू १९च ४पु ७ च ४पू २५च ४ह १३च ४	चन्द्र	का ४ लि ५ च ६ स्त्र ७ त ८ धि ९ न १०अ ११व १२ च २१ पू ५ बु ९ शु १६ म ७ गु १० श ४ श ४ गु १०	गुरु	कर्कांश	दशा ८६ वर्षाणि
म २च १चि १४च १पु ८ च १पू २०च १उ २६च १	भौम	ह ८ त ७ अ ६ व ४ शा ५ व ३ र २ प १ च १२ म ७ गु १६ बु ९ च २१ र ५ बु ९ शु १६ म ७ गु १०	गुरु	सिंहांश	दशा १०० वर्षाणि
म २च २चि १४च २पु ८ च २चि १४च २उ २६च २	शनि	बु ११गा १०धि ९ क १ र २ गौ ३ धी ४ ना ५ च ६ श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९ च २१ पू ५ बु ९	बुध	कन्यांश	दशा ८५ वर्षाणि
म २च ३पू २०च ३पू ८ च [illegible] २६च ३चि १४च ३	शुक्र	मू ७ र ८ धि ९ म १०अ ११न १२ ज ८ सि ७ च ६ शु १६ म ७ गु १० श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९	बुध	तुलांश	दशा ८३ वर्षाणि

म २च ४पू २० च ४ पू ८ च ४वि १४च ४उ २६च ४	चद्र	वा ४ मा ५ गा ३ र २ क १ त्र १२ क्षु ११नी १० धि ९ च २१ मू ५ बु ९ शु १६ म ७ गु १० श ■ श ४ गु १०	गुरु	वृश्चिकाश	दशा ८६ वर्षाणि
कृ ३च १उ २१च १अ ९ च १रे २७च १स्वा १५च १	भौम	पी १ र २ गा ३ वा ४ मा ५ वा ६ स ७ हो ८ धि ९ म ७ शु १६ बु ९ च २१ र ५ बु ९ शु १६ म ७ गु १०	गुरु	धनांश	दशा १०० वर्षाणि
कृ ३च २उ २१च २अ ९ च २रे २७च स्वा १५च २	श	न १० श्र ११त्र १२ ज्ञा ८ सि ७ ■ ६ च ४ ण ५ गा ३ श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९ च २१ सू ५ बु ९	बुध	मकरांश	दशा ८५ वर्षाणि
कृ ३च ३उ २१च ३अ ९च ३ रे २७च ३स्वा १५च ३	शु	क २ मे १ त्र १२क्षु ११र्णि १० धा ९ य १ र २ ण ३ शु १६ म ७ गु १० श ४ श ४ गु १० म ७ शु१६ बु ९	बुध	कुम्भांश	दशा ८३ वर्षाणि
कृ ३च ४उ २१च ४अ ९च ४ रे २७च ४स्वा १५च ४	चद्र	वा ४ णि ५ व ६ स्य ७ ह ८ धि ९ न १० श्र ११त्र १२ च २१ सू ५ बु ९ शु १६ म ७ गु १० श ४ श ४ गु १०	गुरु	मीनांश	दशा ८६ वर्षाणि

अथ कालचक्रेऽपसव्यमार्गदशाप्रकरणचक्रम्

दशान्तनक्षत्रनामानि तथा नक्षत्रपादानि	जीवाधिपति	अपसव्यनक्षत्राणि ४।५।६।१०।११।१२।१६।१७।१८।२२।२३।२४	देहाधिप	अंशा	परमायुर्वर्षाणि
रो४ च १ वि १६ च १ म १० च १ श्र २२ च १	गुरु	ध ९ न १० स ११त्र १२ प १ रा २ ग ३ मि ५ व ४ गु १० श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६ बु ९ सू ५ च २१	चद्र	वृश्चिकांश	दशावर्षाणि ८६
रो ४ च २वि १६च २म १० च २ श्र २२ च २	बुध	ता ६ सा ७ द ८ त्र १२क्षु ११र्नि १० धि ९ दो ८ सि ७ बु ९ शु १६शु १०गु १० श ४ श ४ गु १० म ७ शु १६	शुक्र	तुलांश	दशावर्षाणि ८३
रो ४च ३वि १६च ३म १० च ३ श्र २२ च ३	बुध	च ६ र्णी ५ मो ४ गी ३ रा २ व १ ध ९ न १०क्षु ११ बु ९ सू ५ च २१ बु ९ शु १६ म ७ गु १० श ४ श ४	शनि	कन्यांश	दशाब्दा ८५

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	योगा
२	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	७	१	५	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांश दशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	योगा
०	२	१	१	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	४	९	५	६	१	६	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२१	१३	१६	१३	०
३६	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	योगा
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५	०
२	२१	२०	१९	२१	८	१६	२४	१९	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	सू. ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बु० ९	म० १	शु० २	बु० ३	योगा
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२०	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये रव्यन्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	योगः
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
०	३	५	९	४	६	४	९	५	०	०
१८	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	योगः
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	९
२	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५	०
२४	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	२०	१२	०
०	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	योगः
०	२	१	१	१	२	१	३	०	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	४	९	५	०
२७	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	योगः
०	०	०	०	१	०	१	५	१	१	७
०	५	८	५	१	७	५	४	७	१	०
२५	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	४८	१३	०
१२	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	१६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमेषांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	योगा
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श० १०	श० ११	बृ० १२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	५	५	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४३	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	४८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श० ११	बृ० १२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	श० १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
२८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
५६	४५	५४	३५	३	१८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० १२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	श० १०	श० ११	योगा
१	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२८	२८	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रवृषमासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमान्तर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०३	श १०	श०११	बृ०१२	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	३१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	२८	०
२४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रवृषमासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०३	श०१०	श ११	बृ १२	म०८	योगा
२	२	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रवृषमासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	च०४	सू०५	बु०३	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	योगा
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रवृषमासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	सू०५	बु०३	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	योगा
२	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	०	११	११	५	८	११	०	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२८	३५	३	२८	०
१४	४३	२१	१४	४३	४३	४३	[illegible]	३२	[illegible]	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	र०५	बु०३	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बु०३	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	योगा
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	योगा
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	१	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
२१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्दशावर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	योग
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
११	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्दशावर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्दशावर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	बृ ९	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्दशावर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	योग
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
११	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि [illegible] तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	मं०१	शु०२	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ०९	योग
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	मं० १	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ०९	मं०१	योग
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथकालचक्रमिथुनदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	मं०१	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	मं०१	शु०२	योग
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	३१	८	८	३१	१५	३४	०
७	१२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	योग
२	५	१	२	३	१	२	०	०	२	२१
२७	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२५	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३	२०	४	३७	३७	४	०
७	४७	५	४६	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	च०४	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	३२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सौम्यांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श० १०	श० ११	बृ०१२	च०४	सू०५	योग
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२४	१५	४०	५१	५१	४०	४६	३०	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	म०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	योग
२	२	१	१	०	१	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	३	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०८	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	योग
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	९	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२	२३	२७	२७	२३	१९	२६	२३	१८	०
८	९	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
३२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४७	३५	३४	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श०१०	श०११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	योग
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	३६	३६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	श०११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	३१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	योग
०	१	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	३७	०

अथ कालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श०१०	श०११	योग
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अथ कालचक्रसिंहावलोकदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	गु०२	म०१	बृ०१२	योगाः
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	०	१	७	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहावलोकदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	गु०२	म०१	बृ०१२	म०८	योगा
०	२	१	३	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	६	९	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२२	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहावलोकदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	शु०२	म०१	बृ०१२	म०८	गु०७	योगा
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	७	१०	७	५	०
२	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहावलोकदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	सू०५	बु०६	शु०२	म०१	बृ०१२	म०८	गु०७	बु०६	योगाः
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२१	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिहाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये रव्यतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	सू०५	बु०६	शु०२	म०१	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
०	३	५	९	४	६	४	९	५	०	०
१८	०	१२	१८	६	०	६	१८	१२	१८	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिहाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बु०६	शु०२	म०१	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	योगा
०	०	१	०	०	०	१	०	१	०	९
२	९	५	७	१०	७	५	९	१०	५	०
२४	२१	८	१६	२४	१७	८	२१	२०	१२	०
०	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिहाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु०२	म०१	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	योगा
०	२	१	१	१	२	१	३	०	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	४	९	५	०
१७	२१	१३	६	१३	२१	८	९	१८	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	३६	०	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिहाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	म०१	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	शु०२	योगा
०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	७
०	५	८	५	१	७	५	४	७	१	०
२५	२६	१२	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	०
१२	२४	०	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाङ्क	गु०१२	म०८	शु०७	बु०६	च०४	सू०५	बु०६	शु०२	म०१	योगा
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाङ्क	श०४	श १०	शु०९	म०१	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	९	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	१४	३५	३	२८	४५	४२	२८	०
१४	५३	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाङ्क	श०१०	गु०९	म०१	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	श ११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
०	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५६	७	१९	२८	१	२	२५	४४	२	७	०
२८	४५	५४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाङ्क	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	श १०	श १०	योगा
१	०	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	११	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४१	१४	४९	३५	४२	४३	३५	४३	४३	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०१	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
२९	६	६	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२९	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
१४	४९	१०	१५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	म०१	योगा
२	३	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	६	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशाव०८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	च०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	म०१	शु०२	योगा
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	१
८	११	२	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
६	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	२२	१४	१४	३५	२५	५६	०

अथ कालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रातर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०२	योगा
२	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	११	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	२१	१४	४३	४३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रकन्यादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	बु०६	श०११	श०१०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	च०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१७	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रकन्यादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०६	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	बु०३	च०४	सू०५	योगा
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
२१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रतुलादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शुक्रान्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	श०११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	योगा
२	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
१३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	३१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रतुलादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम् सू०५										
ध्रुवांक	म०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३१	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१३	४८	५३	४५	४५	५३	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	म०८	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	८	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अथ कालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	श ११	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अथ कालचक्रवृश्चिकादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	सू० ५	बु० ३	शु० २	म० १	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	च० ४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	२	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	६	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	३९	२२	५३	३०	१८	४३	४३	१८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रवृश्चिकादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बु० ३	शु० २	म० १	बृ१२	श११	श०१०	बृ०९	च० ४	सू०५	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
२७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रवृश्चिकादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु० २	म० १	बृ०१२	श११	श१०	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	योगा
२	२	१	१	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	२	२६	२६	२	४२	१	२६	०

अथ कालचक्रवृश्चिकादशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	म० १	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	योगा
१	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	२३	२७	२७	२३	१५	२६	२३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४२	५०	०
२२	५९	२४	३३	३३	२४	५६	४२	१५	१४	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श०११	श०१०	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	भ० १	योगा
० १	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	३६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श०१०	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	भ० १	बृ० १२	योगा
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	११	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	भ० १	बृ०१२	श०११	योगा
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	३३	३०	३७	०

अथ कालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	च० ४	सू० ५	बु० ३	शु० २	भ० १	बृ०१२	श०११	श०१०	योगा
० १	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	२८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	योग
०	०	१	०	१	०	०	१	०	०	७
०	५	१	७	५	४	७	१	५	८	०
२५	२६	१३	१६	१९	६	१६	१३	२६	१२	०
१२	२४	१२	४८	१२	०	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	बु० २	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	योग
०	२	१	३	०	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	६	९	५	६	१	६	१	०
२७	२१	८	९	१८	८	२१	१३	३९	१३	०
३६	३६	२४	३६	२	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	योग
०	०	१	०	०	१	०	०	०	१	९
१	९	१०	५	९	५	३	१०	७	५	०
२	२१	२०	१२	२१	८	१६	२४	१६	८	०
२४	३६	२४	०	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	योग
०	४	१	१	३	१	२	१	३	१	२१
२	४	०	१०	४	५	१	५	४	१०	०
१५	२७	१८	२०	९	१९	६	१९	९	२०	०
३६	३६	०	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु० ९	म० १	शु० २	बु० ३	च० ४	सू० ५	बु० ६	शु० ७	म० ८	योगा
०	१	०	१	०	२	०	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	१	६	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	६	०	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०१०	श११	गु०१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	९	५	११	२	५	०
५६	७	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	०
२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	१८	०
२४	५३	५३	४२	१६	३२	१४	५३	२१	२४	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	गु१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	३	९	५	११	२	५	२	०
५८	७	१९	२८	१	२	२५	२४	२	७	०
१८	४५	२४	३५	३	२८	४५	४२	२८	४५	०
१४	५३	४२	१८	३२	१४	५३	२१	१४	५३	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	श०११	योगा
१	१	०	१	१	२	०	१	०	०	१०
१२	२	९	१०	०	५	७	०	५	५	०
२१	३	२६	१७	२१	१९	१	२१	१९	१९	०
१०	३१	२८	३८	१०	२४	४५	१०	२४	२४	०
३५	४६	१४	४९	३५	४२	५३	३५	४१	४३	०

अथ कालचक्रमकराद्दशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	म० ८	बु० ६	च० ४	सू०५	बृ० ३	श१०	श०११	बृ०१२	योगा
०	०	१	०	१	०	०	०	०	०	१०
२१	६	३	८	८	४	८	३	३	९	०
३८	२७	२४	२६	२२	२८	२६	२८	२८	२६	०
४९	३१	२१	४९	३५	१४	४९	३५	३५	१८	०
५४	४६	१०	२५	१७	७	२५	१८	१८	१४	०

अथ कालचक्रमकराद्दशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	बु०	म० ३	श१०	बृ०१०	म०१२	योगा
२	९	१	३	०	१	०	०	१	१	१६
७	०	८	११	११	८	९	९	१०	३	०
४५	४	९	१३	८	९	१	१	१७	२४	०
५२	१४	५२	३	४९	५२	३	३	३८	२१	०
५६	७	५६	३२	२५	५६	३२	३२	४९	११	०

अथ कालचक्रमकराद्दशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	च० ४	सू०५	गु० ३	श१०	श०११	बृ०१२	म० ८	शु० ७	योगा
१	०	२	०	०	०	०	१	०	१	९
८	११	९	६	११	५	५	०	८	८	०
७	१३	२०	१०	१३	२	२	२१	२६	९	०
३	३	२८	३५	३	२८	२८	१०	४९	५२	०
३१	३२	१४	१८	३२	१४	१४	३५	२९	५६	०

अथ कालचक्रमकराद्दशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	सू० ५	बु० ३	श०१०	श११	बृ०१२	म८-१	शु७ २	बु ६	योगा
२	५	१	२	०	०	२	१	३	२	२१
२८	२	२	२	११	११	५	८	११	२	०
५६	७	२४	२०	२५	२५	१९	२२	१३	२०	०
२८	४५	४२	२८	४५	४५	२४	३५	३	२८	०
१४	५३	३१	१४	५३	५३	४३	१७	३२	१४	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवाक	सू० ५	बु० ३	श०१०	श०११	बृ१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	योगा
२	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२१	३	६	२	२	७	४	११	६	२	०
१०	१५	१०	२४	२४	१	२८	८	१०	२४	०
३५	५२	३५	४२	४२	४५	१४	४९	३५	४२	०
१७	५६	१८	२१	२१	५३	७	२५	१८	२१	०

अथ कालचक्रमकरांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवाक	बु० ३	श१०	श०११	बृ०१२	म० ८	शु० ७	बु० ६	च० ४	सू० ५	योगा
१	०	०	०	१	०	१	०	२	०	९
८	११	५	५	०	८	८	११	२	६	०
७	१३	२	२	२१	२६	९	१३	२०	१०	०
३	३	२८	२८	१०	४९	५२	३	२८	३५	०
३१	३२	१४	१४	३५	२५	५६	३२	१४	१८	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु० २	म० १	बृ१२	श११	श१०	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	योगा
०	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
२	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
९	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
२३	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
५१	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवाक	म० १	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	म० १	शु० २	बु० ३	शु० २	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श११	श १०	बृ०९	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१६	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	योगा
२	३	१	२	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अथ कालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०१	शु०२	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	योगा
०	५	१	२	३	१	२	०	०	०	२१
२	१	२	२	१०	८	५	११	११	५	०
२७	१६	१९	११	२६	१५	९	२१	२१	९	०
५४	२	३२	९	३०	२०	४	३७	३७	४	०
२७	४७	५	४७	४२	५६	११	४१	४१	११	०

अथ कालचक्रमीनाब्ददशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	च०४	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	१	५
२०	३	६	११	४	६	२	२	६	२	०
५५	१४	८	४	२६	२९	२३	२३	२९	१९	०
४८	१०	२२	५३	३०	१८	४३	४३	८	३२	०
५०	४	२०	१	४२	९	१५	१५	९	५	०

अथ कालचक्रमीनाब्ददशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०६	शु०७	मं०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	च०४	सू०५	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	२	०	९
७	११	८	८	०	५	५	०	२	६	०
४०	९	२	२३	१६	०	०	१६	११	८	०
३७	४	४७	४३	४४	४१	४१	४४	९	२२	०
५४	११	२६	१५	४०	५१	५१	४०	४६	२०	०

अथ कालचक्रमीनाब्ददशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शुक्रान्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	मं०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	योगा
२	२	१	०	०	०	१	३	०	१	१६
६	११	३	१०	८	८	१०	१०	११	८	०
५८	२१	१८	९	२७	२७	९	२६	४	२	०
३६	३७	५०	४६	५४	५४	४६	३०	५३	४७	०
१६	४१	१४	३	२६	२६	३	४३	१	२६	०

अथ कालचक्रमीनाब्ददशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	मं०८	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	योगा
०	०	०	०	०	०	१	०	०	१	७
२९	६	९	३	३	९	८	४	८	३	०
१८	२५	३३	२७	२७	३३	१५	२६	३३	१८	०
८	६	१	१२	१२	१	२०	३०	४३	५०	०
२२	५९	३४	३३	३३	२४	५६	४२	१९	१४	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बृ०९	श १०	श११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	योग
१	१	०	०	१	२	०	१	१	०	१०
११	१	५	५	१	५	६	०	१०	९	०
५१	२८	१७	१७	२८	९	२९	१६	९	२३	०
३७	३६	२६	२६	२६	४	१८	४४	४६	१	०
४०	१६	३०	३०	१६	१३	९	४०	२	२४	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	श १०	श ११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	१	२	५	८	३	५	०
४४	६	६	१७	२१	१३	०	२७	२७	१७	०
३९	५८	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	०
४	३७	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	श११	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	योग
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	११	२	५	८	३	५	२	०
४४	६	१७	२१	२३	०	२७	२७	१७	६	०
३९	५८	२६	३७	४३	४१	५४	१२	२६	५८	०
४	३७	३०	४१	१५	५१	२६	२३	३०	३७	०

अथ कालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बृ०१२	च०४	सू०५	बु०६	शु०७	म०८	बृ०९	श १०	श ११	योग
१	१	२	०	१	१	०	१	०	०	१०
११	१	५	६	०	१०	९	१	५	५	०
५१	२८	९	२९	१६	९	२३	२८	१७	१७	०
३७	३६	४	१८	४४	४६	१	३६	२६	२६	०
४०	१६	१३	९	४०	२	२४	१६	३०	३०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०१	शु०२	बु०३	सू०५	च०४	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	योगाः
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२९	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५९	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	सू०५	च०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	म०१	योगा
२	२	१	०	३	१	२	२	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	च०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	म०१	शु०२	योगा
१	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	४६	४०	५२	५२	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	चं०४	बृ०९	श१०	श११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	योगाः
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	९	२०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	वृ०९	रा१०	श११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	सू०५	योगः
२	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
५६	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श०११	रा०१०	वृ०९	म०८	शु०७	योगः
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	म०८	वृ०१२	रा११	श१०	गु०९	म०८	शु०७	बु०६	योगः
२	१	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०८	वृ०१२	रा११	श१०	गु०९	म०८	शु०७	बु०६	शु०७	योगः
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	गु० ७	म० ८	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	२९	२९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श०११	श१०	बृ० ९	म० ८	गु० ७	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ० १२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	२३	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४९	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	१८	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ० तस्योपदशा चक्रम

ध्रुवांक	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	गु० ७	म० ८	बृ०१२	श०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४९	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलादशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	गु० ७	म० ८	बृ०१२	श०११	श०१०	योगा
१	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२३	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२	३३	४२	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि [illegible] तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	म० ८	शु० ७	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	४
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	३६	३६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रतुलांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शुक्रान्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	म० ८	योगा
२	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	योगा
१	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५३	४९	१०	२८	२८	०
११	३२	१८	२४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्यांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	सू० ५	च० ४	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	श१०	श०११	बु० ६	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०-	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	४५	०
१७	५६	१	१८	२५	७	५१	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बु० ६	सू० ५	योगा
२	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	२२	१९	२५	२५	२०	२४	०
२८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	१८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४३	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा च०

ध्रुवांक	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बु० ६	सू० ५	च० ४	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	१२	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	२	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
११	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शुक्रांतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	योगा
२	१	१	१	०	०	२	२	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	१८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	३९	३	५९	०
५६	७	११	४९	३२	३२	५६	२५	३९	५६	०

अपसव्यकालचक्रकन्याशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	शु० २	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	२६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	२१	०
२४	४६	१४	१८	१८	३५	७	१७	२५	१०	०

अपसव्यकालचक्रकन्यादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बृ० ९	श१०	श०११	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	शु० २	म० १	योगा
१	१	०	०	१	०	२	१	१	०	१०
१२	२	५	५	०	७	५	०	१०	९	०
२१	३	१९	१९	२१	१	१९	२१	१७	२६	०
१०	३१	२४	२४	१०	४५	२४	१०	३८	२८	०
१५	४६	४३	४३	३५	५३	४२	३५	४९	१४	०

अपसव्यकालचक्रकन्यादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श० १०	श११	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	२	११	५	९	३	५	०
५६	७	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	०
२८	४५	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	०
१४	५३	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	०

अपसव्यकालचक्रकन्यादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श०११	बु० ६	सू० ५	च० ४	बु० ३	गु० ३	म० १	बृ० ९	श० १०	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	२	११	५	९	३	५	२	०
५६	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	७	०
२८	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	४५	०
१४	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	५३	०

अपसव्यकालचक्रसिंहादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	गु०१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ६	शु० ७	म० ८	योगा
०	१	०	१	०	०	२	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	९	१	१०	७	८	०
६	०	१२	९	२४	०	६	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ६	शु० ७	म० ८	बृ०१२	योगा
०	०	१	०	०	१	०	२	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	८	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	१२	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ६	शु० ७	म०८	गु०१२	म०१	योगा
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	९	५	९	४	५	६	१	६	१	०
२७	११	८	१८	९	८	२१	१३	३६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु१२	म० १	शु० २	योगा
०	०	०	१	०	१	७	०	०	१	९
२	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	१६	०	२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू० ५	च० ४	बु० ६	शु० ७	म० ८	गु०१२	म० १	शु० २	बु० ३	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	२	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रसिंहासदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चंद्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	बु० ९	शु० ७	म० ८	गु१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	योगा
० २ १५ ३६ ०	४ ४ २७ ३६ ०	१ १० २० २४ ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ ५ १९ १२ ०	२ १ ६ ० ०	१ ५ १९ १२ ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ १० २० २४ ०	१ ० १८ ० ०	२१ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रसिंहासदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ९	शु० ७	म० ८	गु०१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	योगा
० १ २ २४ ०	० ९ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ७ १६ ४८ ०	० १० २४ ० ०	० ७ १६ ४८ ०	० ५ ८ २४ ०	० ९ २१ ३६ ०	० ५ १२ ० ०	१ १० २० २४ ०	९ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रसिंहासदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० ७	म० ८	गु०१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ९	योगा
० १ १७ ३६ ०	२ ६ २१ ३६ ०	१ १ १३ १२ ०	१ ७ ६ ० ०	१ १ १३ १२ ०	० ६ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ९ १८ ० ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	१६ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रसिंहासदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० ८	गु१२	म० १	शु० २	बु० ३	सू० ५	च० ४	बु० ९	शु० ७	योगा
० २५ १२ ० ०	० ५ २६ २४ ०	० ८ १२ ० ०	० ५ १६ २४ ०	१ १ १३ १२ ०	० ७ १६ ४८ ०	० ४ ६ ० ०	१ ५ १९ १२ ०	० ७ १६ ४८ ०	१ १ १३ १२ ०	७ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	योगा
१	१	०	०	१	०	१	१	०	२	१०
११	१	५	५	१	९	१०	०	६	५	०
५१	२८	१७	१७	२८	२३	९	१६	२९	९	०
३७	३६	२६	२६	३६	१	४६	४४	१८	४	०
४०	१६	३०	३०	१६	२४	२	४०	९	१३	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	श०११	श१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ०१२	योगा
१	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	३	८	५	२	११	५	०
४४	६	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	०
३९	५८	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	०
४	३७	३७	३०	३३	२९	५१	२५	४१	३०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ०१२	श०११	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	१	०	४
१६	२	५	३	१	५	२	११	५	२	०
४४	६	१७	२७	२७	०	२३	२१	१७	६	०
३९	५८	२६	१२	५४	४१	४३	३७	२६	५८	०
४	३७	३०	३३	२९	५१	१५	४१	३०	३७	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	च० ४	बृ१२	श०११	श०१०	योगा
१	१	०	१	१	०	२	१	०	०	१०
११	१	९	१०	०	६	५	१	५	५	०
५१	२८	२३	९	१६	२९	९	२८	१७	१७	०
३७	३६	१	४६	४४	१८	४	३६	२६	२६	०
४०	१६	२४	२	४०	९	१६	१३	१६	३०	०

अपसव्यकालचक्रककांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	मं० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	योगा
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२१	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	९	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रककांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु० ७	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ१२	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	योगा
२	२	१	०	३	१	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रककांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु० ६	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श११	श०१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	योगा
१	०	०	२	१	०	०	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	४७	०
५४	११	२०	५६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रककांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	सू० ५	चं० ४	बृ०१२	श०११	श१०	बृ० ९	मं० ८	शु० ७	बु० ६	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	११	२९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	१५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

अपसव्यकालचक्रकर्कांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च० ४	बृ१२	श०११	श०१०	बृ० ९	म० ८	शु० ७	बु० ६	सू० ५	योग
२	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	१९	०
२५	२	४	३७	३७	४	२०	३०	९	३२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु० ३	शु० २	म० १	बृ० ९	श१०	श०११	बृ१२	म० १	शु० २	योग
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	३४	१५	२१	८	८	२१	१५	३४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु० २	म० १	बृ० ९	श०१०	श११	बृ०१२	म० १	शु० २	बु० ३	योग
२	३	१	१	०	०	१	१	३	०	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	३४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म० १	बृ० ९	श०१०	श०११	बृ१२	म० १	शु० २	बु० ३	शु० २	योग
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	५	०
४१	३१	३६	२६	२६	३६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्य काल चक्र मिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाक	बृ०९	श १०	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	योगा
१ ३ २२ २४ ३४	१ २ १३ ४४ ६	० ५ २३ ३९ ३८	० ५ २३ ३९ ३८	१ २ १३ ४४ ६	२ १० ३ ३६ ५२	१ ११ ३ ५८ ३३	१ १ ० २१ ४२	१ ११ ३ ५८ ३३	० १० ३ ३६ ५२	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाक	श १०	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	योगा
० १७ २० ५७ ४९	० २ ९ २३ ५२	० २ ९ २३ ५२	० ५ २३ २९ ३८	० ४ १ २६ ४५	० ९ ७ ३५ २५	० ५ ६ ८ ४०	० ९ ७ ३५ २५	० ४ १ २६ ४५	० ५ २३ २९ ३८	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाक	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	श १०	योगा
० १७ २० ५७ ४९	० २ ९ २३ ५२	० ५ २३ २९ ३८	० ४ १ २६ ४५	० ९ ७ ३५ २५	० ५ ६ ८ ४०	० ९ ७ ३५ २५	० ४ १ २६ ४५	० ५ २३ २९ ३८	० २ ९ २३ ५२	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाक	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	योगा
१ १३ २२ २४ ३४	१ २ १३ ४४ ६	० १० ३ ३६ ५२	१ ११ ३ ५८ ३३	१ १ ० २१ ४१	१ ११ ३ ५८ ३३	० १० ३ ३६ ५२	१ २ १३ ४४ ६	० ५ २३ २९ ३८	० ५ २३ २९ ३८	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि तन्मध्ये भौमातर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	वृ०१२	योगा
० १	०	१	०	१	०	०	०	०	०	७
०	७	४	९	४	७	१०	४	४	१०	०
२१	२	५	३	५	२	३	१	१	३	०
४१	३१	४७	१५	४७	३१	३६	२६	२६	३६	०
१२	४८	०	१०	०	४८	५२	४५	४५	५२	०

अपसव्यकालचक्रमिथुनांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	गु०१२	म०१	योगा
० २	३	१	३	१	१	०	०	१	१	१६
९	१	८	१	४	११	९	९	११	४	०
२३	०	२४	०	५	३	७	७	३	५	०
५१	२१	३४	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	०
१९	४१	४२	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधातर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	शु०३	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श ११	श १०	योगा
० १	०	०	२	०	१	०	१	०	०	९
८	११	६	२	११	८	८	०	५	५	०
७	१३	१०	२०	१३	९	२६	२१	२	२	०
३	३	३५	२८	३	५२	४९	१०	२८	२८	०
३१	३२	१८	१४	३२	५६	२५	३५	१४	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभांशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यातर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	शु०३	योगा
• ०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२१	३	२	६	११	४	७	२	२	६	०
१०	१५	२४	१०	८	२८	१	२४	२४	१०	०
३५	५२	४२	३५	४९	१४	४५	४२	४२	३५	०
१७	५६	२१	१८	२५	१७	५३	२१	२१	१८	०

अपसव्यकालचक्रवृषभासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाङ्क	च०४	बु०६	गु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	योगा
२ २८ ५६ २८ १४	५ २ ७ ५४ ५३	२ २ २० १८ १४	३ ११ १३ ३ ३२	१ ८ २२ ३५ १७	२ ५ १९ २४ ४२	० ११ २५ ४५ ५३	० ११ २५ ४५ ५३	२ २ २० २८ १४	१ २ २४ ४२ २१	२१ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रवृषभासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाङ्क	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	योगा
१ ८ ७ ५ ३१	० ११ १३ ३ ३२	१ ८ ९ ५२ ५६	० ८ २६ ४९ २५	१ ० २१ १० ३५	० ५ २ २८ १४	० ५ २ २८ १४	० ११ ११ ३ ३२	० ६ ० ३५ १८	२ २ १० २८ १४	९ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रवृषभासदशावर्षाणि ८५ भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाङ्क	शु०७	म०८	बु०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	योगा
२ ७ ४५ ५९ ५६	३ ० ४ १४ ७	१ ३ २४ २१ ११	१ १० १७ ३८ ४९	० ९ १ ३ ३२	० ९ १ ३ ३२	१ ८ ९ ५२ ५६	० ११ ८ ४९ २५	३ ११ १३ ३ ३२	१ ८ ९ ५२ ५६	१६ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रवृषभासदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवाङ्क	म०८	बृ०१२	श १०	श ११	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	गु०७	योगा
० २९ ३८ ४९ २४	० ६ २७ ३१ ४६	० ९ २६ २८ १४	० ३ २८ ३५ १८	० ३ २८ ३५ १८	० ८ २६ ४९ २५	० ४ २८ १४ ७	१ ८ २२ ३५ १७	० ८ ३६ ४९ २५	१ ३ २४ २१ १०	७ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रवृषभादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	योगा
१	१	०	०	१	०	२	१	१	०	१०
१२	२	५	५	०	७	५	०	१०	९	०
२१	३	१९	१९	२१	१	१९	२१	१७	२६	०
१०	३१	२४	२४	१०	४५	२४	१०	३८	२८	०
२५	४६	४३	४३	३५	५३	४२	३५	४९	१४	०

अपसव्यकालचक्रवृषभादसावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	२	५	९	११	५	९	३	५	०
५६	७	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	०
२८	४५	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	०
१४	५३	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	०

अपसव्यकालचक्रवृषभादसावर्षाणि८५ तन्मध्ये शन्यतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श०१२	योगा
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१६	२	५	९	११	५	९	३	५	२	०
५६	७	२	२४	२५	२	१	२८	१९	७	०
२८	४५	२८	४२	४५	२८	३	३५	२४	४५	०
१४	५३	१४	२१	५३	१४	३२	१८	४२	५३	०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरतर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	योगा
०	१	०	१	०	०	२	०	१	०	१०
१	०	८	७	१०	६	१	१०	७	८	०
६	०	१२	६	२४	०	६	२४	६	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	म०१	बृ०१	योगा
० ० २५ १२ ० ०	० ५ २६ २४ ०	१ १ १३ १२ ०	० ७ १६ ४८ ०	० ४ ६ ० ०	१ ५ १९ १२ ०	० ७ १६ ४८ ०	१ १ १३ १२ ०	० ५ २६ २४ ०	० १२ ० ० ०	७ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बृहस्पत्यन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवाक	गु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	म०१	बृ०९	म०८	योगा
० १ २७ ३६ ० ०	२ ६ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ९ १८ ० ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	२ ६ २१ ३६ ०	१ १ १३ १२ ०	१ ७ ६ ० ०	१ १ १३ १२ ०	१६ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवाक	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	म०१	बु०९	म०८	शु०७	योगा
० २ २४ ० ८ ०	० ९ २१ ३६ ०	० ५ १२ ० ०	१ १० २० २४ ०	० ९ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ७ १६ ४८ ०	० १० २४ ० ०	० ७ १६ ४८ ०	१ ५ ८ २४ ०	९ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवाक	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	म०१	बृ०९	म०८	गु०७	बु०३	योगा
० ० १८ ० ० ०	० ३ ० ० ०	१ ० १८ ० ०	० ५ १२ ० ०	० ९ १८ ० ०	० ४ ६ ० ०	० ६ ० ० ०	० ४ ६ ० ०	० ९ १८ ० ०	० ५ १२ ० ०	५ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	योग
०	४	१	३	१	२	१	३	१	१	२१
२	४	१०	४	५	६	५	४	१०	०	०
१५	२७	२०	९	१९	६	१९	९	२०	१८	०
३६	३६	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	योग
०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	९
१	९	५	७	१०	७	५	९	५	१०	०
२	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	१२	२४	०
२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	योग
०	२	१	१	१	२	१	०	३	१	१६
१	६	१	६	१	६	५	९	४	५	०
२७	२१	१३	३६	१३	२१	८	१८	९	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	३६	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रमेषादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	योग
०	०	०	०	१	०	०	१	०	१	७
२५	५	८	५	१	७	४	५	७	१	०
१२	२६	१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	०
०	२४	०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

१ अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	योग
१ ११ ५१ ३७ ४०	१ १ २८ ३६ १६	० ५ १७ २९ ३०	० ५ १७ २६ ३०	१ १ २८ ३६ १६	० ९ २३ १ २४	१ १० ९ ४६ २	१ ० १६ ४४ ४०	० ६ २९ १८ ०	२ ५ ९ ४ १३	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श ११	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	योग
० १६ ४४ ३९ ४	० २ ६ ५८ ३७	० २ ६ ५८ ३७	० ५ १७ २६ ३०	० ३ २७ १३ ३३	० ८ २७ ५४ २६	० ५ ० ४१ ५१	० ९ २३ ४३ १५	० ११ २१ ३७ ४१	० ५ १७ २६ ३०	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	योग
० १६ ४४ ३९ ४	० २ ६ ५८ ३७	० ५ १७ २६ ३०	० ३ २७ १२ ३३	० ८ २७ ५४ २६	० ५ ० ४१ ५१	० २ २३ ४३ १५	० ११ २१ ३७ ४१	० ५ १७ २६ ३०	० २ ६ ५८ ३७	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि तस्योपदशा चक्रम् ०१										
ध्रुवांक	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	श १०	योग
१ ११ ५१ ३७ ४०	१ ० २८ ३६ १६	० ९ २३ १ २४	१ १० ९ ४६ २	१ ० १६ ४४ ४०	० ६ २९ १८ ९	२ ५ ९ ४ १३	१ १ २८ ३६ १६	० ५ १७ २६ ३०	० ५ १७ २९ ३०	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	योग
०	०	१	०	०	१	०	०	०	०	७
२१	६	३	८	४	८	९	३	३	९	०
१८	२५	१८	२३	२६	१५	२३	२७	२७	२३	०
८	६	५०	४३	३०	२०	१	१२	१२	१	०
२२	५८	१४	१५	४२	५६	२४	३३	३३	२४	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०८	योग
२	२	१	०	३	२	०	०	१	१	१६
६	११	८	११	१०	१०	८	८	१०	३	०
५८	२१	२	४	२६	९	२७	२७	९	१८	०
३६	३७	४७	५३	३०	४६	५४	५४	४६	५०	०
१६	४१	२६	१	४२	२	२६	२६	२	१४	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु०६	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	योग
१	०	०	२	१	१	१	१	०	१	९
७	११	६	२	०	५	५	०	८	८	०
४०	९	८	११	१६	०	०	१६	२३	२	०
२७	४	२२	९	४४	४१	४१	४४	४३	२७	०
५०	११	२०	४६	४०	५१	५१	४०	१५	२६	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रांतर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	च०४	बृ०१२	श ११	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	योग
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
२०	३	२	६	२	२	६	४	११	६	०
५५	१४	१९	३९	२३	२३	२९	२६	४	८	०
४८	३९	३२	१८	४३	४३	१८	३०	५३	२२	०
५०	४	५	९	१५	१५	९	४२	१	२०	०

अपसव्यकालचक्रमीनांशदशावर्षाणि ८६ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्दशावर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	च०४	बृ०१३	श ११	श १०	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	योगा
२	५	२	०	०	२	१	३	२	१	२१
२७	१	५	११	११	५	८	१०	२	२	०
५४	१६	९	२१	२१	९	१५	२६	११	११	०
२५	२	४	३७	३०	४	२०	३	९	१२	०
७	४७	११	४१	४१	११	५६	४२	४६	५	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये बुधान्तर्दशावर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	म०१	शु०२	योगा
१	०	१	०	१	०	०	१	०	१	९
९	११	८	९	१	५	५	१	९	८	०
२	२१	२४	३	०	६	६	०	३	२४	०
१०	१९	१४	१५	२१	८	८	२१	१५	१४	०
७	३२	४२	१०	४२	४०	४०	४२	१०	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृगोरन्तर्दशावर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०२	म०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	म०१	शु०२	बु०३	योगा
३	३	१	१	०	०	१	१	३	१	१६
९	१	४	११	९	९	११	४	१	८	०
२३	०	५	३	७	७	३	५	०	२४	०
५१	२१	४७	५८	३५	३५	५८	४७	२१	१४	०
१९	४१	०	३३	२५	२५	३३	०	४१	४२	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमान्तर्दशावर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	म०१	बृ०९	श १०	श ११	बृ०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	योगा
१	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
०	७	१०	४	४	१०	७	४	९	४	०
२१	२	३	१	१	३	२	५	३	९	०
४१	११	१६	२६	१६	१६	३१	४७	१५	४७	०
१२	४८	५२	४५	४५	५२	४८	०	१०	०	०

अपसव्य कालचक्र कुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बृ०९	श १०	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	योगा
० १	१	०	०	१	१	१	१	१	०	१०
१३	२	५	५	२	१०	११	१	११	१०	०
२२	१३	२३	२३	१३	३	३	०	३	३	०
२४	४४	३९	३९	४४	३६	५८	२१	५८	३६	०
३४	६	३८	३८	६	५२	३३	४२	३३	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	योगा
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	२	५	४	९	५	९	४	५	०
२०	९	९	२३	१	७	६	७	१	११	०
५७	२३	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	०
४८	५२	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये शन्यन्तर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	श १०	योगा
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	४
१७	२	५	४	९	५	९	४	५	२	०
२०	९	२३	१	७	६	७	१	२३	९	०
५७	२३	२९	२६	३५	८	३५	२६	२९	२३	०
४८	५२	३८	४५	२५	४०	२५	४५	३८	५२	०

अपसव्यकालचक्रकुम्भांशदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये गुरोरन्तर्वर्षाणि १० तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	गु०१२	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	योगा
० १	१	०	१	१	१	०	१	०	०	१०
१३	२	१०	११	१	११	१०	२	५	५	०
२२	१३	३	३	०	३	३	१३	२३	२३	०
२४	४४	३६	५८	२१	५८	३६	४४	२९	२९	०
३४	६	५२०	३३	४१	३३	५२	६	३८	३८	०

अपसव्यकालचक्रकुंभादिदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	म०१	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	गु०१२	योगा
१ ० २१ ४१ १२	० ७ २ ३१ ४८	१ ४ ५ ४७ ०	० ९ ३ १५ १०	१ ४ ५ ४७ ०	० ७ २ ३१ ४८	० १० ३ ३६ ५२	० ४ १ २६ ४५	० ४ १ २६ ४५	० १० ३ ३६ ५२	७ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रकुंभादिदशावर्षाणि ८३ तन्मध्ये भृग्वंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	बु०३	शु०२	म०१	गु०९	श १०	श ११	गु०१२	म०१	योगा
२ ९ २१ ५१ २१	३ १ ० २१ ४१	१ ८ २४ ३४ ४२	३ १ ० २१ ४१	१ ४ ५ ४७ ०	१ ११ ३ ५८ ३३	० ९ ७ ३५ २५	० ९ ७ ३५ २५	१ ११ ३ ५८ ३३	१ ४ ५ ४७ ०	१६ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमकरादिदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श ११	श १०	योगा
१ ८ ७ ३ ३१	० ११ १३ ३ ३२	० ६ १० ३५ १८	२ २ २० २८ १४	० ११ १३ ३ ३२	१ ८ ९ ५२ ५६	० ८ २६ ४९ २५	१ ० २१ १० ३५	० ५ २ २८ १४	० ५ २ २८ १४	५ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमकरादिदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये सूर्यांतर्वर्षाणि ५ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	गु०९	श ११	श १०	बु०३	योगा
० २१ १० ३५ १७	० ३ १५ ५२ ५६	१ २ २४ ४२ २१	० ६ १० ३५ १८	० ११ ८ ४९ २५	० ४ २८ १४ ७	० ७ १ ४५ ५३	० २ २४ ४२ २१	० २ २४ ४२ २१	० १० ६ ३५ १८	५ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	च०४	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	योगा
२	५	२	३	१	२	०	०	२	१	२१
२८	२	२	११	८	५	११	११	२	२	०
५६	७	२०	१३	३२	१९	२५	२५	२०	२४	०
५८	४५	२८	३	३५	२४	४५	४५	२८	४२	०
१४	५३	१४	३२	१७	४२	५३	५३	१४	२१	०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये बुधांतर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	बु०६	शु०७	म०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	योगा
१	०	१	०	१	०	०	०	०	२	९
८	११	८	८	०	५	५	११	६	२	०
७	१३	९	२६	२१	९	२	१३	१०	२०	०
३	३	५२	४९	१०	२८	२८	३	३५	२८	०
२१	३२	५६	२५	३५	१४	१४	३२	१८	१४	०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भृगोरंतर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	म०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	योगा
२	३	१	१	०	०	१	०	३	१	१६
७	०	३	१०	९	९	८	११	११	८	०
४५	४	२४	१७	१	१	९	८	१३	९	०
५२	१४	२१	३८	३	३	५२	४९	३	५२	०
५६	७	११	४९	३२	३२	-५६	३५	३२	५६	०

अपसव्यकालचक्रमकरादशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	म०८	गु०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	योगा
०	०	०	०	०	०	०	१	०	१	७
२९	६	९	३	३	८	४	८	८	३	०
३८	२७	२६	२८	२८	२६	२८	२२	३६	२४	०
४९	३१	२८	३५	३५	४९	१४	३५	४९	३१	०
२४	४६	१४	१८	१८	२५	७	१७	२५	१०	०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बृ०१२	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०६	शु०७	म०८	योगा
० १ १२ २१ १० ३५	१ २ ३ ३१ ४६	० ५ १९ २४ ४३	० ५ १९ २४ ४३	१ ० २१ १० ३५	० ७ १ ४५ ५३	२ ५ १९ २४ ४२	१ ० २१ १० ३५	१ १० १७ ३८ ४९	० ९ २६ २८ १४	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श ११	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	योगा
० ० १६ ५६ २८ १४	० २ ७ ४५ ५३	० २ ७ ४५ ५३	० ५ २ २८ १४	० २ २४ ४२ २१	० ११ ३५ ४५ ५३	० ५ २ २८ १४	० १ १ ३ ३२	० ३ २८ ३५ १८	० ५ १९ २४ ४२	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रमकराशदशावर्षाणि ८५ तन्मध्ये शन्यंतर्वर्षाणि ४ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	श १०	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०१२	श ११	योगा
० ० १६ ५६ २८ १४	० २ ७ ४५ ५३	० ५ २ २८ १४	० २ २४ ४२ २१	० ११ ३५ ४५ ५३	० ५ २ २८ १४	० १ १ ३ ३२	० ३ २८ ३५ १८	० ५ १९ २४ ४२	० २ ७ ४५ ५३	४ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रधनासदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये गुरोरंतर्वर्षाणि १० तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	गु०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	योगा
० १ ६ ० ० ०	१ ० ० ० ०	० ८ १२ ० ०	१ ७ ६ ० ०	० १० २४ ० ०	० ६ ० ० ०	२ १ ६ ० ०	० १० २४ ० ०	१ ७ ६ ० ०	० ८ १२ ० ०	१० ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रधनाशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	म०१	बृ०९	योग
० ०	०	१	०	०	१	०	१	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	८	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	१२	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	योग
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	९	४	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	१८	९	८	२१	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	योग
०	०	०	१	०	१	०	०	०	१	९
९	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	३६	०	२४	३६	२४	०	०	४८	२४	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्

ध्रुवांक	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	योग
० ०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	३	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	योगा
०	४	१	३	१	२	१	३	१	१	२१
२	४	१०	४	५	६	५	४	१०	०	०
१५	२७	२०	९	१६	९	१९	९	२०	१८	०
३६	३६	२४	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	सू०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	योगा
०	०	१	०	०	०	१	०	०	१	९
१	१	५	७	१०	७	५	९	५	१०	०
२	२१	८	१६	२४	१६	८	२१	१२	२४	०
२४	३६	२४	४८	०	४८	२४	३६	०	०	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृग्वन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	योगा
०	२	१	१	१	२	१	०	३	१	१६
१	६	१	७	१	६	५	९	४	५	०
२७	२१	१३	३६	११	२१	८	१८	९	८	०
३६	३६	१२	०	१२	३६	२४	०	३६	२४	०
० ०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	योगा
० ०	०	०	०	१	०	०	१	०	१	७
२५	५	८	५	१	७	४	५	७	१	०
१२	२६	१२	२६	१३	१९	६	९	१६	१३	०
०	२४	०	२४	१२	४८	०	२२	४८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमांतर्वर्षाणि ७ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	मं०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	मं०१	बृ०९	योगा
०	०	१	०	०	१	०	१	०	०	७
२५	५	१	७	४	५	७	१	५	८	०
१२	२६	१३	१६	६	१९	१६	१३	२६	१२	०
०	२४	१२	४८	०	१२	४८	१२	२४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्										
ध्रुवांक	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	योगा
०	२	१	०	३	१	२	१	१	१	१६
१	६	५	९	४	५	६	१	७	१	०
२७	२१	८	१८	९	८	२१	१३	६	१३	०
३६	३६	२४	०	३६	२४	३६	१२	०	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	योगा
०	०	०	१	०	१	०	०	०	१	९
२	९	५	१०	९	५	७	१०	७	५	०
२४	२१	१२	२०	२१	८	१६	२४	१६	८	०
०	३६	०	२४	३६	२४	०	०	४८	२४	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनादशावर्षाणि १०० तन्मध्ये सूर्यान्तर्वर्षाणि ५ तस्योपदशा चक्रम्										
ध्रुवांक	सू०५	च०४	बु०३	गु०२	मं०१	बृ०९	मं०८	शु०७	बु०३	योगा
०	०	१	०	०	०	०	०	०	०	५
१८	३	०	५	९	४	६	४	९	५	०
०	०	१८	१२	१८	६	०	६	१८	१२	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये चन्द्रान्तर्वर्षाणि २१ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	च०४	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	योगा
० २ १५ ३६ ० ०	४ ४ २७ ३६ ०	१ १० २० २४ ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ ५ ११ १२ ०	२ ६ ६ ० ०	१ ५ ११ १२ ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ १० २० २४ ०	१ ० १८ ० ०	२१ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रवृश्चिकांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये बुधान्तर्वर्षाणि ९ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	बु०३	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	योगा
० १ २ २४ ० ०	० ९ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ७ १६ ४८ ०	० १० २४ ० ०	० ७ १६ ४८ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ९ २१ ३६ ०	० ५ १२ ० ०	१ १० २४ ० ०	९ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भृगोरन्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	शु०२	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०३	सू०५	च०४	बु०३	योगा
० १ २७ ३६ ० ०	२ ६ २१ ३६ ०	१ १ १३ १२ ०	१ ७ ३६ ० ०	१ १ १३ १२ ०	२ ६ २१ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	० ९ १८ ० ०	३ ४ ९ ३६ ०	१ ५ ८ २४ ०	१६ ० ० ० ०

अपसव्यकालचक्रधनांशदशावर्षाणि १०० तन्मध्ये भौमान्तर्वर्षाणि १६ तस्योपदशाचक्रम्

ध्रुवांक	म०१	बृ०९	म०८	शु०७	बु०६	सू०५	च०४	बु०३	शु०२	योगा
० ० २५ १२ ० ०	० ५ २६ २४ ०	० ८ १२ ० ०	० ५ २६ २४ ०	१ १ १३ १२ ०	० ७ १६ ४८ ०	० ४ ९ ० ०	१ ५ ९ २२ ०	० ७ ११ ४८ ०	१ १ १३ १२ ०	७ ० ० ० ०

अथाग्रे कालचक्रमाह

मेषांशे चौरको विद्याच्छ्रीमाञ्छुक्रांशके भवेत् ॥ बुधांशे ज्ञानसंपन्नश्चंद्रे च नृपतिर्भवेत् ॥४१॥ सिंहांशे राजसः प्रोक्तः सौम्यांशे पंडितो भवेत् ॥ तुलांशे राजमंत्री च भौमांशे निर्धनो भवेत् ॥४२॥ चापांशे ज्ञानसयुक्तो मकरांशे च पापकृत् ॥ कुम्भांशे च वणिक्कर्म मीनांशे किल धान्यवान् ॥४३॥

कालचक्र आंशलक्षण

मेषांश मे चोर होता है। वृषांश मे श्रीमान्। मिथुनांश मे ज्ञानी तथा कर्कांश मे राजा होता है॥४१॥ सिंहांश मे रजोगुणी। कन्यांश मे पंडित। तुलांश मे राजमंत्री। वृश्चिकांश मे निर्धन होता है॥४२॥ धनु अंश मे ज्ञानी। मकरांश मे पापकर्मा। कुम्भांश मे वणिग् वृत्ति। मीनांश मे अन्नपति होता है॥४३॥

अथोदयफलमाह

आदित्यस्योदये राज्यं कृषिश्चंद्रोदये भवेत् ॥ अंगारकस्य शूरः स्यात्पापकर्मणि संगतः ॥४४॥ बुधस्य विमला बुद्धिरायतं पंडितो भवेत् ॥ गुरुशुक्रोदये राज्यं चौरको मंदकोदये ॥४५॥

उदय फल

सूर्य राशि के उदय मे जन्म होने से राजा होता है। चन्द्रराशि के उदय मे कृषक। मंगल की राशि के उदय मे शूरवीर तथा पापकर्मरत रहता है॥४४॥ बुधोदय मे निर्मल बुद्धि तथा अति मेधावी होता है। गुरु शुक्रोदय मे राजा और शनि के उदय मे चोर होता है॥४५॥

अथ देहजीवफलमाह

देहजीवसमायोगे भौमार्करविजादिभिः ॥ एकैकयोगे मरणं बहुयोगेषु का कथा ॥४६॥ यत्र स्थानेषु संजीवो देहयोगसमन्वितः ॥ तत्र पापग्रहैर्योगे तद्वशान्मरणं वदेत् ॥४७॥ देहयोगे महाबाधा जीवयोगे तु मृत्युदः ॥ द्वाभ्यां सयोगमात्रेण हन्यते नाऽत्र संशयः ॥४८॥ जीवे जीवो यदा राहुः सौरिर्वक्री रविः स्थितः ॥ मृत्युकालगतिं ज्ञात्वा शांतिं कुर्याद्यथाविधि ॥४९॥ जीवे जीवो यदा सोमे सौम्ये जीवसितः स्थितः ॥ तदा सौख्यं प्रकुर्वन्ति रोगमृत्युविनाशनम् ॥५०॥ पापक्षेत्रदशायोगे देहजीवौ तु दुःखितौ ॥ शुभक्षेत्रदशायोगे शुभयोगे शुभं भवेत् ॥५१॥ देहे शुभग्रहैर्युक्ते भूषणादि ध्रुवं भवेत् ॥ जीवे शुभग्रहैर्युक्ते पुत्रदारादिकांल्लभेत् ॥५२॥

देह जीव फल

देह राशि और जीव राशि मे सूर्य मगल शनि राहु, केतु मे से एक एक ग्रह भी यदि हो तो मरण होता है। अनेक ग्रह यदि देह जीवराशि मे हो तो क्या कहना।।४६।। देहराशि मे पापग्रह हो तो महाकष्ट होता है। जीव राशि मे पापग्रह हो तो उसकी (उस ग्रह की) दशा मे मृत्यु होती है।।४७।। किसी एक ग्रह द्वारा देह जीव से योग हो तो उसकी दशा मे मृत्यु होती है।।४८।। जीवराशि मे गुरुराशि तथा राहु वक्री शनि सूर्य हो तो मृत्युयोग जानना और उस दशारम्भ काल मे यथाविधि शान्ति करना चाहिए।।४९।। जीवराशि मे गुरु हो और चन्द्रराशि हो। एव बुधराशि मे गुरुशुक्र हो तो सौख्य होता है तथा रोग और शत्रु का नाश होता है।।५०।। देह जीवराशि मे पापग्रह का योग होने से दु खदायक और शुभयोग होने से शुभ होता है।।५१।। देहराशि मे शुभग्रह हो तो भूषण आदि की प्राप्ति होती है। जीव राशि मे शुभग्रह हो तो स्त्री पुत्रादि की प्राप्ति होती है।।५२।।

अथ गतिप्रकरणमाह

प्रथमे गतिर्मण्डूकी द्वितीये मर्कटी तथा ।। बाणायनवपर्यंत गतिं सिंहावलोकनम् ।।५३।।

गति प्रकरण

प्रथम माडूकी और दूसरी मर्कटी गति तथा तीसरी ५।९।११ तक की सिंहावलोकन गति होती है।।५३।।

अथ फलमाह

मडूके तु महाव्याधिर्मर्कट्या तु महद्भयम् ।। सिंहावलोके मरणं गर्गस्य वचनं यथा ।।५४।।

गतिफल

माडू की गति महाव्याधि दायिनी होती है। मर्कटी गति म महाभय और सिंहावलोकन गति मे मरण होता है। यह गर्गजी का वचन है।।५४।।

सिंहावलोकनगतिमाडूकीगतिफलान्याह

कन्यायां कर्कटे वापि सिंहे मिथुनेपि च ।। माण्डूकीगतिसज्ञो वै तादृश रोगकारणम् ।।५५।।
मीने तु वृश्चिके वापि चापो मेषस्तथैव च ।। सिंहावलोकन चैव तादृश च फल लभेत् ।।५६।।
सिंहावगतिमार्गे च मांडूकीगतिसभव ।। अपमृत्युकरस्तस्य प्रायश्चित्तेतिशोधति ।।५७।। मीने

तु वृश्चिके याते ज्वरो भवति निश्चितम् ॥ कन्याया कर्कटे याते मातृबधुविनाशनम् ॥५८॥
सिहे तु मिथुने याते स्त्रिया व्याधिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ कर्कटे तु रवौ याते बधो भवति देहिनाम् ॥
पितृबधुमृति विद्याच्चापान्मेषगते पुन ॥५९॥

गतिफल

मिथुन, कर्क, सिह, कन्या ये माड्की गति सज्ञक है। अतएव महाव्याधिकारक हैं॥५५॥ मेष, वृश्चिक धन, मीन ये सिहावलोकन गति सज्ञक है। अत महाभय कारक है॥५६॥ सिहावलोकन की राशि मे माड्की गति की राशि हो तो अपमृत्यु कारक योग है। अवश्य प्रायश्चित कर्तव्य है॥५७॥ मीनराशि दशा मे वृश्चिकाधिपग्रह हो तो निश्चय ज्वर होता है। इसी प्रकार कन्या की दशा मे कर्केश हो तो माता तथा बन्धु का नाश होता है॥५८॥ सिहराशि दशा मे मिथुनाश हो अथवा कन्या हो तो अवश्य व्याधि होती है। कर्क राशि दशा मे सूर्य हो तो बध (हत्या) होती है। मेष राशि मे धनु होने से पिता, बन्धु की मृत्यु होती है॥५९॥

पुन. गतिफलमाह

कन्याया कर्कटे याते पूर्वभागे महत्फलम् ॥६०॥ उत्तर देश माश्रित्य सुख यात्रा भविष्यति ॥
सिहे तु मिथुने याते पूर्वभागो विसृज्यते ॥ चापर्तेपि च नैर्ऋत्या सुख यात्रा भविष्यति ॥६१॥
कर्कटे मेषसिहे च कार्यहानिश्च योगयुक् ॥ दक्षिणा दिशमाश्रित्य प्रत्यब्द गमन भवेत् ॥६२॥
कुम्भे व्याधिर्मनोदु ख मिथुने निर्धनो भवेत् ॥ मीने तु वृश्चिके याते उवगच्छति सकटम् ॥
मकरे सकट दु ख चापात्सकटमुच्यते ॥६३॥ चापे मेषे भय यात्रा बधबधौमृतिर्भवेत् ॥ तुला
सपद्विवाहश्च स्त्रीप्राप्तिर्वृश्चिके गति ॥६४॥ मेषे शुभफल विद्यादृक्षिणे गमन शुभम् ॥
देहजीवसमायोगे मद स्थित्वाऽपमृत्युद ॥६५॥ (एव राशिफल बुद्ध्वा नक्षत्राशक्रमेण तु ॥
जीवदेहक्रमान्वेय महादशातरदशा ॥ प्रदक्षिणेन मार्गेण वृश्चिकादि विचक्षिते ॥)

पुन गतिफल

कन्या मे कर्क राशि हो तो प्रथमार्द्ध मे अतिश्रेष्ठ॥६०॥ उत्तर दिशा की यात्रा सुखपूर्वक होती है। सिह राशि मे मिथुन हो तो पूर्वार्द्ध नेष्ट। और उत्तरार्द्ध मे नैर्ऋत्य दिशा की यात्रा सुखकर होती है॥६१॥ कर्क राशि मे मेष और सिह राशि होने से कार्य हानि होती है। और दक्षिण दिशा मे प्रतिवर्ष यात्रा होती है॥६२॥ कुम्भ मे व्याधि और महादु ख तथा मिथुन मे निर्धन हो। मीन राशि वृश्चिक राशि हो तो उत्तर दिशा मे सकट होता है। मकर राशि मे सकट दु ख तथा धनु राशि होने से सकट होता है॥६३॥ धनु और मेष राशि मे भय और यात्रा बध और बधन तथा मृत्यु होती है। तुलाराशि दशा मे विवाह, स्त्रीप्राप्ति तथा वृश्चिक में यात्रा होती है॥६४॥ मेष राशि मे धनवृद्धि और दक्षिण दिशा मे यात्रा होती है। देह और जीवराशि के योग मे यदि शनि हो तो अपमृत्युकारक होता है॥६५॥ (इस प्रकार नक्षत्र के

अश से राशि की दशा तथा अतरदशा जानकर जीव और देह का योग विचार करे।। गति विचार मे सप्तम्यन्त राशि पद से मूलदशा और प्रथमान्त से अन्तर जानना चाहिए। केवल सप्तम्यन्त से अन्तर दशा जानना। दोनो का देह जीव योग देखना।)

अथ महादशाफलमाह

रक्तपित्ताधिकव्याधिर्नृणामर्कफल भवेत् ॥ धनकीर्तिप्रजावृद्धिवस्त्राभरणद शशी ॥६६॥ ज्वरमाशु दिशेत्स्य ग्रथिस्फोट कुजस्य तु ॥ प्रजावृद्धिर्धने बुद्धिर्बुधे भोगफल भवेत् ॥६७॥ धन कीर्ति प्रजावृद्धि नानाभोग बृहस्पति ॥ विद्या विवाह सुक्षेत्र गृह धान्य भृगो फलम् ॥६८॥ तापाधिक्य महादुख बन्धुनाश शने फलम् ॥ एवमर्कादियोगेन राशियोगेन सयुते ॥६९॥ शुभयोगे शुभ ब्रूया दशुभे त्वशुभ फलम् ॥ मिश्रे मिश्रफल ब्रूयाद्ग्रहराशिसमुद्भवम् ॥७०॥ द्वादशाष्टमजन्मर्क्षदशायोगेन निर्णय ॥ मृत्युकाल इति ज्ञात्वा शाति कुर्याद्विचक्षण ॥७१॥

कालचक्रमहादशाफल

सूर्य महादशा मे–रक्तपित्त की बीमारी विशेपरूप से होती है।
चन्द्रमहादशा मे–धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि तथा वस्त्राभरण प्राप्त होता है।।६६।।
भौमदशा मे–पित्तज्वर, ग्रन्थि का फटना आदि होता है।
बुधदशा मे–प्रजा तथा धन की वृद्धि एव ऐश्वर्य प्राप्त होता है।।६७।।
गुरुदशा मे धन कीर्ति तथा प्रजा की वृद्धि और अनेक भोग मिलते हैं।
शुक्र दशा मे– विद्या, विवाह सुवास मकान आदि शुभ फल होता है।।६८।।
शनि दशा मे–विशेप ज्वर महादुख तथा बन्धुनाश होता है।

इस प्रकार दशा की राशि मे सूर्यादि ग्रहो के योग से।।६९।। देखकर शुभग्रह के योग से शुभ फल और अशुभ ग्रह के योग से अशुभफल कहना चाहिए। मिश्रित योग हो तो फल भी मिश्रित होता है।।७०।। अशुभ योग के लिए १२,८ भावेशो का योग आवश्यक है। यदि मृत्यु कारक दशा हो तो शान्ति करना चाहिए।।७१।।

अथाशायुर्निर्णयमाह

भाग्निएष्यघटिका हतायुषा बाणचद्र १५ विधिरायुष क्रमात् ॥ स्वास्ववर्षविहता स्वकीयजा कालचक्रविधिरायुष क्रमात् ॥७२॥ भुक्तभाग्निहतावर्षास्तियाबाणेंदु १५ भाजिता ॥ वर्षमासाहर्घटिका स्वविकल्पविभाजिता ॥७३॥ अस्मिन्प्रवाहके षष्ठे स्थिते तस्मात्प्रवाहकात् ॥ न वा नवांशराशीनामते मृत्युर्भविष्यति ॥७४॥

अंशायु निर्णय

भुक्त तथा भोग्य अंशायु स्पष्टीकरण। नक्षत्र के जिस पाद में जातक का जन्म है, उसकी भोग्य घटी पल को एकरस करके अपनी प्राप्त आयु के ध्रुवाक से गुणा करके १५ से भाग देने पर कालचक्र दशा की भोग्य दशा होती है॥७२॥ अथवा इसी प्रकार भुक्त घटी पलको एक रस करके अपने २ दशा वर्ष से गुणा कर १५ का भाग देने से भुक्त दशा होती है॥७३॥ यह विधि चन्द्र स्पष्ट से भी की जा सकती है। यदि इस नवांश राशि के मध्य में मारक नहीं हो तो अंत की दशा में मृत्यु होती है॥७४॥

अथांतर्दशाफलमाह

सम्यग्वीक्षितो यश्च येन केन समायुतः ॥ यस्य राशि. स्थितो जातस्तादृशं फलमाप्नुयात् ॥७५॥ अथाऽतो देवदेवेशि ह्यंशकांतर्दशाफलम् ॥ यथाविधि प्रवक्ष्यामि श्रूयतां कमलानने ॥७६॥ प्रथमांशे बधो भौमे ज्वरश्च व्रणसंभवः ॥ बुधशुक्रेंदुजीवेषु वस्त्राभरणमाविशेत् ॥७७॥ लभते स्वांशके देवि निश्चय सुरवंदिते ॥ राज्ञातिकलह सौरेः शत्रुक्षोभं महद्भयम् ॥७८॥ मेषांशस्थे तथादित्येऽनुक्रमात्फलनिश्चय. ॥ राजप्रसादमाप्नोति मेषस्वांशगते गुरौ ॥७९॥ विद्यालाभो महत्प्रीतिः शारीर सुखमेव च ॥ वृषभस्वांशके देवि गुरौ तत्र गते फलम् ॥८०॥ देशत्यागश्च मरण ज्वर शस्त्रक्षत तथा ॥ वृषभस्वांशके देवि कुजे तत्र गते फलम् ॥८१॥ वस्त्राभरणलाभ तु स्त्रियो योग महत्फलम् ॥ शुक्रेंदुबुधग्रहाणां स्वांशके वृषभे फलम् ॥८२॥ नृपाद्भय पितृमृतिर्मृगाद्यैश्च महद्भयम्॥क्षुद्ररोग च लभते वृषभस्यांशके रविः॥८३॥

अन्तर्दशा फल

जो राशि लग्नेश दृष्ट हो अथवा शुभ या पाप जैसे ग्रह से युक्त हो, अथवा जिस ग्रह की राशि में जन्म हो इत्यादि सब योग देखकर ही फल कहना चाहिए॥७५॥ हे पार्वति! अब दशा के अन्तरदशाओं का फल यथाविधि कहा जाता है॥७६॥ मेष राशि दशा अन्तर में भौम हो तो ज्वर तथा व्रण का संभव है। और बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र हो तो (इनकी राशि का अन्तर हो तो) वस्त्र, आभरण आदि प्राप्त होते हैं॥७७॥ हे देवि! शनि अपने अंशदशा में राजा से कलह करता है। शत्रु से भय करता है॥७८॥ मेष राशि नवांशदशा में सूर्यादि ग्रहों का क्रम से फल का निश्चय करना चाहिए। गुरु अपने अंश में राजमहल प्राप्त कराता है॥७९॥ यदि गुरु वृषराशि की दशा के अपने अन्तर में हो तो विद्यालाभ, महान् प्रेम तथा शारीरिक सुख करता है ॥८०॥ और वृष के स्वांश में मंगल हो तो देशत्याग, मरण, ज्वर, शस्त्राघात करता है॥८१॥ वृष के अन्तर में शुक्र, बुध चन्द्रमा हो तो सुन्दर वस्त्र, आभूषणों का लाभ तथा स्त्री सौख्य देते हैं॥८२॥ वृष के अन्तर में सूर्य राजभय, पितृमरण, पशु से भय करता है॥८३॥

मौक्तिकाभरणादीनि दारावस्त्रफलादि च ॥ लभते स्वांशके देवि मिथुनस्वांशके भृगौ ॥८४॥
पितृमातृभयं चैव ज्वरश्च व्रणसंभवः ॥ प्रयाणं कुरुते देवि मिथुनस्वांशके कुजः ॥८५॥
विद्यालाभं द्रव्यलाभं महाविभवसंभवम् ॥ समस्तप्रीतिमाप्नोतिमिथुनस्वांशके गुरौ ॥८६॥
प्रयाणं च महाव्याधिर्मरणं चार्थनाशनम् ॥ बंधुनाशो भवेद्देवि मिथुनस्वांशके शनौ ॥८७॥
वस्त्रलाभ पुत्रलाभं विद्यालाभं तथैव च॥ समस्तप्रीतिमाप्नोति मिथुनस्वांशके बुधे ॥८८॥
ऐश्वर्य धनलाभ च पुत्रपत्नीसमागमम् ॥ मनः प्रीतिमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शशी ॥८९॥
नृपाद्भयं शत्रुभयं मृगेभ्यश्च महद्भयम् ॥ ज्वरव्याधिश्च दाहश्च कुलीरस्वांशके रवौ ॥९०॥
पुत्रलाभं बंधुलाभं रत्नविद्यार्थमेव च ॥ कुलीरस्वांशके देवि बुधशुक्रसमागमे ॥९१॥
विषशस्त्रमृति घोरां ज्वरदाहसमुद्भवाम् ॥ सर्वदुःखमवाप्नोति कुलीरस्वांशके कुजे ॥९२॥

(मिथुन राशि दशा का फल-शुक्र के अन्तर दशा मे मोती आदि रत्नो की प्राप्ति स्त्री, वस्त्र, भूषण प्राप्त होते है॥८४॥ मिथुनान्तर मे मगल की राशि दशा हो तो पिता माता को भय, ज्वर, घाव तथा यात्रा का योग होता है॥८५॥ गुरु हो तो विद्यालाभ, धन लाभ, महान् वैभव तथा सबसे प्रेम होता है॥८६॥ मिथुन के स्वीय अश मे शनि हो तो यात्रा, महाव्याधि, मृत्यु, धननाश तथा बधुनाश होता है॥८७॥ मिथुन मे स्वाश मे बुध हो तो वस्त्रलाभ, पुत्रलाभ, तथा विद्यालाभ और मित्रो मे प्रीति होती है॥८८॥ यदि चन्द्रमा स्वाश मे हो तो ऐश्वर्य, धनलाभ तथा स्त्री पुत्र से मिलाप और मन की प्रसन्नता होती है॥८९॥ (अब कर्क दशा फल कहते है) कर्क राशि दशा मे सूर्याश हो तो राजभय, शत्रु तथा पशु से भय, ज्वर, व्याधि तथा दाह होता है॥९०॥ तथा उसमे बुध या शुक्र के अश की दशा हो तो पुत्र, विद्या, बन्धु, रत्न, धन का लाभ होता है॥९१॥ यदि मगल स्वाश मे हो तो विष या शस्त्र से मृत्यु तथा घोर ज्वरदाह तथा सर्वप्रकार दुःख होता है॥९२॥

विभवस्यातिलाभं च धनलाभं तथैव च ॥ नृपप्रसादमाप्नोति कुलीरस्वांशके गुरौ ॥९३॥
वातव्याधिश्च निर्घातमसुराविषदाककम् ॥ सर्वक्लेशमवाप्नोति कुलीरस्वांशके शनौ ॥९४॥
ज्वरपित्तविनाशं च शस्त्रसततविषूचिकाः ॥ मुखरोगमवाप्नोति मृगेंद्रस्वांशके कुजे ॥९५॥
वस्त्राभरणविद्याश्च सुतस्त्रीलाभमेव च ॥ मृगेंद्रस्वांशके देवि भार्गवे च बुधागमे ॥९६॥
आरूढपतनं चैव देशत्यागं महद्भयम् ॥ महाधनविघातं च सिंहस्वांशगतः शशी ॥९७॥
महाशत्रुभयं चैव ज्वरश्च व्याधिरेव च ॥ अज्ञानं मरणं राजौ मृगेंद्रस्वांशगे च वै ॥९८॥
धनधान्यमहालाभं प्रसादं द्विजदेवयोः ॥ विद्यालाभमवाप्नोति मृगेन्द्रस्वांशगे गुरौ ॥९९॥
प्रयाणं च ज्वरं चैव सुहृद्भं वैकल्यं तथा ॥ व्याधिदुःखमवाप्नोति कन्यास्वांशगते शनौ॥१००॥
नृपप्रसादनं लाभमैश्वर्यं बंधुसंभवम् ॥ विद्यालाभमवाप्नोति कन्या स्वांशगते गुरौ ॥१०१॥ प्रयाणं
च ज्वरं चैव मसूरोषह्निना भयम् ॥ शस्त्रक्षतं च मरणं कन्यास्वांशगते कुजे ॥२॥

कर्क के अपने अंश मे गुरु हो तो अति विभव लाभ धनलाभ तथा राजमैत्री प्राप्त होती है॥९३॥ इसी प्रकार शनि हो तो वातव्याधि, तथा घात एवं मसूर (जंगली पशु) का विषयुक्त दशन तथा अन्य अनेक क्लेश प्राप्त होते हैं॥९४॥ (अब सिंह राशि के अन्तर कहते हैं) सिंहदशा मे कुजान्तर मे ज्वर, पित्त, रोग, शस्त्राघात, हैजा तथा मुख के रोग होते है॥९५॥ शुक्र तथा बुध मे सुन्दर वस्त्र, भूषण, विद्या, पुत्र, स्त्री का लाभ होता है॥९६॥ सिंह की दशा मे चन्द्र हो तो उन्नत अवस्था से पतन, देशत्याग, महाभय, विशेष धनहानि होती है॥९७॥ महाशत्रु का भय ज्वर तथा व्याधि, अज्ञान और मृत्यु होती है॥९८॥ (सूर्य से उपर्युक्त फल जानना) सिंह राशि की अन्तर दशा मे गुरु अपने अंश मे हो तो धन सम्पत्ति का लाभ द्विज, देवता की कृपा तथा विद्या लाभ होता है॥९९॥ (कन्या राशि दशा मे अन्तरदशा फल) शनि स्वांश मे हो तो यात्रा, ज्वर, भूख प्यास से कष्ट तथा रोग दु:ख प्राप्त होता है॥१००॥ स्वांश मे गुरु हो तो राजकृपा, लाभ, ऐश्वर्य, बन्धु प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है॥१०१॥ मंगल स्वांश मे हो तो व्यर्थ की यात्रा, ज्वर, मसूरी रोग, अग्नि भय, शस्त्र से घाव तथा मृत्यु होती है॥१०२॥

भृत्यपुत्रार्थलाभं च वस्त्राभरणमेव च ॥ शुक्रेन्दुसुतचंद्राणां कन्यास्वांशगते फलम् ॥३॥ प्रयाणं च ज्वरश्चैव पुत्रहानिस्तथैव च ॥ शस्त्रघातेन मरणं कन्या स्वांशगते रवौ ॥४॥ स्त्रीलाभं धनलाभं च पुत्रलाभं तथैव च ॥ वस्त्राभरणलाभं च तुलास्वांशगते भृगौ ॥५॥ पिता सुहृद्धनं चैव शिरोरोगं ज्वर तथा ॥ शस्त्राग्निक्षतघात च तुलास्वांशगते कुजे ॥६॥ धनं रत्नं महालाभं धर्मं चेष्टा नृपावहम् ॥ सर्वसंपत्समृद्धिश्च तुलास्वांशगते गुरौ ॥७॥ प्रयाणं च महाव्याधि मेवं क्षेत्रभयं तथा ॥ शत्रुबाधा महादु:खं तुलास्वांशगते शनौ ॥८॥ पुत्रलाभ धनं स्त्रीणां लाभं चैव मनः प्रियम् ॥ सौभाग्यं बंधुलाभं च तुलास्वांशगते बुधे ॥९॥ व्याधिनाशं महत्सौख्यं नानासर्वार्थसिद्धिदम् ॥ भृगुसौम्यशशांकानां वृश्चिकस्वांशगे फलम् ॥११०॥

शुक्र, बुध तथा चन्द्रमा स्वांश मे हो, तो स्त्रीपुत्र, नौकर आदि की प्राप्ति तथा वस्त्रभूषण का लाभ होता है॥१०३॥ सूर्य में यात्रा, ज्वर, पुत्रहानि, शस्त्राघात होता है॥१०४॥ (तुला राशि दशा के अन्तर) स्वांश मे शुक्र हो तो स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सम्पत्ति का लाभ होता है॥१०५॥ मंगल हो तो पिता, मित्र, धन की हानि, सिर दर्द, बुखार, शस्त्र से आघात तथा अग्नि का भय होता है॥१०६॥ गुरु स्वांश मे हो तो धन, रत्न, धर्म, सर्व सम्पत्ति तथा राजकृपा का लाभ होता है॥१०७॥ शनि स्वांश मे हो तो यात्रा, महाव्याधि, शत्रुबाधा तथा हानि होती है॥१०८॥ बुध स्वांश मे हो तो स्त्रीपुत्र, धनलाभ, इच्छित वस्तु की प्राप्ति, सौभाग्य और बन्धु लाभ होता है॥१०९॥ बुध, शुक्र, चन्द्रमा स्वांश मे हो तो व्याधि का नाश, महान् सुख, सम्पूर्ण अर्थ की सिद्धि होती है॥११०॥

शत्रुक्षोभं भय व्याधिमर्थनाशं पितुर्भयम् ॥ मृगाद्भयमवाप्नोति वृश्चिकस्वांशगे रवौ ॥११॥ वातपित्तभयं चैव मसूरीव्याधिमेव च ॥ अग्निशस्त्रादिभीतिं च वृश्चिकस्वांशगे कुजे ॥१२॥ धनं रत्नं च धान्यं च देवब्राह्मणपूजनम् ॥ राजप्रसादमाप्नोति वृश्चिकस्वांशगे गुरौ ॥१३॥

धनबन्धुविनाशश्च मनोवधस्तथाकुलम् ॥ शत्रुबाधा महाव्याधिर्वृश्चिकस्वांशगे शनौ ॥१४॥
अतिदाह ज्वर छर्दिर्मुखरोग च कष्टताम् ॥ शरीरक्लेशमाप्नोति चापस्वांशगते कुजे ॥१५॥
श्रीविद्याना च सौभाग्य शत्रुनाश नृपाद्भयम् ॥ भार्गवेंदुबुधद्राणा चापस्वांशगते फलम् ॥१६॥
स्त्रीनाश वित्तनाश च कलह च नृपाद्भयम् ॥ प्रयाण समवाप्नोति चापस्वांशगते रवौ ॥१७॥
दानधर्मतपोलाभ राजपूजनमेव च ॥ स्त्रीलाभ धनलाभ च चापस्वांशगते गुरौ ॥१८॥
द्विजदेवनृपात्कोप बन्धुभिश्च विनाशनम्॥देशत्यागमवाप्नोति मृगस्वांशगते शनौ॥१९॥

(वृश्चिक राशि दशा के अन्तर फल)-सूर्य मे शत्रु से क्षोभ, भय, व्याधि, धननाश, पिता से भय होता है। एव पशु से क्षति होती है॥१११॥ मगल के अश मे वातपित्त की बीमारी, शीतला की बीमारी, अग्नि तथा शस्त्र से भय होता है॥११२॥ गुरु के अश मे धनसम्पत्ति रत्न की प्राप्ति, देव ब्राह्मण पूजा तथा राजकृपा प्राप्त होती है॥११३॥ शनि के अश मे धन, बन्धु का नाश, चिन्ता व्याकुलता, शत्रुबाधा, महाव्याधि होती है॥११४॥ मगल के अश मे दाह, ज्वर, वमन, मुख रोग, दर्द और क्लेश होता है॥११५॥ बुध, शुक्र तथा चन्द्रमा के अश मे धन, विद्या, सम्पत्ति प्राप्त होती है। शत्रु नाश तथा राजभय होता है॥११६॥ (धन राशि दशा के अन्तर फल) सूर्य के अश मे स्त्रीनाश, धन हानि, कलह, राजभय तथा यात्रा होती है॥११७॥ गुरु के अश मे दान, धर्म, तप, स्त्रीधन का लाभ तथा राज सम्मान होता है॥११८॥ (मकर राशि दशा के अन्तर फल) शनि के अश मे देव, ब्राह्मण, राजा का कोप, बन्धुवो से नाश तथा देशत्याग होता है॥११९॥

देवार्चनं तपो ध्यान द्विजपूजादिसम्भवम् ॥ भार्गवेन्दुजीवाना मृगस्वांशगते फलम् ॥१२०॥
शिरोरोग ज्वर चैव करपादक्षतक्षतम् ॥ रक्तपित्तातिसारश्च मृगस्वांशगते कुजे ॥२१॥
बन्धुपुत्रपितुर्नाश ज्वररोगसमाश्रयम् ॥ नृपशत्रुभय चैव मृगस्वांशगते शनौ ॥२२॥
नानाविद्यार्थलाभ च पुत्रस्त्रीमित्रसम्भवम् ॥ ऐश्वर्य धनलाभ च घटस्वांशगते भृगौ ॥२३॥
ज्वराग्निचोरघात च शत्रूणा च महद्भयम् ॥ मनोदुःखमवाप्नोति घटस्वांशगते कुजे ॥२४॥
दुःखव्याधिहर चैव देवब्राह्मणपूजनम् ॥ मनःप्रीतिमवाप्नोति घटस्वांशगते गुरौ ॥२५॥
त्रिदोषकुपित चैव कलह देशविभ्रमम् ॥ क्षयव्याधिमवाप्नोति घटस्वांशगते शनौ ॥२६॥
पुत्रमित्रधनस्त्रीणा लाभ चैव मन प्रियम्॥ सौभाग्य वस्त्रलाभ च घटस्वांशगते बुधे॥२७॥

शुक्र, बुध, चन्द्र, बृहस्पति के अशो मे देवार्चन, तप ध्यान, द्विजपूजा आदि होता है॥१२०॥ मगल के अश मे सिरदर्द ज्वर हाथ पैर मे घाव, रक्त पित्त, अतिसार की बीमारी होती है॥१२१॥ शनि के अश मे बन्धु, पुत्र, पिता की हानि, ज्वर, राजा तथा शत्रु से भय होता है॥१२२॥ (कुम्भ राशि दशा के अन्तर फल) शुक्र के अश मे अनेक विद्या तथा धन लाभ, स्त्रीपुत्र, मित्र का सुख तथा ऐश्वर्य होता है॥१२३॥ मगल के अश मे ज्वर अग्नि, चोर से हानि, शत्रु से भय, मन मे दुःख होता है॥१२४॥ गुरु के अश मे दुःख, व्याधि का नाश, देव ब्राह्मण की पूजा, मन मे सन्तोष होता है॥१२५॥ शनि के अश मे सन्निपात, कलह, देशयात्रा,

क्षय रोग होता है॥१२६॥ बुध के अंश मे पुत्र, मित्र, धन, स्त्री का लाभ, वस्त्र प्राप्ति, मन मे सन्तोष और सौभाग्य होता है॥१२७॥

स्त्रीविद्यालाभमाप्नोति ह्याश्रितव्याधिनाशनम् ॥ महापीडामवाप्नोति मीनस्वांशगतः शशी ॥२८॥ कलहं चौरभीतिं च बंधुभिः क्षयकारणम् ॥ स्थानभ्रंशमवाप्नोति मीनस्वांशगते रवौ ॥२९॥ शत्रुनाशं च विजयं नृपगोभूसुतागमम् ॥ रत्नलाभं च मीने च स्वांशगे बुधशुक्रयो. ॥१३०॥ विवाद पित्तरोग च जंतोर्जारणमारणम् ॥ शत्रुक्षयमवाप्नोति मीनस्वांशगते कुजे ॥३१॥ धनधान्यकलत्राणि लभते राजपूजनम् ॥ वस्त्राभरणलाभ च मीनस्वांशगते गुरौ ॥३२॥ ऐश्वर्यस्य प्रणाशश्च वेश्यादीनामुपद्रवैः ॥ देशत्यागो दरिद्रं च मीने स्वांशगते शनौ ॥३३॥ एव यथाक्रमेणैव विज्ञेयं स्वांशगते फलम् ॥ वामर्क्षेप्येवमेव च फल तत्रैव योजयेत् ॥३४॥ दशाफलमहं वक्ष्ये धर्मकर्मकृतं पुरा ॥ तत्सर्वं प्राणिभिर्नित्यं प्राप्यते नात्र संशयः ॥३५॥ सुहृदतर्दशा भव्या विरुद्धा शत्रुसंभवा ॥ मध्यमा मध्यखेटस्य दशादीनामिदं विदुः ॥१३६॥

चन्द्रमा के अंश मे स्त्री, विद्या लाभ, आश्रित मनुष्य की व्याधि का नाश तथा पीडा होती है॥१२८॥ (मीन राशि दशा के अन्तरफल) सूर्य के अंश मे कलह, चोर भय, बन्धुओ से हानि, स्थान नाश होता है॥१२९॥ बुध, शुक्र के अंश मे शत्रु नाश, विजय, राजा, गौ, ब्राह्मण की कृपा तथा मिलाप एव रत्न लाभ होता है॥१३०॥ मगल के अंश मे विवाद, पित्तरोग, सीसाधातु का भस्म करना, शत्रु क्षय आदि होते हैं॥१३१॥ गुरु के अंश मे धन सम्पत्ति, स्त्री का लाभ, राजपूजा, वस्त्राभरण का लाभ होता है॥१३२॥ शनि के अंश मे वेश्या सग से समस्त ऐश्वर्य का नाश, देशत्याग, दरिद्र होता है॥१३३॥ इस प्रकार क्रम से ग्रहों का फल सव्य मार्ग का कहा गया है। इन्ही फलो को अप-सव्य मार्ग मे भी समझना चाहिए॥१३४॥ मनुष्यों के पूर्व जन्मकृत धर्म, कर्म के फल से इस जन्म मे जो सुख दुःख प्राप्त होते हैं, वे सब इस दशा के रूप मे प्राप्त होते हैं यह नि सन्देह है॥१३५॥ मित्रग्रह की अन्तरदशा शुभ, शत्रुग्रह की अशुभ, समग्रह की मध्यम समझना चाहिए॥१३६॥

अथ नवांशफलमाह

मेषे तु रक्तपीडा च वृषभे धान्यवर्द्धनम् ॥ मिथुने ज्ञानसंपत्तश्चैव धनपतिर्भवेत् ॥१३७॥ सूर्यर्क्षे शत्रुबाधा च कन्यास्त्रीणां च नाशनम् ॥ तौलिके राजमंत्रित्व वृश्चिके मरण भवेत् ॥३८॥ अर्थलाभो भवेच्चापे मेषस्य नवभागके ॥ मकरे पापकर्माणि कुंभे वाणिज्यमेव च ॥३९॥ मीने सर्वार्थसिद्धिश्च वृश्चिकेप्यग्नितो भयम् ॥ तौलिके राजपूज्यश्च कन्यायां शत्रुवर्धनम् ॥१४०॥ शशिभे दारसबाधा सिंहे च त्वक्सिरोगकृत् ॥ मिथुने वृत्तबाधा स्याद्वृषभे च नवांशके ॥४१॥ वृषभे अर्थलाभ,च मेषे तु ज्वररोगकृत् ॥ मिथुने मातुलप्रीतिः कुंभे शत्रुप्रवर्द्धनम् ॥४२॥ मृगे चौरस्य संबाधा धनुषि शस्त्रवर्धनम् ॥ मेषे तु शस्त्रसंबंधो वृषभे कलहप्रियः ॥४३॥ मिथुने सुखमाप्नोति मिथुनस्य नवांशके ॥ कर्कटे सकटप्राप्तिः सिंहे राजप्रकोपकृत् ॥४४॥

नवांश फल

(इन पूर्वोक्त राशि दशाओ मे प्रत्येक अन्तर मे जो राशि होगी, केवल उस राशि के

अनुसार फल कहा जाता है।) मेष अंश में रत्नपीडा। वृष में धान्य वृद्धि। मिथुन में ज्ञान। कर्क में धनपति होता है॥१३७॥ सिंह में शत्रु बाधा। कन्या में स्त्रीनाश। तुलामें राजमंत्री। वृश्चिक में मृत्यु हो॥३८॥ धनु के अंश में धनलाभ। ये मेष के नौ अंश की राशियों के फल हैं॥३९॥ (वृषराशि के अंतर) मकर में पापकर्म। कुंभ में व्यापार॥३९॥ मीन में सर्वसिद्धि। वृश्चिक में अग्नि भय। तुला में राजपूज्यता। कन्या में शत्रुभय॥१४०॥ कर्क में स्त्री से कलह। सिंह में नेत्ररोग। मिथुन में वृक्ष से हानि। ये वृषराशि के ९ नवांश राशि का फल है॥४१॥ (मिथुनान्तर फल) वृष में अर्थलाभ। मेष में ज्वर। मिथुन में मामा का प्रेम। कुम्भ में शत्रुभय॥४२॥ मकर में चोर भय। धन में शस्त्रवृद्धि। मेष में शस्त्र योग। वृष में कलह॥४३॥ मिथुन में सुख होता है॥ ये मिथुनांश दशा के ९ नवांशराशि का फल है। कर्क में संकट। सिंह में राजकोप॥४४॥

कन्यायां भ्रातृपूजा च तौलिके प्रियकृत्सरं ॥ वृश्चिके पितृबाधा स्यात्कर्कटस्य नवांशके ॥४५॥ वृश्चिके कलहं पीडा तौलिके ह्यधिकं फलम् ॥ कन्यायामतिलाभश्च शशांके मृगबाधिका ॥४६॥ सिंहे च पुत्रलाभश्च मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ मीने तु दीर्घयात्रा स्यात्सिंहस्य नवभागके ॥४७॥ कुंभे तु धनलाभश्च मकरे द्रव्यलाभकृत् ॥ धनुषि भ्रातृसंसर्गो मेषे मातृविवर्द्धनम् ॥४८॥ वृषभे पुत्रवृद्धिः स्यान्मिथुने शत्रुवर्द्धनम् ॥ शशिभे तु स्त्रिया प्रीतिः सिंहे व्याधिविवर्द्धनम् ॥४९॥ कन्यायां पुत्रवृद्धिः स्यात्कन्यायाः नवमांशके ॥ तुलायामर्थलाभश्च वृश्चिके भ्रातृवर्द्धनम् ॥१५०॥ चापे च तातसौख्यं च मृगे मातृविरोधिता ॥ अलौ जायाविरोधं च तुले च जलबाधनम् ॥५१॥ कन्यावृद्धिकरं विद्यात्तुलायाः नवभागके ॥ कर्कटे ह्यर्थनाशश्च सिंहे राजविरोधिता ॥५२॥

कन्या में भ्रातृपूजा। तुला में सुख। वृश्चिक में पितृबाधा होती है॥४५॥ वृश्चिक में कलह पीडा। तुला में अधिक फल। कन्या में अतिलाभ। कर्क में पशु से हानि॥४६॥ सिंह में पुत्रलाभ। मिथुन में शत्रुवृद्धि। मीन में दीर्घ यात्रा। सिंह राशि के नवांश का फल है॥४७॥ कुंभ में धनलाभ। मकर में द्रव्य लाभ। धनु में भ्रातृ संयोग। मेष में मातृकुल में वृद्धि॥४८॥ वृष में पुत्रवृद्धि। मिथुन में शत्रुवृद्धि। कर्क में स्त्री से प्रेम। सिंह में व्याधिवृद्धि॥४९॥ कन्या में पुत्रवृद्धि। ये कन्या नवांश दशा के अंतर के फल है। तुला में धनलाभ। वृश्चिक में भ्राता वृद्धि॥१५०॥ चाप (धनुराशि) में पितृ सुख। मकर में माता से विरोध। तुला में जलबाधा। कन्या में वृद्धि। ये तुला के नवांश का फल हुआ। कर्क में धननाश सिंह में राजविरोध॥५२॥

मिथुने भूमिलाभश्च वृषभे चार्थलाभकृत् ॥ चापे तु धनलाभः स्याद्वृश्चिकस्य नवांशके ॥५३॥ मेषे तु धनलाभः स्याद्वृषे भूमिविवर्द्धनम् ॥ मिथुने सर्वसिद्धिः स्यात्कर्कटे सर्वसिद्धिकृत् ॥५४॥ सिंहे तु पूर्ववृद्धिः स्यात्कन्यायां कलहो भवेत् ॥ तौलिके चार्थलाभः स्याद्वृश्चिके रोगमाप्नुयात् ॥५५॥ चापे तु सुतवृद्धिः स्याच्चापस्य नवमांशके ॥ मकरे पुत्रलाभः स्यात्कुंभे धान्यविवर्द्धनम् ॥५६॥ मीने कल्याणमाप्नोति वृश्चिके नृपबाधिता ॥ तौलिके त्वर्थलाभश्च कन्यायां शत्रुवर्द्धनम् ॥५७॥ शशिभे श्रियमाप्नोति सिंहे तु नृपबाधिता ॥ मिथुने वृक्षबाधा च मृगस्य नवभागके ॥५८॥ वृषभे त्वर्थलाभं च मेषस्य त्वशिरोगकृत् ॥ [illegible]

स्यात्कुंभे स्वस्य विवर्द्धनम् ॥५९॥ मकरे सर्वसिद्धिः स्याच्चापे शत्रुविवर्द्धनम् ॥ मेषे सौख्यविनाशश्च वृषभे मरणं भवेत् ॥१६०॥

मिथुन में भूमिलाभ। वृष में धनलाभ। धन में अर्थलाभ। ये वृश्चिक के नवांश के फल है।।५३।। मेष में धनलाभ। वृष में भूमिवृद्धि। मिथुन में सर्वसिद्धि। कर्क में भी सर्व सिद्धि।।५४।। सिंह में वृद्धि। कन्या में कलह। तुला में धनलाभ। वृश्चिक में रोग।।५५।। धन में सुतवृद्धि। ये धनराशि के नवांश के फल है। मकर में पुत्र वृद्धि। कुंभ में धान्यवृद्धि।।५६।। मीन में कल्याण। वृश्चिक में पशु से हानि होती है। तुला में धनलाभ। कन्या में शत्रुवृद्धि।।५७।। कर्क में धनाप्ति। सिंह में पशु से भय। मिथुन में वृक्ष से हानि। ये मकर नवांश का फल है।।५८।। वृष में धन लाभ। मेष में आख की बीमारी। मिथुन में लंबी यात्रा। कुंभ में वृद्धि।।५९।। मकर में सर्व सिद्धि। धन में शत्रु वृद्धि। मेष में सुखनाश। वृष में मृत्यु।।१६०।।

युग्मे कल्याणमाप्नोति कुंभस्य नवभागके ॥ कर्कटे धनवृद्धिःस्यात्सिंहे तु राजपूजनम् ॥६१॥ कन्यायामर्थलाभस्तु तुलाया लाभमाप्नुयात् ॥ वृश्चिके ज्वरमाप्नोति चापे शत्रुविवर्द्धनम् ॥६२॥ मृगे जायाविरोधं च कुंभे जलविरोधता ॥ मीने तु सर्वसौभाग्यं मीनस्य नवभागके ॥६३॥ दशादिक्रमेणैव ज्ञात्वा सर्वफलं वदेत् ॥ क्रूरग्रहदशाकाले शांतिं कुर्याद्विचक्षणः ॥१६४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे कालचक्रदशाफलकथनं नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ॥४५॥

मिथुन में कल्याण। ये कुंभराशि के नवांश का फल है। कर्क में धनवृद्धि। सिंह में राजा का आदर।।६१।। कन्या में धनलाभ। तुला में लाभ। वृश्चिक में ज्वर। धन में शत्रुवृद्धि होती है।।१६२।। मकर में भार्या से विरोध। कुंभ में जल से हानि। मीन में सर्व सौभाग्य। ये मीन राशि दशा के नवांश राशियों के फल है।।६३।। दशा के आदि के अंश के क्रम से फल कहना चाहिए। क्रूरग्रह की दशा के समय शान्ति करनी चाहिए।।१६४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० कालचक्रदशाफलकथन नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्याय ॥४५॥

अथ चरदशाफलमाह

अधुना संप्रवक्ष्यामि चरपर्यायदशाफलम् ॥ यस्य विज्ञानमात्रेण दैवज्ञो जायते द्विज ॥१॥ नराणां सर्वमायुश्च सुखदुःखशुभाशुभम् ॥ सर्ववेत्ता निर्विशंकं भवतीह न संशयः ॥२॥ जन्मलग्नात्समारभ्य भानुभावे द्विजोत्तम ॥ आयुर्वर्षप्रदा ज्ञेया फलं तस्या वदाम्यहम् ॥३॥ यदा दशाप्रदो राशिस्तस्य रंध्रत्रिकोणयोः पापखेटयुते विप्र सा दशा दुःखदायिका ॥४॥ तृतीयषष्ठगे पापे जयादिः परिकीर्तिता ॥ शुभ खेटयुते तत्र जायतेऽपि पराजयः ॥५॥ लाभस्थे शुभपापश्च लाभो भवति निश्चितम् ॥ यदा दशाप्रदो राशिः शुभखेटयुतो द्विज ॥६॥ शुभक्षेत्रे

हि तद्राशिः शुभकर्ता दशाफलम् ॥ पापयुक्ते शुभक्षेत्रमपूर्वयुक्तं सुखोत्तमे ॥७॥ पापर्क्षे शुभसंयुक्ते पूर्वसौख्यं ततो न्यसेत् ॥ पापक्षेत्रे पापयुक्ते सा दशा सर्वदुःखदा ॥८॥ शुभक्षेत्रदशा राशौ युक्ते पापशुभौ द्विज ॥९॥ पूर्वं कष्टं सुखं पश्चान्निर्विशंकं प्रजायते ॥ पापर्क्षे पापशुभगौ पूर्वसौख्यं समेन तत् ॥ शुभक्षेत्रे शुभं वाच्यं पापर्क्षे त्वशुभं फलम् ॥१०॥

चरपर्यायदशाफल

अब चरपर्यायदशा का फल कहते है। जिसके जानने से मनुष्य दैवज्ञ होता है॥१॥ मनुष्यो की सम्पूर्ण आयु के शुभाशुभ सुख दुःख आदि का निश्चय रूप से ज्ञाता होता है॥२॥ जन्म समय के लग्न से आरंभ करके १२ भावो मे पूर्वोक्तानुसार आयु के वर्ष होते हैं, उनका फल कहते है॥३॥ जब जिस भाव का विचार करना हो तब देखना चाहिए कि उस राशि से ५।८।९ स्थान मे पापग्रह हो तो उस राशि की दशा दुःखदायक होती है॥४॥ विचार्य राशि से ३।६ स्थान मे पापग्रह हो तो जय आदि शुभ फल और शुभग्रह युक्त हो तो पराजय होती है॥५॥ लाभ स्थान मे शुभ और पाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो निश्चय लाभ होता है। हे द्विज! जब दशास्वामिनी राशि शुभ ग्रह युक्त हो॥६॥ तथा राशि भी शुभस्थान मे हो तो दशा का फल शुभ होता है। राशि यदि पापग्रह युक्त शुभस्थान मे हो तो कल्याणकारी है॥७॥ राशि पाप हो और उसमे शुभग्रह हो तो पहिले सुख होता है। पापराशि मे पापग्रह हो तो वह दशा सर्वदुःख दाता है॥८॥ शुभक्षेत्र की दशा राशि की हो उसमे शुभपाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो॥९॥ पहिले कष्ट और पश्चात् सुख होता है। पापराशि मे शुभ और पापग्रह हो तो प्रथम सौख्य होता है। राशि यदि शुभ हो तो शुभ और पाप हो तो अशुभ फल होता है॥१०॥

द्वितीये पंचमे सौम्ये राजप्रीतिर्जयो ध्रुवम् ॥ पापे तृतीयगे खेटे शत्रोर्निग्रहण जयः ॥११॥
चतुर्थे तु शुभे सौख्यमारोग्य त्वष्टमे शुभे ॥ धर्मवृद्धिर्गुरुजनात्सौख्य च नवमे शुभे ॥१२॥
विपरीते विपर्यासो मिश्रेमिश्र प्रकीर्तितम् ॥ पापे भोगे च पापदेर्देहपीडा मनोव्यथा ॥१३॥
सप्तमे पापयोगाभ्यां पापे दारार्तिरीरिता ॥ चतुर्थे स्थानहानिः स्यात्पंचमे पुत्रपीडनम् ॥१४॥
दशमे कीर्तिहानिः स्यान्नवमे पितृपीडनम् ॥ पापाद्रुद्रगते पापे पीडा सर्वोप्यबाधिका ॥१५॥
उक्तस्थानगते सौम्ये तत- सौख्य विनिर्दिशेत् ॥ केन्द्रस्थानगते सौम्ये लाभशत्रुजयप्रदः ॥१६॥
जन्मकालग्रहः स्थित्वा अगोचरग्रहैरपि ॥ विचारितैः प्रवक्तव्य तत्तद्राशिदशाफलम् ॥१७॥
यस्यराशिः शुभाक्रांतो यस्य पश्चाच्छुभग्रहाः ॥ तद्दशा शुभदा प्रोक्ता विपरीते विपर्ययः ॥१८॥

द्वितीय, पचम मे सौम्यग्रह हो तो राजप्रीति और जय होती है। तृतीयभाव मे पापग्रह हो तो शत्रु की पराजय तथा बन्धन और अपनी जय होती है॥११॥ चतुर्थ भाव मे शुभग्रह हो तो सुख और अष्टभाव मे शुभग्रह हो तो आरोग्यता होती है। और नवमभाव मे शुभग्रह हो तो गुरु जनो मे धर्मवृद्धि और सौख्य होता है॥१२॥ विपरीत परिस्थिति हो तो विपरीत कहना। पापराशि मे पापग्रह हो तो देहपीडा और मनोव्यथा होती है॥१३॥ सप्तमभाव मे पापग्रह के योग से या स्थिति मे भार्या को कष्ट होता है। चतुर्थभाव मे पापयोग हो तो स्थान हानि तथा पंचमभाव मे पापयोग मे पुत्र को पीडा होती है॥१४॥ दशमभाव मे पापयोग से कीर्तिहानि

तथा नवम मे पापयोग से पितृपीडा होती है। और यदि पापग्रह से ११वे भाव मे भी पापग्रह हो तो अबाध पीडा होती है॥१५॥ तथा ११ मे सौम्य ग्रह हो तो सौख्य होता है। यदि केन्द्र स्थान मे सौम्य ग्रह हो तो लाभ और शत्रु पर जय होती है॥१६॥ इस प्रकार जन्मकाल की ग्रह स्थिति तथा वर्तमान ग्रहस्थिति का विचार करके ही तत् २ राशि दशा का फल कहना चाहिए॥१७॥ जिस जातक की राशि ग्रह युक्त हो और राशि के पृष्ठभाग मे भी शुभग्रह हो वह दशा शुभ फलदायिनी होती है और विपरीत होने से विपरीत फल होता है॥१८॥

त्रिकोणरंध्ररिःफस्थैः शुभपापैः शुभाशुभम् ॥ तद्दशा प्रदराशौषु वक्तव्यं फलमन्यथा ॥१९॥ मेषकर्कतुलानक्रराशीनां च यथाक्रमम् ॥ बाधास्थानादिसप्रोक्ता कुंभगोसिंहवृश्चिकाः ॥२०॥ पाकश्चांतरराशौ वा बाधास्थाने शुभेतरे ॥ स्थिते सति महाशोको बंधनं व्ययनाशनम् ॥२१॥ उच्चस्वर्क्षग्रहे तस्मिञ्छुभं सौख्यं धनागमः ॥ तच्छून्यं चेदसौख्यं स्यात्तद्दशा न फलप्रदाः ॥२२॥ बाधकव्ययषड्रंध्रे राहुयुक्ते महद्भयम् ॥ प्रस्थानं बंधन-प्राप्तौ राजपीडा रिपोर्भयम् ॥२३॥ रव्यारराहुशनयो भुक्तिराशौ स्थिता यदि ॥ तत्राशियुक्ताः पतनं राजकोपान्महद्भयम् ॥२४॥ भुक्तिराशित्रिकोणे तु नीचखेटः स्थितो यदि ॥ तद्राशौ वा युते नीचे पापे मृत्युभयं भवेत् ॥२५॥ भुक्तिराशौ स्वतुगस्थे त्रिकोणे वापि तुंगभे ॥ यदा भुक्तिवशा प्राप्ता तदा सौख्यं लभेन्नरः॥२६॥नगरग्रामनाथत्वं पुत्रलाभं धनागमम् ॥ कल्याणसौभाग्यं च सैनापत्यं महोन्नतम् ॥२७॥

'५।८।९।१२' भावो मे शुभ तथा पाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो मिश्रित फल होता है उस राशि दशा मे मिश्रित फल कहना चाहिए॥१९॥ मेष, कर्क, तुला, मकर राशियो के फल के प्रतिबंधक स्थान क्रम से कुंभ, वृष, सिंह, वृश्चिक है॥२०॥ दशाप्रद राशि स्थिर द्विस्वभाव हो और उसके बाधा स्थान मे पापग्रह हो तो महाक्लेश, बंधन, व्यय और नाश होता है॥२१॥ तथा उस दशाराशि मे उच्च का या स्वगृही ग्रह हो तो शुभ, सौख्य और धनलाभ होता है। यदि वह राशि ग्रह शून्य हो तो अशुभ या फलहीन होती है॥२२॥ बाधक स्थान से ६।८।१२ राहुयुक्त हो तो महान् भय होता है। यात्रा बंधनप्राप्ति, राजा तथा शत्रु से पीडा और भय होता है॥२३॥ सूर्य, मंगल, शनि, राहु ये ग्रह यदि दशा राशि मे या अन्तरदशा राशि मे हो तो पतन और राजकोप से भय होता है॥२४॥ दशाराशि से त्रिकोण मे यदि नीच राशिगत ग्रह हो अथवा उस राशि मे ही नीचस्थ या पापग्रह हो तो उसके भोगकाल मे मृत्यु का भय होता है॥२५॥ भुक्तिराशि मे उच्चस्थ ग्रह हो अथवा उससे त्रिकोणभाव मे उच्चस्थ ग्रह हो तो उस दशा के भोगकाल मे मनुष्य को बहुत सुख होता है॥२६॥ वह मनुष्य नगर तथा ग्राम का स्वामी, धन, पुत्र प्राप्ति, सेनापति का बडा ऊँचा पद प्राप्त करता है॥२७॥

पाकेश्वरो जीवदृष्टः शुभराशिस्थितो यदि ॥ तद्दशायधनप्राप्तिर्मंगलं पुत्रसमतम् ॥२८॥ सितासितागुराश्चश्च सूर्यस्य रिपुराशयः ॥ कौर्पितौलिघटश्चैवोर्मीमस्य रिपुराशयः ॥२९॥ घटमीननृयुक्तौलिकन्या ज्ञस्य ततः परम् ॥ कर्कमीनालिकुंभाश्च राशयो रिपुवत्स्मृताः ॥३०॥ मेषसिंहधनुः कौर्पिकर्कटाः शनिशत्रवः ॥ वृषतौलिनृयुक्कन्याराशयो रिपवोगुरोः ॥३१॥ सिंहालिकर्कचापाश्च शुक्रस्य रिपुराशयः ॥ एवं ग्रहांतरदशां चिंतयेत्कोविदो द्विज

॥३२॥ ये राजयोगदा ये च शुभमध्यगता ग्रहाः ॥ यस्माद्वाऽपित्रिकोणाः स्युः शुभाशुभफल ग्रहाः ॥३३॥ तद्दशायां शुभं ब्रूयाद्राजयोगादिसंभवम् ॥ शुभद्वयांतरगतः पापोपि शुभदः फलम् ॥३४॥ गताशुभदशामध्यं दशासौम्यस्य शोभना ॥ शुभं यस्य त्रिकोणस्य तद्दशापि शुभप्रदा ॥३५॥ आरंभांतौ मित्रशुभराश्योर्यदि फलं शुभम् ॥ प्रतिराश्येककोब्द स्याच्चालनीयं शुभ द्विज ॥३६॥

दशा स्वामी गुरुदृष्ट हो या शुभराशि स्थित हो तो उसकी दशा मे धन प्राप्ति तथा पुत्रोत्पत्ति होती है॥२८॥ (ग्रहो की शत्रुराशि) सूर्य की शत्रुराशि २।६।७।१०।११ हैं। चन्द्रमा की शत्रुराशि ७।८।११ तथा मगल की शत्रु राशि॥२९॥ ३।६।७।११।१२ हैं। इसके बाद बुध की शत्रु राशि ४।८।११।१२ हैं॥३०॥ गुरु की शत्रुराशि २।७।३।६ हैं। और शनि की शत्रुराशि १।५।८।९।४ हैं॥३१॥ तथा शुक्र की शत्रु राशि ४।५।८।९ हैं। इन शत्रु राशियो को ध्यान मे रखते हुए अन्तरदशा का विचार करे॥३२॥ जो ग्रह १-राजयोगकारक हैं तथा २-जो ग्रह शुभ ग्रहो के मध्य मे है एव ३-जिस ग्रह से त्रिकोण मे शुभग्रह हो वह ग्रह शुभफल देता है॥३३॥ १-राजयोग कारक ग्रह की दशा मे राजयोग के अनुसार जो शुभ फल होना सभव है वह शुभ फल होता है। २-इसी प्रकार दो शुभग्रहो के मध्य मे जो पापग्रह है वह भी शुभफलकारक ही है॥३४॥ अशुभग्रह की दशा मे शुभ ग्रह का अतर शुभ होता है। ३-इसी प्रकार जिस ग्रहके त्रिकोणस्थ शुभग्रह हो उसकी दशा भी शुभफलदात्री होती है॥३५॥ जिस पापदशाका आरभ (दशा) और अत (दशा) शुभ या मित्रराशिकी दशामे हो तो वह दशा भी शुभफल देनेवाली होती है। इसी प्रकार प्रति राशि एक २ वर्ष चलाना चाहिए॥३६॥

आरंभात्तत्त्रिकोणे तु सौम्ये तु शुभमावहेत् ॥ शुभराशौ शुभारंभे दशा स्यादतिशोभना ॥३७॥ शुभादिराशौ पापश्चेद्दशारंभे शुभो द्विज ॥ शुभारंभे का कथेति आरंभस्य शुभं भवेत् ॥३८॥ नीचाद्यो तद्दशायत भावं भाग्यविपर्ययः ॥३९॥ यत्र स्थितो नीचखेटस्त्रिकोणे वाथ राशियः ॥४०॥ तदा राशीश्वरे नीचे संबधो नीचखेटकैः ॥ भाग्यस्य विपरीतत्व करोत्येव द्विजोत्तम ॥४१॥ राहोः केतोश्च कुंभादि वृश्चिकादि चतुष्टयम् ॥ कुंभे तत्र समारभस्तद्दशायां शुभं भवेत् ॥४२॥ मद्दशायां शुभं ब्रूयात्तच्चेन्मकरसंस्थितः ॥ यस्मिन्राशौ दशांतः स्यात्तस्मिन्दृष्टे युतेपि वा ॥४३॥ शुक्रेण विधुना वा स्याद्राजकोपाद्धनक्षयः ॥ दशांतश्चेदरिक्षेत्रे राहुदृष्टियुतेपि वा ॥४४॥ इदं फलं शनेः पाके न विचिन्त्य द्विजोत्तम ॥ दशाप्रदे नक्रराशौ न विचिन्त्यमिदं फलम् ॥४५॥

आरम्भिक राशि से त्रिकोण मे शुभग्रह हो तो शुभफल होता है। मूलदशा भी शुभ हो और अन्तरदशा भी शुभ हो तो अतिशुभ फल होता है॥३७॥ शुभराशि मे पापान्तर भी जब शुभ हो सकता है। तब शुभराशि मे शुभान्तर के शुभ होने मे तो कहना ही क्या है॥३८॥ दशा के आदि तथा अन्त मे नीच, अशुभ ग्रहयोग युक्त राशि का अन्तर हो तो भाग्य का विपर्यय (उलटा निकृष्ट होना) ही जानना ॥३९॥ जिस राशि मे अथवा जिस राशि के त्रिकोण

नीचस्थ ग्रह हो।।४०।। तथा जब दशाराशि का स्वामी नीच ग्रह हो, अथवा नीचग्रहो से सम्बन्ध हो तब हे द्विजोत्तम! भाग्यभाव की हानि ही करता है।।४१।। राहु तथा केतु के लिए क्रमश कुंभादि चार तथा वृश्चिकादि चार राशियो मे दशा का आरभ हो तो दशा शुभ होती है।।४२।। जिस दशा को शुभ माना जाय वह दशा यदि मकर राशि की हो अथवा दशात राशि यदि राहु केतु से दृष्ट या युक्त हो।।४३।। अथवा शुक्र या चन्द्रमा से युक्त या दृष्ट हो तो राजा के कोप से धन क्षयकारी दशा जानना। यही फल जहा शत्रुराशि मे दशा का अत होता हो अथवा राहु की दृष्टि से युक्त या दृष्ट हो तो भी जानना।।४४।। यह फल शनि की दशा मे तथा मकर राशि दशा मे नही देखना।।४५।।

राहोर्दशांते सर्वस्य नाशो मरणबधने । देशान्निर्वासनं वा स्यात्कष्टं वा महदश्नुते ।।४६।।
तत्त्रिकोणगते पापे निश्चयाद्दुःखमादिशेत् ।।एवं शुभाशुभं सर्व निश्चयेन वदेद्बुधः ।।४७।।
राह्वादिसंस्थितराशिः स्याद्दशाप्रदो भवेन्नरः ।। तत्र कालेपि पूर्वोक्तं चिंतनीयं प्रयत्नतः ।।४८।।
दशारंभो दशांतो वा मकरे चेत्तुशोभनम् ।। तस्मिन्नेव च राहुश्चेन्निरोधी द्रव्यनाशनः ।।४९।।
यत्र क्वापि च भे राहौ दशारंभे विनाशनम् ।। गृहभ्रंशः समुद्दिष्टो धने राहुधनीभृतः ।।५०।।
चंद्रशुक्रौ द्वादशे चेद्राजकोपो भवेद् ध्रुवम् ।। भौमकेतू तत्र यदि वह्नेर्महती व्यथा ।।५१।।
चन्द्रशुक्रौ धनेविप्र यदि राजा प्रयच्छति ।। दशारंभेन्तरस्याश्च द्वितीयस्थमिव फलम् ।।५२।।
एवमर्गलफलार्थे च ब्रह्मदेवप्रदर्शितः ।। यस्य पापः शुभो वापि ग्रहस्तिष्ठेच्छुभार्गले ।।५३।। तेन
दृष्टेक्षित लग्न प्राबल्यायोपकल्पते ।। यदि पश्येद्ग्रहस्तत्र विपरीतार्गलस्थितिः।।५४।। सोपि
दृष्टस्थिते लग्ने विपरीते फल भवेत् ।। तद्दृष्टेऽपि शुभ ब्रूयान्निर्विशक द्विजोत्तम।।५५।।

इति बृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे चरदशाफलकथन नाम
षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ।।४६।।

राहु की दशा के अन्त मे सर्वस्व का नाश तथा मरण एव बधन होता है। या देशत्याग अथवा महान् कष्ट होता है।।४६।। और राहु या दशाप्रद राशि से त्रिकोण स्थान मे पापग्रह हो तो निश्चय ही दु ख होता है। इस प्रकार कही हुई रीति से सब योगायोगो का विचार करके निश्चित फल कहना चाहिए।।४७।। यदि दशाप्रद राशि राहु आदि पापग्रह युक्त हो तो उस दशा मे भी पूर्वोक्त अशुभ फल होता है।।४८।। दशा का आरभ और अन्त मकर राशि मे हों तो शुभफल होता है। और उसी राशि मे यदि राहु हो तो शुभफल का निरोध करके धननाश कारक होता है।।४९।। जिस राशि मे राहु हो उस राशि की दशा नाशकारक होती है। यदि राहु धन स्थान मे हो तो धनी मनुष्य के भी घर का नाश करता है।।५०।। चन्द्र तथा शुक्र जिस राशि के १२ भाव मे हो तो राजकोप होता है। यदि १२ स्थान मे भौम और केतु हों तो अग्नि से मृत्यु या व्यथा होती है।।५१।। चन्द्रमा और शुक्र यदि धन राशि मे हो तो राजा से धनलाभ होता है। दशा के आरभ तथा अन्त मे भी धनलाभ होता है।।५२।। जैसे स्थान आदि के द्वारा जो योग और फल दशाप्रद राशि के लिए कहे गये हैं, वे सब योग अर्गला योग के विचार मे भी प्रयुक्त करना चाहिए। ऐसा ही प्रथम ब्रह्मा ने कहा है। जिस दशाप्रद राशि मे

अर्गला में पाप या शुभ ग्रह हो॥५३॥ उस ग्रह से यदि लग्न दृष्ट या युक्त हो तो योग की प्रबलता समझना। इसी प्रकार अर्गला के प्रतिबन्धक योग में भी यदि कोई ग्रह की दृष्टि हो तो ॥५४॥ वह योग भी दृष्ट या युक्त लग्न के लिए विपरीत योग होने पर विपरीत फलकारक होता है। और शुभयोग यदि प्रतिबंधित नहीं हो तो शुभ फल निःसन्देह होता है॥५५॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० पू० भावप्रका० चरदशाफलकथन नाम
षट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४६॥

अथ दशावाहनमाह

अधुना सम्प्रवक्ष्यामिदशावाहनमुत्तमम् ॥ प्राणिनां च हितार्थाय कथयामि तवाग्रतः ॥१॥ गर्दभो घोटको हस्ती महिषो जम्बुसिंहकौ ॥ काको हंसो मयूरश्च नवैते नरवाहनाः ॥२॥ स्वकीयजन्मनक्षत्राद्‌गणयेल्लग्नभावधि ॥ नवभिस्तु हरेद्भागं शेषं तु राशिवाहनम् ॥३॥ दशाप्रवेशे खरवाहनश्च उत्पन्नभोगो जडतासमेतः ॥लज्जाविहीनो धनधान्यहीनः स्यान्मानवो वस्त्रविवर्जितश्च ॥४॥ चपलचञ्चलता बहुभक्षकः प्रकटबुद्धिसघोषचमूपतिः ॥ दृढतनुर्बहुकार्यकरः परस्तुरगयोर्यदि वाहनसंस्थितः ॥५॥

दशावाहन कथन

अब दशा वाहन का उत्तम प्रकरण कहते हैं जिससे प्राणियों का हित हो॥१॥ गर्दभ घोड़ा, हाथी, महिष, जम्बु (सियार) सिंह काक (कौवा), हंस, मयूर ये नौ दशा के वाहन हैं॥२॥ अपने जन्म नक्षत्र से लग्नस्पष्ट के नक्षत्र तक गणना करके ९ का भाग देना। शेष रह सो वाहन जानना॥३॥ दशाप्रवेश में यदि गर्दभ वाहन हो तो कमाई होने पर खानेवाला मूर्ख, लज्जाहीन, धनधान्यहीन, वस्त्रादि हीन दीन होता है॥४॥ यदि अश्व हो तो चपल, चंचल, बहुभक्षी, बुद्धिमान्, शब्दकारी, सेनापति तथा दृढशरीरवाला परम उद्यमी होता है॥५॥

नानाकार्यकृतो हि मूर्खजननो देवाधिपो वाहनः सतम्तो बहुठानताशुभगतिः सेनापतिः शोभनः ॥६॥ सर्वं सौख्यकरः सुभूषणधरः स्याच्चचलो दुष्टता पाकोऽय यदि वाहनो गजपतेर्नानाकलाकौशलः ॥७॥ महिषयोर्बलबुद्धिविहीनता जयभयं प्रबलाग्निभयातुरम् ॥ कटकयो प्रबले बलसंयुतो महिषयोर्यदि वाहनता भवेत् ॥८॥ जम्बुके बहुतरैव चञ्चला व्याधिदुःखपरिपीडितांगना ॥ क्लेशता रिपुजनाच्च पीडनं धान्यनाशमतिसंक्षयो भवेत् ॥९॥ दशाप्रवेशे यदि वाहनश्च सिंहो बलिष्ठो विविधैः प्रकारैः ॥ उत्पन्नभोगी रिपुनाशकारी स्याद्वाहने केसरिणा विशेषः ॥१०॥ काके वाहनसंस्थिते यदि दशा स्याच्चचलो निर्भयो वासारो मलिनः कुवेषधरितो नीचैर्जनैः पूजितः ॥ स्थाने राजभयं तथारिपुभयं मानापमानं नरः दुष्टार्तिः कलहः कुचेष्टितनरः स्त्रीद्वेषकारी भवेत् ॥११॥ जनकसार्निधिकेलिसमन्वितो द्विजपतेर्बहुजातसुखान्वितः ॥ सदशने मतिना प्रबलायिता सुकथिता खलु हंसपवाहनः ॥१२॥

मयुरवाहनतो बहुलं सुखं धृतिकलाकुशलोऽमलकेलिकृत् ॥ मधुरवाक्ययुतो मधुरप्रियः सदसमेन नरस्य समन्वितः ॥१३॥

यदि जातक की दशा का वाहन हाथी हो तो अनेक कार्याकार्यकारी मूर्ख चिन्तित हठी किन्तु शुभगति तथा योग्य सेनापति सुन्दर सजीला॥६॥ सुखकारी, चचल एव अनेक कला कौशल वाला होता है॥७॥ यदि दशा का वाहन महिष हो तो जातक बुद्धिबल से हीन प्रबल अग्निभय से आतुर, दो लडनेवाले साडो की तरह लडाई मे सबसे आगे रहता है॥८॥ यदि सियार दशावाहन हो जो जातक अतिचचल व्याधि दु खपीडित स्त्रीवाला, क्लेशयुक्त तथा शत्रु से पीडित तथा धनधान्यहीन होता है॥९॥ यदि सिह दशावाहन हो तो जातक बलवान् तथा अनेक रीति से भोगो को प्राप्त करनेवाला, शत्रुहन्ता होता है॥१०॥ यदि कौवा वाहन हो तो जातक चचल निर्भय पर्यटनप्रिय मलिन कुवेशधारी नीचजनो मे सगतिवाला तथा राज एव शत्रुभययुक्त, मानापमान मे समान, रोगी,कलह कामी, कुचेष्टाकारी तथा स्त्री का द्वेषी होता है॥११॥ यदि हस वाहन हो तो अतीव सुन्दर कलाप्रेमी, बहुत सन्तान सुखयुक्त सभा चतुर, प्रबल मतिमान् होता है॥१२॥ मयूर वाहन हो तो बहुत सुखी, धैर्यवान्, कलाकुशल, क्रीडा प्रेमी, मधुरभाषी मधुरभोजन प्रिय होता है॥१३॥

अथ सुदर्शनचक्रमाह

विश्वचक्र कालचक्र दिव्यचक्र सुदर्शनम् ॥ विष्णोः कराबुजावासमीडे तज्ज्ञानमद्भुतम् ॥१४॥

पुनः समस्तज्योतिःशास्त्रतत्त्वकामधेनुरूपं सुदर्शनचक्रमाह

सुदर्शन द्वादशारं जन्मभेद्वर्कराशितः ॥ केन्द्रकोणाष्टगो राहुः पापाश्चैं च शुभो मुदे ॥१५॥ तत्स्वाद्यैर्वर्षमासाद्यद्द्पेकयत्नान्प्रवर्तयेत् ॥ विरिष्फारिशुभैः पापैस्त्रिषडायेषु वै शुभम् ॥१६॥ तंत भाव प्रकल्प्यांगं तत्तत्त्वादिज फलम् ॥ गुरूपदेशात्संवाच्यं भोजन स्वप्नपूर्वकम् ॥१७॥ भायेशादिद्वादशानां वशवर्गेषु कल्पयेत् ॥ तदाद्यतर्दशास्तद्वन्मासादौ तद्बलैः शुभा ॥१८॥ सुदर्शन द्वादशार वृत्तत्रयसमन्वितम् ॥ पूर्ववृत्ते जन्मलग्नाद्भावा खेचरसयुताः ॥१९॥ तदूर्ध्ववृत्ते चन्द्राच्च भावाः खेटसमन्विताः ॥ तदूर्ध्ववृत्ते सूर्याच्च भावा लेख्या सखेचराः ॥२०॥

सुदर्शन चक्र

जो विश्व-ससार का चक्र समयफलसूचक है, देवता भी जिसे चाहे ऐसा यह सुदर्शन नामक चक्र के समान ज्योतिषशास्त्र का सारभूत चक्र है, अत सर्वश्रेष्ठ होने से इसकी प्रशसा करते है। भगवान् विष्णु के करकमल मे रहनेवाले चक्र की वन्दना करते है॥१४॥ समस्त ज्योतिषशास्त्र का तत्त्व कामधेनु के समान यह सुदर्शन चक्र है। १२ कोष्टक का चक्र बनावे। उसके (अतर्बाह्यरूप से तीन विभाग करे) अन्तर के भाग मे जन्मकुडली, मध्य मे चन्द्रकुण्डली, बाह्यचक्र मे सूर्यकुण्डली लिखे। उसमे देखना कि केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाव मे राहु या पापग्रह हो तो दु खदायी और शुभग्रह हो तो सुखदायक होते है॥१५॥ प्रत्येक कोष्टक मे प्रति कोष्टक १-१ वर्ष तथा मास एव २॥-२॥ दिन की आवृत्ति करे। छठे तथा बारहवे घर मे शुभग्रह न हो और ६।३।११ मे पापग्रह हो तो शुभ

है।।१६।। प्रत्येक भाव को तद्भावज फल विचारार्थ लग्न कल्पना करके उस उस भाव से उसके फल का निर्देश करे। गुरु के उपदेशानुसार प्रातःकाल से शयनकाल तक का फल कहना चाहिए।१७।। द्वादश भावों में प्रथम प्रत्येक भाव में १०-१० वर्ष की कल्पना करे। पश्चात् उनमें १०-१० मास की अन्तर्दशा जिस भाव की दशा होगी उसी भाव से आरंभ होगी।।१८।। यह सुदर्शन चक्र बारह कोष्टक का है। तीन वृत्त (घेरे) से युक्त है। पहले वृत्त में जन्म लग्न से १२ भाव लिखे और यथास्थान ग्रह लिखे।।१९।। उसके ऊपर के वृत्त में चन्द्रराशि में भाव और ग्रह लिखे। उसके ऊपर सूर्यराशि से भाव और ग्रह लिखे।।२०।।

वृत्तत्रयेऽपि ये खेटा यत्र राशौ व्यवस्थिता ॥ ते तत्र संलेख्यास्तस्माद्भावान्निरीक्षयेत् ।।२१।। यद्वृत्ते ॥ यद्भावात्केन्द्रकोणाष्टगस्तमः ।। पापा वा यत्र बहवस्तत्तद्भावविनाशनम् ।।२२।। यत्र भावे सैंहिकेयोऽवश्य तद्भावहानिद ।।यस्माद्भावात्केन्द्रकोणाष्टमे सौम्या शुभप्रदा ।।२३।। तदा तद्भाववृद्धिः स्यात्त्रिवृत्तेऽपि शुभा ग्रहा ।। केन्द्रादिस्थानगास्ते चेच्छुभाधिक्यफलप्रदा ।।२४।। तथा पापखगास्तत्र पापारिष्टफलप्रदा ॥ शुभेन वीक्षिता सौम्य फल तद्भावज समम् ।।२५।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे चरदशाफलादि कथन
नाम सप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ।।४७।।

(पूर्वखण्डः समाप्तः)

तीनों वृत्तों में जो ग्रह जिस भाव में हो वही लिखे। पश्चात् देखे।२१।। जिस जिस वृत्त में जिस जिस भाव से केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टमभाव में राहु हो या बहुत पापग्रह हो तो उस उस भाव का नाश होता है।।२२।। और जिस भाव में राहु हो उसका अवश्य ही नाश होता है। जिस भाव से केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम में सौम्य ग्रह हो वह भाव श्रेष्ठ है।।२३।। तो उस भाव की वृद्धि होती है। तीनों वृत्तों में यदि शुभग्रह केन्द्र, त्रिकोण भाव में हो तो अधिक शुभ फलप्रद होते हैं।।२४।। यदि उन स्थानों में पापग्रह हो तो दुःख अरिष्ट फल देनेवाले होते हैं। और यदि वे पापग्रह शुभग्रहों से दृष्ट हो तो समान फल होता है।।२५।।

उदाहरण चक्र

सुदर्शन चक्र सम्बन्धी श्लोकों का तात्पर्यार्थ--

एक चक्र इस प्रकार बनाना चाहिए, जिसमें १२-१२ घरों के ३ चक्र हों जिसका चित्र इसमें दिखाया गया है। उसमें भीतर के १२ घरों में ग्रह सहित लग्नकुण्डली, बीच के १२ घरों में ग्रह सहित चन्द्र कुण्डली तथा ऊपर के १२ घरों सहित सूर्य कुण्डली लिखना। अब यह चक्र तैयार है। इसमें अपने शरीर के लिये लग्न से तथा अन्य विचार के लिये उन उन पदार्थों के भाव को लग्न कल्पना करके तत् तत् भावों से विचार करना चाहिए। यह ऊपर कहा जा चुका है कि केन्द्र त्रिकोण तथा अष्टम भाव में राहु और पापग्रह अशुभ हैं। तथा शुभग्रह शुभ हैं। इस ग्रह स्थिति के विचार में स्वगृही, मित्रगृही, उच्च परमोच्चस्थ, मूल त्रिकोणस्थ, स्वनवांशस्थ तथा शुभ वर्ग आदि ग्रह से तत्तत् भाव का फल शुभ एवं नीच, परम नीच, शत्रु राशिस्थ, अस्त, शत्रु

नवांशस्थ, शत्रु वर्गस्थ, पापयुत अथवा दृष्ट ग्रह अशुभ फलदायक होता है। इस विचार मे शुभ, पापग्रहो की दृष्टि का भी विचार करना चाहिए। प्रत्येक ग्रह की दृष्टि जितने पाद हो, शुभ और पाप की अलग अलग योग कर, शुभ और पापग्रहो की दृष्टि का अन्तर करके जो अधिक रहे उसके अनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए।

इस चक्र मे मनुष्य की पूर्णायु १२० वर्ष की सख्या को प्रथम १२ भागो मे बाट कर चक्र के १-१ घरमे १०-१० वर्षकी कल्पना करे। प्रत्येक घरके वर्षो मे उपर्युक्त ग्रह स्थिति के अनुसार शुभाशुभ फल का निर्णय करे तथा प्रत्येक १० वर्ष मे अन्तरदशा रूप से १०-१० मास उस उस भाव से १२वे भाव तक कल्पना करे और ग्रह स्थिति के अनुसार फल का निर्णय करे। यह एक प्रकार है।

दूसरा प्रकार—चक्र के १२ भावो मे जन्मलग्न से प्रत्येक भाव मे १ १ वर्ष की कल्पना करे। इस प्रकार १० आवृत्ति होने से १२० वर्ष की सख्या पूरी होती है। इसकी अन्तरदशा प्रत्येक भाव के १-१ वर्ष के १२ भाग कल्पना करके १-१ मास १-१ भाव पर समझना चाहिए। इसका आरम्भ अपने उसी भाव से करना चाहिए कि जिसकी अन्तरदशा देखनी हो। इसी प्रकार १ मास के भी १२ भाग करने से २॥-२॥ दिन होते है। उनका विचार भी १२ भावो पर पूर्ववत् प्रत्यन्तर दशा के रूप मे करना चाहिए। इसी प्रकार सूक्ष्मान्तर १२॥ घटिका और प्राणान्तर प्राय १-१ घटिका का तत्तत् भाव पर कल्पना करके उपर्युक्त ग्रह योगानुसार वर्ष, मास, दिन, घटी तक का शुभाशुभ फल निर्णय कर सकते है। यह सुदर्शन चक्र सरल रूप से जातक का भूत भविष्य तथा वर्तमान सुख दु ख निर्णय करने मे अत्यन्त उपयोगी है। और ज्योतिर्विदो के लिये कामधेनु रूप है।

अथ राहुदृष्टिमाह

सुतमदननवान्ते पूर्णदृष्टिं तमस्य युगलदशमगेहे चार्धदृष्टिं वदति। सहजरिपुविपश्यन्पादष्टिं मुनीन्द्रा निजभवनमुपेतो लोचनाध प्रदिष्ट ॥२६॥

राहु दृष्टि

राहु की दृष्टि पचम, सप्तम नवम मे पूर्ण। २।१० मे अर्ध दृष्टि। ३।६ मे पाद दृष्टि। और अपने भाव मे दृष्टि हीन होता है॥२६॥

अथ ग्रहाणामुदयवर्षाण्याह

आकृत्यो २२ जिन २४ समिता गजकरा २८ नेत्राग्नय ३२ षोडश १६ स्तत्वा २४ स्त्वगगुणा ३६ द्विवेद ४२ प्रमिता सूर्यादिकाना समा ॥ यत्खेट स्वगृहे स्वतुगभवने षड्वर्गशुद्धश्चयस्त-स्याब्दे हि नृणा मवेदतिसुख भाग्योदयो निश्चितम्॥२७॥

ग्रहो के भाग्योदय वर्ष

सूर्यादि ग्रहो के ये वर्ष भाग्योदय के लिये नियत हैं॥ २२,२४,२८,३२,१६,२४,३६ और ४२ है॥ जो ग्रह अपने घर मे उच्च स्थान मे, षड्वर्ग मे शुभ हो, उसी ग्रह के अनुसार उस जातक का भाग्योदय ऊपर कथित ग्रह के वर्ष मे निश्चित जानना॥२७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे पूर्वखण्डे ज्योतिर्वित्प० श्रीरामनारायणात्मजताराचन्द्र-शास्त्रिविरचिताया भावप्रकाशिकाटीकाया सप्तचत्वारिंशोऽध्याय ४७॥

समाप्तश्चायं पूर्वखण्डः ॥ श्रीरस्तु ॥

अथ उत्तरखण्ड प्रारभ्यते

मैत्रेय उवाच—भगवन्सर्वमाख्यातं जातकं विस्तरेण मे ॥ सप्तसहस्राप्युतग्रंथैरशीत्यध्यायसंयुतैः ॥१॥ संकरात्तत्फलानां तु ग्रहाणां गतिसंकरात् ॥ नान्येन हीदमस्येदमिति वक्तुमलं नराः ॥२॥ कलौ युगे ततोऽस्यैव बुद्धिः पापोत्तरा नराः ॥ अतो न चास्य प्रचयगमनं न प्रयोजनम् ॥३॥ अत्र त्रेतायुगे केचिद्द्वापरे च कृते युगे ॥ कुशाग्रमतयः सर्वे पुण्यभाजश्चिरायुषः ॥४॥ अतोऽल्पबुद्धिगम्यं यच्छास्त्रमेतद्वदस्व मे॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥५॥

उत्तरखण्ड प्रारंभ

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! पूर्वभाग मे आपने ८० अध्यायो के ११,००० श्लोको से जातकशास्त्र का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है॥१॥ किन्तु ग्रहों की गति आदि का विचार अति कठिन होने से फलनिर्णय करना अति कठिन है॥२॥ क्योकि-फलनिर्णय के प्रकार अति विस्तृत और दुरूह है, अत सरल सुबोध प्रक्रिया युक्त फलनिर्देश का प्रकार कहिये कि जिसके अनुसार कार्य करने से फलज्ञानरूप प्रयोजन सिद्ध हो॥३॥ सत्ययुग, त्रेता, द्वापरयुगों मे तो मनुष्य दीर्घायु परम मेधावी तथा पुण्यात्मा थे अत वे इस गहन ग्रन्थ से फलनिर्देश करने मे भी समर्थ थे॥४॥ परन्तु इस कलियुग मे तो (वैसे दीर्घायु और तीक्ष्ण बुद्धि सम्पन्न मनुष्य न होने से) सर्वसाधारण बोधगम्य सरल मार्ग का उपदेश करिये, जिससे मनुष्यो को सुख दुःख का ज्ञान हो और आयु के निर्णय का प्रकार भी विस्तार पूर्वक कहिये॥५॥

पराशर उवाच-साधु पृष्टं त्वया ब्रह्मन्वदामि तव सुव्रत ॥ लोकयात्रापरिज्ञानमायुषो निर्णयं तथा ॥६॥ सफरस्याविरोध च शास्त्रस्यापि च सिद्धये ॥ प्रयोजनस्य लोकानामुपकाराय तच्छृणु ॥७॥ लग्नादिव्ययपर्यंता भावाः समानुरूपतः ॥ फलदाः शुभसदृष्टा युक्ता वा शोभना मताः ॥८॥पापदृष्टयुता भावाः कल्याणेतरदायकाः ॥ नितरां शत्रुनीचस्थैर्न च मित्रोच्चगैश्च तैः ॥९॥ एवं सामान्यतः प्रोक्तं होराविद्भिस्तु सूरिभिः ॥ मयैतत्सकलं प्रोक्तं पूर्वाचार्यानुवर्तिना ॥१०॥ आयुश्च लोकयात्राश्च शास्त्रेऽस्मिस्तत्प्रयोजनम् ॥ निश्चेतुं तन्न शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ॥११॥ किं पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तु कलौ युगे ॥ नष्टाविधु च नातीव द्रेष्काणादिफलेषु च ॥१२॥

पराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! आपने सुन्दर प्रश्न किया है, अब हम वह शास्त्र कहते हैं कि जिससे जातक का शुभाशुभ तथा आयु का ठीक ठीक ज्ञान हो॥६॥ और तुमने जो यह कहा है कि-पूर्वभाग में वर्णित रीति से फलनिर्णय अतिकठिन हो गया है सो उसकी भी स्पष्टता के लिए तथा विरोध परिहार के लिए भी विशेषरूप से वर्णन करते हैं॥७॥ इस शास्त्र मे लग्न आदि १२ भाव ही फलादेश के मूल हैं। वे शुभग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो शुभफल, अशुभ (पाप) ग्रहयुक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल देते है॥८॥ उसमे भी शत्रु, नीच अस्त मे युक्त दृष्ट से नेष्ट फल की अधिकता और मित्र, उच्च, स्वगृही आदि युक्त, दृष्ट से शुभ फल की अधिकता होती

है॥९॥ जैसे पूर्वाचार्यो ने कहा है उसी प्रकार से हमने कहा है॥१०॥ यह ज्यौतिष शास्त्र अति गम्भीर और दुर्बोध है, मनुष्यो का शुभाशुभ तथा आयुर्निर्णय मे महान् आचार्य भी असमर्थ हैं, साधारण मनुष्य तो कैसे समर्थ हो सकते हैं॥११॥ और नष्ट वस्तु ज्ञान मे तो द्रेष्काण, नवांश आदि के विचार द्वारा फल कहना तो अतिकठिन है॥१२॥

आचार्यस्य मुखादेतच्छास्त्रं तु शृणुयाद्बुधः ॥ संप्रदायेन यः श्रांतश्चास्मिञ्छास्त्रे महामतिः ॥१३॥ कर्मज्ञानविदा वेदो द्विधा यद्वत्तदाऽह्वये ॥ होराशास्त्रं द्विधा प्रोक्तं सकीर्णनिश्चयादिति ॥१४॥ प्रोक्तः संकीर्णभागस्तु निश्चयांशस्तु कथ्यते ॥ यो वेत्ति सम्यगेतत्तु दैवज्ञः स उदाहृतः ॥१५॥ भावदृष्ट्यादिषु प्रोक्तानर्थान्सम्यग्विचार्य च ॥ समीचीनांस्तु संगृह्य विरुद्धांस्तु परित्यजेत् ॥१६॥ आयुर्दायैः परं योगैः फलान्यष्टकवर्गतः ॥ तन्वादीनां तु भावानां सूक्तैर्भावादिभिः फलैः ॥१७॥ ज्ञात्वाऽऽदौ करणं स्थान बिंदुरेखे च वर्गणाम् ॥ क्रमादष्टकवर्गस्य पृथक्कृत्य फलं वदेत् ॥१८॥

अत यह शास्त्र गुरुमुखद्वारा अध्ययन करके परिशीलन करने से उत्तरोत्तर ज्ञान विशद होगा॥१३॥ यह शास्त्र वेद के समान ही हं, जैसे वेद ज्ञान और कर्म का प्रतिपादक है उसी तरह यह शास्त्र भी १—'सकीर्ण' और २—'निश्चय' भेद से दो प्रकार का है॥१४॥ उसमे सकीर्ण भाग पूर्वखण्ड मे कहा जा चुका है और 'निश्चय' भाग अब कहते है॥१५॥ जन्मलग्न आदि १२ भावो पर जो सप्तम आदि स्थानो मे पूर्णदृष्टि आदि दृष्टि कही गई है, उसका स्पष्ट करके शुभ दृष्टि मे पापदृष्टि हीन करके शुभफल निर्णय करना॥१६॥ पश्चात् प्राप्त शुभाशुभ के निर्णय के लिए प्रथम आयु का परिमाण देखना चाहिए (क्योकि आयु ही नही होगी तो शुभाशुभ फल को भोगेगा ही कौन?) बाद शुभाशुभयोग और अष्टकवर्ग जन्य फल बलानुसार निश्चित करना॥१८॥

तनुस्वायुस्त्रिरिष्फेषु पंच कामे सुखेर्णवाः ॥ अरौ भाग्ये त्रयः पुत्रे षट् करौ खे भवे च भूः ॥१९॥ लग्नेंदुजीवशुक्रशास्तनौ खेमरणेपिच ॥ रविभौमार्किचद्रार्या व्यये नेंदुसितार्यकाः ॥२०॥ सुखे होरेंदुशुक्राश्च धर्मेर्कार्किकुजा अरौ ॥ होरतार्येन्दवः कामे भवे दैत्येड्पूजिताः ॥२१॥ सहजेकार्किशुक्रार्यभौमाःखे गुरुभार्गवौ ॥ सुतेर्कार्कीन्दुलग्नारशुक्राः स्युः करणं रवेः ॥२२॥

(अब 'अष्टक वर्ग' का फलाफल निर्णय करने के लिए सूर्यादि सात ग्रह और लग्न इनकी विन्दु तथा रेखा के स्थान सबके भिन्न भिन्न कहते है। इस प्रकरण मे विन्दु की 'करण' सज्ञा है। और रेखा की 'स्थान' सज्ञा है) प्रथम सूर्य की करण सख्या कही जाती है। सूर्य मे प्रथम, द्वितीय, तृतीय, अष्टम, द्वादश भाव मे पाच पाच करण है। चतुर्थ, सप्तम मे चार चार करण। तथा छ नौ मे तीन २ करण। पचममे छ करण। दशममे दो करण। एकादशमे एक करण होता है॥१९॥ अब नाम कहते हैं। सूर्य से-प्रथम, द्वितीय, अष्टम मे लग्न, चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये ५ करण देते हैं। चतुर्थ मे चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र ये चार ग्रह करण देते है। नवम मे-लग्न, चन्द्र, गुरु ये तीन। छठे भाव मे सूर्य, मगल, शनि ये तीन करण देते है। सप्तम भाव मे लग्न, चन्द्र, बुध,

गुरु ये चार करणदाता। तृतीय मे सूर्य, मगल, गुरु, शुक्र, शनि ये पाच ग्रह। दशम मे गुरु, शुक्र ये दो पचभाव मे लग्न, सूर्य, चन्द्र, मगल, शुक्र, शनि ये छ करण देनेवाले ग्रह है। बारहवे मे सू० च० म० गु० श० ये ५ हैं। ग्यारहवे मे शुक्र १। यह सूर्य की करण सख्या तथा नाम हैं॥२०॥२१॥२२॥

भाग्यस्वयोश्च षड्वेश्म मृतिहोरासु पच च ॥ मानदुश्चिक्मयोरेक सुते वेदा अरिस्त्रियो ॥२३॥
त्रयो व्ययेष्टावाये च शून्य शीतकरस्य तु ॥ होरार्कारार्किमृगवोगज्ञार्केन्द्वार्किमार्गवाः ॥२४॥
जीवोर्कार्केन्दुलग्नारहोरेंदुगुरुभास्करौ ॥ सितज्ञार्या कुजतनुर्मदास्ते सितशीतगु ॥२५॥

चद्रमा की करण सख्या—चन्द्रमा से २।९ मे करणसख्या छ है। १।४।८ भाव मे पाच। ३।१० मे १। पचमभाव मे ४,६।७ भाव मे ३ हैं। १२ वे भाव मे करण सख्या ८ है। तथा ११ भाव मे करण सख्या नहीं है।।२३।। (करण नाम) करण देनेवालो के नाम-चन्द्रमा से प्रथम घर मे लग्न, सूर्य, मगल, शुक्र, शनि ये पाच हैं। दूसरे घर मे लग्न, सू० च०, बु०, शु० श० ये छ हैं। तीसरे मे गुरु एक ही है। चौथे मे लग्न सू० च० म० श० ये ५ हैं। पाचवे घर मे लग्न सू०, च० गु० ये ४ है। छठे घर मे बु० बृ० शुक्र ये ३ हैं। सातवे घर मे लग्न म० श० ये ३ हैं। आठवे घर मे लग्न च०, शु०, म०, श० ये ५ हैं। नवे घर मे लग्न सू० म० बु० गु० श० ये ६ हैं। दसवे घर मे श० १ है। ग्यारहवे घर कोई नहीं तथा बारहवे घर मे लग्न सहित सातो ग्रह करण देनेवाले है।।२४।।२५।।

होरार्कारार्किविज्जीवाः शनि स सकला क्रमात्॥ व्ययवेश्मसुतस्त्रीषु षट् सप्त धनधर्मयो ॥२६॥ होरामृत्स्वो शरा वेदा विक्रमे खे त्रय क्षते ॥ द्वौ भवे शून्यमेव स्यात्करण भूमिजस्य तु ॥२७॥ कुजस्यार्केबुधिज्जीवसिता लग्नशनी च ते ॥ सितारगुरुमदा स्युर्धर्मोलेपुकुज विना ॥२८॥ घस्रारगुरुशुक्रार्किलग्नानि कुजभास्करौ ॥ ओह्वर्कसितलग्नार्या एषु शुक्र विना तत ॥२९॥ विना शनि सप्तधर्मे सितेन्दुज्ञा वियत्तल ॥ अर्कार्किजेदुलग्नारा करण प्रोच्यते क्रमात् ॥३०॥

अयोत्पादिकार्ये भवनकरणकोष्ठकम्										
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	प्र०	•	•		•	•	•			५
२	द्वि०	•	•		•	•	•	•	•	७
३	तृ०		•	•	•	•	•	•		४
४	च०	•	•		•	•	•		•	६
५	पं०		•	•		•	•	•	•	६
६	ष०			•				•		२
७	स०	•	•		•	•	•		•	६
८	अ०	•	•		•	•	•		•	६
९	न०	•	•	•	•	•	•		•	७
१०	द०		•		•		•			३
११	ए०									०
१२	द्वा०	•	•	•	•			•	•	६

मंगल की करण संख्या—मंगल से ४।५।७।१२ वे भाव मे करण संख्या ६, २।९ मे ७,१।८ मे ५, ३ मे ४, २ मे ३, ६ मे २, ११ मे कोई नही॥

बिन्दु देनेवाले ग्रहो के नाम—मंगल से पहिले भाव मे सू० च० बु० बृ० शु० ये ५। दूसरे मे सू० च०बु०बृ० शु० श० और लग्न ये ७। तीसरे घर मे म०गु०शु०श० ये ४। चौथे घर मे सू० च० बु० बृ० शु० और लग्न ये ६। पाचवे घर मे च० म० गु० शु० श० लग्न ये ६। छठे घर मे म० श० २। सातवे घर मे सू० च० बु० बृ० शु० लग्न ये ६। आठवे घर मे सू० च० बु०, गु० लग्न ये ५। नवे घर मे सू० च० म० बु० बृ० शु० लग्न ये ७। दसवे घर मे च० बु० शु० ये ३, ग्यारहवे मे कोई नही। बारहवे घर मे सू० च० म० बु० श० लग्न ये ६

तनुस्त्यगृहकर्मारिधर्मेष्वग्निर्मूर्तौ करौ ॥ मातृस्त्रियो रसा लाभे शून्य पुत्रेष्व्यये शरा ॥३१॥
बुधस्यार्केन्दुगुरवो गुरुसूर्यबुधा क्रमात् ॥ लग्नार्कारार्किचद्रार्या ज्ञार्कार्या हि बुधस्य तु ॥३२॥
जीवारेन्द्वार्किलग्नानि शुक्रमदधरासुता ॥ ज्ञेन्दुलग्नार्कशुक्रार्या ज्ञार्कौ जीवेन्दुलग्नका ॥३३॥

अथोदाहरणार्थं बुधकरणकोष्ठकम्											
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	स०	०	०			०				३
२	द्वि०	०			०	०				३
३	तृ०	०	०	०		०		०	०	६
४	च	०			०	०				३
५	प०		०	०		०		०	०	५
६	ष०			०			०	०		३
७	स०	०	०		०	०	०		०	६
८	अ०	०			०					२
९	न०		०			०				२
१०	द०	०				०	०			३
११	ए०									०
१२	द्वा०		०	०			०	०	०	५

अर्कार्यशुक्राः शून्य च होरेन्द्वारार्किभार्गवाः ॥ रूपधनाययोः खे द्वौ व्यये सप्तकृतेऽर्णवाः ॥३४॥

बुध की बिन्दु सख्या–बुध से १।२।४।६।९।१० वे घर मे ३, ८ मे २, ३।७ भाव मे ६, ११ मे कुछ नही। ५।१२ मे ५ ॥ करण देनेवाले ग्रहो के नाम-बुध से पहिले घरमे सू० च० गु० ३। दूसरे भाव मे शु०बु०गु०३। तीसरे भाव मे सू० च० म० गु० श० लग्न ये ६। चौथे भाव मे सू० बु० गु० ये ३। पाचवे घर मे च० म० गु० श० लग्न ये ५। छठे घरमे,म०शु०श० ये ३। सातवे घर मे, सू० च० बु० बृ० श० लग्न ये ६। आठवे घर कोई नही। बारहवे मे च० म० शु० श० लग्न ये ५॥

गुरु की करण सख्या–गुर से २।११ मे १, १० मे २, १२ में ७, ६ मे ४, ३।८ मे ५, १।४।५।७।९ मे ३-३ सख्या जानना॥३१-३४॥

मूर्तिविक्रमयोः पच गुरो शेषेषु बहूम ॥ शुक्रेन्दुमन्दा लग्ने स्व आये मन्दश्च विक्रमे ॥३५॥लग्नारेन्दु–सन्मृगवः सुतेर्कार्यकुजा गृहे ॥ शुक्रमदेदवो शूने बुधशुक्रशनैश्चरा ॥३६॥ जीवारार्केन्दव शशी मद सर्वे विना व्यये ॥ कमणोऽन्दुशानी धर्मे मदारगुरवो मृतौ ॥३७॥

अथोवाहरणार्थं गुरुकरणकोष्ठकम्										
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	त०		०				०	०		३
२	द्वि०							०		१
३	तृ०		०	०	०		०	०		५
४	च०		०				०	०		३
५	प०	०		०		०				३
६	ष०		०	०		०	०			४
७	स०				०		०	०		३
८	अ०		०		०		०	०	०	५
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	द्वा०		०	०			०	०	०	५

गुरु से करण सख्या देनेवालो के नाम गुर से पहले घर मे च० शु० श० ये ३,२।११ मे श० १,३ मे लग्न च० म० बु० गु० ये ५,४ मे च० शु० श० ये ३,५ मे सू० म० गु० ये ३, ६मे च० म० गु० शु० ये४,७वेमे बु० शु० श० ये ३। आठ्वे मे लग्न च० बु० शु० श० ये ५। नवे मे

म० गु० श० ये३। दसवे मे च० श०२। ग्यारहवे मे श० १। बारहवे मे श० को छोड सब॥३५॥३६॥३७॥

लग्नार्किसितचन्द्रज्ञाः करणं च गुरोरिदम् ॥ सुतायुर्विक्रमेष्वक्षितनुस्वव्ययसेष्विषुः ॥३८॥ अष्टौ स्त्रियामरौ षड्मूर्धर्मे मित्रेऽब्धिसं भवे ॥ लग्ने स्वेऽर्कारविज्जीवमदाः सर्वे च कामभे ॥३९॥ अर्कार्यौ विक्रमस्थाने सुतेऽर्कारौ शुभे रविः ॥ सुखेऽर्कबुधजीवाः स्युर्भौमजौ मृतिभे द्विज ॥४०॥ शुक्रार्केन्द्वार्किलग्नार्याः शत्रौ शून्य भवे व्यये ॥ होरार्किबुधशुक्रार्यास्तिन्वारसेन्दिनाश्च खे ॥४१॥

अथ उदाहरणार्थं शुक्रकरणकोष्ठकम्

	ला०	सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	स०
१	त०	०		०	०	०		०		५
२	द्वि०	०		०	०	०		०		५
३	तृ०	०				०				२
४	च०	०			०	०				३
५	प०	०		०						२
६	ष०	०	०			०	०	०	०	६
७	स०	०	०	०	०	०	०	०	०	८
८	अ०			०	०					२
९	न०	०								१
१०	द०	०	०	०	०				०	५
११	ए०									०
१२	द्वा०				०	०	०	०	०	५

शुक्र की करण सख्या-शुक्र से ५।३ मे २ दो करण है। १।२।१०।१२ घर मे ५-५ करण है। सातवे मे ८ है। तथा ६ मे ६ करण है। नवे मे १ तथा चौथे मे ३ है। ११ वे मे नहीं है॥३८॥

ग्रहों के नाम १।२ घर में सू० म० बु० गु० श० ये ५ हैं। ७ वें घर में सब हैं। तीसरे में सू० बु० ये दो हैं। ५वें में सू० म० ये दो हैं। नवें में सू० बु० गु० ये ३ हैं। ८ में म० बु० ये दो हैं। ६ में सू० च० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं। ११वें नहीं हैं। १२ वें घर में बु० गु० शु० श०ल० ये ५ हैं। १० में सू० च० म० बु० लग्न ये ५ हैं॥३९॥४०॥४१॥

स्वस्त्रीधर्मेषु सप्तस्व मृतिहोरागृहेषु च ॥ आज्ञाभ्रातृव्यये वेदा रूपं शत्रौ सुते शराः ॥४२॥
आये शून्यं शनेरेव करणं प्रोच्यते बुधैः ॥ गृहे तनौ च लग्नार्कौ स्वस्त्रियोश्च रविं विना ॥४३॥
हित्वा धर्मे बुधं माने लग्नाररविचन्द्रजान् ॥ ततो भ्रातरि जीवार्कबुधशुक्राः क्षते रविः ॥४४॥
व्यये लग्नेदुमन्दार्का सितार्केन्दुज्ञलग्नकाः ॥ सुते मृतौ बुधार्कौ च हित्वाऽऽये न शनेर्विदः ॥४५॥

अथोदाहरणार्थं शनिबिन्दु कोष्ठकम्										
	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	सं०
१	त०		०	०	०	०	०	०		६
२	द्वि०		०	०	०	०	०	०	०	७
३	तृ०	०			०	०	०			४
४	च०		०	०	०	०	०	०		६
५	पं०	०	०		०		०		०	५
६	ष०	०								१
७	स०		०	०	०	०	०	०	०	७
८	अ०		०	०		०	०	०	०	६
९	न०	०	०	०		०	०	०	०	७
१०	द०		०			०	०	०		४
११	ए०									०
१२	द्वा०	०	०					०	०	४

शनि की करण सख्या—शनि से २।७।९ मे ७।७ है। नथा ३।१०।१२ मे ४।४ हैं। ६ मे १ तथा ५ मे ५ है। तथा १।४।८ मे ६ है। ११ मे नही है॥४२॥ करणदाता के नाम—शनि से चौथे मे १,४ मे च० म० बु० गु० शु० श० ये छ है। २।७ घर मे च० म० बु० गु० शु० श० ल० ये ७ है। १० मे च० गु० शु० श० ये ४ है। ३ मे सू० बु० गु० शु० ये ४ है। ६ मे सू० यह १ है। बारहवे मे सू० च० श० ल० ये ४ हैं। ५वे मे सू० च० बु० शु० ल० ये ५ है। ८ मे च० म० गु० शु० ल० ये छ है। ११ वे मे नही है॥४३॥४४॥४५॥

उक्ताश्न्ये स्थानदातार इति स्थान विदुर्बुधा ॥ अथ स्थानप्रहान्वक्ष्ये सुखबोधाय सूरिणाम् ॥४६॥ स्वायुस्तनुषु मदारसूर्याजीवबुधौ सुते ॥ विक्रमे शेन्दुलग्नानि लग्नार्कार्किकुजा गृहे ॥४७॥ ते च शेन्दुस्वभेचाऽऽये सर्वे शुक्र बिना व्यये ॥ लग्नशुक्रबुधा शत्रौ ते च जीवसुधाकरौ ॥४८॥

अथ उदाहरणार्थं सूर्यरेखाचक्रम्										
गृ०	भा०	सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०	।		।				।		३
२	द्वि०	।		।				।		३
३	तृ०		।		।				।	३
४	च०	।		।				।	।	४
५	प०				।	।				२
६	ष०		।		।	।	।		।	५
७	स०	।		।			।	।		४
८	अ०	।		।				।		३
९	न०	।		।	।	।		।		५
१०	द०	।	।	।	।			।	।	६
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	द्वा०			।	।		।		।	४

इस प्रकार बिन्दु निर्णय कहा गया। अब रेखा निर्णय कहा जाता है। सक्षेप मे जो ग्रह जिस भाव मे बिन्दु देते है। उनसे बाकी ग्रह रेखा देते हैं। यथा सूर्य से १।२।८ मे सू० म० श० ये तीन रेखा देते हैं। ५ मे बु० गु० ये २ है। ३ मे च० बु० ल० ये ३ है। ४ मे सू० म० श० ल० ये ४ हैं। १० मे सू० च० म० बु० श० ये ५ है। ११ मे सू० च० म० बु० गु० श० ल० ये ७ है। १२ मे बु० शु० ल० ये ३ हैं। छठे भाव मे च० बु० गु० शु० ल० ये ५ है। ७ मे सू० म० गु० श० ये ४ है। ९ मे सू० म० बु० श० ये ४ है॥४६–४८॥

शूनेऽर्कारार्किशुक्राश्च धर्मेऽर्कारार्किविद्गुरु ॥ लेन्दुजीवा कुजार्यौ शार्केन्द्वारार्कितनूशना ॥४९॥ जीवशुक्रबुधा भौमबुधशुक्रशनैश्चरा ॥ रवीन्द्वारार्किलग्नानि रवीन्द्वार्यज्ञभार्गवा ॥५०॥ अर्कज्ञजीवा शुक्रेन्दू ते च तौ लग्नभूसुतौ ॥ सर्वं शून्यं क्रमात्प्रोक्तं स्थानं शीतकरस्य च ॥५१॥

अथ उदाहरणार्थं चन्द्ररेखाकोष्ठकम्										
गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	त०		।		।	।				३
२	द्वि०			।		।				२
३	तृ०	।	।	।	।		।	।	।	७
४	च०				।	।	।			३
५	पं०			।	।		।	।		४
६	ष०	।	।	।				।	।	५
७	स०	।	।		।	।	।			५
८	अ०	।			।	।				३
९	भ०		।				।			२
१०	द०	।	।	।	।	।	।		।	७
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०									०

चन्द्रमा के भावो मे रेखा दाताओ के नाम—चन्द्रमा से प्रथम मे च० बु० गु०। दूसरे मे म० गु०। तीसरे मे सू० च० म० बु० शु० श० लग्न। चौथे मे बु० बृ० शु०। पाचवे मे म० बु० शु० श०। छठे मे सू० म० श० लग्न। सातवे मे सू० च० बु० गु० शु०। आठवे मे सू० बु० गु०। नवे मे च० शु०। दशवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० लग्न। ग्यारहवे मे सू० च० म० बु० गु० शु० श० लग्न॥४९–५१॥

लग्नमन्दकुजा भौमो होराज्ञेन्दुदिनाधिपा ॥ मन्दाराज्ञरवित्रेन्दुजीवार्कतनुभार्गवा ॥५२॥
मन्दारौ तौ सितश्चार्किकुजार्कार्यार्किलग्नकाः ॥ सर्वे गुरुसितौ स्थाने भौमस्यैव विदुर्बुधा ॥५३॥

अथोदाहरणार्थं मङ्गलरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०			।			।		।	३
२	द्वि०			।						१
३	तृ०	।	।		।				।	४
४	च०			।				।		२
५	प०	।			।					२
६	ष०	।	।		।	।	।			५
७	स०			।				।		२
८	अ०			।			।	।		३
९	न०							।		१
१०	द०	।		।		।		।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०					।	।			२

मगल के १२ भावो मे रेखादाताओ के नाम-प्रथम मे लग्न म० श० ये ३ है। २ रे मे म० १। ३ रे मे लग्न सू० च० बु० ये ४, ४ थे मे म० श० २, ५ वे मे सू० बु० २, ६ठे मे सू० च० गु०

शु० लग्न ५,७ वे मे, म० श० २, ८ वे मे म० शु० श० ३, ९वे मे श० १, १०वे मे सू० म० गु०
श० लग्न ५, ११ वे मे सब ८, १२ वे मे गु० शु० २॥५२-५३॥

लग्नमंदारशुक्रज्ञा लग्नारेन्दुसितार्कजाः ॥ शुक्रज्ञौ लग्नचन्द्रार्किसितारामार्किभार्गवाः ॥५४॥
जीवज्ञार्केन्दुलग्नानि भूमिपुत्रशनैश्चरौ ॥ तौ च लग्नेन्दुशुक्रार्या मंदारार्कजभार्गवाः ॥५५॥
लग्नमंदारविज्चन्द्राः सर्वे जीवज्ञभास्कराः ॥ गुरोर्लग्न सुखे जीवलग्नारार्कबुधा धने ॥५६॥
चन्द्रशुक्रौ च दुश्चिक्ये मंदार्यार्काः शनिर्व्यये ॥ सुते शुक्रेन्दुलग्नममन्दाश्चन्द्रं बिना त्वरौ ॥५७॥
लग्नारार्याऽर्केंदवोऽस्ते मृतौजीवार्कभूसुताः ॥ धर्मे शुक्रार्कलग्नेन्दुबुधा मद विनाऽऽयमे ॥५८॥

अथोदाहरणार्थं बुधरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	स०	स०
१	ल०			।	।		।	।	।	५
२	द्वि		।	।			।	।	।	५
३	तृ०				।		।			२
४	च०		।	।			।	।	।	५
५	प०	।			।		।			३
६	ष०	।	।		।	।			।	५
७	स०			।				।		२
८	अ०		।	।		।	।	।	।	६
९	न०	।		।	।		।	।		५
१०	द०		।	।	।			।	।	५
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०	।			।	।				३

अथ उदाहरणार्थं गुरुरेखाचक्रम्										
गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	न०	।		।	।	।			।	५
२	द्वि०	।	।	।	।	।	।		।	७
३	तृ०	।				।		।		३
४	च०	।	.	।	।	।			।	५
५	प०		।		।		।	।	।	५
६	ष०	।			।			।	।	४
७	स०	।	।	।		।			।	५
८	अ०	।		।		।				.३
९	न०	।	।		।		।		।	५
१०	द०	।		।	।	।	।		।	६
११	ए०	।	।	।	।	।	।		।	७
१२	द्वा०							।		१

बुध के १२ भावोंमें रेखा दाताओं के नाम—बुध से पहिले घर में म०, बु०, शु०, श०, लग्न ये ५ रेखा देते है। दूसरे में लग्न च० म० शु० श० रेखा देते है। तीसरे में बु० शु० ये दो। चौथे में च० म० गु० श० ल० ये ५ ५ में सू० बु० शु० ये ३। छठे में सू० च० बु० गु० ये ४ हैं। सातवे में म० श० ये २ है। आठवें में च० म० गु० शु० श० ल० ये छ हैं। नौवें में सू० म० बु० शु० श० ये ५ हैं। दशवे में च० म० बु० श० ल० ये ५ हैं। एकादश में आठो ही रेखा देते हैं। १२ में सू० बु० गु० ये ३ है। ॥५४॥५५॥

गुरु के १२ भावो के रेखादाताओं के नाम--गुरु से १।४ घर में सू० म० बु० गु० ल० ये ५ हैं। दूसरे में सू० च० म० बु० वृ० शु० ल० ये ७ है। तीसरे में सू० गु० श० ये ३ हैं। ५ वे में च० बु० शु० श० ल० ये ५ है। छठे में बु० शु० श० ल० ये ४ हैं। ७ वे में च० म० गु० ल० ये ४ हैं। ८ में सू० म० गु० ये ३ हैं। नौवें घर में सू० च० बु० शु० ये ४ हैं। ११ वे में शनि रहित सब रेखा देते हैं। १० में सू० म० बु० वृ० शु० ल० ये ६ है॥५६॥५७॥५८॥

माने गुरुबुधारार्कशुक्रहोरास्तथा विदुः ॥ लग्नशुक्रेन्दवस्ते आकर्थरास्ते त्ववर्जिताः ॥५९॥ सुतभे लग्नशशिजशशांकार्यार्किमार्गवाः ॥ आरौ शून्यं सिताऽर्केन्दुगुरुलग्नशनैश्चराः ॥६०॥ सर्वे रविं विना शुक्रगुरुमन्दाश्च मानभे ॥ सर्वे कुजेन्दुरवयः क्रमाद्भृगुसुतस्य च ॥६१॥

अथ उदाहरणार्थं शुक्ररेखाचक्रम्										
गृ०	भा०	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	त०		।				।		।	३
२	द्वि०		।				।		।	३
३	तृ०		।	।	।		।	।	।	६
४	च०		।	।			।	।	।	५
५	प०		।		।	।	।	।	।	६
६	षं०			।	।					२
७	स०									०
८	अ०	।	।			।	।	।	।	६
९	न०		।	।	।	।	।	।	।	७
१०	द०						।	।	।	३
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०	।	।	।						३

शुक्र के रेखा दाताओं के नाम—शुक्र से च० शु० ल० ये ३ रेखादाता प्रथम तथा द्वितीय भाव के हैं। तीसरे में च० मं० बु० श० ल० शु० ये ६ हैं। ४ में सू० च० मं० शु० ल० ये ५ हैं। ५ वें में ल० च० बु० गु० शु० श० ये ६ हैं। छठे घर में मं० बु० ये दो। सातवें में नहीं है। ८वें में सू० च० गु० शु० श० ल० ये ६ हैं। नौवें में च० मं० बु० बृ० शु० श० ल० ये ७ हैं। १० वें घर में शु० श० ये दो हैं। ११वेंमें सब रेखा देते हैं। १२ वें में सू० च० मं० दे ३ हैं॥५९॥६०॥६१॥

शने रवितनू सूर्यो लग्नेन्दुकुजसूर्यजाः ॥ लग्नार्कौ जीवमदाराः सर्वे सूर्यं विना क्षते ॥६२॥
अर्कोऽर्कजौ बुधोऽर्कारतनुजाः सकलास्ततः ॥ कुजज्ञगुरुशुक्राश्च क्रमात्स्थानमिद विदुः ॥६३॥ तनौ
सूर्ये च वह्निः स्याद्‌भ्रिक्ये द्वौ धने शराः ॥बुद्धिमृत्व्यंकरिः फेषु षट् खेशक्षतराशिषु ॥६४॥

अथोदाहरणार्थं शनिरेखाचक्रम्										
प्र०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	त०	।							।	२
२	द्वि०	।								१
३	तृ०		।	।				।	।	४
४	च०	।							।	२
५	प०			।		।		।		३
६	ष०		।	।	।	।	।	।	।	७
७	स०	।								१
८	अ०	।			।					२
९	न०				।					१
१०	द०	।		।	।				।	४
११	ए०	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	द्वा०			।	।	।	।			४

शनि की रेखादाताओं के नाम—शनि से प्रथम भाव में सू० ल० २ है। दूसरे में सू० एक ही है। तीन में च० म० श० ल० ४ है। ४ में सू० ल० २ है। ५वें में म० गु० श० ३ है। ६ में च० म० बु० बृ० शु० श० ल० ७ है। ८ में सू० बु० २ है। ७ में-सू० १ है। ९वें में बु० १ है। १० वें में-सू० म० बु० ल० ४ है। एकादश में सब ८ है। १२ वें में म० बु० गु० शु० ४ है॥६२॥६३॥

लग्न के बिन्दु तथा रेखा विन्यास—प्रथम बिन्दु वित्तग्न-लग्न तथा ४ में ३ है। तीसरे में ४। दूसरे में ५। पांच, आठ, नौवें द्वादश में ६ है। छठे, ग्यारहवें, दसवें में ४-१ है। तथा सातवें में ७ बिन्दु है॥६४॥

रूप स्त्रियां गुरु त्यक्त्वा लग्नस्य करण त्विदम् ॥ होरासूर्येन्दवो लग्ने लग्नारेंद्विनसूर्यजा ॥६५॥ गुरुज्ञौ लग्नचद्रारा ससूचमबुसौरय ॥ क्षते शुक्रस्तथा चैक कामे सर्वे गुरु विना ॥६६॥ मृतौ भृगुबुधौ त्यक्त्वा धर्मे गुर्वसितौ विना ॥ कर्मण्याये तथा शुक्रो व्यये सूर्येन्दुवर्जिता ॥६७॥

अथोदाहरणार्थं लग्नबिंदुकोष्ठकम्										
गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०	०	०						०	३
२	द्वि०	०	०	०				०	०	५
३	तृ०				०	०				२
४	च०	०	०						०	३
५	प०	०	०	०	०			०	०	६
६	ष०					०				१
७	स०	०	०	०	०		०	०	०	७
८	अ०	०	०	०		०		०	०	६
९	न०	०	०	०	०			०	०	६
१०	द०						०			१
११	ए०						०			१
१२	द्वा०			०	०	०	०	०	०	६

लग्न मे विन्दुदाताओ के नाम—लग्न मे-लग्न तथा सू० च० ये ३ है। दूसरे मे ल० सू० च० म० श० ये ५ हैं। ३ मे बु० गु० ये २ है। ४ मे च० म० ल० ३ हैं। ५ मे ल० सू० च० म० बु० श० ये ६ हैं। ६ मे शु० यह १ है। ७ वे मे सू० च० म० बु० शु० श० ये ७ है। ८ मे सू० च० म० गु० श० ल० ये ६ है। ९वे मे सू० च० म० बु० श० ल० ये ६ है। १० मे तथा ११ मे शु० यह १-१ ही है। १२ वे मे म० बु० गु० शु० श० ल० ये ■ है॥६५॥६६॥६८॥

लग्नस्येद तु सप्रोक्त करणं द्विजपुगव ॥ अथ स्थान प्रवक्ष्यामि लग्नस्य द्विजपुगव ॥६८॥ आर्किसशुक्रगुर्वारा: सौम्यदेवेज्यभार्गवाः ॥ हित्वा सौम्यगुरु शेषा मूर्तेज्यभृगुसूर्यजा ॥६९॥

तथा जीवभृगू युद्धौ सर्वे शुक्रं विना क्षते॥ जीव एकस्तथा द्यूने मृतौ सौम्यभृगू तथा ॥७०॥ धर्मे गुरुसितावेव खे सर्वे शुक्रमतरा ॥ सूर्यचन्द्रौ तथा रिष्फे स्थान लग्नस्य कीर्तितम् ॥७१॥

अथ उदाहरणार्थ लग्नरेखाचक्रम्

गृ०	भा०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	स०
१	ल०			।	।	।	।	।		५
२	द्वि०				।	।	।			३
३	तृ०	।	।	।			।	।	।	६
४	च०	।			।	।	।	।		५
५	प०					।	।			२
६	ष०		।		।	।	।		।	५
७	स०					।				१
८	अ०				।		।			२
९	न०					।	।			२
१०	द०	।	।	।	।	।		।	।	७
११	ए०	।	।	।	।	।		।	।	७
१२	द्वा०	।	।							२

लग्न के १२ भावों में रेखाप्रदो के नाम—लग्न मे म० बु० गु० शु० श० ये ५ हैं। दूसरे मे बु० गु० शु० ये ३ हैं। तीसरे मे सू० च० म० शु० श० ल० ये ६ है। चौथे मे सू० बु० गु० शु० श० ये ५ है। ५ वे मे गु० शु० ये दो है। ६ मे सू० च० म० बु० गु० श० ये ६ है। सातवे मे गु० यह १ है। ८ वे मे बु० शु० ये दो हैं। नौवे मे गु० शु० दो है। १०-११ भाव मे सू० च० म० बु० गु० श० ल० ये ७-७ है। १२ वे मे सू० च० ये दो है॥६८॥६९॥७०॥७१॥

करण चिदुवरप्रोक्त स्थान रेखा तयोच्यते ॥ मुनिदिग्रमुवेदाद्रिशिव्यद्रष्टघनवेषव ॥७२॥ रुद्रार्कावर्गणा मेषाद्विषयेष्वष्टवायव ॥ पक्तिस्वरेषव सूर्याद्वर्गणा प्रोच्यते बुधै ॥७३॥ अष्ट

रेखा लिखेदूर्ध्वगास्तिर्यग्रेखास्त्रयोदश ॥ तदा चतुरशीतिः स्युर्ग्रहयोगे पदानि तु ॥७४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोरायामुत्तरभागेऽष्टकवर्गप्रधान प्रथमोऽध्याय. ॥१॥

उपदेश—

करण से बिन्दु जानना। स्थान नाम से रेखा समझना चाहिए। सूर्यादि ग्रहो के ध्रुवाक और १२ भावो के ध्रुवाक कहते है। मेष ७, वृ०१० मि०८, क०४, सि०१०, क०५, तु०७, वृ०८, ध०९ म०५, कु०११, मी०१२। ये मेषादि १२ राशियो के ध्रुवाक हुए। अब सूर्यादि ग्रहो के ध्रुवाक कहे जाते है-सू० ५ च० ५, म०८, बु०५, गु०१०, शु०७, श०५ ध्रुवाक है।।७२।।७३।। अष्टकवर्ग के चक्र की रीति कहते है। खडी ९ रेखा करना। तिरछी १४ रेखा करना। तो १२X ८=९६ कोष्टक होगे। उनमे ८ घरो मे ग्रह तथा लग्न और १२ घरो मे लग्न आदि १२ भाव लिखना चाहिए। बीच के कोष्टको मे ऊपर कहे अनुसार 'बिन्दु' 'रेखा' लिखनी चाहिए।।७४।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे अष्टकवर्ग निरुपण
नाम प्रथमोऽध्याय ॥१॥

अथ त्रिकोणशोधनमाह

राशिचक्र यथामार्गं निक्षिप्याष्टग्रहस्य च॥त्रिकोणशोधन कुर्याद्वावो सर्वेषु राशिषु॥१॥

त्रिकोण शोधन प्रकार

सूर्य से शनि तक सात ग्रह और लग्न (८) इनका शून्य रेखात्मक 'अष्टक वर्ग' स्थापित करके त्रिकोण शोधन करना चाहिए।।१।।

अथ रवेरष्टकवर्गः ४८							
सू०	च०	म०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११	०	७	१०
८	०	८	१०	०	०	८	११
९	०	९	११	०	०	९	१२
१०	०	१०	१२	०	०	१०	०
११	०	११	०	०	०	११	०
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ चन्द्राष्टकवर्गः ४९							
सू०	च०	मं०	बु०	बृ०	शु०	श०	ल०
३	१	२	१	१	३	३	३
६	३	३	३	२	४	५	६
७	६	५	४	४	५	६	१०
८	७	६	५	७	७	११	११
१०	९	१०	७	८	९	०	०
११	१०	११	८	१०	१०	०	०
०	११	०	१०	११	११	०	०
०	०	०	११	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

उदाहरण रेखास्थापन की विधि यह है कि-जो ग्रह जिस भाव में हो उस ग्रह की रेखा उस भाव से गणना करके चक्र में लिखित स्थानों में रेखा लिखना बाकी स्थानों में शून्य लिखना। जैसे कि-(चक्र में देखें) सूर्याष्टक वर्ग चक्र में सूर्य ११ भावों में है और सूर्य के रेखा स्थान १।२।४।७।८।९।१०।११ हैं अतः एकादश भाव से इन स्थानों में रेखा और बाकी स्थानों में शून्य रखा गया है। चन्द्रमा पंचमभाव में है अतः चन्द्रमा से ३।६।१०।११ भावों में रेखा और अन्य भावों में शून्य है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह तथा लग्न के चक्रों में लिखे अंकों के स्थान में रेखा लिखना बाकी में शून्य लिखना। इसका तात्पर्य यह है कि अमुक ग्रह अमुक ग्रह और भाव से अमुक (अर्थात् रेखांकित) स्थानों में शुभफलदाता है और शून्यांकित स्थानों में अशुभफलदायक है।

भौमस्याष्टकवर्गः ३९							
र०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
३							
५	३	१	३	६	६	१	१
६	६	२	५	१०	८	४	३
१०	११	४	६	११	११	७	६
११	०	७	११	१२	१२	८	१०
०	०	८	०	०	०	९	११
०	०	१०	०	०	०	१०	०
०	०	११	०	०	०	११	०

बुधस्याष्टकवर्गः ५४							
र०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
		१	१		१	१	
५	३	२	३	६	२	२	१
६	४	४	५	८	३	४	२
९	६	७	६	११	४	७	४
११	८	८	९	१२	५	८	९
१२	१०	९	१०	०	८	९	८
०	११	१०	११	०	९	१०	१०
०	०	११	१२	०	११	११	११

गुरोरष्टकवर्गः ५६							
र०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
१	२	१	१	१	२	३	१
२	५	२	२	२	५	५	२
३	६	४	४	३	६	६	४
४	९	७	५	४	९	१२	५
७	११	८	६	७	१०	०	६
८	०	१०	९	८	११	०	७
९	०	११	१०	१०	०	०	८
१०	०	०	११	११	०	०	१०
११	०	०	०	०	०	०	११
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

शुक्रस्याष्टकवर्गः ५२							
र०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
८	१	३	३	५	१	३	१
११	२	४	५	८	२	४	२
१२	३	६	६	९	३	५	३
०	४	९	९	१०	४	८	४
०	५	११	११	११	५	९	५
०	८	१२	०	०	८	१०	८
०	९	०	०	०	९	११	९
०	११	०	०	०	१०	०	११
०	१२	०	०	०	११	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

शनेरष्टकवर्गः ३९							
र०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
१	३	३	६	५	६	३	१
२	६	५	८	६	११	५	३
४	११	६	९	११	१२	६	४
७	०	१०	१०	१२	०	११	६
८	०	११	११	०	०	०	१०
१०	०	१२	१२	०	०	०	११
११	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

लग्नाष्टकवर्गः ५२							
र०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०
३	३	१	१	१	१	१	३
४	६	३	२	२	२	३	६
६	१०	६	४	४	३	४	१०
१०	११	१०	६	५	४	६	११
११	१२	११	८	६	५	१०	०
१२	०	०	१०	७	८	११	०
०	०	०	११	९	९	०	०
०	०	०	०	१०	०	०	०
०	०	०	०	११	०	०	०

द्वादशभावस्पष्टचक्रम्												
ल०	सं०	ध०	सं०	स०	सं०	सु०	सं०	सु०	सं०	श०	सं०	भा०
६	७	७	८	८	८	९	९	१०	११	११	०	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अं०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	०८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	५२	२१	५०	वि०
जा०	सं०	आ०	सं०	ध०	सं०	क	सं०	ला०	सं०	व्य०	सं०	भा०
०	१	१	२	२	२	३	३	४	५	५	६	रा०
१६	००	१५	००	१४	२९	१४	२९	१४	००	१५	००	अं०
१७	५५	३४	१२	५१	२९	८	२९	५१	१२	३४	५५	क०
१९	५०	२१	५२	२३	५४	२५	५४	२३	४२	२१	५०	वि०

तात्कालिका स्पष्टा ग्रहाः								
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	रा०	के०
४	१०	४	४	५	६	७	६	०
२३	२६	२७	२१	१३	०१	१५	२०	२०
२८	३०	४५	३४	२७	५८	०५	०५	०५
१८	३३	३८	४५	३६	३४	१२	१५	१५
५७	७२७	३९	९९	१३	७१	२	३	३
२२	५०	३६	४८	१८	२२	४२	११	११

जन्मलग्नम्

८ श०
रा०
वृ० ६
सू०
बु०५
म०
९
७ शु०
१०
४
च०
११
के०
१
३
१२
२

उदाहरण

सूर्यरेखाचक्रम्												
भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
चं०	०	।	।	०	०	०	।	०	०	।	०	०
म०	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
बु०	।	०	।	।	०	०	।	।	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	।	०	०	।	०	।	०	०
शु०	०	०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।
श०	०	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	।
ल०	०	०	०	।	।	।	०	०	।	।	०	।
यो०	१ ७	४ ४	३ ५	३ ५	५ ३	४ ४	५ ३	५ ३	५ ३	५ ३	३ ५	५ ३

सूर्यत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशि	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहा	सू० चं०बु०	बृ०	रा० शु०	श०			मं०		के०			
रेखा	५	४	५	५	५	५	३	५	१	४	३	३
त्रि०	४	०	२	२	४	१	०	२	०	०	०	०
एका०	४	०	२	२	२	१	०	०	०	०	०	०
पिण्ड	राशिपिंड ८३ ग्रहपिंड ९४ यो० १७७											

चन्द्ररेखाचक्रम्												
भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			।	।	।		।	।				।
चं०	।	।	।		।		।			।	।	
म०			।				।	।			।	।
बु०	।	।		।	।		।	।		।		।
बृ०	।		।				।		।	।		।
शु०			।	।	।		।		।	।	।	
श०				।		।	।					।
ल०				।	।				।			।
यो०	३ ५	२ ६	५ ३	५ ३	५ ३	१ ७	७ १	३ ५	३ ५	४ ४	३ ५	६ २

चन्द्रत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशयः	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
ग्रहा.	श०		के०				सू०मं० बु०	शु०	रा० गु०			
रेखा पिं० एका०	३ ० ०	६ १ ३	३ ० ०	२ १ ०	५ ३ २	५ ७ २	५ २ २	१ ० ०	७ ४ ३	३ ० ०	३ ० ०	४ २ २

राशि पिं० १२९ ग्रह पिं० ७१ योग २००

पिण्ड

उदाहरण

भौमाष्टकचक्रम्

राशयः	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	१	०	०	१	०	०	०	१	१	०	०	०
च०	०	१	०	०	०	०	१	०	०	१	०	०
मं०	०	१	०	०	१	१	०	१	१	०	१	१
बु०	१	०	१	१	०	०	०	०	१	०	०	०
गु०	०	०	०	०	१	०	०	०	१	१	१	०
शु०	०	०	०	०	०	१	०	१	०	०	१	१
श०	०	१	०	०	१	०	०	१	१	१	१	१
ल०	०	०	१	१	०	०	१	०	१	०	१	०
रे०यो. त्रिं०यो.	२ ६	३ ५	२ १	३ ५	१ ५	७ ६	२ ६	४ ४	६ ७	१ ५	५ १	१ ५

भौमत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशयः	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहाः	सू०मं० बु०	शु०	गु०	रा०			श०					
रेखा पिं० एका०	३ १ १	३ ० ०	२ ० ०	४ १ १	६ ४ ४	१ १ ०	५ ३ २	३ ० ०	३ ० ०	३ १ १	३ ० ०	३ ० ०

राशि पिं० ९६ ग्रह पिं० ३३ योग १३०

पिण्ड

बुधरेखाष्टकचक्रम्

भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०			।	।	०		।	०	।	।	०	
च०			।	।		।		।		।		।
म०		।	०		।	।	।	।	।		।	।
बु०	।		।	।	०			।	।	।	।	
बृ०					।		।			।	।	
शु०		।		।	।		।	।	।	।	।	
श०		।	।		।			।	।	।	।	।
ल०		।		।	।		।	।		।		।
रे०यो	१	४	४	५	५	२	४	६	५	६	५	४
वि०यो०	७	४	४	३	३	६	४	२	३	२	३	४

बुधत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशय	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
ग्रहा	सू० म० बु०	बृ०	शु०	श०			च०					
रेखा	५	२	४	६	५	६	५	४	१	४	४	५
त्रि०	४	०	०	२	४	४	१	०	०	२	०	१
एका०	४	०	०	२	४	३	१	०	०	२	०	१
पिण्ड			राशि पिंड १४१ गृह पिंड ९५ योग २३७									

गुरुरेखाष्टकचक्रम्

भाव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	।	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
च०	०	।	०	०	०	।	०	।	।	०	०	।
म०	०	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।	।
बु०	०	।	।	।	०	०	।	।	।	०	।	।
बृ०	।	।	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।
शु०	०	।	०	।	०	।	०	०	।	।	।	०
श०	।	०	०	।	०	।	।	०	०	०	०	०
ल०	।	।	०	।	।	०	।	।	०	।	।	।
रे०यो०	४	७	२	४	३	६	५	५	६	३	५	६
वि०यो०	४	१	६	४	५	२	३	३	२	५	३	२

शुक्रत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशयः	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५
ग्रहा	गु०	शु०	श०			च०						सू०म० बु०
रेखा	६	५	५	६	४	७	२	४	३	६	५	५
त्रि०	३	०	३	२	१	२	०	०	०	१	३	१
ऐका	३	०	३	२	०	१	०	०	०	०	३	१
पिण्ड	राशि पिं ८५ ग्रह पिं ५८ योग १४३											

शुक्ररेखाष्टकच०

भावा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	०	०	०	०	।	०	०	।	।	०	०
च०	।	०	।	।	।	।	।	।	।	०	०	।
म०	।	।	०	।	०	०	।	०	।	।	०	०
बु०	।	०	।	।	०	०	।	०	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	०	०	।	।	।	।	०	०
शु०	।	।	।	।	।	०	०	।	।	।	।	०
श०	०	०	०	।	।	।	०	०	।	।	।	।
ल०	०	।	।	०	।	०	।	।	।	।	।	०
रेखा	४	३	४	६	४	३	५	४	८	७	३	२
वि०शो	४	५	४	२	४	५	३	४	०	१	५	६

शुक्रत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

राशय	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
ग्रहा	शु	श०			च०						सू०म० बु०	
रेखा	५	४	८	७	३	२	४	३	४	६	४	३
त्रि०	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
ऐका०	२	२	४	४	०	०	०	०	१	४	०	०
पिण्ड	राशि पिं ११० ग्रह पिं २४ योग १३४											

शनिरेखाष्टकचक्रम्

भाया	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	०	।	०	०	।	।	०	।	।	०	।	।
च०	०	०	।	०	०	०	।	०	०	।	०	०
म०	।	०	।	।	०	०	०	।	।	।	०	०
बु०	।	०	।	।	०	०	०	।	।	।	०	०
बृ०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।	।	०
शु०	०	०	०	०	०	।	०	०	०	०	।	।
श०	०	०	०	।	०	।	।	०	०	०	०	।
ल०	०	०	०	।	।	०	।	०	।	।	०	।
रे०यो०	२	१	३	५	३	३	३	३	४	५	३	४
बि०यो०	६	७	५	३	५	५	५	५	४	३	५	४

शनित्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्

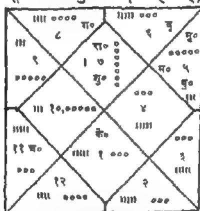
राशय	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७
ग्रहा	श०								सू०म० बु०	बृ०	शु०	
रेखा	३	४	५	३	४	२	१	३	५	३	३	३
त्रि०	०	२	४	०	१	०	०	०	२	१	२	०
ऐका	०	१	४	०	०	०	०	०	२	१	२	०
पिण्ड	राशि पिंड ४७ ग्रह पिंड ३८ योग ८५											

लग्नरेखाष्टकचक्रम्

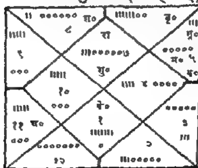
भा०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
सू०	।	।	०	।	०	०	०	।	।	।	०	०
च०	०	।	।	।	०	०	।	०	०	।	०	०
म०	।	०	०	।	०	०	०	।	।	०	।	०
बु०	।	०	।	०	।	०	।	।	।	०	।	०
बृ०	।	०	।	।	।	।	०	।	।	।	०	।
शु०	।	।	।	।	।	०	०	।	।	०	०	०
श०	०	।	०	।	।	०	।	०	०	०	।	।
ल०	०	०	०	।	।	०	०	०	।	०	०	।
रे०यो०	५	४	४	६	५	१	३	५	६	३	३	३
बि०यो	३	४	४	२	३	७	५	३	२	५	५	५

लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनचक्रम्												
राशयः	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
ग्रहाः	शु०	श०			च०						सू०मं० बु०	बृ०
रेखा	३	५	६	३	३	२	५	४	४	६	५	१
त्रि०	०	२	१	२	०	०	०	३	१	३	०	०
ऐ०	०	२	१	२	१	०	०	३	१	३	०	०
पिण्ड	राशि पिंड ४७ ग्रह पिंड ३८ योग ८५											

सूर्याष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



चन्द्राष्टकवर्गकुण्डली (उदाहरणम्)



अथ लग्नत्रिकोणैकाधिपत्यशोधनम्

ल०								च०	श०बु०	सू०गु०	शु०मं०	ग्रहा
मे०	वृ०	मि०	क०	सि	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	कु०	मी०	राशयः
४	५	५	३	३	२	५	६	३	५	४	४	रेखा
१	३	१	२	२	२	१	३	०	३	०	१	त्रि०शो
१	२	०	०	०	०	१	२	०	३	०	१	ए०शो०

ग्रहपिंड ४५ राशि पिंड ७७ उ०योग पिंड २२

त्रिकोणं तु कथं प्रोक्तं मेषसिंहधनुः क्रमात् ॥ वृषकन्यामृगाख्येषु तुलाकुम्भयुगेषु च ॥२॥ कर्कवृश्चिकमीनास्ते त्रिकोणाः स्युः परस्परम् ॥ त्रिकोणेषु च यन्न्यून तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्॥३॥ एकस्मिन् भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ॥ समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोध्य बुद्धिमान् ॥४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उ० ख० त्रिकोणशोधन
नाम द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

त्रिकोण कैसे जानना सो कहते हैं। मेष सिंह धनु इसी प्रकार वृष कन्या, मकर और मिथुन तुला कुंभ, कर्क वृश्चिक मीन ये चारो विभाग परस्पर त्रिकोण है। (१) इनमें जो न्यून संख्यावाली राशि है उसकी स्पष्टसंख्या अधिक संख्यावाली राशियों की स्पष्ट में घटाना (२) यदि एक राशि में शून्य है तो नही घटाना (३) और सब राशि मे समान संख्या हो तो सबस्थानो मे शून्य अंक प्राप्त होगा। इन तीन प्रकारो को ध्यान मे रखकर त्रिकोण शोधन करे॥२-४॥

त्रिकोण शोधन का उदाहरण—त्रिकोण शोधन मे जो कम संख्या वाली राशि है, उसका फलांक तीनो जगह घटाना (१) यथा-सूर्य के अष्टक वर्ग मे-१-मेष के नीचे २-सिंह के नीचे ३ धन के नीचे ४-यहां २ की संख्या को तीनो जगह घटाया तो मेष के नीचे-० । सिंह के नीचे-१। धन के नीचे २ । २-दूसरा प्रकार-किसी एक राशि के नीचे शून्य हो तो यथास्थित रहता है। जैसे-कल्पित उदाहरण वृष के नीचे का रेखाफल-३ । कन्या के नीचे- ५। मकर के नीचे-० । यहा मकर राशि के नीचे रेखाफल-० है, अतः यथास्थित अंक रहे॥ ३-तीसरा प्रकार-यदि तीनों राशियों मे रेखाफल समान हो तो सबके नीचे शून्य होगा। जैसे गुरु के अष्टक वर्ग मे वृष के नीचे रेखाफल- ५-कन्या के नीचे-५, मकर के नीचे भी-५ तो ५ से शोधन होने पर तीनों जगह शून्य प्राप्त हुआ वृष-० । कन्या-० । मकर-० ।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० ख० भा० प्र० त्रिकोणशोधननाम
द्वितीयोऽध्याय ॥२॥

अथैकाधिपत्यशोधनमाह

एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यता ॥ क्षेत्रद्वये फलानि स्युस्तदा संशोधयेद्बुधः ॥१॥ क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् ग्रहवर्जिते ॥ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥२॥ अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् ग्रहवर्जिते ॥ फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ॥३॥ उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यं कदाचन ॥ उभयत्रग्रहाभावे समत्वे सकलं त्यजेत् ॥४॥ सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं संशोध्यमग्रहे ॥ कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ॥५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे एकाधिपत्यशोधनं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

पूर्वोक्त प्रकार से त्रिकोण शोधन करने के बाद ऐकाधिपत्य शोधन करना चाहिए। (यहां ध्यान रखना चाहिए कि 'फल' त्रिकोण-शोधित अंक का नाम है।)

ऐकाधिपत्यशोधन के नियम—

(१) क्षीणेन सह चान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते।

१-दोनों राशि ग्रहरहित हों तो अधिक में न्यून का शोधन करना।

(२) उभयोर्ग्रहसयोगे न संशोध्यं कदाचन।

२-दोनों राशि स्वग्रह हों तो शोधन नहीं करना।

(३) ग्रहयुक्ते फलैर्हीने ग्रहाभावे फलाधिके। क्रमेण सममन्यास्मिन् शोधयेत् ग्रहवर्जिते।

३-ग्रहयुक्तराशि कमफल हो, अग्रह अधिक हो तो अधिक में अल्प घटाना, सग्रह का फल यथावत् रखना।

(४) फलाधिके ग्रहैर्युक्ते चान्यस्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।

४-सग्रह राशि फलाधिक हो तो अग्रह राशि का फल शून्य होता है।

(५) उभयत्र ग्रहाभावे समत्वे सकलं त्यजेत्।

५-दोनों अग्रह हों, फल तुल्य हों तो दोनों में शून्य होगा।

(६) सग्रहाग्रहयोस्तुल्ये सर्वं संशोध्यमग्रहे।

६-यदि एक सग्रह दूसरी अग्रह हो, फल समान हों तो अग्रह के फल का शून्य कर देना।

(७) कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्।

७-कर्क और सिंह अपने स्वामी की १-१ राशि होने से शोधन नहीं होता॥१-५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे भावप्रकाशिकायां ऐकाधिपत्यशोधनं नाम तृतीयोऽध्यायः॥३॥

अथ पिंडोत्पत्तिमाह

शोध्यावशेषं संस्थाप्य राशिमानेन वर्द्धयेत् ॥ ग्रहयुक्तेऽपि तद्राशौ ग्रहमानेन वर्द्धयेत् ॥१॥

अथ गुणकध्रुवाकानाह

गोसिंहौ दशगुणितौ वसुभिर्मिथुनालिनौ ॥ वणिङ्मेषौ तु मुनिभिः कन्यकामकरौ शरैः ॥ शेषाः स्वमानगुणिता राशिमाना इमे क्रमात् ॥१॥ जीवारशुक्रसौम्यानां दशवसुमुनीन्द्रियं क्रमाद्गुणकाः ॥ बुधस्य सप्त शेषाणां ग्रहगुणैर्गुणयेत् पृथक् पृथक्कार्याः ॥२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेऽधारोऽशे पिंडोत्पत्तिकथनं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

सूर्य से विचारणीय फल, अपना प्रभाव, शक्ति तथा अपने पिता का स्वास्थ्य, जीवन, मरण आदि। चन्द्रमा से मानसिक स्थिति बुद्धि (बोध=ज्ञान) तथा माता के विषय में स्वास्थ्य, जीवन आदि विचारना चाहिए। मंगल से बल साहस, भ्राता सम्बन्धी विचार, भूमि तथा गुणो का विचार। बुध से व्यापार वृत्ति शुभाशुभ कर्म का विचार करना। बृहस्पतिसे शरीरकी पुष्टता तथा पुत्रसन्तान सम्बन्धी विचार धन तथा बुद्धि का विचार करना।। शुक्र से विवाह, भोग तथा वाहन का विचार एवं भार्या का स्वरूप आदि का विचार।। शनि से आयु का विचार स्वास्थ्य दुःख, शोक भय हानि आदि का विचार करना। ग्रहों मे स्थिरकारकता-सूर्य -पिता। चन्द्रमा मातृकारक। मंगल भ्राता। बुध मित्र। बृहस्पति मामा। शुक्र स्त्री एवं ज्ञान और पुण्य। शनि मृत्युकारक है। आगे जो इन ग्रहों के नक्षत्र बताये जायंगे उनमें उपर्युक्त फल का विचार करना चाहिए।।ये बताये गये कारक ग्रह तथा भावोंके गुणक से शोधित पिण्ड संख्या को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे उस संख्या के नक्षत्र पर जब शनि हो तब भावानुसार जननी, बन्धु सहोदर भ्राता, पुत्र स्त्री आदि का नाश एवं स्वयं जातक की मृत्यु का विचार करना।।७।। (शार्दूलविक्रीडित)

आदित्याष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ॥ अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ।।८।।
तद्राशिफलसंख्याभिर्वर्द्धयेद्योगपिण्डकम् ॥ सप्तविंशोद्धृत शेष नक्षत्र याति भानुजम् ।।९।।
तस्मिन्काले तस्य तस्य भावस्यार्ति विनिर्दिशेत् ॥ तस्मिन्काले पितृक्लेशो भवतीति न संशय
।।१०।। तत्त्रिकोणगते वापि पिता पितृसमोऽपि वा ॥ मरणं तस्य जानीयाद्दशाछिद्रेषु कल्पयेत्
।।११।। अर्कात्तु तुर्यगे राहौ मन्दे वा भूमिनन्दने ॥ गुरुशुक्रेक्षणमृते पितृहा जायते नरः ।।१२।।
लग्नाच्चन्द्राद्गुरुस्थाने याते सूर्यसुते यदि ॥ पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते ।।१३।।
दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तम ॥ लग्नात्सुखेशराशीशदशायां च पितृक्षय ।।१४।।
सुखनाथदशायां तु बहुप्राप्तेश्च संशय ॥ पितृजन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा ।।१५।। तेनैव
पितृकार्याणि कारयेन्नात्र संशयः ॥ सुखेशे नामसंप्राप्ते चन्द्रलग्नाद्विशेषतः ।।१६।। पितृगृह
समायुक्ते जातः पितृवशानुगः ॥ तेनैव पितृकार्याणां कर्मशेष समापयेत् ।।१७।।

(अब फलाफल विचार की रीति कहते है गणित सिद्ध ग्रहो द्वारा सूर्याष्टक वर्ग के पिण्डाक संख्या पर विचार करने के लिए) सूर्य से नवमभावराशि पिता का स्थान है, उस नवमभाव की राशि के फलाव से सूर्याष्टक वर्ग के पिण्ड को गुणा करके २७ का भाग देने पर जो शेष रहे सो सूर्य का नक्षत्र जानना। उस नक्षत्र पर सूर्य का (गोचर) संचार होने पर सूर्य जब तक उस नक्षत्र पर रहे तब तक कथित भाव की हानि तथा पिता को क्लेश, या कष्ट होता है इसमें कोई संशय नहीं है। और उस नक्षत्र से ५।१९ नक्षत्र पर भी सूर्य संचार होने पर पिता या चाचा, ताऊ (पिता के ज्येष्ठ भ्राता) को मरण या कष्ट निश्चय होता है। यह समस्त विचार सूर्य की दशा अथवा उस भाव की चरपर्यायदशा के वर्ष में अवश्य करना चाहिए। (अब कुछ विशेष योग कहते है) सूर्य से चतुर्थ भाव में राहु हो या मंगल अथवा शनि हो और गुरु तथा शुक्र की दृष्टि नहीं हो तो (दशानुकूल समय में) पिता की मृत्यु होती है।।

लग्न से या चन्द्रमा से नवम स्थान पर शनि हो तो दशानुकूल समय पर पिता की मृत्यु होती है परन्तु पापग्रह की दृष्टि अवश्य होनी चाहिए। इसी प्रकार लग्न से चतुर्थ भाव राशि के स्वामी की दशा में भी पितृक्षय जानना। चतुर्थेश की दशा में बहुत द्रव्य आदि की प्राप्ति में संशय जानना। पिता के जन्म लग्न से ८वीं राशि में जातक का जन्म हो अथवा अष्टमभाव का स्वामी लग्न में हो तो उसीसे पिता सम्बन्धी कार्य हो (पिता की मृत्यु हो)। चतुर्थेश लाभ राशि में हो विशेषकर के चन्द्रमा से चतुर्थेश लाभ भाव में या दशम भाव में हो तो जातक पिता का आज्ञाकारी होता है। और उसी से पिता सम्बन्धी सब कार्य होते हैं ॥८-१७॥

पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रित ॥ पितृकर्मगृहे जात पितृतुल्यगुणान्वित ॥१८॥
तदीशे लग्नसंस्थेपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुत ॥ सूर्याष्टवर्गे यच्छून्य मास सवत्सर प्रति ॥१९॥
विवाहव्यवहारादि मासे ऽस्मिन्वर्जयेत्सदा ॥ कलहो मासदुःखानि शून्यमासे भवति च ॥२०॥
एवमादिफल ज्ञात्वा मास प्रति समाचरेत् ॥ संशोध्य पिंड सूर्यस्य रध्रमानेन वर्द्धयेत् ॥२१॥
द्वादशादिहृताच्छेष मेषादि गणयेत्पुन ॥ तस्मिन्मासे मृति विद्यात्तत्त्रिकोणगतेपि वा ॥२२॥
सूर्यादि कल्पयेत्स्वन्दे परतो भास्करे स्मृति ॥ विशेषं भावसूत्रेऽस्मे पितुर्वामाविक दिशेत् ॥२३॥

पिता के जन्म लग्न से तीसरी राशि में जन्म हो तो जातक पिता के धन पर आश्रित रहता है तथा १०वीं राशि पर जन्म हो तो पिता के बराबर विद्या और गुणयुक्त होता है। और वही दशमेश यदि लग्न में हो तो पिता से भी बढ़कर गुणवान् होता है। सूर्याष्टक वर्ग में जो शून्य संख्या है उस संख्या के महीने और वर्ष में विवाहादि, शुभ कार्य नहीं करने चाहिए। क्योंकि उस महीने में कलह दुःख होते हैं॥ इस प्रकार अष्टक वर्ग के विचार से महीना जानना। सूर्याष्टक वर्ग के पिण्ड को अष्टमभाव के नीचे के अंक में गुणाकर १२ का भाग देने से जो संख्या बाकी रहे, मेष आदि क्रम से गिनकर जो महीना प्राप्त हो उस महीने में जब सूर्य हो तो पूर्वोक्त कहे हुए सब फल प्राप्त होने की संभावना है। और इसका विशेष विचार आगे कहा जायेगा। १८-२३॥

उदाहरण-सूर्य से ९वीं राशि पिता का घर है यह कह चुके हैं। यहां सूर्य कुम्भ राशि में है। उसकी ९वीं राशि तुला है। उसके नीचे अष्टक वर्ग का फल ६ है। और पिण्ड योग ९१ है। ६ से गुणा किया तो ५४६ हुआ। इसमें २७ का भाग किया तो लब्धि २० हुई जिसे छोड़ दिया। बाकी अंक ६ प्राप्त हुआ। अश्विनी से गिना तो आर्द्रा नक्षत्र हुआ। अतः आर्द्रा नक्षत्र में शनि के आने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। इसी तरह आर्द्रा के त्रिकोण नक्षत्र स्वाती और शतभिषा नक्षत्र होने पर भी पिता को कष्ट या मृत्यु हो॥ अथवा सूर्य का पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। इसमें १२ का भाग किया तो लब्धि २२ व्यर्थ और शेष ९ बचे, तो धन राशि प्राप्त हुई। अतः ज्ञात हुआ कि धन राशि में शनि होने पर और धन के त्रिकोण मेष और सिंह राशि में शनि होने पर पिता को कष्ट या मृत्यु हो। पिता के अभाव में पिता के समान चाचा आदि को कष्ट या मृत्यु हो।

अथ चन्द्रफलमाह

चन्द्राच्चतुर्थगे मातुः प्रासादग्रामचिंतनम् ॥ चन्द्राष्टवर्गे शून्ये च शून्यराशिगते विधौ ॥२४॥ तन्नक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ॥ चन्द्राष्टमे शनिक्षेत्रेत्रितयेषु विशेषतः ॥२५॥ आयामव्याधिदुःखानि लभते नात्र संशयः ॥ चन्द्रात्सुखफलात्पिण्डं वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥२६॥ शेषे मृगे शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥ तत्त्रिकोणेषु वा केचिद्दशाच्छिद्रेषु कल्पयेत् ॥२७॥ चन्द्राल्लग्नात्सुतस्थाने भौमे वा भास्करात्मजे ॥ दृश्यते वा तयोः स्थानं पूर्वोक्ते कालसंगते ॥२८॥ तदभावे स्वयं मृत्युर्दशान्तरगतेऽपि वा ॥ चन्द्रात्सुखेष्टमे राशेस्त्रिकोणे दिवसाधिपे ॥२९॥ मात्रा वियोगश्चास्तीति निर्दिशेल्लग्नतः पितुः॥ पितुर्वा मातृचिन्तायां भास्करादीन् प्रकल्पयेत् ॥३०॥

चन्द्रमा का फल

चन्द्रमा से चौथे भाव में माता, मकान, ग्राम भूमि आदि का विचार करना चाहिए। चन्द्राष्टक वर्ग में यदि शून्य संख्या हो और चन्द्रमा भी शून्य राशि पर हो तो चन्द्रमा के नक्षत्र को छोड़कर बाकी नक्षत्रों में शुभ काम करे। चन्द्रमा से ८वें नक्षत्र से तीन नक्षत्रों में शनि के नक्षत्र हैं। उनमें रोग, व्याधि दुःख आदि होता है। चन्द्रमा से ४थे भाव के पिण्ड को चौथे भाव के फलसे गुणा करने पर शेष नक्षत्र प्राप्त होगा। शेष नक्षत्र यदि मृगसिर हो और उसमें शनि आये तो माता की मृत्यु होती है। तथा उसके त्रिकोण नक्षत्रों में भी शनिवारसे माता की मृत्यु होती है। और चतुर्थभाव राशि की दशा में भी ऐसा ही समझना। चन्द्रमा या लग्न से ४थे स्थान में मंगल या शनि हो अथवा पूर्वोक्त रीति से मंगल शनि चन्द्र नक्षत्र पर आते हो तो जातक को कष्ट या मृत्यु प्राप्त होती है। चन्द्रमा से ४थे ८वें भाव अथवा ९वें ५वें भाव पर सूर्य हो तो माता से वियोग होता है। ऐसे ही चन्द्रमा से माता और चन्द्रमा से सूर्य पूर्वोक्त इसी रीति से पिता के लिये फलकारक है ॥२४-३०॥

उदाहरण (कल्पित उदाहरण में) चन्द्रमा धन राशि में है। अष्टम सिंह राशि। उसका स्वामी सूर्य धनिष्ठा नक्षत्र में हो, रेवती तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में हो तो रोग, व्याधि, दुःख देता है। इसलिये इन नक्षत्रों में विवाह आदि शुभ कार्य न करे। चन्द्रमा से सुखस्थ स्थान १२ इसका अष्टक वर्ग से प्राप्त हुआ फल ३। योग पिण्ड ९१ को ३ से गुणा किया तो २७३ हुआ। २७ का भाग दिया तो शेष ३ बचा। अतः कृत्तिका नक्षत्र और उसका त्रिकोण उत्तरा फाल्गुनी और उत्तराषाढा नक्षत्र पर शनि होने पर माता को कष्ट या मृत्यु हो। राशि के लिये योग पिण्ड ९१ को २से गुणा किया तो १८२ हुआ। १२ का भाग दिया तो २ शेष रहा। इस प्रकार वृष राशि तथा उसकी त्रिकोण राशि कन्या और मकर राशि के शनि में माता को कष्ट या मृत्यु हो। माता के अभाव में माता के समान मौसी आदि को फल हो॥

अथ भौमफलमाह

भौमाष्टवर्गे संचिन्त्य भ्रातृविक्रमधैर्यकम्॥ भौमस्थितस्य सहजो राशिर्भ्रातृगृहं स्मृतम् ॥३१॥ त्रिकोणे शोधनं कृत्वा यत्र भूयांसि तत्र च ॥३२॥ भौमो बलविहीनश्चेद्दीर्घायुर्भ्रातृको भवेत् ॥

फलानि यत्र क्षीयंते तत्र भूमितराः स्मृताः ॥३३॥ तद्राशिफलसंख्यैश्च वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ॥
शेषमृक्षं शनौ याते भ्रातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥३४॥

भौम फल

भौमाष्टक वर्ग मे भ्राता, पराक्रम, साहस का विचार करना चाहिए। मगल से ३रा भाव भ्राता का घर है। त्रिकोण शोधन करके विचार करना चाहिए। मगल यदि बलहीन हो तो भ्राता दीर्घायु होता है। मगल बलवान् हो तो भ्रातृभाव की हानि करता है। पूर्ववत् पिण्ड मे नक्षत्र निकाल कर देखना चाहिए। उस नक्षत्र पर शनि हो तो भ्राता की मृत्यु होती है ३१-३४॥

उदाहरण (कल्पित) मगल मीन राशि का है, इससे ३रा राशि वृष हुआ। उसका फल २ है। मगल का योग पिण्ड ५९ इसको २ से गुणा किया तो ११८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १० रहे। अत मघा नक्षत्र और इसका त्रिकोण नक्षत्र मूल और अश्विनी इनमे शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो॥ राशि के लिये पिण्ड ५९ अष्टमभाव राशि अक ३ से गुणा किया तो १७७ हुआ। १२ का भाग किया, शेष ९ धन राशि हुआ। अत धन, मेष, सिह राशि के शनि होने पर भ्राता को कष्ट हो।

अथ बुधफलमाह

बुधात्तुर्यं कुटुंब च धनपुत्रादिमातुला तत्पचमे मन्त्रविद्यालिपिबुद्ध्यादि चिंतयेत् ॥३५॥
बुधाष्टवर्गे संशोध्य शेषमृक्षगते शनौ ॥ बंधुमित्रविनाशादील्लँभते नात्र संशयः ॥३६॥

बुध फल

बुध से दूसरा और चौथा स्थान धन, पुत्र और मामा का होता है। पाचवा स्थान मन्त्र सिद्धि विद्या, कला-कौशल का है। अत उपर्युक्त स्थानो से उनके फलो का विचार करना चाहिए। बुध के अष्टक वर्ग का शोधन करके बताये हुए भाव की राशि से गुणाकर २७ का भाग देने से शेष नक्षत्र मे शनि हो तो बन्धु, मित्र आदि का विनाश करता है, इसमे कोई सशय नही।

उदाहरण (कल्पित) बुध मकर मे है, इसका ४था मेष राशि है। इसके नीचे का फल ४ है। बुध का योग पिण्ड १३२ है। इसे ४ से गुणा किया तो ५२८ हुआ। २७ का भाग किया तो शेष १५ रहा। अत स्वाती (त्रिकोण नक्षत्र शतभिषा और आर्द्रा) नक्षत्र मे शनि होने पर बन्धु, मित्र आदि को कष्ट होता है। राशि निकालने के लिये योग पिण्ड १३२, अष्टम भाव का फलाङ्क ५ से गुणा किया तो ६६० हुआ। १२ का भाग दिया, शेष शून्य रहा। अत मीन, कर्क वृश्चिक राशि के शनि होने पर बन्धु,पिता,मित्र आदिको कष्ट हो।इसी प्रकार पचम स्थानसे विचार करना चाहिए।

अथ गुरुफलमाह

जीवात्पचमतो ज्ञान पुत्रधर्मधनादिकम् ॥ गुरोरष्टकवर्गेषु सतानमपि कल्पयेत् ॥३७॥

शुक्र फल

शुक्र का अष्टक वर्ग फल निकालना चाहिए। जिन २ भावों मे फलाङ्क सख्या अधिक हो उन भावो के देश के अनुसार भूमि, स्त्री, धन, व्यापार आदि का निर्देश करना चाहिए। शुक्र के सातवें घर के स्वामी से युक्त जो राशि हो उस राशि के दिशा से उपर्युक्त भूमि, स्त्री, धन आदि की प्राप्ति हो, ऐसा कहना चाहिए। सप्तमेश स्थित नक्षत्र मे जातक की स्त्री का जन्म हो। कोई आचार्य ऐसा कहते हैं कि सप्तमेश की उच्च राशि और नीच राशि मे उसका जन्म नक्षत्र हो। अथवा सप्तमेश के नवांश की राशि या उसकी त्रिकोण राशि में जन्म होना चाहिए। लग्न तथा चन्द्रमा के नवम भाव की राशि स्त्री का जन्म लग्न हो। अथवा लग्न चन्द्रमा की सम्बन्धित राशि मे जन्म लग्न हो। स्त्री के लक्षण का विचार सप्तमेश स्वक्षेत्र या उच्च का हो अथवा अपने नवमांश मे या मित्रांश मे हो तो उस राशि के अनुसार स्त्री का लक्षण कहे। स्त्री का स्थान शुक्र के ७वें स्थान की राशि का अथवा उसके त्रिकोण राशि का देशकाल व दिशा कहना चाहिए।।४४-४९।।

प्रोक्तराशिर्यदा दारा जन्मर्क्षं सततिस्तदा ।। अनुक्तराशिर्जन्मर्क्षमस्ति चेन्नास्ति सतति ।।५०।।
भृगुबरिशयुक्तर्क्षं फल सख्या स्त्रियो विदु ।। क्षेत्रस्त्रीग्रहणे साम्य नृपस्य द्विगुण तथा ।।५१।।
मदांशे मदसयुक्ते मदक्षेत्रेऽथवाभृगौ ।। नीचांशे पापसयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति ।।५२।।
मैथिनीतलयभोगनिवासी मेदिनीभवसदालयपुक्त ।।मगलेक्षणयुत सितस्तदाऽस्पतसुवरपराग्नारत
।।५३।।भौमाशकगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽपि वा ।। भौमेन युतदृष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति।।५४।।
दारागारे मदमांशे कुजांशे मदाराम्या वीक्षिते यस्य पुस ।। स्यात्तद्दारा जारिणी चचला वा
वेश्यादासी स्वामिसतोपनिघ्नी ।।५५।। जामित्रे मदभौमांशे तदीशे मदभौमगे ।। वेश्या वा
जारिणी वापि तस्य भार्या न सशय ।।५६।।

ऊपर बताई हुई राशि यदि जन्म की राशि हो तो स्त्री सतानवाली और अनुक्त राशि हो तो स्त्री सतान रहित होती है। शुक्र और सप्तमेश की राशि को जोडने पर अधिक हो तो १२ से भाग देने पर जो सख्या शेष रहे सम्पर्कित स्त्रियो की उतनी सख्या अधिक से अधिक हैं। यह सख्या औरो मे उतनी ही तथा राजा मे द्विगुण समझना। सप्तम स्थान मे शनि का नवमांश हो, शनि युक्त हो तो, अथवा शनि की राशि मे शुक्र हो और नीच नवमांश मे पापग्रह से युक्त हो तो जातक नीच जाति की स्त्री का भोगी होता है। यदि शुक्र मगल की राशि मे या मगल से युक्त या मगल की दृष्टि हो तो सुन्दर परस्त्रीका भोगी होता है। सप्तम भाव मे शनि का या मगल का नवमांश हो। शनि मगल की दृष्टि हो तो उस जातक की स्त्री चचल, व्यभिचारिणी अथवा वैश्या होकर स्वामी के लिए अमन्तोषजनक रहती है। सप्तम स्थान मे शनि मगल का नवमांश हो, सप्तमेश शनि मगल के घर मे हो तो जातक की भार्या वैश्या या व्यभिचारिणी निश्चय होती है।।५०-५६।।

पापारूढांशगे षष्ठे जामित्रे व्ययपेऽपि वा ।। पापग्रहान्विते शुक्रे स्त्रीहेतो मृत्युमाप्नुयात् ।।५७।।
शुक्रांशकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता ।। भवेच्छशांकतुल्या वा दारेशस्य गुणान्विता ।।५८।।
सपापमागगे दिशौ व्ययेगनाऽलयेऽपि चेत् ।। सपापभार्येविमनार्निमित्तत गुह्यं पदम् ।।५९।।

सिताशकप्रमाणिका स्त्रियो भवति सद्गुणा ॥ चरांशसमितास्तथास्वनाथतुल्यसद्गुणा
॥६०॥ शुक्रान्मदे त्रिकोणस्थे नेष्ट जीवे सुखप्रदम् ॥ तेषां बलाबलत्वेन भार्याया लक्षण वदेत्
॥६१॥ एवमादि फल ज्ञात्वा निर्दिशेच्छुक्रवर्गत ॥६२॥

आरूढ लग्न के नवांश में पापग्रह युक्त चन्द्रमा ७वे या १२ वे स्थान मे हो, शुक्र भी पापग्रहयुक्त हो तो जातक स्त्री के कारण दु खी रहता है। स्त्री का वर्ण, रूप और गुण शुक्र के नवमांश के समान होना चाहिए। अथवा सप्तमेश के गुणो से युक्त चन्द्रमा के समान होना चाहिए। चन्द्रमा पापग्रह युक्त पापग्रह के नवांश मे १२वे या ७वे स्थान मे हो और शुक्र पापग्रह सहित हो तो स्त्री के कारण दु खी रहता है। शुक्र के नवमांश के अनुसार स्त्रियां होती हैं। चर नवमांश के अनुसार उनके गुण होते हैं। अथवा नवमांश स्वामी के अनुसार उनके गुण कहने चाहिए॥ शुक्र से शनि त्रिकोण मे हो तो नेष्ट है। बृहस्पति त्रिकोण मे हो तो सुख देनेवाला होता है। इस प्रकार शनि और गुरु का बलाबल देखकर स्त्रीका लक्षण कहना चाहिए। ऐसे शुक्राष्टक वर्ग का फल कहा गया।

उदाहरण (कल्पित) शुक्राष्टक वर्ग का पिण्ड ४१ है। शुक्र स सप्तमभाव की राशि कन्या है जिसका फल ४ है उससे ४१ को गुणा किया तो १६४ हुआ। २७ का भाग देन पर शेष २ रहा। अत भरणी, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा नक्षत्र पर शनि होने से स्त्री को कष्ट सभव है। तथा योग पिण्ड ४१ को ४ से गुणा किया तो १६४ हुआ। उसमे १२ का भाग दिया तो शेष ८ रहा। अत वृश्चिक, मीन, कर्क राशि म शनि होने से स्त्री को कष्ट हो॥५७-६२॥

अथ शनिफलमाह

शनैश्चरस्थितस्थानादष्टम मृतिरुच्यते ॥ शनेरष्टकवर्गे च स्वस्यायुष्य विनिर्दिशेत् ॥६३॥
लग्नात्प्रभृति मदात फलान्येकत्रकारयेत् ॥ लग्नादिफलतुल्याब्दे व्याधिर्वैर समादिशेत् ॥६४॥
मन्दादिलग्नपर्यंत फलान्येकत्र सयुतम् ॥ मदादिफलतुल्याब्दे व्याधि तस्य समादिशेत् ॥६५॥
तयोर्योगसमाब्दे तु मृत्युयोग प्रवक्ष्यते ॥ शोध्यादिगुणन कृत्वा पिड सस्थाप्य यत्नत ॥६६॥

शनि फल

शनि के अष्टम स्थान से मृत्यु का निर्देश किया जाता है इसलिये शनि के अष्टक वर्ग से जातक की आयु का विचार करे॥ लग्न स आठवे स्थान तक के फलाको को जोडना, उस जोड मे आई हुई सख्या के वर्ष मे व्याधि या द्वेष (लडाई-झगडा) होना है॥ शनि के स्थान से लग्न तक की राशियो के फल का योग (जोड) करे। आई हुई सख्या के वर्ष म व्याधि (रोग) होती है॥ और आई हुई इन दोनो सख्याओ का जोड जो सख्या हो उस वर्ष मे मृत्युयोग है। शनि के अष्टक वर्ग के पिण्ड की सख्या को गुणक स गुणा करके॥६६॥

अष्टमस्थफलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम् ॥ शतादूर्ध्वं तु तत्पिंड शतमेवापतत्त्यजेत् ॥६७॥
आयु पिंड तु जानीयात्प्राग्वद्वेला तु कल्पयेत् ॥ त्रिकोणैकाधिपत्यर्क्षशोधन विरचय्य च ॥६८॥
पिंड सस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगै फलै ॥ सप्तविंशतिहृच्छेष मृत्युकाल वदेद्बुध ॥६९॥

समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फल गृहे ॥ तत्र नास्ति फल तस्य यदा याति शनैश्चर ॥७०॥ तद्गृहे रविचन्द्रौ चेद्दशाछिद्रे मृति वदेत् ॥ दशाछिद्रसमायोगे मृत्युरेव न सशय ॥७१॥ मदाष्टवर्गराशीना हीनराशौ क्षयो भवेत् ॥ तद्गृहे भास्करे मदे तस्मिन्काले मृति वदेत् ॥७२॥ मदाष्टवर्गाद्यथरिष्टयोगे दुष्टानि वर्षाणि विचारयति ॥ पूर्वोक्तसशोधनतो हि शुद्ध पिड सुधीमान्विलिखेत्पृथक्स्यम् ॥७३॥ लग्नात्तु मदान्तमथोफलानामैक्य शनेर्लग्नमुपात्यमेव ॥ तद्योगतुल्ये शरदीहकाले व्याधि मृति वा परदेशयानम् ॥७४॥ धनक्षय तत्प्रतितुल्यवर्षे तद्योगयोगाब्दसमे तु कष्टम् ॥ सामर्थ्यहीनग्रहपाककाले प्राप्ते तदा निश्चयतो मृति स्यात् ॥७५॥ विलग्नशनिमध्यगानिच फलानि सताडयेन्नगैर्भविहृतानि शेषमितभे खले याति चेत् ॥ तदा धनसुखक्षति तदनुचागभादष्टमस्थितैर्विगुणयेद्गज भपरिशेषभस्थे शनौ ॥७६॥

अर्थात् अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने से। और गुणा किया हुआ अक सौ (१००) से अधिक हो तो १०० की सख्या घटाने से आयु का पिण्ड होता है॥ (अर्थात् लग्न मे शनि के अष्टकवर्ग की राशियो के फलाक योग और शनि से लग्न तक की राशियो के फलाक योग का जोड आयु के वर्ष है।) इस प्रकार आयु का समय की कल्पना करे। त्रिकोण शोधन के बाद एकाधिपत्य शोधन किये हुए भावो की राशियो से पिण्डसख्या लेकर अष्टमराशि के फलाक से गुणा करके २७ का भाग देने पर जो सख्या प्राप्त हो उस सख्या के नक्षत्र म शनि के सचार म मृत्युकाल जानना॥ अष्टकवर्ग मे जिस राशि के नीचे शून्य (फलाक) हो उस भाव की दशा म जब गोचर म शनि का सचार हो॥ और सूर्य तथा चन्द्रमा का योग हो तो राशि की दशा या अन्तर मे निश्चय मृत्यु होती है॥ शनि के अष्टकवर्ग म जो हीन (बलहीन) राशि हो तो भी उस दशा मे शनि का सचार हो तो मृत्यु जानना॥ इस प्रकार शनि के अष्टकवर्ग मे व्याधियोगो के दुष्ट वर्षो का विचार किया जाता है। अत पूर्वोक्त त्रिकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करके शुद्धता पूर्वक पिड का आनयन करना चाहिए॥ पूर्वोक्त क्रियानुसार लग्नसे शनि तक और शनिसे लग्न तक की जो योग सख्या होती है उस वर्ष मे रोग मृत्यु या परदेश यात्रा (चिन्ताकारी यात्रा) होती है। या तो हानि, चोरी आदि म धनक्षय होता है या शारीरिक व्याधि होती है। और बलहीन ग्रह की दशा हो तो उसकी दशा मे मृत्यु होती है॥ लग्न स शनि तक की फलाक सख्या को ७ म गुणा कर २७ का भाग देन मे जो नक्षत्रसख्या प्राप्त हो उस नक्षत्र पर शनि (या राहु मगल) का सचार होने पर धनहानि सुखक्षय होता है। इसी पिण्ड की सख्या को अष्टमराशि के फलाक म गुणा कर २७ का भाग देन मे जो शेष सख्या हो उस नक्षत्र पर शनि का सचार होने म उपर्युक्त फल जानना ॥श्लोक ६७ से ७६ तक॥

उदाहरण (कल्पित)-लग्न स शनि तक के फलाक १ ४,४,३ ४ ३ २ ३ ४ इनका योग २८ हुआ अत २८वें वर्ष मे रोग या मृत्यु हानि परदेश यात्रा हो। शनि स लग्न तक के फलाक ४ ५ २ इनका योग ११ हुआ इस वर्ष मे भी पूर्व के समान व्याधि हानि यात्रा आदि का योग है। और इन २८ ११ सख्या का योग ३९ हुआ इस वर्ष मे भी हानि चिन्ता कष्ट आदि जानना परन्तु मृत्युरोग नही है। लग्न म शनि तक के फल योग २८ का ७ म गुणा किया

उदाहरण– (कल्पित)

चन्द्राष्टकवर्गमे चन्द्रमा से लग्न तक फलयोग १५ और लग्न से चन्द्रमा तक फलयोग ३४ हुआ, अत १५वे और ३४ वे वर्ष मे धन, पुत्रादि की प्राप्ति का सुख हो। इसी प्रकार बुधाष्टकवर्गमे बुध से लग्न तक का फलयोग १४ और लग्न से बुध तक का फलैक्य ४२ हुआ, अत १४ या ४२ वे वर्ष मे धन प्राप्ति आदि का योग है। एव गुरु के अष्टकवर्ग में गुरु से लग्न तक का योग ८ लग्न से गुरु तक का फलयोग ४८ है, अत इन वर्षों मे धन, पुत्र, सुख हो। इसी प्रकार शुक्राष्टक वर्ग मे शुक्र से लग्न तक योग ४ आदि से तथा लग्न की राशि भी यदि शुभ हो तो उससे भी शुभफल का निश्चय करे। शनि के अष्टक वर्ग को राशियो मे फलाक सख्या शून्य उक्त उदाहरण मे नही है। अत नही लिखा॥

अथ सर्वाष्टकवर्गफलमाह

मेषादिभानां सकलाष्टवर्ग उत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात् ॥ धृत्यादि १८ तत्त्वांतमितं कनिष्ठं त्रिंशावसानकिल मध्यवीर्याः ॥८१॥ त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः शरीरसौख्यार्थयशोविशेषाः ॥ स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ॥८२॥ दशमभवनरेखाभ्योधिक लाभमाम भवति यदि विहीन स्याद्व्ययाख्य ततोपि ॥ अधिकतरविलग्न भोगसम्पत्तियुक्तं विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य ॥८३॥ मध्या १० त्फलाधिको लाभो मध्यात्क्षीणफलो व्ययः ॥ यस्य रेखाधिकं लग्न भोगवानर्थवान् भवेत् विपरीते तु दारिद्र्य भवत्येव न संशयः ॥८४॥ प्रादक्षिण्यादिभानां सकलफलयुति विस्त्रचतुष्कक्रमेण कृत्वा तद्भागतो यः समधिकफलत शोभन हानिमल्पात् ॥८५॥ सौम्या स्वोच्चस्वगेहोदितखचरयुते दिग्विभागे स्वकार्ये वित्तेशाशासु वित्त मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः ॥८६॥

सर्वाष्टकवर्गफल

सर्वाष्टक वर्ग मे मेष आदि १२ राशियो की रेखा सख्या को एकत्र योग करे। वह योग यदि १८ से २५ तक हो तो 'कनिष्ठ' है। २५ से ३० तक हो तो 'मध्य' है॥८१॥ ३० से अधिक हो तो 'अधिक बली' है। शरीरसुख, धनसमृद्धि और यश वृद्धि करने वाली है। अपने अपने वर्ग मे ४ रेखा से कम रेखा क्लेश और ४ या अधिक हो तो सुखकारिणी है॥८२॥ (अन्यमत से–) दशमभाव की रेखा सख्या से लाभस्थान की रेखा अधिक हो और उसमे व्ययभाव की कम हो तथा लग्न की भी रेखा अधिक हो तो सम्पत्ति और भोग से युक्त हो। तथा इससे विपरीत हो तो फल भी विपरीत ही होता है॥८३॥ (स्वमत मे भी–यही कहा है, अन्य की केवल सम्मति दी गई है)॥८४॥

ल० द्वि० ए०
पू र्व
द्वि०
तृ० उत्तर द०
च० ३ सि
प
प० प० स०
द० न० अ०

चक्र मे दिखाये हुए क्रम से चार दिशाओ मे प्रदक्षिण क्रम से ३-३ भाव रखना, जिस दिशा के भावो का फल अधिक हो, वह दिशा लाभकारी होती है और फल अल्प हो तो हानिकारी जाने। और जिस दिशा के भावो मे सौम्यग्रह उच्च, स्वगृही तथा उदित ग्रह हो, वह दिशा अपने व्यापार मे धनलाभकारी है। इसी प्रकार अष्टमभाव की दिशा मृत्युकारिणी है॥८६॥

अथ भावफलमाह

भाव विलोक्य सदसत्फलदायक यत्तद्राशिसभवफलैश्च तदुक्तपिडम् ॥८७॥ पिडे रेखाताडिते भावशेषे १२ राशौ तस्मिन्याति सौरि समायाम् ॥ यस्या तत्तद्भावहानि च विद्यात्प्राहुर्वंशे वाऽथवा तत्त्रिकोणे ॥ कृत्वा बिदुभ्यस्तु काल सुधीमास्तस्माद्राश्य प्राप्तिकाल शुभत्वे ॥८८॥

भावफल

शुभ और अशुभ फलदायक भावो का फल प्राप्त करके पिण्ड करे, उसमे से इष्टभाव के पिड को रेखा की सख्या से गुणा करके १२ का भाग दे, जो सख्या शेष रहे, उस सख्या के वर्ष मे जब गोचर मे शनि, उस भाव की राशि में अथवा त्रिकोण राशि मे सचार करे तो उस भाव की हानि होती है, और पिड को बिन्दु सख्या से गुणा करके १२ का भाग देकर भी यह फल जाने। और गुरु आदि शुभग्रह सचार करे तो शुभफल प्राप्त होता है॥८७॥८८॥

तथा च

मृत्युभावेशभात् कोणविशुद्धफल, मृत्युज सूर्यशोध्यपुक्ते रवौ ॥ तत्त्रिकोणेऽथवा रिष्टमास वदेत्, तातमातृगहाद्येऽथवा कल्पयेत् ॥ सूर्यमाल्लग्नप्रमृत्यष्टमान्त च तत्, पिण्डक ताडित मृत्युमानेन च ॥ सूर्य शेषर्क्षगे भास्करे नाशन तत्त्रिकोणेऽथवा स्यात्पित्रादि सर्वत ॥८९॥९०॥

अष्टमभाव का स्वामी जिस राशि में हो उससे त्रिकोण शोधित फल से अष्टमभाव के फल को गुणा करे पश्चात् १२ का भाग दे जो अवसख्या शेष रह उस राशि मे सूर्य हो अथवा उससे त्रिकोण राशि मे सूर्य हो उस सौरमास मे अरिष्ट कहना चाहिये। इसी रीति से पिता के लिए दशम से अष्टमभाव तथा माता के लिए चतुर्थ से अष्टम भाव एव भ्राता के लिए तृतीय से अष्टमभाव से अरिष्टमास की कल्पना करे॥८९॥ अथवा शनि से लग्नपर्यन्त या अष्टमभाव पर्यन्त के त्रिकोणशोधितफल के योग को अष्टमभाव के फल से गुणा करे, पश्चात् १२ का भाग देने से जो सख्या शेष रहे उस सख्यक राशि मे सूर्य हो तब अथवा उससे त्रिकोण राशि में सूर्य हो तब हानि तथा कष्ट होता है। यह विधि पिता माता आदि भावो मे भी समझना॥९०॥

मीनाद्य मिथुनान्तक प्रथमक प्रोक्त वय प्राक्तनै, कर्काद्य वणिजान्तक तदपातायत च मध्य बुधै ॥ कुम्भान्त स्थविराह्वय च बहुभिर्यत् तत् फलै सयुत ततोऽत्यार्य विशेषक बल पुनै मैतद्विशेषाच्छुभम् ॥९१॥

आयु के तीन भाव के अनुसार 'मीन, मेष, वृष, मिथुन' ये चार राशिया आयु के प्रथमभाग मे तथा 'कर्क, सिंह, कन्या, तुला' ये चार राशिया आयु के द्वितीयभाग में तथा 'वृश्चिक', धनु, मकर, कुम्भ, ये चार राशिया आयु के तृतीय भाग मे समझना। जिस भाग की राशि मे फल अधिक हो आयु के उस भाग मे अधिक सुख,धन आदि विशेष होता है। ऐसा प्राचीन आचार्यो ने कहा है॥९१॥

अथ राहुयुक्तगुरुफलमाह

राहुयुक्तगुरुराशिगे ९।१२ गुरौ सत्त्रिकोणमथ रिष्टकारकम् ॥ अल्पमृत्युरिपुभावनायको योगकृत्तदिह मृत्युसंभवः॥९२॥ लग्नेंदुतस्त्रिंशतिमे दृकाणे गुरौ त्रिकोणेऽपि तदीश्वरस्य ॥ वर्षे विषादो परदेशयानं शरीरपीड़ा मृतिसन्निभास्यात् ॥९३॥

राहुयुक्त गुरुफल

जन्मलग्न यदि गुरुराशि ९।१२ हो, और उसमे राहु स्थित हो तो गोचर मे जब बृहस्पति इस राहुस्थित राशि मे या उससे त्रिकोण राशि मे सचार करे तब अरिष्ट होता है। और यदि षष्ठेश से सम्बन्ध हो तो मृत्यु भी सभव है॥९२॥ जन्मलग्न या चन्द्रलग्न से तीसवे द्रेष्काण मे गुरु हो अथवा लग्नेश या चन्द्रलग्नेश के साथ ५।९ (त्रिकोण) स्थान मे जिस वर्ष मे गुरु सचार करे तो उस वर्ष मे पारिवारिक कलह, विदेश यात्रा, शरीर पीड़ा व मृत्युतुल्य कष्ट होता है॥९३॥

अथ निधनार्कमाह

मृत्युपद्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ॥ अर्कलिप्ताहतो राहुलिप्तागणश्चक्रलिप्ता २१६०० प्तयुक्तो रविर्मृत्युदः ॥९४॥ भौममार्तंडलिप्ताहतिं कारयेच्चक्रलिप्ताहृताल्लब्धयुक्तो रविः॥ याति यस्मिंस्तदा तत्त्रिकोणेऽपि वा क्लेशमाहु अथ मासि धीमान्वदेत् ॥९५॥

अथ श्लोकद्वयं लग्नविषयकमाह

निधनेशद्वादशांशत्रिकोणे भास्करे मृतिः ॥ निधनेशत्रिकोणे वा सूर्यबिम्बागतेष्वपि ॥९६॥ षष्ठाष्टमव्ययेशाना स्फुटयोगगते शनौ॥ मृति तत्र विजानीयात्तत्त्रिकोणगतेऽपि वा ॥९७॥

निधनार्क साधन (अवश्य ज्ञातव्य)

निधनार्क–अर्थात् जातक की मृत्यु किस सूर्य (सौरमास) मे होगी, यह निश्चय करना।

अष्टमेश जिस द्वादशांश मे हो उस राशि से त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) जब राहु हो तब अष्टमेश से सूर्य जब त्रिकोण राशि मे (गोचर मे) सचार करे तब मृत्यु होती है। (इस नियम से मृत्यु का मास परिज्ञान हुआ, अब दिन और समय का ज्ञान कहा जाता है) सूर्य की राशि, अंश, घटी तथा राहु की राशि, अंश, घटी को घटयात्मक एकरस करे, इस घटयात्मक सख्या मे से सूर्य के घटयात्मक अंक को पृथक् भी रखे, बाद सूर्य राहु की घटयात्मक सख्या का योग करे तथा इस योग पिण्ड मे २१६०० (१२ राशि X३०X६०) का भाग दे, भाग देने से जो लब्ध घटयात्मक अंक सख्या प्राप्त हो, वह पृथक् स्थित सूर्य की घटयादि सख्या से युक्त करे, बाद ६० का भाग देकर अंश और अंशो मे ३० का भाग देने से राशि, अंश, कलादि सूर्य स्फुट होगा। उपर्युक्त नियमानुसार सूर्य जिस मास मे जिस दिन और जिस समय उक्त राश्यादि के समान हो उस मास के उस दिन में सूर्यागत समय मे जातक की मृत्यु होगी॥९४॥

उदाहरण–(कल्पित)

कल्पना किया कि किसी जन्मपत्र मे सूर्य स्पष्ट ५।०।१४।३० है तथा राहु २।४।३०।१० है, इन दोनो को कलादि पिण्ड किया तो सूर्य ९४२० और राहु ३८४० हुआ। इनको परस्पर

नवाश मे हो उससे ५।९ नवाश राशि मे जब चन्द्रमा सञ्चार (गोचर मे) करे तथा चन्द्रराशि की रेखासख्या कम हो तो निश्चय मृत्यु कहना चाहिए। (समयज्ञान रीति पूर्ववत्)॥९८॥

निधनलग्नज्ञान

१–जन्म लग्न अथवा जन्मकालीन चन्द्रमा जिस नवाश मे हो, उससे ६४वी नवाश राशि के लग्न मे मृत्यु हो। २–अथवा लग्न या अष्टमभाव के त्रिकोण ५।९ राशि के लग्न मे से जिस राशि मे कम रेखा हो उस राशि के स्वामी की दशान्तर्दशा मे मृत्यु जानना॥९९॥

इसी प्रकार यात्रा तथा विवाह समय मे भी इस समुदायाष्टक वर्ग चक्र से अशुभ या शुभ राशियो के रेखा बिन्दु के फलाफल जन्मचक्र के समान ही विचार करना चाहिए॥१००॥

सर्वकर्मफलोपेते ह्यष्टवर्गक उच्यते ॥ अन्यथा फलविज्ञान दुर्ज्ञेय गुणदोषजम् ॥१०१॥ त्रिंशाधिकफला ये स्यू राशयस्ते शुभप्रदा ॥ त्रिंशात पचविंशादिराशयो मध्यमा स्मृता ॥१०२॥ अतिक्षीणफला ये च राशय कष्ट दु खदा । श्रेष्ठराशिषु सर्वेषु शुभकार्याणि कारयेत् ॥१०३॥श्रेष्ठान्राशीन्मुहूर्तेषु योजयेन्मतिमान्नर ॥ तत्तज्जन्मप्रभावास्तु पुम्सस्ते साद्धमाचरेद् ॥१०४॥ कष्टराशिमुहूर्तेषु वर्जयेन्मतिमान्नर ॥ मध्यात्फलाधिके लाभो लाभात्क्षीणफले व्यय ॥१०५॥ लग्न फलाधिक यस्य भोगवानर्थवान् हि स ॥ विपरीतेन दारिद्र्य भविष्यति न सशय ॥१०६॥ लग्ने यावत्फल चास्ति तद्दशाया फल वदेत् ॥ मूर्त्यादिव्ययपर्यंत दृष्ट्वा भावफलानि वै ॥१०७॥

इस सर्वाष्टकचक्रमे त्रिकोणशोधनादि सम्पूर्ण क्रिया कर सब राशियो की सख्या का योग करके विचार करना चाहिए। अन्यथा शुभाशुभफल का ज्ञान होना कठिन है॥१०१॥ फलाफल–३० की सख्या से अधिक फलवाली राशिया (भाव) शुभ है और २५ स ३० तक की सख्यावाली राशि मध्यम है। इससे कम सख्या की राशिया अनिष्ट है॥ जो राशिया बहुत कम फलवाली हो वे कष्ट और दु ख देनेवाली होती हैं। अत श्रेष्ठ राशियो में ही शुभकर्म करना चाहिए॥१०२॥१०३॥ तथा मुहूर्तो मे भी (तात्कालिक ग्रहस्पष्ट और भावस्पष्ट तथा अष्टकवर्गस्पष्ट करके तद्वारा) श्रेष्ठ राशि निश्चित करके लेना चाहिए जन्मकाल से ज्ञात श्रेष्ठ राशि का ही योग करना॥१०४॥ और जन्मकाल से ज्ञात हुई नेष्टराशि का परित्याग करना चाहिए॥ जिसके जन्मकालिक अष्टकवर्ग मे दशमभाव से एकादशभाव के राशि फल अधिक हो और लाभ भावसे रेखाफल व्ययभावका कम हो॥१०५॥तथा लग्नका भी रेखाफल अधिक हो तो वह मनुष्य अपने जीवन मे भोगी और धनी होता है। विपरीत हो तो निश्चय ही दरिद्री होता है॥१०६॥ लग्न से व्ययभाव पर्यन्त के फल (रेखासख्या) देखकर जिस भाव की अधिक सख्या हो उसका श्रेष्ठ और न्यून का न्यून फल कहना चाहिए, यदि अत्यल्पफल हो तो क्षय और मृत्यु होती है॥१०७॥

अधिके शोभन विद्यात्क्षीणे हीने च मृत्यवे ॥ मध्यमे मध्यम याति विचार्य भावसमतम् ॥१०८॥ लग्नभ्य विनिक्षिप्य दशानयनवत्तया ॥ पापग्रहसमाख्य लब्ध क्लेशकर स्मृतम् ॥१०९॥

सौम्यैर्जुष्ट शुभ ज्ञेय मिश्रैर्मिश्रफल वदेत् ॥ खण्डत्रयफल ज्ञात्वा दशाफलमुदीरयेत् ॥११०॥ लग्नात् प्रभृति मदान्तमेकीकृत्य फलानि वै।सप्तभिर्गुणयेत्पश्चात्सप्तविंशोद्धृतात्फलम् ॥१११॥ तत्समानगते पापे दुःख वा रोगमादिशेत् ॥ मन्दात्प्रभृति लग्नान्तमेवमेव प्रकल्पयेत् ॥११२॥ भौमाच्चलग्नपर्यंतमेकीकृत्य तु बिन्दवः।पूर्ववद्गुणित कृत्वा वर्षमेव प्रकल्पयेत् ॥११३॥ तद्वर्षे पापसयुक्ते व्याधिमृत्युभय भवेत् ॥ वर्षेषु हीनभागेषु तद्भाव वर्जयेत्तदा ॥११४॥ गोष्ठ क्षेत्र कृषि वापि श्रेष्ठराशौ स्थित शुभम् ॥ क्षीणराशौ स्थित द्रव्य तद्द्रव्य नाशता व्रजेत् ॥११५॥

मध्यम श्रेणी का फल हो तो भाव के अनुसार मध्यम फल होता है।।१०८।। अष्टकवर्ग के १२ भावो के ३ खण्ड कल्पना करे, लग्न से ४ पर्यन्त प्रथम खण्ड, तथा ५ से ८ तक द्वितीय खण्ड और ९ से १२ तक तृतीय खण्ड कल्पना करे एव इन खडो मे पापग्रह युक्त खण्ड को क्लेशकारी समझना।१०९।।तथा शुभग्रहयुक्त खण्डको शुभ एव शुभ पापमिश्रितसे मिश्रित फल जानना। इस प्रकार तीनो खडो के फल जानकर दशा का फल कहना चाहिए।।११०।। लग्न स शनिराशि तक के रेखा फल का योग करके सात से गुणा करके २७ का भाग देना।।१११।। भाग से जो लब्ध सख्या हो उस सख्या के वर्ष मे दु ख या रोग होता है, इसी प्रकार शनि स लग्न तक देखना।।११२।। तथा भौम से लग्न तक की बिन्दुसख्या का योग करले ७ से गुणा कर २७का भाग देना।११३।और लब्ध (तथा शेष) वर्षमे पापग्रहका सचार होने पर व्याधि तथा मृत्युभय होता है।। जिन वर्षों मे पापफल हो, उन वर्षो म शुभकार्य नही करना चाहिए।।११४।। जमीन सुधारना तथा खेती आदि कार्य श्रेष्ठ राशि मे शुभ होते है। क्षीण राशि मे व्यापार आदि कार्यों मे लगाया हुआ द्रव्य नष्ट होता है।।११५।।

वित्तेश्वरस्य दिग्भागे वित्तमाप्नोति निश्चितम् ॥ रन्ध्रेश्वरस्य दिग्भागे देहस्तत्र विनश्यति ॥११६॥ मेषादियद् गृहगता वसुसख्यया तास्तद्भावपुष्टिबलवृद्धिकरा भवति ॥ षट्पञ्चसप्तसहितानि शुभप्रदानि त्रिद्व्येककर्णयुतभानि न शोभनानि ॥११७॥ मिश्र फल भवति सागरकर्णयोगे रोगापवादभयदा यदि शून्यभावा ॥ एकादिकर्णयुतभानुमुखग्रहाणा भिन्नाष्टवर्गजनि सर्वफल प्रवच्मि ॥११८॥

अथ मासफलमाह्

सक्रमदिने ग्रहाणामष्टकवर्गेषु चारवशात् ॥ रेखैक्याच्छुभमशुभ मासफल तद्वशाद्दिनफल च ॥११९॥

द्वितीय भाव का स्वामी जिस दिशा म हो उस दिशा से अवश्य धन की प्राप्ति होती है, एव अष्टमेश जिस दिशा म हो उस दिशा म देह का नाश (मृत्यु) होता है।।११६।। अब इस अष्टकवर्ग के प्रत्येक भाव का भिन्न भिन्न फल कहते हैं कि—मेष आदि ६ राशियो म यदि आठ रेखाए हो तो उस भाव की पुष्टि तथा ऐश्वर्य की वृद्धिकारक होती हैं, और इसम कम ५-६-७ रेखाए भी शुभफलदायक ही हैं। एक दो और तीन रेखाएँ अथवा बिन्दु शुभ नही है।।११७।। और सुख दु ख मिश्रित फल होता है और यदि ७ बिन्दु हो तो रोग, निन्दा तथा भयकारक होती हैं। इसी प्रकार एक आदि बिन्दु के अनुसार फल जानना।।११८।।

मासफल

सूर्य-के राशि सचार के समय अष्टकवर्ग म फल का विचार पूर्वोक्त रीति म करना रेखाओ के योग से एक मास के फल का निर्णय तथा चन्द्रसञ्चार स दिन क फल का निर्णय करना चाहिए॥११९॥

अथ रेखाशातिफलमाह्

रेखाभि सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणा भवेत् ॥ सुवर्ण विशतिपल दद्याद्द्वौ तिलपर्वतौ ॥१२०॥ वसुभिर्जातिहीन स शीघ्र मृत्युवशो नर ॥ असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजा तुलाम ॥१२१॥ रेखाभिर्नवभि सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम् ॥ अश्वैश्चतुर्भि सयुक्त रथ दद्याच्छुभाप्तये ॥१२२॥ रेखाभिर्दशभि शस्त्रात्प्राणास्त्यजति मानव ॥ दद्याच्छुभफलावाप्त्यै कवच वज्रसयुतम् ॥१२३॥ रुद्रै प्राप्यामिशाप च प्राणैर्मुक्तो भवेन्नर ॥ दिक्पलै स्वर्णघटिता प्रदद्यात्प्रतिमा विधो ॥१२४॥ आदित्यैर्जलदोषेण मानवस्य मृति वदेत् ॥ भूमि दद्याद्ब्राह्मणाय दद्याच्छुभफल भवेत् ॥१२५॥ त्रयोदशमितैर्व्याघ्राम्मानवो मृत्युमाप्नुयात् ॥ विष्णोर्हिरण्यगर्भस्य दान कुर्याच्छुभाप्तये ॥१२६॥

रेखा के दुष्ट फल की शान्ति

जिस मास म ७ रेखा हा तो मृत्यु का भय होता है उसकी शान्ति के लिए २० पल सुवर्ण और दो ढेरी तिल की दान कर॥१२०॥ यदि आठ रेखा हा तो स्वजाति स अपमान और मृत्युभय हाता है। इस दोष की शान्ति के लिए कपूर स तुलादान कर॥१२१॥ यदि नौ रेखा हो तो सर्प से मृत्यु का भय होता है शान्ति के लिए ४ घोडे युक्त रथ का दान करे॥१२२॥ दस रेखा हो तो शस्त्राघात म मृत्यु होती है शुभफल प्राप्ति के लिए हीरा म युक्त कवच का दान करे॥१२३॥ ११ रेखा हो ता किसी क शाप स मृत्युभय होता है शान्ति क लिए १० पल की सुवर्णनिर्मित चन्द्रमाकी मूर्ति का दान करे॥१२४॥ १२रेखा हो तो जलसे मृत्युका भय है शान्ति के लिए ब्राह्मण को भूमि का दान करे॥१२५॥ तरह रेखा म व्याघ्र का भय होता है शान्ति के लिए विष्णु की सुवर्ण की प्रतिमा का दान कर॥१२६॥

अचिराज्जीवित जह्याच्छक्रै कालेन भक्षित ॥ वराहप्रतिमा दद्यात्कनकेन विनिर्मिताम ॥१२७॥ राज्ञो भय तिथिमितैस्तत्र हस्ती प्रदीयते ॥ रिष्टभूपे कल्पतरो प्रतिमा च निवेदयेत् ॥१२८॥ ऋषिचद्रैर्व्याधिभय गुडधेनु निवेदयेत ॥ कलहोष्टेदुभिर्दद्याद्दत्नगोभू हिरण्यकम् ॥१२९॥ देशत्यागोऽर्कचद्रै स्याच्छाति कुर्याद्विधानत ॥ विशत्या बुद्धिनाश स्यात्कुर्याल्लक्षमित जपम् ॥१३०॥ भूमिपक्षै रोगपीडा दद्याद्धान्यस्य पर्वतम् ॥ यमाब्धिभिर्बन्धुपीडा दद्यादादर्शक बुध ॥१३१॥ रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशा प्रपद्यते ॥ सौवर्णी प्रतिमा दद्याद्रवे सप्तपलै क्रमात् ॥१३२॥ वेदाब्धिभिर्बन्धुहीनो दद्याद्गोदानक दश ॥ सर्वरोगादिनाशार्थं जपहोमादि कारयेत् ॥१३३॥

यदि १४ चौदह रेखा हा ता शीघ्र ही मृत्यु का भय है। शान्ति क लिए सुवर्ण की वराह मूर्ति का दान करे॥१२७॥ पन्द्रह रेखा हो तो राजा से भय होता है शान्ति के लिए

हाथी का दान करना चाहिए। १६ रेखा से अरिष्ट होता है, शान्ति के लिए कल्पतरु की सुवर्ण मूर्ति का दान करे॥१२८॥ सत्रह रेखाओ से व्याधि का भय होता है, शान्ति के लिए गुड की गौ का दान करे। १८ रेखाओ से कलह होती है, शान्ति के लिए रत्न, गौ, पृथ्वी तथा सुवर्ण का दान करे॥१२९॥ १९ रेखाओ से देशत्याग होता है, उसकी विधिवत् शान्ति करनी चाहिए॥ २० रेखाओ से वृद्धि का नाश होता है। शान्ति के लिए लक्ष जप करना चाहिए॥१३०॥ २१ रेखाओ से रोग और दर्द आदि पीडा होती है, शान्ति के लिए धान्य की ढेरी का दान करना चाहिए। २२ से बन्धुओ से पीडा होती है, शान्ति के लिए दर्पण का दान करे॥१३१॥ २३ रेखा से नाना प्रकार के क्लेश होते हैं, शान्ति के लिए ७ पल की सुवर्ण मूर्ति का दान करे॥१३२॥ २४ रेखाओ से बन्धु की हानि होती है, शान्ति के लिए १० गौ का दान करे, तथा सम्पूर्ण रोग आदि की निवृत्ति के लिए जप होम आदि करे॥१३३॥

ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा ॥ धनक्षयः स्यात्प्रसप्तैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत् ॥१३४॥ वसुपक्षे युते मास न लाभो हानिखेचरैः ॥ सूर्यहोमश्च विधिना कर्तव्यः शुभकाङ्क्षिभि ॥१३५॥ एकोनत्रिंशता चापि चिन्ताव्याकुलितो भवेत् ॥ घृतवस्त्रसुवर्णानि तत्र दद्याद्विचक्षणः ॥ त्रिंशता धनधान्याप्तिरिति जातकनिर्णयः ॥१३६॥ भूवह्निभिर्महोद्योगः पुत्रसंपद्गणाग्निभिः ॥ सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते ॥१३७॥ पञ्चरामैर्मेधाभिवृद्धिर्षट्त्रिंशत्सुतवित्तदा ॥१३८॥ सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिरष्टत्रिंशत्सुखार्थदा ॥ द्रव्यरत्नाप्तिरेकोनचत्वारिंशद्धि विद्यते ॥१३९॥धनवान्कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्द्धते।अत ऊर्ध्वं यशोऽर्थाप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते ॥१४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टकवर्गफलकथन नाम पञ्चमोऽध्याय ॥५॥

२५ तथा २६ रेखाओ से बुद्धिहीनता होती है, शान्ति के लिए सरस्वती का पूजन करे। २७ हो तो धनक्षय होता है, शान्ति के लिए 'श्रीसूक्त' का पाठ करे॥१३४॥ २८ रेखा से लाभ नही होता और हानि होती है, शान्ति के लिए विधिपूर्वक सूर्य का होम करे॥१३५॥ २९ रेखा से चिन्ता की वृद्धि हो, शान्ति के लिए घृत, वस्त्र और सुवर्ण का दान करे ॥ ३० रेखा से धन और धान्य की प्राप्ति होती है, ऐसा जातक शास्त्र का निर्णय है॥१३६॥ ३१ रेखा से भारी उद्योग (बडे २ व्यापार) हो, ३३से पुत्र, सपत्तिके द्वारा सुवर्ण वस्त्रका लाभ होता है॥१३७॥ यदि ३४-३५ रेखा हो तो श्रेष्ठ बुद्धि हो, ३६ रेखा हो तो धन-पुत्र हो॥१३८॥ ३७ हो तो धनप्राप्ति और ३८ हो तो धन सुख हो। ३९ हो तो द्रव्य-रत्न की प्राप्ति हो॥१३९॥ ४० रेखा हो तो धनवान् तथा यशस्वी होता है। इससे अधिक रेखा हो तो यश और धन की प्राप्ति तथा श्रेष्ठ लक्ष्मी की वृद्धि होती है॥१४०॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखडे भावप्रकाशिनाया पञ्चमोऽध्याय ॥५॥

अथ ग्रहबलाबलमाह

लग्नं सुखात् सुखं कामात् कामं खात् खं च लग्नतः ॥ त्यक्तमेकद्विगुणितं भुंक्त्वात्सप्तरविपु क्रमात् ॥१॥ पूर्वापरयुतेरर्धं संधिस्स्याद्भावयोर्द्वयोः ॥ एवं द्वादश भावास्तु भवन्ति च ससंशयः ॥२॥

ग्रह तथा भावो के बलाबल का लक्षण कहा जाता है। बल ६ प्रकार के होते है। (१) दृष्टिबल (२) स्थानबल (३) दिग्बल (४) कालबल (५) निसर्गबल (६) चेष्टाबल। इन ६ प्रकार के बलो के लिये प्रथम ग्रहस्पष्ट तथा भावस्पष्ट जानना आवश्यक है। अत जन्मसमय के इष्टघटी, पलपर नवग्रहस्पष्ट तथा स्पष्ट सूर्य से लग्नस्पष्ट एव नत तथा उन्नत से दशम भावस्पष्ट पूर्वखण्ड मे कहे अनुसार करना चाहिए। पश्चात् लग्न और दशम भाव मे छ छ राशि का सयोग करके क्रमश सप्तम और चतुर्थ भाव स्पष्ट करना। इस रीति से लग्न, चतुर्थ, सप्तम और दशम ये चार भाव स्पष्ट हुए। अब चतुर्थ मे लग्न घटाकर जो शेष रहे उसका तृतीयाश भाग लग्न मे जोडने से द्वितीय भाव तथा तृतीयाश को दो से गुणा कर लग्न मे जोडने से तृतीय भाव होता है। इसी प्रकार सप्तम भाव मे चतुर्थ, दशम भाव मे सप्तम और लग्न मे दशम भाव घटाकर पूर्वोक्त रीति से तृतीयाश लेकर चतुर्थ मे जोडने से पाचवा द्विगुणित तृतीयाश चतुर्थ मे जोडने से छठा भाव होगा। इसी प्रकार आगे के ६ भाव स्पष्ट करना। यह बारह भाव स्पष्ट हुए। इन भावो की सन्धिस्पष्ट करने के लिए प्रथम और द्वितीय दो भावो को जोडकर आधा करने से प्रथम द्वितीय भाव की सन्धि होगी। इसी प्रकार आगे भी द्वितीय तृतीय भाव को जोडकर आधा करने से,इसी प्रकार बारह भावो की सन्धि करना। बताई हुई रीति के अनुसार जन्मलग्न कुण्डली सूर्यादि नवग्रहो का स्पष्ट तथा सन्धि सहित बारह भावो का स्पष्ट सिद्ध होता है।।१।।२।।

दृश्याद्विशोध्य द्रष्टार षड्राशिभ्योऽधिका भवेत् ।। दिग्भ्यो विशोध्य द्वाभ्यां तु भागीकृत्य च दृष्टयः ।।३।। शराधिके विना राशि भागाद्विघ्नाश्च दृष्टयः ।। वेदाधिक त्यजेद् भूताद्भागा-दृष्टिस्त्रिभाधिके ।।४।। विशोध्यार्णवतो द्वाभ्या लब्धत्रिंशद्युत भवेत् ।। कराधिकेविना-राशिभागास्तिथियुतास्तथा ।।५।।

अब दृष्टिबल कहा जाता है। ग्रहो को ग्रहो पर तथा भावो पर दृष्टि स्पष्ट करने की रीति। देखनेवाले का नाम दृष्टा है। जो देखा जाय, वह दृश्य कहा जाता है। जैसे-सूर्य, चन्द्रमा को देखता है तो सूर्य दृष्टा और चन्द्रमा दृश्य है। दृश्य मे से दृष्टा को घटाना चाहिये। शेषाक ६ राशि से अधिक हो तो दस राशि मे घटाना। जो शेष रहे उसके अश करके २ का भाग देना, यही स्पष्ट दृष्टिबल है। (१) यदि शेषाक ५ मे अधिक हो तो राशि अक को त्यागकर अशादि को द्विगुणित करना दृष्टि होती है। (२) इसी प्रकार शोधित अक चार से अधिक हो तो पाच में घटाना। शेष रहे वही दृष्टि है। (३) शोधित अक तीन से अधिक हो तो चार मे घटाकर आधा करना तथा तीस और मिलाना तो दृष्टि होती है। (४) शेषाक २ से अधिक हो तो राशि अश छोडकर अश मे १५ और मिलाना तो दृष्टि होती है। (५) शेषाक १ से अधिक हो तो राशि को त्यागकर अशादि अक को आधा करना तो दृष्टि स्पष्ट होती है।।३।।४।।५।।

रूपाधिके विना राशिं भागा द्वाभ्यां विभाजिताः ।। त्रिदशे च त्रिकोणे च चतुरस्रे क्रमादथ ।।६।। शरवेदाःखरामाश्च तिथयो योजिताः क्रमात् ।। शनिजीवेज्यभौमानामादौ दृष्टिःस्फुटा भवेत् ।।७।।

अथ ग्रहदृष्टिचक्रमाह

	सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
सू०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
चं०	० ४ २१	० ० ०	० ४४ १३	० ० ०	० १० ४	० २६ ४५	० ० ०	० ० ०
मं०	० ० ०	० १५ ४७	० ० ०	० ८ १५	० ० ०	० ० ०	० ९ ११	० ० ०
बु०	० ० ०	० ० ०	० ३१ ३४	० ० ०	० ० ०	० १३ २०	० ० ०	० ० ०
गु०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
शु०	० ० ०	२ ५ ५२	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
श०	० ० ०	० ० ०	० ५७ ३७	० ० ०	० ० ०	० ५९ २९	० ० ०	० ० ०
शुभ	० ४ २२	० ५ ५२	० १५ ३२	० ० ०	० १० ४	० ४० ५	० ० ०	० १५ ४५
पाप	० ० ०	० १५ ४७	० ५० ३७	० ८ १५	० ० ०	० ५७ ५४	० ९ ११	२ १० ४८

नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिके शकाद्विशोधयेत् ॥ भागीकृत्यत्रिभिर्भक्तं फलमुच्चबलं भवेत् ॥८॥

शनि, गुरु, मंगल की दृष्टि का विशेष प्रकार कहा जाता है। पहले कही हुई रीति से यदि शनि की दृष्टि सिद्ध करना हो तो शनि से ३ और दसवें भाव की प्राप्त दृष्टि में ४५ और मिलाना। गुरु से पंचम, नवम भाव की दृष्टि हो तो ३० और मिलाना। मंगल से चौथे, आठवें भाव की दृष्टि हो तो १५ और मिलाना तो स्पष्ट दृष्टि होती है।।

अब उच्चबल कहा जाता है। ग्रहस्पष्ट में उसी ग्रह की नीच राशि और अंश घटाकर शेषांक ६ से अधिक हो तो १२ राशि में घटाना। शेष का अंशादि करके ३ का भाग देना। लब्ध अंशादि उच्चबल होता है।।६-८।।

अथोच्चबलचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	योग०
०	०	०	०	०	०	०	३
३८ ४	१७ २९	४० ११	२१ २९	११ ३२	६३ २४	३६ ५४	३८ २

अथ सप्तवर्ग बलचक्रम्

मू०	स्व०	अमि०	मि०	स०	श०	अश०
० ४५ ०	० ३० ०	० २० ०	० १५ ०	० १० ०	० ४ ०	० २ ०

अथ तात्कालिकमैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
च० म० गु० श० बु०	सू० च० बु० गु० शु० श०	सू० च० बु० गु० श०	सू० च० म० शु० गु०	च० म० शु० बु० श०	सू० च० बु० गु० श०	सू० म० गु० शु०	मित्र
गु०	०	शु०	श०	सू०	म०	बु०	शत्रु०

अथ नैसर्गिकमैत्रीचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहा
च० म० गु०	सू० बु०	सू० च० गु०	सू० शु०	सू० च० म०	बु० श०	बु०.शु०	मित्र
बु०	म० गु० शु० श०	शु० श०	म०.गु० श०	श०	म० गु०	गु०	सम०
शु० श०	०	बु०	च०	बु० शु०	सू० च०	सू०.च० म०	शत्रु

मूलत्रिकोणस्वर्भाधिमित्रमित्रसमारिषु ॥ अधिशत्रुगृहेष्वपि स्थितानां क्रमशो बलम् ॥९॥

अब सप्तवर्ग बल कहा जाता है। जिस ग्रह का वर्गबल करना हो, वह यदि मूल त्रिकोण में हो तो बल ४५ (घटी) होता है। स्वराशि में हो तो बल ३०, अधिमित्र में हो तो बल २० मित्रराशि में हो तो बल १५, समराशि में हो तो बल १०, शत्रुराशि में हो तो बल ४, अधिशत्रु में हो तो बल २ होता है।।९।।

अथ पचधा मैत्रीचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहा
च मं०	सू बु०	सू च गु०	सू शु०	च मं०	बु श०	बु०	ऽमित्र
बु०	मं गु शु श०	बु श०	मं गु०	श०	गु०	गु०	मित्र
गु शु श०	०	०	च०	सू शु बु०	सू च०	मं बु सू च०	सम
०	०	शु०	श०	०	मं०	०	शत्रु
०	०	०	०	०	०	०	अतिशत्रु

अथ सप्तवर्गचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	व०
११ श० स्व०	९ गु० मि०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	११ श० स्व०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	गृ०
५ सू० स्व०	४ च० स्व०	५ सू० स्व०	४ च० मि०	४ च० मि०	४ च० मि०	४ च मि०	हो०
११ श० स्व०	५ सू० स०	८ मं० अमि०	२ शु० मि०	३ बु० श०	१२ गु० मि०	१० श० स्व०	द्रे०
११ श० स्व०	९ गु० मि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	९ गु० मि०	७ शु० मि०	५ सू० श०	स०
८ मं० अमि०	८ मं० अमि०	१२ गु० मि०	६ बु० श०	११ श० स्व०	६ बु० श०	१२ गु० मि०	न०
१२ गु० मि०	७ शु० मि०	१० श० स्व०	२ शु० मि०	५ सू० स०	२ शु० मि०	१ मं० अमि०	द्वा०
१ मं० अमि०	७ शु० अमि०	८ मं० अमि०	६ बु० स०	९ गु० मि०	६ बु० स०	६ बु० स०	त्रि०

अथ सप्तवर्गबलचक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहा
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	गृ०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	हो०
० ३० ०	० १० ०	० २० ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० ३० ०	द्रे०
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ४ ०	० १५ ०	० १५ ०	० १५ ०	स०
० ३० ०	० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ३० ०	० ४ ०	० १५ ०	न०
० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० १५ ०	० १० ०	० १५ ०	० २० ०	द्वा
० २० ०	० १५ ०	० २० ०	० ४ ०	० १५ ०	० ४ ०	० ४ ०	त्रिं०
३ ५ १	१ ४५ ०	२ १० ०	१ ५८ ०	२ १४ ०	१ २३ ०	१ २४ ०	योग

मूताब्धय स्वरामाश्च नखास्तिथिर्दिशो युगा ॥ द्वाविदुशुक्रौ युग्मांशे तिथिरोजागताः परे ॥१०॥

सम विषम बल। चन्द्रमा और शुक्र ये दो ग्रह समराशि और समनवांश मे हो तो बल १५, विषम राशि और विषम नवांश मे हो तो बल शून्य होता है। विषम ग्रहो का बल इससे विपरीत अर्थात् विषमराशि नवांश मे हो तो बल १५ एव समराशि नवांश मे हो तो बल शून्य होता है॥१०॥

अथ युग्मायुग्मबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	०	०	०	०	०
०	१५	०	१५	१५	१५	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०

अथ केंद्रादिबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	०	०	१	०	०	१	३
३०	१५	१५	०	३०	१५	०	४५
०	०	०	०	०	०	०	०

केन्द्रादिषु स्थिता लग्नात्षष्टिस्त्रिंशत्तिथि क्रमात् ॥ आदिमध्यावसानेषु द्रेष्काणेषु स्थिता क्रमात् ॥११॥ पुंस्त्रीपुंसकयोषाख्या वद्युस्तिथिबला ग्रहा ॥ स्वषड्वर्गगतास्त्रिंशदेव स्यात्सबलं विदुः ॥१२॥

ग्रहो का केन्द्र बल-जन्म लग्न से ग्रह केन्द्र मे (१।४।७।१०) हो तो बल ६० होता है। तथा पणफर (२।५।८।११) मे हो तो बल '३०' होता है। एव आपोक्लिम (३।६।९।१२) में हो तो बल '१५' होगा।

द्रेष्काण बल पुरुष ग्रह (सू० म० गु०) प्रथम द्रेष्काण मे (दस अंश तक) हो तो बल '१५ इससे अधिक अंश हो तो बल शून्य। तथा नपुंसक ग्रह (बु० श०) द्वितीय द्रेष्काण मे (१० अंश मे अधिक २० अंश तक) हो तो बल '१५' अन्यथा शून्य। स्त्री ग्रह (च० शु०) तीसरे द्रेष्काण मे (२० अंश मे अधिक) हो तो बल '१५' अन्यथा बल शून्य होता है।

विशेष-जो ग्रह षट् वर्ग मे अपने ही वर्ग का हो तो उसका बल '३०' होता है॥११॥१२॥

अथ द्रेष्काणबलचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० १५ ०	० १५ ०	० ० ०	० १५ ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ ०

अथ पंचानां योगचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
४ २८ ४	२ ४७ २१	३ २५ १९	३ ४५ २९	३ १३ ३३	२ ४६ २४	१ ५७ ५४	२४ २७ १२

अर्कात्कुजात्सुख जीवाज्ज्ञाच्चास्त लग्नमार्कितः ॥ मध्यलग्न भृगोश्चंद्राद्धित्वा षड्भाधिके सति ॥१३॥

अथ दिग्बलचक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४९ १	० १ ५६	० ३२ २५	० ३१ ३०	० ४१ १२	० २१ ५८	० २९ १५	३ २८ १७

चक्राद्विशोध्य रामाप्तं भागीकृत्य च तद्बलम् ॥ आमध्याह्नाद्दर्धरात्राद्दिवारात्रिरिति क्रमात् ॥१४॥ अर्कभार्गवसूरीणांद्विघ्ना नाड्यो गता दिवा ॥ भौमचद्रशनीनां तु षष्टिभ्यो वर्जयेदिमाः ॥१५॥

दिशाबल-सूर्य तथा मंगल के राश्यादि में चतुर्थ भाव घटाना, बुध, गुरु में सप्तम भाव घटाना और शनि में लग्न तथा चन्द्र, शुक्र में दशम भाव घटाना। शेष अंक ६ राशि में अधिक

हो तो १२ राशि में घटाना और ३ का भाग देना। लब्धांक 'दिशाबल' होता है॥१३॥

नतोन्नत बल-(प्रथम 'नत' का ज्ञान होना आवश्यक है। नतसाधन "पूर्व नत स्याद् दिन-रात्रिखण्ड, दिवानिशोरिष्टघटी विहीनम्।" अर्थात् दिनार्द्ध या रात्र्यर्द्ध में इष्टघटी पल घटाने से पूर्व नत या 'नत' होता है। और नत (घटी पल) को ३० (घटी) में घटाने से उन्नत होता है) (श्लोकार्थ) मध्याह्न से मध्यरात्रि तक इष्टकाल हो तो दिनबल और मध्यरात्रि से मध्याह्न तक इष्टकाल हो तो रात्रि बल कहा जाता है। उन्नत की घटी पल को द्विगुणित करने से (दिवाबल में) सूर्य, गुरु, शुक्र का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल, शनि का दिवाबल होता है। और ६० में घटाने से चन्द्र, मंगल शनि का दिवाबल होता है। यदि रात्रिबल हो तो इससे विपरीत - अर्थात् उन्नत द्विगुणित चन्द्र, मंगल, शनि का रात्रिबल और ६० में से घटाने पर सूर्य, गुरु, शुक्र का रात्रिबल होता है। बुध का दिवाबल और रात्रिबल ६० ही रहता है॥१४॥१५॥१६॥

दिवाबलमिति प्रोक्त बल नैश ततोऽन्यथा ॥ षष्टिरेव सदा ज्ञस्य ॥ चक्रादर्के विशोध्य च ॥१६॥ अमाधिके विशोध्यार्काद्भागीकृत्यत्रिभिर्भजेत् ॥ पक्षज बलमिन्दुगुरुशुक्रार्याणां तु षष्टितः ॥१७॥

अथ नतोन्नतबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४८ ४४	० ११ १६	० ११ १६	० ० ०	० ४८ ४४	० ४८ ४४	० १६ ११	४ ० ०

अथ पक्षबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ४० ५	० १२ ५५	० ४७ ५	० १२ ५५	० १२ ५५	० १२ ५५	० ४७ ०	३ ११ १५

पक्ष बल-चन्द्रस्पष्ट राश्यादि मे सूर्य स्पष्ट राश्यादि घटाना (यदि सूर्यस्पष्ट राश्यादि अधिक हो तो चन्द्रराशिमे १२राशि बढाकर सूर्य घटाना) शेष अंकसंख्या ६राशिसे अधिक हो तो १२ राशी में घटाना। शेषांक को अंश करके ३ का भाग देना जो लब्ध हो वह चन्द्र,बुध,गुरु,शुक्र का पक्षबल होता है। उस बलको ६० मे से घटाने से सूर्य, मंगल, शनि का बल होता है।।१६।।१७।।

हित्वान्येषामहोरात्रि त्रिभागीकृत्य यत्र तु ॥ जन्मलग्नतदशाधिपते षष्टिबलं भवेत् ॥१८॥
आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिंशद्भूतार्णवा बलम् ॥ ज्ञार्कमंदेंदुशुक्रारा पतय सर्वदा गुरु ॥१९॥

अथ दिनरात्रित्रिभागचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१ ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	१ ० ०	० ० ०	० ० ०	२ ० ०

अथ वर्षमासादि चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ३० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ४५ ०	० ० ०	० १५ ०	० ३० ०

दिन रात्रि बल दिन तथा रात्रिके ३-३ भाग करो दिन के तीन भागो के स्वामी क्रमश बुध, सूर्य, शनि है। और रात्रि के तीन भागो के स्वामी क्रमश चन्द्र, शुक्र, मंगल है। जिस भाग मे जातक का जन्म हो उस भाग के स्वामी ग्रह का बल ६० होता है। एव आधान काल के बल विचार मे ६० की जगह ३० बल होता है तथा चित् प्रवेश या चैतन्य काल के विचार में ४५ बल होता है। इस बल मे गुरु का सदा ६० (घटी) अथवा १ (अंश) बल होता है।।१८।।१९।।

वर्ष पति, मास पति दिनपति का बल (वर्ष पति तथा मासपति सिद्ध करने के लिए अहर्गण की तथा तदग चक्र की आवश्यकता है) अहर्गण बनाने की रीति ग्रह लाघव में लिखी जाती है।।

अहर्गण साधन, ग्रहलाघव मध्यमाधिकार श्लोक ४।५

कुपक्षौन्दोनित शक ईश कृत् फल स्या, चाकाख्यं रविहतशेषकं तु युक्तम्। चैत्राद्यै पृथगमुत सरुद्र चक्रा, द्विघ्नुस्थादमरफलाधिमासयुक्तम् ॥४॥ खत्रिघ्नं गततिथि युङ् निरप्रचक्रां,-गांशा ढ्य पृथगमुतोऽब्धिषट्कलब्धैः। ऊनाहैर्विपुत महर्गणो भवेद्वै, वारः स्याच्छर-हृतचक्रयुग् गणोऽब्जात् ॥५॥

अर्थ-शालवाहनीय शक संख्या मे १४४२ कम करना जो शेष रहे उसमे ११ का भाग देना। जो लब्धि प्राप्त हो वह 'चक्र' कहाता है। भाग देने से जो वर्ष संख्या शेष है उसको १२ से गुणा करना और अपने इष्ट से शुक्ल प्रतिपदादि जो गत मास मे हो, सो युक्त करना पश्चात् दो जगह रखना। एक जगह चक्र को द्विगुण करके १० जोडकर ३३ का भाग देना जो लब्ध हो वह 'अधिमास' है। इस अधिमास संख्या को पृथक् स्थित मे युक्त करना तो 'मासगण' होता है।।४।। पश्चात् ३० से गुणा करे तथा शुक्ल प्रतिपद से इष्ट काल की गततिथि युक्त करे और चक्र का छठा भाग युक्त करे बाद दो जगह रखे। एक जगह ६४ का भाग देने से 'ऊनाह्' संख्या प्राप्त होगी वह दूसरी जगह की संख्या मे घटाने से 'अहर्गण' होता है। वार जानने के लिए चक्र को ५ से गुणा करके जोडकर ७ का भाग दे शेष संख्या वार है। सोमवार से गणना करे। कभी २ एक कम या अधिक भी होता है।।५।।

उदाहरण -श्रीस० २०१८ शक सम्वत् १८८३ है। शकारम्भ मे वैशाख कृष्ण १३ गुरुवार को अहर्गण स्पष्ट करना है। शक १८८३ मे १४४२ घटाया तो शेष ४४१ रहा, इसमे ११ का भाग दिया तो लब्ध '४०' यह 'चक्र' हुआ। शेष १ है। इसको १२ मे गुणा किया तो १२ हुआ इसमे चैत्र शुक्ल प्रतिपद से गतमास '०' से युक्त किया तो १२ हुआ, इसको २ जगह रखा एक जगह चक्र को द्विगुण ८० मे १० युक्त ९० करके १२ मे योग किया तो १०२ हुआ ३३ का भाग दिया ३ अधिमास प्राप्त हुआ इसको दूसरे मे युक्त किया तो १५ हुआ। इसको ३० से गुणा किया तो ४५० और चक्र ४० का छठा भाग ६ युक्त किया तो ४५६ हुआ शकारम्भ उपर्युक्त तिथि मे ही माना गया है अत गततिथि ० युक्त की तो यही रहा, दो जगह रखा। एक जगह ६४ का भाग दिया तो ७ 'ऊनाह' प्राप्त हुए, इसको दूसरी जगह घटाया तो ४४९ शेष रहा। यह अहर्गण हुआ। वार जानने के लिए चक्र ४० को ५ से गुणा करके २०० अहर्गण मे युक्त किया तो ६४९ हुआ। इसमे ७ का भाग दिया तो शेष ५ यह वार हुआ। इसमे १ कम करके सोमवार गणना किया तो गुरुवार हुआ।

वर्षमासदिनेशानां तिथिस्त्रिशाच्छरार्णवाः॥कालहोराधिपस्यैव पूर्वं बलपुरस्कृतम्॥२०॥

अथ कालबलचक्रम्							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३ ४५ ४९	० २४ ११	० ५८ ३१	१ ४० ५	२ ४६ १९	२ १ ३८	१ ३३ ३१	१२ १० ४

वर्षपति तथा मासपति स्पष्ट—केशवी जातक बलाध्याय से-
"द्विष्ठोऽयं ग्रहलाघवद्युनिचय श्चक्राहतैः षट्शरैः षट् दस्रैश्च युतः सबाणतपनः सेषुश्च खांगाग्निभिः । साग्रेशौ विहृतं फले गुणयमघ्ने चक्रनिघ्नाक्षसोमेते, सत्रियुगे नगोर्वरितके स्तोऽर्कात् समामासपौ ॥"

वर्षपति-अर्थ-इष्ट चक्र को ५६ से गुणा कर अहर्गणा मे युक्त करना। पुन. १२५ जोडकर ३६० का भाग देना। लब्ध अक को ३ से गुणा करे अब इसमे-चक्र को ५ से गुणा करके ३ जोडकर जो सख्या हो वह जोड कर ७ का भाग दे, जो शेष रहे वह रविवार से गिनकर 'वर्षपति' प्राप्त करे।

मासपति स्पष्ट-अहर्गण मे-२६ से गुणित चक्र सख्या युक्त करना। पुन ५ और जोडना, ३० का भाग देना। लब्धाक द्विगुणित करना ४ और जोडकर ७ का भाग देना, शेषाक रविवार मे मासपति होता है।।

दिनपति स्पष्ट-जिस दिन जो वार हो वही ग्रह दिनपति होता है। और दिनपति का बल ४५ होता है। दिनबल चक्र मे ग्रहो का बल शून्य रखना।।

होरा बल-इष्ट काल मे जिस ग्रह की होरा हो वह होरापति होता है। उसका बल पूर्ण (१) होता है। इस प्रकार वर्ष, मास, दिन, होरा, ये चारो प्रकार के प्रत्येक ग्रह के स्पष्टकर के चारो बलो का योग करना, तब चक्र मे जिस ग्रह का जितना बल प्राप्त हो सो लिखना। यह काल बल सम्पन्न हुआ।।२०।।

अयन बल-तात्कालिक ग्रह स्पष्ट करके अयनाश युक्त करना। (अयनाश "वेदाब्ध्यब्ध्यून खरसहृत शकोयनाशा ।" (ग्रहला०) अर्थात् शाका मे ४४४ घटाकर ६० का भाग देने से लब्ध अश और शेष घटी। यह अयनाश होते है।) पश्चात् 'भुज' करे। (भुज साधन-ग्रह लाघव-द्वितीय अधिकार-श्लोक १ "दो स्त्रिभोन त्रिभोर्द्ध विशेष्य रसै, श्चतोऽकाधिक स्याद् भुजोन त्रिभम् ।" ग्रहस्पष्ट सायन करने पर तीन राशि से कम हो तो वही भुज है। तीन राशि से अधिक हो तो ६ राशि मे शोधित करने से भुज होता है।

आधाने चित्प्रवेशे तु त्रिंशच्छरजलाकरा. ॥ सायनांशग्रहभुजराशीनिघ्नविधिभि: सुरैः ॥२१॥ सूर्यैर्हत्वा क्रमाद्राशिभागः स्यादनुपाततः ॥ एवं राश्यादिके युंज्यादर्करार्योहनः सु च ॥२२॥ राशित्रयमयो युज्यान्मेषादिस्थेषु तेष्वथ ॥ तुलादिस्थेषु राश्यादीस्त्रिराशिभ्यस्तु वर्जयेत् ॥२३॥ चद्रार्क्योर्विपरीति स्यात्सदा युंज्याद्बुधस्य तु ॥ भागीकृत्य त्रिभिर्भक्तं ग्रहाणामयन बलम् ॥२४॥

छ राशि से अधिक हो तो छ राशि कम करना तो भुज होगा ९ राशि से अधिक हो तो १२ राशि मे घटाना तो भुज होता है। ध्रुवाक तीन है–४५।३३।१२ भुज मे जो राशि हो उस ध्रुवाक से (अर्थात् राशिस्थान मे शून्य हो तो ४५ मे, १ हो तो ३३ मे, और २ हो तो १२ मे) ग्रह के अशादि अक को गुणा करना। और गुणित अक मे ३० का भाग देना। जो लब्ध

अशादिक हो सो गत खड मे जोडना। बाद राश्यादि अक करके ग्रह यदि तुलादि छ राशि मे हो तो तीन राशि घटाना तथा मेषादि छ राशि मे हो तो ३ राशि जोडना। यह मेष तुलादि सस्कार चन्द्रमा तथा शनि मे विपरीत करना। और बुध के अयन बल मे ३ राशि सदा जोडना। पश्चात् अशादि करके ३ का भाग देना तो अयन बल स्पष्ट होता है। केवल सूर्य का अयन बल द्विगुण करना॥२१॥२२॥२३॥२४॥

अथ अयनबलचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	के०
० २७ १५	० ५७ ४०	० ३९ ३२	० ५५ ९	० १८ ५०	० १८ ४५	० ५५ ५३	० २३ ४

रवेर्द्विगुणमेव स्याद्युध्यतोर्ग्रहयोरथ ॥ विश्लेष बलयोश्चापि निर्जितस्य बल भवेत् ॥२५॥ अपनीते योजिते तु जितस्य च बल भवेत्॥ षष्टिर्वक्रगतेर्वीर्यमनुवक्रगते दलम् ॥२६॥ पाद विकलभुक्त स्याद्दलमेव समागमे ॥ पाद मदगतेस्तस्य दल मन्दतरस्य च ॥२७॥

ग्रहो का युद्ध बल इष्टकाल के ग्रहस्पष्टो मे कोई भी २ ग्रह राशि अश कला विकला म समान हो तो उन दोनो ग्रहो का युद्ध समझना चाहिए। इस युद्ध बल के जानने की रीति यह है कि उन दोनो ग्रहो का आया हुआ बल परस्पर घटाकर जो अन्तर हो वह हीन बल मे घटाना और अधिक बल मे युक्त करना। तो हीनबली ग्रह दक्षिण दिशा का निर्जित बल कहलाता है। और बलाधिकग्रह उत्तर दिशा का विजयी कहलाता है॥२५॥

गतिबल जो ग्रह वक्री है उसका बल ६०। और मार्गी ग्रह का बल ३०। तथा सूर्य युक्त का बल १५। चन्द्रयुक्त का ३०। मदगति का १५। अन्य गति का ७।३०। शीघ्रगति का ४५। अति शीघ्रगति का ३० बल लेना चाहिए॥२६॥२७॥

शीघ्रभुक्तेस्तु पादोन बल शीघ्रतरस्य तु ॥ मध्यमस्फुटविश्लेषदलयुक्तोनित स्फुटात् ॥२८॥ मध्यमे त्वधिके न्यूने शीघ्रात्शास्फुट त्यजेत् ॥ चेष्टाकेद्र भवेत्ताभ्यां रवीन्द्वोरयनांशयुक् ॥२९॥

कुजादिग्रहो का चेष्टाबल—प्रथम सूर्यादि ग्रहो को 'मध्यम' करना और पश्चात् स्पष्ट करना। ग्रहो के मध्यम तथा स्पष्ट करने की रीति 'ग्रह लाघव' या सारिणियो मे करना हो तो 'केशवी जातक' मे करना। पश्चात् मध्यम और स्पष्ट ग्रह का अन्तर करके जो अन्तर हो उसको आधा करे। मध्यम ग्रह स्पष्ट ग्रह म अधिक हो तो मध्यम ग्रह म जोडना और कम हो तो घटाना पश्चात् शीघ्रोच्च फल मे घटाना तो चेष्टा केन्द्र होता है। बाद अश करके ३ का भाग देना तो चेष्टाबल होता है। सूर्य चन्द्र के यह विधि करके ३ राशि मिलान म चेष्टा बल होता है॥२८॥२९॥

अथ चेष्टाकेंद्रचक्रम्

म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह
० १६ ४१	१० २ ३२	१० २१ ४७	१० २ ३२	९ ११ १८	मध्यम
११ २७ ४	९ १० ३४	१० १५ ३९	११ ७ १४	९ ८ ४७	स्पष्ट
११ १० २२	० २१ ५८	० ६ ८	१ ४ ४२	० २ ३१	अंतर
५ २० ११	० १० ५९	० ३ ४	० १७ २१	० १ १५	बल
१० २ १२	५ १३ ३०	१० २ ३२	० २५ १६	१० २ ३२	शीघ्रोच्च
३ ६ २	१ २१ ५७	५ १३ ४९	३ २४ ३७	५ ७ १५	केंद्र

अगाधिकेऽर्कात्संशोध्य भागीकृत्य त्रिभिर्भजेत् ॥ सूर्यचंद्री सत्रिराशीकृत्वा प्रोक्तविधिस्तथा ॥३०॥ एवं चेष्टाबलं प्रोक्तं नैसर्गिकमथो शृणु ॥ षष्टिरेवैषव सप्त दश षड्विंशतिस्तत ॥३१॥

निसर्ग (स्वाभाविक) बल—सूर्यादिग्रहो का क्रमश ६०।५१।१७।२३।३४।४३।९ यह निसर्ग बल होता है॥३०॥३१॥

चतुस्त्रिंशत्त्रिवेदाक्षा सूर्यादीनां निसर्गजा ॥ शुभपापशनव्ध्यशयुतहीनानि तानि च ॥३२॥

पञ्चबल (स्थान बल, दिग्बल, कालबल, चेष्टाबल, नैसर्गिकबल) के योगमें युक्त करना। और पापदृष्टि अधिक हो तो चतुर्थांश पञ्चबल योग में हीन करना। यह दृष्टिबल का संस्कार है। इस प्रकार सूर्य आदि ग्रहों का षड् (प्रकार) बल विचार समाप्त हुआ॥३२॥

षड्बलानि ग्रहाणां स्युरेवमेकीकृतानि तु ॥ शुभदृष्टिचतुर्थांशयुतं स्वतार्यदर्शने ॥३३॥
हीनपाप दृगब्ध्यंशैर्युतं स्वामिबलं बलम् ॥ गुरुज्ञाभ्यां तु युक्तस्य पूर्णमेकत्तु योजयेत् ॥३४॥
मदाररवियुक्तस्य बलमेकेन वर्जितम् ॥ दिवा शीर्षोदयाश्चैव सन्ध्यायामुभयोदये ॥३५॥

अथ षड्बलचक्रमाह							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रह०
४ १८ ४	२ ४७ १९	१ ५ १९	४ ४९ २९	३ १२ ३३	२ ४६ २४	३ ५७ ५४	स्था०
० ४९ १	० १ ५६	० ११ २५	० ३१ ३०	० ४३ १२	० २१ ५८	० २९ १५	दिग्बल
३ ५ ४९	० २४ ११	० ५८ २१	० ४७ ५	२ ४६ ३९	१ १ ३८	२ १३ २१	कालबल
० २७ १५	० ५७ ४०	० ३२ ०	१ १२ २८	१ १३ २६	० ५६ ५७	१ ४८ ४८	चेष्टाबल
१ ० ०	१ ५१ ०	१ १७ ०	१ २६ ०	१ ३४ ०	१ ४३ ०	० ९ ०	नैसर्गिक बल
० ० ५ ध०	० २ ३९ ऋ०	० ६ १३ ध०	० २ ४ ऋ०	० २ ३१ ध०	० ४ २७ ऋ०	० २ १८ ऋ०	दृग्बल
९ ५३ १४	४ ४९ ४०	५ ३० १८	४ ४४ २८	८ ३२ २१	६ १९ ३०	७ १९ ३०	ऐक्यबल

अब भावबल कहा जाता है। जिस भाव मे बुध या गुरु स्थित हो उसके पूर्वोक्त भावबल १ युक्त करना और शनि, मगल युक्त हो तो भावबल में १ कम करना॥३३॥३४॥ भाव का कालबल–दिन का जन्म हो तो शीर्षोदय राशि–मिथुन, सिह, कन्या, तुला, वृश्चि कुम्भ ये राशि बलावान् होती है। रात्रि का जन्म हो तो मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर भावराशि बलवान् होती हैं। प्रात साय जन्म हो तो मीन बली है। कथित समय मे कथि राशि बलवान् और अन्य राशि बलहीन होती हैं॥३५॥

अथ भावदृष्टिचक्रम्												
	त०	ध०	स०	सु०	सु०	रि०	जा०	मृ०	ध०	क०	आ०	व्य०
सू०	० १९ ४९	० ३७ ५३	० ३० ४२	० २ २५	० ५७ १८	० ४४ ५३	० २९ ६	० १४ ५३	० ० ४२	० ० ०	० ० ०	० ० ७
च०	० ३९ ४३	० २१ १	० १४ २८	० ५७ ५	० ४१ १८	० २५ ३२	० ९ ४३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ३ ४२	० ३१ ४१
मं०	० ० ०	० ३ ४३	० ३३ ४४	० ५५ ४५	० २४ ११	० १४ ४८	१ ० ०	० ५२ ३६	० २७ ६	० १२ ५३	० ० ०	० ० ०
बु०	० ४० २९	० ३३ ३	० ७ ४१	० ४१ १०	० ४८ ५१	० ३ ३३	० १७ १९	० ३ ३	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ११ ५७
गु०	० १० १२	० ३३ ४९	० ५३ ३७	० २८ ४०	० ३४ २८	० ५० ३६	० ५५ १२	० ३१ ४६	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ० ०
शु०	० ० ०	० १३ ३७	० ४० ३९	० ३२ ५८	० ५ १	० ५४ २८	० ४५ १६	० २८ ३१	० १७ ११	० २ ५८	० ० ०	० ० ०
श०	० ४६ ७	० ११ ५५	० ५ २४	० ४६ ४	० ४७ ४२	० ३२ ५५	० ५४ १४	० ७ २८	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ५२ २२
शु०	१ ३० २८	१ ४१ ३०	१ ५६ २५	२ ४० १३	२ ९ ३८	२ १४ १०	२ ७ ४७	१ ३ २०	० १७ ३४	० २ ५८	० ३ ४२	१ ५ ४६
पा०	१ २ ५१	१ १३ ३०	० ५९ ४५	१ ४४ १४	२ ९ ५१	१ ३० ३६	३ २१ २७	१ १५ ७	० २७ ४७	० १२ ५३	० ० ०	० ५२ ५९
प्रा०	० २७ ३२	० २८ ०	० ५६ ४०	० ५५ ५९	० ० २१	० ४३ ३४	० १३ ३३	० ११ ५३	० १० ११	० ९ ५५	० ३ ४२	० ११ १७

नत्त पृष्ठोदयाश्चैव बलाधिक्य उदीरिता ॥ नृयुग्मयूकपायोनचापपूर्वार्द्धकुंभभात् ॥३६॥ मृगचापपरार्धाल्यमेषसिंहवृषादपि ॥ अस्ते कर्कट काच्चापि मृगात्यार्धाच्च मीनभात् ॥३७॥ अस्त सुख क्रमाल्लग्न ख हित्वागाधिके सति ॥ चक्राद्विशोध्य रामैश्च भजेद्भागीकृत बलात्॥३८॥

भावो का दिग्बल--मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध, कुभ इन राशियो के भाव मे सप्तमभाव कम करना, शेषाक छ राशि से अधिक हो तो १२ राशि मे घटाना, शेष के अश करके ३ का भाग देना। लब्ध अक 'दिग्बल' होता है। इसी प्रकार मकरराशि का पूर्वार्द्ध, धन का उत्तरार्द्ध, मेष, वृष, सिंह इन राशियो के भावो मे चतुर्थ भाव घटाकर और कर्क, वृश्चिक राशि के भावो मे लग्न घटाकर तथा मकर का उत्तरार्द्ध और मीन मे दशमभाव घटाकर छ राशि से अधिक हो तो १२ मे शुद्ध करके अश कर ३ का भाग देने से दिग्बल प्राप्त होता है॥३६॥३७॥३८॥

भावाना च ग्रहाणा च बलान्येव विदुर्बुधा ॥ अकाग्नयोऽगरामाश्च खाग्नि करजलाकरा ॥३९॥ नवाग्नय सुरा खाग्निर्दशसगुणिता क्रमात् ॥ रव्यादय सुबलिनो राशीना स्वामिनो वशात् ॥४०॥ अधिक पूर्णमेव स्याद्बल चेद्बलिनो मता ॥ गुरुसौम्यरवीना तु भूतषड्केन्दवो द्विज ॥४१॥ पचाग्नय खभूतानि करभूमिसुधाकरा ॥ खाग्नयश्च क्रमात्स्थानदिक्चेष्टाख्यमपा यने ॥४२॥ सितेन्द्वोस्त्र्यग्निचन्द्राश्च खेषव खाग्नय शतम् ॥ चत्वारिंशत् क्रमाद्भौममन्दयो षण्ण वक्रमात् ॥४३॥

सात ग्रहो तथा १२ भावो का 'सुबल' तथा 'पूर्णबल' विचार

सूर्य आदि ग्रहो के पूर्णबल के ध्रुवाक—सू० ३९ च० ३६ म० ३०, बु० ४२ गु० ३९, शु० ३३, श० ३०, इन अको को १० गुणित ध्रुवाक जानना। यथा सू० ३९०। च० ३६०। म० ३००। बु० ४२०। बृ० ३९०। शु० ३९०। श० ३०० ये पूर्णबल के ध्रुवाक है। (इन अको मे ६० से अधिक होने से ६० का भाग देकर क्रम से सूर्यादि ग्रहो के—सू० (६।३०) च० (६।०), म० (५।०), बु० (७।०), बृ० (६।३०), शु० (५।३०), श० (५।०) पूर्ण बलाक हुए। इतने या इससे अधिक हो तो पूर्ण बली और कम हो तो सुबली जानना। ये बल सूर्यादि ग्रहो के है। तथा १२ भावो का बल अपने अपने स्वामी के बल से जानना। भावो मे भी कथित ध्रुवाको से कम बल हो तो बली समान हो तो सुबल अधिक हो तो पूर्ण बल जानना। भावो का बल ग्रहो के समान ही जानना क्योंकि--राशि का बल अपने स्वामी के आधीन होता है॥३९॥४०॥ अब भिन्न भिन्न ग्रहो का स्थानबल, दिग्बल, चेष्टाबल, कालबल तथा अयन बल के पूर्णत्व के ध्रुवाक कहते है। हे मैत्रेय! सूर्य, बुध, गुरु का स्थानबल ध्रुवाक १६५ है। (६० से भाग देने पर २।४५) इससे अधिक हो तो पूर्ण बली होता है। इसी प्रकार दिग्बल अक ३५ है। इससे अधिक हो तो पूर्ण बली। चेष्टा बलाक ५० है अधिक हो तो पूर्णबली। कालबल ११२ है, अधिक हो तो पूर्णबली (६० से भाग देने पर १।५२ होता है) अयन बल ३० है। इसी प्रकार शुक्र, चन्द्रमा के क्रमश १३३ (२।१३) ५०।३०।४०।४० है। और मगल, शनि के क्रमश ९६ (१।३६) ३०।४०।६७ (१।७) २० ये पूर्ण बलाक है।

अथ भावषड्बलचक्रम्

त०	ध०	स०	सु०	सु०	रि०	जा०	मृ०	ध०	क०	आ०	व्य०	नाम
८ ४ २०	६ ४५ ३०	८ ४४ २८	४ ४९ ४७	९ ४१ १४	८ ४४ २८	६ ४५ ३०	८ ४ २०	८ ३२ २१	७ ३५ ३०	७ ३५ ३०	८ ३२ २१	भाव-स्वामि-बल
० २८ २५	० १८ ५७	० ४१ ३	० २८ २५	० १० ३१	० १० ३१	० ० ०	० ५० ३१	० १८ ५६	० ० ०	० ३८ ५६	० ११ ३	दिग्बल
८ ३२ ४५	७ ४ २७	९ २८ ३१	५ २८ १२	९ ५१ ४५	८ ५४ ५९	६ ४५ ३०	८ ३२ ४५	८ ५१ १७	७ ३५ ३०	८ १४ २६	८ ४३ २४	योगबल
० ६ ५३ ध०	० ७ ० ध०	० १४ १० ध०	० १३ ५९ ध०	० ० ३ ऋ०	० १० ५३ ध०	० ३ २३ ऋ०	० २ ५८ ऋ०	० २ ३३ ऋ०	० ९ २९ ऋ०	० ० १५ ध०	० ३ १९ ऋ०	दृग्बल
९ २९ ३८	७ ११ २७	९ ३९ ४१	५ ४२ ११	९ ५१ ४२	९ ५ ५२	६ ४२ ७	९ २९ ३८	८ ४८ ४४	७ ३३ १	८ १४ ४१	८ ४६ ४३	ध० योगबल म०
० ५० ४१	१ ६ ५२	१ १ १८	१ १० १०	१ २७ १९	० ५४ ९	१ १२ २८	० ३४ ४९	० ६ २३	० ० ०	० ० ०	० ४८ ४३	शेस्थाद्-बल
१० २० १९	८ १८ १९	१० ४० ५९	६ ५२ २१	११ १५ १	१० ० १	७ ५४ ३५	१० २० १९	६ ५५ ७	७ ३३ १	८ १४ १४	९ ३० २८	षड्बलैक्य

अथ चेष्टारश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२	२	३	२	६	४	६	२८
५२	१७	८	४३	२७	४९	१४	२३
३०	३०	४०	५४	३८	१४	३०	५६

उच्चरश्मिबल–जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट मे से उसकी नीचराशि अंश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि मे से घटाना, बाद राशि मे १ जोडना और अंशादि द्विगुण करना (अंश कलादि मे ३०-६० का भाग देकर यथास्थित करना) तो 'उच्चरश्मि' स्पष्ट होती है।।१।। चेष्टारश्मि बल–चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते है। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोडने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य मे चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहो का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है।।२।।

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मिं द्वयोर्युतेः ॥ दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टभ्यो वर्जितोऽशुभः ॥३॥ उच्चचेष्टाकरौ व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत्।।दलयेदिष्टमन्यत्स्यात्षष्टिभ्यो वर्जितं फलम्।।४।।

अथ इष्टचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२८	१५	३०	१९	३४	४५	४३	२१६
५४	१२	५२	२१	४	४८	१९	५६
५०	२०	५०	५०	४०	३०	४०	४०

अथ कष्टचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३१	४४	२९	४०	२५	१४	१६	२०२
३५	४७	७	३६	५५	११	४०	५३
१०	४०	१०	४०	१०	५०	२०	१०

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण–चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनो को जोडकर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ मे घटाने से अशुभ रश्मि होती है।।३।।

इष्ट बल और कष्ट बल–उच्च रश्मिमे १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि मे भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनो को जोडकर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसको ६० मे घटाने से कष्ट बल होता है।।४।।

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेऽधिसुहृदि क्रमात् ॥ मित्रर्क्षे च समर्क्षे च शत्रुभे चातिशत्रुभे ॥ नीचे च षष्टिरिष्वब्धि खाग्नि करकराग्निर्थि ॥ नागा वेदा करौ शून्य शुभमेतत्फलं विदुः ॥६॥ षष्ठिभ्यो वर्जिताश्चैते शिष्टं स्यादशुभ फलम् ॥ तदर्थं तु फलं प्रोक्तमन्यवर्गे शुभाशुभम् ॥७॥

त्रिंशत्खवेदाः सप्तांगा नखाश्च बलिनो विदुः ॥ भावस्थानग्रहैः प्रोक्तयोगे ये योगहेतवः ॥४४॥
तेषां बली ग्रः कर्तासौ स एवास्य फलप्रदः ॥ योगव्याप्तेषु बहुषु न्याय एवं प्रकीर्तितः ॥४५॥
गणितेषु प्रवीणश्च शब्दशास्त्रे कृतश्रमः ॥ न्यायविद्बुद्धिमान् होरास्कंधश्रवणसम्मतः ॥४६॥
दैवविद्देशिको देवसंमतो देशकालवित् ॥ ऊहापोहपटुः प्राज्ञः पटुः स्वजनसमतः ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावषड्बलादिवर्णननाम षष्ठोऽध्यायः॥६॥

यदि अनेक ग्रह पूर्णबली हो तो ग्रह के स्वगृही, उच्चराशिस्थ, मूलत्रिकोणस्थादि से विशेष बल का निश्चय करना चाहिए॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥
अधिकारी लक्षण–गणित में कुशल, व्याकरण में व्युत्पन्न न्याय निपुण, साहित्यविज्ञ, देवाराधन तत्पर, देशकालज्ञान में चतुर तर्क समर्थ, जनहितैषी, मधुरभाषी दैवज्ञ इस शास्त्र के पठन तथा फलादेश कहने में समर्थ होता है॥४६॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया भावषड्बलादिवर्णननाम षष्ठोऽध्याय ॥६॥

अथ रश्मीष्टकष्टवर्णनाह
नीचोनं तु ग्रहं भार्धाधिक्ये चक्राद्विशोधयेत् ॥ उच्चरश्मिर्भवेद्राशिः सैको द्वित्र्यंशसंयुतः ॥१॥

अथोच्चरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
४ ४८ २८	२ ४४ ५८	५ १ ५२	३ ८ ५२	२ २१ १८	६ २० २८	४ २३ २६	२८ ४९ २२

सायनारार्क इन्दुश्च सत्रिभो भानुवर्जितः ॥ चेष्टाकेंद्रः कुजादीनां पूर्वाध्याये समीरितम् ॥२॥

अथ शुभरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३ ५० २०	२ १ १४	४ ५ १६	२ ५६ २३	४ २४ २८	५ ३४ ५१	५ १८ ५८	२८ ४१ ३६

अथाशुभरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
८ ९ ३१	५ २८ ४६	३ ५४ ४४	५ ३ ३७	३ ५ ३९	२ २५ ९	२ ११ २	२६ १८ २१

अथ चेष्टारश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२ ५२ ३०	२ १७ ३०	३ ८ ४०	२ ४३ ५४	६ २७ ३८	४ ४९ १४	६ १४ ३०	२८ २३ ५६

उच्चरश्मिबल—जिस ग्रह का उच्चरश्मि बल स्पष्ट करना हो उसके राश्यादि स्पष्ट मे से उसकी नीचराशि अंश घटाना, शेष अंक ६ राशि से अधिक हो तो १२ राशि में से घटाना, बाद राशि मे १ जोड़ना और अंशादि द्विगुण करना (अंश कलादि मे ३०-६० का भाग देकर यथास्थित करना) तो 'उच्चरश्मि' स्पष्ट होती है।।१।। चेष्टारश्मि बल—चेष्टारश्मि साधन के लिए प्रथम चेष्टाकेन्द्र कहते है। स्पष्टसूर्य को सायन करके ३ राशि जोड़ने से सूर्य का 'चेष्टाकेन्द्र' होता है। सूर्य मे चन्द्रस्पष्ट घटाने से चन्द्रमा का चेष्टा केन्द्र होता है। मंगल आदि ५ ग्रहो का चेष्टाकेन्द्र पहिले कहा गया है।।२।।

उच्चरश्मिवदानीय चेष्टारश्मि द्वयोर्युतेः ।। दलं तु शुभरश्मिः स्यादष्टभ्यो वर्जितोऽशुभः ।।३।।
उच्चचेष्टाकरौ व्येकौ दिग्भिर्हत्वा तु योजयेत्।।दलयेदिष्टमत्यत्स्यात्षष्टिभ्यो वर्जितं फलम्।।४।।

अथ इष्टचक्रम्								अथ कष्टचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०	सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२८ ५४ ५०	१५ १२ २०	३० ५२ ५०	१९ २३ ५०	३४ ४ ४०	७५ ४८ ३०	४३ १९ ४०	२१६ ५६ ४०	३१ ३५ १०	४४ ४७ ४०	२९ ७ १०	४० ३६ ४०	२५ ५५ १०	१४ ११ ३०	१६ ४० २०	२०२ ५३ १०

चेष्टारश्मि, शुभरश्मि, अशुभरश्मि स्पष्टीकरण—चेष्टाकेन्द्र से चेष्टारश्मि साधन करने का प्रकार उच्च रश्मि की तरह ही जानना। इस प्रकार स्पष्ट की हुई चेष्टा रश्मि और उच्च रश्मि दोनो को जोड़कर आधा करना तो शुभ रश्मि होती है। और ८ मे घटाने से अशुभ रश्मि होती है।।३।।

इष्ट बल और कष्ट बल—उच्च रश्मिमे १ घटाना, बाद १० से गुणा करना तथा चेष्टा रश्मि मे भी १ घटाकर दससे गुणा करना, बाद दोनो को जोड़कर आधा करना तो इष्टबल होता है। इसको ६० मे घटाने से कष्ट बल होता है।।४।।

स्वोच्चे मूलत्रिकोणे च स्वर्क्षेऽधिसुहृदि क्रमात् ।। मित्रर्क्षे च समर्क्षे च शत्रुभे चातिशत्रुभे ।। नीचे च
षष्ठिरिष्वब्धिः खाग्निः करकरास्तिथिः ।। नागा वेदाः करौ शून्यं शुभमेतत्फलं विदुः ।।६।।
षष्ठिभ्यो वर्जितान्येते शिष्टं स्यादशुभं फलम् ।। तदर्धं तु फलं प्रोक्तमन्यथार्गं शुभाऽशुभम् ।।७।।

बृहत् इष्ट-कष्ट फल—उच्च राशि के ग्रह का बल ६०। मूल त्रिकोण का ४५। स्वराशि का ३०। अतिमित्र का २२। मित्र राशि का १५। समराशि का ८। शत्रुराशि का ४। अतिशत्रु का २। नीच का ०। यह शुभग्रह का इष्ट बल कहा। इस बल को ६० मे घटाने से अशुभ या कष्टबल होता है। और होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश इन वर्गो की राशियो मे उच्चादिक हो तो जितना बल कहा है उसका आधा लेना। और पापवर्ग मे हो तो पापग्रह का आधा लेना। इसप्रकार शुभवर्ग मे हो तो शुभग्रह का आधा और अशुभ वर्ग मे हो तो अशुभ ग्रह का आधा बल लेना॥५॥६॥७॥

अथ अशुभसप्तवर्गकष्टबलचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहा
० ३० ०	० ४५ ०	० ४५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० ४५ ०	० ३० ०	ग्रहः
० २८ ०	० २१ ३०	० २२ ३०	० २६ ०	० २२ ३०	० २२ ३०	० २२ ३०	होरा
० १५ ०	० २६ ०	० १२ ०	० २२ ३०	० २८ ०	० २२ ३०	० १५ ०	द्रेष्का
० १५ ०	० ० ०	० २२ ३०	० २८ ०	० ० ०	० ० ०	० २६ ०	सप्ता
० १९ ०	० १९ ०	० २२ ३०	० १८ ०	० १६ ०	० २८ ०	० २२ ३०	नवा.
० २२ ३०	० ० ०	० १५ ०	० ० ०	० २६ ०	० ० ०	० १९ ०	द्वाद०
० १९ ०	० ० ०	० १९ ०	० २८ ०	० २२ ३०	० २८ ०	० २८ ०	त्रिंशा

अथ शुभसप्तवर्गइष्टबलचक्रम्

सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्रहा
० ३० ०	० १५ ०	० १५ ०	० ३० ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	ग्रह
० २ ०	० ७ ३०	० ४ ०	० ७ ३०	० ७ ३०	० ७ ३०	० ७ ३०	होरा
० १५ ०	० ४ ०	० ११ ०	० ७ ३०	० २ ०	० ७ ३०	० १५ ०	द्रेष्का
० १५ ०	० ३० ०	० ७ ३०	० २ ०	० ३० ०	० ३० ०	० ४ ०	सप्तां०
० ११ ०	० ११ ०	० ७ ३०	० ११ ०	० १५ ०	० २ ०	० ७ ३०	नवां.
० ७ ०	० ३० ०	० १५ ०	० ३० ०	० ४ ०	० ३० ०	० ११ ०	द्वाद०
० ११ ०	० ३० ०	० ११ ०	० २ ०	० ७ ३०	० २ ०	० २ ०	त्रिंशा.

पञ्चस्विष्टफलं चादौ कष्टं समुदाहृतम् ॥ अशुभास्तु क्रमः प्रोक्ता इति शास्त्रेषु निश्चयः ॥८॥
दिग्बलं दिक्फलं तस्य तथा दिनफलं भवेत् ॥ तयोः फलं शुभं प्रोक्तं षष्ट्या वर्ज्यं तथेतरत् ॥९॥
शुभादिके शुभं नेष्टमशुभे चादिके शुभात् ॥ बलैरेव हते स्याता दृष्टिः हन्यात्स्फुटैव सा ॥१०॥ बलैः
षड्भिः समेधित्वा समानीतैः पृथक् पृथक् ॥ बलिनः प्रोक्तसंज्ञैश्च बलैरेव हरेत्ततः ॥११॥
तत्तद्बलफलानि स्युरशुभानि शुभानि च ॥ शुभपापफलाभ्यां च दृष्टिं हन्याद्बलं तथा ॥१२॥

प्रथम जो उच्चादि ९ प्रकार का बल कहा है उसमे इतना विशेष जानना कि उच्च, मूलत्रिकोण, स्वगृह, मित्रक्षेत्र, अतिमित्र क्षेत्र, इन ५ स्थानो के ग्रहो का बल शुभ होता है। और सम क्षेत्री ग्रह का बल सम एवं नीच शत्रु अति शत्रु राशिगत ग्रह का बल अशुभ जानना॥८॥

दिग्बल आदि से बृहत् इष्ट-कष्ट बल लाने का प्रकार–

दिग्बल का दशम भाग लेकर फल स्पष्ट करना। इसी तरह दिग्बल का १५ मे भाग लेकर फल लेना। दोनो को जोडने से जो अक आये वही इष्ट बल होता है। ६० मे घटाने से कष्टबल होता है। इनमे शुभ बल अधिक हो तो शुभ एवं अशुभ बल अधिक हो तो अशुभ होता है। इष्ट-कष्ट दृष्टि साधन–प्रथम सख्या ४५ श्लोक मे जो इष्ट कष्टबल कहा है उससे दृष्टि को गुणा करने से इष्ट दृष्टि, कष्ट दृष्टि होती है॥९॥१०॥ प्रथम जो होरा, द्रेष्काण आदि षड्बल कहा गया है वह प्रत्येक ग्रह का भिन्न भिन्न जोडने से जो अक होगा उसकी पिण्डक सज्ञा है। पूर्वोक्त इष्ट कष्ट बल से भाग देने से जो फल प्राप्त हो वह बृहत् इष्ट एवं बृहत् कष्ट बल होता है। इष्टबल को शुभ तथा कष्ट बल को अशुभ समझना। इस शुभ और अशुभ फलाङ्क से दृष्टि को गुणा करना और बल को गुणा करना॥११॥१२॥

दृष्टेश्चशुभपापोत्थे बले स्याता तथैव च ॥ भावाना च फले प्रोक्ते यतीनां च फले उभे ॥१३॥
सराशिर्ग्रहयुक्तश्चेद्भावसाधनसगुणे ॥ फले तस्य शुभे युञ्ज्यादशुभे वर्जयेच्छुभे ॥१४॥
पापक्षेत्रव्यया चैव बले दृष्ट्या च तेऽत्र तु ॥ युञ्ज्यादुच्चादिषु फलममित्रादिषु
वर्जयेत् ॥१५॥

जो फल प्राप्त हो वह दृष्टि का और बल का शुभ तथा अशुभ फल होता है। प्रथम जो ग्रहबल और भाव बल कहा है उसमे जो भाव जिस ग्रह से युक्त हो उस ग्रह की राशि बल स भाव के बल को गुणा करना। यदि शुभ बल हो तो गुणन फल जोडना अशुभ फल हो तो घटाना। बल के फल मे विपरीत करना। पाप हो तो युक्त करना और शुभ हो तो हीन करना। दृष्टि बल मे भी यही क्रिया करना। अर्थात् फल उच्चादिक का हो तो युक्त करना शत्रु आदि का हो तो हीन करना॥१३॥१४॥१५॥

स्थाने चैव क्रमात्प्रोक्तं करणे चान्यथा क्रमः ॥ राशिद्वयगते भावे तद्राश्यधिपतेः क्रिया
॥१६॥ स्थानाधिकस्तु भावेन साम्यभावः प्रकीर्तितः ॥ तत्स्थाने च तद्भावे तदानीं स्थानदान्
ग्रहान् ॥१७॥ सयोज्य स्थानसख्याया बलमेतत्सम भवेत् ॥१८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे इष्टकष्टवर्णन नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अष्टक वर्ग मे जो रेखा का फल कहा है बिन्दु मे उससे विपरीत जानना। और भावो म जो ग्रह सधिगत हों उस भाव की राशि को ग्रह के बल मे जोडने स स्थान बल के समान हो तो लाभदायक होता है और आधा करने से यह फल स्पष्ट होता है।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० इष्ट कष्ट
वर्णन नाम सप्तमोऽध्याय ॥७॥

अथ रश्मिफलवर्णनाध्याय

विधातृलिखिता या सा ललाटक्षरमालिका ॥ तस्या शरीरकथन वक्ष्यामि च पृथक्पृथक् ॥ लग्नाच्छरीरचिता च द्वितीयात्स्व च पैतृकम् ॥ भरणीय कुटुब च पश्वादि च वदेद्बुध ॥२॥ तृतीयात्सोदर बुद्धि दु:पूर्वा विक्रम विदु ॥ चतुर्थात्पितर वेश्म सुख लालित्यमेव च ॥३॥ सौमनस्यमपत्यानि प्रज्ञा मेधा च पचमात् ॥ हानि व्याधिमरि षष्ठान्मैथुन स्त्रीं जय तत ॥४॥

रश्मि फल वर्णन

जातक के ललाट म विधाता की लिखी हुई प्रारब्ध भोग की जो अक्षर माला है वह प्रत्यक्ष नही देखी जा सकती। अत उसके ज्ञान के लिये लग्न आदि १२ भावो का फल कहा जाता है। लग्न से शरीर के सुख दु ख का विचार करना। धन भाव से स्वोपार्जित धन का तथा पितृधन सवक परिवार पशु सती आदि का विचार करना॥१॥२॥ तीसरे भाव से भ्रातृवर्ग दुष्ट बुद्धि और पराक्रमका विचार। चौथेभाव स मकान भूमि सुख सुन्दरता तथा पिताका विचार पचम भाव स मन की प्रसन्नता पुत्रादिका का सदविचार का स्मृति शक्ति का विचार। छठे भाव से हानि रोग और शत्रु का विचार। सप्तम भाव मे भार्या का भार्या सुख का जय का विचार करना॥३॥४॥

मृति पराजय दु ख हानि व्याधि तथाष्टमात् ॥ सौशील्यभाग्य धर्मांश्च नवमाद्गमातया ॥५॥ मानास्पदाज्ञाकर्माणि आयादर्थं व्ययाद्व्ययम् ॥ दिग्भवेष्विषुसप्ताष्टशरा स्वोच्चेकरा रवे ॥६॥ नीचे म खातरा प्रोक्ता रश्मयस्त्वनुपातजा ॥ नीचोन तु ग्रह भार्धाधिके चक्राद्विशोधयेत् ॥७॥

अथ रश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
५ ४० २३	२ ३१ १२	३ ४५ ४६	१ ४३ ४१	१ २२ २५	६ ५३ ३८	२ २६ २६	२४ २३ १२

अ० न० मा० मू० त्रिकोणरश्मि चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१३ १४ १३	० ० ०	८ २ ४७	५ १० ४३	२ ५६ ३६	० ० ०	५ १३ ४७	३३ ३८ ६

अथ द्रेष्काणरश्मिक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	५ ५९ ३०	११ १७ १८	४ १० २२	० ० ०	० ० ०	० ० ०	२१ २७ १०

अथ होरारश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१७ १ ९	७ ३३ ३९	८ ४६ ४७	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	१४ २१ ३५

अथ त्रिंशांशरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
० ० ०	५ २४ २	११ १७ १८	० ० ०	६ ५२ ५	० ० ०	० ० ०	२२ ३२ २५

अरावध्यरिनीचे च वेदद्वयस्त्रिलहीनकाः ॥ उच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्वत्रिकोणे द्विसंगुणम् ॥११॥ स्वर्क्षे त्रिघ्ना द्विसंभक्तास्त्वधिमित्रगृहेपि च ॥ वेदघ्ना रामसंभक्ता मित्रभे षड्गुणास्ततः ॥१२॥ पंच भक्तास्तथा शत्रुगृहे द्विघ्नाश्चतुर्हृताः ॥ अतिशत्रोः करघ्नाश्च पंचभक्ता न नीचभे ॥१३॥

मित्रराशिमे ५/६ शत्रुराशिमे २/४। अतिशत्रुमे २/५ भाग। यहा ऊपर का अक गुण और नीचे का अक भाग का द्योतक है॥

उक्त रश्मि स्पष्ट मे अन्य विशेष सस्कार—

अशपति उच्च वर्ग मे हो तो प्राप्त रश्मि बलको ३ से गुणा करना। तथा रश्मिपति त्रिकोण मे हो तो पूर्वरश्मि को द्विगुणित करना। यदि अतिमित्र वर्ग मे हो तो चतुर्गुणित कर तीन का भाग देना तो रश्मि स्पष्ट होती है। इसी प्रकार मित्रगृह मे हो तो छ से गुणा कर ५ का भाग देना। शत्रु राशि मे हो तो दो से गुणा कर चार का भाग देना। अतिशत्रु के वर्ग मे हो तो दो से गुणा कर पाचका भाग देना तथा नीचवर्ग मे हो तो कोई विशेष सस्कार नही करना। सक्षेप—उच्च मेX३। मूल त्रिकोण मे X २। अतिमित्र मे ३/४ ॥११-१३॥

शनिं सित विना ताराग्रहा अस्तगता यदि ॥ विरश्मयो भवंत्येव वक्रादौ द्विगुणास्ततः ॥१४॥ अनुपातोऽन्तरे वक्र त्यागेऽष्टांशविहीनकाः ॥ मंदायां दशभागोना वस्वंशोनाः कराः स्मृताः ॥१५॥ तथा शीघ्रतरायां च वेदांशोनाः कराः स्मृताः ॥ अष्टांशोनाश्च शीघ्रायां केचिदेवं वदन्ति हि ॥१६॥

अथ मतांतररश्मिचक्रम्							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
०	३	५	०	१	२०	३	३४
०	१	१	५१	३८	४०	३९	५१
०	२७	१	५१	५४	५४	३९	४६

वक्रानुवक्रा विकला शीघ्रा शीघ्रतरा गतिः ॥वृद्धिहीने तु शिष्टे द्वे वर्जनीये समासमा ॥१७॥

मतान्तर से हानि वृद्धि—

मं०, बु० गु० अस्त हो तो रश्मि बलहीन होते है, किन्तु शुक्र, शनि रश्मिबल हीन नही होते एव रश्मिपति वक्रारभ में हो तो रश्मिबल द्विगुण होगा। वक्रान मे अष्टमाश। मध्य मे त्रैराशिकसे स्पष्ट करना। रश्मिपति मद हो तो दशमाश हीन होता है। अतिमन्द हो तो अष्टमाश हीन। शीघ्रगति षष्ठाश हीन। शीघ्रतर हो तो चतुर्थाश हीन करना॥१४॥१५॥१६॥

ग्रह-गति के आठ भेद—

वक्र, अनुवक्र, विकल, शीघ्र, शीघ्रतर मन्द, मन्दतर, सम ये आठ प्रकार की ग्रहों की गति होती है। इनमें दो गति वर्ज्य है, क्योकि-शीघ्रतर गति वृद्धि हीन होने से मन्द और शीघ्रगति वृद्धिहीन होने से मन्दतर कही जा सकती है॥१७॥

योगेषु ये ग्रहाः प्रोक्तास्तेषां योगे च रश्मय ॥ पापसौम्यारिमिश्राणां योगे हानिश्च कीर्तिता ॥१८॥ उच्चादिषु च पूर्वोक्त पापो बलवशाद्भवेत् ॥१९॥ चतुर्गुणा राजयोगे पूर्वन्यायेन बोधिता ॥ पञ्चाष्टषण्नवाष्टाकवेदा स्यू रश्मय स्वका ॥२०॥ द्विग्रहादिषु योगेषु ग्रहभावफलाहता ॥ गतिसंज्ञानुरूपेण फलानां निर्णय स्मृत ॥२१॥ इष्टकष्टफलसगुणा-स्ततस्तत्करानयच सयुतास्तुतान् ॥ निश्चितार्थमखिल समीक्ष्य तत्प्रस्तुत तु सकल वदेद्बुध ॥२२॥

राजयोग, दरिद्रयोग कारक आदि में विशेष सस्कार—

राजयोग कारक तथा दरिद्रयोग कारक ग्रहों का यदि एक राशि से सम्बन्ध हो तो दरिद्रयोग कारक ग्रह की रश्मि राजयोग कारक ग्रह में घटाना, जो बाकी रहे वो राजयोगकारक की रश्मि होती है॥१८॥

उच्चादिस्थानगत रश्मिनिर्णय—

शुभग्रहों की उच्चादि स्थानगत रश्मि यथावत् रखना किन्तु पापग्रहों की रश्मि में कमीबेशी बलाबल के अनुसार होती है॥१९॥ प्रथम कहे गये (श्लोक स० ६।७ में) राजयोग के सस्कारों में प्राप्त रश्मि में विशेष सस्कार

यदि राजयोग कारक ग्रह हो तो सूर्य के ५ चन्द्र के ८ भौम के ६, बुध के ९, गुरु के ८, शुक्र के ९, शनि के ४ इन ध्रुवांकों में पूर्व कथित रीति से रश्मि स्पष्ट करके चतुर्गुणित करने से रश्मि स्पष्ट होती है॥२०॥ जो योग दो तीन या चार आदि ग्रहों से होता हो वहां उन ग्रहों की रश्मियों से भावांक गुणा करके ६० का भाग देना जो लब्धि प्राप्त हो वह फल होगा। आगे कहा गया रश्मि का फल गति के अनुसार कहना चाहिए॥२१॥

इष्ट, कष्ट बल का गुणन में उपयोग—

इष्टफल और कष्ट फल में रश्मि को गुणा करके परस्पर युक्त करके उस फल के अनुसार आगे कहा गया इष्ट या अनिष्ट फल कहना चाहिए॥२२॥

एकादि पञ्चपर्यन्तं दरिद्रा मृत्युलिता ॥ शीधाभो कामसो पाता अपि जाता कुलोत्तमे ॥२३॥

अथ इष्टबलचक्रमाह्							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	दे०
२ ४१ १२	० ३८ १८	१ ५६ १७	० ३३ ३१	० ४६ ४७	५ १५ ५८	? ३५ ४२	११ १० २०

अथ कष्टबलरश्मिचक्रम्							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
२ ५९ १०	१ ५२ ५१	४ ४९ २३	१ १० ९	० ३५ ३६	१ ३७ ४७	० ४० ४०	१० ४५ ४६

परतो दशके यावत्केवल जठराय वै ॥ निःस्वाः कदाचिद्दासाश्च भारवाहाः कदाचन ॥ स्त्रीपुत्रगृहहीनाश्च यशायोग्यक्रियारताः ॥२४॥ एकादशोऽल्पपुत्राः स्वल्पधनाः स्त्रीविमानिता मनुजाः ॥ बिभ्रति कृच्छ्रेण निज स्वल्पं च कुटुम्बमेव तदा ॥२५॥ द्वादशे निर्धना मूर्खा धूर्ताः सत्त्वविनाशकाः ॥ त्रयोदशे च चोराः स्युर्निर्धनाः कुलपांसनाः ॥२६॥

रश्मिफल कथन—

रश्मि सख्या १ से ५ तक हो तो जातक दरिद्र तथा महादुखी रहता है। उत्तमकुल मे जन्म होने पर भी नीच आदमी का नोकर ही होता है॥२३॥ और ५ से '१०' रश्मि तक रश्मियोग हो तो केवल उदर भरणयोग्य ही रहता है कभी दरिद्री, कभी दास, कभी भारवाही तथा कुल को अपकीर्ति कारक कार्यरत रहता है॥२४॥ यदि रश्मियोग '११' हो तो कम पुत्रवाला साधारण आमदनीवाला, और सम्पत्तिरहित, अपने परिवार के भरण पोषण मे भी असमर्थ रहता है॥२५॥ यदि रश्मियोग '१२' हो तो मनुष्य, निर्धन, मूर्ख, धूर्त, असत्यभाषी होता है। '१३' रश्मियोग हो तो चोर, दरिद्री तथा कुलहीन होता है॥२६॥

विद्वांश्चतुर्दशे धर्मे रतो भर्ता धनार्जकः।कुटुम्बभरणे सक्तः कुलयोग्यक्रियो भवेत् ॥२७॥ रश्मिभिः पंचदशभिरेवं गुणयुतोऽपि सन् ॥ स्ववंशमुख्यो धनवानित्याह भगवान्मुनिः ॥२८॥ आविंशतेः कुलेशाना बहुभृत्याः कुटुम्बिनः ॥ कीर्तिमंतश्च पूर्णाश्च स्वजनेन च षोडश ॥२९॥ एकविंशतिविख्यातः पंचाशज्जनपोषकः ॥ दानशील कृपायुक्तो द्वाविंशे लोभसंयुतः ॥३०॥ धनधान्यरिपुश्च प्रभुः स्वल्पगुणो भवेत् ॥ त्रयोविंशे तु मुख्यश्च विद्याहीनो धनी सुखी ॥३१॥ आत्रिंशत्परतः श्रीमान्सर्वसत्त्वसमन्वितः ॥ राजप्रियश्च चंडश्च जनश्च बहुभिर्वृतः ॥३२॥

योग '१४' हो तो धर्मात्मा, शान्तस्वभाव, उद्यमी, कुटुम्बपालक, तथा उचित अर्थ कमानेवाला होता है॥२७॥ '१५' योग हो तो धर्मात्मा, शान्त, उद्यमी, परिवार पालन मे समर्थ, धनी तथा कुल मुख्य होता है॥२८॥ १६ से २० तक रश्मि योग हो तो परिवार पोषण समर्थ कीर्तिमान्, धनी, प्रसिद्ध होता है॥२९॥ रश्मि योग '२१' हो तो ५० मनुष्यो तक का पालन करनेवाला, दानी, दयावान् होता है। '२२' योग हो तो लोभी, धनी, शत्रुहीन, समर्थ तथा अल्पगुणी होता है॥३०॥ रश्मियोग २३ हो तो विद्याहीन होने पर भी समाज में आदरणीय, धनी तथा सुखी होता है॥३१॥ २४ से ३० तक रश्मियोग हो तो धन, ऐश्वर्यवान्, सर्वबल सम्पन्न, राजप्रिय, प्रतापी तथा समाज सेवित होता है॥३२॥

एकत्रिंशे च सचिवो द्वात्रिंशे वाहिनीपतिः ॥ पूर्वभागे समुद्दिष्टफलानि परतो विदुः ॥३३॥ पङ्क्तिः सूर्या तिथिनृपात्यष्टिधृतिश्च विंशतिः ॥ नखा मूर्च्छा जिनास्तत्त्वं त्रिंशद्द्वात्रिंशदेव च ॥३४॥ पञ्चाशच्चैव षष्टिश्च शतं चैव सुतादयः ॥ आरम्य विश्वसंख्याया क्रमात्स्वजनपोषकाः ॥३५॥ अत ऊर्ध्वं नृपे यातं आपञ्चत्रिंशतं क्रमात् ॥ शतपञ्चकमारम्य सहस्रावधि पोषकः ॥३६॥ अत ऊर्ध्वं तु देशानां संख्या स्युः पञ्चविंशतिः । षड्विंशतिश्च भानि स्युस्त्रिंशत् षट्त्रिंशदेव च ॥३७॥

रश्मियोग ३१ हो तो प्रधान मन्त्री तथा ३२ हो तो सेनापति होता है। इससे अधिक रश्मियोग का फल पूर्वखण्ड में कहा है॥३३॥

रश्मियोग के अनुसार सन्तान संख्या का विचार—

३३ रश्मि योग हो तो १० पुत्र हों। इसी प्रकार ३४ योग से १२। ३५ से १५। ३६ से १६। ३७ से १६। ३८ से १७। ३९ से १८। ४० से १८। ४१ से २०। ४२ से २१। ४३ से २४। ४४ से २५। ४५ से ३०। ४६ से ३२। ४७ से ५०। ४८ से ६०। ४९ से १०० से सतान होती है। १०० से ऊपर संख्या कही नहीं गई है तथापि ५० या ५० से अधिक रश्मियोग हो तो सतान भी १०० से अधिक समझना चाहिए॥३४॥३५॥

रश्मि के प्रमाण से बहुजन पोषक योग—

३२ रश्मि के योग से ४५ मनुष्यों तक पोषक होता है। ३५ रश्मियों से ५०० से १००० मनुष्यों तक का पोषण करनेवाला होता है॥३६॥

रश्मियोग से देशाधिपतित्व विचार—

३६ रश्मि योग हो तो २५ गावों का अधिपति हो। ३७ रश्मि योग हो तो २६ गावों का अधिपति हो। इसी प्रकार ३८ योग से २७ गाव ३९ योग से ३० गाव, ४० रश्मियोग से ३६ गावों का अधिपति होता है॥३७॥

अत ऊर्ध्वं नृपा क्षात्रधर्मिणः क्षत्रियोऽथ वा ॥ भूहिन्यब्धीषु षट्सप्तभूमृज्जनपदाधिपाः ॥३८॥ पञ्चाशद्रश्मिसंयोगे सम्राट् स्यादनुपाततः ॥ अतऊर्ध्वं तु देवेन्द्रतुल्याः स्युरिति पद्मभूः ॥३९॥ उच्चचेष्टोत्थयोगार्धगुणिता षष्टिभाजिता ॥ नराश्वैश्च तु संख्या स्युः स्पष्टा इत्याह पद्मभूः ॥४०॥ शूद्रादयः बलौ राजधर्मिणो म्लेच्छधर्मिणः ॥ विप्राश्चेच्छ्रीधनैर्युक्ता यागकर्मक्रियारताः ॥४१॥

४१ रश्मि योग से एक देश का राज्य। ४२ रश्मियोग से २ देशों का राज्य। ४३ से ३ देशों का। ४४ से ४ देशों का। ४५ से ५ देशों का। ४६ से ६ देशों का। ४७ रश्मियोग से ७ देशों का राज्य करनेवाला होता है॥३८॥ ५० रश्मियोग से सार्वभौम राजा। इसी प्रकार ४८ और ४९ रश्मि योग हो तो ७ देश और सार्वभौम के मध्य में जानना। ५० से ऊपर रश्मियोग हो तो इन्द्र के समान विभूतिवाला होता है॥३९॥ अब रश्मि सम्बन्ध से विशेष फल कहा जाता है। उच्च रश्मि और चेष्टा रश्मि दोनों का योग करना। उसे दो जगह रखना। एक जगह आधा करना। उस आधे किये हुए अङ्क से दूसरे जगह रखे हुए योग को गोमूत्रिका न्याय से गुणा करना। बाद ६० का भाग देना। लब्धि जो अङ्क हो उतनी ही संख्या के नौकर चाकर गौ घोड़े आदि होंगे ऐसा जानना॥४०॥ पूर्व कह गए

राजयोग कलियुगमे धर्महीन क्षत्री आदिक के लिये जानना। यदि वे राजयोग ब्राह्मण के हो तो उनके प्रताप से यज्ञ याग आदि कर्मनिष्ठ होकर विद्वान् और सुखी होगा। और ज्ञान तथा पुण्य के प्रताप से अन्त मे स्वर्ग राज्य भोगनेवाला होगा ऐसा जानना॥४१॥

योगरश्मिसमायोगे तदानीं तत्फल विदु ॥ नाभसादिषु योगेषु राजयोगे स्थित तु तत् ॥४२॥ योगकर्तारमारभ्य बलिन च विनिर्णयेत् ॥ पूर्व भागे समुद्दिष्टभाग्यकर्मफलानि तु ॥४३॥ अनुपातेन विज्ञाय योजयेद्वर्जयेद्बुधः॥ स्थानवीर्याधिके देशे मुख्यः स्यादनुपाततः ॥४४॥ दिग्बले विजयश्चेष्टा वीर्ये तु प्रभुता भवेत् ॥ कालवीर्याधिके कार्ये सदोत्साही तथायने ॥४५॥

जो रश्मियोग का फल कहा गया है वह फल राजयोग सहित रश्मि योग हो तो राज्य फलदायक होगा, ऐसा समझना चाहिए। और नाभस आदिक जो योग है उनमे भी रश्मियोग होने से यथार्थ फल प्राप्त होगा।॥४२॥ प्रथम भाग मे भाग्य और कर्मभाव का जो फल कहा गया है वह फल रश्मियोग के अनुपात से न्यूनाधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।॥४३॥

सप्तबल विचार—

स्थान बल १, दिग्बल २, चेष्टाबल ३, कालबल ४, अयन बल ५, उच्चबल ६, नैसर्गिक बल ७ ये सात बल होते है। इनका फल—स्थान बल अधिक हो तो देश मे मुख्य पुरुष हो। दिग्बल अधिक हो तो विजयी हो। चेष्टाबल अधिक हो तो नेता हो। कालबल अधिक हो तो सर्वकार्य मे चतुर हो। अयन बल अधिक हो तो जीवन भर सुखी रहे।॥४४॥४५॥

स्ववंशोत्कर्षता स्वोच्चे नैसर्गे जातिनिर्णय. ॥ राशीनां च ग्रहाणां च स्वभावा: कथिता मया ॥४६॥ ये चात्र योजनीयाश्च दैवज्ञेन सुबुद्धिना ॥४७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे रश्मीष्टकष्टादिशासने अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

उच्चबल अधिक होवे तो अपने वंशमे मुख्य हो। निसर्गबल अधिक हो तो स्वजाति धर्म का व्याख्याता हो।॥४६॥

इस प्रकार भाव और ग्रहो का फल कहा गया। जहा जैसा उचित हो वहा वैसे फल का निर्देश करे।॥४७॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० रश्मि, इष्ट, कष्टादि वर्णन नाम अष्टमोऽध्याय ॥८॥

अथ लोकयात्रावर्णनाह

मूलस्थानाधिके स्थाने स भावः शुभ इष्यते ॥ न्यूनेऽशुभ: समे मातृपितृबंधून्वदिष्यते ॥१॥

स्ववेश्म धर्मकर्मायपलप्रैर्युक्तं पतिं वदेत् ॥ मृतिव्ययारिभिस्तेषां व्ययं हानिं पृथग्वदेत् ॥२॥ ये योगाः पूर्वभागे तु द्विग्रहाद्या नभादयः ॥ राजयोगादयः सर्वेयथान्यायं प्रयोजयेत् ॥३॥ भरणीयकुटुंबस्य द्वितीयेन शुभाशुभे ॥ अन्येषां चैव भावानां स्वनामसदृशं फलम् ॥४॥ सूर्येण वेश्म स्थानेन पितुर्मृतिपदं वदेत् ॥ चंद्रेण पचमेनैव मातुर्मृतिपदं वदेत् ॥५॥

लोकयात्रा वर्णन

अष्टक वर्ग फल कहा जाता है। जिस ग्रह की रेखा जिस भाव मे कही है वहा देखना चाहिए कि रेखा अधिक हो तो फल शुभ जानना और कम हो तो अशुभ, सम हो तो सम जानना॥१॥ दूसरा, चौथा, नवा, दशवा, ग्यारहवा और लग्न ये ६ भाव अपने स्वभाव से ही श्रेष्ठ है और उत्तम फल देनेवाले है। तथा आठवा, बारहवा ये दोनो भाव हानि तथा खर्च करनेवाले है॥२॥ प्रथम जो नाभस आदि जो राजयोग कहे है उनका फल इष्ट, कष्ट, रश्मि तथा अष्टकबल का बलाबल विचार कर कहना॥३॥ दूसरे भाव से रेखा और शून्य की न्यूनाधिकता से कुटुम्ब पोषण का शुभाशुभ देखना। तथा अन्य भावो का फल भी उनके नाम के अनुसार जानना चाहिए॥४॥ सूर्य से तथा चतुर्थ भाव से पिता की मृत्यु का विचार करना॥५॥

सूर्ये चंद्रे सपापे च तयोश्च मरणं भवेत् ॥ तयोरंतरलिप्ताश्च शतद्वयविभाजिताः ॥६॥ अब्दादयोऽशुभस्यापि दृष्ट्या संगुणयेत्ततः ॥ षष्ट्याविभज्याब्दाद्याश्च तस्मात्पापे बलोत्तरे ॥७॥ तदामृतिर्भवेन्न्यूनेतद्बलेनैव वर्धयेत् ॥ तदा मृत्युस्तयोर्मृत्युस्थाने पापग्रहे सति ॥८॥ तस्याशुभस्य विन्यस्य चाष्टवर्गं ततः क्रमात् ॥ त्रिकोणैकाधिपस्यास्य कुर्याच्छोधनकं बुधः ॥९॥ त्रिषु द्वयोर्वा यन्न्यूनमितरच्चसम भवेत् ॥ एकस्मिन् भवनेशून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत् ॥१०॥

मृत्युकाल निर्णय करने के लिये चतुर्थ और पचम भाव तथा सूर्य चन्द्रमा की राशि अंश की कला करके २०० का भाग देना। लब्धि अंक सख्या मृत्यु के वर्षो की होती है। यह क्रिया समबल अवस्था मे जानना। यदि न्यूनाधिक बल हो तो भिन्न क्रिया है। न्यूनाधिक बल मे सूर्य चन्द्र से पापग्रह बलवान् हो तो पूर्व प्राप्त फल को पापग्रह की दृष्टि से गुणा करना और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक जानना। पापग्रह अल्पबली हो तो सूर्यचन्द्र बल से गुणा करना और ६० का भाग देना। लब्ध वर्षादिक होते है। और यदि अष्टमभाव मे पापग्रह हो तो उसीसे माता पिता का अरिष्ट कहना॥६।७॥८॥

अष्टक वर्ग के बिन्दु और रेखा मे भावफल का निर्णय—

सूर्य, चन्द्र तथा ४।५।८ भावस्थित पापग्रह इनका अष्टकवर्ग रखकर त्रिकोणशोधन तथा ऐकाधिपत्यशोधन करना॥९॥ त्रिकोण शोधन मे जिस स्थान की सख्या कम हो वह घटाना तीन स्थानो मे एक स्थान शून्य हो तो शोधन नही होता और तीनो स्थान मे बराबर सख्या हो तो सब स्थान मे शून्य रखना॥१०॥

समत्वे सर्वगेहेषु सर्वं संशोधयेद्बुधः ॥ क्षीणेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद्ग्रहवर्जितम् ॥११॥ ग्रहयुक्ते फले हीने ग्रहाभावे फलाधिके ॥ अनेन सह चान्यस्मिञ्छोधयेद् गृहवर्जिते ॥१२॥

फलाधिके ग्रहयुक्ते चान्यस्मिन्सर्वमुत्सृजेत् ॥ उभयोर्ग्रहसंयुक्ते न संशोध्यः कदाचन ॥१३॥ उभयोर्ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत् ॥ सग्रहाग्रहतुल्यत्वात्सर्वं संशोध्यमग्रहात् ॥१४॥ एकत्र नास्ति चेत्सर्वहानिरन्यत्र कीर्तितः ॥ कर्कीरसिंहयो राशयोः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम् ॥१५॥

एकाधिपत्य शोधन—

जहाँ एक ग्रह की दो राशि हों वहाँ यह विचार करना होता है। एक राशि में रेखा कम और दूसरी में अधिक हो, और दोनों राशि ग्रह रहित हों तो रेखाधिक में न्यूनरेखा की संख्या कम करके शेष अंक रखना। न्यून रेखास्थान में शून्य रखना। यदि दोनों राशियों में समान रेखा हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। एक राशि ग्रहयुक्त रेखाधिक हो तो अन्य राशि का फल त्याग करना। दोनों राशि ग्रह युक्त हों तो संशोधन नहीं होता। दोनों राशि ग्रहहीन हों रेखा सम हो तो दोनों स्थान में शून्य होगा। सग्रह राशि ग्रह के समान होने से ग्रहरहित से हीन होती है। एक राशि में रेखा नहीं हो तो दूसरी राशि की संख्या का भी त्याग करना। कर्क सिंह राशि में एकाधिपत्य शोधन नहीं होता॥११॥१२॥१३॥१४॥१५॥

ग्रहयोगेन हानिः स्यात् वर्गणाभिः पृथक् ततः ॥ तयोरैक्यं सप्तभिर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितः ॥१६॥ अब्दादयस्तदा देहनाशः करणदे सति ॥ तस्मिन् पापे ग्रहे तस्माद्बलिन्येव विधिः स्मृतः ॥१७॥ बलहीनेतु तं हन्यात्सप्तभिः पंचभिर्भजेत् ॥ आयुस्तयोः स्यात्स्थानस्य प्रदे चेदशुभे सति ॥१८॥ मुनिभक्त वसुघ्न स्यान्नैव चेन्नैतयोर्मृतिः ॥ वक्ष्यमाणेन विधिना ब्रवेवाह पराशरः ॥१९॥ सूर्यादायुः करौ भूपा मनवोर्का नवार्णवाः ॥ वेदाक्षीणि तु लग्नस्य वक्ष्याम्यायुस्तथैव तत् ॥२०॥

एकाधिपत्यशोधन के अंकों से माता पिता का स्पष्ट मरणकाल जानने की रीति—

मेषादि राशियों में जो अंक एकाधिपत्य शोधन द्वारा प्राप्त हुए हैं सो चतुर्थ भाव से अष्टम भाव के बल की तथा ग्रह बल को मेषादि राशि के वर्गणांकों से गुणा करें तथा ग्रह ध्रुवांकों से भी गुणा करके अलग २ योग करके फिर दोनों का योग करें पश्चात् ७ से गुणा कर २७ का भाग दे, लब्धांक वर्ष, मास, दिनादि अंक माता पिता के अरिष्ट काल का होगा। या उनकी आयु का अंक समझना। यह रीति करण (बिन्दु) से कही गई है। यदि पापग्रह बलवान् हो तो पूर्वोक्त रीति से निश्चय करना। और पापग्रह बलहीन हो तो ७ से गुणा कर ५ से भाग देना। लब्ध वर्षादिक माता पिता की आयु जानना यदि रेखाप्रद पापग्रह बलवान् हो तो पिण्ड को आठ से गुणा करके ७ का भाग देना, लब्ध संख्या माता पिता की आयु होती है। शून्य गणित से प्राप्त आयु से रेखा गणित का प्रमाण अधिक हो तो माता पिता को कोई भय नहीं समझना। ऐसा भगवान् पराशरजी का मत है॥१६॥१७॥१८॥१९॥ (करण का त्रिकोणैकाधिपत्य शोधित चक्र आगे देखो।)

प्रथम सूर्य, चतुर्थ और अष्टमभाव में आयु विचार कथन करके अब सूर्य तथा चतुर्थ भाव से आयु विचार करने के लिए सूर्यादि ग्रहों के क्रमशः २।१६।१४।१२।९।४।४।२ तथा अंतिम ध्रुवांक लग्न का जानना॥२०॥

अथ रवेस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधितकरणचक्रम्

र०गु०	शु०म०	स०								च०	श०	बु०
कु०	मी०	मे०	वृ०	मि०	क०	सि०	क०	तु०	वृ०	ध०	म०	राशय
३	४	६	५	४	५	५	१	२	४	४	५	मूलप्राप्त करणबिन्दव
१	०	२	४	२	१	१	०	०	०	०	४	त्रिकोणशोधनेना वशिष्टा
१	०	०	०	०	१	१	०	०	०	०	३	एकाधिपत्यशोध नावशिष्टा

स्वोच्चे नीचे तु पात स्याद्धरणादिविधिस्तत ॥ आयुस्तयो स्याती तस्मिन् भवने तु तथा स्थिती ॥२१॥ न कश्चित्स्थानद स्याच्चेत्तत्काले च मृतिर्भवेत् ॥ शुभयोगे शुभा प्रोक्ता तयो स्यादिमसभव ॥२२॥ अष्टभिर्गुणयेत्षड्भिर्विभज्यायु पर भवेत् ॥ वेश्मनि स्थानदा न स्युर्जन्मकाले स्फुटीकृत ॥२३॥

यदि ग्रह उच्चराशि का हो तो उक्त ध्रुवाक ही स्पष्ट आयु समझना चाहिए। यदि ग्रह नीच राशि का हो तो त्रैराशिक गणित से स्पष्ट आयु लाना चाहिए।॥२१॥ और यदि कोई ग्रह रेखा दाता नही हो तो उसी समय मृत्युकाल जाने। शुभग्रह का सम्बन्ध या योग हो तो उत्तम रीति से और पापग्रह का योग हो तो निकृष्टरीति से मृत्यु जानना॥२२॥
रश्मि से आयुसाधन सूर्य तथा चतुर्थ भाव की रश्मिको ८ से गुणा करके ६ से भाग देना। लब्ध वर्ष आदि माता पिता की आयु की अवधि समझना॥२३॥

कलीकृतश्च लग्नर्क्षैर्विभज्याप्त्वादय क्रमात् ॥ एव शुभाशुभ ब्रूयान्मातापित्रोर्द्विजोत्तम ॥२४॥ करणस्थानदातार पापपुण्यफलप्रदा ॥ पुनश्चोच्चादिपु तथा त्रिगुणाद्यास्तु पूर्ववत् ॥२५॥ शत्रुनीचाधिशत्रूणा स्थानेष्वपि तु पूर्ववत् ॥ राशि हित्वा तु भावाना सर्वत्रैव क्रिया भवेत् ॥२६॥ द्वितीयभावलिप्ताश्च राशिलिप्ता विभाजिता ॥ स्ववर्गणाहतास्तत्स्यलेटाना वर्गणाहता ॥२७॥ भावरश्मिभिराहन्यात्सप्तभिश्च विभाजयेत् ॥ मूलरश्मिसमूहेन शिष्ट हन्यात्तथैव तान् ॥२८॥ इष्टानिष्टफलाभ्या च हत्वातरमथ द्वयो ॥ सप्तविशतिभिर्हत्वा सप्तभिश्च विभाजयेत् ॥२९॥

हे द्विजोत्तम! चतुर्थ भाव मे स्थानप्रद ग्रह नही हो तो चतुर्थ भाव स्पष्ट की कला (घटी) करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष मासादि माता पिता का शुभ या अशुभ योग

समझना॥२४॥ सो इस प्रकार समझना कि-शून्यप्रदग्रह पापफल देते है और वे ग्रह उच्चादि स्थान मे हो तो त्रिगुण, द्विगुण आदि पूर्वोक्त (उच्चे च त्रिगुण प्रोक्त स्वत्रिकोणे द्विसगुणम् इत्यादि) रीति से आयु विचार करना॥२५॥ जहा भाव स्पष्ट से आयु का विचार करना हो वहा भावस्पष्ट की राशि छोडकर केवल अशादिक से पूर्व कही रीति स संस्कार करना॥२६॥

मूलकार का ही उदाहरण

यथा द्वितीय भाव की राशि त्यागकर अशादि की लिप्ता (घटी) की गई। पश्चात् द्वितीय भावराशि की वर्गणा मे गुणा किया बाद द्वितीयभावस्थ ग्रह की वर्गणा से गुणा किया, और भाव की रश्मि मे गुणा करके ७ से भाग दिया शेष अक को मूलरश्मि योग मे गुणा किया पश्चात् इष्ट, कष्ट फल से गुणा करना (अलग २) बाद दोनो के अन्तर को २७ से गुणा करके ७ का भाग दिया तो भाव द्वितीय का फल (भरणीय कुटुम्बीजनो की) सख्या प्राप्त हुई॥२७॥२८॥२९॥

भरणीयकुटुम्बाना पुस्त्रियस्तत्समा विदु ॥ राशीन हित्वा तु लग्नादिभावभागादिकान् पृथक् ॥३०॥ गुणयेद्रश्मिभि स्वैश्च भावभागादयो विदु ॥ फलीकृत्य भलिप्ताभिर्विभज्याप्त फल तत ॥३१॥ सूर्यभक्तावशिष्ट तु भावाना साधन विदु ॥ राशीन् हित्वा ततो लिप्ता खगनेत्रविभाजिता ॥३२॥ साधनघ्ना विभक्ताश्च वर्गणाभि फलाहता ॥ उच्चादिवृद्धिहानि च कुर्यात्तत्सख्यका भवेत् ॥३३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेलोकयात्रावर्णन नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

इसी प्रकार राशि त्याग करके लग्न आदि भाव के अलग २ अशादि को भावस्वामी की रश्मि से गुणा करे। पुन घटी करे। पश्चात् दो जगह रखकर १२ का भाग देना तो भावसाधन फल होता है॥३०॥३१॥

पूर्वोक्त गणित की सुलभ रीति-

भाव की राशि त्यागकर अशादि की घटी करके २०० का भाग दे। जो लब्ध हो उसको भावसाधन से गुणा करके ध्रुवाक का भाग देना। बाद फल मे गुणा करना तो भरणीय कुटुम्ब पोषण की सख्या होती है॥३२॥३३॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भावप्रका० लोकयात्रावर्णन नाम नवमोऽध्याय ॥९॥

पुन लोकयात्रावर्णनाह

भाग्योत्कर्ष भाग्यहानि कुटुम्बु दुख हानि शत्रुमाय व्यय च ॥ उद्वाह् स्त्रीपुत्रलाभादिक च ब्रूयादेव चाब्दचर्याक्रमेण ॥१॥ अब्दमासदिनचर्यविधान कथ्यते खलु मया सुमते ते ॥ वक्ष्यमाणविधिना परमायु सम्यगेव विदधीत महात्मन् ॥२॥ भावाना साधन हत्वा दृष्टिरश्मि बलेन च ॥ षड्वर्गाधिपतीना च भावे भावे पृथक् पृथक् ॥३॥ तेषा च दृग्बलाना च

सहत्या भाजयेदथ ॥ स्वामिदृष्टिस्थितानां तु काले भावफलं विदुः ॥४॥ ज्ञानसम्भवकालस्तु जन्मकालाद्बला यदा ॥ लग्नादिव्ययपर्यन्ता भावा काले तथा विदुः ॥५॥

छठे अध्याय मे वर्षचर्यारूप से भाग्योदय, अवनति, परिवार का सुख दुःख, शत्रुचिन्ता लाभ, खर्च पुत्रादि का विवाह आदि कहा जाता है॥१॥ हे मैत्रेय! अब वर्षचर्या, मासचर्या, तथा दिनचर्या और आयु का निश्चय भी उत्तमरूप से कहते है॥२॥

द्वादश भावो मे भावफल के समय का निर्णय

जिस भाव के फल का समय निर्देश करना हो उस भाव को प्रथमदृष्टि से पश्चात् भावबल से गुणा करे बाद षड् वर्ग के स्वामी की दृष्टि तथा बल का योग (जोड) करके भाग दे लब्ध वर्षादि अंक उस भाव के फल का समय होगा। इस प्रकार सप्तमभाव से स्त्री, पंचमभाव से पुत्रादिको आदि तत् २ भाव से फल का समय निर्देश करना॥३॥४॥५॥

लग्नषड्वर्गहोराणां भोक्तारं पतयः स्मृता ॥ त्रिपञ्चवेददिक्सप्तमुनिरामांशके फलम् ॥६॥ शुभग्रहास्तु द्रष्टारं स्थानदा सकलग्रहा ॥ युक्ता सदा तु सद्भावा सद्भावफलदास्तदा ॥७॥ पापान् हानिकरान्हित्वा स्वोच्चे कोणसुहृत्स्थितान् ॥ तद्राशिर्यस्य शत्रुर्वा नीचयोर्वा ग्रहो यदि ॥८॥ हानिं कुर्यात्तदा तस्य दृष्टियोगानुपाततः ॥ उद्वाहकारको शुक्रो सोमो वा तपोऽथ वा ॥९॥ शनिर्मृतिकरो भौमरवी नीचासतीपती ॥ गुरु शुभकर पुत्रे कुजो भ्रातरि शत्रुभे ॥१०॥ भवभावे शुभाः सर्वे स्वोच्चगौ भौमसूर्यजौ ॥ भाग्येऽशुभा शुभा पापा अशुभा स्वपति विना ॥११॥

भावो के षड्वर्गपति की दशा मे भावोक्त फल होता है। भावराशीश अपनी दशा के तृतीयांश मे तथा इसी प्रकार होरापति द्रेष्काणपति सप्तांशपति नवांशपति, द्वादशांशपति और त्रिंशांशपति क्रमशः अपनी २ दशा के ५।४।१०।७।७।३ वे अंश मे अपना २ फल देते है। यह शुभग्रहो की अवधि कही। अष्टक वर्ग मे रेखा दाता शुभ या पाप कोई भी दोनो का शुभाशुभ फल होता है। जिस २ भाव मे उस भाव का पति उच्च मूलत्रिकोण आदि शुभ स्थान युक्त हो उनका शुभफल और शत्रु राशि आदिका हो तो अशुभ फल होता है॥६॥७॥८॥

ग्रहो की नैसर्गिक कारकता—

शुक्र और चन्द्रमा विवाह कारक है। मतान्तर से बुध गुरु भी विवाह कारक है। शनि मृत्यु कारक है। मंगल कुलटा कारक तथा सूर्य पतिव्रता कारक है॥९॥ कौन ग्रह किस भाव मे निसर्गतः शुभ है, यह कहा जाता है। गुरु ५ भाव मे शुभ है। मंगल ३ मे शुभ। शनि ६ मे तथा अन्य ग्रह एकादश भाव मे शुभ हैं। मंगल शनि उच्च के शुभ तथा नवमभाव मे शुभग्रह शुभ होते है। पापग्रह हो तो अशुभ होते हैं किन्तु नवमभाव मे पापग्रह स्वगृही हो तो शुभ है और भाग्य वृद्धिकारक है॥१०॥११॥

पूर्वभावे समुद्दिष्टदृग्बलेन फलानि तु ॥ विरुद्धानि परित्यज्य समीचीनानिसग्रहेत् ॥१२॥ ग्रहराशिस्वभावेन पुंस्त्रियोराशिमेव च ॥ स्वभाव च वदेद्बुद्धया देशकालकुलानुग ॥१३॥ तेषामिष्टफले वृद्धिस्त्वशुभाख्यफलोदय ॥ अन्यथा स्वसदेवस्यास्तस्यतस्मान्मृतौफलम् ॥१४॥ रविस्तु पाचको ज्ञेयश्चन्द्रमा बोधक सदा ॥ पाचको बोधकश्चैव कारको वेदक क्रमात् ॥१५॥

पूर्व भागमें जो दृष्टि से फल कहा है। उसमें से पापदृष्टिका फल त्यागकर शुभ ग्रहण करना चाहिए॥१२॥ तथा मनुष्यों का स्वभाव और रूप रंग आदि भी देश, काल, कुल आदि के अनुसार ग्रह, भाव, स्थिति का ध्यान रखते हुए सूक्ष्म विचार कर निर्देश करना॥१३॥ जिस भाव का इष्ट बल (शुभबल) अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर वृद्धि और जिस भाव का कष्ट बल अधिक हो उस भाव की उत्तरोत्तर हानि होती है॥१४॥ सूर्य 'पावक' संज्ञक है। चन्द्रमा 'बोधक' संज्ञक है। तथा सूर्य 'कारक' संज्ञक एवं चन्द्रमा 'वेधक' संज्ञक भी है। यह इनकी *नैसर्गिक (स्वाभाविक) संज्ञा है॥१५॥*

रव्यादीनाथ विज्ञेया मदारेज्यसितास्तथा ॥ शुक्रारमन्दरश्मयो रवीन्दुशनिचन्द्रजा ॥१६॥ चन्द्रेज्यसितभौमाश्च मदारेन्दुदिनेश्वरा ॥ भौमज्ञसूर्यमदा स्यु सितेन्दुगुरुभूमिजा ॥१७॥ षट्सप्तनवचन्द्रेषु सप्त नवभवादिषु ॥ द्विपञ्चायव्ययेष्वेवद्विवेदेन्द्रियवह्निषु॥१८॥ षट्पञ्चसप्ता रिष्फेषुद्विषड्व्ययचतुर्ष्वपि ॥ त्रिरुद्रषट्सप्तमेषु स्थिता स्थानेषु ते ग्रहा ॥१९॥ पावका- द्यास्तु चत्वार सूर्यादिस्य क्रमादिह ॥ पीडर्से वाप्यपीडर्से केन्द्रेलग्न विना तथा ॥२०॥ षट् सप्तधर्मकमायमूर्तिष्वेव गता क्रमात् ॥ पावकाद्याश्चतुर्थे च बलवत समीरिता ॥२१॥ कारको मद फलदो वेधको विघ्नकृत्स्मृत ॥ बोधक शीघ्रफलद पावको विफलप्रद ॥२२॥ तदशाकालस्थानो वाप्याद्यावत्याशकेऽपि च ॥ अन्त्याशकेऽपि फलदा पावकाद्या क्रमादिह ॥२३॥

अब आगे सूर्यादि सातो ग्रहो की स्थानभेद से पावक बोधक कारक वेधक संज्ञा कही जाती है-

१-सूर्यादि सातो ही ग्रह चतुर्थ सप्तम दशम भाव में हो तो बलवान् होते है।

२-तथा सूर्य ६ठे भाव मे, चन्द्रमा ७ मे म० ९ मे बुध १० मे गुरु ११ में शु० ८ मे, श० ४ भाव में बलवान् होते है। अन्यथा समान है। अब सूर्यादि ग्रहो से कौन ग्रह किस स्थान मे होने से पावक, बोधक, कारक तथा वेधक होता है। यह चित्र २ कहा जाता है। सूर्य से ६ठे भाव मे शनि पावक, मगल ७वे भाव मे बोधक तथा गुरु ९ भाव मे कारक एवं शुक्र ११ भाव मे वेधक होता है। अब आगे इसी प्रकार क्रमश समझना। चन्द्रमा से शु० म० श० सू० ७।९।११।३ स्थानो मे पावक, बोधक, कारक वेधक संज्ञक होते है। मगल से सू० च० श० बु० २।६।११।१२ स्थान में पा० बो० का० वे० होते हैं। बुध से च० गु० शु० म० क्रमश २।४।५।३ स्थानो में पा० बो० का० वे० होते हैं। गुरु से श० म० च० सू० क्रमश ६।५।७।१२ भाव मे पा० बो० का० वे० होते है। शुक्रसे म०बु०सू०श० २।६।१२।४ भाव मे पा० बो० का० वे० होते हैं। शनि से शु० च० बृ० म० क्रमश ३।११।६।७ भाव मे पा० बो० का० वे० होते हैं। इनका फल नामानुरूप ही है। यथा-कारक ग्रह अपने नियामक ग्रह का साधारण फल कारक होता है तथा वेधक ग्रह अपने नियामक के फल मे विघ्नकारक होता है। बोधक ग्रह अपने नियामक का ही फल शीघ्र देता है। पावक ग्रह नियामक के फल को विफल करता है। ये पावक आदि ग्रह अपने नियामक ग्रह के आदि नवांश या अन्तिम नवांश मे फलदाता होते हैं। किन्तु यह नियम नहीं है, मध्य मे भी फलदायक हो सकते हैं॥१६ से २३ तक॥

पाचकादि ग्रह निर्माण चक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
श० ६	शु० ७	सू० २	च० २	श० ६	भौ० २	गु० ३	पाचक
भौ० ७	भौ० ९	च० ६	गु० ४	भौ० ५	बु० ६	च० ११	बोधक
गु० ९	श० ११	श० ११	शु० ५	च० ७	गु० १२	सू० ६	कारक
शु० ११	सू० ३	बु० १२	भौ० ३	सू० १२	श० ४	भौ० ७	वेधक

सूर्यादिपाचकादि चक्रम्

सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ग्र०
०	०	०	०	०	०	०	पाचक
०	०	०	०	०	०	०	बोधक
०	०	श०	०	०	गु०	०	कारक
शु०	सू०	०	म०	०	०	०	वेधक

आद्यौ फलप्रदौ भौमरवी मध्ये सितार्यकौ ॥ सर्वदा ज्ञ शशी मन्दस्त्वयसाने फलप्रदौ॥२४॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखंडे लोकयात्रावर्णन
नाम दशमोऽध्याय ॥१०॥

स्वाभाविक कार्यकाल-

सूर्य, मगल यदि राशि के प्रथम त्रिभाग मे हो तो फल देते हैं। गुरु, शुक्र मध्य त्रिभाग मे फलदायक होते है। चन्द्र, शनि अन्तिम त्रिभाग मे फलदाता तथा बुध सर्वकाल फलदाता है॥२४॥

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उ० ख० भावप्रका० लोकयात्रापलनियम
वर्णन नाम दशमोऽध्याय ॥१०॥

अथ मासचर्यादि फलमाह

धनहानिभयानां च व्याधीनां दिवसास्तथा ॥ शुभाशुभानि कर्माणि यात्रादि विजयादि च ॥१॥ मासचर्याविधानेनब्रूयादन्येनचेतरान् ॥ लग्नारिमृतिरिःफेषु वर्गणा च पतीस्तथा ॥२॥ करणेशान्समालोच्य कथ न्मुनिपुगव ॥ रसेषवो मुनिः साष्टो रविभूपा दिशास्तथा ॥३॥ द्विशतचक्रमात्सूर्याद्दिवसाश्चाष्टमे स्थिता. द्वितीयर्क्ष स्वतरे च त्रैराशिकवशेन तु ॥४॥

**इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्याविशात्फलज्ञानकथनं
नाम एकादशोऽध्यायः ॥११॥**

धनहानि, भय, रोग इनका विचार दिनचर्या से करना तथा शुभाशुभ कर्म, यात्रा, विजय इनका विचार मास चर्या विधि से कहना॥१॥ लग्न, षष्ठ, अष्टम और व्ययभाव की वर्गणा सख्या तथा इन भावो के स्वामियो की वर्गणा सख्या॥२॥ तथा करण- (बिन्दु) दाता ग्रहो की सख्या अर्थात् किस भाव मे कितनी है आदि विचार करके फल कहना। सूर्यादि ग्रहो की दिन सख्या कही जाती है। सू० ५६। च० ७। म०८०। बु० १२। गु० १६। शु० १०। श० २०० यह सख्या अष्टम भाव की है। द्वितीय भाव की इससे आधी जानना। मध्यराशियो की सख्या त्रैराशिक से जानना॥३॥४॥

इति श्रीवृ०पा०हो०शा०उ०ख० भाव प्रकीर्णककथननाम एकादशोऽध्याय ॥११॥

अथ लोकयात्रामाह

तेषा भगभयो वक्ष्ये यथाह कमलासनः ॥ गर्गाय भगवान्सोऽपि ममाहाह् तव द्विज ॥१॥ लग्ना च रिःफषष्ठाष्टस्थानाना करणाधिपाः ॥ तत्तद्भावस्य भगस्य कर्तारः सति सभवे ॥२॥ तत्तद्भावाष्टवर्गोत्यसख्या तद्वर्गणाहता ॥ रविभक्ता तत शिष्टा राशिर्मेषादिका भवेत् ॥३॥ षष्ठाष्टरिःफे राशिश्चेद्भग एष प्रकीर्तितः ॥ फल च मुनिसवृद्ध रविभक्त तथा भवेत् ॥४॥

हे मैत्रेय! अब योगभग कहा जाता है। यह रीति ब्रह्माजी ने गर्गजी को कही थी और गर्गजी ने हमे कही सो वही रीति अब तुम्हे कहते हैं॥१॥ लग्न से ६।८।१२ भावो मे बिन्दु देनेवाले ग्रहविचारणीयभावो मे हो या ६।८।१२ के स्वामी के साथ भयोग हो तो उन भावो के

भग करनेवाले होते है॥२॥ जिस भाव का फल विचार करना हो उस भाव की अष्टक वर्ग की बिन्दु सख्या को उस भाव की वर्गणा से गुणा करना और १२ का भाग देना जो अक शेष रहे वह मेषादि क्रम से राशि जानना। वह राशि यदि ६।८।१२ भाव मे हो तो उस भाव का भग (हानि) होता है॥३॥ और लब्धाक को सात (७) से गुणा कर १२ से भाग देना जो शेष रहे वह राशि यदि ६।८।१२ भाव मे हो तो भी उस भाव का भग होता है॥४॥

शिष्टमेव यदि तदा शत्रुभ वाथ भगदम् ॥तद्भावानिष्टफलक तच्छत्रुफलसगुणम्॥५॥सप्ताप्त शिष्टमेवात्र पापरश्मिगुण तत ॥ अर्कशिष्ट यदि भवेत्षष्ठारिफाष्टमेऽपि वा ॥६॥ शत्रुभ यापि भगर्क्षे हानिस्तस्य प्रकीर्तिता ॥ यथोत्तरमितोवाप्त क्षयवृद्धिस्ततो भवेत् ॥७॥ षष्ठपशे च कलाशे च स्वप्रकाशग्रहोदये ॥ राहुकालसमायोग तद्भावफलभगद ॥८॥ अनिष्टाख्य च रश्मि च तद्भावफलसगुणम् ॥ द्वादशाप्तावशेष च पूर्ववत्फलमीरितम् ॥९॥

और दूसरी बार जो शेष रहे वह यदि षष्ठभाव राशि हो तो भावफल की भगकारक है। तथा इसी प्रकार काष्टफल से गुणाकर ७ से भाग देना जो शेष रहे तो शत्रु ग्रह की रश्मि से गुणा करना और १२ का भाग देना तो शेष राशि यदि ६।८।१२ मे हो तो उस भाव का भग करती है। यहा अनेक भगकारक रीति दिखाने का यह प्रयोजन है कि जितनी बार भग प्रद राशि प्राप्त हो उतनी अधिक हानिकारी है॥५॥६॥७॥

अन्य प्रकार-विचारणीय भाव के षोडशांश या षष्ठ्यश मे धूम, पात, परिधि, चाप, ध्वज इनमे से किसी का उदय हो तो उस भाव का भग होता है॥८॥

प्रकारान्तर-विचारणीय भाव की अनिष्ट रश्मि को इष्टबलाक से गुणा कर १२ से भाग देना जो राशि प्राप्त हो उसका पूर्ववत् फल जानना॥९॥

यद्यत्फल प्रोक्तमथोत्तरत्र तत्सर्वमन्यत्र च योजनीयम् ॥ भग च भग च मुनिश्च गर्ग प्रोवाच यद्वन्मुनिपुगवाहम् ॥१०॥ षष्ठ्यशे च कलाशे च त्रिष्वेकोऽपि यदा न चेत् ॥ अधिमित्र च मित्र च भगाभग प्रकीर्तित ॥११॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्रायां भावभगोपदेशेद्वादशोऽध्याय ॥१२॥

यह जो भग विचार कहा गया है, वह हर एक भाव मे देखना चाहिए।॥१०॥ इस भग का खडक योग भी है। यदि षोडशाश या षष्ठ्यश अथवा शत्रुराशि मे धूमादि ग्रहो का (अप्रकाश ग्रहो का) योग अथवा काल राहु का योग न हो और राशि मित्र, अधिमित्र हो तो भग का भी भग योग होता है॥११॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० ख० भा० प्र० भगादियोग कथन नाम द्वादशोऽध्याय ॥१२॥

अथ लोकयात्रायां ग्रहभावफलमाह

आत्मा शरीरं होरा च कल्प-लग्ने च मूर्तयः ॥ स्वं कुटुम्बं च दुश्चिक्यं विक्रमः सहजः सहः ॥१॥ पातालं हिबुकं वेश्म मित्रबन्धूदकं सुखम् ॥ त्रिकोणं प्रतिभा बुद्धिमातृविद्यासुतास्ततः ॥२॥ व्याधिक्षतारिभगाश्च क्रोधो लोभोऽथ मत्सरः ॥ कामो विवाहो यात्रा स्त्री रतिद्यूनं मदोऽज्ञता ॥३॥ पराभवो मृतिर्बन्धो रन्ध्रायुर्निधनं च्युतिः ॥ शुभं धर्मस्ततो भाग्यं त्रिकोणं च गुरुर्विभुः ॥४॥ व्यापारास्पदमेषूरणमानाज्ञा च कर्म खम् ॥ भावाय लाभाय तपो रिःफं हानिर्व्ययः स्मृतः ॥५॥ यात्राया दशमेनैव निवृत्तिः सप्तमेन तु ॥ वृद्धिश्चतुर्थलग्नेन त्रितयं सम्प्रकीर्तितम् ॥६॥ स्वोच्चमित्रस्ववर्गस्था एवमर्थाश्च सप्ततिः ॥ नीचारिवर्गगाश्चान्यत्पुष्टं चापुष्टमेव च ॥७॥

अब अन्वर्थक नामोसे १२ भावोंके विचारणीय पदार्थ कहे जाते है। लग्न संज्ञा आत्मा, शरीर, होरा, कल्प, लग्न, मूर्ति, (अंग) द्वितीयभावसंज्ञा-स्व, कुटुम्ब। तृतीयभावसंज्ञा-दुश्चिक्य, विक्रम, सहज, सह।

चतुर्थभावसंज्ञा पाताल, हिबुक वेश्म, मित्र, बन्धु, उदक, सुख। पञ्चमभाव के नाम त्रिकोण प्रतिभा, बुद्धि, मातृ विद्या, सुत। षष्ठभाव के नाम-व्याधि, क्षत, अरि, भग, क्रोध, लोभ मत्सर। सप्तमभाव के नाम-काम विवाह स्त्री, रति द्यून मद, अज्ञता। अष्टमभाव के नाम पराभव, मृति, बंध, रन्ध्र, आयु, निधन, च्युति। नवमभाव के नाम-शुभ धर्म, भाग्य त्रिकोण, गुरु, विभु। दशमभाव के नाम- व्यापार, आस्पद, मेषूरण, मान, आज्ञा, कर्म ख। एकादशभाव के नाम भाव आय, लाभ, अप, तप। व्ययभाव के नाम-रिःफ, हानि, व्यय। इस प्रकार वे ६७ संज्ञाएँ नामानुरूप तात्पर्यवाली है।। दशमभाव से यात्रा सम्बन्धी विचार करना तथा सप्तमभाव से निवृत्ति और चतुर्थभाव से वृद्धि का विचार करना चाहिए। इस प्रकार यात्रा, निवृत्ति, वृद्धि ये तीन नाम और मिलाने से ७० नाम संख्या होती है। जो ग्रह उच्च मित्र या स्ववर्ग में हो तो पूर्वोक्त फल उत्तम और नीच शत्रु आदि में हो तो नेष्ट फल होता है। इस प्रकार बलाबल का विचार करके फल कहना चाहिए।।१ से तक।।

रविः शरीरे होरायां स्वे च भ्रातरि वेश्मनि ॥ सुते व्याधौ क्षते शत्रौ मृतौ तपसि कर्मणि ॥८॥ आये व्यये फलं दद्याच्छीतगुर्विक्रमे सुखे ॥ कुटुम्बे भ्रातरि क्रोधे प्रतिभायां शुभे मृतौ ॥९॥ भाग्ये त्रिकोणे व्यापारे लाभे रिःफे फलप्रदः ॥ कुजः शरीरे होरायां कल्पविक्रमबन्धुषु ॥१०॥ सहजे च सहे शत्रौ क्रोधे लोभे च रन्ध्रके ॥ क्रियायामापदी हानौ जये भगे फलप्रदः ॥११॥ बुधो मनसि विद्यायां बुद्धौ हिबुकवेश्मनि ॥ लाभे शिल्पे च गानादिप्रिये स्वे लाभरिःफयोः ॥१२॥

जैसे लग्नादिभावों से तत् ■ फल का विचार होता है, इसी प्रकार सूर्यादि ग्रहों से भी फल विषयक विचार होता है। यही कहा जाता है। सूर्य से शरीर का विचार,धनभाव में हो तो धन का और भाई, मकान, पुत्र, व्याधि, शत्रु, मृत्यु, धर्म, कर्म, लाभ, खर्च आदि का विचार सूर्य से करना। चन्द्रमा से पराक्रम,सुख, कुटुम्ब, भ्राता, क्रोध, प्रतिभा, शुभ, मृत्यु, भाग्य, व्यापार, लाभ, खर्च का विचार चन्द्र से भी करना। मंगल से लग्नभाव का फल, विक्रम प्रताप, बन्धु, भ्राता, शत्रु, क्रोध, लोभ, प्रभाव आदि का विचार। बुध से मानसिक चेष्टा, विद्या, सुख, लाभ, शिल्प, गायन विद्या, धन, लाभ, व्यय आदि का विचार।।८ से १२ तक।।

गुरुर्धर्मे च तपसि त्रित्रिकोणे त्रिकोणके ॥ आज्ञायां च सुते हानौ कारागृहनिवेशने ॥१३॥ अभिशापे तथा व्याधौ स्वे कल्पे मूर्तिवेश्मसु ॥ विद्याबुद्धिसुखे भावे शांत्यादिषु फलप्रदः ॥१४॥ कामान्यस्त्रीविवाहेषु गीतनृत्यप्रियादिषु ॥ सुखे वेश्मनि दुश्चिक्ये स्वे कुटुंबे च वेश्मनि ॥१५॥ आज्ञाक्रियातपोभाग्ये लाभाव्ययहानिषु वदान्यत्वे दयायां च भार्गवः फलदः सदा ॥१६॥ शनिर्मृतौ व्यये रिःफे दुश्चिक्ये क्षतचेतसि ॥ सहजे च सहे भावे बंधने फलदो भवेत् ॥१७॥

बृहस्पति से नवम भाव तथा पंचमभाव आज्ञा, पुत्र, हानि, कारागृह प्रवेश, अभिशाप, व्याधि, संकल्प, गृह, विद्या चतुर्थ भाव शान्ति, पुष्टि, कर्म आदि का विचार करना।।१३।।१४।। शुक्र से काम, अन्य स्त्री समागम, विवाह, गायन, नृत्य, प्रिय, सुख, गृह, तृतीय भाव,धन, द्वितीयभाव, चतुर्थ भाव,आज्ञा, क्रिया, तप, भाग्य, लाभ, व्यय, हानि, दान, दया आदि का विचार करना। शनि से मृत्यु, नाश, व्यय भाव, तृतीय भाव, चित्त, सहजभाव, बन्धु, बन्धन का विचार करना।।१५।।१६।।१७।।

कालहोरादृकाणेशाः क्षमार्कनवभागपाः ॥ सप्तांशत्रिंशदंशेशा होरेशश्चाष्टमो भवेत् ॥१८॥ क्रमाबावृत्तितः प्रोक्ता बलिष्ठः पूर्वतो यथा ॥ सूर्यादयो ग्रहा लग्नपतिश्चावृत्तितः क्रमात् ॥१९॥

श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे लोकयात्रायां
ग्रहभावफलविचारे त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

सूर्यादिग्रहों से होरा, द्रेष्काण, भावेश, नवमांश, द्वादशांश, त्रिंशांश, होरेश यह क्रम से अधिकाधिक बलवान् है। सूर्यादिग्रह तथा अष्टम और लग्नपति इनमें जो बलवान् हो वह प्रथम फल देगा, बाद उससे हीन उससे हीन फल दाता होते है।।१८।।१९।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा०प्र० लोकयात्रा
ग्रहभावफल विचारे त्रयोदशोऽध्याय ॥१३॥

अथ आयुर्दायाह

वक्ष्येऽहमथ दायोत्थं नृणामायुः परं मुने ॥ पैंडयो द्वादशधा प्रोक्तो ग्रहरश्मिसमुद्भवो ॥१॥ अंशाकाष्टकवर्गोत्थौ प्रत्येकं तु चतुर्विधम् ॥ विषयोक्तौ द्विधा प्रोक्तौ नक्षत्राकक्षभवौ ॥२॥ द्वात्रिंशद्भेदभिन्नं स्यात्परमायुर्नृणामिह ॥ अतिधृतिरर्कस्येन्दोस्तत्त्वानि भूमिसुतस्य पंचदश ॥३॥ द्वादश बुधस्य च गुरोस्तिथिः कवेर्मूर्छना नक्षत्रार्कैः ॥ परमोच्चे नीचेऽर्धं परेषु भावेषु वा तथा प्रोक्ताः ॥४॥ अनुपातः कर्तव्यस्त्वतः सत्येषु खेटेषु ॥ लग्नभूमे: लघुमेंद्रोः स्वांशाः पूर्ववत् कृतौ च विज्ञेयौ ॥५॥ कृतिरेको यमौ रत्नमष्टादश नखाः क्रमात् ॥ सैकतानसिनादीनां दाये नैसर्गिके स्मृतम् ॥६॥ षोडश विंशतिरेको नवाष्टनवपंचविंशति. क्रमशः ॥ षड्विंशतिम्-थोच्चे नीचे सार्धं त्विमेऽन्य इतरे वा ॥७॥

आयुर्दाय विचार

हे मैत्रेय! अब आयु का निर्णय कहा जाता है। इसमें निर्णय की रीति के प्रधानतया ३२

भेद है। उनमें पैण्डयायुर्दाय १२ प्रकार का है। अंशायु, ध्रुवायु, निसर्गायु, रश्मिआयु, स्वराशायु, अष्टकवर्गायु। इनके ४-४ भेद है। नक्षत्रायु, अंशायु को कालचक्रायु भी कहते हैं। इनके २-२ भेद है। इस प्रकार यह सब ३२ भेद होते हैं॥१॥२॥

पिण्डायु के ध्रुवाङ्क-सूर्य १९, चन्द्र २५, मंगल १५, बुध १२, गुरु १५, शुक्र २१, शनि २० ये ध्रुवाङ्क परमोच्च ग्रह के जानना। परम नीच के अर्द्ध भाग लेना। मध्य में त्रैराशिक से समझना। यह शतायु अथवा १२० वर्ष की आयु के लिये कहा गया है॥३॥४॥५॥

ध्रुवायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-सूर्य २०, चन्द्र १, मंगल २, बुध ९, गुरु १८, शुक्र २०, शनि ५०, इसको निसर्गायुर्दाय या स्वाभाविक आयुर्दाय भी कहते है॥६॥

रश्म्यायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-सूर्य १६, चन्द्रमा २०, मंगल १, बुध ९, गुरु ८, शुक्र ९, शनि २५, अथवा २६ ये ध्रुवाङ्क उच्च के हैं। नीच राशि में आधा और मध्य में अनुपात से जानना॥७॥

कलीकृतं ग्रहं व्योमखाब्धिनेत्रावशेषितम् ॥ शतद्वयेनाभिमजेदब्दमासादयः क्रमात् ॥८॥

मध्यमपिंडायुश्चक्रमाह

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१२	१९	१२	२	१७	८	२०	९१
१	३	९	०	८	७	९	४
२९	१७	१९	१७	६	३२	०	२३
२०	४४	४८	३८	३	५५	०	३१
२४	३६	०	२४	३६	१३	०	२

मध्यमध्रुवायुर्नामनिसर्गायुश्चक्रम्

सू०	चं०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
१२	७	११	१	२२	८	३५	९९
५	७	२	६	६	५	४	३
७	२३	२६	१३	२६	७०	१५	११
१२	२	३८	१३	९	२४	०	३९
०	३४	२४	४८	१८	०	०	५४

म० सत्तायुर्नामस्वरांशायुश्चक्रम्							
सू०	च०	मं०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
११	११	१२	१	१५	६	२३	९१
४	११	५	६	७	६	८	१
५	१०	९	१३	१	२२	३	१
४५	४८	५०	१३	४०	४०	०	५९
३६	०	२४	४८	४८	४८	०	२४

ऊपर बताई हुई तीनो आयु के वर्षादिक लाने की रीति सूर्यादि ग्रह के स्पष्ट की कला करके २४०० का भाग देकर शेष मे २०० का भाग देना। लब्धि वर्ष होते है। अब जो शेष रहे उसको पिण्डायु प्रकरण मे कहे हुए ग्रह के ध्रुवाङ्क से गुणाकर २०० का भाग देकर प्राप्त हुए लब्धि अङ्क पूर्व वर्ष सख्या मे नियुक्त करे। शेष अङ्क को १२ से गुणाकर २०० का भाग देने से मासाङ्क मिलेगा। शेषाङ्क को ३० से गुणा कर २०० का भाग देने से दिनाङ्क प्राप्त होगा। शेष को ६० से गुणा कर २०० का भाग देने से घटी और इसी प्रकार पल प्राप्त करना। इस रीति से सूर्यादि ७ ग्रहो की पिण्डायु, ध्रुवायु तथा रश्म्यायु स्पष्ट करना॥८॥

सूर्यादिगुणिताच्छेदावृद्धि कुर्याद्यथोत्तरम् ॥ स्वोच्चहीन ग्रह ज्ञात्वा कर्कादि च मृगादि च ॥९॥ गृहीत्वा तु भुज कोटि कृत्वा लिप्तीकृत तु तम् ॥ हत्वा नवांशधायेन भजेद्भूत्रयलिप्तिभि ॥१०॥ वत्सराद्या भवन्त्येते वर्जयेन्मकरादिके ॥ केन्द्रे नवांशदाये स्वे त्रिघ्ने कर्कटकादिके ॥११॥

कोटी करना। (भुज को ३ राशि मे घटाने से कोटी होती है।) जो शेष बचे उसकी कला करना। नवाश के ध्रुवाङ्क से गुणा करना। ५४०० का भाग देना। जो लब्धि हो वह वर्ष सख्या होगी। शेष को १२ से गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि मास सख्या। शेष को ३० से गुणा कर ५४०० का भाग देना। लब्धि दिन सख्या। शेष को ६० मे गुणाकर ५४०० का भाग देना। लब्धि घटी सख्या। और इसी प्रकार पल सख्या लेना। अब जो प्राप्त हुआ वर्ष, मास, दिन घटी, पल अक उसको ग्रह यदि मकर आदि ६ राशियो मे हो तो ऋण और कर्कादि ६ राशियो मे हो तो धन होता है। इसमे मकर आदि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क को ३ गुणा करके वर्ष सख्या मे घटाना और कर्कादि केन्द्र हो तो ध्रुवाङ्क का आधा वर्ष सख्या मे जोडना तो नवाश आयु स्पष्ट होती है॥९॥१०॥११॥

युग्मादधोकृते तस्मिन् प्रक्रमानुगतो मत॥१२॥ द्विघ्ने स्वपनयेत्तस्मिन्युज्यादेव दलीकृते ॥ निक्षिप्याष्टकवर्गे तु राशिचक्रे तु पूर्ववत् ॥ त्रिकोणैक्यशुद्धि च कृत्वा तु गुणयेद्गुणै ॥१३॥

मध्यम अंशायुश्चक्रम्							
सू०	च०	म०	बु०	गु०	शु०	श०	यो०
३	१९	१८	७	१०	२५	११	११६
८	३	७	०	५	६	,५	०
१	०	१	२१	२३	४	२३	१६
५२	४४	५३	९	३२	७	२०	९
४०	४८	५२	२४	०	४	२	८

सर्वाङ्गिभक्तमब्दाद्या क्रमाद्भिन्नाष्टवर्गजा ॥ एवंकृत्वा तु संयोज्य माप्तमब्दादयः स्मृता ॥१४॥ कृत्वा करणदैरेव स्वोत्पन्नौ दायसंज्ञितौ ॥ प्रत्येकं भिन्नदायोत्था एव त्रिंशद्विधा मता ॥१५॥

इसी प्रकार क्रमानुगत आयुर्दाय स्पष्ट करना। नवांश आयु प्राप्त आयु मकर आदि ६ राशि मे हो तो मूल ध्रुवाङ्क को द्विगुण करके हीन करना। कर्कादि ६ राशि मे हो तो मूल ध्रुवाङ्क को आधा करके जोड़ना चाहिए॥१२॥

अष्टक वर्गायु प्रकार प्रथम अष्टक वर्ग सिद्ध करके त्रिकोण शोधन और एकाधिपत्य शोधन करना। और पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक राशि गुणक से गुणाकर पिण्ड संख्या स्पष्ट करना। बाद ३० का भाग देना तो वर्षादिक भिन्नाष्टक वर्गायु होती है।

समुदायाष्टक वर्गायु की रीति भिन्नाष्टक वर्गायु के अंक जोड़कर २७ का भाग देना तो वर्ष, मास, दिनादिक समुदायाष्टक वर्गायु होती है। इस प्रकार रेखा पिण्ड से तथा बिन्दु पिण्ड से रेखाष्टक वर्गायु तथा कर्णाष्टक वर्गायु होती है। इस प्रकार अब तक ३० भेद सिद्ध हुआ जिसमें पिण्डायु ७ प्रकार की ध्रुवायु ७ रश्मायु ७ और अंशायु ७ रेखाष्टक वर्गायु १ और कर्णाष्टक वर्गायु १ य ३० भेद स्पष्ट हुए॥१३ १५॥

पंच भूर्च्छा सप्त रत्न दश षोडश वारिधि ॥ नवांशा विधिना प्रोक्ता अल्पाल्पोत्काशतु मादित ॥१६॥ रयीन्द्वारराहिजीवार्किबुधकेतुसिता क्रमात् ॥ आग्नेयाद्गणेशा स्यु स्वामिनो वत्सरा क्रमात् ॥१७॥ षडशा सप्त धृतयो नृपो एकोनविंशति ॥ अत्यष्टि सप्त च नगा उच्चे नीचेऽर्धमुच्यते ॥१८॥ अस्मिन्नु हरण तस्मात्पूर्वस्मिस्तु द्वय हितम् ॥ अनयो पापदायादावते पुरुषमृत्यव ॥१९॥ द्वात्रिंशद्भेदभिन्नोयमायुषो निर्णय कृत ॥ लोकयात्रापरिज्ञानहेतवे ॥यनिर्णय ॥२०॥ भावाना सप्रवक्ष्यामि शृणुष्व मुनिपुंगव ॥ आयुश्च परम हृत्वा स्वेन स्वेन तेन च ॥२१॥ विभजेद्रस्ययोगेन भावाना दाय एव स ॥ अथ यवार्णदायेन यांशाना फलेन तु ॥२२॥ स्थानाख्यश्च समुद्भूत षड्विधो दाय उच्यते ॥२३॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे आयुर्दायकथने चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

नवांशायुर्दाय के ध्रुवाङ्क-(इनको कालचक्र भी कहते है।) सूर्य ५, चन्द्र २१, मगल ७, बुध ९, बृहस्पति १०, शुक्र १६, शनि ४ यह सूर्यादि ग्रहो के ध्रुवाङ्क है॥१६॥

नक्षत्र आयुर्दाय प्रकार-कृतिका नक्षत्र से ३ वार आवृति करने से सूर्यादि ग्रहो के नक्षत्र होते है। ग्रहो के वर्ष-सूर्य के ६, चन्द्रमा के १०, मगल के ७, राहु के १८, गुरु के १६, शनि के १९, बुध के १७, केतु के ७ तथा शुक्र के २०। ये ध्रुव परमोच्च के है। ग्रह नीच राशि का हो तो पूर्वोक्त ध्रुवो का आधा लेना। बीच की राशियो मे त्रैराशिक से समझना। पापग्रहो की आयु मे आदि या अन्त मे अपमृत्यु होती है। शुभग्रहो की आयुर्दाय शुभफल कारक है।१७॥१८॥१९॥ पूर्वोक्त ३० प्रकार की आयु तथा नवांश आयु और नक्षत्र आयु ये सब ३२ प्रकार के आयुर्दाय हुए। इस तरह यह आयु का निर्णय लोकयात्रा के ज्ञान के लिये कहा गया। इसमे कुछ विशेष कहते है। प्रथम जो ७ प्रकार का आयुर्दाय कहा उनमे प्रत्येक आयुर्दाय को अपने भावबल से गुण कर भावबल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि आयुर्दाय होती है। दूसरा प्रकार-नवांश आयुर्दाय से परमायु को गुणकर षड्वर्ग पति बल योग से भाग देना। लब्ध वर्षादि भावायु होती है। इस प्रकार ६ भेद होते है। भावायु, नक्षत्रायु, नवांशायु, अष्टवर्गायु, अंशायु तथा पैण्डचायु। अर्थात् अनेक भेद होते हुए भी सभी भेद इन ६ भेदो के अन्तर्गत है। हे मैत्रेय! इस आयुर्दाय विचार को स्पष्ट रीति से जानना चाहिए ॥१६ से २३ तक॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्रका० आयुर्दाय वर्णननाम चतुर्दशोऽध्याय ॥१४॥

अथदायवर्णनाह

आरार्को वक्रिणौ मृत्युश्चान्योन्यभवनस्थितौ ॥ वेश्मव्ययमृत्युरिःफस्थाः क्षीणेन्दुलग्नपतिपाष्टमाः ॥१॥मष्टमस्था ग्रहा सर्वे पापदृष्टियुतास्तु वा ॥ भौमभवर्क्षगाश्चेत्तु शुभदृष्टिविवर्जिताः ॥२॥ केन्द्रत्रिकोणे च शुभाश्च पापाः षष्ठे तृतीये न च मृत्युसंस्थाः ॥ अष्टोत्तर जीवति वर्षमायुर्नरो गुणाढ्यो नवतिः सुशीलः ॥३॥ लग्ने गुरौ दैत्यगुरौ चतुर्थे बुधे सुते षष्ठगते च सूर्ये ॥ स्थान च शत्रोश्च मृति च हित्वा त्वन्ये स्थिताश्चेन्नवतिश्च षट् च ॥४॥

इस एकादश अध्याय मे मारक योग मे आयु मे हानि तथा कारक योग से वृद्धि होती है। उन योगो मे प्रथम मारक योग कहे जाते है। शनि, मगल वक्री होकर परस्पर एक दूसरे के भाव मे हो, तो मृत्युकारक होते है। क्षीण चन्द्र, लग्नेश तथा अष्टमेश ये तीनो ४।६।८।१२ स्थानो मे हो तो मृत्युकारक होते है। अथवा सब अष्टमभाव मे हो तो मृत्युकारक होते हैं अथवा सब मृत्युकारक ग्रह १।८।१०।११ राशियो मे हो तो मृत्युकारक होते हैं।॥१॥२॥

आयुर्दायक योग-शुभग्रह केन्द्रत्रिकोण मे हो तो १०८ वर्ष की आयु तथा कोई भी पापग्रह ३।६।८ मे न हो तो ९० वर्ष की आयु हो तथा सुशील, सुस्वभाव एव गुणसपन्न हो॥३॥ लग्न मे गुरु, चतुर्थभाव मे शुक्र, पञ्चम मे बुध तथा षष्ठभाव मे सूर्य हो तो ९० वर्ष की आयु होती है। चन्द्र, मगल शनि ये तीनो ग्रह शत्रुराशि तथा अष्टमभाव मे न हो तो ९६ वर्ष की आयु होती है॥४॥

सुखादिकेन्द्रेषु गुरुः स्थितश्चेत्तत्पञ्चमे ज्ञे तु भृगौ तु षष्ठे ॥ षडुत्तरा सप्ततिरष्टयुक्ता त्यशीतिरेकोत्तरत प्रदिष्टा ॥५॥ केन्द्रादिस्था शत दशुर्नवाष्टादीश्च द्विगुणान् ॥ मिश्र सयुक्य दलिता अनुपातेन वत्सरा ॥६॥ शत्रुनीचसमांशेषु द्विग्विधेषु न चेत्स्थिता ॥ शतायुर्योगहीनास्तु सर्वे प्रोक्ताः कलौ युगे ॥७॥ दायाना हरण वक्ष्ये शृणुष्व मुनिपुगव ॥ आयुदयि तु हरण षड्विध सप्रकीर्त्यते ॥८॥ व्ययादिहरण पूर्वमस्तारिहरणे तथा ॥ क्रूरोदयस्थहरण चन्द्रयुक्ततमस्तथा ॥९॥

लग्न से ४ भाव मे गुरु हो गुरु से पचम बुध हो और छठे घर मे शुक्र हो तो ७६ वर्ष की आयु होती है। लग्न से सप्तमभाव मे गुरु गुरु से ५ बुध और छठे शुक्र हो तो ८८ वर्ष की आयु। अथवा लग्न से १० भाव मे गुरु और गुरु स ५ भाव मे बुध और छठे शुक्र हो तो ८१ वर्ष की आयु होती है॥५॥

केन्द्रादिभावबश से आयुनिर्णय–यदि सभी ग्रह केन्द्र मे हो तो १०० वर्ष की आयु होती है। और पणकर मे हो तो ९० वर्ष की आयु एव आपोक्लिम मे हो तो ८० वर्ष की आयु होती है। और यदि केन्द्र पणकर आदि आदि स्थानो मे ग्रह हों तो दो स्थानो की आयु जोड कर आधा करना तो आयु जाने। और तीन स्थानो म ग्रह हो तो तीनो सख्या जोड कर तृतीयाश आयु प्रमाण जानना। इस प्रकार जो दशयोग जन्य आयु का प्रमाण कहा अर्थात् १०८।९०।९०।९६।९६।७६।८८।८१।१००।९०।८०। इन दशयोगाके कर्ता ग्रह शत्रु नीच,सम आदि अशो मे न हो तो पूर्ण आयु होती है नही तो उक्त योगों का भग होता है। प्राय कलियुग मे शतायुहीन ही मनुष्य होते है॥६॥७॥

उक्त आयुयोगो मे कमीकारक योग–बारहवे घर से सातवे घर तक हारक योग १, अस्तंगत योग २ शत्रुक्षेत्र गत ग्रहयोग ३ क्रूरोदयस्थ योग ४ राहुयुक्त चन्द्र ५ द्वादश भावगत पापयोग ६ ये छ योग हैं इनसे आयु का हरण होता है॥८॥९॥

पापो व्ययस्थो हरति सर्वमाय द्विजोत्तम ॥ अर्धत्रिचतुःपञ्चषडशोन क्रमाच्छमी ॥१०॥

अथ स्पष्टायुश्चक्रम्								
सू०	च	म०	बु०	गु०	शु०	श०	ल०	यो०
६	१६	०	३	५	१७	७	१	५९
१०	१०	०	६	२	९	७	९	८
०	४	०	१४	२६	२	२५	२४	८
५६	२४	०	३४	४६	३	३३	१९	३७
२०	१२	०	४२	०	३२	०	३६	३२

लाभादिसंस्थिता खेटा वामत प्रक्रिया शृणु ॥ हरति सौम्या प्रोक्तार्धं सप्तद्वादशसधिषु ॥११॥ पापश्चेत्सकल हति शुभो दलमयोत्तरम् ॥ लग्नाद्द्वादशसधौ च ग्रहात्पापान्विवर्जयेत्

॥१२॥ राश्यभावे तु भागादीन् दायघ्नान् षष्टिभाजितान् ॥ दाये द्विघ्ने तु सौम्यस्य राशिरेको बलंयदि ॥१३॥ अधिकेनापहृत्तत्तु क्रमाद्राशिंविना कृतम् ॥ दायर्द्धिगुणया सौम्यो लब्ध्वा वाऽपचये समाः ॥१४॥

द्वादश भाव मे पापग्रह हो तो उसकी सम्पूर्ण आयु का ह्रास होता है। ११ भाव मे अर्धभाग का ह्रास होता है। दशमभाव मे पापग्रह हो तो तृतीयांश, नवमभाव मे पापग्रह हो तो चतुर्थांश, आठवे भाव मे पचमाश, सातवे मे षष्ठांश, आयु का भाग हरण करता है। और शुभग्रह हो तो उक्त भाग का आधा भाग हरण करते है॥१०॥ सधिगत ग्रह यदि पाप हो तो उक्त मान आयु और शुभ हो तो आधा हरण करते हैं॥११॥ बारहो सधियो मे स्थित शुभ या पापग्रहो के अशादि को अपने अपने आयुवर्ष सख्या से गुणा करके ६० का भाग देने से जो लब्धि प्राप्त हो वह सधि मे कम करने से जो शेष रहे वह आयु का हरण फल हुआ। यह सस्कार ग्रह के स्पष्ट मे राशि होने पर ही करना चाहिए। राशि न होने पर पापग्रह का तो यही सस्कार है। शुभग्रह मे आयु के अको को द्विगुणित करके उससे अशादि को गुणा करना। बाद ६० का भाग देकर लब्धि को सधि मे घटाना तो आयु का हरण फल होता है। अथवा एक जगह राशि हो अन्यत्र नही हो तो अधिक मे से कम को घटाकर शेष बचे सो आयु हरणफल होता है॥१२॥१३॥१४॥

बहयो बलिनो घ्नति समाश्चैतत्प्रथमो मतः ॥ अशकं ग्रहयोगे च द्वयोः पापे हरत्युत ॥१५॥ सौम्योपि पापवर्गे च स्थितो रिष्फादिषट्सु चेत् ॥ त्रिपुभावगतानां च पापानां करणं स्मृतम् ॥१६॥ कुटुंबभरणं चापि दुश्चित्तं लाभमेव च ॥ मेधां च प्रतिभा शांति मंदक्रोधं करिष्यति ॥१७॥ अस्तगतानां सर्वेषां दलं दायः स्मृतस्तदा ॥ राशिसख्यासमाश्चाब्दा लग्नेऽब्जे बलवत्तरम् ॥१८॥ अशान् लिप्ताहृतान् कृत्वा खखाक्षिभ्यां समाहृताः ॥ शेषा मासादयः प्रोक्ता वर्तमानाब्दयोजने ॥१९॥

इस प्रकार सधिगत एक एक ग्रह का फल कहा गया। यदि एक ही सधि मे अनेक ग्रह हो तो उनमे पाप ग्रह आयु का हरण करता है, शुभग्रह नही॥१५॥ दो शुभग्रहो का योग हो तो जो ग्रह पापवर्ग मे हो अथवा ७वे से १२वे भाव तक हो तो आयु का हरक (हरण करने वाला) होता है। इसी प्रकार ७वे से १२वे घर तक रवि, मगल, शनि हो तो भी आयु का हरण करते है॥१६॥

बिन्दु के सम्बन्ध मे विचार—पापग्रह १२वे भाव मे हो तो कुटुम्ब का पोषण कारक होता है। ११ वे भाव मे हो तो दुश्चित्त करे। १०वे घर मे लाभ। ९वे घर मे ज्ञान का उदय। ८वे घर मे शाति। ७वे घरमे क्रोध कारक होता है॥१७॥जो ग्रह अस्त हो उनका जो फल प्राप्त हो उसका आधा भाग हरण होता है। यदि लग्न मे चन्द्रमा बलवान् हो तो लग्न की राशि की सख्या ही आयु के वर्ष जानना। लग्न मे चन्द्रमा बलहीन हो या न हो तो अशो को ६० से गुणा कर २०० से भाग देकर लब्ध वर्षादिक आयु जानना॥१८॥१९॥

क्रूरेक्रूरोदयघ्नं समष्टोत्तरशतैर्हृतम् ॥ लब्धं चापनये द्वाये स्वे तथा परमायुषि ॥२०॥ स्वोच्चे

मूलत्रिकोणे च सव्यस्यार्धं विवर्जयेत् ॥ मित्रेऽधिसुहृदि प्रोक्तं पादोनेनापनायनम् ॥२१॥ भावेष्वेव विधिः प्रोक्तो वर्गाणामधिपेषु च ॥ तिष्ठतौ शुभपापौ चेत्पापोदयविधिः स्मृतः ॥२२॥ क्रूरेष्टमेऽष्टमांशेन भावस्याप्यनुपाततः ॥ लग्नाधिपेतराष्टांशं पापो हरति मृत्युगः ॥२३॥ बहवश्चेद्बलीसौम्यपापेष्वेवविधिः स्मृतः ॥ तयोर्दायांतरं दायं केन्द्रस्य च विधीयते ॥२४॥

लग्न मे पापग्रह हो तो लग्न के अंशादि को पापग्रह की नवांश राशि से गुण्य करके १०८का भाग देना। जो लब्ध हो सो आयु मे से कम करना तो स्पष्ट आयुर्दाय होती है। लग्न मे पापग्रह उच्च राशि या मूल त्रिकोण मे हो तो पूर्वोक्त रीति से जो लब्धाङ्क प्राप्त हुआ है उसको आधा करके परमायु मे घटाना। यदि पापग्रह मित्र या अधिमित्र का हो तो चतुर्थांश कम करके बाकी स्पष्ट आयु जानना। यदि लग्न में शुभ और पाप दोनो ग्रह हो तो जो बलवान हो उसके अनुसार क्रिया करना॥२० २२॥

आठवे भाव मे पापग्रह हो तो लग्नेश को छोडकर और भावो के स्वामी की अष्टमांश आयु का हरण करता है॥२३॥ यदि अनेक पापग्रह हो तो जो बलवान हो उसमे पूर्वोक्त विधि से आयु हरण करे। अथवा शुभ पाप दोनो प्रकार के ग्रह हो तो दोनो ग्रहो के आयुफल का अन्तर करके जो बाकी रहे वह आयुफल होता है। इसी प्रकार केन्द्रस्थित ग्रहो के लिये भी समझना चाहिए॥२४॥

सेन्दौ राहौ दशा राहोरानीता मूलदायवत् ॥ चंद्रायुःपिंडतः शोध्या तद्राहुकरणं स्मृतम् ॥२५॥ अंशादायक्रमेणैव तमसोऽब्दा समीरिताः ॥ तस्मिन्सचन्द्रे तल्लग्नभावसाधनतस्ततः ॥२६॥ तत्तद्वृद्धिहतं कृत्वा षष्ट्याप्तं धनशोधने ॥ सोदये च सराहिवद्वाये स्यात्समीरितः ॥२७॥ स्थानवृद्धिः क्षयः कार्यो द्रेष्काणर्क्षे सराशिकम् ॥ अस्तगतावामर्धं स्याद्विना भृगुसुतं शनिम् ॥२८॥ तयोर्वेदांगहीनं स्यात्त्र्यंशोनशत्रुगस्य तु ॥ अगारकं वर्जयित्वा शत्रुक्षेत्रगतैर्ग्रहैः ॥२९॥

अब चन्द्रयुक्त राहु का विचार कहते है चन्द्रयुक्त राहु हो तो पूर्वोक्त रीति से दशा स्पष्ट करके चन्द्रमाकी आयु घटानाजो शेष रहे वह राहु का वर्षादि स्पष्ट होता है॥२५॥ यदि चन्द्र सहित राहु लग्न मे हो तो लग्न के आयु स्पष्ट से राहु दृष्टि और चन्द्र दृष्टि को गुणाकर ६० से भाग देना। शेष मकरादि मे धन तथा कर्कादि मे ऋण करना तो आयु स्पष्ट होती है॥२६॥२७॥

द्रेष्काण योग से आयु की वृद्धि तथा ह्रास–द्रेष्काण तथा भाव की राशि एक हो तो भाव स्थान फल की वृद्धि होती है। भिन्न हो तो क्षय होता है। अस्तगत ग्रहो का आयुर्दाय आधा होता है॥२८॥ शुक्र शनि अस्तगत हो तो ३/४ (पौना) होता है॥२८॥ शत्रु क्षेत्री ग्रह का आयुर्दाय मंगल बिना तृतीयांश कम होता है। मित्र क्षेत्रीग्रह का षष्ठांश कम होता है॥२९॥

सुहृद्वर्गगतानां तु तद्दलं हरति स्वकम् ॥ एवं भावेषु सर्वेषु षड्विधं हरणं न हि ॥३०॥ हरणं नैव कर्तव्यमंशदायेऽष्टवर्गजे ॥ स्वोच्चे च त्रिगुणं प्रोक्तं स्ववर्गे द्विगुणं तथा ॥३१॥ अधिमित्रगृहे सार्धं त्र्यंशं मित्रगृहे युतम् ॥ अरावप्यरिभावे च त्र्यंशखंडविवर्जितम् ॥३२॥ अष्टवर्गोत्थदायेषु प्रोक्तोऽयं विधिरंजसा ॥ भावदायेषु सर्वेषु प्रोक्तोयं विधिरुत्तमः ॥३३॥ दायगस्य तु सर्वस्य सहगस्य दलं भवेत् ॥ सुतधर्मगयोस्त्र्यंशः पादं मृतिसुखस्थयोः ॥३४॥

पूर्वोक्त ६ प्रकार के जो आयु हरण की रीति कही है वह ग्रहो के विषय में जानना भावों

के विषय मे नही॥३०॥ अष्टक वर्गोत्पन्न अशायु मे हरण नही होता। प्रत्युत योग करना। उच्च का ग्रह हो तो प्राप्त आयु को त्रिगुणित करना। स्व राशि का हो तो द्विगुणित। अधिमित्र का हो तो अर्धाधिक (ड्योढ़ा)। मित्र राशि का हो तो तृतीयाश युक्त। शत्रु राशि अथवा अधिशत्रु राशि का हो तो तृतीयाश हीन करना। यह रीति अष्टकवर्गोत्पन्न आयु तथा भावायु मे भी समान रीति से करना। आयुर्दाय का जो स्वामी है उसका जो दाय भाग है उसका आधा भाग दायपति के साथ रहनेवाला ग्रह लेता है। दायेश से त्रिकोण मे स्थित ग्रह तृतीयाश हरण करता है। सप्तमस्थ ग्रह सप्तमाश हरण करता है॥३४॥

सप्तांशं सप्तमस्थस्य प्रक्रिया प्रोच्यतेऽधुना ॥ अशान्यरस्परहताञ्छेदेनैव विभाजितम् ॥३५॥
तत्तदंशविभक्तं च स्वस्य स्वस्य समं भवेत् ॥ नीचार्धपक्षे सर्वत्र विधिरेष विधीयते ॥३६॥
नीचाभावेष्टवर्गोत्थ भावदायेऽशाकक्रमे ॥ नाय विधिः स्मृतस्तत्र बहवश्चेत्तु तेऽखिलम् ॥३७॥
केन्द्रादिगा ग्रहाः सर्वे ददत्येवापहृत्य च ॥ अर्धत्र्यशच पाद च हरणाभावसम्मतौ ॥३८॥

अन्तरदशा का प्रकार—अशच्छेद और समच्छेद करके मूल दशा को गुणा करना और अशच्छेद तथा समच्छेद का भाग देना। तो स्पष्ट अन्तरदशा प्राप्त होगी॥३५॥३६॥ यह पूर्वोक्त प्रकार वही होगा जहा ग्रह नीच का न हो। तथा अष्टक वर्गायु और अशायु मे भी नही होता॥३७॥ सम्पूर्ण ग्रह केन्द्र मे अर्ध, पणफर मे तृतीयाश तथा आपोक्लिम मे चतुर्थाश आयु देते है॥३८॥

अथ दशाक्रमचक्रमाह्								
गु०	श०	शु०	म०	ल०	सू०	बु०	च०	योग
१७ ९ २ ३ ३२	७ ७ २५ ३३ ०	५' २ २६ ४६ ०	० ० ० ० ०	१ ९ २४ १९ ३६	६ ९ २७ ३८ ०	३ ६ १४ ३४ ४२	६ १० ४ २४ १२	५९ ८ ७ ३४ १२
१९००	१९१८	१९२६	१९३१	१९३१	१९३३	१९४०	१९४३	१९६०
१० ४ १४ २२	७ ६ १७ ५४	३ १ ५० ५४	५ २८ ३६ ५४	५ २८ ३६ ५४	३ २२ ५६ ३०	१ २५ ३४ ३२	८ ५ ९ १२	६ ९ ३३ २४

अशच्छेदचक्रम्				चक्रान्तरदशाचक्रम्				
च०	ल०	शु०	भौ०	च	स०	शु०	भौ०	योग
१ १	१ ३	१ ४	१ ४	९ च ५१ २३	३ ० २२ ३७ १	२ ३ १६ ५७ ५४	२ ३ १६ ५७ ५४	१६ १० ४ २४ १२

तमच्छेदचक्रमाह								
च०	ल०	शु०	भौ०	१९४३	१९५२	१९५५	१९५८	१९६०
४८ ४८	१६ ४८	१२ ४८	१२ ४८	८ ८ २७ ३२	१० १६ १८ ५५	११ ८ ५५ ५६	२ २५ ५३ ५०	६ १२ ५१ ४४

सर्वद्वित्रित्रिवेदाश्च त्रिपद्सप्ताष्टपाणय ॥ स्वर्क्षहोराद्रेष्काणेशास्त्रिंशांशेशाद्विभागपा ॥३९॥
नवार्ककालहोरेशा षष्ट्यंशेशकलांशपो ॥ भुजते च क्रमात्सर्वे त्वतर्दायविधी तथा ॥४०॥
ग्रहाक्रूरायाततस्तस्मात्स्थिताना द्वादशस्वपि ॥ भावान च क्रमात्प्रोक्ता भागांशाश्च स्वयभुवा
॥४१॥ सर्वद्विवेदसप्ताष्टषट्त्रिरत्नदिशाऽद्रय ॥ वेदाणा हारका एव ग्रहाणा समुदीरिता
॥४२॥ हत्वा दाय बलै स्वैस्तु बल योगेन भाजयेत् ॥ आयव्यये तु भावाना ग्रहाणा
विपदाविपु ॥४३॥सर्वद्वित्रीषुवेदत्रिपञ्च सप्त तत क्रमात् ॥ स्थानान्तरे तु भागांशा सर्वभावेषु
कीर्तिता ॥४४॥सर्वत्रिराप्तरामेषुपद्भ्यात्रिद्वियमा क्रमात् ॥ कालांशा अर्धहोरांशा पतयोऽस्य
हृता यथा ॥४५॥

इति श्रीवृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डेदायवर्णन नाम पञ्चदशोऽध्याय ॥१५॥

अन्तरदशा का स्वामी स्वराशि मे हो तो पूर्ण आयु, होरा मे आधा, द्रेष्काण मे तृतीयांश कम तथा त्रिंशांश मे तीसरा भाग, सप्तांशक मे चतुर्थांश भोगता है। नवांश मे तृतीयांश तथा द्वादशांश मे हो तो छठा अंश, होरापति हो तो सातवा भाग, षष्ठ्यंश का स्वामी हो तो आठवा भाग भोगता है। षोडशांश मे आधा भाग भोगता है। यह अन्तरदशा का पाचवा क्रम कहा गया है।॥३९॥४०॥ ग्रहो के और भावो के भागांश जो ब्रह्मा ने कहे है सो कहे जाते है।॥४१॥ प्रथम भाव का सपूर्ण आयु, दूसरे भाव की आधी, तीसरे भाव की चतुर्थांश, चौथे की सप्तमांश, पचम की अष्टमांश, छठे की षष्ठांश, सातवे की तृतीयांश आठवे की नवमांश, नवम की दशमांश, दशम की सप्तमांश, ग्यारहवे की चतुर्थांश, बारहवे भाव की आयु का षष्ठांश भाग हारक जानना।॥४२॥

भावो के भागाश–११,१२ भाव का निर्णय यह है कि पूर्वोक्त रीति से हरण करके जो शेष रहा उसको अपने अपने बल से गुणा करे, सर्व बलयोग से भाग देना जो लब्ध हो, वह स्पष्ट अन्तरदशा है। इसी प्रकार तीसरे भाव का सर्वाश, चौथे भाव का आधा, पाचवे का तीसरा, छठे का पाचवा, सातवे का चौथा, आठवे का तीसरा, नवे का पाचवा, दशवे का ॥ वा भाग, भागाश कहे जाते है तथा प्रथम भाव का सम्पूर्ण भाग, दूसरे भाव का आधा भाग भागाश होता है। कालाश तथा अर्ध होराश पति कहते है– सम्पूर्ण, तृतीयांश, सप्ताश, तृतीयाश, पचमाश, षष्ठाश, तृतीयाश, द्वितीयाश और द्वितीयाश ये अधिपति और हारक होते है॥३९–४५॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रेउत्तरखण्डे भावप्रकाशिकायांदायवर्णन पञ्चदशोऽध्याय ॥१५॥

पुनः दायवर्णमाह

ग्रहेषु सर्वेषु बलोत्तरेषु स्वोच्चांशगेषु प्रबलस्य वर्गे ॥ दिग्वीर्यचेष्टाबलपूर्तियुक्ते पैण्ड्येषु नीचार्धकृतापहाराः ॥१॥ अष्टत्रिंशद्भिदा सति ता. स्वोच्चादिसुसंस्कृताः ॥ लग्नाविभाव· गानां च ग्रहाणां स्थितिभेदतः ॥२॥ द्विमाश्चतुरशीतिश्चभिदा· संतिद्विजोत्तम ॥ स्वोच्चादि· स्थितिभेदेन भिन्नाः सूर्येषुभूमय. ॥३॥

पुन· दायवर्णन

पिडायु की विविध भेद प्रकार सख्या–पहले पिण्डायु प्रकरण मे पिण्डायु के १२ भावो की आधा, तिहाई, चौथाई घटाने से १२X३ = ३६ तथा २ अन्य भेद, इस प्रकार ३८ भेद यह आये है। ये ३८ भेद उच्च सस्कार होने से ३८X२ = ७६ भेद होते हैं। तथा १२ भावो मे उच्चाश, अधिवा बल, दिग्वल, चेष्टाबल, वर्ग बल आदिक ७ ग्रहो के भेद मे १२X७ = ८४ भेद होते है। और हे मैत्रेय! इन ७ ग्रहो के स्वराशि, उच्च, मूल, त्रिकोण आदि ९ शुभयोग तथा ९ अशुभ योग मिलाकर १८ गुणित होने पर ८४X१८ = १५१२ भेद होते है। इस प्रकार ७६ और १५१२ भेद पिण्डायु के होते है॥१॥ से॥३॥

सलग्नानां बलैः सर्वैरधिकानां क्रमाद्द्विज ॥ अंशोद्भवस्तथा पैंड्यो निसर्गोस्त्वाभिधः परः ॥४॥ शतस्वरांशो भौमाच्च नक्षत्रांशकसंज्ञकौ ॥ स्वरांशश्चेतरो दायः करदायस्तथेतरः ॥५॥ स्वोच्चनीचसुहृच्छत्रुवर्गगेश्च चतुर्विध· ॥ अतिनोचातिशत्रोश्च भागराशिगतस्य च ॥६॥ समुदायाष्टवर्गश्च भिन्नाष्टक उदीरितः ॥ तत्र मूलत्रिकोणे च मित्रवर्गे च वृद्धिकृत् ॥७॥ तथा समारिवर्गे च ॥ वृद्धिहरणे तथा ॥ सूर्यादय. क्रमाल्लग्नगताश्चेद्बलवत्तरा. ॥८॥

किस बल से कौनसी आयु लेना, यह कहा जाता है। हे मैत्रेय! लग्न बलवान् हो तो अंशायु लेना, सूर्य बलवान् हो तो पिंडायु लेना, चन्द्र बलवान हो तो निसर्गायु लेना, मगल बलवान हो तो स्वराशायु लेना, बुध बलवान हो तो नक्षत्रायु,गुरु बलवान हो तो नवांशायु, शुक्र बलवान हो तो स्वरांशायु, शनि बलवान हो तो कर दाय आयु लेना॥४॥५॥

उच्चादि बल के कारण आयु के ग्रहण का विचार–उच्च वर्ग मे हो तो पिण्डायु, नीच वर्ग

मे हो तो निसर्गायु, त्रिवर्ग मे हो तो स्वराशायु, शत्रुवर्ग मे हो तो नक्षत्रायु, अति नीच नवांश मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, अति शत्रु नवांशक वर्ग मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु लेना।।६।। जो ग्रह मूल त्रिकोण के त्रिवर्ग मे हो तो पूर्वोक्त रीति से वृद्धि करना। नीच तथा शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रु वर्ग मे हो तो कम करना। सम शत्रुवर्ग मे यथा प्राप्त आयु ग्रहण करना।।७।। सूर्यादिग्रह बलवान होकर लग्न मे स्थित हो तो उनके बल के अनुसार आयु लेना। यथा सूर्य से पिण्डायु, चन्द्र से ध्रुवायु, मगल से समुदायाष्टक वर्गायु, बुध से भिन्नाष्टक वर्गायु, गुरु से क्रमानुगत आयु, शुक्र से अंशायु, शनि से करदाय आयु ग्रहण करना।।८।।

पैंडघो ध्रुवोऽष्टवर्गोत्थ प्रक्रमानुगतोंऽशकः ॥ करदायक्रमाल्लग्ने रव्यादौ तु स्थिते सति ॥९॥ पैंडघः स्वरांशो ध्रुवोप एव तत्प्रक्रमांशश्च तथांशकोत्थः॥ भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञः करोत्थ उच्चादिषु योजनीयः ॥१०॥ ध्रुवः सुखस्यस्य तु सप्तमस्य पैंडघः स्वरांशः खलु कर्मगस्य ॥ द्वितीयसस्थस्य च पैंडघ उक्तस्तृतीयधीधर्मगतस्य चैव ॥११॥ षष्ठव्ययस्थस्य तु भिन्नसंज्ञस्त-थेतरो मृत्युगतस्य चैवम् ॥ पैंडघः स्वरांशो ध्रुव''आय उक्तं पैण्डयौ भवेदायगतस्य चैव ॥१२॥

लग्न मे उच्चादि भेद से स्थित ग्रह से आयु का ग्रहण लग्न मे उच्चराशि का ग्रह हो पिण्डायु लेना। त्रिकोण मे उच्चराशि का ग्रह हो तो स्वरायु लेना। स्वराशि का हो तो ध्रुवायु लेना। अधिमित्र का हो तो प्रकमांश आयु। मित्रक्षेत्री हो तो अंशायु। शत्रु क्षेत्री हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु। अधिशत्रु क्षेत्री हो तो समुदायाष्टक वर्गायु। नीच का हो तो अंशायु लेना चाहिए।।९।।१०।।

मतान्तर–लग्न से चौथे घर मे ग्रह हो तो ध्रुवायु, ७वे हो तो पिण्डायु, २,१०वे घर मे स्वराशायु, ३,५,९वे घर मे हो तो पिण्डायु, ६ठे घर मे हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु ८वें घर मे हो तो समुदायाष्टक वर्गायु, लग्न मे हो तो पिण्डायु, ११ वे घर मे हो तो पिण्ड, स्वर, ध्रुव इन ३ आयु मे से एक आयु लेना।।११।।१२।।

लाभेरवींद्वारबुधेज्यशुक्रमंदा. स्थिताः प्रक्रमदाय एव ॥ लग्नार्यभौमज्ञरवीन्दुमन्दशुक्रास्तृतीये सुतभे च धर्मे ॥१३॥ स्वेशुक्रमंदार्यबुधार्कभौमचंद्रा. सुखेऽस्ते निधनेऽपिचैव ॥बुधात्क्रमाद्व्यु-त्क्रमतश्च चंद्राद्भौमार्कमंदार्यसितज्ञचंद्राः ॥१४॥ षष्ठे व्यये कर्मणि लाभगा वा रवीन्दुशुक्रा-र्किकुजार्यसौम्याः ॥ सौम्यात्कुजाद्धर्गवतः क्रमात्स्युर्मिश्रे तु दाये क्रमशः प्रदिष्टम् ॥१५॥ नक्षत्रदायोऽथार्कपिंडदायो भिन्नाष्टवर्गः समुदायसंज्ञ. ॥ स्वराशदायौ क्रमशः प्रदिष्टौ विशेष-स्तत्र वदामि यस्मात् ॥१६॥

बारह भावो मे मिश्रायु लेने का प्रकार–एकादश स्थान मे ७ ग्रहो की आयु लेना। लग्न तथा ३,५,९ भाव मे गुरु, मगल, बुध, सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र, इस क्रम से आयु लेना। २रे भाव मे शु० श० गु० बु० सू० म० च० इस क्रम से आयु लेना। ४थे घर में बुध, सू० म० च० गु० श० गु० इस क्रम से, ७ वे भाव मे च० म० सू० बु० गु० श० शु० इस क्रम से, ८वे भाव में म० सू०

श० गु० शु० बु० च० इस क्रम से, ६ठे भाव मे सू० च० शु० श० म० गु० बु० क्रम से, १२वे भाव मे बु० सू० च० शु० श० म० गु० क्रम से, १०वे भाव मे म० गु० बु० सू० च० शु० श० क्रम से, ११वे भाव मे शु० श० म० गु० बु० सू० च० इस क्रम से आयु देने वाले कहे गये हैं।।१३।।१४।।१५।।

आयुर्दाय की गणना–नक्षत्रायु अंशायु, पिण्डायु भिन्नाष्टक, वर्गायु, समुदायाष्टक वर्गायु, स्वराशायु, इनके भेद आगे कहे जाते हैं।।१६।।

अष्टत्रिंशदभिधे तु अकसूर्यकलांशके ।। मूर्छाक्षिणी भिदा सति रश्मिजास्त्रिंशदेव हि ।।१७।। एकस्य विषये द्वौ चेदायुर्योगदल भवेत् ।। ज्यादयश्चेद्युतास्त्र्यादिसंख्याप्ताश्च दशा भवेत् ।।१८।। रवावुच्चगते चान्ये बलिष्ठामूलकोणगा ।। स्वोच्चस्थेषु बलिष्ठेषु सर्वेषु शशहंसके ।।१९।। एव चिरायुषा योगेष्वन्येषु गणितेषु च ।। चद्रयोगेषु त्रिषु च चद्रे तु बलवत्तरे ।।२०।। राजयोगेषु सर्वेषु पैंडयमाह पराशर ।। लग्न गुरौ कर्मगते च भानौ चद्रे सुख वाऽस्तगते बलिष्ठे ।। पूर्णे त्रिकोणोपचये शुभेषु पापेष्वथाप्रोत्तमसस्थितेषु ।।२१।। शुभाश्च केद्रे त्रिषडायभेऽन्ये विपर्यये पैंडयमत प्रविष्टम् ।। रि फाष्टषष्ठेषु सहस्ररश्मौ भौमे क्रमाच्छीतकरे तु पैंडय ।।२२।। पापाल्लग्ने चाष्टमे सप्तमे वा सौम्या षष्ठे कर्मभेरि फभेवा ।। नीचाभावे पैण्डयाय प्रदिष्टो मदे लग्ने स्वोच्चगे च ध्रुवाख्य ।।२३।।

अभिधित आयु के भेद ३८ होते है उनमे नवांश, द्वादशांश षोडशांश के भेद मे २२१ भेद होते है। रश्मि आयु के ३० भेद है।।१७।। एक भाव मे २ ग्रह आयु दाता हो तो दोनो का योग करके उसका आधा लेना। ३ आदि अधिक ग्रह हो तो सबकी आयु का योग करके ग्रह सख्या से भाग देना। जो लब्धि हो सो वही आयु भाव की होती है।।१८।।

पिण्डायु ग्रहण मे विचार–सूर्य उच्च का हो और ग्रह बलवान् हो तथा शश योग हस योग, दीर्घायु योग, सुनफा योग अनफा,दुर्धरा चन्द्र राज आदि योग हो तथा चन्द्रमा बलवान् हो तो पिण्डायु ग्रहण करना ऐसा पराशर भगवान् कहते है।।१९।।२०।।२१।।२२।।

प्रकारान्तर से पिण्डायु ग्रहण का विचार–गुरु लग्न म सूर्य १० चन्द्र ४ अथवा ७, शुभग्रह त्रिकोण या त्रिषडाय मे, १,२ ७ ८,१२ मे अथवा शुभग्रह केन्द्र, त्रिषडाय मे, गुरु १२, मगल ८, चन्द्र ६ अथवा पापग्रह १।७।८ शुभ ग्रह ६।१०।१२ इन भावो मे नीच वर्जित हो तो पिण्डायु लेना।।२१।।२२।। जन्म लग्न म तुलाराशि का शनि स्थित हो तो ध्रुवायु लेना।।२३।।

वीणायां कार्मुके चक्रे गदायामर्धचन्द्रके ।। रवौ पैंडयोऽशको लग्ने ध्रुवश्चन्द्रे च भूमिजे ।।२४।। भिन्नाष्टवर्गं सौम्ये तु नक्षत्रांशसमुद्भव ।। गुरौ नक्षत्रदाय स्यात्प्रक्रमानुगत सिते ।।२५।। समुदायाष्टवर्गस्तु मदे तु बलवत्तरे ।। वाप्यां पाशे शरे पद्मे समुद्रादिषु क्रमात् ।।२६।। बलिष्ठेषु नवांशोत्थो ध्रुव पैण्डयस्वरांशक ।। भिन्नाष्टवर्गो ह्यशोत्थो नक्षत्रांशक ईरित ।।२७।। रज्जौ विहगे मालायां नले च मुसले क्रमात् ।। पैंडयो ध्रुव क्रमात्प्रोक्तो रव्यादौ तु बलोत्तरे ।।२८।। गडे शक्तौ च शकटे यूपे केदारशूलयो ।। प्रक्रमानुगतश्चाय रश्मिजौ ध्रुवसज्ञितौ ।।२९।। अष्टवर्गसमुद्भूतौ क्रमादेय बलोत्तरे ।। नौछत्रवज्रदामाख्ये

स्वरदायोऽरिनीचगे ॥३०॥ कूटे गडे शरे नागे गोले भृगाटके पुनः ॥ कालकूटे क्रमात्प्रोक्ता पैंडचाद्याः सप्त वै द्विज ॥३१॥ पैंडचास्त्वयो ध्रुवांशांशवायाब्राष्टकवर्गको ॥ द्रेष्काणेषु नवांशेषु द्वादशांशेषु च क्रमात् ॥ कलांशेषु नव प्रोक्ता दायाश्चैव पुनः पुनः ॥३२॥

योग विशेष से आयु ग्रहण—वीणा, कार्मुक, चक्र, गदा, अर्धचन्द्र योग हो, सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। केवल सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु लेना। लग्न की बलवत्ता मे अंशायु। चन्द्र बलवान् हो तो ध्रुवायु। मंगल बली हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, बुध बली हो तो नक्षत्रांशायु, गुरु बली हो तो नक्षत्रायु, शुक्र बली हो तो क्रमानुगतायु, शनि बली हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना॥२४॥२५॥

प्रकारान्तर—वापी, पाश, शर, पद्म, समुद्र, इनमे से कोई योग हो तथा सूर्य बली हो तो नवांशायु। चन्द्र मे ध्रुवायु, मंगल मे पिण्डायु, बुध मे स्वरांशकायु, गुरु मे भिन्नाष्टक वर्गायु, शुक्र मे अंशायु, शनि मे नक्षत्रांशायु लेना॥२६॥२७॥

अन्य प्रकार—जन्म कुण्डली मे रज्जु योग हो तो पिण्डायु, विहग योग हो तो ध्रुवायु, माला हो तो पिण्डायु, नलयोग हो तो ध्रुवायु, मुसल योग हो तो पिण्डायु, गण्ड योग हो तो क्रमायु, शक्ति मे रश्म्यायु, शकट मे ध्रुवायु, यूप मे अंशायु, केदार मे भिन्नाष्टक वर्गायु, शूल मे समुदायाष्टक वर्गायु लेना तथा सूर्यादिग्रह की बलवत्ता भी होनी चाहिए।२८॥२९॥ नौका, छत्र, वज्र, दामयोग हो, सूर्यादि ग्रह नीच के हों तो स्वरांशायु लेना॥३०॥ हे मैत्रेय! कूट योग मे पिण्ड, गण्ड योग मे ध्रुव, शर मे अष्टक वर्ग, नाग मे प्रक्रम, गोल मे अंशायु, शृंगाटक मे स्वरांशायु तथा कालकूट मे रश्म्यायु लेना॥३१॥

प्रकारान्तर-लग्न मे प्रथम द्रेष्काण हो तो पिण्ड, दूसरे द्रेष्काण मे ध्रुव, तीसरे मे स्वरांश आयु लेना। नवांश मे ध्रुवादिक क्रम से ९ आयु लेना। द्वादशांश मे अंशादि क्रम से लेना। उच्च आदिक ९ स्थानो मे ग्रह हों तो भिन्नाष्टक, समुदायाष्टक, आदि क्रम से आयु ग्रहण करना॥३२॥

त्रिंशत्सवेदाः स्वरपावकाश्च सुराश्च बाणाः क्षितिपावकाश्च ॥ षट्त्रिंशदिष्वग्नय एव भानि छवांसि मूर्च्छाश्च जिनाः कराश्चेत् ॥३३॥ पैंडचसंख्या द्वादशधा प्रभिन्ना क्रमेण दायो नियतः प्रदिष्टः ॥ तत्त्वाग्निनदाग्नय एव रत्नबाणास्त्रिदशा ध्रुवदायभेदाः ॥३४॥ एकत्रयश्चेत्समुदाय समस्ततस्तु वेदा इतरोऽष्टवर्गः ॥ पञ्चादिकेष्वशकदाय उक्तो रुद्राश्च सूर्या यदि पैंडच आद्यः ॥३५॥ विश्वे मनुश्चेत्स्वरभागदायो नक्षत्रदायस्तिथिसंज्ञकश्चेत् ॥३६॥ नृपेत्यष्टित्रये प्रोक्ता आद्यपैंडचभिदास्तथा ॥ प्रक्रमानुगतो विंशत्यष्टत्रिशेऽष्टवर्गजः ॥३७॥ चत्वारिंशत्त्रये पैंडचो नक्षत्रांशस्त्रये ततः ॥ शेषेषु पट्सुपैंडचः स्यादाद्यो पर्गोपमाह च ॥३८॥ इष्टरश्म्यधिक प्रोक्तक्रम एव कराधिके ॥ केंद्रादिषु ग्रहाणां च बलोत्तरवशात्क्रमः ॥३९॥

अब रश्मि के भेद से आयु का भेद कहा जाता है। रश्मि के योग की संख्या २१।२४।२६।२७ तथा ३० से ३७ तक हो तो पिण्डायु लेना। और २५।२९।२३।३९ योग हो तो ध्रुवायु लेना। तथा १।२।३ योग हो तो समुदायाष्टक वर्गायु लेना। ४ का योग हो तो भिन्नाष्टक वर्गायु, ५ से १० तक योग हो तो अंशायु, ११।१२ मे पिण्डायु, १३।१४ मे

स्वरांशायु, १५ मे नक्षत्रायु, १६ से १९ तक पिण्डायु, २० मे प्रक्रम आयु, ३८ मे अष्ट वर्गायु, ४०।४१।४२ मे पिण्डायु, ४३।४४।४५ मे नक्षत्रायु, २२।२८ तथा ४६ से ४९ तक रश्मि योग हो तो पिण्डायु लेना। यह गर्ग ऋषि का कथन है॥३३ से ३९ तक॥

बलोत्तरवशादेव स्थानेतरवशात्तथा ॥ इष्टाश्फलक्रमादेव रश्म्युक्तविधिना क्रमात् ॥४०॥
कल्पादौ भगवान् गर्ग प्रादुर्भूय महामुनि ॥ ऋषिभ्यो जातक सर्वमुवाच कलिमाश्रित ॥४१॥
अस्मिन्नुत्तरभागे तु मयानुक्त च यद्भवेत् ॥ तत्सर्वं गर्गहोरायां मैत्रेय त्व विलोकय ॥४२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दायप्रकरण नाम षोडशोऽध्याय ॥१६॥

यह आयुर्दाय के भेद बल की न्यूनाधिकता से तथा मित्रादि भेद एव स्थान बल के तारतम्य से इष्ट, कष्ट, बल योग से एव रश्मि के निमित्त से कहे गये हैं॥४०॥ कलियुग के प्रारभ मे गर्ग मुनि ने अपने शिष्यो को कहा था। जो इस विषय मे हमने नही कहा है वह गर्ग होरा मे देख लेना॥४१॥४२॥

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उ० ग० भावप्रका० आयुर्दायप्रकरणे
षोडशोऽध्याय ॥१६॥

अथ कलांशादि फलमाह

भाग्य कर्म च वक्ष्यामि मैत्रेय शृणु सुव्रत ॥ भाग्यादेव नृणा सिद्धिर्भाग्यदेव धनागमौ ॥१॥
यशांसि भाग्यतो भाग्यविपर्यासाद्विपर्यय ॥ करिष्यमाणकर्माणि ज्ञातव्यानि प्रयत्नत ॥२॥
लग्नादिन्दोश्च नवम भाग्य बलवशाद्भवेत् ॥ शुभपापारिमित्राद्यैर्ग्रहैरेव शुभाशुभे ॥३॥
उच्चादिफलवशाद्वृद्धिरन्यस्माद्धानिरिष्यते ॥स्वस्मिन्नन्यत्र विषये स्वदेशेतरदेशयो ॥४॥

कलांशादि फल

हे मैत्रेय! ऐश्वर्य तथा शुभाशुभ व्यापार का साधन धन, तथा यशप्राप्ति यह सब भाग्योदय से होती है अत भाग्योदय का लक्षण कहा जाता है॥१॥२॥ लग्न तथा चन्द्रमा से नवम भाव, भाग्य का स्थान है। इसमे बलाबल के अनुसार भाग्य की वृद्धि या हानि का विचार करना। उच्च स्वगृही, मित्र क्षेत्री अतिमित्रक्षेत्री मूलत्रिकोणी होकर जो ग्रह भाग्यभाव मे स्थित हो तो भाग्य की वृद्धि होती है। नीच शत्रुक्षेत्री अतिशत्रुक्षेत्री तथा समराशि मे होकर भाग्यस्थान मे हो तो भाग्य की हानि करता है। भाग्येश स्ववर्ग मे हो तो स्वदेश मे एव परवर्ग मे हो तो परदेश मे भाग्योदय होता है॥३॥४॥

स्वेष्वन्येषु तु वर्गेषु ज्योतिर्विद्भाग्यपे स्थिते ॥ भवांशे राशिनिष्पाद्या कलांशा सप्रकीर्तित ॥५॥ अष्टादशार्धभांशास्तु कलांश इति कीर्तित ॥ तत्पस एव तत्पत्या कर्मेश पतय स्मृता ॥६॥ भाग्यत्रिकोणोपगते शुभ स्याद्भाग्य तु केन्द्रोपगते शुभश्च ॥७॥ पापैस्तथा स्यादशुभ च भाग्य मित्रादिभि स्यात्क्रियमो विशिष्टान् ॥८॥ एव भाग्यविपर्यासौ भावाना च यदंशपा ॥

भावग्रहांतरकला द्विशत्याप्ता समादय ॥९॥ द्विघ्नाद्विघ्ना करघ्नाश्च षष्टयाप्ताश्च समादय ॥ अयेष्टादिफलघ्न च समयो भाग्यभावयो ॥१०॥

सप्ताश षोडशाश, षष्ट्यश–राशि, अश की कला करके ७ का भाग देना, लब्ध सप्तमाश, १८ १२ का भाग षोडशाश तथा ६० का भाग षष्ट्यश कहाता है। अथवा राशिचक्र को २१ से भाग देना तो षोडशाश होता है॥५–७॥

लग्न तथा चन्द्रमा से जो नवम् स्थान हो उससे केन्द्र १।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) भाव मे शुभग्रह हो तो भाग्य उत्तम और पापग्रह हो तो अशुभ होता है। परन्तु यह विशेष है कि उपर्युक्त राशियो मे स्थित ग्रह स्वराशि मित्रराशि आदि के होने चाहिये। नीचादि होने से नेष्ट फल समझना चाहिये॥८॥

भाग्योदय वर्ष–भावस्पष्ट और ग्रहस्पष्ट राश्यादि का अन्तर करना। पश्चात् कला करके २०० का भाग देना। लब्ध वर्ष, मासादिक जानना, पश्चात् द्विगुणित करके दो जगह रखना। एक जगह् के अक को द्विगुण करके ६० का भाग देकर दूसरी जगह के अक मे कम करना। शेष रहे वह् भाग्योदय का वर्षादि समय होगा॥९॥१०॥

फलेन च वशाघ्नेन रश्मिना च हतास्तथा ॥११॥ भावाष्टवर्गोत्थसमाहितत्तद् ग्रहान्तरोत्थास्तु समादय स्यु तत्तद्ग्रहोत्थाब्दहतास्तथा स्युरेव तथा भाग्यफलानि तत्र ॥१२॥ स्थानानि नवम्वर्गाश्च तेषा भाग्यफल शृणु ॥ रव्यादीना क्रमाच्छृगचामरादेश्च विक्रये ॥ कृषिकर्मणि सेवाया पैशुन्ये लिपिकर्मणि ॥१३॥ धनार्जने व्यये व्याधौ गमनागमविक्रये ॥ विवादे प्रेतकार्ये च भ्रातृणा ,कलहे तथा॥१४॥ धनार्जने सुते दारग्रहणे लिपिकर्मणि ॥ उच्चादिस्थानवर्गेषु लाभवश्च रवि क्रमात् ॥१५॥

प्रकारान्तर–ग्रह, भाव के अन्तर को १० से गुणा करना। बाद उसी ग्रह की रश्मि से भाग देना। शेष वर्ष मासादि भाग्योदय का समय होता है॥११॥ इस प्रकार प्रत्येक भाव के फलप्राप्ति का ऊपर कही रीति से जानना और भाव के फल का विशेष निर्णय आगे कहे अनुसार नौ वर्ग से कहना॥१२॥
अब ग्रहो के उच्चादि वर्ग विस्तार से फलविशेष का निर्देश किया जाता है।

सूर्य का फल–सूर्य यदि उच्च, त्रिकोण, स्वगृही, मित्रराशि, अतिमित्रराशि अथवा इनके वर्ग मे हो तो निम्नलिखित वस्तुओ के व्यापार से लाभ होगा। शृग, चामर, कृषिकर्म, सेवा दुर्जनकर्म, लिपिकर्म, व्याज, वैद्यक वणिज, वकालत, प्रेतकार्य, भ्रातृकलह, पुत्र से विवाह आदि कार्य से लाभ होगा॥१३–१५॥

शस्त्रमाणिक्यमुक्तानां लाभे तत्क्रयविक्रये ॥ सुरते स्त्रीषु मैत्रे च राज पुरुषमित्रता ॥१६॥ धनाप्तिस्तया तत्र मैत्र च कृषिकर्मणि ॥ वस्त्रादिधनसिद्धिश्च ब्राह्मणेन विरोधता ॥१७॥ धननाशो भवेद्युद्धे पराजयपराभवौ ॥ कलाशाद्यर्धहोराशफलानिक्रमश स्थिते ॥१८॥ स्वर्णसिद्धिर्जयो वस्त्रलाभो मित्रसमागम ॥ विवादो भ्रातृभि शत्रुकर्म स्त्रीचचलाक्ष

।।१९।। स्त्रीलाभो दासलाभश्च कृत्स्नेहा च बलक्षयः ।। बलैर्धनायतिः स्वोच्चे क्षेत्राद्यैर्न्यायतो भवेत् ।।२०।। मूलत्रिकोणे क्षेत्रेण राज्ञो वाय धनायतिः ।। स्वर्क्षे वस्त्रं काचनादिसिद्धिश्चाय सुहृत्फलम् ।।२१।। धान्यायतिश्च मैत्री च क्रूर कर्मप्रवर्तनम् ।। कुष्ठ वाग्न्यग्निभीरेतिश्च गृहवाहोऽतिशत्रुभे ।।२२।।

चन्द्रमा उच्चादि राशि या वर्ग (उच्चादि) मे हो तो क्रम से भक्ष, मैथुन, स्त्रीमैत्री, राजपुरुष मित्रता, धननियोग, कृषिकर्म, वस्त्रव्यापार, द्विजविरोध, नीचकर्म से हानि, स्वदेश त्याग, धनहानि, बलहानि यह फल होता है। (यहा शस्त्र से तात्पर्य शस्त्रनिर्मित वस्तु और मणि मुक्तादि है।)।।१६–१८।।

यदि मगल उच्चादि राशि या वर्ग मे हो तो क्रमश सुवर्ण सिद्धि, जय, वस्त्रलाभ मित्रसमागम, बन्धुविवाद, शत्रुविक्षेप, वात्सल्य, स्त्रीलाभ, दासलाभ, इच्छापूर्ति, बलक्षय, बलप्रयोग से लाभ, यह फल जानना। यदि मगल भाग्य स्थान मे मूलत्रिकोणी हो तो राज से धनप्राप्ति, स्वराशि का भाग्यभाव मे हो तो वस्त्रादि की प्राप्ति, मित्रराशिगत हो तो अन्नादि की प्राप्ति, यदि अतिशत्रु राशिगत होकर भाग्यभाव मे हो तो क्रूर कर्म प्रवृत्ति, अग्निभय, कुष्ठ, सग्रहणी, गुल्म आदि रोग हो।।१९–२२।।

ग्रहणी गुल्मरोगश्च धननाशश्च तत्र तु ।। विद्यार्जने सुखे स्त्रीभिः कलहश्च धनायतिः ।।२३।। क्षेत्रदासादिलाभं न कृषिकृत्यं धनायतिः ।। विवादो बधुभिर्युद्धे जयश्चैवपराजयः ।।२४।। विद्याबुद्धिधनक्षेत्रयशांसि च फलंति च ।। राजस्तत्पुरुषेभ्यैव स्वर्णक्षेत्रायतिस्तथा ।।२५।। स्वर्क्षे धनायतिः प्रोक्ता लिपिना शिल्पकर्मणा ।। वस्त्रस्वर्णादिसिद्धिश्च राजस्त्रीभिर्धनायतिः ।।२६।। कायस्य कर्मणा त्यागो विद्यानाशः स्वकर्मणा ।। धननाशोऽश्मरी कुष्ठं कलांशादिफलं ततः ।।२७।। विवादाद्बधुभिर्लाभो देशपर्यटनाद्धनम् ।। क्षेत्रसिद्धिर्जयो विद्यालाभो धान्यविवर्धनम् ।।२८।।

बुध का फल कहा जाता है। यदि बुध भाग्यभाव मे उच्चराशि का हो तो विद्या तथा सुख प्राप्त हो। शत्रुराशि का हो तो स्त्रियो से कलह, मित्रराशि मे धन लाभ, भूमि आदि लाभ, कृषि से लाभ। नीचराशि का हो तो बधुविरोध, कलह, हानि, पराजय, आदि हो। यदि उच्चादिगत हो तो विद्या, बुद्धि, धन, यश, सुवर्ण, भूमि तथा राजपुरुष से लाभ हो। स्वराशि का हो तो लेखन, शिल्पकर्म, राजस्त्रीनियोग, वस्त्र, सुवर्ण आदि से लाभ। समराशि मे हो तो शारीरिक परिश्रम से, अति शत्रुक्षेत्री हो तो विद्याविस्मृति, व्यापारनाश, अश्मरी (पथरी) रोग, कुष्ठ आदि रोग हो। अपने षोडशांश मे हो तो बन्धुविद्रोह मे धनप्राप्ति, देशाटन से लाभ तथा भूमि, विद्या, धन, जय लाभ हो। खेती से लाभ, विद्याप्राप्ति के सुयोग की प्राप्ति हो।।२३–२८।।

कृषिकर्मसमुद्योगः सेवाकरणकौशलम् ।। विद्यार्जनमथ प्रोक्तं गुरोः श्रीमान् सुखी गुणी ।।२९।। बह्वायतिरमात्यत्वं सर्वसंपत्समन्वितः ।। धननाशः प्रमोहेण क्षेत्रनाशः पराभवः ।।३०।।

विद्यार्जनं तथा सेवाकरणं संपदस्तया ॥ पुत्रैर्धनायलिर्मित्रैः स्त्रीभिश्च कृतकर्मणा ॥३१॥ विवाहो धनलाभश्च क्रमादेवफलं वदेत् ॥ राज्ञा कृत्यकरं श्रीमान्पुत्रबंधुसमन्वितः ॥३२॥ सेनानायस्तथामात्यो विद्यार्जनपरो धनी ॥ पाठको याजकश्चाथ बहुस्त्रीकोऽतिशत्रुभे ॥३३॥ स्त्रीसक्तो निर्धनो मूर्खः पातकी भारको भवेत् ॥ सेनाधिकारी राज्ञश्च प्रियैर्बंधुभिरायतिः ॥३४॥ सेवावृत्त्या च कृष्या च विद्यया पूर्तकर्मणा ॥ सर्वसंपद्युतः श्रीमान् शुक्रस्यैव फलं लभेत् ॥३५॥

गुरु भाग्य स्थान मे हो तो धनी गुणी, सुखी, प्रधान, सर्वसंपत्तिमान् हो। शत्रुक्षेत्री हो तो धन, क्षेत्र नाश, पराजय हो। मित्रगृही हो तो विद्याप्राप्ति सेवक हो और अतिमित्र हो तो ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्रादि से लाभ, धनप्राप्ति, स्त्रीजाति से लाभ, विवाह आदि होता है॥२९॥३०॥३१॥

शुक्रफल–शुक्र उच्चादि स्थानगत भाग्यभाव मे हो तो राजसेवी, श्रीमान्, परिवार से सुखी, सेनापति, प्रधान, विद्यासेवी, धनी, अध्यापक, ऋत्विक्, अनेक स्त्रीभोगी होता है। अतिशत्रु राशि मे हो तो कामातुर, दरिद्री, बुद्धिहीन, पातकी, भारवाहक होता है। स्वक्षेत्री हो तो सेनाधिकारी, बन्धुओ से लाभ, सेवा से लाभ, कृषीकर्मी, विद्यासेवी, इष्टापूर्त, दत्त, वापी, कूप, तालाब आदि युक्त सर्वसम्पत्तिमान् होता है॥२९-३५॥

कुजोच्चादिफलं चार्के कलाशादिफलं भवेत् ॥ कलांशादिषु यत्प्रोक्तं कलांशादि फलं त्विषम् ॥३६॥ उच्चादिषु तथा प्रोक्तं फलमेव विचिंतयेत् ॥ स्वभाग्यर्क्षगतानृक्षान्न्यूनाश्चाप्यधिकास्तत ॥३७॥ स्वरश्मिभ्रान् ग्रहे युक्ते तद्रश्मिभ्यास्तयोत्तरम् ॥ त्रिभिर्विभज्य निःशेषे त्वोजराशौ नवांशके ॥३८॥ आदिमध्यावसाने स्याद्युग्मे तत्र नवांशके ॥ आदौ मध्येऽवसाने स्याद्युग्मे चौजे नवांशके ॥३९॥ मध्येऽवसाने चाद्ये च युग्मे मध्यांतिमादिमे ॥ आदौ मध्येऽवसाने स्यादेव वेद्द्राख्यलक्षणम् ॥४०॥ ओजराशौ नवांशे चेद्युग्मे मध्यांतिमादिमे ॥ युग्मे राशौ नवांशे चेदोजे मध्येऽन्तिमेऽपि वा॥४१॥प्रथमेऽपि वयस्येव युग्मे मध्येऽतिमादिमे। शेष द्वय चेदेकं स्यात्कालोव्यत्यासतो भवेत्॥४२॥ कलाभ्यां वाहृते तद्वच्चराशौ चरे च भे ॥ आदौ मध्येवसाने स्यात्स्थिरेंऽते मध्यमादिमे ॥४३॥

शनिग्रह का फल मंगल के समान जानना॥३६॥

पूर्वोक्त फल प्राप्ति समय ज्ञान–भाग्यभाव की नवमांश राशि को भाग्यभाव की रश्मि से गुणा करना, बाद भाग्यभाव स्थितग्रह रश्मि से गुणा करना, पश्चात् ३ का भाग देना, भाग देने पर शून्य शेष रहे तो नीचे लिखे अनुसार फल की अवधि जानना। भाग्यराशि विषम तथा नवांश राशि भी विषम हो तो चर, स्थिर, द्वि स्वभाव के अनुसार क्रम से आदि, मध्य अंत मे फल होता है। नवांश राशि सम हो और भावराशि विषम ही हो तो चरादि राश्यनुसार आदि, मध्य, अंत मे फल होता है। और भाग्यराशि सम हो तथा नवांश राशि विषम हो तो चरादि के अनुसार क्रमशः मध्य, अन्त, आदि मे फल होता है। नवांश राशि भी सम हो तो चरादि के अनुसार मध्य, अन्त, आदि या आदि, मध्य, अन्त मे फल होता है। अथवा विषम

राशि नवांश सम हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है और सम राशि में विषम नवांश हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल होता है। कुमार या युवावस्था में भी इसी प्रकार दोनों युग्म राशि हो तो मध्य, अन्त, आदि में फल जानना। यदि ३ के भाग देने पर १ या २ शेष रहे तो पूर्वोक्त समय विपरीत जानना।।३७–४३।।

उभये मध्यमे ऽन्ते च आदावेव प्रकीर्तिता ।। भावाना चैव सर्वेषा चद्वलप्राप्तु लग्नत ।।४४।। अंशदायोक्तवत्कृत्वा शुभपापदृगाहतम् ।। षष्टयाप्त तद्वलाप्त स्याद्भात्रादीना च सख्यका ।।४५।। रश्मिघ्न च बलाप्त च त्वनिष्टमपवादगम् ।।४६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे कलांशादिफले सप्तदशोऽध्याय ।।१७।।

बारहों भावों का विचार जन्म लग्न से तथा चन्द्र लग्न से इस रीति से करना कि प्रथम पूर्वोक्त रीति के अनुसार अंशायुर्दाय की गणित करके दो स्थान में रखना। एक जगह शुभ दृष्टि योग से दूसरी जगह पापदृष्टि योग से गुणा करना और ६० का भाग देना तथा इसी प्रकार भाव बल से गुणा कर ६० का भाग देना। शेष रहे वह भावबलकी संख्या समझना। अथवा रश्मि योग से गुणा कर भावबल से भाग देना। शेष शुभाशुभ फल जानना। ।।४४-४६।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे भावप्रकाशिकाया सप्तदशोऽध्याय ।।१७।।

अथ अब्दवर्णनाह

नाडीद्वय मुहूर्त स्यात्द्विनाडीद्वयमेव च ।। रवेरुदयतो मेषात्क्रमात्सर्वजित स्मृत ।।१।। आर्द्रा श्लेषानुराधाश्च मघाश्चाथ धनिष्ठिका ।। उत्तराषाढसज्ञश्च सर्वजिद्रोहिणी तथा ।।२।। विशाखा च ततो ज्येष्ठा मूल च शततारकम् ।। भरणीपूर्वफाल्गुन्यौ विश्वजिच्च ततो भवेत् ।।३।। उत्तराप्रोष्ठपाच्चैव रेवती च तत परम् ।। अभिजिच्चोत्तरा चाथ कृत्तिका रोहिणी तत ।।४।। मूल च रोहिणी चाथ मृगशीर्षं च हस्तकम् ।। पुष्यश्च श्रवणो हस्तचित्रे स्वाति क्रमात्स्मृता ।।५।।

अब्दवर्णन

मुहूर्त लक्षण २ घडी का एक मुहूर्त होता है। पूरे दिन के १५ मुहूर्त। इसी प्रकार पूरी रात्रि के १५ मुहूर्त होते हैं। दिनमान तथा रात्रिमान के न्यूनाधिक होने से मुहूर्त काल की २ घडी में भी न्यूनाधिकता होती है। सूर्य जिस राशि का होता है प्रात काल वही लग्न होता है। बाद अपने २ क्रम से दूसरे दिन के प्रात काल तक १२ लग्न भुक्त होते हैं। दिन रात्रि के ३० मुहूर्त हैं उनमें दिन के १५ मुहूर्तों के नाम क्रम से—आर्द्रा १ आश्लेषा २, अनुराधा ३, मघा ४, धनिष्ठा ५, उत्तराषाढा ६, सर्वजित् या अभिजित् ७, रोहिणी ८, विशाखा ९ ज्येष्ठा १०, मूल ११, शतभिषा १२, भरणी १३, पूर्वाफाल्गुनी १४, अभिजित् १५। ये दिन के मुहूर्त हैं। **रात्रिके मुहूर्त—उत्तरा भाद्रपद** १, रेवती २ अभिजित् ३, उत्तरा ४, कृत्तिका ५, रोहिणी ६ मूल ७ रोहिणी ८, मृगसिर ९, हस्त १०, पुष्य ११, श्रवण १२, हस्त १३, चित्रा १४, स्वाती १५।।१ से ५ तक।।

नाडीद्वयमुहूर्तानां संज्ञा एताः क्रमादिह ॥ सर्वजिद्भरणीहस्तविश्वजिद्रोहिणी तथा ॥६॥ दस्रश्च मृगशीर्षश्च शर्व पुष्योऽथ रुद्रभम् ॥ उत्तरा विश्वजिच्छ्रोणी चित्रा पुष्यश्च वायुभम् ॥७॥ अभिजिद्वसुभं पौष्णं कृत्तिका च पुनर्वसु ॥ पूर्वोत्तरप्रोष्ठपदौ शततारा च विश्वभम् ॥८॥ ज्येष्ठा सूर्यं च मूलं च भाग्यश्च क्रमशः स्मृता ॥ ज्येष्ठा चाथ विशाखा च मूलं च शततारका ॥९॥ नामानि च मुहूर्तानां विनाडीद्वयरूपिणाम् ॥ आवृत्या षष्टि ता प्रोक्ता कालांशा नाडिरूपिणः ॥१०॥

द्विनाडी मुहूर्त–दिन-रात के ३२ मुहूर्त होते है। भरणी १ हस्त २, विश्वजित् पूर्वाषाढा ३, रोहिणी ४, दस्र अश्विनी ५ मृगशीर्ष ६ (शर्व) आर्द्रा ७ पुष्य ८, (रुद्रभम), आर्द्रा ९, उत्तरा १०, (विश्वजित्) पूर्वाषाढा ११ (श्रोणी) श्रवण १२ चित्रा १३, पुष्य १४, (वायु) स्वाती १५, अभिजित् १६, (वसु) धनिष्ठा १७ (पौष्ण) रेवती १८, कृत्तिका १९, पुनर्वसु २०, (पूर्वप्रोष्ठपत्) पूर्वाभाद्रपद २१, (उत्तराप्रोष्ठपत्) उत्तरभाद्रपद २२, शततारका २३, (विश्वभ), स्वाती २४, ज्येष्ठा २५ (सूर्य) हस्त २६ मूल २७ (भाग्य) पूर्वा फाल्गुनी २८, ज्येष्ठा २९, विशाखा ३० मूल ३१ शततारका ३२ ये द्विनाडी मुहूर्त कहे गये॥६॥७॥८॥९॥

१ एक नाडी मुहूर्त–प्रथम जो दिन रात के ३० मुहूर्त कहे गये है उन्ही की २ आवृत्ति करने से १ १ घटी का १-१ मुहूर्त होता है। इसी का दूसरा नाम कला मुहूर्त भी है॥१०॥

नक्षत्रसंज्ञया प्रोक्ता षष्ठ्यावृत्त्या कलांशका ॥ मेषो यमो वृषकुम्भौ झषो युकश्च कर्कटः ॥११॥ सिंहोऽथ वृश्चिकश्चापो मृगः कन्या क्रमाद्भवेत् ॥ राशिचक्रकलांशो तु क्रमादेव प्रकीर्तिता ॥१२॥ मेषो गोर्यमकर्कौ च सिंहकन्यातुलालयः ॥ धनुर्मृगघटोमीनमुदयाद्-घटिकासु च ॥१३॥

१ कलांश मुहूर्त–जो प्रथम ३२ मुहूर्त कहे हैं उन्ही की द्वितीयावृत्ति करने से ६४ मुहूर्त नक्षत्र के ६४ भाग करके १-१ भाग का १ १ मुहूर्त जानना।

१ राशिचक्र कलांश मुहूर्त–सूर्योदय से ५-५ घटी पर १-१ राशि का मुहूर्त समझना। मेष १, मिथुन २। वृष ३, कुम्भ ४, मीन ५, तुला ६, कर्क ७, सिंह ८, वृश्चिक ९, धनु १०, मकर ११, कन्या १२, इस क्रम से राशि कलांश मुहूर्त होते हैं॥११॥१२॥

१ नित्योदय लग्नक्रम-मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन ये बारह राशियां अपने २ स्थान के पलात्मक भोग के अनुसार (पूर्वखण्ड में कहा गया है) नित्य उदय होती है॥१३॥

सिंहान्मेषाच्च चापाच्च नक्षत्रक्रम ईरितः ॥ चन्द्रसशुक्रधूमार्कपरिवेषारकार्मुकाः ॥१४॥ गुरुः पातः शनिः केतुर्ग्रहाः स्युर्द्वादशक्रमात् ॥ चक्रलिप्ताशके चैव केन्द्रादिस्तारकाशके ॥१५॥

कल्पनिक नक्षत्रक्रम प्रश्नकाल में इष्ट घटी संख्या तक ग्रह क्रम ग्रहण करना और जो ग्रह आवे उसके अनुसार फल जानना। यदि इष्ट पर आया हुआ लग्न सिंहादि ४ राशियों में हो तो

मघा से आश्लेषा तक और धन राशि से ४ राशि मे हो तो मूल से ज्येष्ठा तक गणना करन मेषादि ४ राशि मे लग्न हो तो अश्विनी से रेवती तक ग्रहण करना। इन नक्षत्रा म क्रम चन्द्रमा बुध, शुक्र,धूम, सूर्य, परिवेष, मगल कार्मुक गुरु पात, शनि, केतु ये १२ ग्रह (ग्रह त अप्रकाश ग्रह) बारह राशियो मे अर्थात् सिहादि, धनुरादि, मेषादि क्रम गणना मे जो रा (काल्पनिक) प्राप्त हुई है उसमे जानना। यदि मेषादि लग्न हो तो केतु से विपरीत क्रम गणना करना। और अन्य मे क्रम गणना सूर्य से करना। जो ग्रह प्राप्त हो उसके अनुस शुभाशुभ फल जानना।। श्लोक १४ से १५ तक।।

अर्कादिधूमपर्यंता क्रमात्स्युर्घटिकाशके ॥ सत्र्यशा घटिकास्तिस्रो मेषान्तिमियोर्द्विज ॥१६
चतस्र कुम्भवृषयोस्तथा मकरयुग्मयो ॥ त्रिभ्यशा पच सत्र्यशास्ता कर्किधनुषो स्मृता ॥१७
सिहवृश्चिकयो षट् च अशोना सप्त शेषयो ॥ नित्य मानमिद प्रोक्त मेषादुदयराशिजम् ॥१८
रव्याक्रातात्तथा प्रोक्ता एकद्वित्रिचतुर्घटी ॥ मानानि मेषत सिहाच्चापादर्कोदयात्तत ॥१९
वशवर्गाधिपाश्चैत्या प्रोक्ताश्चेदुनवाशका ॥ अन्यत्र कीर्तिता प्रश्ने नष्टद्रव्यविनिश्चये ॥२०

नित्य लग्न का परिमाण मेष और मीन का ३ घटी २० पल। वृष कुम्भ का ४ घटी०पल मिथुन मकर का ४।४० कर्क धन का ५।० सिह वृश्चिक का ६।० कन्या-तुला क ६।४०॥१६॥१७॥१८॥

प्रकारान्तर उदय लग्न से मेष वृष मिथुन कर्क इन ४ राशियो मे १ २ ३ ४ घटी क्रम काल प्रमाण जानना। इसी प्रकार आगे भी सिह से ४ राशि तथा धन से ४ राशिया १ २ ३ ४ घटी रूप काल प्रमाण जानना। नष्ट द्रव्य के प्रश्न म इसका तथा दश वर्ग और च नवाश का प्रयोजन है॥१९॥२०॥

श्रीमान् रिक्तश्च मूर्खश्च कुशलो यवन पटु ॥ स्त्रीसक्तो वेदविद्वीरो मदाग्निस्तीव्ररोषण ॥२१॥
शूलरोगी च पिशुन सदाऽटनपरोऽशुचि ॥ सेवाकर सुभाषी च धनवाल्लोभसयुत ॥२२॥
प्रख्यातो विद्यया भीरुर्बुद्धिश्रीमान्सुशीलक ॥ परदाररत श्रीमान्सुशीलो बलवान्गुणी ॥२३॥
अध्वन्मो निगमव्यग्र पातकी च तपोयुत ॥ परदाररतो वेश्यासक्तोऽसत्फलबासन ॥२४॥
सिहासनस्थो रिक्तश्च जटिल कुलपासन ॥ योगी बुद्धश्च सन्यासी सेनानीर्बुद्धिमान्सुखी ॥२५॥
कुष्ठीभूतकर श्रीमानेकपुत्रसमन्वित ॥ शास्त्रज्ञो दासकृत्यश्च षडरोषसमन्वित ॥२६॥ स्त्री
सक्त परदारोक्तो भृत्य पटुररोगवान् ॥ कुरूपश्चापि कुशलो जितारि पुत्रवर्जित ॥२७॥ शूरो
वीरश्च चडश्च कुशल कुक्षिरोगवान् ॥ ग्रामणीर्विटपो धूर्त सतीपतिररिदम ॥२८॥
वध्यापति सुरापी च रिक्तसाध्यपति सुखी ॥ विजयी युद्धभीरुश्च चौरोऽमर्षी धनार्जन
॥२९॥ धनार्जनाय सततमकृत्यशतकारक ॥ वृषलीपतिरिन्द्रश्च सेनानी सत्यवाक्शुचि
॥३०॥ शिरोरोगी च कुष्ठी च मेही च पिशुन सुखी ॥ जलवद्रोगसयुक्त कृतज्ञो निर्घृणो घृणी
॥३१॥ विषादशील सुपुत्र क्रोधन कामुक पटु ॥ चलचित्तो धनी वाग्मी विद्यार्जनपर
सुखी ॥३२॥ अपुत्र कृपिकृद्वीर परदाररत शुचि ॥ विद्याहीनश्च मूर्खश्च बुद्धिमान्दारत्रपार
॥ ॥३३॥ सदाभीरुर्जडो वाग्मी कृत्येषु कुशल सुखी ॥ नीतिज्ञो लेखको नीचजातिषूत्परत

पटु ॥३४॥ प्रेष्यो गोमयविक्रेता वदान्यो धनवचक ॥ सेनानी क्षेत्रवान्वीरो लेखवृत्त्या च जीवति ॥३५॥ मूर्खो जितेंद्रियो वाग्मी सदा कृत्यपर सुखी ॥ अन्नदाता च मिष्टाशी शिवभक्तो जितेंद्रिय ॥३६॥ कुब्जो वक्रशरीरश्च जातयो बधिर शठ ॥ अमर्षी नर्तक क्रुद्धो दुर्जनो वेदपारग ॥३७॥ वक्ता च गायक श्रीमान् सर्वदा च धनार्जक तालज्ञो विद्यया युक्त पचपचाशदुत्तरम् ॥३८॥ शत गुणाश्च श्रीयोगा एकयोगावसानकम् ॥ पूर्वपूर्वयुता ओजे युग्मे राशौ तु वामत ॥३९॥ चरे क्रम स्थिरे वाममुभयोर्धपदादित ॥ आदौ त्रिंशद्गुणा अते वामतस्त्रिंशदेव हि ॥४०॥

अब १५५ योग कहे जाते है। इनका फल नामानुरूप ही हैं। श्रीमान् १। रिक्त २। मूर्ख ३। कुशल ४। वचन ५। पटु ६। स्त्रीसक्त ७। वेदविद् ८। धीर ९। मदाग्नि १०। क्रोधी ११। अतिक्रोधी ११। मूलरोगी १२। पिशुन १३। भ्रमणशील १४। शुचि १५। दास १६। सुभाषी १७ धनी १८। लोभी १९। विद्वान् २०। भीरु २१। बुद्धिधन २२। सुशील २३। पारदागामी २४। श्रीमान् २५। सुशील २६। बलवान् २७, गुणी २८। भ्रमणशील २९। वेदाभ्यासी ३०। पात की ३१। तपस्वी ३२। परदारगामी ३३। वेश्यागामी ३४। मनमोदकी ३५। पदाधिकारी ३६। निरुद्योगी ३७। जटाधारी ३८। नीच ३९। योगी ४०। प्रबुद्ध ४१। सन्यासी ४२। सेनापति ४३। बुद्ध ४४। सुखी ४५। कोढी ४६, सेवडा ४७। धनी ४८। एक पुत्रवाला ४९। शास्त्रज्ञ ५०। दास ५१। महाक्रोधी ५२। कामी ५३। परस्त्रीसक्त ५४। नौकर ५५। चतुर ५६। नीरोगी ५७। कुरूप ५८। कुशल ५९। जितशत्रु ६०। पुत्ररहित ६१। शूर ६२। वीर ६३। अतिकोपी ६४। कुशल ६५। जठररोगी ६६। ग्रामणी ६७। स्त्रैण ६८। धूर्त ६९। सतीपति ७०। शत्रुहर्ता ७१। वन्ध्यापति ७२। मुरायी ७३। कुलटारत ७४। सुखी ७५। विजयी ७६। युद्धभीरु ७७। चोर ७८। क्रोधी ७९। उपार्जनरत ८०। पाप उपार्जन रत ८१। शूद्रस्त्रीसेवी ८२। इन्द्र ८३। सेनानी ८४। सत्यवादी ८५। शुचि ८६। शिरोरोगी ८७। कुष्ठी ८८। प्रमेही ८९ चुगलखोर ९०। सुखी ९१। जलोदरी ९२। कृतघ्न ९३। निर्दय ९४। घृणी ९५। झगडालू ९६। मुमुक्षु ९७। क्रोधी ९८। कामी ९९। कुशल १००। चचल १०१। धनी २। वक्ता ३। विद्यासेवी ४। सुखी ५। अपुत्र ६। खेतीहर ७। परदारत ८। शुचि ९। विद्याहीन ११०॥ मूर्ख ११। बुद्धिमान् १२। शास्त्रज्ञ १३। सदाभीरु १४। मूर्ख १५। वाग्मी १६। कार्यपुट १७। सुखी १८। नीति चतुर १९ लेखक १२०। नीच कार्यरत २१। चतुर २२। दूत २३। गोमयविक्रेता २४। दानी २५। वचक २६। सेनानी २७। क्षेत्रवान् २८। वीर २९। लेखक १३०। मूर्ख ३१। जितेन्द्रिय ३२। वाग्मी ३३। उद्योगी ३४। सुखी ३५। अन्नदाता ३६। मिष्टभाषी ३७। शिवभक्त ३८। जितेन्द्रिय ३९। कुबडा १४०। कुब्ज ४१। क्रोधी ४२। बधिर ४३। धूर्त ४४। क्रोधी ४५। नट ४६। सदाक्रोधी ४७। दुष्ट ४८। वेदपारगामी ४९। व्याख्याता १५०। गायक ५१। श्रीमान् ५२। सर्वजनप्रेमी ५३। तालज्ञ ५४। विद्वान् १५५। ये १५५ श्रीयोग नाम के योग है। विषमराशि के नवांश मे क्रम से, समराशि क नवांशमे विपरीत क्रमसे जानना। चर राशि मे क्रम से, स्थिर राशि मे विपरीत क्रम मे द्विस्वभाव राशि मे अर्द्धभाग मे गणना करनी चाहिए। श्लोक २१ से ४० तक॥

षष्ट्यंशे तु गुणा प्रोक्ता प्राग्वल्लोकवरादिका ॥ मेषादुत्क्रमते राहु केतुर्याति वृषात्क्रमा

॥४१॥ ऋक्षसंध्यंतरे जातः प्रष्टाऽसौ म्रियते भृशम् ॥ केतुराहुस्थिते राशौ भसंधौ मरणं भवेत्॥४२॥इतरेषां त्रयाणां च प्रकाशे व्याधिपीडितः॥दुर्बलो बुद्धिहीनश्च जायते न मृतो यदि॥४३॥कलाशराशितोऽरिष्टे नक्षत्रारिष्टसंभवे॥पित्रादीनां सुतस्यापि तद्दशाच्चिंतयेत्सुधीः ॥४४॥ पापशत्रुग्रहाक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ॥ सौम्यपापादयश्चैवं शुभाशुभफलप्रदाः॥४५॥ एकद्वित्रिचतुः पंचषट्सप्ताष्टाकदिग्धराः ॥ सूर्येन्दुनृपमूर्च्छेन्द्रनृपभार्कनृपा जिनाः ॥४६॥ पंचाष्टवसुभूतेषु सुरदंताजिनादयः ॥ नखास्त्रिंशत्खवेदाः षट्सप्ततिः षष्टिरद्रियुक् ॥४७॥ नवतिश्च शत मूर्च्छाजिना दंता जिना दिशः ॥एव नवशत प्रोक्ताः क्रमादेवं तु तत्र तु ॥४८॥ पूर्वपूर्वयुता संख्या लक्ष्मीयोगफलप्रदा॥ नक्षत्रे राशिचक्रे तु दिवसे वामतः स्मृता ॥४९॥

(प्रश्नकालिक कल्पित राहु केतु की गति)

राहु मेष से विपरीत क्रम से तथा केतु वृष से क्रम से चलता है।॥४१॥ राहु केतु का प्रश्नकाल के लग्न में योग हो तो प्रश्नकर्ता का मरण जानना। धूम, कार्मुक, परिवेष का भी यही फल जानना॥४२॥४३॥

पिता भ्राता आदि का शुभाशुभ विचार कहा जाता है-

षोडशांश से या नक्षत्र (पूर्वकथित) से अथवा भावग्रह सम्बन्ध से नीचे लिखी सख्या के योग मे शुभग्रह सम्बन्ध से शुभ और अशुभग्रह सम्बन्ध से अशुभ फल समझना चाहिए। योग सख्या ये हैं। १,२,३,४,५,६,७,८,९,१०,१,१२, १,१६,२१,१४,१६,२७, १२,१६,२४,५,८, ८,५,५,५,३२,२४,७,२०,३०,४०,७६,६७,९०,१००,२१,२४,३२,२४,१० इन योगो पूर्वापर विचार से शुभाशुभ का निर्णय करना॥४४–४९॥

शुभमित्रग्रहाक्रांता भावास्तद्दृष्टिसंयुताः ॥ द्वित्रिपंच च षट् सप्त वसुनंदविशोऽद्रयः ॥५०॥ त्रिशाद्दिशो नखाः षष्टिसूर्यमूर्च्छाजिनाजिना ॥ आकृतिर्भानिभार्काग्निनखाङ्छव. शत नखाः ॥५१॥ त्रिंशत्खवेदा दिग्विश्वे शतं षष्टिः शत जिना. ॥ वेदाः खवेदाः पूर्वार्द्धे परार्धे प्रागवत्र तु ॥५२॥

तथा ये योग भी विचारणीय है, २,३,५,६,७,८,९,१०,७,३०,१०,२०,६०,१२,२१,२४, २४,२१,२७,१२, ३,२०,२६,१००,२०,३०,४०,१०,१३,१००,६०,१००,२४,४,४० राशि के पूर्वार्द्ध मे क्रम से, और परार्द्ध मे उत्क्रम से यदि उपर्युक्त योगसख्या प्राप्त हो तो अशुभ है॥५० से ५२ तक॥

एते योगबलाच्चैव केवल दुर्गतिप्रदाः ॥ दिनर्क्ष चक्रसख्याः स्युरादिमध्यावसानिकाः ॥५३॥ सप्तविंशतिसप्तत्यां शते षष्ट्या शतद्वये ॥५४॥ कुब्जः कलाश मूकस्तु शतद्वयशतत्रये ॥५५॥ संहस्रे द्विशते जातः पंचमे पापसयुते ॥द्वित्रिपचाष्टदिग्विश्वनृपतिधृतिभूमय. ॥५६॥ नवदिग्वसुरैस्तानैस्त्रियिविश्वाष्टकैःक्रमात् ॥गुणेन वामतः प्रोक्तो लक्ष्म्यरो योगसमन्वितः ॥५७॥

दिन की मूहुर्त सख्या, नक्षत्र सख्या तथा राशिसख्या के योग से निम्नलिखित योग सख्या प्रप्त हो तो कुब्ज कुबडा होगा। योग सख्या ये हैं -२७,७०,१००,६०,२००,६,५०,२०,१६,

८०,६०,२०,१००,६०,२००॥ ये सख्या कुब्ज की और २००,३००,१०००,२०० ये सख्या तथा पचमभाव पर पापदृष्टि हो तो मूक हो। और २,३,५,८,१०,१३,१६,१८,१,९,१०,२७, ३३,४९,१५,१३,८ ये सख्या हो तो धनी हो॥५३-५७॥

**रविचद्रतम पातकालेष्वरिभवेषु च ॥ पचाशीतिशते वेदे मनौ द्वित्रिशते पुन ॥५८॥
साब्धिपचसु दिग्भागे सहस्रे चाक्षिचद्रगे ॥ खखानि रूप विश्वाष्टत्रिचद्रखखभूमिपे ॥५९॥
शताधिके च जातोस्मिन्बधिर षष्टिसयुते ॥ कर्किवृश्चिकमीनाशे तद्राशीशाशके तथा ॥६०॥
पातकेन्वोश्च शत्रुक्षगतयोरशके पुन ॥ एकादित्रिशतैर्यावत्क्रमात्तास्तु सुभाजिता ॥६१॥
आकाशपूर्णभूतयो नि शेष लब्धसख्यके ॥ सदोषेऽनसराशे तु जातस्तैतेऽपमृत्यव ॥६२॥**

सूर्य, चन्द्र, राहु काल पात मे ६,११ ८५,१००, ४ १४,२,३,१००,४०,५,१०,१०००,३०, १००,१३,८,३,१, इन योगो मे बधिर हो॥५८॥५९॥

कर्क, वृश्चिक, मीन के च० म० गु० स्वामी है, अत च० म० गु० की राशि मेष, कर्क वृश्चिक, धन मीन इन राशियो मे तथा पात मे एव शत्रुराशि के अश मे तीन सौ तक के अको से १८०० मे भाग देना, जब तक नि शेष न हो तब तक भाग देना। लब्ध अक तुल्य अश यदि पापग्रह युक्त हो तो अपमृत्यु जानना॥६०॥६१॥६२ ॥

**पचाशत पञ्चावृत्त्या स्वल्पमध्यचिरायुष ॥ क्रमेणोत्क्रमशस्ते तु त्रैराशिकविधानत ॥६३॥
खाश्व्यग्रयस्तु षष्ट्यशास्त्रिशाशा खरसाग्रय ॥६४॥ अष्टषड्भूमय कालहोरा सप्तांशेषु च ॥
वेदेशा द्वादशाशा स्युर्नवाशा गजखेन्दव ॥६५॥ सप्ताशा वेदनागास्तु द्रेष्काणास्तु षडग्नय ॥
अर्द्धहोरा जिना प्रोक्ता नक्षत्राणि च राशय ॥६६॥ भुजते च ग्रहाश्चैव मनुसख्याश्च भुजते ॥
राशयश्च ग्रहाश्चैव नक्षत्राणि च भुजते । रव्यादिशिखिपर्यंतानथ धूमेन्द्रकार्मुको ॥पातश्चपरिवेषश्च
कालश्चेति चतुर्दश ॥६८॥**

पचास की सख्या से ६ बार आवृत्ति करना। प्रथमावृत्ति मे अल्प मध्य, दीर्घ और बाद २ आवृत्ति मे दीर्घ, मध्य, अल्प अथवा प्रथमावृत्ति मे अल्पायु द्वितीयावृत्ति मे मध्यायु एव तृतीयावृत्ति मे दीर्घायु बाद दीर्घ मध्य अल्प क्रम से आयु का निर्णय करना॥६३॥
चौदह ग्रहों के तथा नवग्रहो के अश कहते है -

षष्ठ्यश को १२ राशि सख्या से गुणा करने से ७२० होते हैं। इसी प्रकार त्रिशाश के ३६०, कालहोरा के १६८, द्वादशाश के १४४, नवाश के १०८, सप्ताश के ८४, द्रेष्काणके ३६, होरा के २४, यह क्रम से नक्षत्र, राशि सू० १ च० २ म० ३ बु० ४ बृ० ५ शु० ६ श० ७ रा० ८ के० ९ धूम १० इन्द्रचाप ११ पात १२ परिवेष १३ काल १४ इनके अशो मे पूर्वोक्त फल जानना॥६४॥६५॥६६॥६७॥६८॥

तेषां प्रादुर्भवे चैवमन्यदा तु नवग्रहा॥दिवात्यच मगात् षट् च पचार्द्धाद्द्वादशादपि ॥६९॥ सूर्यात्सप्त क्रमात्प्रोक्तास्तत्तदशेषु सर्वदा ॥ अक्षिणो पचदश च नखास्तत्त्व तथामरा ॥७०॥ सप्तशाश्च षडशीनाश्चत्वारिंशत्क्रमादय ॥ शत खेष्विदय प्रोक्ता विनाडीतनवोऽपि च ॥७१॥

अब नक्षत्रो से सख्या कहते है, अश्विनी से ५ पूर्वा से ६ आर्द्रा से ५ शतभिषा से ४ अनुराधा से ७ इस क्रम से तारासख्या जानना। कलाश सख्या २,१५,२०,२५,३३,३३,३३,४०,१००, १५०, यह भाग काल के ध्रुवाक है॥६९॥७०॥७१॥

कलाशाद्यर्धहोराशभोग्यकाल· प्रकीर्तित ॥ प्रमाणराशयश्चैते भागहारा कलात्मका· ॥७२॥
तत्तदशकला इच्छाराशयो गुणराशय· ॥ कटुको मधुरस्तिक्त कषायो लवणाम्लकौ ॥७३॥ कलाशे
क्रमशो गण्या षष्ट्यशे व्युत्क्रमात्स्मृता॥ ॥ त्रिशाशे तु कषायादि कालहोराशके पुन ॥७४॥
तिक्तादि द्वादशाशेषु मधुरादि नवाशके ॥ अम्लादि मुनिभागे तु द्रेष्काणे मधुरादित ॥७५॥

अब इन अशो मे उत्पन्न जातक का फल कहते है -

क्रम से-कटुक, मिष्ट, तिक्त कषाय, लवण, अम्ल ये क्रम से रस कहे है। त्रिशाश मे कषाय से तिक्त तक गणना करना, कालहोरा मे तिक्त से, द्वादशाश मे मधुर से नवाश मे अम्ल से सप्ताश, होरा तथा द्रेष्काणमे मधुर से गणना करना। फल जातककी प्राप्ति रससे रुचि का ज्ञान॥७२ से ७५ तक॥

अर्धहोराशके तद्वज्जातस्यैव्वेव जायते ॥ वेदाष्टदशभैरामै· प्रषष्ट्यशे च भास्करे ॥७६॥
त्रिपद्मयत्रिशाकाब्धिजिनदत्तसुरा क्रमात्॥ नवदिग्भैर्जिनार्कैश्च सूर्यैस्ताभैस्त्रिपचभि· ॥७७॥
पचाशद्भि क्रमाद्गुण्या वध्यावध्या प्रकीर्तिता ॥ त्रिवेदाद्यकविभेद्रनखच्छदोजिना यमा ॥७८॥
पचाशच्च शत पूर्वयुता मृतसुता स्मृता ॥ पुत्राणा तु कलाशे तु शेषे जाता मृता द्विज ॥७९॥ द्वादशे
च चतुर्विंशे चतुस्त्रिशे सुराशके ॥ द्विसप्ताशे नवाशाशे षष्टयुत्तरशताशके ॥८०॥ षट्शते च सहस्रे
च खखाहींद्वयाके पुन ॥ खाशातिथ्यशके जातो भवेत्प्रव्रजितो नर ॥८१॥

षष्ठ्यश सजात कन्या का वन्ध्यायोग ४ ८ १२ २७ ३ इन अशो मे सूर्य हो तो वन्ध्या जानना। तथा ३।६।९।३।०।१२।१४।२४।३२।३३ इनमे क्रमश ९।१०।२७।२४।१२।१२।४९।३।५।५० इन षष्ठ्यश मे उत्पन्न कन्या वन्दनीया होती है॥७६॥७७॥ तथा ३।४।७।९।१३।१४।२०।२६।२४।२।५०।१०० इन अको मे पूर्वोक्त सख्या योग प्राप्त सूर्य मे मृतवत्सा जानना॥७८॥

मृत पुत्रज्ञान के लिए-षोडशाश मे इन अशो पर सूर्य मे विचार करना॥७९॥

सन्यासयोग-१२।२४।३३।७२।९।१६०।६००।१०००।१८००।१५।१० इन सख्या तुल्य अशो मे जन्म हो तो सन्यासी होता है॥८०॥८१॥

गुरुशुक्रोदये राशौ तयो· परमहसक ॥ शत्रुराशिगतौ तौ चेदप्रकाशयुतौ तु वा ॥८२॥ भ्रष्ट· स्यात्
तथा मे ॥ त्रिदडी वा बहूदक ॥ रवौ जटाधर श्चैव भुजे नग्नोऽटन स्मृत ॥८३॥ मदे बौद्धोऽथ
वाग्मी स्याद्वाही श्वेती तथैव च ॥ धूमे कापालिकश्चापे काले तु परिवेषगे ॥८४॥ गुरुपापौ यथा
लिपी कुलमार्गगतस्तथा ॥ षष्ट्यशे ऋक्षसख्यशे सार्पे पौष्णेद्रभाशके ॥८५॥ त्रिशाशे कालहोराशे
तत्तदशाशकेऽपि च ॥ नव मूर्छामुराशे तु यथा षष्टितमे युत ॥८६॥मुतारे सार्धितिथ्यशे

द्वादशांशे नवांशके ॥ राश्यतांशे तु सप्तांशे ऋक्षसंधिमृगांतिके ॥८७॥ मृगकर्कालिसिंहादिमीनतूलांशकादिमे॥अत्यशोऽपि च जातस्य षड्यांऽक्षि जिने रदे ॥८८॥ द्रेष्काणेनार्धहोरायां त्रिसप्तेन नखेषु तु ॥ जातः प्रवजितश्रेषु सर्वत्रैकयुतेष्वपि ॥८९॥

(श्लोक ४४ से ८१ तक का भाग अनुपयुक्त है)

परमहस योग-लग्न (जन्मलग्न मे) गुरु या शुक्र हो तो जातक परमहस होता है, यदि गुरु, शुक्र 'धूम' आदि अप्रकाश ग्रहयुक्त हो तो 'धर्मभ्रष्ट परमहस' होता है। यदि गुरु, शुक्र, बुध ये तीनो जन्मलग्न मे हो तो त्रिदण्डी सन्यासी होता है, अथवा बहूदक होता है। सूर्य हो तो शिवभक्त, मगल हो तो दिगम्बर,शनि हो तो बौद्ध तथा केतुयोग से भी बौद्ध और 'धूम' योग हो तो कापालिक एव चाप, काल, परिवेष हो तो क्रमश गुप्तपापी, पाखण्डी, कौलिक (वाममार्गी) होता है॥८२॥८३॥८४॥

सन्यासी के अन्य योग-जन्मलग्न के षष्ठ्यश मे आश्लेषा, रेवती, ज्येष्ठा, नक्षत्रो के अश मे और विशाख मे या कालहोरा, नवाश मे अथवा राशि के अन्तिम अश मे,सप्ताश मे नक्षत्रसधि मे (इन उपर्युक्त अशो मे) यदि मकर, कर्क, वृश्चिक, सिह, मेष, मीन, तुला के आदि या अन्त के अश मे जन्म हो तो सन्यासी होता है। अथवा २।५।६।२४।३२ इन अशो मे इनकी होरा या द्रेष्काण मे या इन पूर्वोक्त सख्या मे एक योग करने से जो अक हो उस सख्या मे जन्म हो तो सन्यासी होता है॥८५ से ८९ तक॥

पापाप्रकाशसंयोगे कलत्रे स्वशुभ भवेत् ॥ रवौ वध्या तु शीतांशौ क्षीणे तु व्यभिचारिणी ॥९०॥ कुजे तु म्रियते मन्दे दुर्भगा राहुसयुते ॥ परदाररतिः स्वीमनिषेकामावतोऽसुता ॥९१॥ धूमे विवाहहीनः सन् म्रियते कार्मुके सति ॥ परिवेषे तु दुःशीला केतौ वध्याऽसती भवेत् ॥९२॥ कालेऽभावस्तु पाते तु गर्भस्रावेण सयुता ॥ सुशीला स्त्रीप्रसूता च पूर्णमार्गे तु शीतगौ ॥९३॥ बुधे त्वपुत्रा जीवे तु गुणयुक्ता सुपुत्रिणी ॥ शुक्रे सौभाग्यसयुक्ता श्रीमती पुत्रिणी भवेत् ॥९४॥

स्त्रीके लक्षण-सप्तमभावमे पापग्रह या धूमादि नेष्ट ग्रह हो तो स्त्री दुष्टा होती है। अब प्रत्येक ग्रह के अनुसार अलग २ फल कहा जाता है। सूर्य से वन्ध्या, क्षीण चन्द्रमा से व्यभिचारिणी, मगल से स्त्रीनाश, शनि से दुर्भागिनी, राहु से परदार रति, धूम हो तो अविवाहित मृत्यु, कार्मुक हो तो पूर्वोक्त फल, परिवेष हो तो दु शीला, पात हो तो गर्भस्राविनी, केतु हो तो वन्ध्या या दुष्टा, काल हो तो स्त्री हानि, पूर्ण चन्द्र सप्तम स्थान मे हो तो कन्या प्रजावती, बुध हो तो अपुत्रा, गुरु हो तो सुपुत्रा, शुक्र हो तो सौभाग्यवती होती है॥९० से ९४ तक॥

एव्वेयं दशमे पापपुण्यकर्मरतो भवेत् ॥ पचाशद्भिः सुरैस्तत्त्वैर्नृपैश्च मुनिभिर्ग्रहैः ॥९५॥ अष्टभि षड्भिरेवाथ सप्तादिभिरनुक्रमात् ॥ पचादिभिश्च होराः स्युरेकोत्तरचयैरथ ॥९६॥ पापपुण्यक्रियाकर्ता क्रमात्सख्यातराशजः ॥ आवृत्तिरसरा प्रोक्ता पापपुण्यक्रिया रतिः ॥९७॥

दशमभाव का विशेष फल-दशम भाव शुभग्रह युक्त या दृष्ट हो तो शुभ फल, पापग्रह युक्त या दृष्ट हो तो अशुभ फल होता है। शुभ, पाप, समान हो तो मिश्र फल, न्यूनाधिक हो तो जो अधिक हो उसका विशेष फल होता है। तथा जो अंश दिये जाते है ५०,३३,२५, १६,७, ८,९,६,५ और इनमें १ १ जोडने पर जो संख्या हो उसमें पापग्रह आदि के योग से शुभाशुभ कर्मफल जानना॥९५॥९६॥९७॥

मिश्रे तु मिश्र त्वधिकवशादेव तु निर्णय ॥ वर्णाश्रमाचारविहीनबुद्धि स्त्रिया च पापी परदारसक्त ॥ क्षेत्रापहारी च परस्वसर्वं निहत्य योग सकल करोति ॥९८॥ परस्य चोत्कर्षविघातकारी विषाग्निद पातककर्मकृच्च ॥९९॥ ग्रामस्य देशस्य च विप्रवर्गधनापहारी व्यसने कृतार्थ ॥ मृतिप्रद कर्म करोति सूर्यात्स्याप्यप्रकाशा सितशीतगोश्च ॥१००॥ दयारतो दाभरत सुतेजा स्वाचारघाती विजितेन्द्रियश्च ॥ इष्ट च पूर्तं च करोति जीवे शुक्रे वदान्य कृतदारशील ॥१०१॥

शुभ योग मे शुभ फल अशुभ योग मे अशुभ फल होता है। अशुभ योग का फल दिखाते है-वर्ण और आश्रम के धर्म से हीन परस्त्री लम्पट दूसरे का धन तथा भूमि हरण करनेवाला, पर निन्दक विष देनेवाला ग्राम जलानेवाला, ब्राह्मणो का धन हरनेवाला सूर्य के योग मे हत्याकारी बुध मे पापकर्मी होता है। चन्द्र योग से विख्यात और यशस्वी मगल से दयावान् गुरु से इष्टापूर्त कर्म करे। शुक्र से दानी शनि से स्त्री स्वभाव वाला होता है॥९८ से १०१ तक॥

मेषे त्वगम्यागमनप्रियश्च त्वभक्ष्यभक्ष्यो वृषभे सुशील ॥ देवेशदेवालयधर्मकारी युग्मे विरक्तोऽल्पधनैर्विहीन ॥१०२॥ वाटे च तोय च करोति पाप परस्वहर्तापि च पूर्तकारी ॥ सिंहे तु देवस्य विघातकारी पापोन्मवे धर्मरति सुभृत्य ॥१०३॥ तुले परेषा धनदश्च पूर्त करोति चापेऽपि च वृश्चिके तु ॥ परस्वहर्ता परदारसक्तो मृगेऽपि चैव घटभे कृतज ॥१०४॥

मेष राशि मे जन्म हो तो अगम्यागामी अभक्ष्य भक्षणशील। वृष राशि मे जन्म हो तो श्रेष्ठ स्वभाव देवभक्त। मिथुन मे वैराग्य सम्पन्न दरिद्री। कर्क मे पापी और चोर तथा बावडी, कूवा बनावे। सिंह मे देवस्थान का नाश करे। कन्या मे धर्म कर्मरत। तुला मे दानी। धन मे महादानी। वृश्चिक मे पर सन्तोषी परस्त्री लम्पट। मकर मे दानी। कुम्भ मे धनकर्ता तथा उपकारी। मीन मे तालाब आदिक श्रेष्ठ कर्म कर्ता हो॥१०२ से १०४ तक॥

यज्ञस्य कर्ता प्रथमेतथैव पूर्तादिकारी बहुयोजक स्यात् ॥ नर्तको गायको वदी शिल्पी याञ्चापरस्तत ॥१०५॥ गायको नर्तको भारवाही प्रर्णतयोजक ॥ प्रेष्यश्च भारको वदी याचको धातुवादक ॥१०६॥ वेदाध्यायी स्मृतिज्ञस्तु शैवाश्रमकृतश्रम ॥ शिल्पलेखनकर्ता च मीमांसान्यायतर्कवित् ॥१०७॥ पञ्चरात्रार्थशास्त्रज्ञ इतिहासपुराणवित् ॥ आयुष्यकर्मकृत्तज्ञ आयुर्वेदकृतश्रम ॥१०८॥

सूर्यादि ग्रहो का कलांश अनुसार फल-क्रम से प्रति अंश नर्तक १, गायक २, बंदी ३, शिल्पी ४, याचक ५, गायक ६, नर्तक ७, भारवाही ८, नम्र ९, दूत १०, भारवाही ११, बंदी १२, याचक १३, धातुवादी १४, वेदाध्ययनशील १५, स्मृति शास्त्रज्ञ १६, शिवभक्त १७, शिल्पी अथवा लेखक १८, मीमांसक या नैयायिक १९, आगम तंत्री २०, पौराणिक २१, शस्त्र करनेवाला २२, वैद्य २३, यह फल सूर्य से शनि पर्यन्त ग्रहो के कालांश क्रम से जानना॥१०५ से १०८ तक॥

अर्कात्कलाशतश्चैव क्रमादेव प्रकीर्तिताः ॥ अध्यापकस्तु वेदानां सेवकः शास्त्रपाठकः ॥१०९॥ अश्वसादीभसादी च लिपिलेखनतत्परः ॥ मदुराबधको नत्यो देशिको याज्ञिको गुरुः ॥११०॥ दानशीलस्तु तृणको ग्रामणीर्व्यसनाधिपः ॥ आरामकरणोद्युक्तः पुष्पविक्रयतत्परः ॥१११॥ राजकार्यरतः सेनालतापुष्पफलक्रयी ॥ नृत्यगीते च कुशलस्ताम्बूलफलविक्रयी ॥११२॥ निषिद्धविक्रयकरो ग्रामणामधिकारकृत् ॥ बंदी च देशिकः प्राज्ञो धूपकश्चौषधिक्रियः ॥११३॥ कायस्थ करणोद्युक्तो भारको भाण्डविक्रयी ॥ कूपिकृच्च वणिग्धातुचर्मकारी च कर्षकः ॥११४॥ शास्त्राधिकारी विज्ञानी पुस्तेको रजको वणिक् ॥ वेदवेदाङ्गवेत्ता च शास्त्रज्ञो बंदिपाठकः ॥११५॥ ग्रामणीरधिकारी च गणको दण्डकारकः ॥ सारकर्मेंधनाहारी फलमूलादिविक्रयी ॥११६॥ शातकृत्स्वर्णकारी च कृपिकृत्पलविक्रयी ॥ याजकोऽध्यापको-ऽध्यक्षः प्रतिग्रहपरः फली ॥११७॥

षष्ठ्यंश फल—वेद पढना १, सेवा करना २, शास्त्र पढना ३, घुडसवार ४, पीलवान ५, लेखक ६, साहीस ७, नर्तक ८ अध्यापक ९, ऋत्विज १०, गुरु ११, दानी १२, विक्रयकारी १३, चौधरी १४, दु:खदाता १५, माली १६, माली १७, राजकर्मचारी १८, वनस्पति व्यवसायी १९, नृत्यगीत कुशल २०, फल व्यापारी २१, निन्दित व्यापारी २२, ग्रामाधिकारी २३, राजसेवक २४, देशिक २५, बुद्धिमान २६, सौगन्धिक २७, पसारी २८, बहुरूपिया २९, भारवाही ३०, धातु व्यापारी ३१, कृषक ३२, व्यापारी ३३, धातुचर्म व्यापारी ३४, कृषक ३५, शास्त्राधिकारी ३६, अनुभवी ३७, ग्रन्थ चुम्बक ३८, रंगरेज ३९, व्यापारी ४०, महाविद्वान ४१, शास्त्री ४२, राजसेवक ४३, चौधरी ४४, ग्रामाधिकारी ४५, गणितज्ञ ४६, जज ४७, जल्लाद ४८, काष्ठ चोर ४९, फल विक्रयी ५०, शालकर्मी ५१, सुनार ५२, कृषक ५३, भाम विक्रयी ५४, ऋत्विक् ५५, अध्यापक ५६, हाकिम ५७, दानी ५८, नगरोपभोगी ५९, सम्मानित ६०। विषम राशि में क्रम से और सम राशि में उत्क्रम से यह फल होते हैं॥१०९-११७॥

क्रमाद्व्युत्क्रमतश्चैव षष्ट्यिः स्यादशकेषु तु ॥ रवौ ब्रह्महरिविष्णवीशादुर्गागणपतिव्ययाः॥११८॥ चण्डिकाया च षडेशचन्द्रविष्णवीशपावके ॥ त्रिपुरवेदिरविष्णुहरिशंकरशम्भुषु ॥११९॥ क्षेत्रेशे गरुडे स्कन्दे शास्तरि ब्रह्मणोऽश्वरे ॥ विषापहरणोद्युक्ते जिने बुद्धे क्रमातया ॥१२०॥ ज्वरश्लेष्मातिसारासृग्जठरम्याधिमूलरुक् ॥ मेहग्रहणिपिटिकापायकार्श्वनिरास्कन. ॥१२१॥ दाहज्वरविषाभ्यां तु मूर्यात्कालेतिमे मृतिः ॥ राशौ ग्रहत्वर्ये चित्तयानश्लेष्मत-रोगतः ॥१२२॥

त्रिशांश फल—त्रिशांश मे क्रमानुसार प्रत्येक अंश मे जातक किस देवता का भक्त होगा यह कहा जाता है। प्रथम अंश में सूर्य भक्त। द्वितीय मे महादेव। तृतीय मे हरि। चतुर्थ मे विष्णु, पचम मे ब्रह्मा। षष्ठ मे दुर्गा। सप्तम मे गणपति। अष्टम मे चण्डिका। नवम् मे चण्डिका। दशम मे महादेव। ग्यारहवे मे चन्द्र। १२ मे विष्णु। १३ मे ईशा। १४मे अग्नि। १५ मे त्रिपुरा। १६ मे इन्दिरा। १७ मे विष्णु। १८ मे हरि। १९ मे तथा २० मे शकर। २१ मे क्षेत्रपाल। २२ मे गरुड। २३ मे स्कन्द। २४ मे सरस्वती। २५ मे ब्रह्मा, २६ मे ईश्वर। २७ मे गरुड। २८ मे जैन। २९ मे बौद्ध। ३० मे सर्वमतावलम्बी होता है।।११८।।११९।।१२०।।

मरण निमित्त—सूर्य से काल नामक ग्रह तक १४ ग्रह होते है। जन्मराशि मे जो ग्रह हो उसके अनुसार क्रम से ये रोग जानना। सूर्य से ज्वर, चन्द्र से कफ, अतिसार ३, रक्तव्याधि ४, उदरव्याधि ५, मूलव्याधि ६, प्रमेह ७, सग्रहिणी ८, पिटक रोग ९, अग्नि १०, अवनी ११, शस्त्र १२, अग्नि १३, ज्वर या विष १४ ।।१२१।।

प्रकारान्तर—सूर्य से पित्त, चन्द्र से वायु, मगल से कफ, बुध से पित्त, गुरु से वायु, शुक्र से कफ, शनि से कफ, राहु से पित्त, केतु से वायु रोग से मृत्यु होती है।।१२२।।

पित्तवातकफश्लेष्मपित्तवातैः क्रमात्स्मृत. ।। ज्वरसन्निपातजठरामयांत्रग्रामप्रमेहजलकाग्नि-लाग्नितः ।। ज्वरसन्निपाततोऽत्रभवेन्मृतिः क्रियपूर्वकस्तु मिथुनांशकेषु तु ।।१२३।।गुल्मोदरज्वर-विषाग्निजलाविघातशस्त्रादिपातगुदकीलभगदरोत्था ।।रक्तातिसारजठरज्वरमेहगुल्मकुष्ठाति-सारपिटकादिभिरश्मरीयै ।।१२४।। शूलाशनिक्षतजपित्तसमावृतानि शीतज्वरप्रभृतिराशि-पशात्क्रमेण ।।१२५।। कालादिरव्युत्क्रमोक्तजाता चेद्दुर्गपातपतनज्वरसन्निपातात् ।। गोपात-सत्वजनिता च मृतिः क्रमेण यामेन चापि पुनरेवमथांशकेषु ।।१२६।।

नवांश के कारण मृत्यु के निमित्त—प्रथम नवांश मे जन्म हो तो ज्वर से मृत्यु। २ मे सन्निपात से। ३ मे उदर रोग से। ४ मे अन्त्र रोग से। ५ मे प्रमेह से, ६ मे जल से, ७ मे अग्नि से, ८ मे ज्वर से, ९वें नवांश मे सन्निपात से मृत्यु होती है।।१२३।।

जन्मलग्नराशि से मरणनिमित्त—मेष मे गुल्मरोग से, वृष मे ज्वर या उदररोग से, (आगे क्रम से) विष, अग्नि, जल से ३, शस्त्र से ४, गुदरोग या भगदर से ५, रक्तातिसार, ज्वर या उदररोग से ६, प्रमेह या गुल्मरोग से ७, कुष्ठ या अतिसार से ८, पिटक या अश्मरी से ९, शूल या वज्रपात से १०, पित्तरोग से ११, शीतज्वर से १२ मृत्यु होती है।।१२४।।१२५।।

कालादि सूर्यान्त व्युत्क्रम गणना मे मरणनिमित्त—कालग्रह के अंश मे दुर्गपात से १ (आगे क्रम से) पतन से २, ज्वर से ३, सन्निपात से ४, वृषभनिमित्त मे ५, पतन मे ६, प्राणीनिमित्त से ७।८, वृषभनिमित्त से ९।१०, सन्निपात से ११, ज्वर मे १२, पतन मे १३, दुर्गपात से १४, ये १४ कारण ग्रह तथा उनके नवांश के भी जानना चाहिए।।१२६।।

आचतुर्थात्समूतानि त्रयो द्वादश हारको ।। अथ स्यादष्टमात्षष्टिः पंचाष्टौ दशमात्ततः ।।१२७।। पञ्चपञ्चाशदब्दाः स्युस्त्रयोदशानि हारका ।। एकादशोऽष्टषष्टिः स्यातान्तकाष्ठाश्च

हारका ॥१२८॥ त्रयोदशे च ताना स्युर्द्विसप्ततिरथो मनौ ॥ रश्मय पञ्चदश चेत्पञ्चसप्ततिरेव च ॥१२९॥ वेदपञ्चरसा हारा दश रुद्राश्चरश्मय ॥ आत्रिंशत क्रमादब्दा अशीतिरथ सप्तति ॥१३०॥ षेपव खाब्धय खाद्रिवेदाद्रिवेदसप्तति ॥ षष्टिरष्टरद्रिरष्टेषु पञ्चसप्ततिरद्रियुक् ॥१३१॥ एकाशीतिश्चतुर्युक्ता चत्वारिंशत्स्मृता समा ॥ सप्ताकरसतर्केषु नवाद्रिरसषट्करा ॥१३२॥

रश्मिसंख्या से वर्षानयन– तथा हार–रश्मिसंख्या ४ से ३० तक वर्ष संख्या तथा हारसंख्या–चक्र में देखें ॥श्लोक १२७ से १३२ तक॥

अथ रश्मिवर्षाहाराज्ञानचक्रम्

रश्मय	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
वर्षा०	०	०	०	५०	५०	५०	५०	६०	०	५५	६८	०	४१	७५	७५
हार-कांका	०	०	०	३	३	३	३	५	०	३	७	०	७२	५४	१०
०	०	०	०	१२	१२	१२	१२	८	०	९	१०	०	०	६	११
रश्मय	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०
वर्षाणि	८०	७०	५०	४०	७	७४	७४	६०	७८	५८	७५	७७	८१	८५	४०
हार-कांका	७	९	६	६	५	९	७	६	६	२	११	१०	९	९	१२

रुद्रा दिङ्नवतर्काकों अब्दहारा क्रमादमी ॥ रुद्रार्कमनुविश्वष्टि सप्तारेष्वर्कदिक्करा ॥१३३॥ वेदेषुर्वेदकाक्रा स्युरंशहारा प्रकीर्तिता ॥ पञ्चानां च चतुर्णां च ततत्पण्णवति शतम् ॥१३४॥ दश रुद्रा नवा मूर्छा हारा स्यु क्रमश स्मृता ॥ शते रसार्करुद्राश्च दशविंशोत्तर शतम् ॥१३५॥ एते हारा क्रमात्प्रोक्ता केचाचित्परमायुष ॥ केषांचिदनयोर्योगदलमब्दा विशेषत ॥१३६॥

अल्पायु के हारांक– ११।१२।१४।१३।१६।७।५९।१२।१०।५।५४।९४ ये अल्पायु के हारांक हैं॥१३३॥

मध्यमायु के हारांक–५।४।६।९०।१००।१०।११।२०।२१ ये क्रम से हारांक है॥१३४॥ जहां आयुर्योग में १०० वर्ष की आयु हो वहां ६।११।१०।१२० इन हारांकों का प्रयोग करना॥१३५॥ मतान्तर–हार, शतायु का योग करके आधा करना, वह वर्षसंख्या होती है॥१३६॥

दशम यावदायात स्वकुटुब बिभर्ति च ॥ कृच्छ्रेण दशमे पुत्रबाहुल्यानेकसयुत ॥१३७॥ एकादशे तु विद्वासो निर्धना जगतीं सदा ॥ अटति द्वादशे नित्य निर्धना कुलपासना ॥१३८॥ स्वदेहार्थधना दासा अतो यावत्तु विंशति ॥ अत पर मृति याता बाल्य एव यथागता ॥१३९॥

रश्मिफल-रश्मियोग १० हो तो बहुत पुत्र हो और कठिनाई से परिवार का भरण पोषण करे। ११ रश्मि योग हो तो पुत्र विद्वान् तो हो परन्तु दरिद्री हो। १२ हो तो जातक दरिद्र और नीचवृत्ति होता है। १३ रश्मि से २० तक योग हो तो कठिनाई से या नोकरी से आजीवन हो या बाल्य अवस्था मे ही मृत्यु हो॥१३७-१३९॥

एव प्रागवत्सरा प्रोक्ता प्रथमेचोत्तरेस्मृता ॥१४०॥ केन्द्रत्रिकोणेष्वशुभा ग्रहास्तु त्रिलाभषष्ठाष्टमगा शुभाश्चेत् ॥ द्वितीयवेश्मास्तगताश्च भौमक्षीणेन्दुमदा यदि वा च वामम् ॥१४१॥ स्थानेषु धनदेष्वेव शत्रुवर्गगता यदि ॥ रव्यारार्किंतम क्षीणचद्रा स्यु रेकदा इमे ॥ एव त्रिकादियोगाना सयोगो रेकदो गुणै ॥१४२॥ अन्यथा तारतम्येन कादाचित्को भवेदिहज ॥ लग्ने द्विधर्मकर्मायसुखपुत्रास्तविक्रमे ॥१४३॥ स्थित स्थितौ स्थिता खेटा शत्रु ग्रहनिरीक्षिता ॥ आदौ वयसि मध्येऽन्ते दरिद्रा स्यु क्रमाद्भवेत् ॥१४४॥

शुभाशुभ योग-केन्द्र या त्रिकोण मे पापग्रह तथा त्रिषडाय और आठवे मे शुभग्रह हो अथवा २।४।७ मे क्षीणचन्द्र मगल शनि हो या सू० म० श० रा० क्षीणचन्द्र हो तो दरिद्र योग होता है। अथवा १।२।९।१०।११।४।५।७।३ अर्थात् १ से ५ तक तथा ७ तथा ९ से ११ तक के भावोमे १-१ ग्रहो हो शत्रु या पापदृष्टि हो तो प्रथम अवस्था मे दरिद्र और दो ग्रह हो तो मध्य अवस्था मे तथा तीन आदि ग्रह हो तो अन्तिम अवस्था मे दरिद्र योग होता है॥१४०-१४४॥

नव योगा इमे प्रोक्तास्त्रिषु स्थानेषु रेकदा ॥ कर्कटाद्वृश्चिकान्मीनाच्चतुर्ष्वेव क्रमास्थिता ॥१४५॥ शत्रुगेहे स्थिता पापा मध्येऽन्ते प्रथमे क्रमात् ॥ सुखान्मृत्योर्व्ययात्पुत्राद्धर्माल्लग्नात्मै-व च ॥१४६॥ एवमक्षा यदि न्यूनाश्चाष्टवर्गसमुद्भवा ॥ केद्रेषु च त्रिकोणेषु शुभा उपचये परे ॥१४७॥ धनदेषु शुभाश्चान्ये परेषु च यदि स्थिता ॥ इष्टरश्मिफलाधिक्यैकश्च द्वौ च त्रयोऽपि वा ॥१४८॥ उच्चादिपचकस्थाने नवाशेष्वेव वा यदि ॥ लक्ष्मीयोगा इमे प्रोक्तास्सुहृद्दृष्टास्तथा परे ॥१४९॥

अन्य योग-कर्क राशि से ४ राशियो मे शुभ पापग्रह हो तथा शत्रुदृष्टि हो तो मध्य अवस्था मे फल हो और वृश्चिक आदि ४ राशियो मे शुभ पाप ग्रह हो तो अन्त्य अवस्था मे योगफल, मीनादि चार राशियो मे शुभ पापयोग हो तो प्रथम अवस्था मे योगफल होता है॥१४५॥१४६॥

शुभयोगविचार-केन्द्र त्रिकोण मे शुभग्रह और त्रिषडाय मे पापग्रह हो तथा धनस्थान मे शुभग्रह हो और इष्टरश्मियोग अधिक हो उच्च और मूलत्रिकोण मे १ या २-३ ग्रह हो अथवा उच्चादि नवाश मे हो तो लक्ष्मीवान् योग होता है॥१४७-१४९॥

रेके प्रोक्ताधिकाशाशा शुभारि फाष्टषड्विना ॥ उच्चौ द्वौवा त्रय कोणे चत्वारोऽतिसुहृत्स्थिता ॥१५०॥ मित्रेण पच षट् सप्त खेटाश्चेच्छ्रीप्रदा स्मृता ॥ द्विर्द्वादशे शुभौ चन्द्रात्सप्तमे वा तनोस्तथा ॥१५१॥ गुरौ लग्ने द्वितीये ज्ञे व्यये शुक्रेऽथवा भवेत् ॥ भावदृग्बलकष्टेष्टफलभावस्वभावत ॥१५२॥ दायाना च फलैरेव भाववर्गांशसयुतै ॥ रश्म्यशसभवादेव वर्षचर्या तु दैववित् ॥१५३॥ एयामशाश्च सभूता कारकादिग्रहैरपि ॥ मासचर्यां दिनोत्था चाप्यष्टवर्गसमुद्भवात् ॥१५४॥

अन्य योग-दरिद्र योग मे जो अक्षाश कहे है, वे ६।८।१२ भावो के बिना हों और उच्च या त्रिकोण के १ से ४ तक ग्रह हो तथा ५।६।७ ग्रह अतिमित्र राशि या वर्गगत हों तो धनी योग होता है॥१५०॥
अन्य योग-चन्द्रमा से २।१२ मे शुभग्रह हो, लग्न से ७ चन्द्र हो, लग्न मे गुरु हो २ मे बुध तथा १२ भाव मे शुक्र हो तो श्रीमान् योग होता है, परन्तु भावबल दृष्टिबल इष्टकष्ट बल से न्यूनाधिक्य से फल म तारतम्य होता है॥१५१॥१५२॥
अन्य योगान्तर- आयुर्दाय फल भावफल वर्गफल रश्मिफल इन सबके विचार म वर्ष तथा रश्मिविचार से मासफल अष्टकवर्ग मे दिनचर्या कहना॥१५३॥१५४॥

भावदृष्ट्यो प्रधानत्वात्कारको बोधको बले ॥ इष्टकष्टफले स्वस्ये पाचको रश्मिसभवे ॥१५५॥ अतर्दाये तु भावाना प्रधानो वेधक स्मृत ॥ अन्तर्दाये दशानार तु कारको बोधकस्तथा ॥१५६॥ भावस्वभावविषये पाचकस्त्वन्यथा भवेत् ॥ पाचकस्त्वन्यथा सूर्यश्चन्द्रमा बोधक स्मृत ॥१५७॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अष्टवर्गावर्णन नाम अष्टादशोऽध्याय ॥१८॥

बलाबल ग्रहण विचार-भाव तथा दृष्टिविचार म मुख्य कारक ग्रहण करना बलाबल विचार मे 'बोधक' लेना। इष्टकष्ट विचार मे पाचक लेना। अन्तर्दशा विचार मे वेधक लेना। दशा के अन्तर्दाय विचार मे बोधक कारक लेना। भावविचार मे पाचक लेना। सूर्य स्वभाव मे ही पाचक और चन्द्रमा बोधक है॥१५५-१५७॥

इति श्रीबृ०पा०हो०शा०उ०ख०भावप्रका० योगवर्णननाम अष्टादशोऽध्याय ॥१८॥

पुन अष्टवर्णनाह

यष्टाविरश्मिस्थायीशो जनको जन्मतोऽभूसम् ॥ धनादिहीनो रिक्तश्च द्वितीयेशो मितुर्मृति ॥१॥ नि स्वस्तृतीये दासश्च चतुर्थे रक्तसयुत ॥ व्याधिभि पीडितस्त्वष्टमषष्ठे कृशगुप्तित ॥२॥ नवमे दशमे चैव षष्ठेशो सप्तमेऽपि वा॥व्याधियुक्तो दरिद्रश्च यदि जीवति जीवति ॥३॥ एकादशोऽपि रश्मी चेशाशो पितृमालिन ॥ पितुर्धनव्ययकरो द्वितीये बधकोपितः ॥४॥ वेदयागतस्तृतीये

स्यान्निर्धनः कुलपांसनः ॥ मृतपुत्रोऽथ वाऽभाग्यश्चतुर्थे स्त्रीविमानितः ॥५॥ पञ्चमे त्वल्पपुत्रः स्यात्षष्ठे चाप्यरुजा युतः ॥ स्त्रीयोगे धनवान्कश्चित्सप्तमे दुःखितोऽधनः ॥६॥ आद्येंऽशे द्वादशे रश्मौ नैव तस्य शुभाशुभौ ॥ द्वितीये बलवान्मूर्खश्चौरद्रव्येण जीवति ॥७॥ तृतीये च चतुर्थे च वेश्यापतिररिंदमः ॥ नृपपूरुषमृत्युश्च भार्याहीनोऽसुतोऽधनी ॥८॥

रश्मिफल तथा वर्षचर्या-छठी रश्मि के प्रथमांश मे जन्म हो तो पिता दरिद्र हो, द्वितीयांश मे पिता की मृत्यु हो। तीसरी मे दरिद्र और नौकर हो, चौथी मे दरिद्री और रोगी, पांचवी मे अति पीडित, ६।७।८।९।१० मे रोगी, दरिद्री तथा जीवन मे भी संशय हो। ११ वी रश्मि के आद्यंश मे मातृहीन तथा दरिद्र, द्वितीयांश मे पुंश्चलीपति, वेश्यागामी, ३ मे निर्धन, कुलहीन, अभागी या मृतपुत्र हो, चौथे मे स्त्रीजित, पांचवे मे अल्पपुत्र, छठे मे नीरोगी, स्त्रीयोग से धनी, ७वें मे दुःखी निर्धन हो। १२ रश्मि के प्रथमांश मे शुभाशुभ समान हो, दूसरे मे बलवान् तथा मूर्ख चोर हो, तीसरे चौथे मे वेश्यापति, शत्रुनाश हो तथा राजपुरुष के द्वारा मृत्यु हो या जीवित रहे तो धन, पुत्र, भार्याहीन हो॥१-८॥

विद्याश्चतुर्दशे त्वाद्ये पितृभ्यां लालितः सुखी॥ द्वितीये क्लेशभाग्वापि शत्रुजिच्च रणाजिरे ॥९॥ पितृभ्यां हीन एवाथ लब्धकिंचिद्धनार्जकः ॥ देशाद्देशमटत्येव तृतीये धनतत्परः ॥१०॥ सद्भिरीड्यः सुखी ख्यातः शान्तबुद्धिररिंदमः ॥ चतुर्थे धनवान् क्षत्री विद्ययार्जितपोषकः ॥११॥ क्षितिश्रीयोगसंयुक्तः पञ्चमे दुःखभाग्धनी ॥ पुत्रादिसंपत्संयुक्त एव पञ्चदशे भवेत् ॥१२॥ अस्मिन्षष्ठे धनी प्राप्तो विद्यया सद्यशो भवेत् ॥ एवं च षोडशे चाद्ये त्वतीवधनवान्भवेत् ॥१३॥ स्वबन्धुभ्योऽधिकोऽन्येंऽशे विद्ययाऽथ धनेन वा ॥ पुत्रादिसंयुतः श्रीमांस्त्र्यंशे स्यात्स्वजनेश्वरः ॥१४॥ इष्टापूर्तेन संयुक्तस्त्वष्टादशोनविंशके ॥ पूर्ववद्विंशरश्मौ तु लब्धधामपरायणः ॥१५॥ वदान्यः पूर्वधर्माणा मनुवद्बहुपुत्रकः ॥ एकविंशे धनैर्युक्तमाद्येऽनतरभागके ॥१६॥ तृतीये तु भुवि ख्यातो दानेन च धनेन च ॥ हिमामत्व तु वा यज्वा यानवाहनसंयुतः ॥१७॥ श्रीमान्वृद्धधनानां च साधकश्च चतुर्थके ॥ अग्रिमाद्येन रोगार्तश्चतुर्थे धनवान्सुखी ॥१८॥ पञ्चमे वेशयोर्विद्वान्वदान्यो दत्तरोऽथवा ॥ सप्तमे धनहानिः स्याद्राजयोगैश्च मृत्युयुक् ॥१९॥ अष्टमे निर्धनस्त्यानां जनानां पोषणे रतः ॥ द्वाविंशे प्रथमेंऽशे तु पितुः पुत्रो धनस्य तु ॥२०॥

चौदहवी रश्मि मे १ अंश मे विद्वान २ मे मातृ पितृयुक्त सुखी। ३ मे क्लेश, शत्रुजित्, मातृपितृ हीन, भ्रमणशील, चौथे मे धनी, सुखी, प्रसिद्ध, शान्तबुद्धि, शत्रुनाशकारी, सज्जनानुरक्त, ५वे धनी भूमिपति, विद्योपजीवि, श्रेष्ठभार्यापति, छठे मे दुःखी, आगे धन पुत्र से सुखी हो। १५वी रश्मि का फल ५ अंश तक उपर्युक्तानुसार है, छठे मे बुद्धिमान् धनवान् हो। १६-१७ रश्मि मे प्रथम अंश मे अतिधनी, दूसरे मे प्रतापी, तीसरे मे धन, विद्या पुत्र से सुखी, चौथे मे पदाधिकारी, ५-६ मे यज्ञ, पुण्य, कूपादि का कर्ता हो। १८-१९ रश्मि का फल सत्रहवी रश्मि के समान जानना। बीसवी रश्मि मे वासभूमिलुब्ध, दानी, पुत्रवान् हो। २१ रश्मि मे १-२ अंश मे धनी, ३ मे दान धर्म मे विख्यात, वाहनवान, यज्ञकर्ता, धनी,सुखी हो, चौथे मे

अप्रिमाद्य का रोगी, धनी हो। ५ मे प्रतिष्ठित, दन्तुर हो, ७ मे धनहीन हो, राजनिमित्त से मृत्यु हो। ८वे अंश मे निर्धन दरिद्रो का पोषण कर्ता हो॥९-२०॥

द्वितीये धनहीनश्च किंचित्कृषिकर सुखी ॥ तृतीये राजकार्यार्थी तत्कर्मार्जितवित्तक ॥२१॥ चतुर्थे तु प्रभुश्चान्यनामभाग्दद्धघनात् ॥ पचमे तद्वदेव स्यात्षष्ठे कार्यस्य हानिक ॥२२॥ सर्वव्ययश्च रिक्तश्च सप्तमे रोगयुग्धनी ॥ त्रयोविंशे तु जनकलालितश्च सुखी भवेत् ॥२३॥ तृतीये मूर्खकृत्येन पराभवसमन्वित ॥ चतुर्थे चौरकृत्येन पचमे व्याधिसभव ॥२४॥ षष्ठे दरिद्र पुरुषो व्याधिना पीडितो भवेत् ॥ श्रीमान्पुत्रश्चतुर्विंशे प्रथमे लालितो भृशम् ॥२५॥ स्वजात्यनुगुणो विद्वान्प्रथमे च द्वितीयके ॥ तेन ख्याततस्तृतीये स्यात्स्वतत्र सर्वसमत ॥२६॥ क्षेत्रदारसुहृत्पुत्रकलत्रैर्बहुभिर्वृत ॥ पचमे व्याधित षष्ठे बहुव्ययपरायण ॥२७॥

बाईसवी रश्मि के प्रथम अंश मे पितृधन से धनी, दूसरे मे निर्धन, कृषक, सुखी हो, तीसरे मे राजसेवी चौथे मे समर्थ,अन्यनाम से प्रसिद्ध, पाचवे मे चौथे फल के अनुसार, छठे में कार्य हानिकर, ७वे मे रोगी और धनी हो॥ तेईसवी रश्मि के प्रथमांश मे पितृसुख, २मे सुखी, तीन मे मूर्खता से हार, चौथे मे चोर, पाच मे रोगी, ६मे दरिद्री,रोगी हो॥ चौबीसवी रश्मिके प्रथम अंश मे धनी, विद्वान् पिता से सुख स्वजाति गुणयुक्त हो, दूसरे अंश मे प्रथम के समान ही फल है। तीसरे अंश मे स्वतंत्र तथा सर्वसम्मत हो। चौथे अंश मे पूर्ण परिवार वाला सुखी ५वे मे रोगी, छठे मे अधिक व्ययशील हो॥२१-२७॥

पचविंशे तु षष्ठांशे फलहीनस्तु जीवति ॥ षड्विंशे प्रथमांशे तु दरिद्रस्यात्सुतोऽपि सन् ॥२८॥ पितु कार्ये तु वृद्धि स्याद्द्वितीये पितृवैरमत ॥ अन्यत्र गत्वा तत्रैव स्वयोयेन च कर्मणा ॥२९॥ स्वदेहपोषकोन्योऽशे धनी च कृत्यवित् स्थित ॥ चतुर्थे पचमे चैव पट्टबधादिसयुत ।३०॥ अतीव धनवान्स्यात्षष्ठे स्वसे स्वदेहभाक् ॥ क्षेत्रदाराविवृद्धधा तु व्याधाव्याधिसमन्वित ॥३१॥ नवमे धनहानि स्यात्पुत्रदारविवर्जित ॥ यावद्दश नवांशाश्च षड्विंशवदय द्वये ॥३२॥

पच्चीसवी रश्मि के छठे अंश मे जीवन निष्फल हो, छब्बीसवी रश्मि के १ अंश म अन्य देश मे जीवनयापन हो तीसरे अंश मे धनी चतुर हो, ४-५ मे दीक्षित, छठे म धनी सातवें मे साधारण आजीवन ८वे मे भूमि स्त्री का सुख ९वे मे मानसी चिन्ता रोगी हो। १० वे अंश मे स्त्री, पुत्र, धनहीन हो २७ २८ रश्मियोग मे भी पूर्वोक्त फल होता है॥श्लोक २८ से ३२ तक॥

राजप्रियस्ततश्चड शुद्ध स्यादशके तत ॥ एकोनत्रिंशे दशमी तु सुखी स्याच्च द्वितीयके ॥३३॥ राजसेवी तृतीयेशे कृत्याकृत्यविदीश्वर ॥ बहुबधुयुत श्रीमान्मानवाहनसयुत ॥३४॥ देशग्रामाधिकारी च त्रिंशे त्वेतै समन्वित ॥ सेनानीर्नीतिमाल्क्रूर पचमांशे भवेदिदम् ॥३५॥ षष्ठे तु विजयी युद्धे सप्तमेऽपि रुजा युत ॥ न्यूनायतिस्तु वस्वंशे नवांशे त्वधिकार्तिन ॥३६॥ सर्वत्रिंशे तु राजान षष्ठांशे वा तृतीयके ॥ अभिषिक्तो भवेद्राजा पट्टबधुस्तु योगत ॥३७॥ दशमो तथा चतुस्त्रिंशे चतुर्थांशे पराजय ॥ तृतीये पचमे षष्ठे युद्धे तु विजयी भवेत् ॥३८॥ अष्टमे नवमेंऽशे तु वृद्धि स्याद्दशमे न हि ॥ चत्वारिंशे यस्माच्चत्वारिंशत्तत परे ॥३९॥

द्वितीये च तृतीये च चतुर्थे चाद्यके तथा ॥ राजा स्यात्पंचमे षष्ठे सप्ताष्टनवमे ततः ॥४०॥ दशमे च क्रमाद्युद्धव्याधिर्वाऽथ पराजयः॥ इतरांशेषु संस्थातः सर्वसंपत्समन्वितः ॥४१॥ ततः परं च सम्राट् स्याच्चतुर्थे पंचमे जयी ॥ अंशास्तुल्यास्तु तेष्वेवं विपरीतफल विदुः ॥४२॥ व्याधिरुक्तदेव स्याद्यावद्विंशतिरश्मयः ॥ यद्यप्यंशाः पर नाऽत्र अधिकारं भजन्ति ते ॥४३॥

२९वी रश्मि के प्रथमाश मे सुखी, दूसरे मे राजसेवी, ३ मे सत्कर्मी, ४ मे पदाधिकारी, ५ मे बन्धु समागम, छठे मे श्रीमान्, ७ मे सम्मान पावे, वाहन हो, ८वें मे देशाधिपति हो, नवम मे ग्रामाधिपति हो, इसी प्रकार ३०वी रश्मि का भी फल है। ३१वीं रश्मि के ५वें अश मे सेनाधीश, नीतिमान्, शूर हो। छठे मे युद्ध मे विजयी, ७ मे रोगी, ८ मे किंचित् लाभवान्, नवम मे बहुलाभवान् होता है। ३२ वी रश्मि मे पूर्वोक्त फल जानना। ३३वी रश्मि मे तीसरे, छठे, अश मे राजा होता है। ३४वी रश्मि के ४ थे अश मे पराजय। ३।५।६ मे जय हो। ८।९ मे वृद्धि हो। ३५ वी रश्मि से ४० वी रश्मि तक के १।२।३।४ अशो मे राजा होता है। ७ मे युद्ध, ८ मे व्याधि, ९वें मे व्याधि, तथा दशम अश मे पराजय होती है। बाकी के अशो मे सर्व सम्पत्तिवान् होता है।।श्लोक ३३ से ४३ तक।।

अथ स्थानगताना तु रव्यादीना क्रमात्फलम् ॥ ततो रवि शिरोरोग बधूना च विरोधताम् ॥४४॥ द्वितीये धनहानिश्च तृतीये मित्रवर्द्धनम् ॥ धनलाभ सुखे सौख्य शत्रुभिश्च समागमम् ॥४५॥ पचमे पुत्रलाभ च बुद्धिमुद्यमसिद्धिकृत् ॥ षष्ठे धन जय कुर्यात्सप्तमे स्त्रीविरोधनम् ॥४६॥ अष्टमे व्याधि हानि च नवमे मित्रबधनम् ॥ भाग्यहानि च दशमे धनलाभं सुखं जयम् ॥४७॥ एकादशे धनाना च सिद्धि मित्रसमागमम् ॥द्वादशे धनहानि च व्यय वा कुक्षिरुक् क्रमात् ॥४८॥ चद्रे लग्ने च कलह द्वितीये धनयोजनम् ॥ तृतीये भ्रातृभिर्लाभ धनवस्त्रादिसंग्रहम् ॥४९॥ चतुर्थे धनवस्त्रादिवाहनादिसुखयुतम् ॥५०॥ तीक्ष्णे धनी सुतपुतः परिपूर्णसपत्यष्ठे तु रोगसहित कुमति च कामे ॥ विद्याधनक्षितिसुखादिसमन्विश्च मृत्यौ च मृत्युविषयः खलु कुक्षिरोगी ॥५१॥ स्त्रीस्वर्णदासयतिरेव धर्मे माने सुचारित्रगुण धन च ॥ लाभे तु चैतत्सकल व्यये तु धनस्य रिक्त कुरुते शशी तु ॥५२॥

सूर्यादि ग्रहो का १२ भावो का फल-सूर्य १ भाव मे-शिरोरोग, विरोध। २ मे धन हानि। ३ मे मित्र, धनलाभ, ४ भाव मे सौख्य। ५ मे पुत्रवृद्धि, बुद्धि का विकास, उद्योग की सिद्धि। ६ मे जय धन, ७ मे स्त्री विरोध। ८ मे व्याधि, हानि। ९ मे मित्र बधन, भाग्यहानि। ९ मे धनलाभ, सुख, जय, १० मे भाग्यहानि, ११ मे धनसिद्धि, मित्रसमागम। १२ मे धनहानि, व्यय, कुक्षिरोग कारक होता है।।४४ से ४८ तक।।

चन्द्रफल–१ भाव मे कलह। २–धनलाभ। ३–भ्राता से वस्त्रादि का लाभ। ४ मे धन, वस्त्र, वाहन प्राप्ति। ५ मे धन, पुत्र, सम्पत्तिकी प्राप्ति। ६ मे रोग, कुबुद्धि। ७ मे विद्या, धन, भूमि,

सुख प्राप्ति।। ८ मे मृत्यु दुःख, कुधिरोग। ९ मे स्त्री, सुवर्ण, दास प्राप्ति। १० मे उत्तमगुण धन की प्राप्ति। ११वे मे दसके समान फल। १२ वे मे द्रव्यनाश होता है।।४९–५२।।

कुजे लग्ने तु चापल्यात्क्षत स्वे धननाशनम् ॥ विक्रमे भ्रातृमरण धनलाभ सुख यश ॥ चतुर्थे बंधुमरण शत्रुवृद्धिर्धनव्ययम् ॥५३॥ पञ्चमे पितृहानि च धनाप्तिसुतौ यश. ॥ षष्ठे रिपुसमृद्धि च जय बंधुसमागमम् ॥५४॥ अर्थवृद्धि स्त्रिया दारमरण नीचसेवनम् ॥ नीचस्त्रीसगमो मृत्यौ धननाश पराभवम् ॥५५॥ पराभवमनर्थं च धर्मे पापरुचिक्रिया ॥ धनव्यय च दशमे धनलाभ कुकर्म च ॥५६॥ लाभे धन सुख वस्त्र स्वर्णक्षेत्रादिसग्रहम् ॥ व्यये नेत्ररुज भ्रातृनाश च कुरुते कुज ॥५७॥

मगल का फल-१मे चपलतावश क्षत। २मे धनहानि। ३मे भ्रातृनाश, धनलाभ, सुख, यश। ४मे बन्धुमरण, शत्रुवृद्धि, धन का खर्च। ५ मे पितृहानि,धनसुख,पुत्र,यश प्राप्ति। ६ मे-शत्रुवृद्धि, जय, बन्धु-समागम, धनवृद्धि। ७ मे-स्त्री की मृत्यु,नीच सेवा नीच स्त्रीसग। ८ मे धनहानि, पराजय, अनर्थ। ९ मे पापवृद्धि पापकर्म धनव्यय। १० मे-धनलाभ कुकर्म। ११ मे धन सुख सुवर्णलाभ, भूमिलाभ। १२ मे नेत्ररोग, भ्रातृनाश करता है।। श्लोक ५३ से ५७ तक।।

बुध षष्ठेऽरिवृद्धि च युद्धे सति पराजयम् ॥ मृतौ बंधुविहीनत्व बधन व्ययमे व्ययम् ॥५८॥ भावोक्तफलवृद्धि तु परे तु कुरुते तथा ॥ गुरुशुक्रौ तृतीये तु शत्रुवृद्धि धनक्षयम् ॥५९॥ षष्ठे पराजय व्याधिमष्टमे बन्धन तथा ॥ रिःफे चोरक्षतत्व तु नेत्ररोगपराजयम् ॥६०॥ सप्तमे च चतुर्थे च सेनापत्यधनाप्ति ॥ सर्वसपत्समृद्धि च नवमे राजमपदम् ॥६१॥

बुध का फल-बुध ६ठे भाव मे शत्रुवृद्धि और लडाई होने पर पराजय। अष्टमभाव मे बन्धुहानि, बन्धन। १२ भाव मे खर्च करता है। अन्यभावो मे अन्यभावो की वृद्धि करता है।।५८।।

गुरु और शुक्र का फल-गुरु, शुक्र, तीसरे भाव मे हो तो शत्रुवृद्धि और धनक्षय करते हैं। छठे भाव मे पराजय तथा व्याधि। आठवे मे बधन करते है। १२वे मे चोरी नेत्ररोग पराजय कारक हैं। ४ तथा ७ मे सेनापतित्व, धनलाभ, सर्वसम्पत्ति वृद्धि और नवम भाव मे राजसम्मान सम्पत्ति देते है।। अन्य भावो मे भावोक्त फल की वृद्धि करते है।।५९ से ६१ तक।।

पूर्वोक्तफलसयोगमन्योऽप्यपि सम भवेत् ॥ कुजवद्रविवन्मद पापस्यश दल गत ॥६२॥ पादोनमेक मित्रार्धमित्रस्वर्क्षे च कोणभे ॥ उच्चे तु नीचे त्रिगुणमथ्यरौ द्विगुण तत ॥६३॥ अरौ सार्धं कमात्कालफलजस्तथैव निर्णय ॥ शुभैर्दृष्टे रवौ राजसेवाफलधनाप्ति ॥६४॥ शत्रुभि कलह दुःख रुज जठरनेत्रयो ॥ मित्रदृष्टौ जय बधुलाभ पापश्च रोगिनाम् ॥६५॥

शनि का फल सूर्य,मगल के समान ही जानना।। इनमे से कोई भी ग्रह मित्रक्षेत्री होने से

चतुर्थांश फल, अतिमित्रक्षेत्री तृतीयांशफल, स्वक्षेत्री हो तो ३ पाद, इसी प्रकार त्रिकोणी भी ३ पाद फल, उच्चराशि में सम्पूर्णफल समझना। नीचराशि का त्रिगुण हीन फल अधिशत्रु में द्विगुण और शत्रुक्षेत्री हो तो आधा फल करता है।।६२।।६३।।

दृष्टिफल-सूर्य पर शुभग्रहों की दृष्टि हो तो राजसेवा तथा धनप्राप्ति होती है। शत्रुग्रहों की दृष्टि हो तो कलह, दु:ख नेत्ररोग हो। मित्रग्रहों की दृष्टि हो तो जय, बंधु-लाभ हो। पापग्रहों की दृष्टि हो तो रोगी हो।।६४।।६५।।

धनहानिं शशी पापैः शिरोनेत्ररुजं तथा ॥ शत्रुभिः पापकरणं धननाशं गमागमौ ।।६६।।
शुभैररोगता सौख्यं धनलाभं च बंधुभिः ॥ मित्रलाभं जयं क्षेत्रदेशलाभं करोति हि ।।६७।।
पापैर्दृष्टः कुजः क्षेत्रधनधान्यादिनाशनम् ॥ शत्रुभिर्बन्धनं रोगं चाहवं दूरवासनम् ।।६८।।
शुभैस्तु विजयं देशक्षेत्रलाभं सुहृच्छुभम् ॥ मित्रैश्च धनसंसिद्धिं करोति हि न संशयः ।।६९।।
शुभैर्बुधो लिपिज्ञानं विद्यालाभं च कौशलम् ॥ मित्रैर्भूपाधनक्षौमरत्नलाभं च शत्रुभिः ।।७०।।
अतिसारं च दुर्बुद्धिं प्रतीकेषु सदोद्यमम्।।पापैर्महाविपादं च कुक्षौ शूलं च वर्द्धते ।।७१।।

चन्द्र पर दृष्टिफल-चन्द्रमा पर पापदृष्टि हो तो सिर में नेत्र में पीडा, धनहानि हो। शत्रुदृष्टि हो तो पापकर्म करता है, धनहानि, भ्रमण हो। (शुभाशुभमिश्रित दृष्टि हो तो मिश्रित फल हो) शुभदृष्टि हो तो नीरोगता सुख, बन्धुरागागम, धनलाभ, मित्रलाभ,जय,भूमि आदि का लाभ करे।।६६।।६७।।

मंगल पर दृष्टिफल मंगल पर पापदृष्टि से भूमि, धन, धान्यहानि तथा शत्रुदृष्टि हो तो बंधन, रोग, कलह करे। शुभदृष्टि हो तो विजय, पराक्रम, देश, भूमि, मित्रवर्ग से सुख हो। मित्रगृहदृष्टि होतो धनप्राप्ति हो।।६८।।६९।।

बुध पर दृष्टिफल बुध पर शुभदृष्टि हो तो विद्यालाभ, लिपिज्ञान हो। मित्रदृष्टि से धन, वस्त्र, रत्न लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो अतिसार रोग, दुर्बुद्धि, उद्योग तत्पर रहे। पापग्रह दृष्टि से महाक्लेश तथा कुक्षिशूल हो।।७०।।७१।।

गुरुः शुभैस्तु सदृष्टो धर्मकार्योद्यमं सुखम् ॥ जयं धनायतिर्मित्रैर्दारक्षेत्रादिसंग्रहम् ।।७२।। शत्रुभिः कुष्ठरोगं च त्वग्दोषकलहं रणम् ॥ पापैः पराजयं वृद्धे केदारादिवियोजनम् ।।७३।। शुभैः शुक्रः सुखं योषालाभं भूपा धनायतिम्। मित्रैस्तु पट्टबधादि देशलाभादि चाखिलम् ।।७४।। पापैः पराजयं योषावियोगं धननाशनम् ॥ शत्रुभिर्व्याप्यरोगं च मूत्रकृच्छ्रादिकं तथा ।।७५।। मंदः पापैस्तथा कुक्षिरोगं बन्धनकं क्षयम् ॥ शत्रुभिः शत्रुबाधां च पराभवमयामयम् ।।७६।।

गुरु पर दृष्टिफल गुरु पर शुभ दृष्टि हो तो उद्योग, सुख, जय, धन प्राप्ति हो। मित्रदृष्टि से स्त्री भूमिका लाभ हो। शत्रुदृष्टि हो तो कुष्ठ, त्वचारोग, कलह, संग्राम हो।।७२।।७३।।

शुक्र फल-शुक्र पर शुभदृष्टि से सुख, स्त्रीलाभ, अन्न धन की प्राप्ति करे। मित्रदृष्टि से भूमि आदि का लाभ हो। पापदृष्टि हो तो पराजय, स्त्रीवियोग, धननाश हो। शत्रुदृष्टि हो तो कष्टसाध्य रोग मूत्रकृच्छ्रादि हो।।७४।।७५।।

शनि फल-पापदृष्टि से-कुक्षिरोग, बन्धन, क्षय हो। शत्रुदृष्टि से बाधा, पराभव, रोग हो। शुभदृष्टि से रोग दूर हो। मित्रदृष्टि से बन्धु समागम हो॥७६॥

शुभैररोगतां मित्रैर्दृष्टो बंधुसमागमम् ॥ रवौ स्थानबले पूर्णे स्वदेशे विद्यया बली ॥७७॥ चंद्रे प्रभुतया भौमे ग्रामण्येन बुधे सति ॥ श्रौतया विद्यया वाऽप्यलिपिलेखनकर्मणा ॥७८॥ जनैर्धनैरमात्येषु बुद्धया च बलवान्गुरौ ॥ मद्दा स्वदेशराजस्तु कार्येणैव बली मतः ॥७९॥ शुक्रे स्वदेशमुख्यो वा त्वाधिपत्येन योषिताम् ॥ मंदे भृतकदासानां मुख्यः स्याद्बलवानपि ॥८०॥ उत्तैस्तु पीडितः प्रेष्यः स्थानवीर्योनितेषु तु॥समन्यूनाधिकाद्वीर्यादृदृष्टोत्कर्षात्फलं वदेत् ॥८१॥

सूर्यादि ग्रहों का स्थान बल से फल-सूर्य स्थान बल से पूर्ण बली हो तो अपने देश में ही विद्याबल से प्रख्यात हो। चन्द्रमा बली हो तो अधिकारी पद प्राप्त हो। मंगल बली हो तो ग्रामाधिकारी हो। बुध बली हो तो वेदविद्या तथा लेखन कर्म से प्रसिद्ध हो। गुरु बली हो तो निज देश में प्रतिष्ठित हो। शुक्र बली हो तो स्वदेश में प्रधान हो। शनि बली हो तो शरीर से पुष्ट तथा वैतनिकों में मुख्य हो, बलहीन हो तो दासत्व करे॥७७ से ८१॥ तक।

दिग्बलेनाधिके सूर्ये वाणिज्येन धनाप्यतिः ॥ यशश्च धनवृद्धिश्च चन्द्रे तु राजसेवया ॥८२॥ भौमे तु सेवया ख्यातिर्वेदाभ्यासेन सर्वदा ॥ बुधे धनाप्यतिः कृष्या यशः स्याद्बुद्धिमत्तया ॥८३॥ गुरौ धनाप्यतिस्तेन वीर्येण धनयुश्रुता ॥ राजकार्येण शुक्रे च वदान्यत्वेन वा यशः ॥८४॥ मंदे दासाधिपत्येन धनाप्यतिररिक्रमात् ॥ कालायनबलाधिक्ये रवौ भौमे शनैश्चरे ॥८५॥ मंत्रोपदेश-विधिना पाखण्डिपवसश्रयात् ॥ दासभावेन कृष्णादौ कृषितो विद्ययान्यया ॥८६॥ गुरौ शुक्रे बुधे पायोनिधिजे चाभिसंभवे ॥ विद्यया बाधने सत्यावलदिग्बलवृद्धितः ॥८७॥ नानाविधाप्यतिः प्रोक्ता इति चेष्टाधिकेषु तु ॥ कश्चिद्गवो यथापूर्वं विशेषादेव निर्णयः ॥८८॥ बलिष्ठो दायदःप्युक्तफलं सर्वं करोति वै ॥ न्यूनाधिकेनुपातेन फलमेव विचिन्त्यताम् ॥८९॥

सूर्यादिग्रहों का दिग्बल से फल-सूर्य दिग्बल से पूर्ण बली हो तो व्यापार से धनी और यशस्वी होता है। चन्द्रमा दिग्बल में पूर्णबली हो तो राजसेवा से प्रतिष्ठित और मंगल पूर्णबली हो तो वेदाभ्यास तथा सेवा से सुखी हो। बुध पूर्णबली हो तो बुद्धिमत्ता से यशस्वी हो और गुरु पूर्णबली हो तो धनी और कीर्तिमान् हो। शुक्र दिग्बल में पूर्णबली हो तो दानशीलता से यशस्वी हो। शनि पूर्णबली हो तो शूरवीरता से ख्यातिमान् होता है। कालबल तथा अयनबल से अधिक होने का फल–सूर्य, मंगल, शनि, कालबल तथा अयन बल में अधिक हो तो पाखण्ड तथा दास्य वृत्ति से निर्वाह हो। क्षीण चन्द्र बली हो तो खेती से निर्वाह। बुध, बृहस्पति, शुक्र तथा पूर्ण चन्द्र बली हो तो विद्या, धन से निर्वाह हो। सूर्यादि सभी ग्रह चेष्टाबल में बलवान् हो तो अनेक विद्या से धन की प्राप्ति होती है॥८२-८९॥

सौम्येष्विष्टफलाधिकेषु नितरां धीमान्सुशीलो गुणी॥मित्रेष्वेवमतीव धर्मनिरतो दाता सुखी सत्त्ववान् ॥ पापेष्वेवमथापि पापनिरतः शत्रुष्वयो शत्रुभि-र्वीर्येणाप पराजयो जय इमात्य-र्ययतःप्राप्नुयात् ॥९०॥

ईष्ट, कष्ट बलाधिक का फल बुध गुरु शुक्र तथा चन्द्रमा ईष्ट बल में अधिक हो तो महाधनी, सुशील धर्मरत दानशील सुखी और बलवान् होता है। पापग्रह ईष्टबल में अधिक हो तो पापवुद्धि शत्रुओं से पराजय पाता है॥९०॥

अधिकेष्वशुभेष्वेवमनिष्टाख्यफलानि तु ॥९१॥ व्याधिभिः कलहैर्मित्रैः पीड्यते नात्र संशयः ॥ एवं पापेषु दुश्चेष्टः पातकी भवति ध्रुवम् ॥९२॥ शत्रुष्वेव सदा रोगी मित्रैर्बन्धुविवर्जितः ॥ सर्वद्वेष्टृबलाधिक्ये सर्वत्राफलदो ग्रहः ॥९३॥ शुभेषु च फलेष्वेव स्पष्टमेव फलप्रदः ॥ अत्यनिष्टफलः खेटः शुभेषु त्वफलप्रदः ॥९४॥ अनिष्टफलदोऽन्येषु खेटः सर्वत्र सर्वदा ॥ स्वोच्चादिस्थानपदस्थाः स्युस्तथा दिग्वर्गगा अपि ॥९५॥ क्षेत्रपुत्रकलत्रादिधनधान्यसमृद्धिदाः ॥ यदि मित्रादिवर्गस्था धनधान्यविवर्द्धनाः ॥९६॥

अन्य फल पापग्रह बलाधिक हो तो रोगी पातकी दुश्चेष्टावान होता है। शत्रुगृही हो तो सदा रोगी मित्र-बन्धु रहित सर्व द्वेषी होता है। उच्च राशि मूल त्रिकोण स्वक्षेत्र मित्रक्षेत्र अतिमित्र क्षेत्र अथवा समक्षेत्री हो तो स्त्रीपुत्र धनधान्य की समृद्धि होती है॥९६॥

व्याधिदुर्गतिदा प्रोक्ता दशारम्भे तु शीतगोः ॥ स्वोच्चादि संस्थिता दायप्रारंभे शुभदा दशा ॥९७॥ अन्यथाऽशुभदा प्रोक्ता प्रारंभे ज्योतिषां दशा ॥ केंद्रादिसंगता खेटा दशायां शुभदा सदा ॥९८॥ द्रव्यकर्मगुणा यस्य स्वभावाः कथिताः पुरा ॥ ते सर्वे स्वदशाकाले योज्या भावदृगादिषु ॥९९॥ भावदृष्टिबलेष्टानि फलानि कथितानि च ॥भावाध्यायोक्तद्रव्यादि- फलान्यत्रैव योजयेत् ॥१००॥

दशा का फल चन्द्रमा की दशा आरम्भ में व्याधि दुर्गति देती है। इसी प्रकार उच्चादि ६ स्थानों में जो ग्रह हो उनकी दशा प्रारम्भ में शुभ फल देनेवाली होती है। अन्यथा अनिष्टफल देनेवाली होती है। केन्द्रादि शुभ स्थान में स्थित ग्रह की दशा अपनी दशा के सम्पूर्ण काल में शुभ फल देनेवाली है। सूर्यादिग्रहों के गुण कर्म स्वभाव द्रव्य जो पूर्व कह है उनका विचार करके अपने २ दशाकाल में फल की योजना करनी चाहिए। भावबल षड्वर्ग बल इष्टकाष्टबल का फल भी दशाकाल में ही होता है॥९७ से १०० तक॥

आदौ बलफलं प्रोक्तं ततो दृष्टिफलं स्मृतम् ॥ ततो भावफलं प्रोक्तमिष्टानिष्टफलावहम् ॥१०१॥ चेष्टाबलफलं चादौ स्थानवीर्यं ततो भवेत् ॥ दिग्बलं च ततः प्रोक्तं कालायनबले ततः ॥१०२॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे अब्दचर्यादि फलवर्णनं नाम उनविंशोऽध्यायः ॥१९॥

बलों का क्रम प्रथम निसर्गबल मुख्य है। तदनन्तर दृष्टि बल बाद भावजन्य इष्टानिष्ट

बल, चेष्टा बल, स्थान बल, कालबल, अयनबल ये उत्तरोत्तर बलवान् हैं।।१०१।।१०२।।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भाव प्रका० फलवर्णननाम ऊनविंशोऽध्याय ।।१९।।

अथ मासचर्याफलमाह

भावांशे समतां गतः खलु खगः पूर्णं विधत्ते फलं संधिस्थो न फलप्रदोऽन्तरगतेस्त्रैराशिकेनैव स ।। भावन्यूनमथ ग्रहस्य गुणयेदंशादिकं चार्णवैर्हित्वा चास्य च संधितोऽधिकमथो प्रोक्तं फलं भावजम् ।।१।। ऊर्ध्वमुखो रवियुक्तो राशिसमेतस्त्वधोमुखो ज्ञेयः ।। तिर्यङ्मुखोऽखिलयुतो राशिभावाः परेऽप्येवम् ।।२।।

मासचर्याफल

भावफल-जो ग्रह जिस भाव में है उस भाव के अंश के समान ग्रह के अंश हो तो पूर्ण फल होता है। संधि के अंश के समान अंश हो तो निष्फल जानना। भाव के अन्य अंशों में ग्रह हो तो अनुपातसे फलकी न्यूनाधिकता जानना। भावांशसे ग्रहांश कम हों तो ४ से गुणा करना। भावांश से ग्रहांश अधिक हो तो ऋण, नहीं तो धन करना, तो भावफल स्पष्ट होता है। जो भाव सूर्ययुक्त हो वह भाव ऊर्ध्व मुख, ग्रह रहित हो तो अधोमुख अन्य ग्रहयुक्त हो तो तीर्यङ्मुख होता है।।१-२।।

अन्यजातीययोगे तु तत्तद्भावफलं वदेत् ।। स्वजातीयेषु योगेषु त्रिंशांशाः भवस्पृतः ।।३।। तत्त्वभाकृतिरेकाक्षिच्छन्दस्तत्त्व चतुस्त्रयः ।। एकोनविंशतिच्छन्दो नवाक्षी षट् नपस्तथा ।।४।। वेदेषवो नृपाः स्थाने भावसंख्या प्रकीर्तिताः ।। एकत्रिंशत्त्रयस्त्रिंशद्भूरामि त्रिंशत्तथैव च ।।५।। एकत्रिंशद्द्विनेत्रे च मुनिरामाः खपावकाः ।। भानि त्रिंशतिरेकद्वौ खवेदाः करणस्य तु ।।६।।

भाव का जो शुभाशुभ फल भाव दृष्टि के अनुसार पूर्णफल होने पर ३० अंश जानना।।३।।

बारह भावों के स्थानाङ्क-क्रम से १२ भावों के ये स्थानाङ्क हैं २१।२७।२१।२६।२५।३४।१९।२६।२९।३६।५४।१६।।४।।

भावों के कर्णाङ्क क्रम से ३१।३३।२७।३०।३१।२२।३७।३०।२७।२०।२१।४०।। श्लो० ५।।६।।

विषमाया क्रमादोजे युग्मे स्याता शुभाशुभे ।। समाया भवतस्तद्वत्पापसौम्यफले क्रमात् ।।७।। ओजे व्याधिः समे हानिर्यावत्तु दशकं भवेत् ।। परतः पञ्चकं चौजे समे व्याधिरथान्यथा ।।८।। यावत्तु दशकं प्राग्वत्तत्तत्तद्वत्फलं वदेत् ।। शिरोरोगाक्षिरोगाश्च रक्तासृक्कामलाज्वरः ।। ग्रहणी शीतको मेहप्लीहो गुल्मलताः क्रमात् ।।९।। रत्नैर्धान्यैश्च हेमैश्च गोभिः क्षेत्रैश्च राशिभिः ।। दासैश्च महिषैरुष्ट्रैर्गजाश्वैर्वृद्धयः स्मृताः ।।१०।।जात्या देशस्य कालस्य स्वानुरूपं फलं वदेत् ।। तत्तद्भावानुसारं च ग्रहद्भावात्फलं वदेत् ।।११।। उच्चादिषु नवस्वेव कलांशादिषु यत्फलम् ।। भाग्याध्यायोक्तमप्यत्र योजयेत्तु विशेषतः ।।१२।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे मासचर्याफल वर्णननाम विंशोऽध्याय ।।२०।।

स्थानकरण के सम विषम संख्या के अनुसार शुभाशुभ फल-विषम राशि मे स्थान संख्या विषम हो तो शुभ होती है। सम राशि मे स्थान संख्या सम हो तो अशुभ होती है। और विषम राशि मे कर्ण संख्या सम हो तो अशुभ और विषम हो तो शुभ होती है।।७।। विषम राशि मे स्थान करण संख्या १० तक हो तो व्याधि का नाश हो। सम राशि मे १० तक हो तो हानि। १५ तक व्याधि, २५ तक सम राशि मे व्याधि, विषम राशि मे हानि।।८।। विषम राशि मे स्थान करण संख्या २६ हो तो सिरदर्द, २७ मे नेत्र रोग, २८ मे रक्त विकार, २९ मे कामला ज्वर, ३० मे ज्वर, ३१ मे संग्रहिणी, ३२ मे शीतज्वर, ३३ मे प्रमेह, ३४ मे प्लीहा, ३५ मे गुल्म रोग होता है।।९।। सम राशि मे स्थान करण संख्या ३६ हो तो रत्न वृद्धि, ३७ मे धान्य वृद्धि, ३८ मे सुवर्ण वृद्धि, ३९ मे पशु वृद्धि, ४० मे भूमिवृद्धि, ४१ मे राजा से लाभ, ४२ मे दास वृद्धि, ४३ मे पशु वृद्धि, ४४ मे निकृष्ट पशुवृद्धि, ४५ मे उत्कृष्ट पशु वृद्धि ।।१०।। स्थान करण संख्या का फल देश, काल, जाति, स्वरूप, स्वभाव आदि के अनुसार समझना चाहिए। पूर्वोक्त उच्चादि स्थानगत फल, कलाशादि स्थित ग्रह फल, भाग्याध्यायोक्त सर्व फल स्थान करण विचार में भी युक्त करना चाहिए। ।।७-१२।।

इति श्रीवृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० मासचर्याफल
वर्णन नाम विंशाऽध्याय ।।२०।।

अथ दिनचर्यादिफलमाह

अर्केन्दुगुरवः शुक्रः क्रमादन्ये बलक्रमात् ।। भवति स्थानदाः खेटाश्चत्वारश्च यदैकदा ।।१।।
धनादीनां यथा लब्धिः पञ्च चेत्पूज्यतायुत ।। आरोग्य वस्त्रलाभश्च षट्सु षट्दस्य सन्धनम् ।।२।।
सप्त खेटाज्यलाभः स्यादेव करणदा यदि ।। धनहानिस्ततो व्याधिस्ततस्तु विपदादयः ।।३।।
सप्तभिर्मरणं प्रोक्तमक्षाभावे मृतिर्भवेत् ।। तत्र तिष्ठति चेत्खेटे त्वन्यस्मिन्यदि वामतः ।।४।।
उच्चसंख्याधिका भराश्चद्रस्य स्थानदा परे ।। शुभाख्या शुभदाः प्रोक्ता राशिमात्र क्रमात्फलम् ।।५।।

स्थानादिबल से ग्रहो का फल-सूर्य, चन्द्रमा, गुरु, शुक्र और मंगल, बुध, शनि, एक समय स्थानप्रद हो तो धन प्राप्ति। पंचम भाव मे स्थानप्रद हो तो पूज्य, लाभ, धन प्राप्ति होती है।। ६ ग्रह स्थानप्रद हो तो राजा होता है। ७ ग्रह रेखाप्रद हो तो राज्य लाभ होता है।

करणफल-४ ग्रह करणप्रद हो तो धन हानि ५ हो तो व्याधि, ६ हो तो विपत्ति, ७ हो तो मृत्यु, करण का सर्वथा अभाव हो तो भी मृत्यु। चन्द्रमा वा उच्चांश ३ है। इससे अधिक हो तो स्थानफल दायक जानना।।१ से ५ तक।।

होराशास्त्रमिदं सर्वं भाषितं तव सुव्रत ।। पुण्यं यशस्यं धन्यं च त्रिकालज्ञानकारणम् ।।६।।
विनामनुतपस्ये च शास्त्रज्ञानेन केवलम् ।। हस्तामलकवत्सर्वं जगतां लोकयेत्फलम् ।।७।।
पुत्राय शिष्याय च धीमते च तपस्विने मन्त्रविदे च दात्रे दद्यादिमंशास्त्रमहासमुद्रं यथैवशम्भु शिवस्वेपयोधिम् ।।८।। बुद्धिहीनाय दाम्भाय दाम्भिकाय त्वमर्षिणे ।। न दद्याद्यदि दद्याच्चेद्विद्या स्वस्य विनश्यति ।।९।। एवं ते कथितं शास्त्रं त्वयि स्नेहाद्द्विजोत्तम ।। जातकाश विद्याश किं भूयस्त्वं श्रोतुमिच्छसि ।।१०।।

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे दिनचर्यादिफलवर्णनं
नाम एकविंशोऽध्यायः ।।२१।।

शास्त्र का फल और उपसंहार-हे मैत्रेय! यह होराशास्त्र तुमको कहा, यह पवित्र, कीर्तिदाता, धनधान्य सम्पादक, भूत, भविष्य, वर्तमान काल का शुभाशुभ सूचक है। इसका ज्ञान प्राप्त करके मन्त्रादि द्वारा देवता की आराधना करे। हथेली पर रखे हुए आवले के समान सम्पूर्ण जगत् का शुभाशुभ फल इस शास्त्र से जाना जाता है। यह शास्त्र आज्ञाकारी पुत्र को, योग्य शिष्य को, मंत्रवेत्ता पुरुष को देना चाहिए। यह शास्त्र समुद्र के समान अगाध है। यह शास्त्र दम्भी, क्रोधी, दुष्ट को नहीं देना चाहिए, देने से विद्या नष्ट होती है। पूर्वोक्त दोष रहित बालक भी हो तो यत्न से पढ़ाना चाहिए। जैसे कि शिवजी ने तपस्वी अभिमन्यु को दिया। हे मैत्रेय! तुम्हारे स्नेह से यह जातकांश तुमको कहा और क्या सुनने की इच्छा है सो कहो ।।६-१०।।

इति श्रीबृ० पा० हो० शा० उत्तरखण्डे भा० प्र० दिनचर्याफलवर्णन
नाम एकविंशोऽध्याय ।।२१।।

अथ प्रश्नप्रकरणमाह

मैत्रेय उवाच-भगवन्प्रश्नशास्त्रं तु सूचिकानाप्रकाशितम् ।। कलौ युगे तु मन्दाना यज्ज्ञातु तद्वदस्व मे ।।१।। कृते युगे तु धर्मस्य पूर्णत्वात्तपसान्विता ।। सर्वे जानन्ति भूतं च भवद्भावि द्विजोत्तम ।।२।। त्रेतायां तपसा युक्ता केचिज्जानन्ति वै द्विजा ।। पश्यन्ति द्वापरे शास्त्रज्ञानेन तपसाऽपि च ।।३।। कलौ युगे तु धर्मस्य पादमात्रव्यवस्थिति ।। तप. शक्त्या तु तज्ज्ञातु न शक्ता मानवा भुवि ।।४।।

प्रश्नप्रकरण

मैत्रेयजी ने कहा-हे भगवन्! आपने जो प्रश्नज्ञान का उपाय कहा वह अतिदुरूह सूक्ष्मबुद्धि गम्य है, अत इस कलियुग मे उसका ज्ञान होना कठिन है। जो सरल प्रश्नशास्त्र विषयक ज्ञान हो सो कहिये।।१।। श्रीपराशरजी ने कहा-हे मैत्रेय! सतयुग में धर्मपूर्ण होने से प्रायः सभी तपस्वी होते थे, अत भूत भविष्य का ज्ञान रहता था त्रेता में भी कुछ तपस्वी शास्त्र बल से भूत भविष्य जानते थे, द्वापर मे कुछ तपोबल और शास्त्रज्ञान से युक्त थे अत भूत भविष्य ज्ञान मे समर्थ थे, परन्तु इस कलियुग मे धर्म की तो १ पादमात्र स्थिति है, अत तपोबल और ज्ञानबल क्षीण हुए मनुष्य शास्त्रज्ञान मे कुशल नहीं हैं। अत तुम्हारा यह प्रश्न उचित ही है।।२।।३।।४।।

तथाऽत्र परमं शम्भुर्लोकानुग्रहकाम्यया ।। लक्षीकृत्य निजां शक्तिं विद्यामाधात्स ईश्वरः ।।५।। फलावधि च भक्ताना त्रिकालज्ञानदायिनी ।। वेदादि वाग्भवं गौरिवदद्वयमयो गिरि ।।६।। परमैश्वर्यसिद्ध्यर्थं वाग्भवं स्यादयं मनु ।। सर्वज्ञेति पदं पूर्वं नाथ त पार्वतीपते ।।७।। सर्वलोकगुरो पश्चाच्छिवेति द्वयमक्षरम् ।। शरण तु पदं पश्चात्त्वा प्रपन्नोऽस्मि तत्परम् ।।८।।

अत शास्त्रज्ञान के लिये उपाय कहते है कि इस पृथ्वी मे मन्दबुद्धि पुरुषो के ज्ञान के लिए महादेवजी ने परोपकारार्थ शिव शक्ति दोनो के मन्त्र का निर्माण किया। वे मन्त्र ये है-"ॐ ऐं गौरि वद २ गिरि परमैश्वर्य सिद्ध्यर्थं ऐं ।।" यह शक्ति मन्त्र और "ॐ सर्वज्ञ नाथ पार्वती पते शिव, शरणं त्वा प्रपन्नोऽस्मि पालय ज्ञानं प्रदापय।" यह शिव मन्त्र है।।५-८।।

पालयेति पद ज्ञान प्रबापय तत परम् ॥ ऋषिस्तु दक्षिणामूर्तिर्गौरी परमेश्वरी तथा ॥९॥ सर्वज्ञश्च शिवो देवो गायत्री च्छद ईरितम् ॥ अनुष्टुप् च षडग स्याद्बीजभावेन हृदादि च ॥१०॥ अनेनाभ्या द्विजश्रेष्ठ बुद्धिस्तु विमला भवेत् ॥ जपमात्रेण सिद्धि स्यात्त्रैकालत्व प्रकाशते ॥११॥ उद्यानस्यैकवृक्षाध परे हैमवते द्विज ॥ क्रीडतीं भूषिता गौरीं शुक्लवस्त्रां शुचिस्मिताम् ॥१२॥ देवदारुवने तत्र ध्यानस्तिमितलोचनम् ॥ चतुर्भुज त्रिनेत्र च जटिल चद्रशेखरम् ॥१३॥

दोनो मन्त्रो के छन्द आदि "अनयो मंत्रयो दक्षिणा मूर्ति ऋषि गौरी परमेश्वरी सर्वज्ञ शिवश्च देवते गायत्र्यनुष्टुभौ छन्दसी मम त्रिकालदर्शक ज्योति शास्त्रज्ञानप्राप्तये जपे विनियोग ।।" यह विनियोग करके 'ऐं' इस बीज मत्र से ही करन्यास, अगन्यास करे। इन दोनो मन्त्रो के पुरश्चरण करने से बुद्धि निर्मल होकर इस शास्त्र का यथार्थ ज्ञान होगा।।९।।१०।।११।। न्यास के बाद मूलोक्त श्लोक पाठ करके ध्यान करे। यथा-हिमालय पर्वत पर अति सुन्दर बगीचे मे बट वृक्ष के नीचे उत्तम आसन पर स्थित शोभायुक्त, श्वेतवस्त्र सम्पन्न, हसमुख, श्रीभगवती गौरी तथा ध्यानस्थ त्रिनेत्र चतुर्भुज भालचन्द्र, जटाधारी, सर्वजगत्पिता, देवाधिदेव महादेव साक्षात् परब्रह्मस्वरुप शिव का ध्यान करे।।१२।।१३।।

शुक्लवर्ण महादेव ध्यायेत्परसमीश्वरम् ॥ द्विविध गणित ज्ञात्वा शाखास्कध विमृश्य च ॥१४॥ होरास्कधस्य शकले श्रुत्वार्थमवधार्य च ॥ वाग्मी द्विजवरो य स्यान्न वध्या तस्य भारती ॥१५॥ अलुब्धो नैष्ठिक शुद्धो विनयप्रश्रयान्वित ॥ रत्न स्वर्ण धन वस्त्र पुष्पमूलफलानि तु ॥१६॥ दैवज्ञपुरतो दत्त्वा पृच्छेदिष्ट प्रियान्वित ॥ अथ प्राङ्मुख आसीन सुचिर्दैवविदप्रत ॥१७॥ तिर्यगूर्ध्वाश्रितास्तु रेखा रज्जुसमा लिखेत् ॥ एकीकुर्यात्तु चत्वारि मध्यस्थानि पदानि च ॥१८॥ तत्र पद्म लिखेद्रेखापद्ममध्य सकर्णिकम् ॥ ईशान्यकोष्ठादारभ्य मीनाद्या राशय क्रमात् ॥१९॥ मेषवीथी वृषाद्यास्तु कौर्प्याद्या मिथुनस्य तु ॥ वीथयो मीनमेषौ तु तुलाकन्ये वृषस्य तु ॥२०॥ आरूढाद्वीथिभि यावत्तावच्छत्र तु लग्नत ॥ आरूढराशिर्लग्न चेच्छत्र चापि भवेत्तथा ॥२१॥ जन्मलग्न समासाद्य यद्यत्प्रोक्त तु जातके ॥ तत्सर्व प्रश्नलग्नेन प्रश्नकालाद्वदेद्बुध ॥२२॥

इस प्रकार उपासना करके गुरुद्वारा भूगोल खगोल की गणित का अभ्यास करके इस होराशास्त्रका जातकफल सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करे वह सर्वहितैषी,मिष्टभाषी ब्राह्मण दैवज्ञ और त्रिकालदर्शी होता है। उसकी वाणी मिथ्या नही होती।।१४।।१५।। इसी प्रकार पूछनेवाला भी निष्ठावान्, निष्कपट, नम्र लोभरहित होकर द्रव्य (भेट) रखकर, यदि दरिद्र हो तो फल पुष्प आदि दैवज्ञ को पूजित करके प्रसन्न चित्त से प्रश्न करे।।१६।। दैवज्ञ को चाहिए कि-पूर्वाभिमुख बैठकर प्रथम राशिचक्र लिखे और आरूढ लग्न का विचार करे। सो इस रीति से कि-पृच्छक जिस दिशा मे बैठा हो वह आरूढ लग्न जाने या पृच्छक जिस राशि का स्पर्श करे वह आरूढ लग्न जाने और वृषादि चार राशि मे मेषवीथी और वृश्चिकादि चार राशि मिथुन

वीथी तथा शेष राशि वृषवीथी मे जानना। आरूढ लग्न से प्रश्नलग्न तक जो सख्या हो उतनी सख्या की राशि बीथी मे देखना, उस वीथी की राशि छत्र सज्ञक होती है।।श्लोक० १७ से २२ तक।।

वीथीज्ञानचक्रम्		
२	८	१
३	९	१२
४	१०	७
५	११	६
मेष	मिथुन	वृष

अथ राशिचक्रम्			
१२	१	२	३
११			४
१०			५
९	८	७	६

यत्कालावधि लग्न तत्तत्कालावधि चेतिस्यते ॥ तेषा बलवता चैव निर्णय स्यायुष स्मृत ॥२३॥ आद्यद्रेष्काणमत्य च मृत्युद च क्रमाद्भवेत् ॥ मृगादिकर्कटान्ता च मीनस्यारूढलग्नत ॥२४॥ लग्ने पृष्ठोदये क्रूरवेश्मास्तव्ययगा यदि ॥ धने धर्मे कुजे मदे चद्रे रध्रे मृतिर्भवेत् ॥२५॥ पापैर्दुर्धरे जाते लग्नकामगृहस्थिते ॥ चद्रेऽर्के च विलग्नस्थे म्रियते व्याधिना भृशम् ॥२६॥

आरूढलग्न से आयु निर्णय तथा द्रेष्काण फल—तत्काल लग्न से आयु का निर्णय करे। मकर, वृश्चिक, कर्क, मीन इनका आरूढ लग्न से आद्यन्त द्रेष्काण हो वह लग्न मृत्युकारक होता है।।२३।।२४।। प्रश्नकाल मे पृष्ठोदय लग्न हो लग्न से पापग्रह ४।७।१२ स्थान मे या २।९ मे शनि मगल हो और ८ मे चन्द्रमा हो तो मृत्युकारक होता है।।२५।।

अन्य योग—पापग्रहो से दुरुधरा योग हो, ४।७ मे चन्द्रमा और लग्न मे सूर्य हो तथा प्रश्न समय मे राहुकाल का समायोग हो तो व्याधि से मृत्यु होती है।।२६।।

राहुकालसमायोगे मरण निश्चित भवेत् ॥ मेषाद्व्युत्क्रमतो राहुर्वृषात्काल क्रमाच्चरेत् ॥२७॥ राशौ राशौ तु पचाशद्भोगकालो विनाडिका ॥ अर्कोदयादितश्चोभौ भुजाते च पुन पुन ॥२८॥ एकाष्टचन्द्रिरामेषु षडष्टौ नाडिका क्रमात् ॥ अर्कवारादितो राहू राशावेवमुदीरित ॥२९॥ राहुरुत्क्रमश प्राच्या कालश्च क्रमशश्चरेत् ॥ उभौ सार्धविनाड्येन राशिषु द्वादशस्वपि ॥३०॥ इन्द्रेद्वाग्निनिशाचरशम्बरीशवायव ॥ एद्राग्निजलेशेशपापकेद्रयमास्थित ॥३१॥ रक्षो वायुस्ततोऽग्नीशयमवारुणराक्षसा ॥ वायुसोमशचीनाथरक्षोऽग्निजलपेदव ॥३२॥ वाय्वीशेद्रयमा पश्चाद्युग्मेद्रौ च निशाचर ॥ मरुद्वरुणचद्रेशपावको वरुणो यम ॥३३॥ वायुचद्रशशीद्राग्निराक्षसाश्च तत परम् ॥ वायुरक्ष शशीद्रेशपावकातकवारुणा ॥३४॥

राहु काल समायोग का विचार—'राहु' की गति वक्र है और 'काल' की गति मार्गी है। सूर्योदय

से ५०-५० पल प्रतिराशि का भोग करते है। अत एक राशि पर दिन रात मे वारम्बार समायोग होता है। सूर्यादि वारो मे १।२।३।४।५।६।८ घटिकाओ के हिसाब से 'राहु' पूर्व आदि दिशाओ मे विपरीत क्रम से 'काल' ग्रह मार्गी क्रम से २॥–२॥ घटी (या १-१ घटा) चलते है। वारके क्रम से दिशा का सचार क्रम--रविवार को पूर्व से, सोमवार को उत्तर से, मगल को आग्नेय से, बुध को नैर्ऋत्य से, गुरु को दक्षिण से, शुक्र को पश्चिम से, शनि को वायु कोण से १-१ घटा क्रम, व्युत्क्रम से चलते है॥ रविवार को पूर्व उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम। सोमवार को ईशान, उत्तर, पश्चिम ईशान दक्षिण। मगल को नै० वा० आग्ने० ईशा० दक्षि० क्रम से। बुध को–वा० उत्त० पू० नै० द० अग्नि० प० उत्त० क्रम से। गुरुवार को वा०ई० पू० द०प०नै० इस क्रम से। शुक्रवार को वा०प०उ०ई०अ०प०द० इस क्रम से, शनिवार को वा०ई०उ०पू० अग्नि० नै० वा० इस क्रम से अथवा-उ० पू० ई० आग्ने० द० प० इस क्रम से चलते है॥२७-३४॥

अर्कवारादितो वाम राहु सचरति क्रमात् ॥ रुद्र समीर सोमाग्नी यमोऽथ निर्ऋतिर्जलम् ॥ नक्षत्रेऽपि च वारे च तिथौ चोत्क्रमत क्रमात् ॥३५॥ अतिमादादिमाद्राहु कालश्च चरतस्तथा ॥ द्वयोर्योगे तु मरणमेकस्मिन्व्याधिरुच्यते ॥३६॥

नक्षत्र, तिथि, वार क्रम से सचरण–

सचरण दिशाओ का क्रम–ईशान वायु उत्तर आग्नेय दक्षिण नैर्ऋत्य, पश्चिम इन ७ दिशा विदिशाओ मे अश्विनी से वर्तमान नक्षत्र तक जानना। राहु अतिम दिशा मे उलटा और काल आरभ से क्रम से चलता है। नक्षत्र तिथि वार पर चलाना। यदि वर्तमान (प्रश्न दिन) दोनो का सयोग हो तो मृत्यु तथा एक का योग हो तो व्याधि जानना ॥३५॥३६॥

नृपा मूर्छा शरास्तत्त्व तिथिषोडश पच च ॥ द्वितीये त्वष्टमे भावस्त्वतरे त्वनुपातत ॥३७॥ नागाब्धेषु गुणा रुद्रा वाजिवेदागपक्तय ॥ दशपचाष्टका मेषाद्रश्मय सप्रकीर्तिता ॥३८॥ एकयोगे ॥ सर्वेषु व्याधिर्द्वाभ्या भवेन्मृति ॥ लक्ष्मीयोगेषु सर्वेषु व्याधिस्तस्य नवाऽपि वा ॥३९॥ वैधृतौ च व्यतीपाते सार्पभेतिमसज्ञिते ॥ कुलीरे विपनाडीषु सूर्यदुष्टेषु पचसु ॥४०॥ पापयुक्ते च नक्षत्रे राशौ तत्सयुतेऽपि च ॥ सधौ च मासशून्यर्क्षे तिथिराशिषु जन्मभे ॥४१॥ व्ययाष्टमे च क्षीणेदौ शत्रुग्रहनिरीक्षिते॥ पाद पष्ठ च जघा च जानु नाभि च गुल्फके ॥४२॥ कर्णौ च चक्षुषी भालमास्य कठ स्पृशेद्यदा ॥ व्याधिर्वा म्रियते तद्वन्मृति राशि स्पृशेत्तु वा ॥४३॥ अष्टमर्क्ष स्पृशेद्यदा कलाशादिषु वा तथा ॥ त्रिपद्वधप्रत्यूषे च सेनाश ऋक्षमेव वा ॥४४॥ सस्पृशेत्प्रश्नकाले तु व्याधिर्वा तस्य वा मृति ॥४५॥

१२ भावो की रश्मि– द्वि० १६, तृ० २१, च० ५ प० २५, ष० १५, स० १६, अ० ५ रश्मि है, अन्य भावो की पूर्व कथित लेना। बारह राशियो की रश्मि–क्रम से–८।८।५।३।११।७।४।६।१०।१०।५।८ है॥अपवाद॥ ये जो मृत्युयोग कहे गये है इनमे यदि प्रश्नलग्न मे शुभयोग या धनयोग भी हो तो मृत्यु न होकर केवल व्याधि या सुख ही होता है॥३७॥३८॥३९॥ यदि प्रश्नकाल मे वैधृति, व्यतिपात, आश्लेषा, रेवती, सर्प नवाश,

विषघटी तथा म० बु० गु० शु० श० पापग्रह युक्त नक्षत्र सध्या, प्रात या मध्याह्न काल, मास शून्य तिथि, वार, नक्षत्र, या जन्म नक्षत्र हो अथवा प्रश्नलग्न से ८।१२ मे चन्द्र हो या शत्रुदृष्टि हो। काल—राहु समायोग हो, तो व्याधि या मृत्यु होती है। अथवा राहु अष्टम राशि मे या षोडशांश मे हो या 'विपत्' तारा हो वैनाशिक नक्षत्र मे हो व्याधि या मृत्यु हो॥४०-४५॥

शिरोललाटभ्रूनेत्रनासाकर्णकपोलकाः ॥ ओष्ठ च चिबुकं कंठमसौ हृदयमेव च ॥४६॥ पार्श्वौ च वक्षः कुक्षिश्च नाभिश्च कटिरेव च ॥ जघनं च नितंबं च लिङ्गमण्डं च बस्ति च ॥४७॥

नक्षत्र क्रम से श्लोकोक्त २७ अंग—सिर, ललाट, भ्रू, नेत्र, नासिका, कर्ण, कपोल, ओष्ठ, ठोडी, कंठ, कंधे हृदय॥४६॥ पांसू, वक्ष, कुक्षि, नाभि, कटि, जांघ, नितंब, उपस्थ, अंड और बस्ति, ये अंग नक्षत्र पर से जानना॥४७॥

ऊरू च जानू जंघा च गुल्फांघ्री चाश्विभात्क्रमात् ॥ तैलाभ्यक्तोऽथ वा शुद्धो जलगर्तसमीपगः ॥ प्रष्टा दैवविदे चाथ मरणं तस्य निर्दिशेत् ॥४८॥ लग्नत्रिसुतकामारिधर्मकर्मायगः शुभः ॥ रोगशांतिकरा नोचेद्रिपुनीचग्रहस्थिताः ॥४९॥ एषु पापा मृतिकरा नोचेत्स्वर्क्षोच्चमित्रगाः ॥ यस्य यस्य शुभं चाथ रिःफस्थानगताः शुभाः ॥५०॥ यद्वा त्रिकोणकेंद्रस्थास्तस्य तस्य शुभप्रदाः ॥ मृगकर्क्यादितः सूर्यो राशिपूर्वापरार्धतः ॥ शनिशुक्रारचंद्रज्ञगुरवः शिशिरादिषु ॥५१॥

यदि प्रश्नकर्ता तैलाभ्यक्त, सूतकवाला, तालाब के पास बैठा हुआ हो तो पृच्छक की मृत्यु होती है॥४८॥ प्रश्नलग्न से ५।३।६।९।१०।११ इन भावो मे शुभग्रह होतो रोग-शान्ति होगी और पापग्रह हो तो मृत्यु होगी। परन्तु शुभग्रह बलहीन तथा पापग्रह बलवान न हो॥४९॥ जन्मलग्न या प्रश्नलग्न मे १।५।७।९।१०।११ स्थानो मे शुभग्रह हो तो शुभदायक होते हैं॥५०॥ प्रश्नलग्न या जन्म-लग्न से जन्मसमयकाज्ञान-कुंडली मे सूर्य मकर से ६ राशि तक हो तो उत्तरायण कर्कादि ६ राशि तक हो तो दक्षिणायन जानना। इसी प्रकार मकर आदि ६ राशि के पूर्वार्द्ध मे शनि हो तो शिशिर, शुक्र हो तो वसंत, मंगल हो तो ग्रीष्म, चन्द्र हो तो वर्षा, बुध हो तो शरद् गुरु हो तो हेमन्त जानना, कर्कादि ६ राशि के उत्तरार्द्ध मे पूर्वोक्त ग्रहो मे पूर्वोक्त ऋतु जानना॥५१॥

अर्के ग्रीष्मस्ततोऽन्यैर्वा वाऽयनाद्धुरेव च ॥ शुक्रारमंदचंद्रज्ञजीवाश्च परिवर्तिताः ॥५२॥ लग्नद्रेष्काणपाः प्रोक्ता नवांशेनैव चापरे ॥ तत्पूर्वपरतो मासौ तिथिः स्याद्धुपाततः ॥५३॥ लग्नत्रिकोणगो जीवो नवांशस्थोऽथ वा भवेत् ॥ ज्ञात्वा वयोनुरूपेण ह्यनुमानवशात्समाः ॥५४॥ सूर्यस्थितांशतुल्यां वा तिथिं प्रोवाच भार्गवः ॥ राशौ रात्रिदिवाख्ये च जन्म स्यात्तु विलोमतः ॥५५॥

प्रश्नलग्न मे—लग्न मे सूर्य से ग्रीष्म, चन्द्र से वर्षा, मंगल से शरद, बुध से हेमन्त, गुरु से शिशिर, शुक्र से वसन्त जानना। अथवा शु० म० श० च० बु० गु० ये ग्रह लग्न के द्रेष्काणपति हों तो क्रम से ग्रीष्म आदि ऋतु या नवांश से ऋतु लेना॥५२॥

मास तिथि ज्ञान–पूर्व मे जो ऋतुज्ञान कहा गया है उसके पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध के विभाग से पूर्वोत्तर मास ज्ञान होगा। इसी अनुपात से तिथि जानना॥५३॥

वर्षज्ञान–प्रश्नलग्न से त्रिकोणस्थान गुरु हो तो जिस राशि का गुरु हो उस राशि का गुरु पूर्वकाल मे जिस वर्ष म हो वह जन्म का वर्ष पृच्छक की अवस्था देखकर अनुमान से जानना। यदि १२ वर्ष के गुरुराशि भ्रमण म बीच म कही हा ता नवाश से वर्ष जानना॥५४॥

तिथिज्ञान–सूर्य के अश क अनुरूप (तुल्य) तिथि और लग्न (प्रश्न) रात्रि का हा तो दिन का जन्म और दिन का प्रश्नलग्न हो तो रात्रि का जन्म जानना॥५५॥

गतप्राणैर्जन्मकाले ते च प्राणा भवत्यथ ॥ यद्राशिग शशी मास सम वाऽस्पृशदगकम् ॥५६॥
तत्त्रिकोणबलाधिक्य राशिर्लग्नात्तु यावति ॥ चन्द्रस्तावतिभ चापि जन्मलग्न विनिर्दिशेत ॥५७॥
मीने मीन तु लग्न वा तथान्यैस्त्वन्यलग्नभम् ॥ छायया सयुता यामवारर्क्षतिथिराशय ॥५८॥
यावतस्तु धनिष्ठादिजन्मर्क्ष तद्विनिर्दिशेत् ॥ कलाशादिपु यत्प्रोक्तमृक्ष तद्वा भवेदिदम् ॥५९॥

प्रश्नकाल म जिस राशि का चन्द्रमा हा वह मास (चैत्रादि) चन्द्रमा सम या विषम जिस राशि मे हो उसस ५।९ राशि बलवान हो तो प्रश्नलग्न से उतनी ही सख्या राशि म जन्मलग्न जानना॥५६॥५७॥

जन्मनक्षत्रज्ञान–प्रश्नसमय के छायापादकी सख्या म प्रहर वार नक्षत्र सख्या का योग करना २७ का भाग देना जो शेष रह वह धनिष्ठादि नक्षत्र होता है॥५८॥ प्रकारान्तर–कलाश से हारा तक की सख्या म जानना॥५९॥

कलाशाद्यर्धहोरात प्रोक्तहोरैर्विभावयेत ॥ पृथग्लिप्तीकृत लग्न वर्गणाभिहत पुन ॥६०॥ आरूढच्छत्रयोर्वीर्यबलस्य वर्गणाहतम ॥ ओजे योग समे हानिरिति तस्य विधीयते ॥६१॥ स्वै स्वभागैश्च भक्त तत्तया मासादय स्मृता ॥ यद्वा कलीकृत लग्न तथा कुर्याद्विचक्षण ॥६२॥ भावकस्य च शुद्धि च योग चैव करोत्यत ॥नवभिश्च कलाशाद्यैस्तथैवोत्क्वादिभि क्रमात् ॥६३॥ एकाशीतिमिदा सति नवकाद्यशशोधने ॥ येषा योगगते काने समातेषु सता यत ॥६४॥

मासज्ञान म प्रकारान्तर–लग्नराशि की कला करक दो जगह रखना। स्वस्थान म स्ववर्ग म गुणा कर आरूढ छत्र म जो बलवान हो उसक वर्ग म गुणा करना पश्चात लग्नराशि विषम हो तो दूसरी जगह रखे हुए म युक्त करना। सम हो तो हीन करना। १२ का भाग देना तो मास तथा ३० क भाग म दिन होता है॥६०॥६१॥ अथवा पूर्वोक्त रीति स पश्चात् नव कलाशरीति स ९ के भाग म जहा अवसान हो वह लग्न जान॥६२-६४॥

राशिस्तु बलवान्स्वामिगुरुजप्रेमणान्वित ॥ अन्यै पापैरदृष्ट स्याच्छुभदृष्टया प्रयोजयत ॥६५॥
चन्द्रार्कचार्यशुक्रज्ञा पाद मित्रमकर्मणी ॥ पश्यति च शनि पूर्णमप धर्मसुती गुरु ॥६६॥
सर्वेऽर्धयधुमृत्यू च पूर्णं पश्यति भूमिज ॥ परे त्रिपाद पूर्णे च सर्वे पश्यति सप्तमम ॥६७॥

उच्चमूलसुहृत्स्वर्क्षस्वद्रेष्काणनवांशके ॥ स्थितस्य स्थानवीर्यं स्यात्कुजार्कौ दशमे शनिः ॥६८॥
सप्तमे ज्ञगुरू लग्ने चन्द्रशुक्रौ तु वेश्मनि ॥ दिग्वीर्यसंयुता एते नाऽन्यत्र प्रश्न कर्मणि ॥६९॥

लग्नबल ज्ञान–लग्न को गुरु, बुध पूर्णदृष्टि देखते हो तो बली किन्तु पापदृष्टि रहित हो॥६५॥

ग्रहदृष्टि–सू० च० मं० बु० गु० शु० ये ग्रह ३।१० वे भाव को १ पाद दृष्टि से और शनि पूर्णदृष्टि से देखता है। ९।५ को और सब २ पाद गुरु पूर्ण दृष्टि से तथा ४।८ को और सब ३ पाद, मंगल पूर्णदृष्टि से देखता है। सप्तमभाव को सभी ग्रह पूर्णदृष्टि से देखते है॥६६॥६७॥

ग्रहों का स्थानादिबल–जो ग्रह स्वक्षेत्र, उच्च, मूलत्रिकोण मित्र अतिमित्र राशि का हो या स्वनवांश, स्वद्रेष्काण मे हो तो स्थानबल से बली होता है। प्रश्नलग्न से १० भाव मे सूर्य मंगल दिग्बली तथा ७ मे शनि बली, प्रथम मे बु० गु० बली ४ मे च० शु० दिग् बल से बलवान् होते है। यह प्रश्न लग्न का ही बल विचारना, अन्य जातक मे नहीं॥६८॥६९॥

मृगादिराशिषट्कस्थाश्चन्द्रार्कज्ञार्यभार्गवाः ॥ बलवंत कुजार्कौ तु कर्कटादिगतौ तथा ॥७०॥
पूर्वपक्षे शुभे कृष्णे पापस्तु बलिनस्तथा ॥ वक्रिणो बलिनः खेटाश्चेष्टाबलसमन्विताः ॥७१॥
शुभाः पापा दिवा रात्रौ बलिनः स्युः क्रमात्स्मृताः ॥ निसर्गबलिनः प्राग्वदेव स्युः प्रश्नकर्मणि ॥७२॥ लग्नहोराद्रेष्काणार्कनवांशाः सप्तमांशकः ॥ कलांशाः कालहोरा च त्रिंशांशः षष्टिभागकः ॥७३॥

अयन बल–मकरादि ६ राशि मे सू० च० बु० गु० शु० अयनबली और कर्कादि ६ मे मं० श० अयन बली होते है॥७०॥

पक्षबल–शुक्लपक्ष मे शुभग्रह बलवान् तथा कृष्णपक्ष मे पापग्रह बलवान् होते हैं।

चेष्टाबल–वक्री ग्रह चेष्टाबली होता है। शुभग्रह दिवाबली और पापग्रह रात्रिबली होता है। निसर्ग बल पूर्ववत् जानना॥७१॥७२॥

१० वर्ग बल–लग्न, होरा, द्रेष्काण, द्वादशांश, नवांश, सप्तांश, षोडशांश, कालहोरांश, त्रिंशांश षष्ठ्यंश से उत्तरोत्तर हीन बल है॥७३॥

पूर्वपूर्वो बली प्रोक्तो न बली चोत्तरोत्तरः ॥ प्रश्नलग्नं कलीकृत्य नवघ्नं भेनभाजितम् ॥७४॥
लब्धं नवांशकं ज्ञेयं शिष्टमात्मकसंस्थिते ॥ लब्धं सप्तगुणं वेदभक्तं शिष्टमिहांशकः ॥७५॥
नवांशसदृशं लग्नं यद्वा त्रिंशार्कभाजितम् ॥ सप्तांशशिष्टं लग्नं च सप्तमे मासि निश्चिते ॥७६॥
सौम्ये तदेव कर्मर्क्षे जन्मर्क्षं वा भवेद्बलम् ॥ इदं शास्त्रं मया प्रोक्तमाद्यन्तं तव सुव्रत ॥७७॥
नाशिष्याय प्रदातव्यं नापुत्राय कदाचन ॥ गुणशीलयुतायैव शिष्यायैव द्विजातये ॥ दातव्यं तु प्रयत्नेन वेदाणमिदमुच्यते ॥७८॥

इति श्रीबृहत्पाराशरहोराशास्त्रे उत्तरखण्डे प्रश्नप्रकरणं नामद्वाविंशोऽध्यायः ॥२२॥

ज्योतिष शास्त्र संबंधी हमारे कुछ अन्य प्रकाशन

केरलीय प्रश्न रत्न–हिन्दी टीका सहित
केरल तत्व प्रश्नसग्रह–हिन्दी टीका सहित
गर्ग मनोरमा–हिन्दी टीका सहित
ग्रह लाघव–हिन्दी टीका सहित
चमत्कार चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
चमत्कार ज्योतिष–हिन्दी टीका सहित
जातकाभरण–हिन्दी टीका सहित
ज्योतिषसार–हिन्दी टीका सहित
ज्योतिष श्याम सग्रह–चक्रोदाहरणयुक्त हिन्दी टीका सहित
ज्योतिर्गणित कौमुदी–शुद्ध ग्रह गणित का अपूर्व ग्रन्थ
प्रश्नवैष्णव–हिन्दी टीका सहित
प्रश्न ज्ञान प्रदीप–हिन्दी टीका सहित
बालबोध ज्योतिष–हिन्दी टीका सहित
बृहद्यवन जातक–हिन्दी टीका सहित
भाव कुतूहल–हिन्दी टीका सहित
भुवन दीपक–सस्कृत टीका व हिन्दी टीका सहित
भृगु सूत्र–हिन्दी टीका सहित
रमलरत्न–हिन्दी टीका सहित
सामुद्रिक शास्त्र–हिन्दी टीका सहित
रमल गुलजार भाषा
वसन्तराजशाकुन–सस्कृत व हिन्दी टीकासहित
ताजिक नीलकण्ठी–हिन्दी टीका सहित
पद्मीमार्ग प्रदीपिका–हिन्दी टीका सहित
प्रश्न चण्डेश्वर–संस्कृत व हिन्दी टीका सहित
प्रश्न शिरोमणि–हिन्दी टीका सहित
श्रीवेंकटेश्वर शताब्दि पचांग–विक्रम सम्वत् २००१ से २१०० तक पूरे एक सौ वर्ष का पचाग एक ही जिल्द मे। सम्पादक नवलगढ निवासी प० ईश्वरदत्तजी शर्मा
बृहद् यवन जातक–हिन्दी टीका सहित
बृहद्दैवज्ञरजन–मूल मात्र
भविष्य फल भास्कर–हिन्दी टीका सहित
मानसागरी–हिन्दी टीका सहित
मुहूर्त चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
मुहूर्त प्रकाश–हिन्दी टीका सहित
लीलावती–हिन्दी टीका सहित
वर्षयोग समूह–हिन्दी टीका सहित
वर्ष प्रबोध–हिन्दी टीका सहित
वाराही (बृहत्) संहिता–हिन्दी टीका सहित
विश्वकर्माप्रकाश–हिन्दी टीका सहित
शम्भुहोरा प्रकाश–हिन्दी टीका सहित
सर्वार्थ चिन्तामणि–हिन्दी टीका सहित
समरसार–सस्कृत व हिन्दीटीकासहित

उक्त पुस्तको के अलावा ज्योतिष व मत्र, स्तोत्र कर्मकाण्ड, धर्मशास्त्र आदि विषयो के हमारे लगभग तीन हजार प्रकाशनो की विस्तृत जानकारी के लिये बृहत्सूचीपत्र मुफ्त मगा देखिये।